

हदीस सौरभ

प्रथम भाग
अनुवाद व व्याख्या सहित

मु० फ़ारूक़ ख़ॉ

मर्कज़ी मक्ताबा इस्लामी
१३५३, चितली क़ब्र, दिल्ली-११० ००६

प्रकाशक: मर्कजी मक्ताबा इस्लामी दिल्ली-110006

नाम किताब . हदीस सौरभ
अनुवादक मौलाना मुहम्मद फारुक खां

पहली बार	1970	2000
दूसरी बार	1980	2000
तीसरी बार	1884	2000
चौथी बार	1994	1000

मूल्य : 

मुद्रक : रुबी प्रिंटिंग प्रेस दिल्ली- 110006

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

प्राक्कथन

इस्लाम में कुरआन करीम के बाद जिस चीज को मौलिक महत्व प्राप्त है वह अल्लाह के रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' और आपकी 'हदीस' है। अरबी के अतिरिक्त उर्दू में भी 'हदीस' के कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिनका अपने स्थान पर विशेष महत्व है लेकिन हिन्दी भाषा में अभी तक हदीस का कोई उल्लेखनीय संग्रह प्रकाशित नहीं हो सका था। हिन्दी में 'हदीस' के एक संग्रह की आवश्यकता बहुत पहले से महसूस की जा रही थी जिस में इस्लाम एक पूर्ण जीवन-दर्शन और जीवन-व्यवस्था के रूप में उभर कर सामने आ सके जैसा कि वह वास्तव में है भी। 'हदीस' का वह संग्रह जिसे हम 'हदीस सौरभ' के नाम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का सौभाग्य प्राप्त कर रहे हैं इसी आवश्यकता को देखते हुए संकलित किया गया है।

इस संग्रह में प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में अध्याय से सम्बन्धित एक परिचयात्मक लेख भी सम्मिलित है। इस से हदीसों के समझने में सुविधा होगी। आवश्यकतानुसार 'हदीसों' की व्याख्या भी कर दी गई है। हदीसों की व्याख्या में हमारी कोशिश यह रही है कि हदीसों के सम्बन्ध में केवल यही नहीं कि पाठकों को उन के अपने मन में उभरने वाले प्रश्नों के उत्तर मिल जाये बल्कि इसी के साथ उनमें हदीस की समझ और धर्म-ज्ञान की यथार्थ अभिरुचि भी पैदा हो सके और वास्तविक रूप से वह धर्म और उसके रूप एवं गुण से परिचित हो सके।

ग्रन्थ की भूमिका में 'हदीस' के महत्व, उस के संकलन-इतिहास आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है और हदीस के सम्बन्ध में पैदा होने वाले सन्देहों और शंकाओं का समाधान किया गया है।

हदीस और धर्म से सम्बन्धित पारिभाषिक शब्दों और शास्त्रों का

उल्लेख भी इस ग्रन्थ में सम्मिलित किया जा रहा है। यह चीज हदीसों के सम्झने में भी सहायक होगी और इस से इस बात का भी भली भाँति अनुमान लगाया जा सकेगा कि हदीस के सेवकों और विद्वानों ने केवल यही नहीं की शोधकार्य और रिसर्च (*Research*) की नीव डाली है बल्कि उन्होंने जिस चीज को भी हाथ में लिया उसे उन्नति के शिखर तक पहुँचा दिया है।

ग्रन्थ के प्रथम भाग में मौलिक धारणाओं और 'इबादतों' से सम्बन्धित 'हदीसों' को संगृहीत किया गया है, समाज एवं नैतिक विधान, शासन और राजनीति, अर्थनीति एवं अर्थव्यवस्था, सत्य-ग्रामव्रण एवं सत्य-प्रचार आदि से सम्बन्धित 'हदीसों' ग्रन्थ के दूसरे भाग में मकलित की जायेंगी।

ईश्वर से हमारी प्रार्थना है कि वह इस प्रयत्न को स्वीकार करे और जो लोग मानव-जीवन को निर्मल और सफल बनाने की अभिन्नापा रखते हैं उन के लिए यह ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध हो।

विनीत

मुहम्मद फ़ारूक ख़ाँ

१६ अप्रैल १९६९ ई०

हिन्दी विभाग, जमाअत इस्लामी हिन्द

क्रम

प्राक्कथन	३
प्रवेश	६
‘नुबूत’ का पद	११
‘नबी’ की असाधारण योग्यता	१५
नबी का शुद्ध और निष्कलक जीवन	१७
कुरआन के अतिरिक्त दूसरे प्रकार की ‘बह्य’	१९
कुरआन और ‘सुन्नत’	२३
‘सुन्नत’ का अनुसरण	३०
‘सुन्नत’ की रक्षा	३६
‘हदीस’ का प्रचार	४१
हदीस का लिपिबद्ध होना	४४
‘दरायत’ (प्रज्ञा एवं मीमासा) का प्रयोग	५३
‘खबर वाहिद’	५७
कुछ सन्देह	६१
उम्मुल अह्दादीस	६५
मौलिक विचार और धारणाएँ	७५
ज्ञान एवं विवेक	८०
स्वाभाविक धर्म	८५
ईश्वर की कल्पना	१०५
अल्लाह पर ‘ईमान’	१०८
पवित्रता एवं पावनता	११५
दयालुता एवं क्षमाशीलता	११९
अल्लाह की महानता	१२५
ईश-आत्माभिमान	१३५
अल्लाह का हक़	१४१

अल्लाह से प्रेम	१४६
अल्लाह का भय	१५६
अल्लाह के प्रति अच्छा गुमान	१६२
अल्लाह का आज्ञापालन	१६५
'लौहीद' (एकेश्वरवाद) की प्रतिष्ठा	१६६
तकदीर पर ईमान	१७४
तकदीर पर 'ईमान' और उसका महत्व	१७६
तकदीर पर 'ईमान' लाने का मानव-चरित्र पर प्रभाव	१७८
'रिसालत' की धारणा	१८२
'रिसालत' पर 'ईमान'	१८५
'बह्य'-अवतरण	१८६
मुखार विन्दु	१९२
आप की मिसाल	१९५
आप से प्रेम	२००
दरूद व सलाम	२०३
आपका आज्ञापालन	२०६
सारे ससार के 'रसूल'	२१०
'नुबूवत' की समाप्ति	२११
आपकी कुछ प्रमुख विशेषताएँ	२१७
अत्युक्ति से परहेज	२२०
नबी सल्ल० की विनम्रता एवं दास्य भाव	२२२
आप का स्वर्गवास	२२८
आप के सहाबा (रजि०)	२३२
आप का अनुयायी समुदाय	२३७
आपके कुछ भविष्य-कथन	२४३
अल्लाह की किताब	२४७
किताब पर ईमान'	२५०
कुरआन की महानता	२५१
कुरआन की तिलावत (पठन)	२५६
कुरआन के अनुसार आचरण	२६३
आखिरत की धारणा	२६६
'आखिरत' पर 'ईमान'	२६६

रोज़ के स्वाभाविक नियम	४४४
‘एतकाफ’	४४७
हज्ज	४४८
‘हज्ज’ की वास्तविकता	४५३
हज्ज से सम्बन्धित ‘इबादतें’	४५६
हज्ज और ‘उमरा’	४६०
हज्ज के स्वाभाविक आदेश	४६४
दुआ	४६६
दुआ का महत्व	४७०
दुआ के कुछ अधिनियम	४७५
नमाज़ की कुछ दुआएँ	४८४
प्रातः समय और सायंकाल की दुआएँ	४८८
मजलिस की दुआ	५०१
सफर की दुआ	५०२
खाने की दुआ	५०४
दुख के समय की दुआ	५०५
कुछ व्यापक दुआएँ	५०५
‘तौबा’ और क्षमायाचना	५१३
अल्लाह का ‘ज़िक्र’	५१७
अल्लाह के ‘ज़िक्र’ (स्मरण) का महत्व	५२१
‘ज़िक्र’ के कुछ पवित्र शब्द	५२७
सन्तुलित मार्ग	५३४
‘हदीस’-शास्त्र	५३६
पारिभाषिक शब्दावली	५४३
सामान्य पारिभाषिक शब्दावली	५५३

नोट इस भाग में मौलिक धारणाओं और ‘इबादतों’ से सम्बन्धित ‘हदीसों’ प्रस्तुत की गई हैं। नैतिकता, समाज, शासन एवं राजनीति, अर्थनीति एवं अर्थ-व्यवस्था, सत्य-आमंत्रण और सत्य-प्रचार आदि से सम्बन्धित ‘हदीसों’ ग्रन्थ के दूसरे भाग में प्रस्तुत की जायेंगी।

‘नुबूवत’ का पद

जीवन का सीधा और सच्चा मार्ग पाने के लिए मनुष्य को सदैव ईश्वरीय मार्ग-प्रदर्शन की आवश्यकता रही है। ईश्वरीय शिक्षा और ईश्वरीय मार्ग-दर्शन से अलग रहकर मनुष्य कभी भी सीधे मार्ग को पा नहीं सकता। मनुष्य को जीवन का सीधा और सच्चा मार्ग दिखाने के लिए ‘अल्लाह’ ने ‘किताबे’ उतारी और अपने ‘रसूल’ भेजे। रसूलों ने लोगो के समक्ष ईश्वरीय ग्रन्थो के अर्थ और अभिप्राय को स्पष्ट रूप से बयान किया और ‘अल्लाह’ के दिए हुए आदेशो के अनुसार चलकर उन्हें दिखाया। उन्होंने लोगो के सामने अपना आदर्श जीवन प्रस्तुत किया ताकि वे अच्छी तरह इस बात को समझ सकें कि ईश्वरीय इच्छानुसार जीवन व्यतीत करने का तरीका क्या होता है? अल्लाह की ओर से यदि कोई ‘रसूल’ न आता, केवल ‘किताब’ का अवतरण होता, तो उस किताब के समझने में लोगो के बीच विभेद होता, और यह निर्णय न हो पाता कि सत्य किसकी ओर है और किसकी ओर नहीं है? ईश्वरीय आदेशों के वास्तविक अभिप्राय और उद्देश्य को समझने में लोग गलतियाँ करते और कोई न होता जो उन्हें ईश्वरीय आदेशों का वास्तविक अर्थ और उद्देश्य बता सकता। इसके अतिरिक्त मनुष्य की यह एक आवश्यकता है कि जीवन के समस्त मामलो में कोई उसके साथ शरीक होकर अपने व्यवहार और वचन से उसको जीवन का सीधा मार्ग दिखाये। विचार और व्यवहार प्रत्येक दृष्टि से उसकी शिक्षा-दीक्षा का उपाय करे और उसमें सत्यानुसरण की भावना पैदा करे। लोगो को बताये कि जीवन के कठिन और पेचीदा मार्गों में वे किस प्रकार सत्य और न्याय के मार्ग को अपनाये, और उसी पर जीवन भर चलते रहे।

मनुष्य की यह आवश्यकता किसी ‘फिरिश्ते’ के द्वारा पूरी नहीं हो सकती थी। ‘फिरिश्तों’ को मानवीय आवश्यकताओं से क्या सम्पर्क? ‘फिरिश्तो’ की मनोवृत्ति, और प्रकृति मानवों से सर्वथा भिन्न होती है। इस लिए वे मानवीय जीवन के लिए दृष्टान्त और नमूना नहीं बन सकते। यही

क़ाज़ि है कि अल्लाह ने 'किताब' के साथ जो 'रसूल' भी भेजा वह मनुष्य था 'फ़िरिस्ता' न था।

'रिसालत' और नुबूवत का इतिहास भी उतना ही लम्बा है जितना कि मानव का इतिहास है। 'रिसालत' और 'नुबूवत' का सिलसिला उसी समय से आरम्भ होता है जबकि पहले मनुष्य ने इस धरती पर क़दम रक्खा था। प्रत्येक जाति में अल्लाह के रसूल आये। उन्होंने अपनी जाति वालों को स्वयं उन्हीं की भाषा में सम्बोधित किया। अल्लाह के अन्तिम 'रसूल' हज़रत मुहम्मद सल्ल० हैं। आप के वाद अब मनुष्य के मार्ग-दर्शन के लिए कोई नया 'रसूल' आने वाला नहीं है। आप पर 'नुबूवत' का सिलसिला समाप्त हो जाता है। अल्लाह के अन्तिम 'रसूल' के दायित्वों का जो विवरण कुरआन में मिलता है वह यह है "और याद करो जबकि इबराहीम और इस्माईल इस घर (काबा) की दीवारें उठा रहे थे (तो प्रार्थना करते जाते थे) ... हे हमारे 'रब' ! उन लोगो के बीच उन्हीं में से एक ऐसा 'रसूल' उठाना जो उन्हें तेरी 'आयते' पढ़ कर सुनाये, उन्हें 'किताब' और 'हिकमत' (तत्त्वदर्शिता) की शिक्षा दे और उनकी आत्मा को शुद्ध (और उसके विकसित होने का अवसर प्रदान) करे। निस्सन्देह तू अपार शक्ति का माज़िक और तत्त्वदर्शी है।"

—अल-बकरा . १२६

एक दूसरे स्थान पर कहा गया . "अल्लाह ने 'ईमान वालो' पर यह बहुत बड़ा एहसान किया है जबकि उनके बीच उन्हीं में से एक 'रसूल' उठाया जो उन्हें उसकी 'आयते' सुनाता है, उनकी आत्मा को शुद्ध (और विकसित होने का अवसर प्रदान) करता है, और उन्हें 'किताब' और 'हिकमत' (तत्त्वदर्शिता) की शिक्षा देता है, जबकि इस से पहले वे ख़ुली गुमराही में पड़े हुये थे।"

—आले इमरान . १६४

इन 'आयतो' से स्पष्ट है कि 'नबी सल्ल०' की जिम्मेदारी जहाँ यह थी कि आप लोगो को 'कुरआन' की आयते पढ़कर सुनाये वही आप ही नुबूवत के तीन महत्वपूर्ण उद्देश्य और भी थे।

❶ एक, यह कि आप लोगो को 'किताब' और ईश्वरीय नियम और कानून की शिक्षा दे।

❷ दूसरे, आप लोगो को 'हिकमत', तत्त्वदर्शिता (*wisdom*) और बुद्धिमत्ता की शिक्षा दे ताकि लोगो में यह योग्यता उभर सके कि वे वास्तविकता को समझ सकें और विचार, चिन्तन और कर्म-क्षेत्र में सही नीति अपना सकें।

- और तीसरे, आप लोगों की आत्मा को शुद्ध करें ताकि वे विकास पा सकें। उनकी ऐसी शिक्षा-दीक्षा का उपाय करें कि उनमें उत्तम-से उत्तम गुण उभर सकें, और उनकी व्यक्तिगत और सामाजिक हर प्रकार की खराबियाँ दूर हो। यही वह महान् कार्य है जिसके द्वारा उत्तम जीवन-व्यवस्था और आदर्श इस्लामी-समाज का निर्माण होता है।

नबी सल्ल० अपने दायित्व की दृष्टि से शिक्षक, दीक्षक, मार्ग-दर्शक, नियामक, न्यायाधिकारी, नायक, हाकिम सब-कुछ थे। आपके जीवन को 'ईमान वालों' के लिए आदर्श जीवन निर्धारित किया गया "(हे नबी ! लोगों से) कह दो यदि तुम (सचमुच) अल्लाह से प्रेम करते हो, तो मेरा अनुसरण करो, अल्लाह तुम से प्रेम करने लगेगा।"

—आले इमरान : ३१

"(हे नबी !) कहो . अल्लाह और 'रसूल' का हुक्म मानो। फिर यदि वे मुँह मोड़ते हैं, तो अल्लाह 'काफ़िरो' को पसन्द नहीं करता।"

—आले इमरान . ३२

स्वयं नबी सल्ल० कहते हैं "जिसने मुहम्मद की आज्ञा का पालन किया निस्सन्देह उसने अल्लाह के आदेश का पालन किया और जिसने मुहम्मद की आज्ञा की निश्चय ही उसने अल्लाह की आज्ञा की और मुहम्मद लोगों के बीच सीमान्तर की हैसियत रखते हैं।" —बुखारी

कुरआन में एक जगह कहा गया "निश्चय ही तुम लोगों के लिए अल्लाह के 'रसूल' में एक उत्तम आदर्श था उस व्यक्ति के लिए जो अल्लाह और अन्तिम दिन की आशा रखता हो।" —अल-अहज़ाब २१

'रसूल' के रूप में आपको मुकद्दमो (अभियोग) के फैसला करने का अधिकार प्राप्त था "(हे नबी !) हम ने यह 'किताब' हक के साथ तुम्हारी ओर उतारी है, ताकि अल्लाह ने जो कुछ तुम्हें दिखाया है उसके अनुसार तुम लोगों के बीच फैसला करो।"

—अन-निसा १०५

"तो नहीं, (हे नबी !) तुम्हारे 'रब' की कसम वे कदापि 'ईमान' वाले नहीं हो सकते जब तक कि यह बात न हो कि इनके बीच जो झगडा उठे उसमे ये तुम से फैसला कराये, फिर जो फैसला तुम कर दो उस पर ये अपने दिल में कोई खटक न पाये, और पूरे तरीके से मान लें।

—अन-निसा . ६५

नबी सल्ल० 'रसूल' होने की हैसियत से हाकिम और नायक भी थे। आपकी बात माननी सबके लिए अनिवार्य थी "और हमने जो 'रसूल'

भी भेजा इसीलिए भेजा कि अल्लाह के हुक्म से उसके आदेशों का पालन किया जाये।”

—अन-निसा : ६४

“हे ‘ईमान’ लाने वालो ! अल्लाह का हुक्म मानो, और ‘रसूल’ का हुक्म मानो, और उनका जो तुम में अधिकारी लोग हैं, फिर यदि तुम्हारे बीच किसी बारे में झगडा हो जाये तो उसे अल्लाह और ‘रसूल’ की ओर ले जाओ यदि तुम अल्लाह और अन्तिम दिन पर ‘ईमान’ रखते हो।”

—अन-निसा : ५६

नबी सल्ल० ईश्वरीय ग्रन्थ के व्याख्याकर्त्ता भी थे। आपकी यह एक जिम्मेदारी थी कि आप उन आदेशों को स्पष्ट रूप से बयान करें जो अल्लाह की ओर से अवतीर्ण हो “और (हे मुहम्मद !) हमने तुम पर याददिहानी (अनुस्मारक अर्थात् कुरआन) उतारी है ताकि तुम लोगों के सामने खोल-खोल कर बयान कर दो जो कुछ उनकी ओर उतारा गया है।”

—अन-नह्ल ४४

अल्लाह की ओर से आपको नियम बनाने, व्यवस्था या विधान करने के अधिकार भी प्राप्त थे। कुरआन मजीद में नबी सल्ल० के बारे में कहा गया है “वह उन्हें नेक बातों का हुक्म देता है और बुरी बातों से रोकता है। उनके लिए उत्तम चीजें हलाल (वैध) और निष्कृष्ट चीजें हराम (अवैध) ठहराता है, और उन पर से वह बोझ और बन्धन उतार देता है जो उन पर चढ़े हुए थे।”

—अल-आराफ : १५७

इस से मालूम हुआ कि हलाल व हराम (वैध व अवैध) के वे आदेश जो नबी सल्ल० के फ़ैसलों और आपके कथनों से उद्धृत होते हैं उन्हें छोड़ा नहीं जा सकता। स्वयं नबी सल्ल० ने भी अपने विधान एवं नियम सम्बन्धी अधिकार का उल्लेख किया है। मिकदाम बिन मअदीयकरब रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा “जान रखो ! मुझे कुरआन दिया गया और उसके साथ वैसे ही एक और चीज भी। खबरदार रहो ! ऐसा न हो कि कोई पेट भरा व्यक्ति अपनी मसनद पर बैठा हुआ कहने लगे कि तुम्हारे लिए बस इस कुरआन का पालन आवश्यक है, जो कुछ इसमें ‘हलाल’ पाओ उसे हलाल समझो और जो कुछ इसमें ‘हराम’ पाओ उसे हराम समझो, हालाँकि जो कुछ अल्लाह का ‘रसूल’ ‘हराम’ निर्धारित करे वह वैसा ही हराम है जैसे अल्लाह का हराम किया हुआ।”

—अबू दाऊद, इब्न माजा, दारमी, हाकिम

हजरत अबू राफ़ेअ रजि० से उल्लिखित है कि आपने कहा “मैं कदापि तुम में से किसी को न पाऊँ कि वह अपनी मसनद पर तकिया

लगाए बैठा हो और उसे मेरे उन आदेशों में से, जिनका मैंने हुक्म दिया है या जिन से मैंने वर्जित किया है, कोई आदेश पहुँचे और वह (सुनकर) कहे कि हम नहीं जानते, हम तो जो कुछ अल्लाह की 'किताब' में पायेंगे उसका पालन करेंगे।”

—अबू दाऊद, अहमद, इब्न माजा, तिरमिज़ी, शाफई, बैहकी-दलाइलुन्नुबूवत

इरबाज़ बिन सारियह रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'खुतबा' (भाषण) देने के लिए खड़े हुए और कहा : “क्या तुम मे से कोई व्यक्ति अपनी मसनद पर तकिया लगाये हुए यह समझता है कि अल्लाह ने कोई चीज़ हराम नहीं की है सिवाय उन चीज़ों के जो कुरआन में बयान की गई हैं। सावधान ! अल्लाह की कसम, मैंने जिन बातों का हुक्म दिया है और जो उपदेश दिये हैं और जिन बातों से रोका है वे कुरआन ही की तरह हैं बल्कि कुछ ज़्यादा।” —अबू दाऊद

इन 'हदीसों' से स्पष्ट है कि अल्लाह के आज्ञाकारी लोगों के लिए 'रसूल' के आदेशों का अनुपालन उसी प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार कुरआन में वर्णित आदेशों का पालन करना उनके लिए आवश्यक है। और जिन बातों से 'रसूल' ने उन्हें रोका है उन से बचना भी उनके लिए उसी तरह ज़रूरी है जिस तरह उन चीज़ों से बचना ज़रूरी है जिन से कुरआन-मे रोका गया है।

नबी की असाधारण योग्यता

अल्लाह ने सदैव 'नबियों' को असाधारण योग्यताये प्रदान की। वे अपनी असाधारण विशेषताओं और योग्यताओं के बिना उस महान् कार्य को कर ही नहीं सकते थे जो अल्लाह की ओर से उन्हें सौंपा जाता रहा है। 'नबी' वास्तव में 'नुबूवत' ही के लिए पैदा किए गए। उन्हें अत्यन्त पवित्र स्वभाव और प्रकृति प्रदान की गई। स्वभावतः वे ऐसे थे कि बिना किसी विशेष सोच-विचार के अपने अन्तर्ज्ञान (*Intuition*) से ही सही परिणाम तक पहुँच जाते थे। 'नबी' मनुष्य ही थे परन्तु उन्हें मनुष्यता का उच्चतम स्थान प्राप्त था। सत्य व असत्य में अन्तर करना उनका स्वभाव था। वे शारीरिक और आत्मिक प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण थे। अल्लाह ने उनकी स्वाभाविक क्षमता को उन्नति दी और उन्हें वह चीज़ प्रदान की जिसके लिए कुरआन में 'इल्म' (ज्ञान), 'हुक्म' (निर्णय-शक्ति), हिदायत (मार्ग-दर्शन, *guidance*), 'बय्यनह' (स्पष्ट प्रमाण) आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

हजरत मूसा अ० के बारे में कहा गया है . “और जब वह अपनी युवावस्था को पहुँचा और भरपूर हो गया, तो हमने उसे हुक्म (निर्णय शक्ति, तत्त्वदर्शिता) और ज्ञान प्रदान किया ।” —अल-कसर : १४

हजरत सालेह अ० ने अपनी जाति वालों को सम्बोधित करते हुए कहा . “हे मेरी जाति वाले ! सोचो तो सही, यदि मैं अपने ‘रब’ की एक ‘बय्यनह’ (स्पष्ट प्रमाण) पर हूँ और उसने मुझे अपनी दयालुता (‘नुबूवत’) प्रदान की है, तो (इसके बाद) अल्लाह के मुकाबले में कौन मेरी सहायता करेगा यदि मैं उसकी अवज्ञा करूँ ? अतः तुम घाटे में डालने के सिवा और मुझे कुछ नहीं दे सकते ।” —हूद ६३

हजरत यूसुफ अ० के बारे में कहा गया है “और जब वह अपनी प्रौढ़ता (युवावस्था) को प्राप्त हुआ, तो हमने उसे ‘हुक्म’ (निर्णय-शक्ति) और ‘इल्म’ (ज्ञान) प्रदान किया ।” —यूसुफ : २२

यह असाधारण ज्ञान और बुद्धिमत्ता हजरत मुहम्मद सल्ल० को भी प्रदान की गई “(हे नबी !) कहो : मैं अपने ‘रब’ की ओर से एक खुली दलील (अथवा स्पष्ट मार्ग) पर हूँ ।” —अल-अनआम ५७

“(हे नबी !) कहो मेरी राह तो यह है कि मैं पूरी नूझ-बूझ के साथ अल्लाह की ओर बुलाता हूँ और जो मेरे अनुयायी है वे भी ।”

—यूसुफ १०८

“और अल्लाह ने तुम पर ‘किताब’ और ‘हिकमत’ (wisdom) उतारी, और उसने तुम्हें वह कुछ बताया जो तुम नहीं जानते थे ।”

—अन-निसा . ११३

कुरआन के इन शब्दों से स्पष्ट है कि अल्लाह ने ‘नबी’ को किताब ही प्रदान नहीं की बल्कि इसके साथ ऐसा प्रकाश और ज्योति भी पैदा की जिस से ‘नबी’ की हेसियत वास्तविकताओं के निरीक्षक की हो जाती है । इस कारण वे सत्य और असत्य में अन्तर करते और मामलों का सही निर्णय करते और जीवन की पेचीदा राहों में सत्य की ओर मार्ग-दर्शन करते हैं । यह आन्तरिक सूक्ष्म-बूझ और अन्तः प्रकाश उन्हें प्रत्येक समय प्राप्त रहता है । जिन बातों को दूसरे लोग गहरे सोच-विचार और चिंतन के बाद भी नहीं समझ पाते, ‘नबी’ की दृष्टि उसे क्षण भर में पालेती है । इसके लिए पारिभाषिक शब्द ‘वह्य खफी’ (सूक्ष्म दैवी-प्रकाशन) प्रयुक्त करते हैं । ‘नबी’ एक दैवी ज्ञान के वातावरण में होता है जहाँ वास्तविकता निगाहों से ओझल नहीं होती । उसके मुख से जो कुछ निकलता है सत्य होता है, उसके कदम सत्य मार्ग की ओर ही उठते हैं । उसके स्वभाव

की पवित्रता किसी असत्य चीज को पसन्द नहीं कर सकती। 'नबी' को इसका पूरा ज्ञान होता है कि ईश्वरीय मार्ग-दर्शन प्रत्येक समय उसके साथ है। यही वह बात है जिसे आपने अपनी जिह्वा की ओर सकेत कर के इन शब्दों में स्पष्ट किया। 'उस सत्ता की कसम, जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं, इस से जो कुछ निकलता है, सत्य ही होता है।'

अल्लाह की ओर से नबी को यह योग्यता और अन्तः प्रकाश इस लिए प्रदान किया जाता है कि वह 'नुव्वत' के कार्य को ठीक तौर पर निभा सके, वह अल्लाह की 'किताब' का अभिप्राय लोगों को बता सके और अल्लाह की इच्छा के अनुसार चरित्र और आदर्श-समाज का निर्माण कर सके। और लोगों को उस मार्ग पर लगा सके जो उन्हें अल्लाह से मिलता और दुनिया और 'आखिरत' में उन्हें सफल बनाता है।

नबी का शुद्ध और निष्कलंक जीवन

जिस प्रकार 'अल्लाह' अपने 'नबी' को असाधारण योग्यता प्रदान करता और है उसे ज्ञान, तत्त्वदर्शन, प्रकाश और मार्ग-प्रदर्शन से सम्मानित करता और 'वह्य' के द्वारा उसे सत्य मार्ग दिखाता है उसी प्रकार वह अपने 'नबी' की हर समय देख-भाल और रक्षा करता है। एक ओर, वह 'नबी' के पालन-पोषण और दीक्षा आदि की विशेष व्यवस्था करता है और दूसरी ओर वह उसे हर प्रकार की गुमराहियों और गलत कामों से बचाता है। यही कारण है कि नबियों का 'नुव्वत' मिलने से पहले का जीवन भी निष्कलंक होता है। 'नुव्वत' के उच्च पद पर नियुक्त होने के बाद 'नबियों' को असाधारण ज्ञान, सूझ-बूझ और तत्त्वदर्शिता प्रदान की जाती है ताकि वे सत्य-मार्ग पर स्थिर रह सकें और लोगों को सत्य की ओर बुला सकें। मनुष्य होने के कारण यदि कभी 'नबियों' से सोचने-समझने में कोई गलती या सूक्ष्म 'वह्य' के सूक्ष्म संकेतों को समझने में कोई भूल-चूक हो भी जाती है तो तुरन्त ही अल्लाह उसे सुधार देता है।

हजरत नूह अ० ने अपने बेटे को पानी में डूबते देखा तो पुकार उठे : 'हे 'रख' ! मेरा बेटा मेरे घर वालों में से है ! और निश्चय ही तेरा वादा सच्चा है।' (सूरा हूद ४५) अल्लाह ने उसी समय बताया : 'हे नूह ! वह तेरे घरवालों में से नहीं, वह तो अशिष्ट कर्म है।'

—(हूद : ४६)

अल्लाह की 'वह्य' नबी सल्ल० की भी संरक्षक रही है। यदि कभी आप से साधारण सी भूल-चूक हुई, तो तुरन्त अल्लाह की 'वह्य' ने

उसका सुधार कर दिया। एक मुहिम के मौके पर नबी सल्ल० ने उन लोगों को मुहिम पर न चलने की इजाजत दे दी जिन्होंने आप में उसके लिए इजाजत चाही थी। इस पर अल्लाह ने इन शब्दों में सचेत किया - “(हे नबी!) अल्लाह तुम्हें क्षमा करे! तुम ने उन्हें (पीछे रह जाने की) इजाजत क्यों दे दी (तुम उन्हें इजाजत न देते) यहाँ तक कि वे लोग खुन कर तुम्हारे सामने आ जाते जो सच्चे हैं और तुम झूठों को भी जान लेते? जो लोग अल्लाह पर, और अन्तिम दिन पर ‘ईमान’ रखते हैं वे कभी तुम से इसकी इजाजत नहीं मांगेंगे कि अपने माल और अपने प्राणों के साथ ‘जिहाद’ न करें। अल्लाह उन लोगों को जानता है जो उसका डर रखते हैं।”

—अत-तौबा . ८३-४४

नबी सल्ल० के मुँह बोले बेटे हजरत जैद रजि० का हजरत जैनब रजि० से विवाह हुआ, परन्तु जब दोनों में निवाह मुश्किल हो गया, तो हजरत जैद रजि० ने आप से कहा कि मैं उन्हें तलाक देना चाहता हूँ। उस समय आपने हजरत जैद रजि० को ऐसा करने से रोका, हालाँकि आप को इशारा मिल चुका था कि हजरत जैद तलाक दे देंगे और हजरत जैनब रजि० आपकी धर्मपत्नियों में सम्मिलित होगी, परन्तु आपने हजरत जैद से यही कहा कि अपनी पत्नी को तलाक न दो, अल्लाह से डरो। आपको डर था कि लोग कीचड़ उछालेंगे कि देखो इस व्यक्ति ने अपने मुँह बोले बेटे की तलाक पाई हुई पत्नी से विवाह कर लिया। इस सम्बन्ध में कुरआन में कहा गया “(हे नबी!) याद करो जब तुम उस व्यक्ति से जिस पर अल्लाह ने एहसान किया और तुमने भी जिस पर एहसान किया (अर्थात् जैद से) कह रहे थे अपनी पत्नी को अपने पास रहने दो (उसे तलाक न दो) और अल्लाह से डर। तुम अपने जी में वह बात छिपाए हुए थे जिसे अल्लाह खोलने वाला था, तुम लोगों से डर रहे थे जबकि अल्लाह इसका ज्यादा हक रखता है कि तुम उस से डरो।”

—अल-अहजाब . ३७

नबी सल्ल० की किसी धर्मपत्नी को या आपकी कुछ पत्नियों को कोई चीज थी जो पसन्द न थी। कुछ उल्लेखों से मालूम होता है कि वह मधु था। कुछ मधु ऐसे होते हैं जो अपने स्वाद और गन्ध की दृष्टि से कुछ लोगों को पसन्द नहीं हो सकते। नबी सल्ल० को मधु बहुत प्रिय था, परन्तु जब आपको मालूम हुआ कि पत्नियों में से कुछ को मधु पसन्द नहीं है तो आपने इस विचार से कि उन्हें तकलीफ न हो, मधु प्रयोग करना छोड़ दिया। इस पर अल्लाह ने कसम तोड़ने का हुक्म दिया। अल्लाह ने

इस बात को पसन्द नहीं किया कि एक हलाल (वैध) और उत्तम वस्तु का प्रयोग आप और आपके साथी छोड़ दे इसलिए कि आपका तरीका बाद में आने वालों के लिए उदाहरण बन सकता था। कुरआन में स्पष्ट शब्दों में कहा गया . “हे नबी ! जिस चीज को अल्लाह ने तुम्हारे लिए ‘हलाल’ किया है उसे अपनी पत्नियों को खुश करने के लिए क्यों ‘हराम’ करते हो ? और अल्लाह अत्यन्त क्षमाशील और दयावान् है। अल्लाह ने तुम पर तुम्हारी कसमों को खोलना जरूरी कर दिया है। और वह ज्ञान वाला और हिकमत वाला है।” —अत-तहरीम . १-२

इन उदाहरणों से यह बात भली-भाँति स्पष्ट हो जाती है कि किस प्रकार अल्लाह ने अपने नबी पर खास निगाह रखी है और उसे किसी साधारण सी साधारण भूल-चूक पर कायम नहीं रहने दियो। कभी कोई साधारण सी भूल हुई भी तो तुरन्त आपको सचेत कर दिया गया।

कुरआन के अतिरिक्त दूसरे प्रकार की ‘वह्य’

असाधारण सूक्ष्म-बुद्धि और योग्यता के अतिरिक्त ‘नबी’ को सदैव ईश्वरीय मार्ग-दर्शन भी प्राप्त रहता है। ‘नबी’ का अल्लाह से सदैव सम्पर्क और सम्बन्ध स्थापित रहता है। अल्लाह की ‘वह्य’ सदैव नबी की ओर प्रवृत्त रहती है। अल्लाह की ओर से केवल ‘किताब’ ही का अवतरण नहीं होता बल्कि किताब के अतिरिक्त दूसरी ‘वह्य’ भी अल्लाह की ओर से आती है। कितने ही ऐसे ‘नबी’ हुए हैं जिन पर कोई किताब नहीं उतरी, फिर भी ‘वह्य’ ने उन्हें सम्बोधित किया। ‘वह्य’ के द्वारा अल्लाह ने उन्हें सत्य-मार्ग दिखाया। उनकी जाति के लोगों के लिए भी आवश्यक था कि वे उनकी शिक्षाओं पर ‘ईमान’ लाये। हजरत मूसा अ० को ‘तौरात’ उस समय प्रदान की गई जब फिरऔन विनष्ट हो गया और ‘बनी इसराईल’ को लेकर हजरत मूसा अ० ‘तूर’ के दामन में पहुँचे। जब तक वे मिस्र में रहे, उन पर कोई ‘किताब’ नहीं उतरी। परन्तु इस बीच भी हर उस व्यक्ति के लिए जिसको उन्होंने सम्बोधित किया, उनकी शिक्षाओं और उनकी पेश की हुई बातों पर ‘ईमान लाना’ जरूरी था। ‘कुरआन’ में ऐसे स्पष्ट संकेत मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि ‘किताब’ के अतिरिक्त भी ‘नबियों’ के मार्ग-दर्शन के लिए अल्लाह की ओर से ‘वह्य’ का अवतरण होता था। हजरत मूसा अ० फिरऔन के दरबार में जादूगरों के साँपों से डर जाते हैं अल्लाह की ओर से ‘वह्य’ आती है “मत डरो, तुम्हारा ही बोल-बाला होगा” (ताहा० ६८)।

हजरत मूसा अ० अल्लाह के हुक्म से 'बनी इस्राईल' को गैर-रात ही में चल पड़ने है। दरिया पर पहुँचे तो 'बल' आई "अपनी नाडी दरिया पर मारो।" (अश-शुअरा ६३)। जाहिर है कि यह 'बल' वह न थी जो 'किताब' के रूप में लोगों के मार्ग-दर्शन के लिए अवनीर्ण होती है।

कुरआन में मालूम होता है कि उस प्रकार की 'बल' नबी (सूक्ष्म बल) स्वयं नबी सल्ल० पर भी अवनीर्ण होती रहनी थी। नबी सल्ल० पहले 'बैतुल मकदिस' की ओर मुग्न करके 'नमाज' पढ़ा करते थे, बाद में आपको 'बैतुल हराम' को 'किबला' बनाने का आदेश मिला। उस आदेश में इस बात की पुष्टि की गई कि प्रथम किबला को भी अल्लाह ही ने निश्चित किया था। कहा गया "और (अब तक) तुम जिस ('किबले') पर थे उसे तो हमने केवल इसलिए 'किबला' ठहराया था ताकि हम जान ले कि कौन 'रसूल' का अनुसरण करता है और कौन उलटे पाँव फिर जाता है" (अज-जक़रा १४३)।

कुरआन की ऐसी कोई आयत नहीं पेश की जा सकती जिसमें पहले 'किबले' की ओर मुग्न करके 'नमाज' पढ़ने का आदेश दिया गया हो। इस से स्पष्ट है कि नबी सल्ल० पर कुरआन के अतिरिक्त भी 'बल' आती थी जिसके द्वारा आपको बहुत से ऐसे आदेश भी मिलते थे जो कुरआन में बयान नहीं किए जाते थे।

नबी सल्ल० ने एक बार अपनी किसी पत्नी से गुप्त रूप से कोई बात कही, उन्होंने उसे दूसरो को बता दिया। नबी सल्ल० को 'बल' द्वारा इसकी सूचना मिल गई "और जब 'नबी' ने अपनी पत्नियों में से किसी से चुपके से एक बात कही फिर जब उसने उसकी खबर (दूसरो को) कर दी और अल्लाह ने नबी पर उसको जाहिर कर दिया, तो उस ने उसका कुछ हिस्सा जता दिया और कुछ को टाल गया। तो जब 'नबी' ने उसे (पत्नी को) इसकी खबर की, तो उसने कहा . आपको इसकी सूचना किसने दी ? नबी ने कहा मुझे सूचना दी ज्ञान रखने वाले और खबर रखने वाले (अल्लाह) ने।"

—अत-तहरीम ३

कुरआन में कही कोई ऐसी 'आयत' नहीं है जिसमें नबी सल्ल० को सूचित किया गया हो कि तुम्हारी पत्नी ने चुपके से कही हुई बात दूसरो से कह दी।

'उहुद' सग्राम के दूसरे दिन नबी सल्ल० ने मुसलमानों को एकत्र करके कहा कि हमें 'काफ़िरो' का पीछा करना चाहिए कहीं वे दोबारा हम पर आक्रमण न कर दें। इस अवसर पर भी जब कि मुसलमान

जखमों से चूर थे, 'काफिरो' का पीछा करने के लिए तैयार हो गए। कुरआन से इस बात का प्रमाण मिलता है कि 'काफिरो' का पीछा करने का आदेश अल्लाह की ओर से था जबकि कुरआन में कहीं भी कोई ऐसी 'आयत' नहीं है जिसमें मुसलमानों को 'काफिरो' का पीछा करने का हुक्म दिया गया हो। कुरआन के शब्दों को देखिए "जिन लोगों ने 'अल्लाह' और 'रसूल' की पुकार सुनी (और लड़ने लिए तैयार हो गए), जबकि वे (अभी-अभी लड़ाई में) जख्म खा चुके थे।" —आले इमरान १७२

इस से स्पष्ट है कि कुरआन के अतिरिक्त भी नबी सल्ल० पर अल्लाह की ओर से आर्दश और 'बह्य' का अवतरण होता था।

'बद्र' सग्राम के समाप्त होने पर 'सूरा' अल-अनफाल का अवतरण हुआ। इस 'सूरा' में अल्लाह ने बद्र सग्राम पर पूर्ण रूप से विवेचना की है। विवेचना का आरम्भ करते हुए कहा गया है "और (याद करो) जब अल्लाह तुम से वादा कर रहा था कि दो गरोहो (अर्थात् तिजारती काफिला और कुरैश की सेना) में से एक तुम्हारे हाथ आ जायेगा, और तुम चाहते थे कि वैभव-हीन (निरस्त्र) गरोह तुम्हारे हाथ आए और अल्लाह चाहता था कि अपने वचनो द्वारा हक (सत्य) को हक कर दिखाये, और 'काफिरो' की जड़ काट कर रख दे।" —अल-अनफाल ७

यह 'आयत' बताती है कि अल्लाह ने 'नबी' के द्वारा यह वादा किया था कि 'ईमान वालो' को दो गरोहो में से एक पर अधिकार प्राप्त होगा, परन्तु कुरआन में कहीं कोई ऐसी 'आयत' नहीं दिखाई जा सकती जिसमें मुसलमानों से युद्ध से पूर्व यह वादा किया गया हो। इस से स्पष्ट है कि यह वादा कुरआन के अतिरिक्त किसी और 'बह्य' के द्वारा किया गया था।

इस बद्र सग्राम ही के सिलसिले में कहा गया '(याद करो) जब तुम अपने 'रब' से फरियाद कर रहे थे, तो वह तुम्हारी फरियाद को पहुँचा कि मैं एक हजार लगातार आने वाले 'फिरिस्तो' से तुम्हारी मदद करूँगा।" —अल-अनफाल ६

मुसलमानों की फरियाद का उत्तर कुरआन की किसी 'आयत' में नहीं मिलता। इस प्रकार के दूसरे और उदाहरण भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं जिनमें इस बात की पुष्टि होती है कि कुरआन के अलावा भी नबी सल्ल० के पास 'बह्य' आती थी।

कुरआन से यह भी मालूम होता है कि 'बह्य' कई प्रकार की होती है। एक 'बह्य' तो वह है जिसके द्वारा कुरआन का अवतरण हुआ।

कुरआन अल्लाह के 'फ़िरिश्ते' के द्वारा नबी सल्ल० के हृदय पर अवतरित हुआ है। दूसरे प्रकार की 'वह्य' वह है जिसे 'उलका' व 'उलहाम' (दैवी प्रेरणा) कहा जाता है। इसमें बात सीधे प्रत्यक्षत मन में डाल दी जाती है। तीसरे प्रकार की 'वह्य' वह है जिसमें पर्दे के पीछे से उस प्रकार 'कलाम' (वार्ता) किया जाता है कि पर्दे के पीछे से आवाज आये परन्तु मामने कोई दीख न पड़े। जैसे तूर पर्यंत पर हजरत मूसा ने अल्लाह ने कलाम (वात-चीत) किया था। एक वृक्ष से सहसा आवाज आने लगी परन्तु बोलने वाला निगाहों से ओझल था। इसके अतिरिक्त स्वप्न द्वारा भी अल्लाह अपने 'नबी' को आदेश देता है। इसकी पुष्टि भी कुरआन में होती है। नबी सल्ल० ने मदीना में स्वप्न देखा कि आप मक्का में दाखिल हुए हैं और 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) कर रहे हैं। आपका यह स्वप्न पूरा हुआ। कुरआन ने इस बात की पुष्टि भी की यह स्वप्न आपको अल्लाह ने दिखाया था। जैसा कि कुरआन में कहा गया "निम्सन्देह अल्लाह ने अपने रसूल को स्वप्न सच्चा दिखाया जिसमें 'हिकमत' थी। तुम 'मसजिदे हराम' (काबा) में अवश्य दाखिल होगे। —अल-फतह : २७

कुरआन व 'हदीस' दोनों का अनुपालन अनिवार्य है। हाफिज इब्न कसीर कहते हैं 'सुन्नत' भी आप पर (नबी सल्ल० पर) 'वह्य' द्वारा अवतरित हुई जिस प्रकार कि कुरआन उतरा। अन्तर बस इतना है कि कुरआन 'वह्य मतलू' (पाठ्य दैवी सकेत) है और 'सुन्नत' 'वह्य गैर-मतलू' (अपाठ्य दैवी प्रकाशन)।"

इमाम हाजिमी 'नासिख व मनसूख' में कहते हैं. "हजरत जिवरील 'हदीस' लेकर उतरते थे और आपको सिखाते थे। अतः अल्लाह के रसूल सल्ल० का हर वह आदेश जो प्रमाणित रूप में हम तक पहुँचा हो वह भी अवतरण में सम्मिलित है।"

नबी सल्ल० से जब कोई बात पूछी जाती, तो यदि आपको मालूम होता तो उत्तर देते नहीं तो 'वह्य' की प्रतीक्षा करते और 'वह्य' आ जाने के पश्चात् उसका उत्तर देते। इसकी मिसालें 'हदीस' की किताबों में बहुत मिलती हैं। उदाहरणार्थ, इब्न मसऊद कहते हैं कि नबी सल्ल० से आत्मा के बारे में पूछा गया, तो आप चुप रहे, यहाँ तक कि 'आयत' उतरी।

(बुखारी)

'हज्ज' की हालत में खुशबू लगाना वर्जित है। एक 'सहाबी' ने न

१. दे० सूरा अल-बकरा ६७-६८, अश-शुअरा : १६२-१६४।

२. सूरा अश-शूरा : ५१।

जानने के कारण 'इहराम' में खुशबू लगा ली और चुगा भी पहन लिया। उन्होंने आप से पूछा कि उन्हें क्या करना चाहिए। आपको जवाब मालूम न था। आपके पास 'बह्य' आई तब आपने उत्तर दिया कि खुशबू धो डालो और चुगा निकाल दो।

कुरआन और सुन्नत

कुरआन मजीद की सम्पूर्ण वर्णन-शक्ति जिस चीज में व्यय होती दीख पड़ती है वह वास्तव में 'ईमान', धारणा और धर्म के मौलिक नियमों की शिक्षा है। नैतिकता, 'इबादत' (उपासना), आचार-व्यवहार आदि से सम्बन्धित आदेश के अधिकतर नियम और उनकी मौलिक बातें ही कुरआन में बयान की गई हैं। उन आदेशों का विस्तार और उन से सम्बन्धित आनुषंगिक एवं गौण बातों का ज्ञान हमें नबी सल्ल० के कथन और व्यवहार द्वारा होता है। नबी सल्ल० ने वास्तव में कुरआन के आदेशों को स्पष्ट किया और उनको जीवन में व्यावहारिक रूप दिया। कानून और नियम को विस्तृत रूप देना वास्तव में नबी का दायित्व था। कुरआन में कहा गया है "और (हे नबी!) हमने तुम पर याद-दिहानी (अनुस्मारक अर्थात् कुरआन) उतारी है ताकि तुम लोगों के लिए उसकी शिक्षा को स्पष्ट रूप से बयान कर दो जो उनकी ओर उतारी गई है" (अन-नह्ल ४४)। नबी सल्ल० का वचन और कर्म कुरआन के नियम और आदेशों से भिन्न कोई चीज नहीं है, बल्कि वह कुरआन ही की व्याख्या और उसका अङ्ग है। इमाम शातबी के शब्दों में "मानो 'सुन्नत' को ईश्वरीय ग्रन्थ के आदेशों के अभिप्राय और अर्थ की टीका और व्याख्या का स्थान प्राप्त है।" —अल-मुवाफिकात, भाग ४, पृष्ठ १०

तफसीर फतहुल बयान में है "कुरआन की तफसीर (टीका) और उसका बयान 'सुन्नत' ('हदीस') से समझा जाये। इस संक्षिप्त सार रूप के स्पष्टकर्ता स्वयं अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० हैं। और इसीलिए कहा गया है कि जब कभी कुरआन व 'हदीस' के बीच जाहिर में टकराव मालूम हो तो 'हदीस' को प्राथमिकता का स्थान देना चाहिए क्योंकि इस 'आयत' (सकेत है सूरा अन-नह्ल आयत ४४ की ओर) के अनुसार कुरआन संक्षिप्त सार रूप है और 'हदीस' उसकी व्याख्या और टीका है। और स्पष्टकर्ता को सदैव संक्षिप्त की अपेक्षा प्राथमिकता प्राप्त होती है।

यही बात खाजिन और मुआलिमुत्तनजील आदि कुरआन की टीकाओं में टीकाकारों ने लिखी है। इमाम सियूती ने लिखा है: "कुछ स्थानों पर कुरआन का बयान इतना संक्षिप्त है कि 'हदीस' के बिना उस

का पालन करना कठिन है। मानो कुरआन अपने अभिप्राय को समझाने में 'हदीस' पर आश्रित है।" —मिफताहुल जन्न :

इमाम औजाई कहते हैं 'किताब' (कुरआन) को 'सुन्नत' की उस से कहीं अधिक आवश्यकता है जितनी कि 'सुन्नत' को किताब की आवश्यकता है।" हाफिज अबू उमर इस वाक्य को स्पष्ट करते हैं कि उनका आशय यह है कि 'सुन्नत' कुरआन का अभिप्राय व्यक्त करती है। इमाम शातबी ने इमाम औजाई के शब्दों की व्याख्या करते हुए लिखा है : "कुरआन की इरादत में कभी दो बातों और कभी इससे अधिक की सम्भावना होती है। 'हदीस' उनमें से एक को निश्चित कर देती है फिर वही कुरआन का अभिप्राय माना जाता है दूसरी सम्भावनाओं को छोड़ दिया जाता है। —अल-मुवाफिकात, भाग ४, पृष्ठ ८-१०

हाफिज इब्न कसीर कहते हैं कि तुम्हारे लिए 'सुन्नत' का अनुपालन अनिवार्य है क्योंकि वह कुरआन की व्याख्या और उसकी टीका है। इमाम शाफई कहते हैं अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जो फैसला किया है वह कुरआन से समझ कर किया है। सर्वोच्च अल्लाह का कथन है : "(हे नबी !) हमने हक के साथ यह 'किताब' तुम्हारी ओर उतारी है ताकि अल्लाह ने जो कुछ तुम्हें दिखाया है उसके अनुसार तुम लोगों के बीच निर्णय करो।" अन-निसा १०५

इमाम हज्म जाहिरी रह० कहते हैं "समस्त 'फिक्ह' (नियम एवं धर्म-शास्त्र) सम्बन्धी वात्ताओं और समस्याओं का मूल आधार कुरआन में मौजूद है। 'सुन्नत' केवल उसे उजागर करती है जैसा कि अल्लाह ने कुरआन में कहा है "हमने किताब (कुरआन) में किसी (आवश्यक) चीज को नहीं छोड़ा।" —६ ३८

यहाँ कुछ मिसालें दी जा रही हैं जिन से इसका भली-भाँति अनुमान किया जा सकता है कि नबी सल्ल० ने किस प्रकार अपने कर्म और वचन द्वारा कुरआन की व्याख्या की और कुरआन के आदेशों को स्पष्ट किया और उनका वास्तविक अर्थ एवं अभिप्राय बताया।

कुरआन में हुक्म दिया गया कि "नमाज" के लिए उठो, तो अपना मुँह और कुहनियो तक हाथ धो लिया करो, और अपने सिरों का 'मस्ह' कर लो और अपने पाँव टखनों तक (घोओ या उनका मस्ह करो)" (अल-माइदा . ६) । "नबी सल्ल० से मालूम हुआ कि मुँह धोने में कुल्ली करना और नाक साफ करना भी सम्मिलित है और सिर के 'मस्ह' के साथ कान का 'मस्ह' भी करना चाहिए। कान भी सिर ही का अङ्ग

है। पाँव पर मोजे हों तो 'मस्ह' किया जाए नहीं तो पाँव को घोना चाहिए। साथ ही आपने यह भी बताया कि 'वजू' किन हालतों में टूट जाता है और किन हालतों में नहीं टूटता।

कुरआन में 'नमाज' कायम करने का आदेश दिया गया परन्तु 'नमाज' से अभिप्राय क्या है ? और उसके कायम करने का क्या अर्थ होता है ? ये समस्त बातें हमें नबी सल्ल० के आचरण और कथनों द्वारा मालूम होती हैं। नबी सल्ल० की 'मुन्नत' (तरीका, रीति, आचरण आदि) ही से हमें 'नमाज' का समय, रूप, अङ्ग, सामूहिक रूप से नमाज पढ़ने का ढंग और नमाज में नम्रन्वित दूसरी बातों का ज्ञान होता है।

जब रोजे के बारे में यह आयत उतरती . "(खाते-पीते रहो) यहाँ तक कि सफेद घागा तुम्हें काले घागे से स्पष्टतः अलग दिखाई देने लगे।" (अल-बकरा . १८७) तो अदी बिन हातिम रजि० ने दो घागे सफेद और काले अपने पास रख लिए और जब तक उनमें अन्तर मालूम न हुआ खाते-पीते रहे। मुबह को नबी सल्ल० से कहा कि मैंने रात को काले और सफेद दो घागे अपने तकिया के नीचे रख लिए थे। आपने अदी रजि० की बात सुनकर हँसते हुए कहा कि तुम्हारा तकिया बड़ा लम्बा-चौड़ा है कि जिसमें रात और दिन दोनों समाविष्ट हो जाते हैं। इस से अभिप्रेत रात की कालिमा और दिन का प्रकाश है। इसके पश्चात् स्पष्टीकरण के लिए 'मिनल फज्र' (अर्थात् प्रभात की काली घारी) के शब्द भी अवतीर्ण हुए। —(बुखारी)

कुरआन से यह तो मालूम होता है कि 'हज्ज' करना अनिवार्य है (अले इमरान ९७), परन्तु कुरआन ने इसको स्पष्ट नहीं किया कि जीवन में केवल एक बार 'हज्ज' करना जरूरी है या प्रत्येक वर्ष हज्ज करना होगा। नबी सल्ल० के कथन से ज्ञात हुआ कि यदि कोई जीवन में एक बार 'हज्ज' कर ले, तो अल्लाह के आदेश का अनुपालन उसने कर लिया।

कुरआन में सोने-चाँदी के एकत्र करने पर सख्त धमकी दी गई है (अत-तौबा . ३४)। इस धमकी से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे अब इस का अवसर नहीं रहा कि कोई व्यक्ति खर्च से अधिक एक पैसा भी अपने पास रख सके या कोई स्त्री साधारण आभूषण भी अपने पास रखे; परन्तु नबी सल्ल० ने स्पष्ट किया कि चाँदी का 'निसाब' (धन की वह मात्रा जिस पर 'जकात' देनी जरूरी हो) क्या है ? और 'निसाब' के बराबर या उससे अधिक सोना-चाँदी रखने वाला व्यक्ति यदि ढाई

प्रतिशत 'जकात' अदा कर दे तो कुरआन का डरावा और घमकी उस पर चरस्पा नहीं होगी।

कुरआन में खाने-पीने की कुछ चीजों को हराम (अवैध) और कुछ चीजों के हलाल (वैध) होने का उल्लेख करके शेष चीजों के विषय में एक सामान्य आदेश दिया गया है कि तुम्हारे लिए शुद्ध चीजे हलाल (वैध) और अशुद्ध वस्तुये हराम (अवैध) की गई हैं (अल-माइदा . ४)। कौन सी चीजे शुद्ध है जिनको हम खा सकते है ? और कौन सी चीजे अशुद्ध है जिनको खाना हमारे लिए वैध नहीं है ? इन सबका विस्तृत ज्ञान हमें नबी सल्ल० के व्यवहार और आदेशों के द्वारा होता है।

कुरआन में विरासत (उत्तराधिकार, तरका) के कानून का उल्लेख करते हुए बताया गया है कि मरने वाले का कोई पुत्र न हो और एक लड़की हो, तो वह तरका के आधे की हकदार होगी (अन-निसा ११)। इस आदेश में यह बात स्पष्ट नहीं थी कि यदि दो लड़कियाँ हो, तो उन्हें कितना हिस्सा मिलेगा। नबी सल्ल० ने बताया कि दो लड़कियों का हिस्सा भी उतना ही है जितना दो से अधिक लड़कियों के लिए निर्धारित किया गया है।

कुरआन में दो ऐसी लड़कियों से, जो आपस में बहिने हों, एक साथ विवाह करने से रोका गया है (अन-निसा २३)। इस हुक्म से वास्तव में उस प्रेम की रक्षा अभीष्ट है जो दो बहिनों में स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। नबी सल्ल० ने बताया कि उन दो स्त्रियों से एक साथ विवाह करना भी इसी आदेश के अन्तर्गत अवैध है जो आपस में फूफी-भतीजी या खाला-भानजी हो, क्योंकि परिवर्जन का जो कारण वहाँ पाया जाता है वह यहाँ भी मौजूद है।

कुरआन में शराब को हराम बताया गया है। शराब के हराम होने का कारण यह है कि वह मादक और नशा लाने वाली होती है। अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने बताया कि प्रत्येक नशा लाने वाली चीज हराम है। किन्तु कुछ चीजे ऐसी होती है कि यदि थोड़ी पी जाये तो नशा नहीं होता। यहाँ यह प्रश्न उठता था कि ऐसी चीजों का थोड़ी मात्रा में पीना कैसा है ? 'हदीस' में बता दिया गया "जो चीजे अधिक मात्रा में होने पर नशा लाये उनकी थोड़ी मात्रा भी हराम (अवैध) है।"

कुरआन में दूध के रिश्ते के कारण जिन स्त्रियों से विवाह को अवैध कहा गया है वे माँ और बहिन है (अन-निसा २३)। नबी सल्ल० ने माँ-बहिन के साथ कुछ दूसरे रिश्तों को भी सम्मिलित किया

है। जिस किसी स्त्री का भी किसी ने दूध पिया है वह माता के सदृश है और उसका पति पिता के सदृश है। इस रिश्ते से भी वे सभी रिश्ते हराम ठहरेगे जो माता-पिता के रिश्ते से हराम होते हैं।

कुरआन में चोरी की सजा हाथ काटना बताया गया है। परन्तु यह नहीं बताया गया कि यह सजा कितने माल (धन) की चोरी करने पर दी जायेगी? इसी प्रकार कुरआन में यह बात भी नहीं बताई गई कि चोर का कितना हाथ काटा जायेगा? ये सारी बातें हमें 'सुन्नत' से मालूम होती हैं।

कुरआन में कहा गया है "तलाक पाई हुई स्त्रियाँ तीन 'कुरुअ' तक अपने आप को इन्तजार में रखें" (अल-बकरा . २२८)। 'कुरुअ' शब्द से अभिप्रेत स्त्रियों का मासिक धर्म (माहवारी) और शुद्ध अवस्था (पाकी) दोनों ही हो सकते हैं। 'सुन्नत' से यह बात स्पष्ट हुई कि यहाँ 'कुरुअ' से अभिप्रेत मासिक धर्म है। जब यह आयत उतरी : "जो लोग 'ईमान' लाये और अपने ईमान को कुछ जुल्म के साथ सम्मिश्रित नहीं किया, उन्हीं लोगो के लिए निश्चिन्तता है, और वही राह पाये हुये लोग हैं।"

—अल-अनआम . ८२

'सहावा' घबरा गए। 'नबी सल्ल०' की सेवा में पहुँचे, निवेदन किया . हे अल्लाह के 'रसूल' ! हम में कौन है जिस से 'ईमान लाने' के पश्चात् जुल्म या पाप का कोई कर्म न हुआ हो। आपने कहा : यहाँ जुल्म से अभिप्रेत 'शिक' (बहुदेववाद) है। जैसा कि दूसरी 'आयत' में 'शिक' की अभिव्यजना जुल्म के शब्द से ही की गई है

"निस्सन्देह 'शिक' बहुत बड़ा जुल्म (घोर अन्याय) है" (सूरा लुकमान : १३)

—बुखारी व मुस्लिम

यह उत्तर सुनकर सहावा रजि० का सशय जाता रहा और उनकी घबराहट दूर हो गई।

एक बार नबी सल्ल० ने कहा कि 'कियामत' के दिन जिस से हिसाब लिया गया समझ लो वह विनष्ट हुआ। हज़रत आइशा रजि० ने कहा कि हे अल्लाह के रसूल ! कुरआन में तो कहा गया है . "तो जिस किसी को उसका (कर्म-)पत्र उसके दाहिने हाथ में दिया गया, उस से आसान हिसाब लिया जायेगा।"

—अल-इनशिकाक : ७-८

नबी सल्ल० ने कहा : 'आसान हिसाब' का अर्थ तो बस पेश करना है। (बुखारी व मुस्लिम)। अर्थात् कर्म-फल उसके सामने रख कर उसे बतला दिया जायेगा कि तूने ये-ये कर्म किए हैं; परन्तु उस से पूछ-ताछ न

होगी। यदि किसी से यह प्रश्न कर लिया गया कि यह कर्म क्यों किया, तो निश्चय ही उसकी खैर नहीं।

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि 'सुन्नत' (नबी सल्ल० का कर्म व कथन) वास्तव में कुरआन के आदेशों का ही विस्तार है। कुरआन की 'आयत' है "और (हे नबी!) हम ने तुम पर यह 'ज़िक्र' (अनुस्मारक) उतारा है ताकि तुम लोगों के सामने खोल-खोल कर (उस शिक्षा आदि को) बयान कर दो जो-कुछ उनकी ओर उतारा गया है।" (अन-नह्ल : ४४) इस आयत से स्पष्ट होता है कि 'हदीस' या 'सुन्नत' वास्तव में कुरआन (जिसे आयत में जिक्र अथवा अनुस्मारक कहा गया है) का टीका या बयान है। बयान के बहुत से भेद किए जा सकते हैं, प्रत्येक पहलू से 'हदीस' या 'सुन्नत' को कुरआन का बयान कहेंगे। यहाँ हम बयान (स्पष्टीकरण) के कुछ भेदों का संक्षिप्त रूप में संकेत करेंगे :

बयान तफ़सील (विस्तार सम्बन्धी बयान)

'आयत' के किसी संक्षिप्त संकेत को 'हदीस' खोल देती हो इसे बयान तफ़सील कहेंगे।

बयान तज़ईन (निश्चय सम्बन्धी बयान) :

'आयत' में विभिन्न सम्भावनाओं में से 'हदीस' किसी एक को निश्चित करती हो।

बयान ताकीद :

'आयत' और 'हदीस' का विषय एक ही हो। 'हदीस' से केवल आयत का समर्थन एवं पुष्टि होती हो।

बयान तक्ररीर (निर्धारण सम्बन्धी बयान) :

'हदीस' कुरआन को किसी 'आयत' के प्रति होने वाले अर्थ सम्बन्धी सन्देह को दूर करके उसके अर्थ को स्पष्टतः व्यक्त करती हो।

बयान इलहाक (संहिता सम्बन्धी बयान) :

किसी 'आयत' के छोड़े हुए मजमून या विषय के साथ मिलकर 'हदीस' उसे पूरा करती या उसे कुछ विस्तृत कर देती हो।

बयान तख़सीस (विशेषत्व सम्बन्धी बयान) :

'आयत' का अर्थ देखने में सामान्य हो परन्तु 'हदीस' उसे किसी विशेष व्यक्ति से सम्बद्ध करती हो।

बयान तौजीह (स्पष्टीकरण सम्बन्धी बयान) :

'आयत' में उल्लिखित आदेश या शिक्षा का कारण 'हदीस' से मालूम होता हो।

बयान तअलील (हेतु सम्बन्धी) :

‘आयत’ में उल्लिखित शिक्षा या आदेश का हेतु ‘हदीस’ से व्यक्त होता हो ।

बयान तासीर (गुण एवं प्रभाव सम्बन्धी बयान) :

‘आयत’ के प्रभाव और गुण को ‘हदीस’ व्यक्त करती हो ।

बयान तमसील (उपमा सम्बन्धी बयान) :

‘आयत’ के किसी सार्विक सिद्धान्त के किसी आनुषंगिक प्रसंग का उल्लेख ‘हदीस’ में हुआ हो ।

बयान तफरीअ (निष्कर्षण सम्बन्धी बयान) :

‘आयत’ के किसी सार्विक सिद्धान्त से ‘हदीस’ कोई आनुषंगिक या गौण प्रसंग निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करती हो ।

बयान कयास (अनुमान सम्बन्धित बयान) :

‘हदीस’ किसी सम्मिलित हेतु के आधार पर ‘आयत’ के किसी आनुषंगिक प्रसंग के अनुरूप कोई आनुषंगिक प्रसंग प्रस्तुत करती हो ।

बयान इस्तिखराज (उद्धरण सम्बन्धी बयान) :

‘आयत’ के किसी आनुषंगिक प्रसंग से ‘हदीस’ ने कोई सार्विक सिद्धान्त उद्धृत करके प्रस्तुत किया हो ।

कुरआन व हदीस से प्रत्येक के उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं, परन्तु हम यहाँ केवल सक्षिप्त सकेतो पर बस करते हैं ।

अब यह बात स्पष्ट हो गई कि ‘सुन्नत’ (नबी सल्ल० का व्यवहार व वचन) वास्तव में कुरआन के आदेशों का विस्तार है । ‘सुन्नत’ से कुरआन के आदेश के अभिप्राय का स्पष्टीकरण होता है । बहुत सी ‘हदीसे’ ऐसी भी हैं जिन से कुरआन की ‘आयतों’ का केवल समर्थन होता है । उदाहरणार्थ एक ‘हदीस’ है : “चांद देखकर रोज़ा रखना शुरू करो और चांद देखकर रोज़ा रखना बन्द कर दो” यह ‘हदीस’ कुरआन की निम्नलिखित ‘आयत’ के आदेश की पुष्ट करती है . ‘रमज़ान’ का महीना वह है जिस में कुरआन (पहले-पहल) उतारा गया, जो लोगों के लिए एक मार्ग-दर्शन है, और (जिस में) मार्ग-दर्शन की खुली निशानियां हैं और जो (सत्य और असत्य को अलग कर देने वाली) कसौटी है तो तुम में से जो कोई इस महीने को पाये, उसे चाहिए कि उसके रोज़े रखे ।”

‘सुन्नत’ का अनुसरण

नबी सल्ल० के कर्म और वचन और आपके तरीके का अनुपालन करना हमारे लिए अनिवार्य है। आपकी ‘नुबूवत’ और ‘रिसालत’ किसी विशेष युग तक सीमित नहीं है। आप नबी होने के समय से लेकर ‘कियामत’ तक सारे ही लोगों के रसूल हैं : “(हे नबी !) हमने तो तुम्हें समस्त मनुष्यों के लिए शुभ सूचना देने वाला और सचेत करने वाला बना कर भेजा है; परन्तु अधिकतर लोग जानते नहीं है।” —सवा : २८

एक दूसरे स्थान पर कहा गया

“और (कहो:) यह कुरआन मेरी ओर ‘बह्य’ किया गया है, ताकि मैं इस से तुम्हें और जिस किसी को यह पहुँचे सब को सचेत कर दूँ।”

—अल-अनआम : १६

एक दूसरे स्थान पर कहा गया : “और (हे मुहम्मद !) हमने तुम्हें सारे संसार के लिए ‘रहमत’ (दयालुता) ही बना कर भेजा है।”

—अल-अरविया : १०७

मालूम हुआ आपकी ‘रिसालत’ केवल आपके अपने ही समय के लिए न थी। ‘कियामत’ तक अल्लाह के आदेशानुपालन के साथ आपके आदेशों का पालन करना भी आपके अनुयायियों का कर्तव्य है। कुरआन की यह शिक्षा ‘कियामत’ तक के लिए है : “हे ‘ईमान लाने वालो’ ! अल्लाह का हुक्म मानो, और ‘रसूल’ का हुक्म मानो और उनका जो तुम में अधिकारी लोग हैं; फिर यदि तुम्हारे बीच किसी बारे में झगड़ा हो जाये, तो उसे अल्लाह और ‘रसूल’ को ओर ले जाओ।” —अन-निसा : ५६

अधिकारी लोग जो आदेश देंगे उनका पालन करना भी मुसलमानों के लिए आवश्यक है, शर्त यह है कि वे अल्लाह और ‘रसूल’ के आदेश के प्रतिकूल न हों बल्कि मौलिक रूप से वे उनके अनुरूप हों। मतभेद की दशा में सदा अल्लाह और ‘रसूल’ की ओर रुजू करना चाहिए। मुस्लिम व्यक्ति पर केवल कुरआन के आदेशों का अनुपालन ही काफी नहीं है, ‘सुन्नत’ का अनुसरण भी उसके लिए आवश्यक है। यही कारण है कि नबी सल्ल० कहते हैं : “तुम जिस तरह मुझे ‘नमाज’ पढ़ते देखते हो उसी तरह नमाज अदा करो।” अन्तिम ‘हज्ज’ के अवसर पर आपने कहा . “लोगो ! तुम ‘हज्ज’ से सम्बन्धित रीतियां मुझ से सीख लो कदाचित् मैं तुम्हें इस वर्ष के बाद न देखूँ।”

नबी सल्ल० कहते हैं : “जिस किसी ने मेरी ‘सुन्नत’ से किनारा खींचा

उसका मुँह से 'कोई सम्बन्ध नहीं'।" आपकी वसीयत है : "मैंने तुम्हारे बीच दो चीजे छोड़ी है, जब तक तुम उन्हें मजबूती से पकड़े रहोगे कदापि गुमराह न होंगे : अल्लाह की किताब और अल्लाह के 'रसूल' की 'सुन्नत'।"

नबी सल्ल० के बाद किसी दूसरे 'नबी' के आने की सम्भावना भी नहीं है, इसलिए कि 'नुबूवत' का सिलसिला आप पर समाप्त कर दिया गया.

"(लोगो !) मुहम्मद तुम्हारे पुरुषों में से किसी के पिता नहीं हैं, परन्तु वे अल्लाह के 'रसूल' और 'नबियों' के समापक हैं, और अल्लाह हर चीज का ज्ञान रखने वाला है।"

—अल-अहजाब : ४०

स्वयं नबी सल्ल० के कथनों से भी यही मालूम होता है कि 'नुबूवत' का सिलसिला आप पर समाप्त हो गया है^१। अब 'क्रियामत' तक आप ही के अनुसरण में मानव-कल्याण और मुक्ति है। आपके द्वारा अल्लाह ने अपने 'दीन' को पूर्ण कर दिया^२। और उसके सदा सुरक्षित रहने का वादा किया है^३। अल्लाह की 'किताब' के साथ रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' का अनुसरण मुस्लिम व्यक्तियों के लिए आवश्यक है जिस से इन्कार नहीं किया जा सकता। सहाबा रजि० और 'दीन' के दूसरे महान्, योग्य और विद्वान् व्यक्तियों ने कुरआन के साथ 'सुन्नत' के अनुपालन को अपने लिए अनिवार्य समझा। 'सुन्नत' से किनारा खींचना या उसका इन्कार करना उस पद्धति के सर्वथा प्रतिकूल है जिस पर नबी सल्ल० अपने अनुयायियों को छोड़ गए थे। 'सहाबा' रजि० का तरीका यह था कि उन्हें हर अवसर पर नबी सल्ल० की 'सुन्नत' की तलाश होती थी। हजरत अबू बक्र रजि० के सामने कोई मामला आता तो वे पहले उसका हुक्म अल्लाह की 'किताब' व रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' ही में तलाश करते थे। किसी मामले में वे इजतिहाद^४ से उसी समय काम लेते जब अल्लाह की 'किताब' और रसूल की 'सुन्नत' में उसके लिए

१. बुखारी, मुस्लिम, हजरत अनस रजि० से उल्लिखित।

२ इस किताब के अध्याय 'रिसालत पर ईमान' में 'नुबूवत की समाप्ति' से सम्बन्धित 'हदीसें' देखिए।

३ दे० सूरा अल-माइदा . ३।

४. दे० सूरा अल-हज्ज : ६।

५. नये मामलों में कुरआन, 'सुन्नत' और धर्म के मौलिक नियमों के प्रकाश में सोच-विचार कर धर्म का आदेश मालूम करना।

हुक्म और आदेश न पाते'। हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने अपने सर्वप्रथम 'ख़ुतबे' (भाषण) में कहा था : "मेरा हुक्म मानो जब तक मैं अल्लाह और उसके रसूल का हुक्म मानता रहूँ; किन्तु यदि मैं अल्लाह और उसके रसूल की अवज्ञा करूँ तो मेरा कोई आज्ञापालन तुम पर नहीं है।"

एक स्त्री अपने पोते की मीरास की माँग करती है जिसकी माता मर चुकी थी। हज़रत अबू बक्र रज़ि० कहते हैं : "अल्लाह की 'किताब' में कोई ऐसा आदेश नहीं जिस की दृष्टि से तुम्हें हक पहुँचता हो, और 'रसूल' की 'सुन्नत' की दृष्टि से तेरा कोई हक मुझे मालूम नहीं है। अतः इस समय वापस जा यहाँ तक कि मैं लोगों से पूछूँ।" इसके बाद उन्होंने लोगों से पूछा तो हज़रत मुगीरह बिन शोअबा और मुहम्मद बिन मुस्लिमा ने खड़े होकर गवाही दी कि उनकी मौजूदगी में नबी सल्ल० ने दादी को छठा हिस्सा दिलाया है। इस के बाद हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने इसी के अनुसार उस स्त्री को छठा हिस्सा दिलाया^१।

हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने अपनी बेटी हज़रत आइशा रज़ि० को कुछ माल देने को कहा था परन्तु उन्हें याद नहीं रहा कि यह माल उन्होंने दिया या नहीं। मृत्यु के समय उन्होंने हज़रत आइशा रज़ि० से कहा कि यदि तुमने वह माल ले लिया है तब तो वह तुम्हारे पास रहेगा (वह तुम्हें हिबा हो चुका) परन्तु यदि अभी तक तुमने उसे अपने कब्जे में नहीं लिया है तो अब वह मेरे सब वारिसों में तकसीम होगा। यह बात उन्होंने इसलिए कही कि यदि माल अभी तक कब्जे में नहीं लिया गया है, तो उसकी हैसियत केवल वसीयत की रहती है और 'हदीस' में है : "वारिस के लिए कोई वसीयत नहीं।"

हज़रत सिद्दीक रज़ि० 'जकात' रोकने वालों से लड़ने का निश्चय करते हैं। हज़रत उमर रज़ि० को इस निश्चय के सही होने में सदेह होता है। वे कहते हैं कि आप उन से किस तरह लड़ेंगे जबकि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा है कि मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं लोगों से लड़ूँ यहाँ तक कि वे इसको मान लें कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (उपास्य) नहीं। जब वे इसे मान लेंगे तो वे मुझ से अपने माल और अपने प्राण को बचा लेंगे किन्तु हक के साथ (यदि उनके विरुद्ध कोई कार्रवाई करनी पड़ी तो दूसरी बात है) और उनका हिसाब अल्लाह के जिम्मे है। (अब जबकि वे इसको मानते हैं कि अल्लाह के सिवा कोई उपास्य नहीं तो आप उनसे

१. एलामुलमोकईन भाग १, पृष्ठ ५४।

२. मुवत्ता, बुखारी, मुस्लिम।

किस तरह लड़ेंगे ?) हजरत अबू बक्र रजि० ने कहा : अल्लाह की कसम मैं उन से अवश्य लड़ूँगा जो 'नमाज' और 'जकात' के बीच अन्तर करते हैं। 'जकात' माल का हक है (जिस तरह 'नमाज' आत्मा का हक है)। अल्लाह की कसम यदि वे ऊँट बाँधने की एक रस्सी भी रोक लेंगे जो वे अल्लाह के रसूल सल्ल० के समय में देते थे, तो मैं उन से लड़ूँगा।^१

हजरत उमर रजि० का तरीका भी वही था जो हजरत अबूबक्र सिद्दीक रजि० का था। जब मजूस का देश इस्लामी राज्य में सम्मिलित हुआ तो हजरत उमर रजि० को संकोच हुआ कि मजूस से 'जिजया' लिया जाये या न लिया जाये। कुरआन में केवल 'किताब वालो' से 'जिजया' लेने का उल्लेख है और कुरआन की भाषा में 'किताब वालो' से अभिप्रेत 'यहूद' व 'नसारा' है। हजरत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० ने इस बात की गवाही दी कि नबी सल्ल० ने हिज्र के 'मजूस' से 'जिजया' लिया है। इसके बाद हजरत उमर रजि० को उन से जिजया लेने में कोई संकोच नहीं हुआ।

हजरत उमर रजि० ने काजी शुरैह के नाम अपने एक पत्र में लिखा था कि यदि कोई मामला ऐसा सामने आए जिसके बारे में अल्लाह की किताब में कोई आदेश न हो तो उसका फैसला उस हुक्म के अनुसार करे जो उसके बारे में 'रसूल' की 'सुन्नत' में मिलता हो। और यदि कोई ऐसा मामला हो कि उसके बारे में अल्लाह की किताब और 'रसूल' की 'सुन्नत' दोनों ही खामोश हों तो उस कानून का अनुसरण करे जिस पर 'इजमाअ' हो चुका हो^२। और यदि उसके बारे में कोई 'इजमाअ' न हुआ हो तो फिर 'इजतिहाद'^३ से काम लेने का अधिकार है या फिर प्रतीक्षा करे कि उस मामले में कोई 'इजमाअ' हो जाये। हजरत उमर रजि० ने उन्हें यह भी लिखा कि मेरी दृष्टि में प्रतीक्षा करना ज्यादा अच्छा है^४।

हजरत उमर रजि० का विचार था कि पति की 'दियत'^५ से पत्नी को

१. बुखारी, मुस्लिम।

२. अर्थात् मुस्लिम समुदाय का कोई निर्णय हो चुका हो।

३. नये विषयों में कुरआन व 'सुन्नत' और इस्लाम के मौलिक नियमों के प्रकाश में सोच-विचार कर हुक्म मालूम करना।

४. एलामुल मोकईन।

५. कत्ल और खून के बदले का धन। वह धन जो किसी की हत्या करने पर उसके घर वालों को दिलाया जाये।

विरासत न मिलनी चाहिए परन्तु जब उन्हें इस बात की सूचना मिली कि नबी सल्ल० ने पति की 'दियत' से पत्नी को विरासत दिलाई है तो उन्होंने अपने कौल से रजू कर लिया।

एक बार हजरत उमर रजि० ने एलान किया कि किसी व्यक्ति ने नबी सल्ल० से इसके बारे में कुछ सुना है कि यदि भगड़े में किसी स्त्री का गर्भपात हो जाये तो उसकी 'दियत' क्या है? हमल बिन मालिक न खड़े होकर कहा कि एक बार दो स्त्रियो में लड़ाई हो गई। एक स्त्री ने दूसरी को खेमे की लकड़ी से मारा जिसकी चोट से उसका गर्भपात हो गया। नबी० सल्ल के सामने मामला लाया गया तो आपने उस पर दियत के पाँच सौ दिरहम जरूरी ठहराये। यह सुनकर हजरत उमर रजि० ने कहा कि यदि हम 'हदीस' न सुनते और अपनी राय से फैसला करते तो शायद इसके विरुद्ध फैसला कर जाते।

हजरत उमर रजि० के बाद हजरत उस्मान रजि० 'खलीफा' हुए। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि वे 'किताब' (कुरआन) और 'सुन्नत' के पाबन्द होंगे। और भूतपूर्व खलीफा हजरत अबू बक्र रजि० और हजरत उमर रजि० के उन फैसलों और तरीकों का अनुसरण करेंगे जो मुसलमानों के मतैक्य और सहमति से नियत पा चुके होंगे। और स्यय उनके अपने समय में जो बातें भले लोग के मतैक्य से तै होंगी उन्हें व्यवहार में लायेंगे।

हजरत अली ने खलीफा होने के बाद मिस्र वालों को जो सरकारी आदेश हजरत कैस बिन सअद बिन उबादा के हाथ भेजा था उसमें लिखा था कि हम पर तुम्हारा यह हक है कि अल्लाह की किताब और उसके 'रसूल' की 'सुन्नत' के अनुसार कार्य करे, और तुम पर वह हक कायम करे जो किताब व 'सुन्नत' की दृष्टि से हक हो, और अल्लाह के 'रसूल सल्ल०' की 'सुन्नत' को जारी (प्रचलित) करे और तुम्हारी बेखबरी की दशा में भी तुम्हारा हित करते रहे।

चारों 'खलीफा' के अतिरिक्त दूसरे 'सहाबा' भी किताब व 'सुन्नत' को अन्तिम निर्णायक वस्तु और अन्तिम पमाण (*Final Authority*) समझते थे। वे अपने को अल्लाह के रसूल की सुन्नत के विरुद्ध निर्णय करने का अधिकारी नहीं समझते थे। रोमी सरकार और हजरत मुआविया रजि० के बीच एक समझौते के अन्तर्गत एक नियत

समय तक युद्ध बन्द हो गया। जब वह अवधि समाप्त होने को आई तो हजरत मुआविया रजि० ने सेना के साथ शत्रु के देश की ओर प्रस्थान कर दिया। उन्होंने सोचा कि समझौते का जो मुद्दा है उसमें आक्रमण नहीं करेंगे परन्तु मुद्दा समाप्त होते ही अचानक हमला कर देंगे। एक दिन उन्हें दूर से एक सवार आता दिखाई दिया जो ऊँचे स्वर से कह रहा था अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर ! प्रतिज्ञा पूरी करनी है, उसे भग नहीं करना है। सवार अम्र बिन अबसा थे। हजरत मुआविया रजि० ने कहा क्या बात है ? उन्होंने कहा “मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना है कि जिस व्यक्ति का किसी जाति से कोई समझौता हो तो उस समझौते में कोई परिवर्तन न कर, जब तक कि (समझौते की) मुद्दा न गुजर जाये। या उस जाति को सूचित न कर दे।” हजरत मुआविया रजि० ने यह सुना तो अपनी सेना के साथ वापस हो गये।

हजरत उमर रजि० के बाद हजरत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० और दूसरे सहाबा रजि० ने हजरत उस्मान रजि० को ‘खलीफा’ चुना तो उनके हाथ पर इन शब्दों में ‘बैइत’ की “हम आपके हाथ पर इस शर्त पर ‘बैइत’ करते हैं कि आप अल्लाह की किताब, अल्लाह के ‘रसूल’ की ‘सुन्नत’ और दोनों भूतपूर्व खलीफा के तरीके पर कार्य करेंगे।”

हजरत इब्न उमर ‘मुखाबरह’ (बटाई पर मामला करना) किया करते थे जब राफेअ बिन खदीज की इस सिलसिले में निषेध की ‘रिवायत’ पहुँची तो उन्होंने ‘मुखाबरह’ करना छोड़ दिया। इसी तरह हजरत जैद रजस्वला के लिए भी ‘तवाफ सद्र’ करना अनिवार्य समझते थे परन्तु जब हजरत इब्न अब्बास ने बयान किया कि नबी सल्ल० ने ‘तवाफ सद्र’ छोड़ने की इजाजत दी है, तो उन्होंने अपने कौल से रुजू कर लिया।

अब्दुल्लाह इब्न उमर से पूछा गया कि एक व्यक्ति ने यह ‘नज्र’ की है कि वह रोजा रहेगा। सयोग से उसके बाद ही ईदुलअजहा या ईदुलफित्र आ गई (जिस में रोजा रखने से नबी सल्ल० ने रोका है)। क्या वह इन दिनों में भी रोजा रखे ? उन्होंने कहा नहीं। और यह ‘आयत’ पढ़ी “निश्चय ही तुम लोगा के लिए अल्लाह के ‘रसूल’ में एक उत्तम आदर्श था” (अल-अहजाब २१)। नबी सल्ल० ईदुलअजहा और ईदुलफित्र में न खुद रोजा रखते थे और न रोजा रखना पसन्द करते थे (बुखारी)।

हजरत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद कहते हैं जिसे कोई फैसला करना हो तो वह अल्लाह की किताब से करे यदि उसमें मौजूद न हो तो नबी सल्ल० की 'हदीस' के अनुसार फैसला करे। हजरत अब्दुल्लाह इब्न अब्बास रजि० से भी इसी तरह 'रिवायत' है^१।

सहाबा रजि० के बाद दूसरे धर्माधिकारियों और विद्वानों ने भी रसूल की 'सुन्नत' को वही स्थान दिया जो स्थान सहाबा रजि० ने दिया था। हजरत उमर बिन अब्दुल अजीज एक व्यक्ति को अपने पत्र में लिखते हैं 'मैं तुम्हें वसीयत करता हूँ अल्लाह का डर रखने की और उसके हुक्म पर चलने की और उसके नबी की 'सुन्नत' का अनुसरण करने की, और जो बातें 'बिदअत' वालों ने निकाली हैं उन्हें छोड़ने की। 'बिदअत' वालों ने ये बातें उस समय निकाली हैं जबकि 'सुन्नत' जारी (प्रचलित) हो चुकी थी। ये लोग सुन्नत को पीछे डालकर उसके अनुसरण से बेपरवाह हो गये। तुम्हें पर 'सुन्नत' का अनुपालन अनिवार्य है क्योंकि यह चीज तुम्हें अल्लाह के अनुज्ञानुसार तुम्हें (पथभ्रष्टता से) सुरक्षित करने वाली है।'
—अबू दाऊद

हजरत उमर बिन अब्दुल अजीज के इन शब्दों से स्पष्ट है कि उन की दृष्टि में 'ईमान वालों' के लिए 'सुन्नत' का अनुसरण आवश्यक एवं अनिवार्य है। और यही वह सुरक्षित मार्ग है जिसके द्वारा मनुष्य अपने-आपको हर प्रकार के आपदाओं और गुमराहियों से बचा सकता है। वे स्वयं भी 'सुन्नत' के अनुवर्ती थे और दूसरों को भी 'सुन्नत' के पालन करने पर उभारते थे।

हजरत उमर बिन अब्दुल अजीज के समय में एक गुलाम बेचा गया। बाद में उसमें कोई ऐब साबित हुआ तो उसके खरीदने वाले ने उसकी वापसी का दावा कर दिया। गुलाम के द्वारा जो आमदनी इस बीच हुई थी उसके बारे में झगडा पैदा हुआ कि वह किसको मिलेगी। हजरत उमर बिन अब्दुल अजीज का विचार था कि आमदनी की राशि विक्रेता को दी जाये परन्तु जब उन तक हजरत आइशा रजि० की 'रिवायत' पहुँची कि नबी सल्ल० का यह फैसला है कि आमदनी क्रेता को मिलनी चाहिए क्योंकि इस बीच में यदि गुलाम मर जाता तो हानि क्रेता ही की होती अतः जिसकी हानि होती लाभ भी उसी को मिलना

चाहिए। इसके बाद हजरत उमर बिन अबुल अजीज ने अपने कौल से रुजू कर लिया।

इमाम अबू हनीफा रह० कहते हैं कि मुझे जब कोई हुक्म अल्लाह की किताब में मिल जाता है तो मैं उसी को थाम लेता हूँ, जब उसमें नही मिलता तो अल्लाह के रसूल सल्ल० की 'सुन्नत' और आपकी उन 'हदीसों' को लेता हूँ जो विश्वसनीय लोगो के यहाँ विश्वसनीय लोगो के द्वारा प्रसिद्ध हैं। फिर जब न अल्लाह की किताब में हुक्म मिलता है और न 'रसूल' की 'सुन्नत' में तो मैं रसूल सल्ल० के सहावा रजि० (अर्थात् उन के इजमा, जिसमें वे सहमत हैं) का अनुसरण करता हूँ, और उनके मतभेद की दशा में जिस 'सहावी' का कौल चाहता हूँ, स्वीकार करता हूँ और जिसका चाहता हूँ छोड़ देता हूँ; परन्तु उन सबके कौल से बाहर जाकर किसी का कौल अगोकार नही करता। रहे दूसरे लोग तो जैसे उन्होंने 'इजतिहाद' किया, मैं भी 'इजतिहाद' करता हूँ।

एक दिन किसी ने इमाम अबू हनीफा से कहा कि आप नबी सल्ल० के हुक्म का उल्लंघन करते हैं। इमाम ने कहा "अल्लाह की उस पर फिटकार जो अल्लाह के रसूल सल्ल० का विरोध करता है। आप ही के कारण अल्लाह ने हमें सम्मानित किया और आप ही के कारण हम ने मुक्ति पाई।"^१

अल्लामा इब्नुल 'कय्यिम रह० ने इमाम अहमद बिन हबल रह० के निष्कर्षण के नियम का उल्लेख करते हुए लिखा है कि वे सर्वप्रथम दर्जा अल्लाह की किताब और सही 'हदीसों' को देते हैं। यदि वे न मिलें तो सहावा रजि० के कौल को, वे भी न हों तो फिर "कियास"^२ से काम लेने से पहले देख लेना चाहिए कि कोई 'रिवायत' मौजूद है जो यद्यपि सही होने के उच्च स्तर पर न हो परन्तु ऐसी भी न हो कि बिल्कुल ही प्रमाण न बन सकती हो। ऐसी हालत में इमाम अहमद के विचार में इस प्रकार की 'हदीस' को दलील बनाना चाहिए। उनके विचार में 'मुरसल' और

१ ततवीव की तारोख वग़दाद भाग १३, जहबी की मनाकिब अबू हनीफा व माहिबैन पृष्ठ २०, मनाकिब इमाम आजम लिल मुवपफक अल-मवकी भाग १ पृष्ठ ७६।

२. इब्न अब्दुल बर्र की अल-इन्तिका पृष्ठ १४०-१४१।

३ किताब व सुन्नत आदि के प्रकाश में किसी विषय में स्वयं विचार करके उसका हज़न मानूम करना।

‘जईफ’ हदीस को कियास’ की अपेक्षा प्राथमिकता एवं प्रमुखता प्राप्त है। उन्होंने इस बात को स्पष्ट कर दिया है कि ‘जईफ’ से अभिप्रेत असत्य और ‘मुन्कर’ हदीस नहीं है बल्कि इतना ही है कि वे शुद्धता की दृष्टि से अत्यन्त उच्च कोटि की ‘हदीसे’ न हो।^१

पहले लोगों की परिभाषा में ‘जईफ’ (कमजोर) का आशय वह नहीं है जो बाद वालों की परिभाषा में है। बल्कि जिस ‘हदीस’ को बाद के लोग ‘हसन’ कहते हैं उसी को अगले लोग ‘जईफ’ कहते हैं।^२

इब्न कय्यिम लिखते हैं कि इमाम अहमद इस नीति में अकेले नहीं हैं बल्कि सभी इमामों की यही नीति रही है^३। इब्न कय्यिम ने इमाम अबू हनीफा रह० के ऐसे ‘फतवों’ (शास्त्रीय निर्णयों और गिरई हुकों) को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया है जो इस ‘नियम’ पर आधारित हैं। इब्न कय्यिम इमाम मालिक रह० के बारे में लिखते हैं कि इमाम मालिक की दृष्टि में हदीस ‘मुरसल’, ‘मुनकतेअ’ और बलागात^४ और ‘सहावी’ के कौल को ‘कियास’ के मुकाबले में प्राथमिकता प्राप्त है^५।

यहाँ यह बात सामने रहनी चाहिए कि इमाम मालिक रह० जिन ‘मुरसल’, ‘मुनकतेअ’ और ‘बलागात’ को प्रमाणीकरण का आधार ठहराते थे उनके विचार में उन ‘रिवायतों’ को प्रमाणिक हैसियत प्राप्त थी^६।

इमामों और धर्म विधिज्ञों के अतिरिक्त दूसरे पुण्यात्माओं और महानभावों का भी यही तरीका था कि वे किताब व ‘सुन्नत’ दोनों ही को (धर्म) का मौलिक आधार समझते थे। उन्होंने क्षण भर के लिए भी यह नहीं सोचा कि ‘सुन्नत’ का अनुसरण एवं अनुपालन उनके लिए अनिवार्य नहीं है। ‘हदीस’ के मुकाबले में वे किसी की बात को भी दलील नहीं समझते थे। हजरत जनेद रह० क्ते है। “उन लोगों के अतिरिक्त जो अल्लाह के रसूल सल्ल० के पद-चिन्हों पर चले शेष सब के लिए अल्लाह तक पहुँचने के मार्ग बन्द है।”

१. एलामुलमोक्ईन भाग १ पृष्ठ २५।

२. एलाम भाग १ पृष्ठ ६४।

३. एलाम भाग १ पृष्ठ २५।

४. ‘बलागात’ से अभिप्रेत मुअत्ता की वे रिवायतें हैं जिनको “बलगहू” () से बयान किया गया है।

५. एलाम भाग १ पृष्ठ २६।

६. मुसफ्फा पृष्ठ ७, १३।

हजरत जुन्नून रह० कहते हैं . 'अल्लाह से प्रेम करने वाले का एक लक्षण यह है कि वह अल्लाह के 'हवीव' (प्यारे) सल्ल० का अनुसरण करे । आप की मनोदशा में भी, कर्मों में भी, आदेशों और हुकमों में भी और आपकी 'सुन्नतो' में भी ।"

हजरत इब्न अता रह० का कहना है "कोई मकाम और सोपान भी अल्लाह के 'हवीव' (हजरत मुहम्मद) सल्ल० के आदेशों, आपके कर्मों और आपके स्वभाव का अनुसरण करने के सोपान से उच्च नहीं ।"

'सुन्नत' की रक्षा

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जीवन का सीधा और सरल मार्ग पाने के लिए नबी सल्ल० का अनुसरण जिस प्रकार आपके समय के लोगो के लिए अनिवार्य था ठीक उसी प्रकार 'कियामत' तक के लोगो के लिए अनिवार्य है । इसके लिए जरूरी है कि कुरआन के साथ 'रसूल' की 'सुन्नत' और आपके आदेश भी सुरक्षित हो । इस पहलू से देखते हैं तो मानना पड़ता है कि अल्लाह ने कुरआन के साथ 'सुन्नत' को भी सुरक्षित रखा है ।

नबी सल्ल० ने अपने जीवन काल में एक ओर तो अपने कर्म और वचन से कुरआन और अल्लाह के आदेशों को स्पष्ट किया दूसरी ओर आपने इस्लामी नियमों के अनुसार लोगो के चरित्र का निर्माण किया और उन्हें एक सुसंगठित और शक्तिशाली समुदाय बनाया । विचार और धारणाओं से लेकर व्यावहारिक जीवन के समस्त अङ्गों तक समाज का निर्माण आप ही के निश्चित किए हुए नियमों के आधार पर हुआ । आपके सिखाये हुए ढंग पर 'नमाज़' 'रोज़ा', आदि 'इबादतों' और उपासनाओं के तरीके प्रचलित हुए । शादी-विवाह, तलाक और विरासत आदि के जो नियम और व्यवस्था इस्लामी समाज ने ग्रहण किया वह वही था जो आपने नियत किये थे । युद्ध में शत्रुओं से आपने जो मामला किया, पराजित जाति के साथ आपने जो व्यवहार किया, वही इस्लामी राज्य का नियम और जाबता समझा गया । घर से लेकर मस्जिद, बाजार, न्यायालय, शासन से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति तक सभी मामलों में नबी सल्ल० की 'सुन्नत' आपके अनुयायियों के लिए एक कानून, नियम और ज्ञान्ते की हैसियत रखती थी । मुसलमानों ने उसे कानून और जाबते के रूप में ग्रहण भी किया । इसी जाबते और कानून के अनुसार इस्लामी समाज में एक चीज हलाल (वैध) समझी जाती थी और एक चीज

‘हराम’ (अवैध) होती थी। इस्लामी समज की उसके अपने समस्त तत्वों और पहलुओं के साथ नबी सल्ल० की ‘सुन्नत’ पर स्थापना हुई। आपके बाद यह समाज अवशेष रहा। और इस इस्लामी समाज के व्यवहार और आचरण ने बाद की शताब्दियों में ‘सुन्नत’ की रक्षा की। इस चीज की पुष्टि इस से भी होती है जब हम देखते हैं कि ‘हदीस’ के प्रमाणिक उल्लेखों और इस्लामी समुदाय के निरन्तर व्यवहार में कोई विभेद नहीं पाया जाता बल्कि उनके बीच पूर्ण अनुकूलता पाई जाती है।

कुछ ‘सुन्नते’ ऐसी हैं जो आपके जीवन काल में प्रसिद्ध न हो सकी थी। उनका ज्ञान विभिन्न लोगों को था जिसे उन लोगो ने नबी सल्ल० के कर्म, वचन आदि को देख-सुनकर प्राप्त किया था। नबी सल्ल० के स्वर्गवास के पश्चात् तुरन्त ही ऐसी ‘सुन्नतो’ के एकत्र करने का सिल-सिला शुरू हो गया। नबी सल्ल० अपने जीवन-काल में लोगों के पथ-प्रदर्शन के लिए स्वयं मौजूद थे; परन्तु आपके बाद इसकी आवश्यकता हुई कि आपकी वे ‘सुन्नते’ भी जमा की जाये जिनका ज्ञान अभी हर व्यक्ति को नहीं हो सका है। जनसाधारण से लेकर जजों और अधिकारी व्यक्तियों सभी को अपने-अपने क्षेत्र में ऐसे मामले पेश आते थे जिनके बारे में उन्हें ‘सुन्नत’ के ज्ञान की आवश्यकता होती थी। जिन लोगों के पास नबी सल्ल० की किसी ‘सुन्नत’ का ज्ञान था वे भी उसे एक अमानत समझते थे। वे इस बात को जानते थे कि उनके पास जो ज्ञान भी है उसे दूसरों तक पहुँचाना उनका कर्तव्य है। इस प्रकार ‘हदीस’ की ‘रिवायत’ का आरम्भ हुआ और ‘हदीस’ जमा करने का यह सिलसिला सन् ११ हि० से तीसरी-चौथी शताब्दी तक जारी रहा। इसके साथ सही ‘हदीसों’ में मन-गढन्त हदीसों को सम्मिलित करने के प्रयास को असफल बनाने की हर सम्भव कोशिश की गई। विशेष रूप से उन ‘सुन्नतों’ की जो नियम और कानून आदि से सम्बन्ध रखती थी हर प्रकार से जो सम्भव हो सकता था छान-बीन की गई। और आलोचना के कड़े-से-कड़े नियमों पर उन्हें परखा गया। तर्क-वितर्क और आलोचना की उस सामग्री को भी सुरक्षित कर दिया गया जिसके कारण किसी ‘रिवायत’ को छोड़ा गया या किसी ‘हदीस’ को कबूल किया गया। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को यह अवसर प्राप्त है कि वह किसी भी ‘रिवायत’ या ‘हदीस’ के विषय में निश्चयात्मक निर्णय तक पहुँच सके। ‘मुहद्दिसों’ (‘हदीस’ के विद्वानों) का यह ऐसा महान् कार्य है जिसके द्वारा नबी

सल्ल० का जीवन और उस समाज का जिसका निर्माण आपके हाथों हुआ था पूरा नक्शा सदैव के लिए सुरक्षित हो गया। आपके एक-एक कथन की सनद को सुरक्षित कर दिया गया जिसे किसी समय भी जाँच कर सरलतापूर्वक यह निर्णय किया जा सकता है कि कोई 'रिवायत' किस दर्जे की है और कहाँ तक उस पर विश्वास किया जा सकता है।

'हदीस' का प्रचार

जैसा कि ऊपर कहा चुका जा है कि 'हदीसे' आरम्भ काल से ही बयान की जाने लगी और कम-से-कम दो शताब्दी तक मुसलमान 'हदीसों' के सुनने और उन्हें दूसरों तक पहुंचाने में लगे रहे। प्राचीन समय में घटनाओं और वृत्तान्तों को सुरक्षित रखने और उन्हें बाद के लोगों तक पहुंचाने का मुख्य साधन यह था कि वृत्तान्तों को याद रखा जाये और मौखिक रूप से उन्हें दूसरों तक पहुंचाया जाये। अरब निवासी हजारों वर्ष से लिखने के बदले अधिकतर मुख और स्मरण शक्ति से अपना कार्य चलाते आये थे। उन्हें स्मरण शक्ति और शुद्ध रूप में बात को दूसरों तक पहुंचाने में विशेषता प्राप्त थी। वे कवियों के काव्य को ही नहीं, कबीलों की वशावली, बल्कि घोंडों तक की वशतालिका याद रखते थे और अपनी सन्तान को याद कराते थे। फिर यह कैसे सम्भव था कि ये लोग अल्लाह के रसूल जैसे महान् पुरुष के जीवन-वृत्तान्त और आपके जीवन की घटनाओं और आपकी बात-चीत को भूल जाते और उसे अपने बाद के लोगों तक न पहुँचाते। नबी सल्ल० से 'सहाबा' को जो गहरा सम्बन्ध था इतिहास उसका उदाहरण प्रस्तुत करने में असमर्थ है। 'सहाबा' के हृदय पर आपका जो प्रभाव था उसका अनुमान करना भी हमारे लिए कठिन है। उनकी दृष्टि में तो जीवन का वही दिन सबसे बड़ा मूल्यवान था जो आपके साथ व्यतीत हुआ। वे आपकी हर बात ध्यानपूर्वक सुनते थे। और आपके प्रत्येक कार्य को देखते थे और इस एहसास के साथ सुनते और देखते थे कि उसे अपने जीवन में व्यावहारिक रूप से अपनाना है। इस तरह का उदाहरण भी मिलता है : दो 'सहाबी' आपस में निश्चय करते हैं कि हम में से कोई-न-कोई हर समय नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित रहे और वह एक-दूसरे को आपकी बातों और आदेशों से सूचित करे ताकि आपकी कोई एक बात से भी हम

अनभिज्ञ न रहे'। जब हार्दिक सम्बन्ध इस प्रकार का हो तो आपके साथी आपकी बाता को याद रखने में असावधानी कैसे दिखा सकते थे। जो लोग आपके दर्शन नहीं कर सके थे और न उन्हें आपके साथ रहने का सुअवसर मिल सका था स्वभावतः उन्हें इसकी लालसा थी कि वे आपकी प्रत्येक बात सुने और आपके जीवन चरित्र से परिचित हो। इतिहास के पृष्ठों में इस प्रकार के वृत्तान्त मिलते हैं कि लोगो को जहाँ कहीं किसी 'सहाबी' की सूचना मिलती वे सैकड़ों मील चलकर मुलाकात करते और नबी सल्ल० के बारे में जानना चाहते।

नबी सल्ल० की ओर से 'सहाबा' रजि० को इसकी इजाजत थी बल्कि आपने उन्हें इसकी ताकीद की थी वे उन आदेशों और हिदायतों को जो उन्हें अल्लाह के रसूल से मिले याद रखें और उन्हें दूसरों तक पहुँचाये। इस सिलसिले की कुछ 'हदीसे' यहाँ पेश की जाती हैं :

हजरत अबू बकररह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "जो हाजिर है वह उन लोगो तक पहुँचाये जो हाजिर नहीं हैं, सम्भव है वह किसी ऐसे व्यक्ति को पहुँचा दे जो उस से अधिक समझ वाला हो।"

—बुखारी, मुस्लिम

जैद बिन साबित रजि०, अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि०, जुबैर बिन मुतइम रजि० और अबू दरदा रजि० का वयान है कि नबी सल्ल० ने कहा "अल्लाह उस व्यक्ति को प्रफुल्ल रक्खे जो हमसे कोई बात सुने, उसे सुरक्षित रक्खे यहाँ तक कि वह दूसरों तक पहुँचाये। कभी ऐसा होता है एक व्यक्ति स्वयं 'फकीह' (समझ-बूझ वाला) नहीं होता परन्तु 'फिकह' (ज्ञान एव समझ) का वाहक हो जाता है।"

—अबू दाऊद, तिरमिजी, अहमद, इब्नमाजा दारमी।

बहरैन से बनी अब्दुल कैस का प्रतिनिधि मण्डल नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ। वापसी के समय मण्डल के लोगो ने आप से निवेदन किया कि आप हमें कुछ ऐसी हिदायतें दे जो हम वापस हो कर अपनी जाति के लोगो को बताये और 'जन्नत' के अधिकारी हों।

१. हजरत उमर रजि० कहते हैं कि मैं और मेरा एक अनसारी पड़ोसी नबी सल्ल० की सेवा में बारी-बारी हाजिर होते थे। एक दिन वे हाजिरी देते और एक दिन मैं हाजिर रहता। जिस दिन मैं हाजिर रहता उस दिन के वृत्तांत और 'वह्य' आदि का विवरण उन्हें सुनाता और जिस दिन वे हाजिर होते उस दिन का वृत्तान्त वे मुझे सुनाते।

—बुखारी

आपने 'दीन' (धर्म) के कुछ आदेश बताये और कहा "इन बातों को याद कर लो और वहाँ के लोगों को बता दो।" —बुखारी, मुस्लिम

इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "तुम मुझसे मुनते हो और लोग तुम से सुनेगे, फिर जिन लोगों ने तुम से सुना होगा उन से दूसरे लोग मुनेगे।" —अबू दाऊद

सहाबा रजि० ने 'हदीस' के प्रचार का असाधारण प्रयत्न किया। बुखारी मे हजरत अबूजर रजि० का यह कौल मिलता है कि यदि तुम मेरी गर्दन पर तनवार रख दो और मुझे इस बात की आशा हो कि मैं मरने से पहले अल्लाह के रसूल सल्ल० का एक 'कलमा' (वात) भी जो मैंने सुना है कह सकूँगा, तो मैं अवश्य कह दूँगा।"

हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजि० नबी सल्ल० के समय में अल्पायु थे। वे सहाबा रजि० के दरवाजे पर केवल इसलिए प्रातः काल से सन्ध्या तक बैठे रहते थे की वे नबी सल्ल० की कोई बात वयान करे, तो वे उसे नोट कर ले। —दारमी

कर्म और वचन तो बड़ी चीज है, सहाबा रजि० ने नबी सल्ल० की चाल-ढाल और आपकी एक-एक अदा को सुरक्षित करने की कोशिश की है। उदाहरणार्थ हजरत अगर् मुजनी की एक 'रिवायत' को लीजिए। वे कहते हैं कि एक बार हम ने गिना तो नबी सल्ल० ने एक मजलिस में सौ बार ईश्वर से क्षमा की प्रार्थना की। इस से अन्दाज़ा किया जा सकता है कि किस प्रकार नबी सल्ल० की एक-एक अदा पर सहाबा रजि० की निगाह रहती थी।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक और सहाबा रजि० को 'हदीसों' के प्रचार की ताकीद की दूसरी ओर आप ने 'हदीसों' में ऐसी चीजों को मिलाने से सख्ती के साथ बचने की ताकीद की जो वास्तव में हदीस न हो। इस सिलसिले की कुछ 'हदीसे' ये हैं

हजरत सलमा रजि० कहते हैं कि मैंने नबी सल्ल० को यह कहते सुना है "जो व्यक्ति मुझ से सम्बन्ध लगा कर वह बात कहे जो मैंने नहीं कही वह अपना ठिकाना 'जहन्नम' में बना ले।" —बुखारी

अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा "मेरी बातें रिवायत करो," इसमें कोई हरज की बात नहीं है परन्तु जो

१ अर्थात् उनको दूसरों तक पहुँचाओ और उनका प्रचार करो।

कोई जान-बूझ कर मेरी ओर झूठ बात जोड़ेगा वह अपना ठिकाना 'जहन्नम' में बनायेगा ।” —मुस्लिम

इब्न अब्बास रज़ि०, इब्न मसऊद और जाविर बिन अब्दुल्लाह रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : मेरी ओर से कोई बात बयान करने से बचो सिवाय उसके जिसके बारे में तुम जानते हो कि वह मैंने कही है क्योंकि जो व्यक्ति मेरी ओर झूठी बात जोड़ेगा वह अपना ठिकाना 'जहन्नम' में बनायेगा । —तिरमिज़ी, इब्नमाजा

सहाबा रज़ि० को इसका पूरा एहसास था कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का ऐसी किसी बात से सम्बन्ध जोड़ना जो आपकी कही हुई न हो साधारण गुनाह नहीं है बल्कि यह ऐसा गुनाह है जिसकी सजा 'जहन्नम' है । यही कारण है कि वे नबी सल्ल० की ओर से कोई बात बयान करने में बड़ी सावधानी से काम लेते थे । सहाबा रज़ि० में कोई एक मिसाल भी नहीं पेश की जा सकती कि किसी सहाबी ने किसी व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए अपनी ओर से कोई बात गढ़कर नबी सल्ल० से उसका सम्बन्ध जोड़ा हो । सहाबा रज़ि० का हाल यह था कि जब वे कोई 'हदीस' बयान करते तो काँप उठते । जहाँ उन्हें कुछ भी सन्देह होता कि शायद नबी सल्ल० के अपने शब्द कुछ और रहे हों वहाँ वे आपकी बात बयान करने के पश्चात् “औ कमा क़ाल रसूलुल्लाह सल्ल०” (या इसी तरह के शब्द अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहे हैं) कह देते थे ताकि सुनने वाला शब्दों को तथैव नबी सल्ल० के शब्द न समझे ।

इससे इन्कार नहीं कि पहली शताब्दी हिजरी के अन्त से 'हदीसों' में ऐसी 'रिवायतें' सम्मिलित होने लगी जो मन गढन्त थी । 'हदीस' के भण्डार में यदि कुछ घड़ी हुई 'हदीसे' सम्मिलित भी हुईं तो 'मुहद्दिसों' ('हदीस' के विशेषज्ञों) की छान-बीन और उनके आलोचना सम्बन्धी सिद्धान्तों ने उन्हें छाँट कर रख दिया । इसी उद्देश्य के लिए 'मुहद्दिसों' ने 'असमाउर्रिजाल' का फ़न ईजाद किया ।

हदीस का लिपिबद्ध होना

अरब के लोग दीर्घ काल से स्मरण और मौखिक रूप से अपना काम चलाने में अभ्यस्त रहे हैं । इस्लाम के प्रारम्भिक काल में वर्षों तक उनमें यह विशेष गुण बाक़ी रहा है । आरम्भ में जिस चीज को सुरक्षित करने के लिए लिपिबद्ध करना आवश्यक समझा गया वह क़ुरआन था । इसका विशेष कारण यह था कि क़ुरआन के प्रत्येक शब्द को उस विशेष

क्रम के साथ सुरक्षित करना अभीष्ट था जो अल्लाह ने उसके लिए नियत किया था। कुरआन अपने शब्द, अर्थ और क्रम आदि प्रत्येक दृष्टि से 'वह्य' (ईश्वर-प्रेषित) था इसलिए उसकी प्रत्येक चीज़ को सुरक्षित रखना आवश्यक था। 'सुन्नत' में नबी सल्ल० का वचन और कर्म दोनों सम्मिलित हैं। कर्म और व्यवहार सम्बन्धी 'सुन्नत' को सहाबा रज़ि० अपने शब्दों में बयान करते थे। उदाहरणार्थ आपका स्वभाव ऐसा था और आपने यह कार्य किया आदि। आपके वचन और आपके मुख से निकले हुए शब्दों का उल्लेख करने के विषय में भी सहाबा रज़ि० पर यह पाबन्दी न थी कि वे नबी सल्ल० के शब्दों को अक्षरशः ही बयान करें। वे आपकी बातों को सुनकर उसके अर्थ और भाव को बदले बिना उसे अपने शब्दों में बयान कर सकते थे और उन्होंने अपने शब्दों में बयान भी किया है।

'हदीस' को लिपिबद्ध करने का वह महत्व न था जो महत्व कुरआन को लिपिबद्ध करने का था। कबीला कुरैश में केवल गिने-बुने १७ व्यक्तियों को लिखना-पढ़ना आता था। मदीना के 'अनसार' में भी ११ से अधिक व्यक्ति न थे जिन्हें लिखना-पढ़ना आता था। कागज अप्राप्य था। लिखने के लिए भिल्लियाँ, हड्डियाँ और खजूर के पत्ते काम में लाये जाते थे। ऐसी स्थिति में सबसे आवश्यक था कि कुरआन करीम को ऐसा सुरक्षित रखा जाये कि दूसरी चीज़ें उसमें मिलने न पाये। लिखने वाले केवल थोड़े से लोग थे जो कुरआन लिख रहे थे। वे यदि दूसरी चीज़ें भी लिखने लगते तो इसका भय था कि कहीं कुरआन में दूसरी चीज़ें न मिल जाये। इन्हीं कारणों से आरम्भ में नबी सल्ल० ने 'हदीसों' को लिखने से रोका था, परन्तु यह रुकावट अधिक समय तक नहीं रही। 'हिजरत' के बाद आप मदीना पहुँचे वहाँ आपने शिक्षा का प्रबन्ध किया। जल्द ही अच्छी सख्या में ऐसे लोग हो गए जो लिख-पढ़ सकते थे। फिर आपने 'हदीसों' के लिखने को इजाजत सामान्य रूप से दे दी। इस सिलसिले की 'रिवायतें' बहुत सी हैं। हम यहाँ केवल कुछ अत्यन्त प्रामाणिक रिवायतों का उल्लेख करते हैं।

हिजरत अबू हुरैरह रज़ि० का बयान है कि 'अनसार' में से एक व्यक्ति ने कहा : "मैं आप से बहुत सी बातें सुनता हूँ परन्तु याद नहीं रख पाता।" अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "अपने हाथ से मदद लो।" और अपने हाथ के इशारे से बताया कि लिख लिया करो। —तिरमिज़ी

हिजरत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने एक 'खुतबा' (भाषण) दिया। अबू शाह ने कहा : मेरे लिए लिखा दीजिए। आपने

कहा "इसे अबूशाह को लिखकर दे दो।" —बुखारी, अहमद तिरमिजी अबू हुरैरह रजि० की एक दूसरी 'रिवायत' से मालूम होता है कि यह 'खुतबा' नबी सल्ल० ने मक्का की विजय के अवसर पर दिया था और इस खुतबे में आपने हरम मक्का से सम्बन्धित आदेश और कलन के मामले के सम्बन्ध में कुछ कानून बयान किये थे। यमन वालों में से एक व्यक्ति ने कहा था कि ये आदेश मुझे लिखा दें।

अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० से जो कुछ सुनता था उसे याद करने के लिए लिख लिया करता था। लोगो ने मुझे रोका और कहा कि रसूलुल्लाह सल्ल० एक मनुष्य हैं, कभी प्रसन्नता की हालत में बातें करते हैं कभी क्रोध की दशा में। इस पर मैंने लिखना छोड़ दिया फिर मैंने रसूलुल्लाह सल्ल० से इस का जिक्र किया तो आपने अपनी उँगलियों में अपने मुँह की ओर मकेत करते हुए कहा "लिखो, उस सत्ता की कसम जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं, इस मुख से हक (सत्य) के सिवा कुछ नहीं निकलता।"

—अबू दाऊद, मुसनद अहमद, दारमी, हाकिम, वैहकी, मुदखल हजरत अबू हुरैरह रजि० का बयान है कि सहाबा रजि० में मुझ से अधिक किसी के पास 'हदीसे' न थी सिवाय अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० के। इसलिए कि वे लिख लेते थे और मैं लिखता नहीं था।

अब्दुल्लाह इब्न अम्र बिन आस रजि० ने 'हदीसों' का एक संग्रह लिख रक्खा था, उसका नाम उन्होंने सादिका रक्खा था। इस संग्रह में लगभग एक हजार 'हदीसे' थी। —असाबा, तवकात इब्न सअद, अबू दाऊद हजरत अली रजि० ने एक मौके पर लोगो को एक लेख निकाल कर दिखाया जिसमें 'जकात', दण्ड विधान से सम्बन्धित कानून और हरम मदीना और कुछ दूसरे मामलो के सम्बन्ध में कुछ आदेश थे।

—बुखारी, मुस्लिम, अहमद, नसई अब्दुल्लाह इब्न हुकैम ने उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का एक लेख हमारे कबीला जुहैनह के पास पहुँचा जिसमें विभिन्न 'हदीसे' थी और यह 'रिवायत' भी थी कि मुरदार जानवर का चमड़ा और पुठे बिना पकाए हुए काम में न लाओ।

—तिरमिजी नबी सल्ल० ने अपने जीवन के अन्तिम समय में 'हदास' की एक बड़ी किताब लिखाकर अम्र बिन हज्म रजि० के द्वारा यमन वालों के पास भेजी थी। उसमें करआन की 'तिलावत' (वाचन), नमाज, 'रोजा', 'जकात', तलाक, 'गुलाम आजाद करना', 'किसास' (प्रतिहत्या), 'दियत'

(हत्या के बदले का रुपया जो हत्यारे से हत्यादण्ड के रूप में लिया जाये) और दूसरे बहुत से आदेश और बड़े गुनाहों का विवरण अंकित था। (दार कुतनी, दारमी, बैहकी, मूसनद अहमद, मुअत्ता इमाम मालिक, नसई)। इस किताब को 'हदीस' की पहली किताब कहना उचित है। इस किताब के विषय में अल्लामा इब्न कथ्थीम लिखते हैं "वह बहुत बड़ी किताब है जिसमें बहुत से 'फिक्ह' के (धर्मशास्त्र सम्बन्धी) विषय, जकात दियत, आदेश, बड़े गुनाह, तलाक गुलाम आजाद करने, नमाज, कुरआन के छूने और दूसरे आदेश लिखे हुए हैं। इमाम अहमद बिन हबल कहते हैं कि निश्चय ही नबी सल्ल० ने स्वयं यह किताब लिखाई थी।"

—जादूलमआद भाग १, पृष्ठ ३०

हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि० का बयान है कि अल्लाह के रमूल सल्ल० ने अपने जीवन के अन्तिम समय में अपने 'आमिलो' (कर्म-चारियों) के पास भेजने के लिए 'किताबुस्सदका' लिखावाई थी। परन्तु अभी वह भेजी नहीं गई थी कि आपके ससार से प्रस्थान करने की घटना घटित हुई। आपके बाद जब हजरत अबू वक्र रजि० खलीफा हुए तो वह 'आमिलो' के पास भेजी गई। किताबुस्सदका में जानवरो की 'जकात' से सम्बन्धित आदेश थे। —तिरमिजी

नबी सल्ल० ने विभिन्न अवसरों पर फौजदारी, दीवानी के कानून, मीरास और 'जकात' से सम्बन्धित आदेश लिखाकर अपने उन कर्मचारियों को दिये थे। जिन्हें आपने विभिन्न इलाकों में भेजा था जिन्हें 'हदीस' की किताबों और इतिहास के पन्नों में हर व्यक्ति देख सकता है। इसके अतिरिक्त आपके भेजे हुए पत्र, सन्धि-पत्र, और जागीरों के 'वसीके' (अधिकार-पत्र) जिन्हें आपने लिखाकर और मुहल लगाकर बादशाहों और विभिन्न कबीलों के सरदारों को भेजा था या विभिन्न लोगों के हवाले किया था। इस प्रकार के पत्रों और वसीको को डाक्टर हमीदुल्लाह ने एकत्र किया है, जिनका संग्रह प्रकाशित हो चुका है। इस संग्रह में वे पत्र और वसीके भी सम्मिलित हैं जो नबी सल्ल० के बाद होने वाले चारों खलीफा ने जिन्हें 'खुलफा-ए-राशिदीन' कहा जाता है, लिखे थे। इस संग्रह में नबी सल्ल० के लिखाये हुए जो पत्र और वसीके सम्मिलित हैं उनकी संख्या २८१ है। इन पत्रों में वह पत्र भी है जो नबी सल्ल० ने मिस्र के सम्राट मकोकस के नाम भेजा था। इस पत्र का उल्लेख 'हदीस' की किताबों में है। मिस्र के भग्नावशेषों की खुदाई में यह पत्र प्राप्त हुआ है और आज भी मिस्र में मौजूद है। इस पत्र के शब्द बिल्कुल वही हैं जो 'हदीस' की

किताबों में मिलते हैं। इस पत्र का अक्स (चित्र) प्रकाशित हो चुका है।

‘हदीसों’ को सुरक्षित रखने का प्रबन्ध आरम्भ से ही मौलिक रूप से भी किया गया है और लेखनी द्वारा भी। ‘हदीस’ का इतिहास बिल्कुल सुरक्षित है। यह इतिहास प्रामाणिक भी है और इसमें निरन्तरता भी पाई जाती है। ‘सहाबा’ रजि० ने नबी सल्ल० की ‘हदीसों’ और आपकी ‘सुन्नतों’ को सुरक्षित करने और अपने बाद के लोगों तक पहुँचाने में कदापि असावधानी से काम नहीं लिया। उन्होंने नबी सल्ल० से जो कुछ प्राप्त किया था उसे छिपाकर भी नहीं रखा बल्कि उसे अपने बाद वालों तक पहुँचाया।

‘हदीस’ का जो भण्डार मौजूद है वह लगभग दस हजार ‘सहाबा’ से प्राप्त किया गया है। ‘सहाबा’ में सब से अधिक ‘रिवायतें’ जिन्होंने बयान की हैं वे हैं : हज़रत अबू हुदैरह रजि०, हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजि०, हज़रत आइशा रजि०, हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि०, हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रजि०, हज़रत अनस बिन मालिक रजि० और हज़रत अबू सईद खुदरी रजि०। ये वे ‘सहाबा’ हैं जिनकी ‘रिवायतों’ की संख्या हजार से अधिक है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि०, हज़रत अली रजि० और हज़रत उमर रजि० उन ‘सहाबा’ में से हैं जिनकी ‘रिवायतें’ पाँच सौ और हजार के बीच हैं। हज़रत अबू बक्र रजि०, हज़रत उस्मान रजि०, हज़रत उम्मेसलमा रजि०, हज़रत अबू मूसा अशअरी रजि०, हज़रत अबूजर गिफारी रजि०, हज़रत अबू अय्यूब अनसारी रजि०, हज़रत उवई बिन कअब रजि० और हज़रत मअज़ बिन जअल रजि० ऐसे ‘सहाबा’ हैं जिनकी ‘रिवायतों’ की संख्या सौ से अधिक और पाँच सौ से कम है।

‘सहाबा’ रजि० के बाद ‘ताबईन’ ने ‘हदीस’ व ‘सुन्नत’ के उस ज्ञान को जो उन तक ‘सहाबा’ के द्वारा पहुँचा था अपने बाद वालों तक पहुँचाया। ‘ताबईन’ ने ‘सहाबा’ से केवल ‘हदीसों’ ही नहीं ली बल्कि उन्होंने ‘सहाबियों’ का जीवन-चरित भी बयान किया। उन्होंने इस बात को स्पष्ट किया कि किस ‘सहाबी’ को नबी सल्ल० के साथ रहने का कितना अवसर प्राप्त हुआ है। और उसने आपको कब और किस स्थान पर देखा है और किन-किन अवसरों पर उसने आपकी सेवा में हाज़िरी दी है। ताबईन में कुछ महान् व्यक्तियों के नाम ये हैं :

सईद बिन मुसईब, हसन बसरी, उरवह बिन जुबैर, सालिम बिन अब्दुल्लाह बिन उमर (रजि०), नाफेअ मौला अब्दुल्लाह इब्न उमर,

इब्न शिहाब जुहरी, हुमाम बिन मुनुब्बह आदि । सईद बिन मुसैइब हजरत उमर रजि० की खिलाफत के दूसरे वर्ष मदीना में पैदा हुए । सन् १०५ हि० में देहान्त हुआ । उन्होंने हजरत उस्मान रजि०, हजरत आइशा सिद्दीका रजि०, हजरत अबू हुरैरह रजि० और जैद बिन साबित रजि० से 'हदीस' का ज्ञान प्राप्त किया ।

उरवह बिन जुबैर मदीना के प्रमुख विद्वानों में से थे । वे हजरत आइशा रजि० के भाजे थे । उन्होंने अपनी खाला से बहुत सी 'हदीसे' रिवायत की है । हजरत अबू हुरैरह रजि० और जैद बिन साबित रजि० का शिष्य होने का भी उन्हें श्रेय प्राप्त हुआ है । नबी सल्ल० के जीवन-चरित्र पर सबसे पहली पुस्तक इन्होंने ही लिखी । सन् ६४ हि० में स्वर्ग-वास हुआ है ।

नाफेअ मौला अब्दुल्लाह बिन उमर हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि० के प्रमुख शिष्य और इमाम मालिक के गुरु हैं । 'मुहद्दिसो' ('हदीस' के विशेषज्ञों) ने इस सनद (मालिक, नाफेअ, अब्दुल्लाह बिन उमर रजि०) को 'सिलसिलतुज्जहव' (स्वर्णिम जजीर) कहा है । हजरत नाफेअ का स्वर्गवास सन् ११७ हि० में हुआ । सालिम बिन अब्दुल्लाह बिन उमर (रजि०) मदीना के सात 'फकीह' (धर्म शास्त्री) में से हैं । अपने पिता और दूसरे 'सहाबा' रजि० से 'हदीस' का ज्ञान प्राप्त किया है । इन का स्वर्गवास सन् १०६ हि० में हुआ । हुमाम बिन मुनुब्बह हजरत अबू हुरैरह रजि० के शिष्यों में से हैं । इन्होंने 'हदीस' का एक संग्रह तैयार किया था । यह संग्रह आज भी मौजूद है और प्रकाशित हो चुका है । इमाम अहमद बिन हबल ने 'मुसनद' में पूरा संग्रह सम्मिलित कर दिया है । यह संग्रह वास्तव में हजरत अबू हुरैरह रजि० की बयान की हुई 'हदीसों' का एक भाग है । इसकी अधिकतर रिवायतों को 'बुखारी' और 'मुस्लिम' की किताबों में भी देखा जा सकता है ।

मुहम्मद इब्न शिहाब जुहरी प्रसिद्ध तावईन में से हैं । इन्होंने लिखित रूप में 'हदीस' का बहुत बड़ा भण्डार छोड़ा है । इन्होंने अब्दुल्लाह बिन उमर रजि०, अनस बिन मालिक रजि० और सल्ल बिन सअद रजि० से 'हदीस' का ज्ञान प्राप्त किया । 'तावईन' में सईद बिन मुसैइब, मुहम्मद बिन रजीअ आदि महानुभावों से 'हदीस' सुनी । इनके शिष्यों में इमाम औजई, इमाम मालिक और सुफयान बिन उययनह जैसे 'हदीस' के इमाम सम्मिलित हैं । इन्हें सन् १०१ में हि० खलीफा उमर बिन अब्दुल अजीज ने 'हदीसे' एकत्र करने का आदेश दिया था । उन्होंने मदीना के

राज्यपाल (*Governor*) अबू बक्र मुहम्मद बिन उमर बिन हज्म को भी आदेश भेजा था कि उमरह बिन अब्दुर्रहमान और कासिम बिन मुहम्मद के पास जो 'हदीसे' हो उन्हें लिख लो। उमर बिन अब्दुल अजीज ने इस्लामी राज्य के समस्त जिम्मेदारों के पास आदेश भेजा था कि वे हदीसों को एकत्र करें। इसका परिणाम यह हुआ कि 'हदीस' के दफ्तर के दफ्तर राजधानी दिमश्क पहुँच गए। खलीफा ने उनकी नकले (प्रतिलिपियाँ) राज्य के प्रत्येक भाग में फैला दी।

'ताबईन' में अधिकतर ऐसे लोग थे जिनका पालन-पोषण 'सहाबा' रजि० के घरों में हुआ था। कुछ ऐसे थे जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन किसी-न-किसी 'सहाबी' की सेवा में व्यतीत किया। 'ताबईन' के जीवन-चरित का अध्ययन कीजिए तो अन्दाजा होगा कि एक-एक व्यक्ति ने किस तरह बहुत से सहाबा रजि० से मुलाकात कर के नबी सल्ल० के जीवन-वृत्तान्त, आपके वचन, आदेश और आपके फैसलों आदि के विषय में विस्तृत ज्ञान संचित किया है।

'ताबईन' में महान् व्यक्तियों के बाद साधारण 'ताबईन' और 'तबअताबईन' को लीजिए जो हजारों की संख्या में फैले हुए थे। इन्होंने दूरवर्ती स्थानों का सफर करके एक-एक भू-भाग के 'सहाबा' रजि० और उनके शिष्यों के पास जो-कुछ ज्ञान था उसे एकत्र किया। यह दूसरी शताब्दी का समय था। इस समय में 'हदीस' के सग्रहों के सकलित करने का काम व्यवस्थित एवं नियमित रूप से आरम्भ हुआ। इस समय बहुत से व्यक्तियों ने 'हदीस' के सग्रह तैयार किए। उनमें से कुछ लोगों ने 'फिक्ही' (शास्त्रीय एवं कानूनी) विषयों के अन्तर्गत 'हदीस' और 'आसार' को एकत्र किया। कुछ लोगों ने एक-एक 'सहाबी' की 'रिवायतों' को अलग-अलग एकत्र किया। किसी ने नबी सल्ल० के 'गजवात' (वे युद्ध जिनमें नबी सल्ल० स्वयं सम्मिलित हुए) का इतिहास सकलित किया। किसी ने नबी सल्ल० और 'सहाबा' रजि० और 'ताबईन' के जीवन-वृत्तान्त एकत्र किए। इनमें से जिनकी पुस्तकें आज तक मौजूद हैं वे ये हैं इमाम मालिक, इमाम अबू यूसुफ, इमाम मुहम्मद बिन इस्हाक, इब्न सअद, इमाम अहमद बिन हबल और अबू बक्र इब्न अबी शैबह। मूसा बिन अकबह की किताब अल-मगाजी का भी एक भाग प्रकाशित हो चुका है। आज हम पूर्वजों में से जिनकी किताबों को नहीं देखते वे किताबें भी वास्तव में नष्ट नहीं हुईं बल्कि बुखारी, मुस्लिम आदि ने और उनके बाद

के लोगों ने उनको अपनी किताबों में सम्मिलित कर लिया है। आरम्भ से लेकर इमाम बुखारी तक 'हदीस' का ऐसा शृङ्खलित इतिहास पाया जाता है जिसकी कड़ियाँ कहीं भी टूटी हुई नहीं दिखती। और 'हदीस' के इतिहास की यह निरन्तरता आज तक खंडित नहीं हुई। इमाम बुखारी से जिन लोगों ने बुखारी पढ़ी है उनकी संख्या ६० हजार तक पहुँचती है।

सही बुखारा के अतिरिक्त इस समय की दूसरी किताब सही मुस्लिम है। क्रम की सुन्दरता की दृष्टि से सही मुस्लिम को प्रमुखता प्राप्त है। इस समय की तीसरी महत्वपूर्ण सग्रह 'सुन्नत' अबू दाऊद है। इसमें अधिकतर नियम और कानून आदि से सम्बन्धित 'रिवायतें' संकलित की गई हैं। नियम और विधि-विधान आदि की दृष्टि से सुन्नत अबू दाऊद एक उत्तम ग्रन्थ है। इस समय का चौथा संकलन जामेअ तिरमिजी है जिसमें 'फिक्ही मसलको' (शास्त्री-प्रणालियों) को सविस्तार स्पष्ट किया गया है। पाँचवाँ संकलन नसई है जो अस-सुन्नत मुजतबा के नाम से प्रसिद्ध है। छठा सग्रह सुन्नत इब्न माजा है। इन छ किताबों को 'मुहद्दिसों' (हदीस के विशेषज्ञों) ने 'सिहाह सित्ता' (छ सही किताबें) के नाम से याद करते हैं। कुछ विद्वान इब्न माजा के स्थान पर मुअत्ता इमाम मालिक की गणना 'सिहाह सित्ता' में करते हैं। बुखारी, मुस्लिम और तिरमिजी को 'जामेअ' कहा जाता है इसलिए कि इनमें विचार, धारणा, 'इबादत', नैतिकता, कर्म, व्यवहार आदि समस्त विषयों के अन्तर्गत 'हदीसों' को संकलित किया गया है। अबू दाऊद, नसई, इब्न माजह को 'सुन्नत' कहते हैं क्योंकि इनमें अधिकतर व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली 'रिवायतें' जमा की गई हैं।

हमारे अपने इस समय में ऐसे लोग लाखों की संख्या में हैं जिन तक हदीस की किताबें 'हदीस' के इमामों से सिलसिले के साथ पहुँची हैं। वह समस्त सामग्री जिसके द्वारा 'मुहद्दिसों' (हदीस के विशेषज्ञों) ने 'हदीस' के 'रावियों' (उल्लेख कर्त्ताओं) के जीवन चरित की जाँच-पड़ताल की थी वह भी प्रामाणिक ग्रन्थों के द्वारा हम तक पहुँची है। 'हदीस' की जाँच के सिलसिले में 'मुहद्दिसों' के बीच जो वाद-विवाद हुआ है, और उनके बीच जो मतभेद हुआ है, वह भी अपनी दलीलों के साथ सुरक्षित रूप में हम तक पहुँचा है।

'हदीसों' और 'रिवायतों' के रूप में नबी सल्ल० का जीवन और आपके जीवन-काल के वातावरण और समाज का विस्तृत नक्शा सविस्तार

हम तक पहुँचा है। एक-एक घटना और आपके एक-एक कर्म और वचन की सनद मौजूद है जिसे जाँच कर कोई भी व्यक्ति किसी भी समय यह मालूम कर सकता है कि किस 'रिवायत' पर कहाँ तक विश्वास और एतबार किया जा सकता है। नबी सल्ल० के सही जीवन-वृत्तान्त मालूम करने के लिए उस समय के छ लाख व्यक्तियों के जीवन-वृत्तान्त सकलित किए गए हैं। यह इसलिए कि जिस व्यक्ति ने भी नबी सल्ल० से सम्बन्ध लगाकर कोई 'रिवायत' बयान की है उसके व्यक्तित्व को जाँच-परख कर यह राय कायम की जाये कि उसके बयान पर किस हद तक विश्वास किया जा सकता है। आलोचना सम्बन्धी इतिहास का यह एक ऐसा शास्त्र है जिसका सकलन अत्यन्त बारीक बीनी और सूक्ष्मदर्शिता के साथ हुआ है जिसका कोई दूसरा उदाहरण प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। इसका उद्देश्य यह है कि नबी सल्ल० से सम्बन्ध लगाकर जो बात भी कही गई हो उसे हर पहलू से जाँच-परख कर यह राय कायम की जा सके कि उस का सम्बन्ध आप से स्थापित करना सही है या नहीं। 'मुहद्दिसों' ने सही व गलत, शुद्ध व अशुद्ध की परीक्षा के लिए कड़े-से-कड़े नियम निर्धारित किए, जिससे सरलता के साथ सही और गढ़ी हुई 'हदीसों' में पहचान हो सकती है। 'मुहद्दिसों' ने प्रत्येक 'हदीस' के विषय में अपनी राय भी जाहिर कर दी और यह बता दिया कि वह किस 'हदीस' या 'रिवायत' को क्या स्थान देते हैं और इस सिलसिले में उनके पास क्या दलीले हैं। 'मुहद्दिसों' ने आलोचना सम्बन्धी नियम को इतनी उन्नति दी कि 'इस्नाद', जिरह, तअलील आदि स्थायी रूप से अलग-अलग शास्त्र बन गए। अल्लामा जजायरी ने 'तौजीहुन्नजर' में 'हदीस' से सम्बन्धित ५२ प्रकार के शास्त्रों का विस्तारपूर्वक उल्लेख हुआ है।

किसी भी 'रिवायत' की जाँच के सिलसिले में कड़े से कड़ा नियम जो बनाया जा सकता है वह यही कि हम यह देखें कि 'रिवायत' हम तक किस तरीके से पहुँची है। बीच के वास्तो (माध्यमों) का सिलसिला अन्त तक चला गया है या नहीं। बीच के 'रावियों' (उल्लेख कर्त्ताओं) ने जिस-जिस के वास्ते से 'रिवायत' बयान की है उस से उसकी मुलाकात है या नहीं। 'रावी' ने 'रिवायत' किस आयु में और किस हालत में बयान की है।

जिन लोगों के द्वारा और माध्यम से 'रिवायत' पहुँची है वे अपने चरित्र और आचरण आदि की दृष्टि से कैसे थे? वे झूठे, बददियानत

और दुष्प्रकृति तो नहीं थे ? उनकी स्मरण शक्ति कैसी थी ? 'रिवायत' को सही तौर से याद रखने और उसे सही रूप में पहुँचाने की योग्यता उन में थी या नहीं ? जो 'रिवायत' उन्होंने की है उस में उनकी किसी प्रकार का व्यक्तिगत या गरोही स्वार्थ तो निहित नहीं था ?

'रिवायत' को 'रावी' (उल्लेखकर्ता) ने शब्दशः पहुँचाया है या उसके आशय, अर्थ और भाव को अपने शब्दों में बयान किया है। 'रावी' की 'रिवायत' दूसरे तरीकों से भी पहुँची है या नहीं ? यदि दूसरे तरीके से यह 'रिवायत' पहुँची है तो बयान में समानता पाई जाती है या नहीं ? यदि उनके बयानों में भिन्नता पाई जाती है तो वह किस हद तक है ? खुली हुई भिन्नता तो उन में नहीं पाई जाती ? यदि पाई जाती है तो विभिन्न तरीकों में से जिन के द्वारा यह 'रिवायत' पहुँची है कौन सा ज्यादा भरोसा करने योग्य है ?

नबी सल्ल० के स्वभाव और आप के आचार एवं चरित्र और आप के वातावरण और समाज के बारे में जो 'रिवायतें' मशहूर व 'मुतवातिर' और प्रामाणिक हैं यह 'रिवायत' उन के विरुद्ध तो नहीं है ?

यदि 'रिवायत' किसी असाधारण चीज के विषय में है तो क्या 'रिवायत' के तरीके इतने अधिक और विश्वास करने योग्य हैं कि उसे मान लिया जाये ?

'रिवायतों' और 'हदीसों' की जाँच-पड़ताल में 'मुहद्दिसों' (हदीस के विशेषज्ञों) ने इन सारे ही पहलुओं को अपने सामने रक्खा है। इसके बाद उन्होंने किसी 'रिवायत' के बारे में कोई राय कायम की है और उस के सही होने या न होने का फैसला किया है।

'दरायत' (प्रज्ञा एवं मीमांसा) का प्रयोग

'हदीसों' की जाँच-पड़ताल में 'रिवायत' के साथ 'दिरायत' अर्थात् समझ-बूझ एवं प्रज्ञा का प्रयोग भी आवश्यक है। इस्लाम की वास्तविकता और उसके आंतरिक भाव एवं आत्मा से पूर्ण रूप से परिचित होने के पश्चात् जब कोई 'हदीस' का अधिक-से-अधिक अध्ययन करता है तो अध्ययन की अधिकता और अभ्यास एवं अनुभव से उस में ऐसी योग्यता पैदा हो जाती है कि वह किसी 'हदीस' को देखते ही समझ सके कि वह अल्लाह के रसूल सल्ल० का कर्म व वचन हो सकता है या नहीं।

मुल्ला अली कारी ने मौजूआत कवीर में लिखा है।

“इन् कयियम जोजी से पूछा गया कि क्या यह सम्भव है कि घड़ी हई 'हदीस' को उस की 'मनद' पर निगाह डाले बिना ही पहचान लिया

जाये ? उन्होंने कहा कि यह प्रश्न बड़ा महत्व रखता है । यह पहचान उसी व्यक्ति को हो सकती है जिसे 'सुन्न' और 'सही हदीसों' का पूरा ज्ञान हो और 'हदीस' का ज्ञान उस के मास और रक्त में सम्मिलित हो चुका हो । और इस ज्ञान में उस ने विशेष योग्यता प्राप्त कर ली हो । और उसने 'सुन्न' और 'आसार' का गहरा परिचय और रमूल सल्ल० के चरित्र की पहचान हासिल की हो । और वह अच्छी तरह आपकी हिदायत (मार्ग-दर्शन) को पहचान गया हो और उस बात को कि आप किस चीज का हुक्म देते हैं, किस चीज से रोकते हैं, किस बात की खबर देते हैं, किस चीज की ओर आमन्त्रित करते हैं, क्या चीज आप पसन्द करते हैं, क्या नापसन्द करते हैं और कौन से तरीके अपने समुदाय (अपने अनुयायियों) के लिए निश्चित करते हैं । जब कोई व्यक्ति इन बातों के जानने में इस दर्जे को पहुँच जाये कि मानो वह नबी सल्ल० के साथ आपके सहावा रजि० में सम्मिलित है तो वह व्यक्ति पहचान जायेगा कि क्या चीज आप के मन के भावों और आप की हिदायत (मार्ग-दर्शन) से सम्बन्ध रखती है और कौन सा कलाम आप का है और कौन कर्मों और वचनों का सम्बन्ध आप से जोड़ा जा सकता है ।”

इमाम रबी अबिन खसीम ने 'दिरायत' (प्रजा, समझ-बूझ) की व्याख्या इन शब्दों में की है “हदीस में एक प्रकाश होता है, दिन के प्रकाश जैसा और एक अन्धकार होता है, रात के अन्धकार जैसा । इस प्रकाश और अन्धकार में तमीज करना (पहचानना) 'दिरायत' है ।” अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी ने गृह सफरुस्सआदह में लिखा है कि एक बार एक व्यक्ति ने 'हदीस' के एक विशेषज्ञ के सामने एक 'हदीस' पेश की उसने कहा 'मअलूल' है । पूछा कि आप किस कारण इसे 'मअलूल' ठहरा रहे हैं ? कहा नहीं बयान कर सकता, अलवत्ता इस के सुनने से तवीअत बेमजा हो गई । वह व्यक्ति कई 'मुहद्दिसों' के पास गया । सबका एक उत्तर था । जिस प्रकार सिक्के को सर्राफ हाथ लगाते ही बता देता है कि वह खोटा है या खरा, ठीक उसी प्रकार 'हदीस' के सम्बन्ध में जिन्हे सूझ-बूझ और कुशलता प्राप्त होती है वे पहली ही दृष्टि में समझ जाते हैं कि कोई 'रिवायत' किस दर्जे की है । हाफिज इब्न हजर ने लिखा है कि 'मुहद्दिस' की मिसाल सर्राफ और जौहरी की है । बहुधा रुपये के रंग-रूप और आवाज तक में कोई अन्तर महसूस नहीं होता परन्तु सर्राफ छूते ही उसके खोट को जान लेता है ।

'हदीसों' का अध्ययन करने वाले इस बात को भली-भाँति जानते

हैं कि नवी सल्ल० की भाषा और आप की वाणी में एक अद्वितीयत्व और अनुपमता पाई जाती है। आपकी अपनी एक भाषा और आपकी अपनी एक विशेष वर्णन-शैली (Style) है। 'सही हदीसों' में आप का व्यक्तित्व बोल रहा होता है। उस में आप की महानता और आप के उच्च पद की झलक लक्षित हो रही होती है। आप के वचनों में इतना अद्वितीयत्व पाया जाता है कि कोई उनकी नकल नहीं उतार सकता। वे विशेषताएँ कोई कहाँ से ला सकता है जो आपको अल्लाह ने प्रदान की थी। जो लोग नवी सल्ल० की भाषा से परिचित हैं वे किसी 'हदीस' को देखते ही बता सकते हैं कि वह 'सही हदीस' है या घड़ी हुई है। बल्कि यदि 'रिवायत' करने वाले ने नवी सल्ल० की 'हदीस' के अर्थ और भाव को अपने शब्दों में व्यक्त किया है तो वे तुरन्त महसूस कर लेते हैं कि यह बात तो नवी सल्ल० ही की है परन्तु भाषा और शब्द आप के नहीं हैं बल्कि 'रावी' के अपने हैं।

जिस प्रकार नवी सल्ल० का व्यक्तित्व समस्त व्यक्तियों से बढ़ कर प्रिय और महान् है उसी प्रकार आपका कलाम भी सारे कलामों और वाणियों में उत्तम है। स्वयं नवी सल्ल० का अपना वयान है "मुझे व्यापक और सक्षिप्त कहने की योग्यता दी गई।" कुरआन के बाद यह 'हदीस' ही का चमत्कार है कि स्पष्ट और सक्षिप्त होते हुये भी अर्थ और भाव की दृष्टि से उस में अत्यन्त फैलाव और व्यापकता पाई जाती है। आप के 'कलाम' में शब्द कम और अर्थ अधिक होते हैं। शब्द कम होने के बावजूद आपका वयान कहीं भी अव्यवस्थित और अस्पष्ट नहीं होता। आगम के व्यक्त करने में कहीं किसी प्रकार की त्रुटि और अपूर्णता नहीं पाई जाती। आप के 'कलाम' में कृत्रिमता और अनुचित शाब्दिक आडम्बर नहीं पाया जाता। कलाम में महान् व्यक्तित्व बोलता दीख पड़ता है। साधारण व्यक्तित्व के लोगों का कलाम इतना उच्च और पवित्र हो ही नहीं सकता। न तो आप गिरी हुई बाजारू भाषा का प्रयोग करते हैं और न आप के यहाँ ऐसे शब्दों का प्रयोग मिलता है जिस से लोग बिल्कुल ही अपरिचित हों। जहाँ विस्तार की आवश्यकता होती है वहाँ आप विस्तार से काम लेते हैं और जहाँ सक्षिप्त वर्णन की आवश्यकता होती है वहाँ आप विस्तार में नहीं जाते। भाषा और भाषण पर आपको पूर्ण अधिकार प्राप्त है। 'कलाम' में जहाँ रोब और तेज पाया जाता है वही उस में आश्चर्यजनक रस, माधुर्य और हृदयाकर्षकता भी पाई जाती है। दोनों में सुन्दर समन्वय और सामंजस्य दीख पड़ता

है। आप का 'कलाम' आप के हार्दिक भावों और अन्तःप्रकाश का द्योतक है। आपकी प्रत्येक वार्त्ता ज्ञान और तत्त्वदर्शिता से सुसज्जित होती है। 'कलाम' में कही अनुचित पुनरावृत्ति नहीं पाई जाती और न आप के प्रस्तुत किये हुये तर्क में कोई त्रुटि और कमजोरी पाई जाती है।

आप अपने शत्रुओं और विरोधियों पर व्यग्य और चोट करते दिखाई नहीं देते। और श्रोताओं पर रोव डालने के लिए अपने भाषण में अनुचित जोश कदापि नहीं दिखाते और न ही अतिशयोक्ति से काम लेते हैं। आपका सक्षिप्त कलाम बड़े-बड़े विस्तृत भाषणों पर भारी होता है। तर्कोपस्थिति में आप सदैव सच्चाई को अपने सम्मुख रखते हैं। आप बस उतनी ही बात करते हैं जितनी सत्य और ठीक होती है। बात-चीत में न अधिक ठहरते हैं और न जल्दबाजी से काम लेते हैं। 'कलाम' न इतना लम्बा होता है कि लोगों को उकता दे और इतना सक्षिप्त होता है कि बात ही न समझ में आ सके। शब्द जँचे-तुले होते हैं। वर्णन शैली में मनोहरता और सौन्दर्य पाया जाता है। आपकी भाषा में स्वाभाविक सारल्य और प्रवाह पाया जाता है। जोश और विकलता की अभिव्यक्ति आप के यहाँ होती है तो शान्ति-रूप लिए होती है। 'कलाम' में किसी प्रकार की सख्ती, उग्रता और असन्तुलन नहीं पाया जाता। आप की 'हदीसों' को जितनी बार पढ़िए उतना ही उन का प्रभाव बढ़ता हुआ प्रतीत होता है और उनकी साहित्यिक एवं आन्तरिक विशेषताये स्पष्ट होती चली जाती हैं।^१

बात-चीत में आप सम्बोधित व्यक्ति के मासिक स्तर और उस के ज्ञान एवं बुद्धि की सीमा आदि का पूरा ध्यान रखते हैं। विरोधी को उस की अपनी जानकारी के द्वारा शान्त करते हैं। आप के 'कलाम' में कहीं नाम मात्र को किसी प्रकार की शंका और सकोच का चिह्न नहीं मिलता। मिस्री विद्वान सैयद महमूद शाकिर ने लिखा है कि रसूल सल्ल० की 'हदीस' को 'बलागत' अर्थात् वक्तृत्व का अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त है। जिस तक पहुँचने की कोशिश लोगों की गरदन तोड़ देती है।

एक और पहलू से विचार कीजिए। सही 'हदीसों' में आचार-विचार, धारणा और व्यवहार की एक पूर्ण व्यवस्था मिलेगी। इस व्यवस्था का सम्बन्ध मानवीय जीवन के किसी विशेष अङ्ग से नहीं अपितु समस्त अङ्गों से है। विचार एवं सिद्धान्त सम्बन्धी समस्याये हो या

व्यावहारिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाली समस्याएँ हों, चाहे उनका सम्बन्ध मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन से हो या सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन से, समस्त समस्याएँ और जीवन के समस्त अङ्ग उस से सम्बन्धित हैं। इस जीवन-व्यवस्था के समस्त भागों में परस्पर नैयायिक एवं तार्किक सम्पर्क पाया जाता है और विचार एवं व्यवहार की इस व्यवस्था का प्रारम्भ से अन्त तक अपना एक विशेष स्वभाव है। ऐसी पूर्ण, संबद्ध और सन्तुलित जीवन-व्यवस्था विभिन्न मस्तिष्क की उपज नहीं हो सकती। यह व्यवस्था एक ऐसी कसौटी है जिसके द्वारा हम सरलतापूर्वक गढ़ी हुई और कमजोर 'हदीसों' को अलग कर सकते हैं। गढ़ी हुई 'हदीसों' की इस जीवन-व्यवस्था के साथ असंगति स्वयं बता देगी कि वे गढ़ी हुई हैं, वे विश्वास करने योग्य नहीं हैं।

‘खबर वाहिद’

ऐसी 'रिवायत' जिस के 'रावी' हर समय में इतने अधिक रहे हों कि उनका झूठ पर सहमत होना स्वाभावतः सम्भव न हो, 'खबर मुतवातिर' कहलाती है। जिस 'रिवायत' के रावी संख्या में 'मुतवातिर' रिवायत के रावियों की संख्या के बराबर न हों उसे परिभाषा में 'खबर वाहिद' कहते हैं। 'खबर वाहिद' का अर्थ यह नहीं होता कि उसका 'रिवायत' करने वाला हर समय में एक ही रहा है। किसी 'हदीस' के बयान करने वाले 'सहाबा' रजि० और 'ताबईन' के समय में अधिक संख्या में हों पर किसी एक समय किसी कारण से उस के रावियों की संख्या कम हो जाये तो उसे 'खबर मुतवातिर' न कह कर 'खबर वाहिद' ही कहेंगे। 'रिवायते' अधिकतर 'खबर वाहिद' ही हैं। 'मुतवातिर रिवायते' कम हैं। कुछ लोग इस तरह का मत प्रकट करते हैं कि 'खबर वाहिद' से केवल 'गुमान गालिब' ही प्राप्त होता है। अर्थात् इस बात की केवल अधिक सम्भावना ही होती है कि वह नबी सल्ल० की 'हदीस' है। उसके प्रति ऐसा पूर्ण विश्वास प्राप्त नहीं होता जिस में नाम मात्र को भी सन्देह बाकी न रहे, जैसा कि 'खबर मुतवातिर' की विशेषता है। इस तरह का विचार रखने वाले वास्तव में गलती पर हैं। स्वयं हमारे दैनिक जीवन के अधिकतर मामले के फैसलों का आधार 'गुमान गालिब' ही होता है। कुरआन ने भी ऐसी गवाहियों को जिन से 'गुमान गालिब' ही प्राप्त होता है अविश्वसनीय नहीं ठहराया बल्कि उनका एतबार किया है। यहाँ तक कि उन की बुनियाद पर एक मुसलमान की मृत्यु दण्ड भी दिया जा सकता है। 'जिना', चोरी आदि के सिलसिले में फैसलों दो-चार गवाहों पर ही होता है, जबकि इस में एक मुसलमान को दो-तीन गवाहों की भी आवश्यकता है।

जा सकती है और उसका हाथ भी काटा जा सकता है। जब कुरआन 'गैर मुतवातिर' गवाहियों पर अपने न्याय-व्यवस्था की बुनियाद रखता है तो फिर किसी मुसलमान व्यक्ति के लिए यह कैसे उचित हो सकता है कि वह यह कहने लगे कि रसूल सल्ल० की 'हदीसों' के लिए प्रत्येक युग में दो-चार 'रावियों' का होना काफी नहीं है, बल्कि हर समय में रावियों का एक विराट जन समूह होना चाहिए। इस से इन्कार नहीं कि 'रावी' के लिए यह आवश्यक है कि वह न्यायी और विश्वसनीय हो। इसी बात की जाँच के लिए वास्तव में 'अस्माउर्रिजाल' जैसा शास्त्र तैयार हुआ है।

कुरआन में कहा गया है "हे ईमान लाने वालो ! जब कोई 'फासिक' (अवज्ञाकारी और मर्यादाहीन व्यक्ति) तुम्हारे पास कोई सूचना ले कर आये तो उस की छान-बीन कर लिया करो, ऐसा न हो कि तुम किसी गरोह के साथ बेजा हरकत कर बैठो, फिर तुम्हें अपने किये पर प्रछतावा हो।" (अल-हुजुरात ६), इस 'आयत' में कुरआन ने 'खबर वाहिद' को रद्द करने का आदेश नहीं दिया है। सूचना यदि किसी पापाचारी की दी हुई है तो वह उसकी जाँच-पड़ताल का आदेश देता है। इस 'आयत' से यह बात अपने आप निकलती है कि यदि सूचना किसी ऐसे व्यक्ति ने दी है जो 'फासिक' (अवज्ञाकारी) नहीं बल्कि उस के न्यायशील और सच्चा होने पर पूरा विश्वास है तो जाच-पड़ताल के बिना भी उस की दी हुई सूचना के आधार पर कार्रवाई की जा सकती है।

स्वयं कुरआन के ईश्वरीय ग्रन्थ होने का विश्वास भी हमें एक ही विश्वसनीय व्यक्ति हजरत मुहम्मद के बयान से प्राप्त हुआ है। ऐसा नहीं हुआ है कि अल्लाह की ओर से बहुत से लोगो या 'फिरिश्तो' ने आ कर कुरआन के ईश्वरीय ग्रन्थ होने की गवाही दी हो।

कुरआन के अतिरिक्त 'हदीस' से भी इसका प्रमाण मिलता है कि 'खबर वाहिद' को धर्म में दलील और बुनियाद की हैसियत हासिल है। इस सिलसिले में यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं

यज़ीद बिन शैबान रजि० का बयान है कि हम 'अरफात' में थे। सयोग से हम जहाँ ठहरे थे वह स्थान उस जगह से दूर था जहाँ नबी सल्ल० ठहरे हुये थे। हमारे पास आप का सन्देशवाहक यह सन्देश ले कर आया कि हम जहाँ ठहरे हैं उसी जगह रहे, वहाँ से किसी और स्थान पर जाने की आवश्यकता नहीं। 'अरफात' में जहाँ भी ठहर जाये (उस मैदान में) ठहरने के कर्तव्य की पूर्ति हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि एक विश्वासपात्र व्यक्ति की दी हुई सूचना को भी 'दीन' में बुनियाद का

दर्जा प्राप्त है। यदि ऐसी बात न होती तो आप अपनी ओर से केवल एक व्यक्ति को न भेजते।

सन् ६ हि० मे नबी सल्ल० हजरत अबू बक्र रजि० को 'हज्ज' का अमीर (नायक) बना कर भेजते हैं। इस के बाद सूर अत्-तौबा की प्रारम्भिक 'आयते' अवतीर्ण हुईं तो आप ने हजरत अली रजि० को भेजा ताकि वे 'हज्ज' के अवसर पर वे आयते लोगो को सुना दे।

नबी सल्ल० ने जहाँ भी कोई दूत या 'आमिल' (कर्मचारी या हाकिम) भेजा है इस मे सख्या की कोई पाबन्दी नहीं की है। आप बहरैन के प्रतिनिधि-मण्डल के साथ इब्न सअद बिन आस रजि० को भेजते हैं, मुआज बिन जवल रजि० को यमन भेजते हैं, कैस बिन आसिम रजि० और इब्न जुवैर रजि० आदि को उन के अपने-अपने कबीलों के पास भेजते हैं। इस प्रकार इस्लाम का आमन्त्रण देने के सिलसिले मे विभिन्न भू-भाग न आपने अपने वारह दूत भेजे। आपने केवल इस बात का ध्यान रक्खा कि किसी भी स्थान पर ऐसा व्यक्ति भेजा जाये जिस से वहाँ के निवासी परिचित हो, ताकि लोगो को उस के बारे मे किसी प्रकार का सन्देह न हो और उन्हे विश्वास हो जाये कि वह वास्तव मे 'रसूल' का भेजा हुआ दूत है।

जो उदाहरण ऊपर दिये गये हैं उन से स्पष्ट होता है कि किसी बात पर विश्वास प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उस के साक्षी विराट जन हों। 'सहाबा' रजि० किसी सूचना को मानने के सिलसिले मे इस के पाबन्द न थे कि वह 'खबर मुतवातिर' ही है। इस के कितने ही उदाहरण 'हदीस' की किताबों से प्रस्तुत किये जा सकते हैं। हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अबू उबैदा रजि०, अबू तलहा रजि०, उबई बिन कअब रजि० को शराब पिला रहे थे कि अचानक एक व्यक्ति ने आ कर खबर दी कि शराब हराम हो गई। यह सुनना था कि अबू तलहा रजि० ने कहा कि अनस (रजि०) उठो और शराब के मटके तोड़ डालो। मैंने उठ कर शराब के बरतन तोड़ दिये।

देखिए केवल एक व्यक्ति के कहने पर मान लिया गया कि शराब हराम हो गई। 'खबर मुतवातिर' की प्रतीक्षा नहीं की गई और न यह आवश्यक समझा गया कि खबर की तसदीक के लिए नबी सल्ल० के पास जाये।

'कबा' के लोग 'फज्र' की नमाज मे थे कि उन के पास नबी सल्ल० का भेजा हुआ आदमी यह खबर ले कर पहुँचा कि 'किबला' बदल गया। अब नमाज 'काबे' की ओर मुँह कर के अदा की जाये। सूचना मिलते

ही हर एक ने 'नमाज' ही मे अपना मुख 'बैतुल मकदिस' की ओर से काबा' की ओर कर लिया। उन्हे एक व्यक्ति के बयान पर विश्वास करने में कोई सकोच नहीं हुआ।

वास्तव मे विश्वास केवल इसी से प्राप्त नहीं होता कि कोई सूचना हम तक 'तवातुर' के साथ पहुँचे बल्कि दूसरे बहुत से प्रमाण और सगत बातें एकत्र हो कर जब किसी चीज की साक्षी होती है तो शाब्दिक 'तवातुर' न सही, एक प्रकार का आन्तरिक 'तवातुर' अवश्य पैदा हो जाता है। जो इस के लिए बिल्कुल पर्याप्त होता है कि आदमी उस पर विश्वास कर सके। इमाम शातबी इस सिलसिले मे कहते हैं :

“साधारणतया जिन प्रमाणों का यहाँ एतबार किया जाता है वे इस तरह के हैं कि यद्यपि अलग-अलग उन की हैसियत 'गुमान' की है परन्तु किसी एक मामले में सब मे एकता पाये जाने के कारण उस मामले मे उन से विश्वास प्राप्त हो जाता है। सब प्रमाणों के मिलने से जो बल पैदा होता है वह उनकी अपनी अलग हैसियत मे नहीं पैदा हो सकता। 'खबर मुतवातिर' मे भी सामूहिक बल के कारण ही विश्वास प्राप्त होता है। अतः किसी मामले मे विविध प्रमाण एकत्र हो जायें तो उनके संग्रह से एक विश्वास प्राप्त हो जाता है और यह एक प्रकार से आन्तरिक 'तवातुर' के समान हो जाता है।”

इब्न तैमिया का बयान है कि जब कोई वृत्तान्त किसी व्यक्ति के मुख से हम सुनते हैं फिर विभिन्न स्थानों से विभिन्न ढंग से उस की विभिन्न गवाहियाँ हमें मिल जाती हैं तो यद्यपि उन में से हर एक गवाही की हैसियत 'खबर वाहिद' की होती है परन्तु उन खबरों के मिलने से हमें पूरा विश्वास हो जाता है कि वे वास्तव में सही हैं। यह बुद्धिसगत बात नहीं हो सकती कि विभिन्न व्यक्ति एक दूसरे की बेखबरी मे कोई वृत्तान्त गढ़ कर बयान करे और उन के बयान में समानता पाई जाये। उदाहरणार्थ बुखारी और मुस्लिम में यह रिवायत मिलती है कि एक सफर मे नबी सल्ल० ने हजरत जाबिर रजि० से ऊँट खरीदा। यद्यपि ऊँट का मूल्य बयान करने में रावियों में मत-भेद हुआ है परन्तु विभिन्न तरीकों से यह मालूम होता है कि आपने जाबिर रजि० से ऊँट खरीदा था। विभिन्न व्यक्ति जब एक घटना का उल्लेख करते हैं और इसका कोई प्रमाण और लक्षण नहीं मिलता कि उन लोगों ने इस से पहले आपस में मिलकर वह घटना गढ़ी हो, और न उस खबर से उनके किसी स्वार्थ का

१. अल-मुआफिकात भाग १, पृष्ठ ३६।

२. अर्थात् रिवायत के सिलसिले से।

सम्पर्क होता है तो उस घटना के मान लेने में क्या सकोच हो सकता है।

अल्लामा जजायरी ने इस सिलसिले में एक और काम की बात लिखी है। वे इस आक्षेप का कि 'मुहद्दिसों' ने 'सही हदीसों' के अतिरिक्त 'हदीस' की किताबों में कमजोर 'हदीसे' क्यों जमा की है, उत्तर देते हुए लिखते हैं कि अज्ञात और कमजोर स्मरण शक्ति के लोगों की 'हदीसों' को मुहद्दिस लोग इसलिए एकत्र करते थे कि ये 'हदीसे' कम-से-कम किसी मजमून या विषय की पुष्टि और समर्थन में उपयोगी हो सकते हैं।

—तौजीहुन्नजर, पृष्ठ १३०

इमाम अहमद कहते हैं मैं कभी एक व्यक्ति की 'हदीस' इस ध्येय से लिखता हूँ कि उसको अनुकूलता दिखाने के लिए या दृष्टान्त के रूप में काम में ला सकूँ। (तौजीहुन्नजर)

कुछ सन्देह

उपर जो-कुछ बयान किया गया वह यह अन्दाजा करने के लिए काफी है कि जिस तरह अल्लाह ने कुरआन को सुरक्षित किया और वह हम तक सुरक्षित रूप में पहुँचा है उसी तरह उसने अपने 'रसूल' की 'सुन्नत' को सुरक्षित रखने का प्रबन्ध किया है। नबी सल्ल० के कर्म, और वचन आदि का उल्लेख हम तक इस तरह पहुँचा है कि हम महसूस करते हैं कि मानो आज भी आप हमारे बीच मौजूद हैं। इसमें सन्देह नहीं कि पहली शताब्दी हिजरी के अन्त में कुछ लोगों ने आपसे ऐसी बातें सम्बद्ध की जो वास्तव में आपकी नहीं परन्तु ऐसी समस्त गढ़ी हुई और गलत 'रिवायतों' को 'मुहद्दिसों' ने आलोचना की कसौटी पर परख कर अलग कर दिया।

'हदीसों' के बारे में साधारणतया लोगों को कुछ उलझने पेश आती या आ सकती हैं, हम चाहते हैं कि उन उलझनों को भी दूर कर दिया जाये। 'हदीस' के बारे में एक सन्देह यह किया जाता है कि 'हदीसों' का भण्डार यदि प्रमाणित है और 'दीन' में उन्हें मौलिक स्थान प्राप्त है तो हजरत उमर रजि० ने 'हदीस' रिवायत (बयान) करने पर क्यों पाबन्दी लगा दी थी। हजरत उमर रजि० जिस कारण अधिक 'रिवायत' करने को पसन्द नहीं करते थे वह यह कदापि नहीं था कि वे 'सुन्नत' और 'हदीस' को 'दीन' में कोई महत्व नहीं देते थे या यह कि उनके समय में लोग 'हदीसे' गढ़ने लगे थे बल्कि इसका कारण वास्तव में यह था कि हजरत उमर रजि० के समय तक कुरआन का सामान्य रूप से प्रचार न

हो सका था। इस सिलसिले में हजरत उमर रज़ि० ने जरूरी समझा कि सारे लोगों को पहले कुरआन से परिचित कराया जाये और उन बातों से बचा जाये जिन से कुरआन में दूसरी चीजों के मिलने की आशंका हो।

एक बात यह कही जाती है कि 'हदीस' के मज़मून और बयान में विभेद पाया जाता है। इसलिए उन पर कैसे विश्वास किया जा सकता है। इस आक्षेप में भी गहरे सोच-विचार से काम नहीं लिया गया। जिन लोगो ने भी 'हदीसो' का अध्ययन किया है वे इस बात को भली-भाँति जानते हैं कि 'रिवायतों' में समानता अधिक है, विभेद बहुत ही कम पाया जाता है। उनके बीच जो विभेद पाये भी जाते हैं वे अधिकतर निम्नलिखित प्रकार के हैं।

एक ही भाषण, वार्ता या घटना है 'रावियों' (उल्लेख कर्त्ताओं) ने उसको अपने-अपने शब्दों में बयान किया है। उनके शब्द अवश्य अलग-अलग हैं परन्तु अर्थ और आशय में कोई विभेद नहीं है। इस प्रकार के विभेद को वास्तविक विभेद कहना सही न होगा।

एक ही घटना या वार्ता है किसी 'रावी' (उल्लेख कर्त्ता) ने उसके किसी भाग का उल्लेख किया, किसी ने उसके किसी दूसरे अंश का उल्लेख किया जिसके कारण उनके बीच विभेद और भिन्नता लक्षित होने लगी हालाँकि वास्तव में उनके बीच विभेद सिरों से है ही नहीं।

ऐसा भी होता है कि एक 'हदीस' पहले की है, दूसरी बाद की है। बाद की 'हदीस' ने पहली 'हदीस' के हुक्म को मनसूख (निरस्त) कर दिया है। जिस व्यक्ति को इसकी खबर नहीं है उसे 'हदीसो' में विपरीतता और प्रतिकूलता दिखाई दे सकती है हालाँकि यह विपरीतता नहीं बल्कि वास्तव में आदेश और हुक्म का परिवर्तन है। नबी सल्ल० अल्लाह रसूल थे अल्लाह के हुक्म से आप किसी भी आदेश को मनसूख कर सकते थे। इस में सिरों से आपत्ति की कोई बात है ही नहीं।

विभेद के समस्त प्रकार ऐसे हैं कि इन को वास्तविक विभेद नहीं कहा जा सकता। यदि कुछ थोड़ी 'रिवायतें' ऐसी निकल भी आये जिन में पाये जाने वाले विभेद को दूर करना कठिन हो तो उनके त्यक्त होने से यह आवश्यक कहाँ होता है कि 'हदीस' के सम्पूर्ण भण्डार को ही त्याग दिया जाये।

एक बात यह भी कही जाती है कि 'हदीसो' में अत्यन्त सक्षेप और असम्बद्धता पाई जाती है जिस के कारण उन का समझना कठिन है। यह बात भी वह व्यक्ति कह सकता है जो सोच-विचार से काम नहीं लेता या जिस की निगाह 'हदीस' के सम्पूर्ण भण्डार पर नहीं है। अधिकतर 'हदीसों'

ऐसी हैं जो यदि एक स्थान पर संक्षिप्त और असम्बद्ध हैं तो वही किसी दूसरे स्थान पर प्रसंग सहित तथा अपने विस्तार के साथ उल्लिखित हुई हैं। जिन 'हदीसों' का विस्तारपूर्वक उल्लेख नहीं भी हुआ है उन के शब्दों में ऐसे सकेत पाये जाते हैं जिन से उन 'हदीसों' के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है। अलबत्ता उन के इशारों को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हमें नबी सल्ल० के जीवन काल और उस समय के समाज की स्थिति आदि का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो। ऐसी हालत में किसी 'हदीस' या रिवायत में किसी कथन या घटना का उल्लेख देख कर उस से हम सरलतापूर्वक अन्दाज़ा कर सकते हैं कि उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या है।



उम्मुल अहादीस

उम्मुल अहादीस

उम्मुल अहादीस (*The Essence of the Hadith*) शीर्षक के अन्तर्गत यहाँ एक विशेष 'हदीस' प्रस्तुत की जा रही है। इस 'हदीस' में पूरे 'दीन' (धर्म) और नबी सल्ल० की समस्त 'हदीसों' का साराश आ गया है। इसीलिए विद्वानों ने इसे 'उम्मुल जवामेअ', उम्मुस्सुन्नह या उम्मुल अहादीस ('हदीसों' का मूल या साराश एवं सार) कहा है। इस 'हदीस' का नाम 'उम्मुस्सुन्नह' या 'उम्मुल अहादीस' उसी तरह का है जैसे कुरआन मजीद की पहली 'सूरा' अल-फातिहा का नाम 'उम्मुल किताब' (*Mother of the book*) है। जिस तरह सूरा अल-फातिहा में कुरआन की समस्त मौलिक बातें आ गई हैं उसी तरह इस 'हदीस' में भी पूरा 'दीन' सिमट आया है। दूसरी समस्त 'हदीसे' मानो इस एक 'हदीस' का विस्तार हैं। इस 'हदीस' की इसी विशेषता के कारण इमाम मुस्लिम ने हदीस के अपने प्रसिद्ध संग्रह 'सहीह मुस्लिम' को इसी 'हदीस' से शुरू किया है और इमाम बगवी ने अपनी किताब मसाबीह और शर्हुस्सुन्नह का आरम्भ इसी 'हदीस' से किया है।

'दीन' वास्तव में नाम है विचार एवं धारणा, कर्म और सत्यनिष्ठा का। इस हदीस में 'दीन' की इन तीनों मौलिक चीजों पर प्रकाश डाला गया है।

इस 'हदीस' में हजरत जिबरील अ० के प्रश्नों का और नबी सल्ल० ने उनके जो उत्तर दिए हैं उनका उल्लेख किया गया है, इसीलिए इस हदीस को 'हदीसे जिबरील' भी कहा जाता है। कुछ रिवायतों (उल्लेखों) से मालूम होता है कि हजरत जिबरील अ० से नबी सल्ल० की यह बात-चीत आपके जीवन के अन्तिम समय में हुई थी। इस तरह २३ वर्ष की मुहत्त में जो 'दीन' पूर्ण हुआ था उसका साराश हजरत जिबरील के प्रश्नों के उत्तर के रूप में प्रस्तुत कर दिया गया है। रिवायतों से यह भी मालूम होता है कि इस अवसर पर 'सहाबा' रजि० (नबी सल्ल० के साथी) अच्छी-खासी संख्या में उपस्थित थे।

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

عَنْ عُمَرَ بْنِ الْخَطَّابِ قَالَ بَيْنَمَا نَحْنُ عِنْدَ رَسُولِ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ذَاتَ يَوْمٍ إِذْ طَلَعَ عَلَيْنَا رَجُلٌ شَدِيدُ بَيَاضِ النَّسَابِ، شَدِيدُ سُودِ السَّعْرِ، لَا تُرَى عَلَيْهِ أَتْرُ السَّفْرِ، وَلَا يُعْرَفُ مِنَّا أَحَدٌ حَتَّى جَلَسَ إِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فَأَسْنَدَ رُكْبَتَيْهِ إِلَى رُكْبَتَيْهِ وَوَضَعَ كَفَّيْهِ عَلَى وَخْدَيْهِ، وَقَالَ يَا مُحَمَّدُ أَخْبِرْنِي عَنِ الْإِسْلَامِ. فَقَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الْإِسْلَامُ أَنْ تَشْهَدَ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَنَّ مُحَمَّدًا رَسُولُ اللَّهِ، وَتَقِيبَ الصَّلَاةَ وَتُؤْتِيَ الزَّكَاةَ، وَتَصُومَ رَمَضَانَ وَتَحُجَّ الْبَيْتَ إِنْ اسْتَطَاعَ إِلَيْهِ سَبِيلًا. قَالَ صَدَقْتَ. قَالَ فَعَجِبْنَا لَهُ يَسْأَلُهُ وَيُصَدِّقُهُ. قَالَ فَأَخْبِرْنِي عَنِ الْإِيمَانِ قَالَ أَنْ تُؤْمِنَ بِاللَّهِ وَمَلَائِكَتِهِ وَكُتُبِهِ وَرُسُلِهِ وَالسُّمْرِ الْآخِرِ، وَتُؤْمِنَ بِالْقَدِيرِ خَيْرِهِ وَشَرِّهِ. قَالَ صَدَقْتَ. قَالَ فَأَخْبِرْنِي عَنِ الْإِحْسَانِ. قَالَ أَنْ تَعْبُدَ اللَّهَ كَأَنَّكَ تَرَاهُ، فَإِنْ لَمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَإِنَّهُ يَرَاكَ. قَالَ فَأَخْبِرْنِي عَنِ السَّاعَةِ. قَالَ مَا السَّائِلُ عَنْهَا بِأَعْلَمَ مِنَ السَّائِلِ. قَالَ فَأَخْبِرْنِي عَنْ إِمَارَاتِنَا. قَالَ إِنْ أَنْزَلْنَا أَمَةً رَبَّهَا، وَأَنْ نَرَى الْحَفَاةَ الْعُرَاةَ الْعَالَةَ رِعَاءَ السَّاءِ بَتَّاءُ لَوْنٍ فِي الْبُنْيَانِ قَالَ ثُمَّ انْطَلَقَ فَلَيْتُ مَلِيًّا ثُمَّ قَالَ لِي يَا عُمَرُ أَتَدْرِي مَنِ السَّائِلُ؟ قُلْتُ اللَّهُ وَرَسُولُهُ أَعْلَمُ. قَالَ فَإِنَّهُ جَابِرُ بْنُ عَبْدِ اللَّهِ أَمَّا كُمْ تَعْلَمُكُمْ

دِينُكُمْ. ————— مسلم

हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते है कि एक दिन हम अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा मे उपस्थित थे कि अचानक एक व्यक्ति हमारे सामने आया जिसका वस्त्र अत्यन्त उज्ज्वल और बाल बहुत ही काले थे । न उस पर सफर का कोई असर दिखाई देता था और न हम मे से कोई उसे

पहचानता था।' यहाँ तक कि वह नबी सन्नो के पास बैठ गया और उसने अपने बुढ़ने आप (मल्ल०) के बुढ़नों में मिला दिए और अपने हाथ आप (मल्ल०) की गानो पर रखा दिए और कहा 'हे मुहम्मद ! मुझे 'इस्लाम' के बारे में बताइए ।

अल्लाह के रसूल मल्ल० ने कहा 'उरलाम' यह है कि तुम यह गवाही दो कि अल्लाह के निवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं और मुहम्मद अल्लाह के 'रसूल' हैं । और नमाज कायम करो और 'जकात' दो और 'रमजान' के 'रोजे' रक़्को, और अल्लाह के घर ('काबा') का 'हज्ज' करो, यदि तुम्हें उनके मार्ग का मामर्थ्य प्राप्त हो' ।

उसने कहा . आपने सच कहा ।

(हज़रत उमर रजि०) कहते हैं कि हमें उस पर आश्चर्य हुआ कि वह आप (मल्ल०) ने पूछता भी है और आपकी तसदीक भी करता है ।

१. अर्थात् हम उन्हें पहचान नहीं रहे थे कि उने अपने यहाँ का निवासी समझते, उस पर थकावट और सफर का भी कोई चिह्न दीख नहीं पड़ रहा था कि उसे मुसाफिर नमना जाना ।

२. अर्थात् वह आप के विल्कुल निकट शिष्टता के साथ बैठ गया । और उस ने पूर्ण रूप से अपना ध्यान आप की ओर केन्द्रित कर दिया ।

३ 'इस्लाम' का अर्थ होता है आज्ञापालन और आत्म-समर्पण । इस्लाम को इस्लाम इसलिए कहा गया है कि यह पूर्णतः अल्लाह के आज्ञापालन और उस के आदेशों के अनुसार चलने का धर्म है । उम में मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन को अल्लाह के अर्पण कर देना है और उसके आदेशों के पालने में लग जाता है । 'अल्लाह' को अपना स्रष्टा पालनकर्ता, स्वामी, पूज्य और शासक मान कर उस की पसन्द की हुई जीवन-प्रणाली और उस के दिये हुये कानून को अपना लेता है । 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और 'गिमालत' की गवाही, नमाज, जकात, 'रोज़ा' और हज्ज' ये 'इस्लाम' के पाँच 'अरकान' (स्तम्भ या मूलाधार) हैं । इस्लाम का परिचय कराने के लिए नबी मल्ल० ने यहाँ इन ही का उल्लेख किया । इन ही पर इस्लामी जीवन के भवन का निर्माण होता है । यदि इन्हें तोड़ दिया जाये तो पूरा भवन गिर जायेगा ।

४ अर्थात् हमें इस पर आश्चर्य हुआ कि वह आप से प्रश्न भी करता है फिर स्वयं आप की बातों की तसदीक भी करता है मानो वह वास्तविकता से भली-भाँति परिचित है ।

फिर उसने कहा मुझे 'ईमान' के बारे में बताइए* ।

आपने कहा 'ईमान' यह है कि तुम अल्लाह, उसके 'फिरिश्तो', उसकी 'किताबो', उसके 'रसूलो' और अन्तिम दिन ('आखिरत') को मानो और तकदीर की भलाई और बुराई पर 'ईमान' लाओ^६ ।

५ अर्थात् बताइये कि किन बातों को मानना हमारे लिए आवश्यक है और वे कौन सी वास्तविकताएँ^७ है जिन पर हम को विश्वास करना चाहिए ।

६ यहाँ जिन चीजों को मानने की शिक्षा दी गई है उन में सब से पहली चीज अल्लाह पर 'ईमान' है । यही इस्लाम का केन्द्र और उसका आधार है । अल्लाह पर ईमान लाये बिना 'दीन' और इस्लाम सब ही कुछ निरर्थक हो जाता है । 'इस्लाम' में समस्त विचारों और धारणाओं का सम्बन्ध वास्तव में 'अल्लाह पर ईमान' से ही है । 'रिसालत' का इन्कार वास्तव में अल्लाह की दयालुता और उस की महानता का इन्कार है (दे० सूरा बनी इसराईल : ८६-८७, अल-अनआम • ६१) । अल्लाह के बारे में वास्तविक ज्ञान और उस की इच्छा के अनुसार जीवन व्यतीत करने का ढंग 'रसूलो' के द्वारा ही मालूम होता है । इसलिए 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) के साथ-साथ 'रिसालत' पर 'ईमान' लाना भी आवश्यक है । 'आखिरत' का सम्बन्ध भी 'तौहीद' से है । 'आखिरत' का इन्कार वास्तव में अल्लाह के प्रभुत्व (*Sovereignty*) का इन्कार है ।

अल्लाह पर 'ईमान' के बाद दूसरी चीज जिस पर 'ईमान' लाने की शिक्षा दी गई वह 'फिरिश्तो' का गुप्त अस्तित्व है । 'मुशिरक' (बहुदेववादी) लोग साधारणतया जहाँ प्रभुत्व में उन चीजों को शरीक समझते थे जो अपना दैहिक अस्तित्व रखती हैं, जिनको हम अपनी आँखों से देखते हैं—जैसे सूर्य, नदी, पर्वत आदि—वही वे उन चीजों को भी प्रभुत्व में शरीक ठहराते थे जो हमारी आँखों से ओझल हैं । 'मुशिरको' ने इन गुप्त सृष्टि-जीवों को देवी-देवता या अल्लाह की औलाद समझ लिया था । नबी सल्ल० ने बताया कि वे अल्लाह के पैदा किए हुए 'फिरिश्ते' हैं । ईश्वरीय प्रभुत्व में उनका कुछ भी अधिकार नहीं है । वे अल्लाह ही के आज्ञाकारी हैं । वे वही करते हैं जो अल्लाह का हुक्म होता है, यह सही है कि वे विभिन्न कामों में लगे हुए हैं और विश्व के प्रबन्ध कार्य में लगे हुए हैं परन्तु वे जो कुछ भी करते हैं अल्लाह ही के आदेश और उसके प्रदान किए हुए अधिकार से करते हैं । उन्हें प्रभुत्व में सहभागी समझना, उनकी उपासना करना या सकट में उन्हें पुकारना अन्याय और 'शिरक' है । वे तो अल्लाह के उसी तरह बन्दे और दाम हैं जिस तरह हम हैं । इस प्रकार 'तौहीद' को 'शिरक' (बहुदेववाद) की गन्दगी से बचाने के लिए 'फिरिश्तो' पर 'ईमान' लाने का उल्लेख एक स्थायी धारणा के रूप में किया गया ।

उसने कहा : आपने सच कहा ।

फिर कहा • मुझे 'एहसान' के बारे में बताइए ।

आप ने कहा ('एहसान') यह है कि तुम अल्लाह की 'इवादत' इस तरह करो मानो तुम उसे देख रहे हो, क्योंकि यदि तुम उसे नहीं

तीमरी चीज जिस पर 'ईमान लाने' की शिक्षा दी गई है वे अल्लाह की किताबे है । अल्लाह ने लोगो के दिशा-दर्शन और पथ-प्रदर्शन के लिए किताबें उतारी । कुरआन उसी 'दीन' की शिक्षा के लिए अवतरित हुआ है जिसकी शिक्षा पहले ईश्वरीय ग्रन्थो या आसमानी किताबो (*Heavenly Book*) में दी गई थी ।

किताबो के साथ-साथ 'रसूलो' पर 'ईमान लाना' भी आवश्यक है । रसूलों ही के द्वारा अल्लाह ने लोगो तक अपना मार्ग-दर्शन और ग्रन्थ भेजा । 'रसूल' अल्लाह के प्रतिनिधि होते हैं । वे अल्लाह की इच्छा के अनुसार जीवन यापन करके लोगो को दिखाते हैं । अल्लाह की 'किताब' को व्यवहार में कैसे लाया जाये, यह हमें 'रसूल' ही के जीवन से ज्ञात होता है । 'रसूल' का जीवन हमारे लिए आदर्श होता है । हजरत मुहम्मद सल्ल० 'नुव्वत' के सिलसिले की अन्तिम कड़ी हैं । आप पर 'नुव्वत' और 'रिसालत' का सिलसिला समाप्त हो गया ।

'रसूलो' के बाद 'आखिरत' पर 'ईमान' लाने की शिक्षा दी गई है । 'आखिरत' या अन्तिम दिन से अभिप्रेत यह है कि एक दिन सारा ससार विनष्ट हो जायेगा । इसके बाद अल्लाह लोगो को दूसरा जीवन प्रदान करेगा । सब लोग अल्लाह के सामने हाज़िर किये जायेंगे । लोगो ने जो कुछ सासारिक जीवन में किया होगा उसका उन्हें बदला दिया जायेगा ।

अन्त में 'तकदीर' पर 'ईमान लाने' की शिक्षा दी गई है । 'तकदीर' पर 'ईमान वास्तव में अल्लाह पर 'ईमान' लाने का एक पहलू है । कुरआन में इस धारणा का इसी हैसियत से उल्लेख भी हुआ है । उदाहरणार्थ देखिए सूरत आले इमरान . २६, ७३, अन-निसा ७८, अल-आराफ . १२८, अल-फुरकान : २-३, अल-हदीद : २२-२३ । 'तकदीर' पर 'ईमान' वास्तव में इस बात का इकरार है कि अल्लाह सर्वशक्तिमान अबाध्य शासक है । उसका ज्ञान सब को घेरे हुये है । कोई भी चीज उस के ज्ञान से विलग नहीं । उस ने हर चीज का अन्दाजा ठहराया है कोई भी चीज उसका अतिक्रमण नहीं कर सकती । उस की शक्ति और बल का मुकाबला कोई नहीं कर सकता । यह ससार उस की सोची-समझी योजना (*Scheme*) के अन्तर्गत चल रहा है । कोई उस को उस के मनसूबे में असफल नहीं कर सकता । फिर लाभ-हानि की सारी शक्तियों का वही मालिक है । सम्मान और अपमान और धन और बल सब उस के

देखते हो, तो वह तो तुम्हें देख रहा है' ।

उसने फिर कहा मुझे उस घड़ी ('कियामत') के बारे में बताइए ।
आपने कहा जिस से पूछा जा रहा है वह उसे पूछने वाले से अधिक नहीं जानता^८ ।

उसने कहा अच्छा, मुझे उसकी निशानियों से सूचित कीजिए^९ ।

आपने कहा (निशानियाँ ये हैं कि) लौड़ी (दासी) अपनी

अधिकार में है । वह अपनी 'हिकमत' और दत्वर्दाशिता (*Wisdom*) की दृष्टि से जिस व्यक्ति को भी जो-कुछ और जितना चाहता है देता है । उस की 'हिकमत' में कोई त्रुटि नहीं । उस का कोई काम और उस का कोई निराय निरर्थक नहीं ।

७ यहाँ आप ने 'एहसान' की वास्तविकता का जो वास्तव में पूरे 'दीन' (धर्म) का सार एवं प्राण है, उल्लेख किया है । 'एहसान' शब्द 'हुस्न' से निकला है । 'हुस्न' सुन्दरता एवं उत्तमता को कहते हैं । 'इबादत' में सुन्दरता, सूची और पूर्णता उसी समय पैदा होती है जब कि हमारा 'ईमान' और विश्वास ऐसा हो कि मानो अल्लाह हमारी दृष्टि से ओझल नहीं है बल्कि हमारी निगाहों के सामने है । इस मनोभाव और हृदय-स्थिति के साथ जो 'इबादत' की जायेगी उस में जो सौन्दर्य होगा वह उन उपासनाओं और 'उबादतों' में नहीं हो सकता जो इस मनोभाव से वंचित हो । 'एहसान' वास्तव में मानवीय विकास की उच्चतम मजिल है । यहाँ पहुँच कर मनुष्य को अल्लाह का अत्यन्त सामीप्य और उस का अत्यन्त गहरा प्रेम प्राप्त होता है । 'एहसान' अल्लाह की पहचान (ब्रह्म-ज्ञान) का सब से उच्च दर्जा है । यहाँ पहुँचने के पश्चात् अल्लाह की पसन्द मनुष्य की अपनी पसन्द हो जाती है । उस की इच्छा वही होती है जो उस के ईश्वर की इच्छा होती है । जो चीज़ उस के पालनकर्ता को अप्रिय होगी वह उसे भी अप्रिय होगी । वह उन भलाइयों और नेकियों को फैलाने और उन्हें कायम करने की कोशिश में अपनी सारी शक्ति लगा देता है जिन से उस का स्वामी (ईश्वर) इस धरती को सुसज्जित देखना चाहता है । इसी प्रकार वह उन बुराइयों को मिटाने के लिए जान तोड़ कोशिश करता है जिन्हें उस का स्वामी इस धरती में देखना नहीं चाहता । ऐसा नहीं कि वह केवल 'नमाज' की हालत में 'एहसान' के पद पर हो बल्कि अल्लाह के प्रत्येक आदेश के पालन में वह 'एहसान' ही के दर्जे पर होता है ।

८ अर्थात् इसका ज्ञान हम में से किसी को नहीं है कि 'कियामत' कब आयेगी इसका ज्ञान केवल अल्लाह को है ।

९ जिनके प्रकट होने पर यह समझा जा सके कि 'कियामत' निकट आ गई है ।

स्वामिनी को जन्म देगी^{१०} और तुम नगे पाँव और नगे शरीर वाले कंगालो और बकरियाँ चराने वालो को देखोगे कि वे भवनों (के निर्माण) में एक-दूसरे से बढ-चढ कर रहना चाहते हैं^{११} ।

(हजरत उमर रजि०) कहते हैं कि फिर वह चला गया और मैं कुछ देर ठहरा रहा । फिर आप (सल्ल०) ने मुझ से कहा हे उमर ! क्या तुम्हे मालूम है कि प्रश्न करने वाला कौन था ?

मैंने कहा अल्लाह और उसका 'रसूल' ज्यादा जानते हैं ।

आपने कहा वे जिवरील थे, तुम्हारे पास आए थे कि तुम्हे दीन (धर्म) की शिक्षा दे^{१२} ।

१० मतलब यह है कि 'कियामत' के करीब लोगो में परस्पर सहानुभूति और प्रेम-भाव शेष नहीं रहेगा । लोग रिश्ते-नाते का आदर करना भी छोड़ देंगे । बड़ो का आदर-सम्मान न होगा । बेटी जिसे अपनी माता से गहरा लगाव होना चाहिए उस का व्यवहार माता के साथ ऐसा होगा जैसे साधारणतया स्वामिनी का अपनी दासी के साथ होता है । माता ने मानो बेटी नहीं बल्कि अपनी स्वामिनी को जन्म दिया है ।

११ अर्थात् धन-वैभव और उच्च पद उन लोगो को प्राप्त होगा जो ज्ञान, सम्यक्ता, सज्जनता आदि गुणों से कोरे होंगे । उन्हें बस इस की धुन होगी कि ऊँचे-ऊँचे भवन का निर्माण कराये । इस में वे एक-दूसरे से बाजी ले जाने की चेष्टा करेंगे । इसी को वे अपने लिए गर्व की बात समझने लगेंगे । एक दूसरी 'हदीस' में नबी सल्ल० ने कहा है कि हुक्मत, अधिकार और मामल अयोग्य लोगो को सौंपा जाने लगे तो 'कियामत' की प्रतीक्षा करो (बुखारी) अर्थात् उस समय ममझ लो कि अब 'कियामत' दूर नहीं है ।

१२ अर्थात् अल्लाह के विशेष 'फरिश्ता' हजरत जिवरील अ० थे जो मानव रूप में इस लिए आये थे ताकि धर्म के विषय में मुझ से प्रश्न करें और इस तरह तुम्हे अपने 'दीन' के विषय में सच्चा और उत्तम ज्ञान प्राप्त हो सके ।



मौलिक विचार और धारणाएँ

मौलिक धारणाएँ

मनुष्य अपने जीवन को कभी विचार और धारणाओं से रिक्त नहीं रख सकता। हर व्यक्ति का कोई-न-कोई दृष्टिकोण, मत और धारणा होती है जिसके अन्तर्गत वह जीवनयापन करता है। संसार में जिन प्रत्यक्ष वास्तविकताओं से हम परिचित हैं वास्तविकताएँ उन ही तक सीमित नहीं हैं। कितनी ही ऐसी चीजें हैं जिनको हम अनुभव शक्ति से मालूम नहीं कर सकते, हमें उनका ज्ञान बुद्धि और तर्क द्वारा होता है। *A. E. Mander* ने लिखा है कि दीख पड़ने वाली घटनाएँ वास्तविकता के केवल कुछ अंश हैं। अनुभव-शक्ति और इन्द्रियों के द्वारा हम जो-कुछ जानते हैं वे केवल आशिक और असम्बद्ध घटनाएँ होती हैं। यदि अलग से केवल उन ही को देखा जाये, तो वे निरर्थक होंगी। वे घटनाएँ प्रत्यक्षतः जिनका अनुभव होता है उनके साथ और बहुत सी ऐसी अप्रत्यक्ष घटनाओं को मिलाकर जब हम देखते हैं उस समय हम उनका अर्थ समझ पाते हैं। उसकी दृष्टि में जब हम कभी किसी निरीक्षण का उल्लेख करते हैं तो उससे अभिप्रेत ऐन्द्रिक निरीक्षण मात्र से कुछ अधिक होता है। उस से अभिप्रेत ऐन्द्रिक निरीक्षण और विभावन (*Recognition*) दोनों ही होते हैं, जिसमें कुछ व्याख्या (*Interpretation*) का अंश भी सम्मिलित होता है। मनुष्य ऐन्द्रिक निरीक्षण और उन प्रत्यक्ष वास्तविकताओं पर ही सन्तोष नहीं कर सकता जिन से वह प्रत्यक्षतः परिचित होता है। वह जो-कुछ देखता और महसूस करता है उसके अतिरिक्त भी उसका कोई-न-कोई विचार और कल्पना होती है और इसके लिए वह विवश होता है।

जीवन और वास्तविकताओं की सही व्याख्या से और मानवीय जीवन के सही विचार और दृष्टिकोण से परिचित कराने वाले अल्लाह के भेजे हुए वे बन्दे हैं जिन्हें 'नबी' और 'रसूल' कहा जाता है। 'नबी' वास्तव में अल्लाह के प्रतिनिधि होते हैं। अल्लाह उन्हें इसीलिए भेजता है कि वे मनुष्यों को सही और सत्यानुकूल विचारों की शिक्षा दे और लोगों को हर प्रकार की विचार सम्बन्धी और व्यावहारिक पथभ्रष्टता से बचाये। 'नबियों' ने मनुष्यों को जो विचार और दृष्टिकोण दिये वे किसी अनुमान और अटकल पर अवलम्बित नहीं हैं। 'नबियों' को उन धारणाओं

का प्रत्यक्षत अज्ञाह को ओर से ज्ञान दिया गया। जिन धारणाओं की शिक्षा 'नबियों' ने दी है उनमें से किसी एक का खंडन भी नवीन खोजों और अनुसंधानों से नहीं होता। और न इसकी आशा की जा सकती है कि भविष्य में कोई खोज और अनुसंधान उनके मिथ्या होने का प्रमाण बन सकेगा। नवीन खोजों से 'नबियों' की शिक्षा और उनके दृष्टिकोण का समर्थन और पुष्टि हो होती है। जीवन के सही दिशा-दर्शन के लिए आवश्यक है कि मनुष्य 'नबियों' पर और उनकी लाई हुई 'हिदायत' और मार्ग-दर्शन पर विश्वास करे। 'नबियों' पर 'ईमान' लाये बिना मनुष्य अधियारियों से छुटकारा नहीं पा सकता। जीवन के लिए केवल बुद्धि और अनुभव का मार्ग-दर्शन पर्याप्त नहीं। इस सिलसिले में शीन (Sheen) ने सही विश्लेषण किया है। वह लिखता है - "हमारी अनुभव शक्ति और इन्द्रियाँ उत्तम रीति से उस समय काम करती हैं जब बुद्धि द्वारा उनकी पूर्ति हो जाये इसी प्रकार हमारी बुद्धि भी उस समय ठीक काम कर सकती है जबकि 'ईमान' के द्वारा उसकी पूर्ति हो जाये। जो व्यक्ति अस्थायी रूप से (जैसे शराब पीने वाला शराब पीकर) बुद्धिविहीन हो जाता है, उसकी अनुभव शक्ति और इन्द्रियाँ वही होती हैं जो पहले थी, परन्तु उस समय वह कभी भी अपने कर्तव्यों का पालन उस तरह नहीं कर सकता जिस तरह वह बुद्धि और होश की हालत में कर सकता है। जो दशा बुद्धि के बिना इन्द्रियों की होती है ठीक वही दशा 'बुद्ध' के बिना बुद्धि की होती है।" आँख से काम लेने के लिए प्रकाश और दीप की आवश्यकता होती है। बुद्धि से भी सही काम उसी समय लिया जा सकता है जबकि उसके लिए 'बुद्ध' और 'नुबूत' का प्रकाश सचय कर दिया जाये।

सही धारणा और सत्य विचार मनुष्य को हर प्रकार की गुमराही और पथभ्रष्टता से बचाते हैं और उसके चरित्र और स्वभाव को महान् शक्ति प्रदान करते हैं। विचार और धारणाएँ ही वास्तव में किसी व्यक्तित्व या जाति की महानता को जामिन होती है। दृष्टिकोण और विचार यदि उच्च हैं, तो निश्चय ही वे किसी व्यक्ति या जाति को महानता प्रदान कर सकते हैं। इसके विपरीत विचार और अपनी धारणाओं की दृष्टि से यदि कोई जाति गिरी हुई या पथभ्रष्ट है तो कोई दूसरी चीज़ उसे प्रतिष्ठा का वह स्थान नहीं दिला सकती जो संसार में केवल उच्च विचार, शुद्ध धारणा और सही दृष्टिकोण के द्वारा प्राप्त होता है। यहाँ यह बात न भूलनी चाहिए कि सही-से-सही और उच्च-से-उच्च विचार और दृष्टिकोण भी व्यावहारिक क्षेत्र में निरर्थक सिद्ध होता

है यदि उसे ग्रहण करने वाला कोई ऐसा गरोह जमीन में मौजूद न हो जो उसके लिए अपना सब-कुछ निछावर कर सके और उसके प्रचार में हर वह कोशिश करे जो वह कर सकता हो। विचार और धारणाओं के द्वारा ही मनुष्य के आंतरिक भावों और अनुभूतियों में सतुलन पैदा होता है। चरित्र-निर्माण के लिए आवश्यक है कि मनुष्य के विचार और उसके मनोवेग और इच्छाओं में अनुरूपता पाई जाती हो। मनुष्य यदि अपने विचार और मनोवेग एवं इच्छाओं में एकता बनाये रखने में सफल नहीं सका, तो वह अपने सामयिक उद्देश्यों के हाथ एक खिलौना मात्र है, इससे अधिक उसकी कोई हैसियत नहीं। ऐसे व्यक्ति से किसी उच्च और सुदृढ़ चरित्र एवं स्वभाव की आशा नहीं की जा सकती। और न ऐसे व्यक्तियों से यह आशा की जा सकती है कि उनके द्वारा किसी सुदृढ़ सभ्यता को विकास मिल सकेगा। जार्ज फूट मूर (*George Foot Moor*) के शब्दों में सभ्यता केवल इस रूप में विकास पा सकती है जबकि मनुष्यों की अधिक-से-अधिक संख्या किसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सचेष्ट हो। इस प्रकार का सगठन केवल विचारों और कल्पनाओं की एकता (*Unity of bare ideas*) के आधार पर सम्भव नहीं होता। यह सगठन मनोवेगों और अनुभूतियों की एकता से सम्भव होता है। जिन से कल्पनाओं एवं विचारों को प्रेरणा मिलती है और वे (केवल विचार और कल्पना न रह कर) आस्था और उद्देश्य बन जाते हैं।

‘इस्लाम’ ने विचार और धारणा को मानव-जीवन में, वही स्थान दिया है जो वास्तव में उनका स्थान होता है। विचार और धारणा के महत्व के कारण ही ‘इस्लाम’ ने ज्ञान व विश्वास और ‘ईमान’ को धार्मिक व्यवस्था में मौलिक स्थान दिया है। जो लोग वास्तविकता से अपरिचित हैं और जीवन के अन्तिम परिणाम से निश्चिन्त-होकर जीवन-यापन करते हैं उनके जीवन का उल्लेख करते हुए कुरआन में एक जगह कहा गया है। “ऐसे व्यक्ति से किनारा खींच लो जो हमारे ‘जिक्र’ से मुँह मोड़े और सासारिक जीवन के अतिरिक्त कुछ न चाहे। उनके ज्ञान की पहुँच यही तक है। निस्सन्देह तुम्हारा ‘रख’ उस व्यक्ति को भली-भाँति जानता है जो उसके मार्ग से भटक गया, और वह उस व्यक्ति को भी भली-भाँति जानता है जिसने सीधी राह अपनाई” (अन-नज्म २६-३०)। कुरआन के इस बयान से यह बात भली-भाँति स्पष्ट हो जाती है, कि जीवन में ज्ञान, शुद्ध विचार और सही दृष्टिकोण का कितना महत्व है। सही विचार मनुष्य को सही मार्ग की ओर ले जाता है, अशुद्ध विचार और असत्य भावनाएँ मनुष्य को विनाश की ओर ले जाती हैं

ज्ञान एवं विवेक

मानव-जीवन में ज्ञान का बड़ा महत्व है। ज्ञान ही वास्तव में मनुष्य के चरित्र और आचार का मौलिक आधार है। मनुष्य की सफलता वास्तव में इसी बात पर निर्भर है कि उसे वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त हो, जिस के अनुसार वह अपने जीवन का निर्माण कर सके। यदि उसे इस बात का ज्ञान ही न हो कि उसे यह जीवन किस ने प्रदान किया है और उस के जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है, तो वह कभी भी जीवन के सीधे और सच्चे मार्ग पर नहीं चल सकता और न अपने सृष्टिकर्ता की इच्छा को कभी पूरी कर सकता है। उस की मिसाल बिल्कुल ऐसी होगी जैसे कोई गहन अन्धकार में भटक रहा हो और उसे इस की बिल्कुल खबर न हो कि वह कहाँ है और उसे किस ओर जाना चाहिए। एक 'ईमान' वाले व्यक्ति और 'काफिर' (अल्लाह के अकृतज्ञ) में वास्तविक अन्तर ज्ञान और कर्म ही का है। इस अन्तर के कारण उन के जीवन और उन के परिणाम में महान् अन्तर पाया जाता है। 'ईमान' वालों को ससार में भी उत्तम जीवन (हयात तैयबा) प्राप्त होता है और 'आखिरत' में वे अल्लाह की कृपा एवं दयालुता और उस की 'जन्नत' के अधिकारी होंगे। 'काफिर' केवल अल्लाह के प्रकोप और 'जहन्नम' की यातना का भागी होगा। कुरआन और 'हदीस' में ज्ञान एवं बुद्धिमत्ता को मौलिक महत्व दिया गया है। कुरआन में कहा गया है "कह दो क्या बराबर होते हैं वे लोग जो जानते हैं और वे लोग जो नहीं जानते?"

—अज्जुमर ६

"अल्लाह उन लोगों के दर्जे ऊँचे कर देगा जो तुम में से 'ईमान' ले आये, और जिन्हें ज्ञान प्रदान किया गया है।" —अल-मुजादला ११

"अल्लाह से तो उस के बन्दों में बस जान वाले ही डरते हैं।"

—फातिर २८

"और कहो 'रब' ! मुझे ज्ञान और बढ़ा दे।"—ता० हा० ११४

"(अल्लाह) जिसे चाहता है 'हिकमत' प्रदान करता है, और जिसे 'हिकमत' (तत्त्वदर्शिता) दी गई, उसे बड़ी दौलत दी गई।"

—अल-बकरा २६६

‘काफ़िरो’ और ‘मुशिरको’ (बहुदेव वादियो) को विशेष रूप से इस लिए अपराधी कहा गया है कि वे ज्ञान का अनुसरण नहीं करते और केवल अटकल और अनुमान से काम लेते हैं। कहा गया “वे तो बस गुमान पर चलते हैं, और गुमान हक बात के सामने कुछ काम नहीं देता।”
—अन-नज्म . २८

“ये लोग तो बस गुमान पर और जो जी चाहता है उस पर चल रहे हैं।”
—अन-नज्म २३

“और उस व्यक्ति से बढ कर भटका हुआ कौन होगा जो अल्लाह के मार्ग-दर्शन के बिना अपनी (तुच्छ) इच्छा पर चले।”
—अल-कसस . ५०

ऐसे लोग वास्तव में बुद्धि और सूझ-बूझ से वंचित होते हैं।

“क्या तुम समझते हो कि इन में अधिकतर सुनते या समझते हैं ? यह तो बस चौपायो की तरह हैं—बल्कि ये और बढ कर राह से भटके हुये हैं।”
—अल-फुरकान ४४

‘दीन’ में समझ और अल्लाह की उतारी हुई ‘किताब’ में सूझ-बूझ प्राप्त करना हमारा कर्तव्य है। इस के बिना हमारी चेष्टाये अव्यवस्थित और हमारा जीवन अस्त-व्यस्त और अनियमित ही रहेगा। हमारे विश्वास और विचार को खोखला और हमारी ‘इबादतो’ और उपासनाओं को प्राणहीन और निस्सार होने से जो चीज बचा सकती है वह यही है कि आदमी ‘दीन’ में समझ हासिल करे और किताब व ‘सुन्नत’ में सोच-विचार से काम ले। इसी लिए नबी सल्ल० ने मुसलमानों को इस की बार-बार ताकीद की है कि वे ‘दीन’ में सूझ-बूझ हासिल करे और उस के आदेशों को समझे।



عَنْ مُعَاوِيَةَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: مَنْ بَرَّادِ اللَّهِ بِهِ خَيْرًا يُعْقِبُهُ فِي الدِّينِ وَإِنَّمَا أَنَا قَاسِمٌ وَاللَّهُ يُعْطِي وَلَنْ تَزَالَ هَذِهِ الْأُمَّةُ قَائِمَةً عَلَى أَمْرِ اللَّهِ، لَا يَضُرُّهُمْ مَنْ خَالَفَهُمْ حَتَّى يَأْتِيَ أَمْرُ اللَّهِ. — بحاری، مسلم، اس ماحہ

१ हजरत मुआविया रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसके लिए अल्लाह भलाई का इरादा करता है उसे 'दीन' में समझ प्रदान करता है'। मैं तो बस वितरण करने वाला हूँ और अल्लाह देता है'। यह समुदाय सदा अल्लाह के हुक्म पर कायम रहेगा जो कोई उनका (इस समुदाय वालों का) विरोधी होगा उन्हें हानि न पहुँचा सकेगा यहाँ तक कि 'कियामत' आ जायेगी'।

—बुखारी, मुस्लिम, इब्न माजा

“दीन में समझ” से अभिप्रेत वह सूझ-बूझ और विवेक है जिस के कारण मनुष्य 'दीन' की वास्तविकता और उस के रहस्यों को जान जाता है। वह धर्म का मर्मज्ञ हो जाता है। वास्तविक रूप से उसे 'दीन' का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। धार्मिक आदेशों के आशय और अभिप्राय को वह पा लेता है फिर वह कोई अन्धा अनुवर्ती नहीं रहता, बल्कि पूरी सूझ-बूझ और विवेक के साथ वह जीवन में ईश्वरीय आदेशों का पालन करता है। उस पर यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि अल्लाह की वन्दगी और उस के आदेशों के पालन ही में मानव की सफलता और उस का कल्याण है। अल्लाह की दासता और उपासना के बिना मनुष्य जीवन के वास्तविक अभिप्राय से अनभिज्ञ ही रहता है। यह 'हदीस' बताती है कि वह व्यक्ति बड़ा ही भाग्यवान है जिसे अल्लाह ने 'दीन' में समझ प्रदान की हो। इसलिए कि यही चीज समस्त भलाईयों और कल्याण का स्रोत एवं उद्गम है।

२. अर्थात् मेरा काम तो वितरण करना है। जो सन्देश या ज्ञान की बातें मैं लोगों तक पहुँचा रहा हूँ वे मेरी अपनी घड़ी हुई कदापि नहीं है, बल्कि वे अल्लाह ही की ओर से हैं।

३. इस में इस बात की भविष्यवाणी है कि मुस्लिम समुदाय 'कियामत' तक शेष

२ हजरत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : ईर्ष्या केवल दो आदमियों के सिलसिले में की जा सकती है एक वह व्यक्ति जिसे अल्लाह ने धन दिया फिर उसको सत्य (हक) मार्ग में लुटाने का दैवयोग प्रदान किया, दूसरा वह व्यक्ति जिसे अल्लाह ने 'हिकमत' (तत्त्वदर्शिता, निर्णय शक्ति) प्रदान की तो वह उसके अनुसार निर्णय करता है और (लोगों को) उसकी शिक्षा देता है* ।

—बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति ज्ञान की खोज में निकले वह अल्लाह के मार्ग में है जब तक कि वापस न आ जाये* ।

—तिरमिजी

४ हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : यदि किसी व्यक्ति को इस दशा में मृत्यु आ जाये कि वह ज्ञान प्राप्त कर रहा हो, तो वह अल्लाह से इस दशा में मिलेगा कि उसके ओर 'नबियो' के बीच केवल 'नुबूवत' के दर्जे का अन्तर रहेगा ।

—अत-तवरानी . औसत

५ हजरत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना जो व्यक्ति ज्ञान की खोज में कोई मार्ग अपनायेगा अल्लाह उसके लिए 'जन्नत' का मार्ग सुगम कर देगा* । और 'फिरिश्ते' ज्ञानार्थी की प्रसन्नता के लिए अपनी भुजाये

रहेगा, कोई भी शक्ति उस का उन्मूलन न कर सकेगी । 'इस्लाम' चिरस्थायी वास्तविकता है, इसे मिटाया नहीं जा सकता । एक गरोह सदा उस का समर्थक रहेगा ।

४ अर्थात् ये दो प्रकार के मनुष्य ऐसे हैं जो बड़े भाग्यशाली हैं उन की नीति का अनुकरण सफलता की कुंजी है । किसी को अल्लाह ने धन दिया है और उसे वह अल्लाह के मार्ग और शुभ कर्मों में व्यय करता है, तो वह सफल है । इसी प्रकार वह व्यक्ति भी सफल है जिसे अल्लाह ने ज्ञान और विवेक प्रदान किया है और वह इसे उचित रूप से प्रयोग में लाता है । मामलो का सही फैसला करता और लोगो को ज्ञान (*Wisdom*) की शिक्षा देता है ।

५ ज्ञान की खोज में निकलने वाला अल्लाह के मार्ग में होता है । वह उस मार्ग में होता है जिस पर चल कर वह अपने 'रब' को पाता और उस की प्रसन्नता प्राप्त करता है । सत्य-ज्ञान का जिज्ञासु वास्तव में अल्लाह के मार्ग का 'मुजाहिद' (धर्मयोद्धा) होता है ।

६ ज्ञान का मार्ग वास्तव में मनुष्य को 'जन्नत' में पहुँचाने वाला है । वास्तविकता

बिछाते हैं। और ज्ञानी के लिए आकाश और धरती के रहने वाले यहाँ तक कि जल की मछलियाँ भी क्षमा की प्रार्थना करती हैं'। और ज्ञानी की श्रेष्ठता उपासक की अपेक्षा ऐसी है जैसे चन्द्रमा की श्रेष्ठता शेष समस्त तारागण के मुकाबले में है'। और निस्सन्देह ज्ञानी 'नवियो' के वारिस (उत्तराधिकारी) हैं नबी मीरास में न दीनार छोड़ते हैं और न दिरहम, वे तो विरासत में बस ज्ञान छोड़ जाते हैं तो जिस किसी ने उसे

का ज्ञान प्राप्त करने के बाद ही मनुष्य पथ-भ्रष्टता में बच सकता है और उस मार्ग पर चल सकता है जिस पर चल कर मनुष्य 'जन्नत' में जाने के योग्य होता है। यदि वह ज्ञान का जिज्ञासु है, तो अल्लाह उस के लिए मत्स्यमार्ग पर चलना सरल कर देता है।

७ यह 'हदीस' बताती है कि सत्यज्ञान के उच्छुक का आदर 'फिग्मि' तक करते हैं। आकाश और धरती के जीवधारी उन के लिए दुआयें करते हैं कि यदि उन से कोई भूल-चूक और गुनाह हुआ हो, तो उसे क्षमा कर दे और उन के ऐवों को छिपा ले। ज्ञान और जानियो ही के कारण समार में भनाई और मंगल की अभिव्यक्ति होती है। अल्लाह ससार वालों पर दया करता है। उन्हीं की बरकत से वर्षा होनी है और प्रत्येक जीवधारी अपना आहार पाता है। विलो में च्यूँटियाँ और समुद्र के तल में मछलियाँ उन्हीं की बरकत से जीवन का आनन्द लेती हैं मानो वे अपनी स्थिति की जिह्वा से उन के लिए दुआ कर रही होती है कि उन पर अल्लाह की दया हो ताकि वे उन की बरकत से ज्यादा-से-ज्यादा लाभान्वित हो सकें। यदि ससार से ज्ञान और ज्ञान वाले उठ जायें तो फिर 'कियामत' ही आ जायेगी। फिर कोई जीवधारी जीवित नहीं रह सकता।

८ इस में सन्देह नहीं कि अल्लाह की 'इबादत' और उस का स्मरण मानव-जीवन की वास्तविक सम्पत्ति है परन्तु इस बहुमूल्य सम्पत्ति की प्राप्ति ज्ञान और समझ-बूझ के बिना सम्भव नहीं। और लोक-सुधार का कार्य तो इस के बिना हो ही नहीं सकता कि लोगो को जग-स्रष्टा और उस के मार्ग-दर्शन से परिचित किया जाये। स्वयं नबी सल्ल० जो ज्ञान एवं मार्ग-दर्शन ले कर आये उस की शिक्षा और उस के प्रचार में अन्त तक लगे रहे। आप के प्रयास एवं प्रयत्न के परिणामस्वरूप वह क्रान्ति आई जिस ने लोगो के सोच-विचार और व्यवहार को बदल कर रख दिया। भटके हुये मनुष्यों को सत्य-मार्ग मिला और गुमराही, मार्ग-भ्रष्टता और 'कुफ्र' व 'शिरक' (अधर्म और अनेकेश्वरवाद) में अस्त लोगो को 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की दौलत मिली।

प्राप्त किया उसने अत्यधिक हिस्सा प्राप्त किया^६ ।

—अबू दाऊद, तिरमिजी, इब्न माजा

६ हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस मार्ग-दर्शन और ज्ञान के साथ अल्लाह ने मुझे भेजा है उसकी मिसाल ऐसी है जैसे वर्षा जो धरती पर हुई, तो उस (धरती) का जो भाग अच्छा था उसने जल को शोषित किया और हरियाली और हरी-भरी घास उगाई और उस (धरती) का जो भाग कठोर था उसने जल को रोक लिया, तो अल्लाह ने उस से लोगो को फायदा पहुँचाया । लोगो ने उस से वह जल पिया और जानवरो और खेतो को सिंचित किया और खेती-बारी की । और वह वर्षा भूमि के एक ऐसे भाग पर भी हुई जो चटियल है, वह न जल को रोक सकता है और न हरियाली उगा सकता है । यह मिसाल उन लोगो की है जिन्होंने सर्वोच्च ईश्वर के (उतारे हुए) 'दीन' में समझ प्राप्त की और उस चीज से फायदा उठाया जिसके साथ अल्लाह ने मुझे भेजा है, तो उन्होंने सीखा और सिखाया । और यह उन लोगो को मिसाल है जिन्होंने न तो इस तरफ सिर उठाकर देखा और न अल्लाह के उस मार्ग-दर्शन को अपनाया जिसके साथ मुझे भेजा गया है^{१०} ।

—बुखारी, मुस्लिम

६ 'नबी' अपनी जाति वालो के लिए पिता के समान होते हैं बल्कि इस से भी बढ़ कर उन का दर्जा होता है । वे अपने पीछे तरका में धन-दौलत नहीं छोड़ते । उन का तरका तो वह ज्ञान है जिसे लेकर वे आते हैं । वे लोग बड़े ही भाग्य-शाली हैं जो वास्तविक रूप में 'नवियो' के वारिस बने ।

१० इस 'हदीस' में नबी सल्ल० ने ज्ञान एव मार्ग-दर्शन (*Divine Guidance*) को वर्षा की उपमा दी है । जब वर्षा होती है, तो अच्छी भूमि जल से सिंचित हो कर हरी-भरी हो जाती है । दूसरी प्रकार की भूमि वह है जिस में हरियाली तो नहीं होती परन्तु उस में जल एकत्र हो जाता है जिससे लोग फायदा उठाते हैं । तीसरी प्रकार की भूमि वह है जो बिल्कुल चटियल मैदान होती है न तो वह जल को शोषित कर सकती है कि वहाँ हरियाली हो सके और खेती-बाड़ी की जा सके और न उस में पानी एकत्र हो सकता है । ऐसी भूमि न वर्षा से स्वयं फायदा उठाती है और न उस के द्वारा दूसरी भूमि को कोई फायदा पहुँच सकता है । ठीक इसी वर्षा की तरह अल्लाह की ओर से ज्ञान और मार्ग-दर्शन का अवतरण होता है । उस का 'रसूल' लोगो को ज्ञान और मार्ग-दर्शन की ओर बुलाता है और उन्हें किताब व 'हिकमत' की शिक्षा देता है । जो लोग बुद्धिमान, विवेकशील और सूझ-बूझ वाले हैं वे उस से

७ हजरत कअब विन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने ज्ञान इस ध्येय से प्राप्त किया कि वह उस से ज्ञानी जन पर गर्व करे या मूर्ख और नीच प्रकृति के लोगो से झगड़े या लोगो को अपनी ओर खींचे, अल्लाह उसको ('जहन्नम' की) आग में डालेगा^{११} । —तिरमिजी, इब्न माजा इब्न उमर

८ हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने उस ज्ञान को जिससे अल्लाह की प्रसन्नता चाही जाती है, केवल इस ध्येय से सीखा कि वह उसमे सासारिक उपभोग्य वस्तु प्राप्त करे, उसे 'कियामत' के दिन 'जन्नत' की सुगन्ध प्राप्त न होगी ।

—अहमद, अबूदाऊद, इब्न माजा

९. हजरत आमस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ज्ञान की आपदा भूलना है और उसे विनष्ट करना यह है कि तुम

लाभान्वित होते हैं । उन का जीवन ज्ञान व मार्ग-दर्शन रूपी वर्षा से भनी-भाँति सिंचित हो जाता है । उन के जीवन-उपवन में वसन्त आ जाता है । उन के जीवन में ज्ञान और कर्म के ऐसे पुष्प खिलते हैं जिस से मानवता का सम्पूर्ण वातावरण सुरक्षित हो जाता है । कुछ लोग ऐसे होते हैं जो स्वयं ज्ञान और मार्ग-दर्शन से पूरा फायदा नहीं उठा पाते परन्तु उन के द्वारा दूसरो को फायदा पहुँचता है । वे धार्मिक आदेशो और ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं और दूसरो तक पहुँचाते हैं । उन की मिसाल उस सरोवर की है जिस में पानी भरा रहता है जिस से भूमि की सिंचाई कर के खेतियाँ उगाई जाती हैं । जिस के पानी को लोग स्वयं पीते और अपने जानवरों को भी पिलाते हैं । तीसरे प्रकार के लोग वे हैं जो बिल्कुल चटियल मैदान होते हैं । ज्ञान की अमृत वर्षा से न उन में सजीवता आती है और न वे ज्ञान को सुरक्षित रखते हैं कि दूसरे लोग उस से फायदा उठा सकें । उन के जीवन में जैसे पहले बिगाड़ होता है वैसे ही ज्ञान अवतरित होने के पश्चात् भी बिगाड़ शेष रहता है । वे ज्ञान और ईश्वरीय-निर्देश की ओर ध्यान ही नहीं देते ।

११ अर्थ यह है कि ज्ञानार्जन किसी घटिया और तुच्छ उद्देश्य के लिए नहीं होना चाहिए । दूसरे कार्यों की भाँति ज्ञान की प्राप्ति में भी सदैव ईश्वर की प्रसन्नता ही इच्छित होनी चाहिए । किसी ने ज्ञान यदि ईश-प्रसन्नता के लिए नहीं बल्कि लोक-प्रसिद्धि और लौकिक लाभ ही की दृष्टि से प्राप्त किया तो अल्लाह के यहाँ उस के लिए कोई प्रतिदान नहीं है । वहाँ वह 'जन्नत' की नैमतो से वंचित रहेगा वहाँ उस के हिस्से में 'जहन्नम' की आग के अतिरिक्त और कुछ न आ सकेगा ।

उसे ऐसे व्यक्ति से बयान करो जो उसके योग्य नहीं^{१२} । —दारमी

१० हज़रत अबूजर रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : बन्दे ने जब संसार में परहेजगारी और निस्पृहता अपनाई अल्लाह ने उस के दिल में 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) पैदा की, और 'हिकमत' उस की ज़बान पर जारी की । संसार के अवगुण और उस के रोग और उन का उपचार उसे सुझा दिया और फिर उसे संसार से भला-चंगा (सकुशल) सलामती के घर की ओर निकाल ले गया ।^{१३}

१२ ज्ञानार्जन की भाँति ज्ञान की रक्षा भी आवश्यक है । ज्ञान प्राप्त कर के उसे विस्मृत कर देना बड़े दुर्भाग्य की बात है । ज्ञान और तत्वदर्शिता (*Wisdom*) किसी ऐसे व्यक्ति से बयान करना जो उसके योग्य न हो एक प्रकार का अन्याय है । एक तरफ हमें हर व्यक्ति से उस की बुद्धि और उसके मानसिक स्तर के अनुसार बात करनी चाहिए । दूसरी तरफ हमें योग्य लोगों की खोज होनी चाहिए और उन तक ज्ञान पहुँचाना अपना कर्तव्य समझना चाहिए । यदि हम ऐसा नहीं करते तो न केवल यह कि हम हकदारों का हक मारते हैं बल्कि स्वयं ज्ञान को भी अत्यन्त हानि पहुँचाते हैं और उसे नष्ट करते हैं । ज्ञान जब योग्य लोगों तक पहुँचेगा तो वे उस से लाभान्वित होंगे और उन के द्वारा ज्ञान की अधिक-से-अधिक उन्नति और प्रचार भी हो सकेगा । वे अपने चिन्तन और विचार-शक्ति द्वारा ज्ञान-राशि में श्री वृद्धि भी कर सकते हैं चाहे वह वृद्धि चिन्तन और 'इजातिहाद' के रूप में हो या साहित्य-भण्डार के रूप में ।

१३ मनुष्य मृत्यु-लोक का पुजारी न बने, लोभ और लोलुपता से दूर हो, प्रत्येक दशा में 'आखिरत' को अपने सामने रखो यही वास्तविक 'जुहद' (निस्पृहता) है । 'आखिरत' के प्रतिदान के अतिरिक्त सासारिक जीवन में भी अल्लाह बन्दे को उसके 'जुहद' (विस्पृहता) के कारण तत्काल पुरस्कार प्रदान करता है जिसे कुरआन में "खैर कसीर" (बड़ी दौलत) कहा गया है (दे० अल-वकरा • २६६) अल्लाह उस को ज्ञान और 'हिकमत' (*Wisdom*) प्रदान करता है । इस से बढ़ कर पुरस्कार दूसरा नहीं हो सकता । यह सब से उत्तम पुरस्कार और प्रतिदान है अपनी भावात्मकता और रसात्मकता की दृष्टि से भी और इस दृष्टि से कि मनुष्य इस के द्वारा इस उपद्रव और फितनो (*Persecution*) से भरी दुनिया में अपने को गुमराही और विनाश से बचाने में सफल हो सकता है । जिसे ज्ञान और 'हिकमत' की दौलत मिल गई उसे वह विवेक और अन्त दृष्टि मिल गई जिसके द्वारा वह सत्य-असत्य, उचित-अनुचित और बुरे-भले में अन्तर कर सकता है और जीवन की पेचीदा राहों में अपने आपको

और हर चीज का एक आधार होता है और इस 'दीन' (इस्लाम) का आधार समझ है^{१०} । —दार कुतनी, वैहकी

१४. हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('दीन' में) समझ श्रेष्ठतम 'इबादत' (उपासना) है^{११} और श्रेष्ठतम 'दीन' (धर्म) परहेजगारी (सयम) है^{१२} । —तवरानी

१५. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने मुझे अपने सीने से लगाया और कहा "हे अल्लाह ! इस को 'हिकमत' (तत्व-दर्शिता) प्रदान कर^{१३} ।" एक 'रिवायत' में ये शब्द हैं : इस को किताब

कर ले और सासारिक प्रलोभनों के अवसर पर उदासीनता दिखाये किन्तु वह अपने वातावरण को बदलने में सफल नहीं हो सकता । इस्लाम को एक जीवन-प्रणाली के रूप में प्रचलित करने और 'शैतान' के उग्रवो को दबाने के लिए 'दीन' की समझ अभीष्ट है । यही कारण है कि शैतान उन लोगों से अधिक भयभीत रहता है जो 'दीन' के मर्मज्ञ होते हैं, जिन्हें 'दीन' की समझ पूर्ण रूप से प्राप्त होती है ।

१७. इस से मालूम हुआ कि इस्लाम आदेशों के अन्ध-अनुसरण का नाम कदापि नहीं है बल्कि इस 'दीन' की नींव ही समझ और तत्वदर्शिता पर रखी गई है । अतः 'इस्लाम' का इन्कार वह व्यक्ति नहीं कर सकता जो समझ-बूझ से काम लेता और वास्तविकताओं एवं जीवन-तथ्यों को मन और मस्तिष्क के पूर्ण प्रकाश में स्वीकार करता और हर प्रकार के पक्षपात से अलग हो कर केवल सत्य की इच्छा करता है ।

१८. 'समझ' को 'इबादत' में सम्मिलित किया गया बल्कि उसे श्रेष्ठतम 'इबादत' कहा गया । 'समझ' के बिना मनुष्य धर्म-आदेशों और 'इबादतों' के वास्तविक भाव, तत्व और अभिप्राय से अनभिज्ञ ही रहता है । इसीलिए 'समझ' (तफक्कुह) को मौलिक महत्व दिया गया है । एक 'हदीस' में है - "लोगों में सब से श्रेष्ठ वे हैं जो कर्म की दृष्टि से श्रेष्ठ हो, शर्त यह है कि वे 'दीन' में समझ रखते हो ।"

१९. यहाँ सयम या परहेजगारी के लिए 'वज्र' शब्द प्रयुक्त हुआ है । 'वज्र' वास्तव में अल्लाह की अवज्ञा और गुनाहों से दूर रहने और उन कामों से बचने को कहते हैं जिन के अनुचित और अवैध होने का सन्देह होता है । उच्चतम सयम, परहेजगारी और निस्पृहता (जुहद) का नाम 'वज्र' है ।

२०. तिरमिजी की एक 'रिवायत' है कि इब्न अब्बास रजि० ने कहा - "अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मेरे लिए दो बार दुआ की कि अल्लाह मुझे "हिकमत" (तत्वदर्शिता और ज्ञान) प्रदान करे ।"

(कुरआन) का ज्ञान दे^{२१} ।

—बुखारी

१६ हजरत अबू सईद अनसारी रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'नमाज' (में खड़े होने) के समय हमारे कन्धों पर हाथ फेरते (ताकि हम पक्ति ठीक कर ले) और कहते बराबर हो जाओ और विभेद और अन्तर पैदा न करो, नहीं तो तुम्हारे दिलो में फूट पड़ जायेगी । तुम में जो बुद्धिमान और समझ वाले हैं वे मुझ से निकट रहे फिर जो उनके समीप है, फिर जो उनके समीप हैं^{२२} । —मुस्लिम

१७ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक व्यक्ति 'नमाज' भी पढता है, 'रोज़ा' भी रखता है, 'जकात' भी देता है, 'हज्ज' और 'उमरा' भी करता है—यहाँ तक कि आपने समस्त शुभ कर्मों की चर्चा की—परन्तु 'क्रियाभत' के दिन उसे उसकी बुद्धि के अनुसार प्रतिदान दिया जायेगा^{२३} । —बैहकी

१८ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा श्रेष्ठ 'सदका' (दान) यह है कि एक 'मुस्लिम' व्यक्ति ज्ञान सीख कर अपने दूसरे मुस्लिम भाई को उसकी शिक्षा दे^{२४} । —इब्न माज्जा

२१ कुरआन का ज्ञान स्वयं सर्वथा 'हिकमत' (*Wisdom*) है ।

२२. इस 'हदीस' से बुद्धिमान और विवेकशील व्यक्तियों की श्रेष्ठता का भली-भाँति अनुमान किया जा सकता है कि उन्हें 'नमाज' में नबी सल्ल० के निकट स्थान मिल रहा है । नमाज की सफो (पक्तियों) में बेढगापन और उन का तितर-बितर होना दिलो में फूट पडने का कारण बन सकता है । बाह्य-प्रभाव अन्तर पर भी पडता है इसी लिए सफो (पक्ति) को ठीक रखने की ताकीद की गई ।

२३. यह 'हदीस' बताती है कि बुद्धि और समझ को 'दीन' में मौलिक महत्व प्राप्त है । मनुष्य जितनी समझ, बुद्धि और विवेक के साथ अल्लाह की 'इबादत' करेगा और शुभ कार्यों में लगा रहेगा उतना ही वह 'इबादत' और सत्कर्म के वास्तविक उद्देश्य से परिचित हो सकता है और ईश्वरीय आदेशों के अभिप्राय को पूरा कर सकेगा और उतना ही उसे अल्लाह का सामीप्य और आत्मिक आनन्द प्राप्त होगा । कुरआन मजीद में भी बुद्धि और विवेक से काम लेने वालों की जगह-जगह प्रशंसा की गई है । एक जगह कहा गया है : (कृपाशील ईश्वर के अभीष्ट बन्दे तो वे हैं कि) जब उन्हें उन के 'रब' (पालन कर्ता स्वामी) की 'आयतो' के द्वारा चेताया जाता है, तो उन (आयतों) पर वे अन्धे और बहरे बन कर नहीं गिरते (बल्कि बुद्धि से काम लेते और उन से वास्तविक रूप में प्रभावित होते हैं) ।

२४. अर्थात् 'सदका' और दान केवल माल ही में नहीं होता बल्कि ज्ञान और

१९. हजरत अनस बिन मालिक रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा क्या तुम जानते हो कि दानशीलता में कौन सब से बढ़कर है ? लोगों ने कहा अल्लाह और उसके रसूल ज्यादा जानते हैं । आपने कहा दानशीलता में सब से बढ़ कर अल्लाह है, फिर आदम के बेटो (मानव-जाति) में सबसे अधिक दानशील मैं हूँ और मेरे बाद दानशीलता में सब से बढ़कर वह है जिसने ज्ञान प्राप्त किया और उसको फैलाया^{१९} । यह व्यक्ति 'कियामत' के दिन एक नायक की भाँति आयेगा । या आपने यह कहा कि यह एक समुदाय के रूप में आयेगा^{२०} । —वैहकी

२०. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . स्वभाव सम्बन्धी दो बातें ऐसी हैं जो 'मुनाफिक' (द्व्यवादी, कपटाचारी) में नहीं एकत्र हो सकती, एक सुशीलता, दूसरे 'दीन' की समझ (सूझ-बूझ)^{२१} । —तिरमिजी

२१. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है; वे कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना ससार और ससार की प्रत्येक वस्तु तिरस्कृत है सिवाय अल्लाह के स्मरण और उस चीज के जो उसके निकट हो और सिवाय ज्ञानी और ज्ञानार्थी के^{२२} ।

—तिरमिजी, इब्न माजा, वैहकी

'हिकमत' (Wisdom) में भी व्यय और दान होता है । श्रेष्ठतम दान ज्ञान और 'हिकमत' ही का है कि स्वयं भी ज्ञानार्जन करे और दूसरों को भी उस की शिक्षा दे ताकि वे भी उस से लाभान्वित हो सकें ।

२५. ज्ञानार्जन के पश्चात् उस के प्रचार में प्रयत्नशील होना यदि दानशीलता है, तो उस के प्रसार एवं प्रचार की ओर से उदासीन होना निःकृष्टतम प्रकार की कृपणता होगी । कृपणता ऐसा दुर्गुण है जिस में कोई भी अपने चरित्र को दूषित करना न चाहेगा ।

२६. अर्थात् 'आखिरत' में उस का पद ऊँचा होगा । उसे नायकता की प्रतिष्ठा और गौरव प्राप्त होगा ।

२७. 'निफाक' (कपटाचार) ऐसा रोग है कि जिसे लग जाता है वह इन दो चीजों से वंचित हो जाता है । 'मुनाफिक' (कपट-नीति अपनाने वाला) कभी सुशील एवं चरित्रवान नहीं हो सकता और न उसे 'दीन' की समझ प्राप्त हो सकती है । अल्लाह 'मुनाफिकों' का पथ-प्रदर्शन नहीं करता । 'मुनाफिक' में 'हदीस' में वर्णित ये दोनों गुण कभी एकत्र नहीं हो सकते ।

२८. अर्थात् ससार में वास्तविक रूप से वही चीजें अपना मूल्य रखती हैं जिन का अल्लाह के स्मरण और ज्ञान से सम्बन्ध हो । जो चीजें इस से रहित हैं वे वास्तव में भगल एवं कल्याण से रहित हैं, अतः उन्हें तिरस्कृत ही कहा

२२. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० ने कहा : जिस व्यक्ति से ज्ञान की कोई बात पूछी जाये और वह उस को छिपा ले तो 'कियामत' के दिन उस (मुँह से) आग की लगाम दी जायेगी । —अबू दाऊद, तिरमिज़ी

२३. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह उस बन्दे को प्रफुल्लित रखे जिसने मेरी बात सुनी, उसे याद रक्खा और उसे (ठीक रूप में लोगों तक) पहुँचाया क्योंकि प्रायः ऐसा होता है कि समझ और विवेक की बात का वाहक स्वयं समझदार नहीं होता और ऐसा भी होता है कि समझ और विवेक की बात का वाहक ऐसे व्यक्ति तक बात पहुँचा देता है जो उससे कहीं ज्यादा विवेकशील होता है २५ । —तिरमिज़ी, अबूदाऊद

२४. हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्न रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी ओर से पहुँचाओ यद्यपि एक ही 'आयत' हो और 'बनी इसराईल' से (सुनी हुई 'रिवायत') बयान करो इस में कोई हर्ज नहीं । और जो व्यक्ति जान बूझ कर झूठी बात का सम्बन्ध मुझ से जोड़े उसे अपना ठिकाना ('जहन्नम') की आग में बनाना चाहिए । —बुखारी

२५. हज़रत ज़ियाद बिन लबीद रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने किसी (भयावह) चीज़ की चर्चा की और फिर कहा कि यह (आपदा और उपद्रव) ज्ञान के चले जाने के समय होगा । मैंने कहा : हे अल्लाह के 'रसूल' ! ज्ञान कसे चला जायेगा जबकि हम कुरआन पढ़ते हैं और उसे अपनी औलाद को पढ़ाते हैं और हमारी औलाद अपनी औलाद को पढ़ायेगी ? आपने कहा : तुम्हारी माँ तुम्हें खोये ज़ियाद ! मैं तो तुम्हें मदीना का अत्यन्त समझदार एवं विवेकशील व्यक्ति समझता था क्या ये 'यहूदी' और नसारा (ईसाई) 'तौरात' और, इज्जीन' नहीं पढ़ते

जायेगा । अल्लाह के स्मरण और उसके प्रति आत्म-निवेदन और आज्ञा-पालन की भावना लौकिक कार्य-व्यापार को भी इतना गावन बना देती है कि हम उसे अल्लाह के स्मरण और अल्लाह के 'ज़िक्र' से भिन्न नहीं कह सकते । जो कार्य भी अल्लाह की प्रसन्नता के लिए नियमित रूप से किया जाये वह 'ज़िक्र' अर्थात् ईश-स्मरण ही है ।

२६. इस 'हदीस' से नबी सल्ल० के सन्देश और आपके वचन को दूसरो तक पहुँचाने की श्रेष्ठता पर प्रकाश पड़ता है सारे लोग समान योग्यता के अधिकारी नहीं होते । यह असम्भव नहीं कि ज्ञान और मार्ग-दर्शन की बात पहुँचाने वाले से वह व्यक्ति समझ और बुद्धि में बड़ा हुआ हो जिम तक बात पहुँचाई जा रही है और वह उस से ज्यादा-से-ज्यादा लाभान्वित हो सके ।

(परन्तु फिर भी) जो-कुछ उनमें है उसका कुछ भी पालन नहीं करते ।

—इब्नमाजा, तिरमिजी

२६. हज़रत उमर बिन खत्ताब रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आपने कहा : मैं इस समुदाय में हर 'मुनाफिक' (द्वयवादी, कपटाचारी के दुष्कृत्य) से डरता हूँ, जो बातें तो 'हिकमत' (ज्ञान एवं तत्वदर्शिता) की करे, परन्तु कार्य उसका अत्याचार का हो ।

—बैहकी : शोअबुल ईमान

२७. हज़रत शहास बिन औस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : बुद्धिमान व्यक्ति वह है जो अपने आपको दबाए और मृत्यु के पश्चात् जो-कुछ है उसके लिए कर्म करे और निरुपाय एवं अक्षम व्यक्ति वह है जो अपनी (तुच्छ) इच्छाओं का दास हो और अल्लाह से (बड़ी-बड़ी) अभिलाषायें रखता हो । —तिरमिजी इब्न माजा

स्वाभाविक धर्म

‘इस्लाम’ उस जीवन प्रणाली का नाम है जो स्वभाव से ही मनुष्य को अपेक्षित है। ‘रसूलों’ को भेज कर अल्लाह ने मनुष्य को जिन चीजों का स्मरण कराया है वे उन को अपनी प्रकृति और स्वभाव ही की मांगें हैं। इस्लाम विचार एवं व्यवहार का ऐसा विधान है जो बुद्धि-विवेक और हमारी प्रकृति के सर्वथा अनुकूल हैं। इसी कारण कुरआन ने ‘इस्लाम’ को ‘नरन मार्ग’ की उपमा दी है। उल्लामी आदेशों का उल्लंघन वास्तव में अपनी प्रकृति और अपने स्वभाव का विरोध और अल्लाह की रचना को विकृत करना है। ‘इस्लाम’ ने जिन चीजों का आदेश दिया है स्वभावतः उन्हीं के द्वारा व्यक्ति को पूर्णता प्राप्त होती है। उन्हीं ने मनुष्य का व्यक्तित्व निगरता और विकसित होता है। और जिन बातों ने इस्लाम ने रोका है वे वही हैं जो मनुष्य के व्यक्तित्व को विकृत करती हैं और वह अपने प्राकृतिक एवं स्वाभाविक उद्देश्यों को पूरा करने में असफल रह जाता है। व्यक्ति की सिद्धि एवं पूर्णता (*Perfection*) और आत्मा की शुद्धि एवं विकास ही ‘शरीअत’ (कर्मकाण्ड) का मौलिक उद्देश्य है। यही कारण है कि कुरआन में आत्म-शुद्धि और आत्म-विकास को अन्तिम लक्ष्य बताया गया है। एक जगह कहा गया “सफल हो गया जिमने उसे (आत्मा को) निखारा, और असफल हुआ जिसने उसे दबाया”।

—अश-शम्स ६-१०

एक दूसरी जगह कहा गया : “हमारे ‘रब’ उन लोगों के बीच उन्हीं में एक ऐसा ‘रसूल’ उठाना जो उन्हें तेरी ‘आयतें’ पढ़कर सुनाये उन्हें किताब और ‘हिकमत’ की शिक्षा दे और उनकी आत्मा को शुद्ध (कर के उसे विकसित होने का अवसर प्रदान) करे।”

—अल-वकरा १२६

इस ‘आयत’ से मालूम हुआ कि ‘रसूल’ लोगों को कुरआन सुनाता

१ उदाहरणार्थ देखिए अल-फातिहा ७, अल वकरा १४२, २१३, आले इमरान ५१, १०१, अल-अनआम १२६, १५३, मरयम ३६, या सीन ६१, अल-जुवरुफ ६१, ६४, अल-हिज्र ४१, अल-माइदा १६, युनुस, २५।

२ दे० मूर अन-निमा ११६।

और उन्हें 'शरीअत' (कर्मकाण्ड) और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता, *Wisdom*) की शिक्षा देता है, और परिणाम की दृष्टि से उन की आत्मा को शुद्ध और विकसित करता है। शुद्ध एवं विकसित ('तजकिया') करने के शब्द स्वयं इस वास्तविकता पर प्रकाश डालते हैं कि अल्लाह को मनुष्य से कोई ऐसी चीज अपेक्षित नहीं है जो मनुष्य की अपनी प्रकृति अथवा स्वभाव के प्रतिकूल हो।^१ मनुष्य से केवल इस की माँग की गई है कि वह अपने व्यक्तित्व को विकसित करे और उन नैतिक गुणों की पूर्णता का आयोजन करे जो उस की प्रकृति में अन्तर्निहित हैं। 'इस्लाम' में व्यक्ति की पूर्णता-प्राप्ति ही मूल वस्तु है। 'कियामत' में प्रत्येक व्यक्ति को वास्तव में जिस चीज का हिसाब देना है वह यही कि ससार में अल्लाह ने उसे जो शक्तियाँ और योग्यताएँ प्रदान की थी उन से काम ले कर वह स्वयं क्या बन सका है? वह अपना क्या व्यक्तित्व बना कर अल्लाह की सेवा में पहुँचा है? इस्लाम में सामाजिक व्यवस्था और सामाजिक विधान का महत्त्व इसलिए है कि वह व्यक्ति की पूर्णता-प्राप्ति में सहायक होता है। सामाजिक जीवन में व्यक्ति एक ओर स्वयं अपनी पूर्णता को प्राप्त होता है दूसरी ओर दूसरे लोगों को पूर्णता की प्राप्ति में उस से सहयोग मिलता है। 'इस्लाम' ने न व्यक्ति को ऐसी स्वतन्त्रता दी है जिस से सामाजिकता को किसी प्रकार की हानि पहुँचे और न 'इस्लाम' में सामाजिकता को ऐसे अधिकार दिये गये हैं जो व्यक्ति से उस की वह स्वतन्त्रता छीन ले जो उस के व्यक्तित्व के विकास के लिए जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अभीष्ट है। 'इस्लाम' ने व्यक्ति और समाज में अत्यन्त सन्तुलन स्थापित किया है। इस्लाम प्रत्येक दृष्टि से मनुष्य की प्रकृति और उस के व्यक्तित्व और सामाजिक अपेक्षाओं और आवश्यकताओं के नितान्त अनुकूल है। इस का अनुभव हर उस व्यक्ति को हुआ होगा जिस ने इस्लाम का अध्ययन एक 'दीन' और जीवन-व्यवस्था के रूप में किया होगा।

इस्लामी दृष्टिकोण से मानव-व्यक्तित्व का विकास सम्भव नहीं

१. इस्लाम वास्तव में उन्हीं वास्तविकताओं को, जो मानव-प्रकृति में अन्तर्निहित हैं, प्रदर्शित कर के मनुष्य को उन से परिचित कराता है। वह 'ईमान' और कर्म की ओर बुद्धि एवं विवेक ही के मार्ग से बुलावा देता है, वह मनुष्य को उसके वास्तविक स्वभाव एवं प्रकृति और उसकी अपेक्षाओं से परिचित कराता है। यही कारण है कि कुरआन ने अपने को 'ज़िक्र' (अनुस्मारक) और 'तबसिरह' (आँखें खोलने की सामग्री) के नाम से प्रस्तुत किया है।

जब तक कि मनुष्य अपना और अपने प्रयास और साधनाओं का वास्तविक लक्ष्य ईश-प्रसन्नता को न ठहराये। ईश्वर की चाह और उस का प्रेम ही हमारे 'दीन' व 'ईमान' (धर्म व आस्था) का अन्तिम लक्ष्य है। अल्लाह के आज्ञापालन, उस की दासता और आत्म-निवेदन में ही वास्तविक जीवन है जिस की मानव-प्रकृति को जिज्ञासा है। अल्लाह के उतारे हुये आदेशों का पालन किसी दमनकारी विधान की अधीनता स्वीकार करना कदापि नहीं है बल्कि यह ऐसे कानून का अनुपालन है जो स्वयं अपनी प्रकृति का कानून और नियम है। अल्लाह का आज्ञापालन वास्तव में एक ऐसे शासक का आज्ञापालन है जिसका राजसिंहासन स्वयं हमारे हृदय की गहना है। अल्लाह का इन्कार करने के पश्चात् न केवल यह कि ससार अपनी प्रियता एवं आकर्षण से वंचित हो जाता है बल्कि मानव-जीवन से शान्ति, परितोष और वास्तविक आनन्द सदैव के लिए विदा हो जाता है। जीवन जीवन के उच्चतम मूल्यों (*Values*) से वंचित होकर रह जाता है। खाने-पीने और भोग-विलास के अतिरिक्त जीवन का कोई उच्च अभिप्राय और अर्थ शेष नहीं रहता। अल्लाह का दिखाया हुआ मार्ग और उसकी दासता एवं आज्ञापालन में ही मनुष्य के लिए जीवन है। उसको सफलता का मार्ग इसके अतिरिक्त और कोई नहीं है कि वह अपने जीवन में वह पद्धति अपनाये जिसकी शिक्षा अल्लाह ने अपने नबियों के द्वारा दी है : "कह दो : अल्लाह का मार्ग-दर्शन ही (वास्तव में) मार्ग-दर्शन है, और हमें आदेश मिला है कि हम ससार के 'रब' (पालनकर्ता स्वामी) के लिए अपने-आपको अर्पण कर दे। और यह कि 'नमाज' कायम रखो और उसका डर रखो, वही है जिसके पास तुम इकट्ठे किये जाओगे।"

—अल-अनआम : ७१-७२

'नबी' जो आदेश और मार्ग-दर्शन (*Guidance*) से लेकर आये वह वास्तविक जीवन ही का मार्गदर्शन है। कुरआन के अतिरिक्त पुरातन ग्रन्थों में भी इसका उल्लेख मिलता है। इब्जील में है "लिखा हुआ है कि मनुष्य केवल रोटी से जीवित नहीं रहता बल्कि उस शब्द से जीवित रहता है जो ईश्वर की ओर से आता है।" —मत्ता ४ . ४

अर्थात् अल्लाह के हुक्म और आदेश से मानव को जीवन मिलता है। 'शरीअत' (कर्म काण्ड) के पालन में ही उसका वास्तविक जीवन है। कुरआन में कहा गया "क्या वह व्यक्ति जो मुरदा था फिर हम ने उसे जीवित किया, और उसके लिए प्रकाश कर दिया जिसको लिये हुये वह लोगो के बीच चलता-फिरता है, उस व्यक्ति की तरह हो सकता

हैं जो अंधेरी में पड़ा हो, उन (अंधेरी) से निकलने वाला ही न हो ?”

—अल-अनआम . १२२

कुरआन की इस 'आयत' में 'ईमान' को जीवन और 'शरीअत' (कर्म काण्ड) का पालन करने को प्रकाश लेकर चलना कहा गया है। जिस व्यक्ति को 'ईमान' न मिल सका और जिसे सत्यता का ज्ञान न हो सका वह निर्जीव पत्थर के समान है, उसे वास्तविक जीवन प्राप्त नहीं। जिसको जीवन का सीधा, सहज और स्वाभाविक मार्ग नहीं मिला वह उस व्यक्ति जैसा है जो अंधेरी में इधर-उधर भटक रहा हो और उसके पास कोई प्रकाश न हो जिस से वह उस मार्ग को अपना सके जो मजिल तक पहुँचाता है।

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ مَا مِنْ مَوْلُودٍ إِلَّا يُولَدُ عَلَى الْفِطْرَةِ
فَأَيُّوَاهُ يَهُودًا أَوْ نَصْرَانًا أَوْ مَجُوسًا أَوْ يَهُودِيَّةً أَوْ نَصْرَانِيَّةً أَوْ مَجُوسِيَّةً كَمَا تَنْتَجِبُ الْبَيْهِيْمَةُ بِهَيْمَتِّ جَمْعَاءَ، هَلْ
تُحْسِنُونَ فِيهَا مِنْ جَدْعَاءَ ثُمَّ يَقُولُ أَبُو هُرَيْرَةَ وَأَقْرَأُوا إِنَّ شِئْنَكُمْ فِطْرَةَ اللَّهِ الْبَقِيَّةِ
فَطَرِ النَّاسَ عَلَيْهَا لَا تَبْدِيلَ لِخَلْقِ اللَّهِ ذَلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ. بخاری، مسلم، ابوداؤد، ترمذی

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि कोई बच्चा ऐसा नहीं जो प्रकृति पर पैदा न होता हो फिर उसके माता-पिता उसे 'यहूदी' या 'ईसाई' या 'मजूसी' बना लेते हैं^२ जैसा कि जानवर के पेट से भला-चगा जानवर पैदा होता है। क्या उनमें से किसी को तुम नाक, कान कटा पाते हो? (उनके कान तो बाद में लोग अज्ञान-पूर्ण प्रथा के अन्तर्गत काटते हैं^३)? फिर अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि यदि चाहो तो (इसकी पुष्टि के लिए कुरआन की यह 'आयत') पढ़

१. अर्थात् प्राकृतिक एवं स्वाभाविक गुणों और विशेषताओं के साथ।
२. मालूम हुआ कि 'इस्लाम' मानव का प्राकृतिक एवं स्वाभाविक धर्म है। इस 'हदीस' में 'प्रकृति' (फितरत) से अभिप्रेत 'इस्लाम' है, इसीलिए यहूदी, ईसाई तथा मजूसी धर्मों का उल्लेख उसके मुकाबले में किया गया। इस 'हदीस' की कुछ 'रिवायतों' में "प्रकृति पर" के स्थान पर "इस्लामी प्रकृति पर" और "इस मिल्लत (पन्थ) पर" के शब्द आये हैं जिनसे यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि इस 'हदीस' में इस्लाम ही को "प्रकृति" (फितरत) कहा गया है। "प्रकृति" कहने का आशय यह है कि वह प्रकृति और मानवीय स्वभाव के सर्वथा अनूकूल है।
३. यहाँ एक महत्वपूर्ण वास्तविकता पर प्रकाश डाला गया है, वह यह कि मनुष्य ससार में विशुद्ध प्रकृति लेकर आता है जिसका ही नाम 'इस्लाम' है। उसकी प्रकृति अल्लाह को अपना 'रब' (पालन-कर्त्ता स्वामी) और 'इलाह' (इष्ट, पूज्य) जानती और उसी के बताये हुए जीवन-मार्ग और स्वाभाविक नियमों से परिचित होती है। 'शिक' (बहुदेववाद), 'कुफ्र' (अधर्म), नास्निफना और अज्ञानपूर्ण विचारों और कर्मों से उसकी प्रकृति का कोई ताल-मेल नहीं है।

लो “यह अल्लाह की (बनाई हुई) प्रकृति है जिस पर उसने लोगों को पैदा किया है। अल्लाह की प्रकृति में कोई परिवर्तन होने का नहीं है। यही ठीक (यथोचित) ‘दीन’ है”।

—बुखारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी

२ इयाज बिन हिमा अल-मुजाशिई से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक दिन अपने ‘खुतबे’ (भाषण) में कहा सुन लो ! ‘रब’ ने मुझे आदेश दिया है कि जो-कुछ आज उसने मुझे बताया है मैं तुम्हें बता दूँ जिसे तुम नहीं जानते (उसने कहा है) कि जो माल (घन-सम्पत्ति आदि) मैंने किसी बन्दे को दिया वह उसके लिए वैध है। और मैंने अपने समस्त बन्दो (सेवको-दासो) का एकनिष्ठ (एक ईश्वर के होकर रहने वाले) पैदा किया, तत्पश्चात् उनके पास ‘शैतान’ आए और उन्हें उनके ‘दीन’ से हटा ले गये। उन्होंने उन पर वे चीजे ‘हराम’ (वर्जित) कर दो जिनको मेने उनके लिए ‘हलाल’ (अवर्जित) किया था, और उन्हें

मनुष्य तो ईश-ज्ञान की जिज्ञासा और उसकी उपासना एवं दासता की प्रेरणा लेकर आता है। प्रत्येक बालक उस वास्तविक प्रकृति के साथ जन्म लेता है, जो ‘कुफ्र’ और अधर्म से सर्वथा विमुक्त होता है। हर बच्चा स्वभावतः एकनिष्ठ होता है। यदि मनुष्य अपनी जन्मसिद्ध प्राकृति पर स्थिर रहे, तो ‘इस्लाम’ की शिक्षा ग्रहण करने में उसे तनिक भी सकोच न हो। वह उसे इस प्रकार स्वीकार करेगा जैसे कोई अपनी जानी-पहचानी चीज को ग्रहण करता है, परन्तु होता यह है कि बिगड़ा हुआ वातावरण और उसके पथभ्रष्ट माता-पिता, आदि उसकी प्रकृति को विकृत करके उसे ‘शिक्र’ (अनेकेश्वरवाद) और मोड़ देते हैं। उसकी दशा उस जानवर जैसी होती है जिस को उस की माँ ने भला-चगा जन्म दिया हो, परन्तु किसी ने उसकी नाक और उसके कान काट कर उसका रूप बिगाड़ दिया हो। मनुष्य ‘कुफ्र’, ‘शिक्र’, नास्तिकता की और वे चीजें जो उसकी प्रकृति के प्रतिकूल हैं लेकर नहीं आता, परन्तु पथ-भ्रष्ट हो कर वह उन समस्त चीजें ग्रहण कर लेता है जो उसके स्वभाव और उस की सृष्टि के वास्तविक उद्देश्य के विरुद्ध होती हैं। कोई भी व्यक्ति यह नहीं चाहेगा कि उसका कान या उसकी नाक कटी हुई हो या वह पैर का लगड़ा या आँखों का अन्धा हो लेकिन यह उसका दुर्भाग्य है कि वह अपनी प्रकृति को विकृत दशा में देखना ही पसन्द नहीं करता बल्कि हठ भी करता है कि उसके व्यक्तित्व को विकृत अवस्था ही में रहने दिया जाये।

४. कुरआन का यह टुकड़ा सूरा रूम की ‘आयत’ ३० से उद्धृत है। इस से भी इस बात की पुष्टि होती है कि मनुष्य का स्वाभाविक धर्म यह है कि वह एक

इस बात की ओर प्रेरित किया कि वे उन चीजों को मेरा साझी ठहरायें जिनके लिए कोई प्रमाण नहीं उतारा गया^५ । —मुस्लिम

३ अनस विन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि नबी० सल्ल० ने कहा : 'कियामत' के दिन एक नारकी व्यक्ति से कहा जायेगा कि बता यदि (तेरे पास) धरती की समस्त वस्तुये होती, तो क्या तू उन सबको इस (यातना) से बचने के लिए प्रतिदान के रूप में दे डालता ? आपने कहा वह कहेगा . हाँ । अल्लाह कहेगा . मैंने तुझ से इस से बहुत हल्की चीज चाही थी, जब तू आदम की पृष्ठ मे था तो मैंने तुझ से वचन लिया था कि मेरे साथ किसी चीज को शरीक न करना, परन्तु तू माना नहीं, मेरे साथ (दूसरो को) शरीक करके रहा^६ । —बुखारी, मुस्लिम, अहमद

अल्लाह का दास, आज्ञाकारी और उपासक हो जाये । इसी का नाम इस्लाम है । इस्लाम हमारे स्वभाव एवं प्रकृति को आघात नहीं पहुँचाता बल्कि उसे निखारता और सँवारता है । इस धर्म का ज्ञान वास्तव मे मनुष्य की अपनी प्रकृति और अपने जीवन के उद्देश्य और अभिप्राय का ज्ञान है । जीवन के उद्देश्य और अभिप्राय का ज्ञान है । जीवन के इस उद्देश्य के प्रतिकूल आचरण कर के मनुष्य अपनी प्रकृति और अपने अस्तित्व को ऐसी हानि पहुँचाता है जिस की क्षति-पूर्ति सम्भव नहीं ।

५. इस 'हदीस' का विषय पहली 'हदीस' से मिलता-जुलता है । इस 'हदीस' मे भी इस मृत्युता का उल्लेख किया गया है कि अल्लाह के अपने बन्दो को 'प्रकृति' (फितरत) पर एकनिष्ठ (एक अल्लाह का ही रहने वाला) पैदा किया है । लोग 'शैतानो' और गुमराह लोगो के बहकावे मे आ कर 'शिक' ग्रहण कर लेते हैं । और अल्लाह ने जिन चीजों को उन के लिए वैध किया है उन्हें अपने लिए वर्जित (हराम) कर लेते है । इस प्रकार विचार और व्यवहार दोनों पहलू से वे अपने स्वाभाविक धर्म से दूर हो जाते है ।

इस 'हदीस' की कुछ 'रिवायतो' मे "एक निष्ठ" (हुनफा) के स्थान पर एकनिष्ठ मुस्लिम ('हुनाफाऽ मुस्लिमीन') के शब्द आये हुये है जिस से मालूम होता है कि अल्लाह ने अपने बन्दो को एक निष्ठ मुस्लिम (मुस्लिमे हुनीफ) पैदा किया था, 'इस्लाम' ही उन का जन्मसिद्ध और स्वाभाविक धर्म था । 'शिक' (बहुदेववाद) का समर्थन न आसमानी किताबो से होता है और न उस के लिये, विश्व से कोई प्रमाण प्रस्तुत किया जा सकता है ।

६. इस 'हदीस' से भी इस बात की पुष्टि होती है कि 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) ही मानव का स्वाभाविक धर्म है । 'कुफ' व 'शिक' का उस की प्रकृति से कोई जोड़ नहीं है । मानव-प्रकृति मे यह चीज समोई हुई है कि वह एक ईश्वर के अतिरिक्त किसी को अपना पूज्य, कष्ट-निवारक और अपनी काम-

४. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा गया समस्त धर्मों में अल्लाह को सब से अधिक प्रिय कौन सा धर्म है ? आपने कहा “एक निष्ठता (एक प्रभु का हो रहना) जो अत्यन्त सरल और सहज है” । —अहमद, अदबुल मकरद, तबरानी

नाओ और अभिलाषाओ का केन्द्र न बनाये । अल्लाह की बन्दगी करने और ‘शिक’ की गन्दगी से अपने आप को बचाये रखने का वचन स्वभावतः प्रत्येक व्यक्ति से लिया जा चुका है । कुरआन में भी इस प्रतिज्ञा का उल्लेख विशेष ढंग से किया गया है (दे० सूर अल-आराफ १७२ १७३) । मानव-प्रकृति ‘तौहीद’ (एकेश्वरवाद) और अल्लाह की प्रभुता के इकरार के साँचे में ढाली गई है, इस के साथ यह बात भी असम्भव नहीं है कि अल्लाह ने हजरत आदम के पैदा किये जाने के पश्चात् समस्त मानवों को, जो ‘कियामत’ तक पैदा होने वाले थे, एक साथ किसी रूप में अपने सामने हाज़िर किया हो और उन्हें यह ज्ञान दिया गया हो कि उन का ‘रब’ (पालन-कर्त्ता स्वामी) केवल एक अल्लाह है । और उन से अल्लाह ने अपने ‘रब’ होने का इकरार भी कराया हो । यद्यपि यह इकरार आज हमें याद नहीं है फिर भी इस इकरार की गहरी छाप हमारी आत्मा और हमारे मन में वर्तमान है । ‘तौहीद’ (एकेश्वरवाद) का इकरार मनुष्य की प्रकृति और उस की अन्तरात्मा की स्वाभाविक प्रेरणा है । पैगम्बर इसी इकरार को स्मरण कराते हैं । वे कोई नई चीज़ ले कर मनुष्यों के पास नहीं आते । आज यदि हमारे मस्तिष्क में अल्लाह से किये हुये इकरार की याद को बाकी नहीं रखा गया, तो केवल इसलिए कि संसार में हमारी प्रतीक्षा हो सके ।

- छ. अर्थात् अल्लाह का प्रिय धर्म जो उस ने अपने बन्दों के लिए निर्धारित किया है यह है कि बन्दा अल्लाह के लिए सब ओर से एकाग्र हो जाये । वह एक अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन करे और जीव का वही मार्ग ग्रहण करे जो उस की अपनी प्रकृति के अनुकूल है । जिस की शिक्षा अल्लाह ने दी है, जिस में किसी तरह की सख्ती नहीं है । जो बहुत नर्म और सहज है । जिस में न मानवीय प्रकृति के प्रतिकूल मनुष्य को ससार-त्याग की शिक्षा दी गई है कि वह घर-बार छोड़ कर जंगल और पर्वतों की गुफाओं में रहने लगे और न जिस में मानव के आध्यात्मिक विकास के मार्ग में शरीर को बाधक समझा गया है कि शरीर को कष्टों और यातनाओं के द्वारा दबाया जाए ताकि आत्मिक विकास का मार्ग सुगम हो सके । इस्लामी शिक्षा की दृष्टि से शरीर और आत्मा में कोई विरोध नहीं है । शरीर आध्यात्मिक विकास के मार्ग में सहयोग देता है जिस प्रकार उड़ने में पक्षी के पख सहायक होते हैं

५. हजरत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'दीन' (धर्म) बहुत सहज है^५ ।

—बुखारी, अहमद, अदबुल मुफरद

६. हजरत जाविर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . अल्लाह ने मुझे मशक्कत में डालने वाला बनाकर नहीं भेजा, बल्कि मुझे सिखाने वाला और आसानी करने वाला बनाकर भेजा है^६ ।

—मुस्लिम

बोझ नहीं होने । शरीर और शारीरिक गुण और विशेषताएँ आध्यात्म-मार्ग में सहायक होते हैं, शर्त यह है कि मनुष्य ईश्वर की निश्चित की हुई सीमाओं का उल्लंघन न करे बल्कि ईश्वरीय आदेशों के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करे ।

८. मुसनद अहमद की एक 'रिवायत' में है . "तुम्हारे सब 'दीनो' (धर्मों) में अच्छा वह है जो सब में सहज हो ।"
९. नबी सल्ल० ने यह बात एक विशेष अवसर पर कही थी जब कि कुरआन में आप की पत्नियों को दो बातों में से एक बात को अंगीकार करने के लिए कहा गया था या तो वे अल्लाह और 'रसूल' को अपनाये या सासारिक वैभव और धन-सम्पत्ति को । यदि वे दुनिया चाहती हैं, तो उन्हें 'रसूल' से नाता तोड़ लना पड़ेगा और यदि वे अल्लाह और 'रसूल' को चाहती हैं, तो उन के लिए 'आखिरत' में बड़ा प्रतिदान और पुरस्कार है (दे० अल-अहज़ाब : २८-२९) । नबी सल्ल० ने जब अपनी पत्नियों को अल्लाह के इस से सूचित करना चाहा, तो सब से पहले हजरत आइशा रजि० से कहा कि मैं तुम्हारे सामने एक बात रखता हूँ और मैं चाहता हूँ कि तुम इस के बारे में जल्दबाज़ी से काम न लो जब तक कि अपने माँ-बाप से सलाह न कर लो । आप को भय था कि कहीं जल्दबाज़ी में वे कोई गलत फैसला न कर लें । माता-पिता से सलाह करेंगी, तो वे उन्हें ठीक सलाह देंगे । हजरत आइशा रजि० ने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! वह क्या बात है ? आप ने जब उन्हें अल्लाह का आदेश सुनाया, तो वे बोल उठी हे अल्लाह के रसूल ! क्या आप के सग रहने की बात भी ऐसी है जिस में मैं अपने माता-पिता से सलाह करूँ । मैं अल्लाह और रसूल को चाहती हूँ । हाँ, मेरा एक निवेदन है, वह यह कि आप मेरे इस उत्तर की सूचना अपनी पत्नियों में से किसी को न दें । आप ने कहा 'उन में से जो भी पूछेगी मैं उसे तुम्हारे उत्तर से सूचित कर दूँगा । अल्लाह ने मुझे मशक्कत में डालने वाला बना कर नहीं भेजा है, बल्कि मुझे सिखाने वाला और आसानी करने वाला बना कर भेजा है ।' इस से मालूम होता है कि आप की हैसियत एक दयालु शिक्षक की है । आप लोगों को

७. हजरत अबू मूसा रजि० कहते हैं कि हम एक यात्रा में अल्लाह के रसूल० के साथ थे। लोग उच्च स्वर से 'तकबीर' (अल्लाह की महानता का वर्णन) का उच्चारण करने लगे। इस पर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "हे लोगो ! अपने-आप पर तरस खाओ। तुम उसे नहीं पुकार रहे हो जो सुनता न हो या यहाँ मौजूद न हो। तुम तो उसको पुकार रहे हो जो सुनने वाला और देखने वाला है और वह तुम्हारे ऊँट की गरदन से भी अधिक निकट है"।
—बुखारी, मुस्लिम

उसी बात की शिक्षा देते हैं जिस में उन की भलाई और कल्याण है। आप की यह कामना होती है कि लोग सीधे मार्ग पर चलने लग जायें। इस के लिए हर वह उपाय करते हैं जो आप कर सकते हैं।

१०. मालूम हुआ कि नबी सल्ल० जिस 'दीन' या धर्म की शिक्षा और प्रचार के लिए भेजे गए थे मानव-प्रकृति और बुद्धि, दोनों से, उस की पुष्टि होती है। वह न मानव-प्रकृति के प्रतिकूल है और न उसे बुद्धि-विरुद्ध धर्म कहा जा सकता है। सच्ची बात यह है कि वह हमारी प्रकृति और बुद्धि दोनों के लिए आहार समान है, उस से हमारी बुद्धि को शक्ति और हमारी आत्मा और प्रकृति को बल प्राप्त होता है।



ईश्वर की कल्पना

इस्लाम की सम्पूर्ण व्यावहारिक और विचार सम्बन्धी व्यवस्था में जिस चीज को मौलिक एवं केन्द्रीय स्थान प्राप्त है वह 'अल्लाह' में विश्वास है। दूसरी धारणाएँ और आदेश वास्तव में इस एक मूल की शाखाएँ हैं। जितने भी विचार, आदेश और मान्यताएँ हैं उनमें दृढ़ता और सार्थकता अल्लाह में विश्वास द्वारा ही आती है। यदि इस एक केन्द्र से निगाह हटा ली जाये, तो प्रत्येक चीज अर्थहीन हो जायेगी और इस्लाम की सम्पूर्ण व्यवस्था, चाहे उसका सम्बन्ध विचार एवं आस्था से हो या व्यवहार से, छिन्न-भिन्न हो जायेगी।

इस्लाम में अल्लाह को मानने और उस पर 'ईमान लाने' का अर्थ केवल इतना ही नहीं है कि अल्लाह मौजूद है बल्कि इस विश्वास में अल्लाह की सत्ता और उसके गुणों की उचित और पूर्ण कल्पना पाई जाती है। यह विश्वास हमें अल्लाह की सत्ता और उसके गुणों की जो कल्पना देता है उसका हमारे जीवन से गहरा सम्बन्ध है। यही कारण है कि इस्लाम अल्लाह में विश्वास द्वारा केवल यही नहीं कि आत्मा की शुद्धि एवं विकास और नैतिक सुधार का काम लेता है बल्कि इसी को उसने जीवन के समस्त कार्य-कलाप और मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति की आधार-शिला माना है।

'इस्लाम' ने प्रभुता एवं ईश्वरत्व की जो कल्पना प्रस्तुत की है उस की दृष्टि से 'इलाह' (प्रभु एवं पूज्य) और ईश्वर वही हो सकता है जो परम-स्वतन्त्र निरपेक्ष और सर्व शक्तिमान हो, जो सदा से हो और सदैव रहने वाला हो। जिसे प्रत्येक चीज का ज्ञान हो, जो तत्त्वदर्शी, ज्ञान एवं बुद्धि का स्रोत हो, जिस शक्ति के आधीन सब हो और जिसकी दयालुता अत्यन्त व्यापक हो। जिसके अधिकार में जीवन और मृत्यु, हानि और लाभ सारी चीजें हो। जिसकी कृपा दृष्टि और जिसकी रक्षा के सभी आश्रित हों। जिसकी ओर सबकी वापसी हो। जो सबका हिसाब लेने वाला हो, और जिसे किसी को दण्ड देने या पुरस्कृत करने का पूर्ण अधिकार हो। प्रभुता एवं ईश्वरत्व कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसे विभिन्न भागों में विभक्त किया जा सके या जिसका वितरण सम्भव हो। उसे

काया और सन्तानोत्पत्ति आदि वृत्ति से निम्न समझता भी सही न होगा। समस्त ईश्वर गुण केवल एक सत्ता में एकत्र माने जा सकते हैं और वह अल्लाह ही की सत्ता है। अल्लाह की सत्ता सर्वोच्च है। विश्व की सब चीजें उसी के आधीन और आश्रित हैं। वही इम अखिल विश्व का व्यवस्थापक और नियता है। उसी का कोप अक्षय है। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह उसकी महानता एवं महत्ता को पहचाने। उसके आगे झुके, उस से डरे, उसी में आशा करे, उसी पर उसका भरोसा हो। माँगे तो उस से माँगे। दुख और सकट में पुकारे तो उसे ही पुकारे। उसी के पास सब को लौटकर जाना है। वही हमारे शुभाशुभ कर्मों का हिसाब लेने वाला है। वही है जिसके निर्णय पर मनुष्य का अच्छा या बुरा परिणाम निर्भर है। 'तौहीद' या एकेश्वरवाद की यही धारणा है जिसकी शिक्षा पिछले समस्त 'नबियों' ने दी है। इस धारणा का मानव-जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। अल्लाह पर 'ईमान' मनुष्य को ईश्वरीय आदेश और उसके नियत किए हुए नियमों और विधान का पाबन्द बनाता है और उसके अन्दर उत्तरदायित्व का एहसास पैदा करता है। अल्लाह पर 'ईमान' रखने वाला व्यक्ति यह समझता है कि उसका अल्लाह प्रत्येक अवस्था में उसे देखता है। वह उसकी पकड़ से बच नहीं सकता। इसलिए वह, अकेला हो या लोगों के साथ हो, हर दशा में अल्लाह से डरता और उसके दिए हुए नियमों और उसकी निश्चित की हुई सीमाओं व मर्यादाओं का आदर करता है। फिर अल्लाह में विश्वास उसे नैतिकता एवं चरित्र के उच्चतम स्तर तक पहुँचाता है। अल्लाह पर 'ईमान' रखने वाला कभी सकीर्ण-दृष्टि नहीं हो सकता। और न उसे गर्व और अहंकार का रोग लग सकता है। वह जानता है कि अखिल विश्व ईश्वर का है। उसकी मित्रता और शत्रुता अपने लिए नहीं, अल्लाह के लिए होती है। इस तरह उसकी सहानुभूति, प्रेम और सेवा का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत हो जाता है। वह जानता है कि उसे जो-कुछ प्राप्त है वह अल्लाह का दिया हुआ है, फिर वह गर्व कैसे कर सकता है। अल्लाह में विश्वास रखने के परिणामस्वरूप वह विनम्र ही होगा न कि अहंकारी और उद्द। अल्लाह पर ईमान रखने के परिणामस्वरूप मनुष्य को आत्म गौरव और स्वाभिमान का उच्च स्थान प्राप्त होता है। वह अल्लाह ही को समस्त शक्तियों का स्वामी समझता है। उसका विश्वास होता है कि अल्लाह ही के अधिकार में हानि-साम, जीवन-मरण सब कुछ है। अतः वह अल्लाह के सिवा किसी से नहीं डरता। अल्लाह के सिवा किसी के आगे उसकी गरदन नहीं झुकती। वह अल्लाह के सिवा समस्त शक्तियों से निर्भय होकर अपने कर्तव्य-पालन में

लग जाता है। उसका 'ईमान' है कि उसका अल्लाह निरपेक्ष और न्याय-शील है। उसका कानून बेलाग है। किसी को उसके ईश्वरत्व में हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त नहीं है कि उसकी पकड़ से किसी को बचा सके। उसके यहाँ आत्मा की शुद्धता और सत्कर्म के अतिरिक्त और कोई चीज़ काम आने वाली नहीं है इसलिए वह किसी से गलत और अनुचित आशाएँ नहीं रखता। उसका अल्लाह अक्षय कोष और अपार शक्तियों का स्वामी है, इसलिए न वह निराश होता है और न साहस छोड़ता है। उसमें धैर्य, सन्तोष, दृढ़ता और वीरता की वह शक्ति होती है कि बड़ी-से-बड़ी विरोधी शक्तियाँ भी उसका मार्ग नहीं रोक सकती। वह लोभी और लालची नहीं होता, उसे अत्यन्त निस्पृह होता है। वह अल्लाह की कृपा और उसकी प्रदान की हुई जीविका का इच्छुक होता है, परन्तु जीविको-पार्जन के लिए किसी निकृष्ट उपाय का अवलम्बन कदापि नहीं करता। वह जानता है कि अल्लाह अपने ज्ञान और तत्वदर्शिता (*wisdom*) के अन्तर्गत जिसको जो-कुछ चाहता है प्रदान करता है। वह अल्लाह के फैसले पर राजी होना है और अपने कर्तव्य-पालन के लिए अधिक-से-अधिक सचेष्ट रहता है।

अल्लाह पर ईमान

عَنْ ابْنِ عُمَرَ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: بُنِيَ الْإِسْلَامُ عَلَى خَمْسٍ شَهَادَةٍ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَرَسُولُهُ، وَإِقَامَ الصَّلَاةِ وَإِيتَاءَ الزَّكَاةِ، وَالْحَجَّ وَصَوْمَ رَمَضَانَ. — بخاری، مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'इस्लाम' की बुनियाद पाँच चीजों पर रखी गई है इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई 'इलाह' (पूज्य प्रभु) नहीं और यह कि मुहम्मद अल्लाह के बन्दे और उस के 'रसूल' हैं. और 'नमाज' कायम करना 'जकात' देना और 'हज्ज' करना और 'रमजान' के 'रोजे' रखना'। — बुखारी, मुस्लिम

१ यही इस्लाम के पाँच 'अरकान' (स्तम्भ) हैं जिन पर 'दीन' के विशाल भवन का निर्माण होता है। केवल अल्लाह को 'इलाह' (पूज्य प्रभु) मानने का अर्थ यह है कि मनुष्य यह स्वीकार करे कि अल्लाह ही हमारा उपास्य, स्वामी और शासक है, सब उसी के आश्रित है। वही है जिस की चाह, अभिलाषा और खोज की प्रेरणा हमारी प्रकृति में रखी गई है। उस के सिवा कोई दूसरा हमारी साधना और प्रयास का केन्द्र या लक्ष्य नहीं बन सकता। उस के सिवा कोई नहीं जिस की इच्छा हमारे जीवन का उद्देश्य बन सके।

अल्लाह के बारे में यथार्थ ज्ञान उसके 'रसूलों' के द्वारा होता है। 'रसूल' ही बताते हैं कि अल्लाह की इच्छा के अनुसार जीवन किस प्रकार व्यतीत किया जाए। इसलिए 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और अल्लाह के प्रभुत्व को मानने के साथ 'रिसालत' (ईशदूतत्व) को मानना भी आवश्यक है। 'रसूलों' में सबसे अन्तिम 'रसूल' हजरत मुहम्मद सल्ल० हैं। जीवन का यथार्थ पाने के लिए आवश्यक है कि आपकी 'रिसालत' को माना जाये और आपके नेतृत्व और मार्ग-दर्शन को स्वीकार किया जाये।

'नमाज' एक ओर अल्लाह का स्मरण और उसकी उपासना है दूसरी ओर वह हमारी अपनी दासता का प्रदर्शन और आत्मनिवेदन भी है। 'नमाज'

प्रत्येक दिन कई बार अल्लाह का स्मरण कराती है और उसके सर्वव्यापी एवं सर्वज्ञाता होने की याद ताजा करती और हमारे हृदय में उसका प्रेम-भाव भरती रहती है। 'नमाज' हमें सचेत करती रहती है कि एक दिन हमें अल्लाह की अदालत में पेश होना है। अल्लाह के न्यायालय में सफल होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य अपना सम्पूर्ण जीवन अल्लाह के आज्ञापालन में व्यतीत करे।

'रोज़े' के द्वारा इन्द्रियनिग्रह में हमें सफलता मिलती है। आत्मसंयम के लिए रोज़ा अत्यन्त आवश्यक है। 'रोज़े' के द्वारा हम अपनी इच्छाओं पर काबू पा सकते हैं। फिर हम अल्लाह की खुशी के मुकाबले में किसी चीज़ को प्रधानता नहीं दे सकते। अल्लाह के लिए हम हर चीज़ से मुख मोड़ सकते हैं। उसकी प्रसन्नता के लिए हर सुख और आनन्द को त्याग सकते हैं, हर कठिनाई और सकट का मुकाबला कर सकते हैं। हम में कर्तव्य-परायणता की वह भावना जाग्रत हो जाती है कि हम अल्लाह की इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं कर सकते।

'ज़कात' हमें याद दिलाती है कि अल्लाह के अलावा हम पर उसके बन्दो का भी हक है। हमारा यह परम कर्तव्य है कि हम दूसरों के काम आए और कमजोरों और दीन-दुखियों का सहारा बनें। 'ज़कात' के द्वारा हमारे मन से वन का मोह निकल जाता है। नैतिक दृष्टि से हम ऊँचे उठते हैं। हमारा मन पवित्र होता है। मन की सकीर्णता दूर होती है। हमारा सम्पूर्ण जीवन प्रकाशमान हो जाता है। मनुष्य की आत्मा सन्दूको और तिजोरियों में बन्द होकर रह जाये इससे बढ़कर कारावास क्या हो सकता है? जिस प्रकार दीपक अपने को और अपने वातावरण को प्रकाशित रखने के लिए बड़ी उदारता से अपने पात्र में संचित तेल खर्च करता है ठीक उसी प्रकार 'ज़कात', 'सदका' और दान के द्वारा एक ओर मनुष्य जन-समाज के काम आता है तो दूसरी ओर वह अपनी आत्मा को विकसित करता और उसे वास्तविक स्वतन्त्रता और आत्मिक आनन्द से आलिङ्गित करता है। त्याग और दान द्वारा मनुष्य अपना अहित नहीं करता बल्कि अपनी आत्मा को उज्ज्वल और विशाल बनाता है। वह उस दीपक के समान नहीं होता जो अपने पात्र का समस्त तेल सुरक्षित रखने के लिए सदैव बुझा रहता है।

'हज्ज' हमारे हृदय में अल्लाह की महानता और उसके प्रेम की अमिट छाप अंकित करता है। 'हज्ज' के द्वारा हमें इस्लाम से ऐसा हार्दिक लगाव हो जाता है जो सदा बाकी रहने वाला होता है : 'हज्ज' हमें इसके लिए तैयार करता है कि हमारी समस्त चेष्टाएँ और दौड़-धूप 'इस्लाम' की उच्चता के लिए हो।

२. हजरत अनस बिन मालिक रजि० कहते हैं कि हम (लोगों) को वर्जित कर दिया गया था कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से (बिना विशेष आवश्यकता के) कुछ पूछें, तो हमें इस बात से खुशी होती थी कि कोई बुद्धिमान बदवी (ग्रामीण) आये और आप से कुछ पूछे और हम सुनें। तो बदवी लोगों में से एक व्यक्ति आया और उस ने कहा है मुहम्मद ! आप का दूत हमारे पास आया और हम से बयान किया कि आप का कहना है कि अल्लाह ने आप को 'रसूल' बना कर भेजा है। आप ने कहा उस ने सच कहा। फिर उस व्यक्ति ने कहा आकाश को किस ने पैदा किया ? आप ने कहा अल्लाह ने। उस ने कहा . धरती को किस ने पैदा किया ? आप ने कहा . अल्लाह ने। फिर उस ने कहा ये पर्वत किस ने खड़े किये हैं और इन में जो कुछ बनाया है, वह किस ने बनाया है ? आप ने कहा अल्लाह ने। उस ने कहा . तो कसम है उस की जिस ने आकाश और धरती को पैदा किया और ये पर्वत खड़े किये, क्या अल्लाह ने आप को भेजा है ? आप ने कहा . हाँ। उस ने कहा . आप के दूत ने बयान किया कि हम पर हमारे माली (घन-सम्पत्ति) में 'जकात' भी अनिवार्य है। आप ने कहा . उस ने सच कहा। उस ने कहा : कसम है उस की जिस ने आप को 'रसूल' बना कर भेजा है, क्या अल्लाह ने आप को इसका आदेश दिया है ? आप ने कहा . हाँ। उस ने कहा . आप के दूत ने बयान किया था कि वर्ष में रमजान-मास का 'रोजा' भी हम पर अनिवार्य है। आप ने कहा . उस ने सच कहा। उस ने कहा कसम है उस की जिस ने आप को 'रसूल' बना कर भेजा है, क्या अल्लाह ने आप को इस का आदेश दिया है ? आप ने कहा हाँ। उस ने कहा आप के दूत ने यह भी बयान किया कि हम में से उस पर अल्लाह के घर ('काबा') का 'हज्ज' अनिवार्य है जो उस तक पहुँचने का सामर्थ्य रखता हो। आप ने कहा उस ने सच कहा। 'रावी' ('हदीस' के उल्लेख-कर्त्ता) बयान करते हैं कि फिर वह व्यक्ति यह कहता हुआ वापस हुआ कि उस की कसम जिस ने आप को 'हक' (सत्य) के साथ भेजा है मैं इन में (अपनी ओर से) न कुछ बढ़ाऊँगा और न इन में कोई कमी करूँगा। इस पर नबी सल्ल० ने कहा यदि यह सच्चा है तो अवश्य 'जन्नत' में प्रवेश करेगा।

—बुखारी, मुस्लिम

२. अर्थात् हमें अपना 'रसूल' बनाकर उसी ने भेजा है जो आकाश, धरती और सारे ससार का सृष्टिकर्त्ता है।

३. अर्थात् जो व्यक्ति इसका सामर्थ्य रखता हो कि मक्का की यात्रा कर सके उसके लिए 'हज्ज' करना अनिवार्य है।

३ हजरत अली इब्न अबी तालिब रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . कोई बन्दा 'ईमान' वाला नहीं हो सकता जब तक कि वह चार चीजों पर 'ईमान' न लाये इस बात की गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (इष्ट, पूज्य प्रभु) नहीं और यह कि मैं, मुहम्मद अल्लाह का 'रसूल' हूँ, मुझे उसने 'हक' (सत्य) के साथ भेजा है और मृत्यु पर 'ईमान' लाये (कि वह आने वाली है) और मृत्यु के पश्चात् (द्वारा जीवित कर के) उठाये जाने पर 'ईमान' लाये और तकदीर (भाग्य) पर 'ईमान' लाये ।
—तिरमिज़ी

४ हजरत सुफयान बिन अब्दुल्लाह सकफी रजि० कहते हैं कि मैंने कहा हे अल्लाह के रसूल ! मुझे 'इस्लाम' के बारे में ऐसी बात बता दीजिए कि आप के वाद फिर मैं किसी से इस के बारे में कुछ न पूछूँ । आप ने कहा कहो मैं अल्लाह पर 'ईमान लाया' फिर (इसी पर) जमे रहो ।
—मुस्लिम

५ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

४ इस 'हदीस' में संक्षिप्त शब्दों में सम्पूर्ण 'दीन' (धर्म) का सारांश प्रस्तुत कर दिया गया है । अल्लाह पर 'ईमान लाना' ही वास्तव में 'दीन' का मूल आधार है । अल्लाह पर ईमान लाने का अर्थ केवल इतना ही नहीं होता कि मनुष्य अल्लाह की सत्ता को स्वीकार कर ले बल्कि इसके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि वह अल्लाह को उसके समस्त गुणों के साथ माने और उसके प्रति अपने समस्त कर्तव्यों का निर्वाह करे । वही व्यक्ति सफ़ल है जो अल्लाह पर 'ईमान' लाये और उसके सृष्टि-कर्त्ता, 'रब' स्वामी और शासक होने को स्वीकार करे और उस पर जमा रहे, किसी भय या लोभ के कारण वह अपने 'ईमान' से न फिरे । अल्लाह को मानने और उसकी दासता की प्रतिज्ञा करने के पश्चात् इस पर दृढ़ रहना जीवन का सब से बड़ा सौभाग्य है । कुरआन में ऐसे लोगों के विषय में कहा गया है "निश्चय ही जिन लोगों ने कहा हमारा 'रब' अल्लाह है, फिर वे कायम रहे, तो उन्हें न तो कोई भय होगा और न वे दुखी होंगे । ये 'जन्नत' (में वास करने) वाले लोग हैं, उसमें सदैव रहेंगे, यह बदला होगा उसका जो वे करते थे ।" (अल-अहक़ाफ़ : १३-१४) । कुरआन में एक-दूसरे स्थान पर कहा गया है "जिन लोगों ने कहा हमारा 'रब' अल्लाह है फिर जमे रहे, उन पर 'फिरिश्ते' उतरते हैं, कि डरो नहीं और न दुखी हो, बल्कि उस 'जन्नत' की खुशखबरी (शुभ सूचना) लो जिसका तुम से वादा किया गया था । हम सांसारिक जीवन में भी तुम्हारे साथी हैं । और आखिरत में भी (तुम्हारे साथी हैं)" (हा० मीम० अस-सजदह . ३०-३१)

सल्ल० ने कहा तुम में से किसी-किसी के पास 'शैतान' आता है और कहता है कि अमुक वस्तु को किस ने पैदा किया ? अमुक वस्तु को किस ने उत्पन्न किया ? यहाँ तक कि वह कहता है कि तुम्हारे 'रब' (पालन-कर्त्ता प्रभु) को किस ने पैदा किया ? जब बात यहाँ तक पहुँच जाये, तो चाहिए कि वह अल्लाह से पनाह माँगे और रुक जाये" ।

—बुखारी, मुस्लिम

६. इज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोग एक-दूसरे से प्रश्न करते रहेगे यहाँ तक कि कहा जायेगा कि समस्त सृष्टि को तो अल्लाह ने पैदा किया, अच्छा अल्लाह को किस ने पैदा किया ? तो जब कोई व्यक्ति इस प्रकार कोई बात पाये, तो उसे चाहिए कि कहे . अल्लाह और उस के 'रसूलो' पर मेरा 'ईमान' है" ।

७. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोग सदैव परस्पर प्रश्न करते रहेगे यहाँ तक कि कहा जायेगा कि सृष्टि की रचना तो अल्लाह ने की, अच्छा अल्लाह को किस ने पैदा किया ? जब लोग इस प्रकार की बातें करें तो कहो अल्लाह एकता है ! अल्लाह निराधार एवं सर्वाधार है ! उस के कोई औलाद

५. अर्थात् 'शैतान' लोगों के दिलों में इस तरह के भ्रम और वसवास डालता है कि जब समस्त चीज़ों और सारी सृष्टि का सृष्टि-कर्त्ता अल्लाह है, तो अल्लाह का भी कोई सृष्टि-कर्त्ता होना चाहिए । जब इस तरह की भ्रमयुक्त भावनायें मन में उत्पन्न हो, तो इनको शैतान के वसवास समझ कर अल्लाह की पनाह माँगनी चाहिए और अपने ध्यान को इधर से हटा लेना चाहिए । कुरआन करीम में भी शैतानी वसवास से सुरक्षित रहने के लिए यही शिक्षा दी गई है कि ऐसी हालत में अल्लाह की पनाह लेनी चाहिए, दे० हा० मीम अस-सजदह ३६, अन-नहल ६८-६९, अल-फलक, अन-नास ।

६. यह शिक्षा उन लोगों को दी जा रही है जो अल्लाह और रसूल पर 'ईमान' रखने हैं । कहा जा रहा है कि जब 'ईमान' वालों के सामने इस प्रकार की बातें आएँ जो ईमान के प्रतिकूल हैं तो ऐसी बातों को यह कहकर रद्द कर देना चाहिए कि हमारा तो अल्लाह और 'रसूल' पर 'ईमान' है । हम ऐसे कुतर्क में नहीं पड़ सकते । वह अल्लाह ही क्या हुआ जिसके विषय में माता-पिता का प्रश्न उठता हो । इस प्रकार की बातें वही कर सकता है जिस का दिल 'ईमान' से खाली हो या जो बुद्धि और विवेक का शत्रु हो ।

नहीं और न वह किसी की औलाद है। और कोई नहीं जो उस के बराबर का हो। फिर तीन बार अपनी वाई ओर थूको और तिरस्कृत 'शैतान' से अल्लाह की पनाह चाहो।
—अबू दाऊद

७. अर्थात् जब इस तरह की बातें कही जाने लगे और इस प्रकार के बेहूदा प्रश्नों में उलझने लगे कि सबका सृष्टिकर्त्ता तो अल्लाह है आखिर अल्लाह का सृष्टा कौन है, तो तुम्हें सूरा अल-इखलास पढ़नी चाहिए जिसमें अल्लाह के मौलिक गुणों का उल्लेख किया गया है। जिसमें एकेश्वरवाद का पूर्णतः प्रदर्शन हुआ है। सूरा अल-इखलास में अल्लाह का यह गुण बयान हुआ है कि वह 'यकता' है। उस जैसा कोई नहीं। फिर उसके प्रति उस प्रकार सोचना जिस प्रकार हम सृष्टि की दूसरी चीजों के बारे में सोचते हैं अन्याय नहीं तो और क्या है ?

अल्लाह का दूसरा गुण जो इस सूरा में बयान हुआ है वह यह है कि वह निराधार और सर्वाधार है। वह सर्वथा पूर्ण है। उसमें कोई कमी और अपूर्णता हो ही नहीं सकती। अतः उसकी सत्ता के विषय में वास्तव में यह प्रश्न ही नहीं उठना कि उसका स्रष्टा कौन है। यदि यह मान लिया जाये कि उसका कोई सृष्टि कर्त्ता है, तो इसका अर्थ यह होगा कि वह अपने अस्तित्व में किसी दूसरे का आश्रित है। जब वह किसी दूसरे का मुहताज हुआ, तो फिर उसकी सत्ता को पूर्ण कैसे कह सकते हैं ? अल्लाह तो वही हो सकता है जो अपने अस्तित्व और अनश्वरता में किसी दूसरे का आश्रित न हो, वह सदा से हो। यदि वह सदा से है, तो फिर उसका कोई शरीक और सहभागी नहीं हो सकता। इसलिए कि अमरता और अनश्वरता के लिए पूर्णता अपेक्षित है और पूर्णता के लिए यकताई अनिवार्य शर्त है। यदि हम कई ईश्वर मानते हैं तो शक्ति और अधिपत्य विभिन्न ईश्वरों में विभक्त हो जायेगा। फिर हम किसी एक ईश्वर के बारे में भी नहीं कह सकते कि वह अपार शक्ति और अधिपत्य का स्वामी है। जब शक्ति और अधिपत्य सीमित हो गए तो फिर कोई एक ईश्वर भी महान् और अपूर्णतारहित नहीं रहा। इसलिए मानना पड़ेगा कि ईश्वर यकता है। वह निराधार और सर्वाधार है। फिर जो यकता, परम-स्वतन्त्र और निरपेक्ष है वह सदा से होगा। और जो सदा से होगा उसके लिए किसी स्रष्टा का प्रश्न ही कब उठता है।

अल्लाह की यकताई और उसकी निरपेक्षता के पश्चात् कहा गया।
“उसके कोई औलाद नहीं और न वह किसी की औलाद है और कोई नहीं जो उसके बराबर का हो।” यह स्पष्ट ही है कि जो यकता और अद्वितीय होगा

वह किसी का बाप या बेटा कैसे हो सकता है और कोई उसकी बराबरी का कैसे होगा ? यदि उसकी औलाद मान ली जाये, तो उसकी यकताइं कहा शेष रहती है ?

- ८ यह वसावस का मनोवैज्ञानिक उपचार भी है और 'शौतान' और दुर्ग दिवानों के प्रति घृणा का प्रदर्शन भी है ।



पवित्रता एवं पावनता

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ اللَّهُ تَعَالَى
كَذَّبَنِي ابْنُ آدَمَ وَلَمْ يَكُنْ لَهُ ذَلِكَ وَشَقَمَنِي وَلَمْ يَكُنْ لَهُ ذَلِكَ فَأَمَّا تَكْذِيبُهُ إِيَّايَ
فَقَوْلُهُ لَنْ يُعِيدَنِي كَمَا بَدَأَنِي وَلَيْسَ أَوَّلُ الْخَلْقِ بِأَهْوَنَ عَلَيَّ مِنْ إِعَادَتِهِ، وَأَمَّا شَقْمُهُ
إِيَّايَ فَقَوْلُهُ اخْتَدَا اللَّهُ وَلَدًا وَأَنَا الْإِحْدُ الصَّمَدُ الَّذِي لَمْ أَلِدْ وَلَمْ أُولَدْ وَلَمْ يَكُنْ لِي
كُفُوًا أَحَدٌ۔ ————— احمد، بخاری، مسلم، ابوداؤد، نسائی

१ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च ईश्वर कहता है आदम के बेटे ने मुझे झुठलाया यद्यपि उसे यह न चाहिए था और उस ने मुझे गाली दी यद्यपि उसे यह न चाहिए था। उस का झुठलाना तो यह है कि वह कहता है कि जिस तरह (अल्लाह ने) मुझे पहली बार पैदा किया है वह (मरने के पश्चात्) दोबारा मुझे कदापि नहीं जीवित करेगा हालाँकि मेरे लिए पहली बार पैदा करना उस के दोबारा पैदा करने की अपेक्षा सरल तो न था। और उस का मुझे गाली देना यह है कि वह कहता है कि अल्लाह ने अपना बेटा बनाया है यद्यपि मैं निराधार व सर्वाधार हूँ, न मैं किसी का बाप हूँ और न औलाद और न कोई मेरे बराबर का है।

—अहमद, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसई

१ मेरा वादा है कि मैं लोगो को मृत्यु के पश्चात् पुनर्जीवन प्रदान करूँगा फिर उनके कार्यों का हिसाब लूँगा। परन्तु कुछ लोग मृत्यु के पश्चात् के जीवन का इन्कार करके मुझे झूठा ठहराते हैं और उस महान् उद्देश्य का निषेध करना चाहते हैं जिसके अन्तर्गत इस विश्व की रचना हुई है, हालाँकि यदि वे सोच-विचार से काम लेते तो यह बात आसानी से उनकी समझ में आ सकती थी कि जिस अल्लाह ने उन्हें पहली बार जीवन प्रदान किया है वह उन्हें दोबारा जीवन प्रदान करने में असमर्थ कैसे हो सकता है।

२ यह कहना कि अल्लाह के कोई बेटा है (जैसा कि ईसाई हजरत मसीह अ० को

२ हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह से बढ कर कष्टदायक बात सुन कर सहन करने वाला कोई नहीं, लोग अल्लाह के लिए बेटा ठहराते हैं फिर भी वह उन्हें सुख-शान्ति से रखता और उन्हें रोजी देता है^३ । —बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा प्रभावशाली एव प्रतापवान ईश्वर कहता है . समय को बुरा कह कर आदम का बेटा मुझे कष्ट पहुँचाता है क्योंकि मैं ही समय हूँ मेरे ही हाथ में कार्य कलाप का सूत्र है । मैं ही रात और दिन में उलट-फेर करता हूँ^४ । —बुखारी-मुस्लिम-अहमद

४ हजरत जैद बिन खालिद जुहन्नी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हुदैबिया में वर्षा के पश्चात् जो रात से हो रही थी भोर में प्रात की 'नमाज' पढाई । जब आप 'नमाज' से लौटे तो लोगों की ओर रुख किया और कहा क्या तुम जानते हो कि तुम्सारे 'रब' ने क्या कहा ? बोले अल्लाह और उस का 'रसूल' ज्यादा जानते हैं । कहा उस ने कहा कि मेरे बन्दो मे मे कुछ लोगों ने मुझे माना और कुछ 'काफिर' हो गये । जिस ने कहा कि हम पर अल्लाह की कृपा और उस की दयालुता से वर्षा हुई उस ने मुझे माना और सितारो का इन्कार किया और जिसने कहा कि अमुक नक्षत्रो से हम पर वर्षा हुई है वह मेरा इन्कार

खुदा का बेटा कहते हैं) वास्तव में अल्लाह की महानता का इन्कार है । यदि हम यह स्वीकार कर ले कि उसके औलाद है, तो इस से उसकी यकताई और उसके चिरस्थायी और चिरजीवी होने का निषेध हो जाएगा । फिर हम यह नहीं कह सकते कि वह खुद से कायम (*self subsisting*) सारी सृष्टि का स्थापित करने वाला और स्थिर रखने वाला है ।

३ अल्लाह चाहे तो मनुष्य को उसके दुष्कर्म के कारण तत्काल ही विनष्ट कर दे । उस पर ऐसा वज्र प्रहार हो कि उसकी चीख भी निकल सके, परन्तु यह उस का धैर्य है कि वह अन्यायियों को ढील-परन्धील और मुहलत-पर-मुहलत दिए जाता है और उनकी जीविका का प्रबन्ध भी करता है ।

४ समय (*Time*) का वास्तव में कोई अस्तित्व नहीं है । समय केवल अवास्तविक अथवा सापेक्ष वस्तु है । रात-दिन का चक्र और समस्त क्रिया-कलाप अल्लाह ही के अधिकार में है । मनुष्य यदि दुखो, कष्टो आदि से पीडित होकर समय को बुरा कहता है, तो उसके बुरा कहने की चोट वास्तव में ईश्वर ही पर पडती है, इसलिए कि ससार पर अधिकार और अधिपत्य उसी का है, सारी परिवर्तन-शक्ति उसी के हाथ में है ।

करने वाला और सितारों पर ईमान रखने वाला है^५।

—बुखारी व मुस्लिम

५ हजरत अबूजर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : “सर्वोच्च अल्लाह अपने बन्दे को क्षमा करता है जब तक कि परदा बीच में न आ जाये।” लोगों ने कहा “परदा क्या है ?” कहा “यह कि कोई ऐसी दशा मैं मरे कि ‘मुश्रिक’ (अनेकेश्वरवादी) हो^६।”

—अहमद-बैहकी

५ इस ‘हदीस’ में इस वास्तविकता का उल्लेख किया गया है कि मनुष्य के भाग्य, और हानि-लाभ या वर्षा आदि का निर्णय अल्लाह के हाथ में है। उसके अतिरिक्त कोई दूसरा कार्य-साधक नहीं है। सारा परिवर्तन और क्रिया-कलाप उसी के अधिकार में है। जो-कुछ होता है उसके आदेश से होता है। वही समस्त कार्य का आदिकारण है। वर्षा के अवसर पर उसकी अनुकम्पा को भूल जाना और उसे सितारों और नक्षत्रों का चमत्कार समझना वास्तव में घृष्टता की बात है। भौतिक जगत में तारों, नक्षत्रों आदि की जो वास्तविक स्थिति है उस से इन्कार नहीं, परन्तु अभौतिक रूप शासक ईश्वर ही है। उसी के हाथ में सब-कुछ है, इसलिए हमारा भरोसा उसी पर होना चाहिए और हमारी समस्त आशाएँ और अभिलाषाएँ उसी से सम्बद्ध होनी चाहिए। प्रत्येक अवसर पर हमें उसका ही स्मरण करना चाहिए। ऋग्वेद में है

य एक इद् हव्यश्चर्षणीतामिन्द्र त गीभीरंभ्यनो आभि।

य पत्यने वृष्णय वृष्णयवान्त्स त्य सत्वा पुरुमाया महस्वान्॥

(ऋ० ६/२२/१)।

“जो ईश्वर समस्त मानव ससार का एक ही उपास्य है उसी का इन वाणियों द्वारा भली-भाँति अर्चन करो वही सुख की वर्षा करने वाला सर्व-शक्तिमान, सत्यस्वरूप, सर्वज्ञ और समस्त शक्तियों का अधिपति है।”

६ बन्दे ने जब अल्लाह के अतिरिक्त किसी और को भी अपना ईश्वर समझ लिया और उसे ईश्वरत्व में सहभागी ठहराने लगा और उस से ऐसी आशाएँ करने लगा जैसी आशाएँ केवल अल्लाह से की जानी चाहिए तो उसने अपने और अपने वास्तविक ईश्वर के बीच ऐसी दूरी पैदा कर ली कि वह अल्लाह की दयालुता और क्षमा के योग्य नहीं रहता। यदि वह अपनी नीति बदलदे और एक अल्लाह का उपासक हो जाये, तो अल्लाह उसके अपराध को क्षमा कर सकता है, परन्तु यदि ‘शिक’ (अनेकेश्वरवाद) ही में उसका जीवन समाप्त हो गया, तो फिर वह कर्म कहीं से लाएगा। जो उस दीवार को ढा सके जो उसने अपने अपने और अल्लाह के बीच खड़ी कर ली है।

ऋग्वेद में है य एक इत तमुष्टुहि कृष्टीना विचर्षणि।

पतिज्ञे वृषकूतु ।

“जो ईश्वर एक ही है तू उसी की स्तुति कर, वह सब मनुष्यों का सर्वद्रष्टा सर्वज्ञ है । सुख की वर्षा करने वाला सम्पूर्ण ससार का एकमात्र अधिपति है ।” अथर्ववेद में कहा गया है

“वह ईश्वर न दूसरा है न तीसरा और न चौथा कहा जाता है, वह पाचवाँ, छठा, और सातवाँ भी नहीं कहा जाता है, वह ईश्वर समुच्चय ससारस्थ प्राणि-अप्राणि वर्गों को त्रिविध प्रकार से देखता है । उसे सब मामर्थ्य प्राप्त है । वह अकेला ही वर्तमान है । उसी में पृथ्वी आदि समस्त वर्तमान है ।

(अथर्ववेद १३/४/१६-२१)



दयालुता एवं क्षमाशीलता

عَنْ إِبْرَاهِيمَ بْنِ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ أَبِي النَّاتِقِ أَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: لَمَّا خَلَقَ اللَّهُ الْخَلْقَ كَتَبَ فِي كِتَابِهِ فَهُوَ عَمْدُهُ قَوْقُ الْعَرْشِ إِنَّ رَحْمَتِي تَغْلِبُ عَصَايَ — بحارِ مسلم ترمذی

१ हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा जब अल्लाह ने सृष्टि रची, तो अपनी 'किताब' में लिख दिया, जो 'अर्श' (राज सिंहासन) पर उनके पास मौजूद है "मेरी दयालुता मेरे प्रकोप से बड़ी हुई है।" — बुखारी, मुस्लिम, तिरमिजी

२ हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की मौ दयालुताएँ है जिनमे से उसने केवल एक भाग 'जिन्न' व मनुष्य, चौपायो और छोटे जीव-जन्तुओ मे उतारा जिसके कारण वे परस्पर ममता दिखलाते और एक-दूसरे पर दया करते है। इसी

१. एक 'रिवायत' के शब्द ये है "मेरी दयालुता मेरे प्रकोप की अपेक्षा अग्रसर रही।" अर्थात् अल्लाह की दयालुता को प्रधानता प्राप्त है। वह प्रकोप से बड़ी हुई है। यह उस की दयालुता ही है कि उसने लोगो को पैदा किया, उसके पथ-निर्देशन के लिए 'बह्य' व 'रिसालत' का मिलसिला जारी किया। यह उसकी दयालुता ही है कि वह उपद्रवी और अत्याचारी लोगो को तुरन्त नहीं पकड़ता बल्कि उन्हें सभलने और जुल्म व अन्याय से बचने का पूरा अवकाश प्रदान करता है। वे उसका इन्कार करते हैं फिर भी वह उनके लिए आजीविका का प्रबन्ध करता है। वे उसके पथ-निर्देशन से विमुख होते हैं और उसके 'रसूलो' को कष्ट पहुँचाते हैं फिर भी वह उन पर तुरन्त ही यातना नहीं भेजता बल्कि उन्हें सोचने-समझने का पूरा अवसर देता है। 'आखिरत' मे उसकी दयालुता का पूर्णत प्रदर्शन होगा। उस दिन वह न्याय करेगा। कुरआन करीम मे भी कहा गया है "मेरी दयालुता प्रत्येक वस्तु पर छाई हुई है (अल-आराफ : १५६)"। अल्लाह के यहाँ मौलिक स्थान उसके प्रकोप को नहीं, उसकी दयालुता को प्राप्त है। यह विश्व-व्यवस्था उम की दयालुता और न्याय पर अवलम्बित है। उमका प्रकोप तो केवल उन लोगो पर होता है जो सरकशी और अत्याचार मे बहुत आगे बढ जाते हैं।

के कारण वन पशु अपने बच्चे की ओर झुकता है। और निन्यानवे दयालुता को उसने रख छोड़ा है उन से वह 'कियामत' के दिन अपने बन्दों पर दया करेगा^२।
—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिजी

३ हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० के पास कुछ कैदी आये उन कैदियों में एक स्त्री दीख पड़ी जिसके स्तनो से दूध बह रहा था। वह (अपना बच्चा) खोजती फिरती थी। जब उसे कैदियों में बच्चा मिल जाता उठाकर उसे अपने सीने से लगा लेती और उसे दूध पिलाने लगती। नबी सल्ल० ने हम से कहा तुम्हारा क्या विचार है क्या यह स्त्री अपने बच्चे को आग में डाल सकती है? हमने कहा . नहीं, जबकि उसे यह सामर्थ्य प्राप्त हो कि उसे (आग में) न डाले। इस पर (अल्लाह के रसूल सल्ल० ने) कहा अल्लाह उस से कहीं अधिक अपने बन्दों पर दयालु है जितना यह स्त्री अपने बच्चे पर दयावती है^३।

—मुस्लिम, तिरमिजी

४ हजरत अबूजर गिफारी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा प्रभावशाली एवं प्रतापवान अल्लाह कहता है जो व्यक्ति एक नेकी करेगा उसे उसका दसगुना बदला मिलेगा और मैं और भी उसे प्रदान करूँगा। और जो बुराई करेगा उसे केवल एक बुराई का बदला मिलेगा या मैं क्षमा कर दूँ। और जो मुझ से एक बित्ता निकट होगा, मैं उससे एक हाथ निकट हूँगा। और जो मुझ से एक द्वाथ निकट

२ ससार में जहाँ कहीं जिस रूप में दयालुता और प्रेम का प्रदर्शन होता है वह वास्तव में अल्लाह की उस दयालुता का प्रदर्शन है जो ससार में अवतरित हुई है। अल्लाह की दयालुता एवं अनुकम्पा का पूर्ण प्रदर्शन तो 'आखिरत' में होगा। जो लोग 'आखिरत' की ओर ध्यान नहीं देते, वे अल्लाह की अपार एवं असीम दयालुता से अपने-आपको वंचित कर रहे हैं।

३. यही कारण है कि उसने अपने बन्दों के मार्ग-निर्देशन के लिए 'नबियो' को भेजा और उन पर अपनी 'किताबें' उतारी। फिर भी जो लोग विनाशता ही की ओर बढ़ते हैं और 'कुफ्र' और अधर्म के मार्ग को नहीं त्यागते, उनको वह तुरन्त नहीं पकड़ता बल्कि उन्हें मुहलत-पर-मुहलत देता जाता है, कदाचित्त वे अत्याचार को छोड़ कर सत्य-मार्ग अपना ले। फिर भी जो उसकी दयालुता से अपने को दूर ही रखना चाहते हैं, वह उनके साथ जबरदस्ती भी नहीं करता कि वे तो घृणा ही किए जाये और वह उन्हें बलपूर्वक सीधे मार्ग पर ले आये। अल्लाह जहाँ दयावान और कृपाशील है वही वह स्वाभिमानी और गौरवान्वित भी है।

होगा मैं उससे दो हाथ निकट हूँगा^१। और जो मेरी ओर चलकर आयेगा, मैं उसकी ओर लपकता हुआ आऊँगा, और जो मुझ से घरती के बराबर गुनाह करके मिलेगा मैं उस से उसी जैसी क्षमा के साथ मिलूँगा, शर्त यह है कि उसने किसी को मेरा सहभागी न बनाया हो^२।

—मुस्लिम, तिरमिजी

५ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अपने प्रभावशाली प्रतापवान् 'रब' से रिवायत करते हुए कहा कि एक बन्दे ने गुनाह किया और कहा हे अल्लाह ! मेरा गुनाह क्षमा कर दे। बरकत वाले सर्वोच्च (अल्लाह) ने कहा : मेरे बन्दे ने गुनाह किया और यह समझा कि उसका कोई 'रब' है जो गुनाह को क्षमा करता और गुनाह पर पकड़ता है^३। कुछ समय के पश्चात् उसने फिर गुनाह किया और कहा हे मेरे 'रब' ! मेरा गुनाह क्षमा कर दे। बरकत वाले सर्वोच्च (अल्लाह) ने कहा मेरे बन्दे ने गुनाह किया और समझा कि उसका कोई 'रब' है जो गुनाह को क्षमा करता और गुनाह पर पकड़ता है (यदि मेरी ओर तेरे रुजू करने का यही हाल है) तो अब जो चाहे कर, मैंने तुझे क्षमा कर दिया^४।

—बुखारी, मुस्लिम

- ४ इस 'हदीस' में अल्लाह की दयालुता और क्षमा का उल्लेख जिस सुन्दर ढंग से किया गया है उससे अनुमान किया जा सकता है कि उसकी दयालुता उन बन्दों की ओर लपकने को कितना विह्वल है जो अल्लाह की दयालुता एव कृपा की आशा लिए हुए उसकी ओर बढ़ते और उसकी पुकार पर दौड़ पड़ते हैं।
- ५ इसलिए मेरे इस सेवक का यह हक होता है कि मैं इसकी खताओं को क्षमा कर दूँ और इसको अपनी दयालुता की ओर से निराश न होने दूँ।
- ६ इस 'हदीस' में 'तौबा' से अभिप्रेत दिखाने की 'तौबा' नहीं बल्कि वास्तविक 'तौबा' है। एक 'मोमिन' से गुनाह हो जाता है फिर उसे अल्लाह की प्रभुता और उसका अज़ाब (यातना) याद आता है। वह सच्चे दिल से अल्लाह की ओर पलटता और उससे अपने गुनाहों के लिए क्षमा की प्रार्थना करता है। अल्लाह उसकी गलती को क्षमा कर देता है। मानवीय दुर्बलता और सकल्प की निर्बलता के कारण उससे फिर गुनाह हो जाता है। वह फिर काँप उठता है और अल्लाह के आगे फिर 'तौबा' करता है। वह अल्लाह ही के दिखाये मार्ग पर चलना चाहता है, परन्तु बार-बार उसका कदम डगमगा जाता है किन्तु हर बार वह सँभलता है और सँभल कर अल्लाह के मार्ग पर कदम रखता है। ऐसे व्यक्ति की आत्मा कदापि विकृत नहीं होती। ऐसे व्यक्ति से चाहे कितनी ही बार गुनाह हो वह अपनी 'तौबा' से अल्लाह की क्षमा और दयालुता का अधिकारी बन जाता है।

६. हज़रत सौबान रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना है कि यदि इस 'आयत' के बदले में मुझे पूरी दुनिया मिल जाये तो भी मुझे पसन्द नहीं : 'हे मेरे बन्दो ! जिन्होंने अपने-आप पर ज्यादाती की है अल्लाह की दयालुता (की ओर) से निराश न हो ।' इस पर एक व्यक्ति ने कहा . अच्छा क्या वह व्यक्ति भी, जिसने 'शिक' किया है ? नबी सल्ल० चुप रहे । फिर कहा . सुन लो जिसने 'शिक' किया वह भी, तीन बार कहा^१ । —अहमद

७. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० 'नमाज़' के लिए खड़े हुए, हम भी आपके साथ खड़े हो गए । एक ग्रामीण ने 'नमाज़' में ही कहा . हे अल्लाह ! मुझ पर और मुहम्मद पर दया कर और हमारे साथ किसी दूसरे पर दया न कर । नबी सल्ल० ने सलाम फेरा तो उस ग्रामीण से कहा तूने तो अत्यन्त विस्तृत वस्तु को तग कर दिया^२ । —बुखारी

८. हज़रत जाबिर रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से किसी व्यक्ति को उसका कर्म 'जन्नत' में दाखिल करेगा और न ही ('जहन्नम' की) आग से बचायेगा और मुझे भी नहीं, परन्तु अल्लाह की दयालुता से^३ । —मुस्लिम

९. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब कोई बन्दा अल्लाह के सामने 'तौबा' करता है तो वह अपने बन्दे की 'तौबा' से तुम में से उस व्यक्ति से कहीं अधिक प्रसन्न होता है जिसकी सवारी खाना-पानी सहित किसी चटियल मैदान में छो जाये और वह (परेशान होकर) एक वृक्ष के निकट आकर उसकी छाया में निराश होकर पड़ रहे, तो इसी निराशावस्था में वह पड़ा रहे इस बीच में उसकी सवारी उसके पास आ खड़ी हो, वह उसकी रस्सी पकड़ ले

७. अर्थात् जिन लोगों ने अल्लाह की अवज्ञा कर के अपने-आप पर अत्याचार किया है उन्हें कदापि निराश न होना चाहिए । 'शिक' जैसे बड़े गुनाह को भी अल्लाह क्षमा कर सकता है यदि बन्दा 'तौबा' कर के 'शिक' से बाज़ आ जाये और पूर्ण रूप से अपने को एक अल्लाह की सेवा में दे दे ।

८. अर्थात् अल्लाह की दयालुता तो अत्यन्त विस्तृत थी उसे तूने क्यों केवल दो व्यक्तियों तक सीमित रक्खा ।

९. मनुष्य अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी उपासना में कितना ही प्रयास क्यों न करे, अल्लाह का हक किसी तरह अदा नहीं होता । मनुष्य से कोई न कोई कोताही और भूल-चूक हो ही जाती है । अल्लाह की दयालुता ही है जिसके हमारे मनुष्य 'आखिरत' में उद्धार हो सकता है ।

और हर्ष की अधिकता के कारण बोल उठे हे अल्लाह ! तू मेरा बन्दा है और मैं तेरा रब हूँ । मारे खुशी के असत्य कहने लगे^{१०} । —मुस्लिम

१०. इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : (‘कियामत’ के दिन) अल्लाह ‘मोमिन’ (ईमान वाले) को अपने करीब कर लेगा और अपने संरक्षण की चादर डालकर उसे ढक देगा^{११} । फिर अल्लाह कहेगा : क्या तुम इस गुनाह को जानते हो ? क्या तुम इस गुनाह से परिचित हो ? वह कहेगा हाँ, हे मेरे ‘रब’ ! (मैं जानता हूँ) यहाँ तक कि अल्लाह उस से उसके समस्त गुनाहों का इकरार करा लेगा ।

१० अर्थात् हर्ष में वह कुछ ऐसा खो सा जाये कि उसके मुख से कुछ गलत बातें निकल जायें । इस ‘हदीस’ में अल्लाह की अपार दयालुता का उल्लेख किया गया है । इब्नील में भी अल्लाह की दयालुता और क्षमाशीलता की कुछ सुन्दर उपमाएँ मिलती हैं । एक जगह आया है : ‘तुम क्या समझते हो ? यदि एक व्यक्ति की सौ भैंडें हो और उनमें से एक भटक जाए तो, क्या वह निन्यानवे को छोड़कर और पहाड़ में जाकर उस भटकी हुई भेड़ को न ढूँढेगा ? और यदि ऐसा हो कि उसे पाए तो मैं तुम से सच कहता हूँ कि वह निन्यानवे की अपेक्षा जो भटकी नहीं उस भेड़ के लिए ज्यादा लुशी करेगा । इसी प्रकार तुम्हारा आसमानी बाप यह नहीं चाहता कि इन छोटों में से एक भी विनष्ट हो ।’ (मत्ता १८ १२-१३) ।

एक दूसरी जगह खोई हुई भेड़ की उपमा दे कर कहा गया है : “मैं तुम से सच कहता हूँ कि इसी प्रकार निन्यानवे सत्यवादियों की अपेक्षा जिन्हें ‘तौबा’ की आवश्यकता नहीं एक तौबा करने वाले गुनाहगार के कारण आसमानों पर खुशी होगी ।” (लूका १५ . ७) ।

इसी प्रकार एक हृदयस्पर्शी उपमा उस बेटे की दी गई है जो बहुत ही नालायक था । जिसने पिता से मिली हुई सम्पत्ति बुरे कर्मों में लुटा दी थी । जब वह परेशानी में ग्रस्त हुआ, तो कहा : “अब मैं उठ कर अपने पिता के यहाँ जाऊँगा और कहूँगा कि हे बाप ! मैं आसमान का तेरी दृष्टि में गुनहगार हुआ । जब इस योग्य नहीं कि तेरा बेटा कहलाऊँ ।’ बाप ने अपने नौकरों से कहा : अच्छे-से-अच्छा वस्त्र निकाल कर जल्द इसे पहिनाओ और इसके हाथ में झँगूठी और पाँव में जूती पहिनाओ और पले हुये बछड़े को ला कर जन्ह करो ताकि हम खा कर हर्ष मनायें क्योंकि मेरा यह बेटा मुर्दा था अब जीवित हुआ खो गया था अब मिला है ।” (लूका . १५) ।

११. अर्थात् उसे अपने संरक्षण में ले लेगा और उसे हर प्रकार की रसवाई से बचायेगा ।

और वह अपने जी में समझेगा कि वह (अपने गुनाहों के कारण) अब विनष्ट हुआ। अल्लाह कहेगा : मैंने दुनिया में तेरे इन अवगुणों पर परदा डाला और आज मैं तेरे इन गुनाहों को क्षमा कर दूँगा। उसे उसकी नेकियों का कर्म-पत्र दिया जायेगा। रहे 'काफिर' (अधर्मी जन) और 'मुनाफिक' लोग (कपटी लोग), उन्हें समस्त सृष्टि-जन के सामने बुलाया जायेगा और पुकार कर कहा जायेगा. ये वे लोग हैं जिन्होंने अपने 'रब' से झूठी बातें सम्बद्ध की, जान लो अल्लाह की फिटकार है जुल्म (अत्याचार) करने वालों पर^{१२} !

—बुखारी, मुस्लिम

११ हज़रत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह मेहरबान है और नमी और मेहरबानी को पसन्द करता है और नमी और मेहरबानी (अनुकम्पा) पर वह चीज़ प्रदान करता है जो क्रूरता एवं कठोरता पर नहीं प्रदान करता और न किसी और ही चीज़ पर प्रदान करता है^{१३}।

—मुस्लिम

१२. 'मोमिन' यदि वास्तव में 'ईमान' वाला है। जालिम, अल्लाह का अवज्ञाकारी और विद्रोही नहीं है, तो उस पर 'कियामत' के दिन अल्लाह की विशेष कृपा होगी। मानवीय दुर्बलता के कारण उससे जो कोताही या गुनाह के काम हुये होंगे अल्लाह उनको क्षमा कर देगा। और 'कियामत' के दिन की रसवाई और अपमान से उसे बचा लेगा। इसके विपरीत 'काफिर' और 'मुनाफिक' के लिए 'कियामत' का दिन रसवाई का दिन होगा। वे अपनी करतूतों की सज़ा उस दिन पा कर रहेगे।

१३. मालूम हुआ कि नमी और मेहरबानी की नीति ही अल्लाह को प्रिय है। उसकी विशेष सहायता, योग और समर्थन, उन्हीं लोगों को प्राप्त होती है जो नमी और मेहरबानी से पेश आते हैं। अल्लाह स्वयं मेहरबान है। उसका प्रकोप यदि होता है तो केवल उन लोगों पर जो अत्याचारी और अधर्मी हैं, विनाश ही के अधिकारी हैं। जालिमों और अपराधियों को भी अल्लाह सँभलने और सही मार्ग पर आने का पूरा अवसर प्रदान करता है, परन्तु जब उनकी सरकशी बहुत ज्यादा बढ़ जाती है, तो फिर ईश्वरीय प्रकोप में ग्रस्त हो कर रहते हैं। अल्लाह मेहरबान और दयावन्त है परन्तु इसके साथ वह न्यायशील, गौरवान्वित और स्वाभिमान भी है। उसके स्वाभिमान, गौरव और न्याय को चुनौती दे कर कोई कहीं शरण पा सकता है। दयालुता के साथ जब तक महानता के गुणों से भी अल्लाह को युक्त न माना जाये, प्रभुता की कल्पना अपूर्ण ही रहती है।



अल्लाह की महानता

عَنْ أَبِي مُوسَى الْأَشْعَرِيِّ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ قَالَ قَامَ فِينَا رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بِأَرْبَعٍ فَقَالَ إِنَّ اللَّهَ عَزَّ وَجَلَّ لَا يَنَامُ وَلَا يَسْبِيغُ لَهُ أَنْ يَنَامَ يَخْفِضُ الْقِسْطَ وَيَرْفَعُهُ يُرْفَعُ إِلَيْهِ عَمَلُ اللَّيْلِ بِالنَّهَارِ وَعَمَلُ النَّهَارِ بِاللَّيْلِ — أَحْمَدُ بْنُ حَبَسٍ

१ हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० महते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमारे बीच खड़े होकर चार बातें वयान की प्रतापवान एव सेजोमय अल्लाह सोता नहीं और न यह उसे शोभा देता है कि वह सोये। न्याय-तुला को झुकाता और उसे ऊँचा करता है। रात के कर्म दिन में और दिन के कर्म रात में उसकी ओर उठाये जाते हैं^१।

—अहमद, मुस्लिम, इब्न-माज:

१. अर्थात् अल्लाह कभी अचेत और असावधान नहीं होता। उसको ऊँघ या निद्रा नहीं सताती (अल-बकर २५५)। इस प्रकार की समस्त दुर्बलताओं से वह रहित है। फिर सारे अधिकार उसी के हाथ में हैं। जिसे चाहता है उच्चता प्रदान करता है, जिसे चाहता है नीचे गिराता है। किसी को अधिक रोजी देता है, किसी को कम और नपी-तुली रोजी देता है। उसके फैसले सत्य, न्याय और तत्वदर्शिता (*Wisdom*) की तुला पर पूरे उतरते हैं। उसका कोई फैसला न्याय और इन्साफ से हटा हुआ नहीं होता। और न उसका कोई काम तत्वदर्शिता और शुभहेतु से रहित होता है। यह दूसरी बात है कि अपनी अन्धता के कारण मनुष्य उसके उद्देश्य एव हेतु के समझने में असमर्थ रहे। अल्लाह की महानता और शासनाधिकार ऐसा है कि समस्त कर्म और कारगुजारियाँ उसकी सेवा में पेश होती हैं। वह किसी कार्य से भी बेखबर नहीं है। वह माक्षात् प्रत्येक चीज का ज्ञान रखता है। इसके

२. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह सोता नहीं और न यह उसे शोभा देता है कि वह सोये, न्याय-तुला को झुकाता और उसे ऊँचा करता है। (सृष्टि के जीव आदि और उसके बीच उसके मुख मडल का) तेज एव ताप उस का आवरण है। यदि वह उसे उठा दे, तो उसके श्री मुख का तेज जहाँ तक दृष्टि पहुँचे सबको भस्म कर दे^२। इसके बाद अबू उबैदा रजि० ने कुरआन की इस आयत को पढ़ा. 'जब वह (मूसा) उस के निकट पहुँचा, तो उसे पुकारा गया कि बरकत दी गई उसे जो इस अग्नि में है और जो इसके आस-पास है! और महिमावान है अल्लाह, सारे ससार का पालनकर्त्ता स्वामी^३।'।"

—मुस्लिम, अहमद, इब्न-माज:

३. हजरत अबूजर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "मैं वह कुछ देखता हूँ जो तुम नहीं देखते और वे बातें सुनते हैं जो तुम नहीं सुनते, आसमान चरचरा रहा है और उसे चरचराना ही चाहिए। उस में चार अंगुल स्थान भी ऐसा नहीं है जहाँ कोई 'सजदा' करने वाला 'फिरिश्ता' मौजूद न हो। यदि तुम वे बातें जानते जो मैं जानता हूँ, तो हँसते कम और रोते अधिक और अपने विछौनों पर अपनी स्त्रियों के साथ सुख न भोगते। और सर्वोच्च अल्लाह की ओर चीखते-चिल्लाते मैदानों में निकल जाते। अबूजर रजि० कहते हैं "क्या ही अच्छा होता कि मैं एक वृक्ष होता (जो जड़ से) काट दिया जाता^४।"

—तिरमिज़ा, इब्नमाजा, अहमद

अतिरिक्त 'फिरिश्ते' भी अपनी कारगुजारी और मनुष्यों के कर्म उसके सामने प्रस्तुत करते हैं।

- २ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि लोगो की दृष्टि यदि अल्लाह को देखने में असमर्थ है, तो इसका कारण यह कदापि नहीं है कि बीच में कोई आवरण और अन्धकार है, बल्कि इसका मूल कारण यह है कि अल्लाह की महानता और उसके प्रताप का प्रकाश ही उसका आवरण बन रहा है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश और उसकी चमक ही उसका अपना आवरण बनजाये और कमजोर निगाह का व्यक्ति उसके देखने में असमर्थ रहे। हमारी दृष्टि और नेत्र-ज्योति में यह शक्ति नहीं कि वह अल्लाह के दर्शन का सहन कर सके। हजरत मूसा अ० ने दर्शन की अभिलाषा की थी, परन्तु वे उसका सहन न कर सके और मूर्छित हो कर गिर पड़े और पर्वत चकनाचूर हो गया। (कुरआन सूरा अल-आराफ : १५३)।

३. दे० कुरआन सूरा अन-नमल ८।

४. इस 'हदीस' में अल्लाह के प्रताप, तेज और उसकी महानता और श्रेष्ठता का

४. हज़रत अबू इब्ने रज़ि० से उल्लिखित है कि अन्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'कियामत' के दिन अन्लाह जमीन को अपनी मुट्ठी में लेगा और आसमान को अपने दाहिने हाथ में नपेट कर कहेगा मैं हूँ सम्राट, परन्ती के सम्राट नहीं हूँ ?

५. अब्दुल्लाह इब्न उमर रज़ि० ने उल्लिखित है कि अन्लाह के रसूल मल्ल० ने कहा आदम के बेटों (मनुष्यों) के हृदय कृपाशील ईश्वर की उंगलियों में मेरे दो उंगलियों के बीच में है, वह जैसा चाहता है उन्हें फेरता है। फिर अन्लाह के रसूल मल्ल० ने कहा हे अन्लाह ! हूँ ।

उल्लेख जिन वगैरे में किया गया है वह अत्यन्त प्रभावशाली है। कितनी अप्रत्यक्ष वास्तविकता के दर्शन का प्रभावकारी इन बातों है कि प्रत्यक्ष उनके विषय में कुछ कहने के बदले शास्त्र वाग्वचन पर उनके जो प्रभाव पड़ रहे हो उन्हें जो उनके दर्शन का साधन बनाया जाय। यह 'रसूल' ही था हृदय और उसकी सहन-शक्ति है कि वे अन्विष्ट और परोक्ष सम्बन्धी वास्तविकताओं में प्रत्यक्ष परिचित होंगे हुए भी अपने लोग-दुश्मान को धाँकी रहते हैं। दूसरा कोई इसको महन नहीं कर सकता। दूसरा कोई यदि उन बातों में परिचित हो जाए जिन से 'रसूल' परिचित होगा है, तो उन का कही हान होगा जो इस 'हदीस' में बयान हुआ है। उनके लिए मरार में मनोरंजन की कोई चीज जेब न रहेगी। आसमान में कोई स्थान भी ऐसा नहीं है जहाँ कोई-न-कोई 'फिरिस्ता' अन्लाह की महानता के आगे नतमस्तक न हो और आसमान की हालत यह है कि वह चरचरा रहा है, परन्तु लोगों का हान यह है कि उन्हें इसका कुछ भी ज्ञान नहीं कि क्या हो रहा है और क्या होने वाला है।

५. इस 'हदीस' में कही बात कही गई है जो कुरआन में इन शब्दों में कही गई है : 'अन्लाह जैसा-कुछ है ये लोग उसका अन्दाज़ा नहीं कर सके, उसका हाल तो यह है कि 'कियामत' के दिन यह धरती पूरी-की-पूरी उसकी मुट्ठी में होगी, और आकाश उसके दाहिने हाथ में लिपटे होंगे। महिमावान् है वह और उच्च है उस 'शिक' से जो ये लोग करते हैं (अज़-ज़ुमर आयत ६७)''। इन 'हदीस' और कुरआन की इस 'आयत' में अन्लाह के सामर्थ्य, उसकी शक्ति, प्रभुत्व और उसकी महानता एवं श्रेष्ठता का अनुपम वर्णन है। 'कियामत' के दिन यह वास्तविकता किसी से छिपी न रहेगी कि धरती और आकाश सब-कुछ उसके अधिकार में है। आज धरती में जो लोग शासक एवं सम्राट बने हुए हैं उनका झूठा शासन और उनकी झूठी राजसत्ता उस दिन समाप्त हो चुकी होगी। वे अपनी वास्तविकता से पूर्ण रूप से परिचित हो चुके होंगे।

के फेरने वाले ! हमारे हृदयों को अपने आज्ञापालन की ओर फेर दे ।

—मुस्लिम

६. हज़रत जुबैर बिन मुतइम रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास एक ग्रामीण आया । उस ने कहा : लोगों की जानें मशक्कत में पड़ गईं, बच्चे भूखे हुये, माल तबाह हो गये, चौपाये विनष्ट हो गये, अतः अल्लाह से हमारे लिए वर्षा की प्रार्थना कीजिए । हम अल्लाह के सामने आप की सिफारिश चाहते हैं और आप के सामने अल्लाह की सिफारिश चाहते हैं । इस पर नबी सल्ल० कहने लगे : महिमावान् है अल्लाह ! महिमावान् है अल्लाह ! और यहाँ तक 'तसबीह' करते रहे कि आप के साथियों के मुख पर भी उसका प्रभाव लक्षित होने लगा । फिर आप ने कहा अरे (नादान) : अल्लाह की सिफारिश किसी के सामने नहीं पेश की जाती । अल्लाह का गौरव इस से कहीं उच्च और बढ़ कर है । तू जानता भी है कि अल्लाह का गौरव क्या है ? उस का 'अर्श' (राजसिंहासन) आसमानों पर इस तरह है । आप ने अपनी उँगलियों से गुम्बद की तरह बना कर दिखाया । कहा वह उसकी महानता से इस प्रकार चरचरा रहा है जैसे कजावा सवार के भार से चरचराता है ।

—अबू दाऊद

७. हज़रत उम्मुल अला अनसारिया रज़ि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह की कसम, मैं नहीं जानता, अल्लाह की कसम, मैं नहीं जानता यद्यपि मैं अल्लाह का रसूल हूँ कि मेरे साथ क्या किया जायेगा और तुम्हारे साथ क्या ?

—बुखारी

६. मनुष्य का बाह्य अस्तित्व ही नहीं, उसकी अन्तरात्मा भी अल्लाह के अधिकार में है । वह हमारे दिल को जिस ओर चाहे फेर दे । अल्लाह से इसी की प्रार्थना करते रहना चाहिए कि वह हमारे दिलों को अपनी ओर झुकाए, रखे और हम उसकी बन्दगी और आज्ञापालन से कभी विमुख न हो । मनुष्य को जिस चीज़ की इच्छा होती है, अल्लाह उसके दिल को उसी ओर झुका देता है । मनुष्य स्वयं इसका उत्तरदायी है कि वह किस चीज़ का इच्छुक होता है ।

७. नबी सल्ल० अल्लाह के सच्चे 'रसूल' हैं । आपने अल्लाह की ओर से लोगों को जीवन की वास्तविकता से परिचित किया । उन्हें जीवन की सीधी-सच्ची राह दिखाई, और यह बताया कि एक दिन अल्लाह की अदालत में सब-को उपस्थित होना है । परन्तु तमाम बातों के बावजूद आपको अल्लाह की महानता और गौरव का इतना एहसास है कि उस दिन के बारे में कहते हैं जो फैसले का दिन होगा, जिस दिन अल्लाह अपने पूर्ण तेज एवं प्रताप के साथ

८. हजरत अबू जर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने प्रतापवान एव तेजोमय अल्लाह से रिवायत करते हुये कहा कि वह कहता है . हे मेरे बन्दो ! मैंने अपने ऊपर जुल्म को हराम कर लिया है और उसे तुम्हारे बीच भी हराम (अवैध) किया है, तो तुम एक-दूसरे पर जुल्म न किया करो । हे मेरे बन्दो ! तुम सब राह से भटके हुये हो सिवाय उस के जिसे मैंने राह दिखाई, तो मुझ से पथ-प्रदर्शन के लिए प्रार्थना करो, मैं तुम्हे मार्ग दिखाऊँगा । हे मेरे बन्दो ! तुम सब भूखे हो सिवाय उस के जिसे मैंने खिलाया, तो मुझ से खाना माँगो मैं तुम्हे खिलाऊँगा । हे मेरे बन्दो ! तुम सब नगे हो सिवाय उस के जिसे मैंने वस्त्र पहनाया, तो मुझ से वस्त्र माँगों, मैं तुम्हे पहनाऊँगा । हे मेरे बन्दो ! तुम रात-दिन खताएँ किया करते हो, मैं सब गुनाहों को क्षमा करता हूँ, तो मुझ से क्षमा की प्रार्थना करो, मैं तुम्हे क्षमा कर दूँगा । हे मेरे बन्दो ! तुम कदापि मुझे हानि पहुँचाने की स्थिति में नहीं हो सकते कि मुझे हानि पहुँचाओ । और तुम कदापि मुझे फायदा पहुँचाने की स्थिति में नहीं हो सकते कि मुझे फायदा पहुँचाओ । हे मेरे बन्दो ! यदि तुम्हारे अगले और तुम्हारे पिछले तुम्हारे मनुष्य और तुम्हारे 'जिन्न' तुम में सब से बढ कर (अल्लाह का) डर रखने वाले व्यक्ति के समान हो जाये, तो यह चीज मेरे राज्य में कुछ बढा नहीं सकती । हे मेरे बन्दो ! यदि तुम्हारे अगले और तुम्हारे पिछले, तुम्हारे मनुष्य और तुम्हारे 'जिन्न' तुम में सब से बढ कर दुस्साहसी व्यक्ति के समान हो जाये, तो यह चीज मेरे राज्य में कोई कमी पैदा नहीं कर सकती । हे मेरे बन्दो ! यदि तुम्हारे अगले और तुम्हारे पिछले, तुम्हारे मनुष्य और तुम्हारे जिन्न सब एक मैदान में खड़े हो और मुझ से माँगें और मैं हर व्यक्ति की माँग पूरी करूँ, तो इस से उस में कुछ भी कमी नहीं आ सकती । जो मेरे पास है सिवाय उस के जैसी कमी सूई पैदा करती है जब वह समुद्र में दाखिल होती है । हे मेरे बन्दो ! ये तुम्हारे कर्म ही हैं जिन की मैं तुम्हारे लिए गणना करके रखता हूँ फिर मैं तुम्हे उन को पूरा-पूरा दे दूँगा । फिर जो व्यक्ति अच्छा बदला पाये, तो उसे अल्लाह की 'हम्द' (प्रशंसा) करनी चाहिए । और जो इस के प्रतिकूल (अर्थात् बुरा बदला) पाये उसे अपने-आप को ही मलामत करनी चाहिए" । —मुस्लिम-तिरमिजी

प्रकट होगा . मैं नहीं कह सकता कि ससार को किस स्थिति का सामना करना पड़ेगा । उसका पूर्ण अनुमान करने में मैं भी असमर्थ हूँ । मैं उस भयावह दृश्य का पूर्ण रूप से चित्रण नहीं कर सकता ।

९. इस 'हदीस' से कई बातें प्रकाश में आती हैं । अल्लाह परम स्वतन्त्र और

६ हजरत अबू जर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह कहता है ' हे मेरे बन्दो ! तुम सब गुनहगार हो सिवाय उस के जिसे मैं बचा लूँ, तो मुझ से क्षमा की प्रार्थना करो, मैं तुम्हें क्षमा कर दूँगा । जो व्यक्ति यह जानता है कि मुझे क्षमा कर देने का सामर्थ्य प्राप्त है फिर मेरे सामर्थ्य के बल पर मुझ से क्षमा की प्रार्थना करता है उसे मैं क्षमा कर देता हूँ और कोई परवाह नहीं करता । (हे मेरे बन्दो !) तुम सब राह से भटके हुये हो सिवाय उस के जिसे मैं राह दिखाऊँ, तो मुझ से मार्ग-दर्शन के लिए प्रार्थना करो, मैं तुम्हें (सीधा) मार्ग दिखाऊँगा^६ । और तुम सब मुहताज

निरपेक्ष है । उसको न कोई फायदा पहुँचा सकता है और न हानि पहुँचा सकता है । सब उसके मुहताज और आश्रित हैं । वह किसी का भी मुहताज नहीं है । जिस प्रकार समुद्र में सूई डाल कर निकालने से समुद्र का पानी घट नहीं जाता उसी तरह लोगो को देने से अल्लाह के यहाँ कोई कमी नहीं आ सकती । समुद्र की उपमा तो केवल समझाने के लिए दी गई है, समुद्र तो उसकी महानता के मुकाबले में कुछ भी नहीं है । हमारा कर्तव्य है कि हम अल्लाह के सम्बन्ध से लोगो के साथ अच्छा व्यवहार करें । अल्लाह को जुल्म पसन्द नहीं, हम भी किसी पर जुल्म और अत्याचार न होने दें । मनुष्य अपना उत्तरदायी स्वयं है । जैसे उसके कर्म होंगे उसी के अनुसार अल्लाह उसे प्रतिदान प्रदान करेगा । यदि किसी को अच्छा बदला मिले तो उसे अल्लाह का कृतज्ञ होना चाहिए कि उसने उसके कर्मों को अकारण नहीं किया । उसे अपने रब की 'हम्द' (प्रशंसा) करनी चाहिए कि जो कार्य और शुभ कर्म भी हो सका उसके पालनकर्ता अल्लाह की कृपा और दया ही से हो सका । यदि किसी को अल्लाह के यहाँ बुरा बदला मिलता है और वह वहाँ दण्ड का भागी समझा जाता है, तो उसे अपने को मलामत करनी चाहिए, किसी दूसरे को नहीं । अल्लाह के यहाँ न्याय होता है, अन्याय कदापि नहीं होता ।

६. इस 'हदीस' में पूर्ण रूप से 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का चित्रण हुआ है । यह 'हदीस' बताती है कि मनुष्य का वास्तविक संरक्षक और सहायक केवल अल्लाह है । मनुष्य को उसी पर भरोसा करना चाहिए और सहायता के लिए उसी को पुकारना चाहिए । जिस व्यक्ति ने अल्लाह को अपना मित्र और कार्य साधक बना लिया । वही सफलतापूर्वक जीवन के सीधे मार्ग पर चल सकता है । अल्लाह ही की दया दृष्टि है जो मनुष्य को गुनाहो से बचाती और उसे शुद्धता और पवित्रता प्रदान करती है । जब तक अल्लाह की कृपा न हो कोई भी व्यक्ति जीवन का सीधा मार्ग नहीं पा सकता । उसे न वास्तविकता

हो सिवाय उस के जिसे मैं बेपरवाह कर दूँ, तो मुझ से माँगो मैं तुम्हें बेपरवाह कर दूँगा"। यदि तुम्हारे अगले और पिछले, जिन्दा और मूर्दा, आर्द्र और शुष्क सब मिल कर मेरे बन्दों में सब से अधिक दुष्ट और पाषाण हृदय व्यक्ति के समान हो जाये, तो मेरे राज्य में मच्छर के पंख के बराबर भी कोई कमी नहीं आ सकती और यदि सब मिल कर मेरे बन्दों में सब से अधिक (अल्लाह का) डर रखने वाले व्यक्ति के समान हो जायें तो मेरे राज्य में एक मच्छर के पंख के बराबर भी कोई अधिकता नहीं हो सकती। और यदि तुम्हारे अगले और पिछले, जिन्दा और मूर्दा, आर्द्र और शुष्क सब इकट्ठा हो और उन में से प्रत्येक माँगने वाला मुझ से माँगे जहाँ तक उस की कामना की पहुँच हो, फिर मैं उन में से प्रत्येक माँगने वाले को दे दूँ जो-कुछ वह माँगे, तो इस से मेरे यहाँ कोई कमी न आयेगी जैसे कि तुम में से कोई समुद्र के किनारे से गुजरे और उस में कोई सूई डिबो कर निकाल ले (तो इस से समुद्र के जल में कोई कमी नहीं आती) इसी प्रकार मेरे राज्य में कोई कमी नहीं आती। यह इसलिए कि मैं बड़ा दानशील हूँ, गौरव वाला हूँ^{११}, निरपेक्ष, सर्वाधार हूँ^{१२}, कलाम मेरा प्रदान और कलाम मेरा अजाब है (मुझे कुछ

का ज्ञान हो सकता है और न वह वास्तविकता के अनुसार अपने जीवन को ढाल ही सकता है। पय-प्रदर्शन के लिए अल्लाह ही पर भरोसा करना चाहिए और उसके दिखाये हुये मार्ग पर चलने और उसके आदेशों के अनुपालन को ही अपना परम कर्तव्य समझना चाहिए।

- १० मनुष्य को जो-कुछ प्राप्त है वह अल्लाह ही का दिया हुआ है। सब उसी के आश्रित हैं। मनुष्य को उसी के आगे हाथ फैलाना चाहिए। उसको छोड़कर किसी और को अपना दाता और कष्ट निवारक समझना घोरतम अन्याय है।
११. अर्थात् अल्लाह निरपेक्ष है और परम स्वतन्त्र है, उसके यहाँ किसी चीज की कमी नहीं। वह महान् और और अपार सामर्थ्य व शक्ति का स्वामी है। किसी का विद्रोह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता। दान-व-प्रदान से उसके यहाँ कोई कमी नहीं होती। वह अपने-आप बड़ाई और श्रेष्ठता का अधिकारी है। उसकी महानता और श्रेष्ठता किसी के मानने-न-मानने पर कदापि अवलम्बित नहीं है। यदि कोई उसे मानने से इन्कार करता है, तो इससे उसकी पूर्णता एवं सौन्दर्य में कोई अन्तर नहीं आ सकता।
- १२ यहाँ जिसका अनुवाद निरपेक्ष व सर्वाधिकार किया गया है वह 'समद' शब्द है। समद का मौलिक अर्थ चट्टान होता है। शत्रु के आक्रमण के अवसर पर चट्टान

करना नहीं पड़ता), जब मैं किसी चीज का इरादा करता हूँ, तो बस उसके लिए यह कह देता हूँ कि हो जा, तो वह हो जाती है^{१३}।

—अहमद, मुस्लिम, तिरमिजी

१० हजरत अबू दरदा रजि० में उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की प्रतिष्ठा एवं सम्मान करो, वह तुम्हें क्षमा कर देगा^{१४}।

—अहमद, तबरानी

११ हजरत अदी बिन हातिम रजि० में उल्लिखित है कि एक भाषण-कर्त्ता ने नबी सल्ल० के सामने भाषण दिया। उस ने (भाषण देते हुये) कहा जो अल्लाह और उस के रसूल का आज्ञापालन करेगा

की पनाह ली जाती थी। जबूर (*Psalms*) प्राचीन ग्रन्थों में भी अल्लाह को “चट्टान” और “मदद की चट्टान” कहा गया है। उदाहरणार्थ देखिए जबूर १८ : २, ६२ : २, ६, ६४ : २२। जबूर के ये वाक्य कितने मुन्दर हैं— “मेरी चट्टान और मेरा किला (दुर्ग) तू है। हे मेरे प्रभु! मुझे दुष्ट के हाथ से, कुटिल और निर्मम मनुष्य के हाथ से छुड़ा। क्योंकि हे प्रभुवर, प्रभु तू ही मेरी आशा है” (जबूर ७१ : ३-४)।”

उस नायक अथवा सरदार को भी ‘समद’ कहते हैं जिसके ऊपर कोई और सरदार न हो। अपनी आवश्यकताओं को लेकर जिसकी ओर सब दौड़ते हों और वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कहीं न जाता हो। अल्लाह को ‘समद’ कहने का अर्थ यह है कि वह निरपेक्ष है, दूसरे सब उसी के आश्रित और उपजीवी है। उसे किसी सहायक की आवश्यकता नहीं परन्तु वह स्वयं सबका सहायक, आश्रयदाता और आधार है। मनुष्य की निगाह उठनी चाहिए। तो केवल उसी की ओर उठनी चाहिए। पुकारना चाहिए तो उसे ही और दौड़ना चाहिए, तो उसी की ओर।

१३ अर्थात् कुछ करने के लिए वह साधन एवं सामग्री का मुहताज नहीं। कोई भी काम उसके लिए मुश्किल नहीं। वह सर्वशक्तिमान है। जो बात भी कह दे वह हो जाती है (दे० कुरआन सूरा अल-वकरा आयत ११६, ११७, सूरा आल इमरान आयत ६)। कार्य-कारण की शृंखला आदि को उसके आदेश की प्रतीक्षा होती है, उसे किसी की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। हर चीज का अन्तिम कारण वह स्वयं है।

१४ अर्थात् उसकी महानता और उसके गौरव का हर समय ध्यान रखो, तुम्हारे सिर सदैव उसके आगे झुके हुए हो। अपने जीवन में सदा उसके आदेशों का ध्यान रखो। वह भी तुम्हारी गलतियों को क्षमा करेगा और तुम पर उसकी दया-दृष्टि बनी रहेगी।

वह सीधे मार्ग पर रहा और जिसने उन दोनों की अवज्ञा की . .. इस पर आप ने कहा खड़ा हो जा या चला जा । तू बहुत बुरा भाषण-कर्त्ता है^{१५} ।

१२. हज़रत अबू हुदैर रह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'तुम में कोई व्यक्ति (अपने गुलाम या लौड़ी को) मेरा गुलाम और मेरी लौड़ी न कहे, तुम सब अल्लाह के गुलाम हो और तुम्हारी सारी स्त्रियाँ अल्लाह की लौड़ियाँ (दासियाँ) हैं—बल्कि यो कहे मेरा सेवक और मेरी सेविका और मेरा लडका और मेरी लडकी । और न कोई गुलाम (अपने स्वामी को) मेरा 'रब' (स्वामी) कहे बल्कि 'मेरा सरदार' कहे^{१६} ।

—मुस्लिम

१३ हज़रत अबू हुदैर रह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है श्रेष्ठता मेरी चादर है और महानता मेरी तहमत है । जो व्यक्ति इन दोनों में से किसी एक में मुझ से झगड़ेगा मैं उसे ('जहन्नम' की) आग में दाखिल करूँगा । एक

१५ 'इन दोनों की अवज्ञा की' अर्थात् अल्लाह और उसके 'रसूल' की अवज्ञा की । भाषणकर्त्ता ने अल्लाह और 'रसूल' को एक ही सर्वनाम में जोड़ दिया । इसमें एक प्रकार की समानता का आभास होता है । नबी सल्ल० इसको सहन न कर सके कि अल्लाह की महानता के प्रति कोई तनिक भी असावधानी से काम ल । आपने भाषण देने वाले को सख्ती से टोका कि वह अल्लाह की बड़ाई और उसकी प्रतिष्ठा का पूरा-पूरा ध्यान रखे । मुस्लिम की एक 'हदीस' है कि इस अवसर पर आपने कहा "तू बुरा भाषणकर्त्ता है, तुझे यो कहना चाहिए था कि जो अल्लाह और उसके 'रसूल' की अवज्ञा करे ।" अर्थात् तुझे अल्लाह और 'रसूल' का अलग-अलग जिक्र करना चाहिए था । 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) और अल्लाह की महानता यदि पूर्ण रूप से हृदय में जगह पा ले, तो सर्वनाम का इस प्रकार से प्रयोग क्षमा योग्य समझा जा सकता है, परन्तु कभी-कभी भाषणकर्त्ता और श्रोताओं की स्थिति और उनकी मनोवृत्ति ऐसी होती है कि आवश्यक होता है कि साधारण भूल-चूक पर भी चुप न रहा जाये ।

१६ मतलब यह है कि मनुष्य को सदा अपनी दासता और अल्लाह की प्रभुता एवं महानता को ध्यान में रखना चाहिए । कोई ऐसी बात कदापि नहीं कहनी चाहिए जो बन्दे को शोभा न देती हो या जो अल्लाह की महानता और प्रभुता की अनुभूति से रहित हो ।

रिवायत में है कि मैं उसे ('जहन्नम' की) आग में फेंक दूँगा^{१०} ।

—मुस्लिम

१४ अब्दुल्लाह इब्न अब्बस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : आदम के बेटे (मनुष्य) के समस्त हृदय कृपाशील ईश्वर की दो उँगलियों के बीच एक हृदय की तरह है । वह जिस प्रकार चाहता है उन्हें फेरता रहता है । इसके बाद अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . हे अल्लाह, हृदयों के फेरने वाले ! हमारे हृदयों को अपने आज्ञापालन की ओर फेर दे^{१५} ।

—मुस्लिम

१७. एक 'रिवायत' में "महानता मेरी तहमत है" के स्थान पर "इज्जत मेरी तहमत है" के शब्द आये हैं । 'हदीस' का अर्थ यह है कि जिस प्रकार चादर और तहमत मनुष्य के वस्त्र होते हैं, यह कोई पसन्द नहीं कर सकता कि कोई व्यक्ति उसके वस्त्र को उससे छीन ले । इस तरह महनता एवं श्रेष्ठता और गौरव एवं प्रतिष्ठा अल्लाह के निजी वस्त्र के समान हैं । जो व्यक्ति ससार में अपनी बड़ाई और इज्जत या गौरव का दावेदार है वह वास्तव में अपनी वास्तविकता को भूल कर अपने को ईश्वरत्व का अधिकारी समझता है । वह कदाचित् इस बात से अनभिज्ञ है कि बड़ाई और महानता केवल अल्लाह के लिए है । बन्दे को जो चीज शोभा देती है वह दासता और विनयभाव है । अभिमान, अहंकार और अपने बड़े होने का घमण्ड मानव के लिए घातक ही सिद्ध होता है ।

१८. मनुष्य के बाह्य अस्तित्व ही पर नहीं, उसके अन्तर, उसकी हृदयस्थिति और आंतरिक भावों पर भी अल्लाह का पूर्ण रूप से अधिकार है । वह जिस ओर चाहता है मनुष्य के दिल को फेर देता है । दुर्भाग्य है उन लोगों का जिनके दिल गुनाह और जुल्म और सरकशी की ओर झुके हुये हों, जिनके दिल में भलाई और नेकी के लिए कोई जगह न हो । और भाग्यवान् हैं वे लोग जिन के दिल अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी दासता की ओर झुके हुये हों । अल्लाह उन्हीं लोगों को अपने आज्ञापालन, दासता और प्रेम का सुअवसर प्रदान करता है जो वास्तव में इसके इच्छुक होते हैं । वे लोग जिनको सत्य-असत्य, सुन्दर-असुन्दर और भलाई-बुराई की कोई चिन्ता नहीं, तो अल्लाह को भी ऐसे लोगों की कोई परवाह नहीं होती । वह ऐसे लोगों को विनाश के लिए छोड़ देता है । ^{११} प्रार्थना कि अल्लाह ! हमारे दिलों को अपने आज्ञापालन और दासता की ओर फेर, इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि बन्दा उस मार्ग पर चलना चाहता है जो अल्लाह को प्रिय है । ऐसे लोगों को अल्लाह अवश्य अपनी प्रसन्नता के मार्ग पर चलने का मौभाग्य प्रदान करना है ।

ईश-आत्माभिमान

عَنِ الْمُغِيرَةِ قَالَ قَالَ سَعْدُ بْنُ عُبَادَةَ لَوِ رَأَيْتُ رَجُلًا مَعَ امْرَأَتِي لَضَرَبْتُهِ
بِالسَّيْفِ غَيْرَ مُصَفِّحٍ فَبَلَغَ ذَلِكَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فَقَالَ اتَّعَجِبُونَ
مِنْ غَيْرَةِ سَعْدٍ وَاللَّهِ أَغْيَرُ مِنْهُ وَاللَّهُ أَغْيَرُ مِنِّي وَمِنْ أَجْلِ غَيْرَةِ اللَّهِ حَرَّمَ اللَّهُ
الْفَوَاحِشَ مَا طَهَّرَ مِنْهَا وَمَا بَطَلَ وَلَا أَحَدٌ أَحَبَّ إِلَيَّ الْعُدُومَ مِنَ اللَّهِ وَمِنْ أَجْلِ ذَلِكَ
بَعَثَ الْمُنْذِرِينَ وَالْمُبَشِّرِينَ وَلَا أَحَدٌ أَحَبَّ إِلَيَّ الْيَدْحَةَ مِنَ اللَّهِ وَمِنْ أَجْلِ
ذَلِكَ وَعَدَ الْجَنَّةَ ————— بحار

१. हजरत मुगीरह रजि० से उल्लिखित है कि सअद बिन उबादा रजि० ने कहा कि यदि मैं किसी व्यक्ति को अपनी स्त्री के साथ (अनुचित दशा में) देख लूँ तो तलवार से उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालूँ। यह बात अल्लाह के रसूल तक पहुँची, तो आपने कहा : क्या तुम सअद के आत्म सम्मान पर आश्चर्य करते हो ? अल्लाह की कसम मैं उन से बढ़कर आत्माभिमानी हूँ। और अल्लाह मुझ से बढ़कर आत्माभिमानी है। इसीलिए उसने समस्त अश्लील और निर्लज्जता की बातों को चाहे वे खुली हो या छिपी अवैध कर दिया। इसी प्रकार अल्लाह से अधिक यह बात किसी को प्रिय नहीं कि हुज्जत पूरी हो, इसीलिए उसने ('जहन्नम' से) डराने वाले और

१. जिस प्रकार मनुष्य की गैरत और उसके आत्माभिमान को यह असह्य है कि कोई व्यक्ति उसकी स्त्री पर हाथ डाले और उसकी पत्नी में उसका सहभागी हो, इसी प्रकार अल्लाह की गैरत और उसकी आत्म-प्रतिष्ठा को भी यह असह्य है कि उसके बन्दे ऐसे कर्म करें जो बेगैरती और निर्लज्जता के कर्म हैं। इसीलिए अल्लाह ने खुले-छिपे समस्त बुरे और अश्लीलता के कर्म को अवैध कर दिया

(‘जन्नत’ की) शुभ सूचना देने वाले (‘नबी’) भेजे^२ । और अल्लाह से बढ़ कर प्रशंसा भी किसी को प्रिय नहीं इसीलिए उसने (इस पर) ‘जन्नत’ का वादा किया है^३ ।
—बुखारी

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : बरकत वाला सर्वोच्च अल्लाह आत्माभिमान करता है और अल्लाह का आत्माभिमान यह है कि कोई ‘ईमान’ वाला ऐसा कर्म करे जिसे अल्लाह ने अवैध किया हो (वह अल्लाह को बुरा मालूम होता है) ।
—बुखारी

३. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा है मुहम्मद के समुदाय वालो ! अल्लाह की कसम अल्लाह से अधिक कोई इस बात की गैरत (लज्जा, आत्माभिमान) नहीं रखता कि उसका गुलाम या उसकी लौड़ी (दासी) जिना (व्यभिचार) करे^४ ।
—बुखारी

४ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है . “मैं समस्त सहभागियों में सबसे बढ़कर ‘शिक’ से निरपेक्ष हूँ । जो व्यक्ति कोई कर्म करता और उस में मेरे साथ किसी और को भी साझी कर लेता है, तो मैं उसे और उसके ‘शिक’ को छोड़कर अलग हो जाता हूँ ।” एक ‘रिबायत’ में है कि मैं ऐसे

है । जिना और व्यभिचार की तरह अल्लाह को यह बात भी अप्रिय है कि कोई उसकी बन्दगी, उपासना आदि में किसी को उसका सहभागी बन्धे । अल्लाह अत्यन्त आत्माभिमानि है, वह ‘शिक’ जैसे घृणित कर्म को कभी पसन्द नहीं कर सकता ।

२ अर्थात् अल्लाह को यह बात पसन्द नहीं है कि उसके बन्दे अनजाने में उसके प्रकोप के भागी हो । इसी कारण उसने ‘नबियो’ को भेजा ताकि वे लोगों को सूचित कर दे कि उन्हें क्या चीज अपनानी है और किस चीज से उन्हें बचना है ।

३. अर्थात् अल्लाह को यह बात बहुत ही प्रिय है कि उसके सेवक बन्दे उसकी ‘हम्द’, और उसकी प्रशंसा एवं गुणगान में लगे रहे । उसकी ‘हम्द’ और गुणगान ही जीवन का अभिप्राय और प्राप्ति है और इसी पर ‘जन्नत’ का वादा भी किया गया है ।

४. अर्थात् जिना (व्यभिचार) और अवैध कर्मों में लिप्त होना अल्लाह की गैरत को अत्यन्त अप्रिय है ।

कर्म से बिरक्त है, वह कर्म उसी के लिए है जिसके लिए उसने किया है^५।

—मुस्लिम

५. हज़रत अबू उमामा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह केवल उस कर्म को स्वीकार करता है जो केवल उसी के लिए हो और जिसके द्वारा उसको मुखाकांक्षा की गई हो।

—अबू दाऊद, नसई

६. अता बिन यसार से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : हे अल्लाह ! मेरी कब्र को बुत न बनने देना कि उसकी पूजा की जाने लगे। अल्लाह का उन पर प्रकोप हुआ है जिन्होंने अपने 'नबियों' की

५. अर्थात् अल्लाह की गैरत (आत्माभिमान) इसको कभी पसन्द नहीं कर सकती कि उसके साथ किसी को शरीक किया जाये जबकि कोई उसके बराबर का नहीं है। जो भी है उसका बन्दा और उसका पैदा किया उपजीवी है। फिर किसी भी हैसियत से कोई उसका सहभागी कैसे हो सकता है। अल्लाह को अपने बन्दो और सेवको से निर्लिप्त और शुद्ध बन्दगी और सेवा अभीष्ट है। जिस 'इबादत' और उपासना में 'शिक' मिला हुआ हो या जिस कर्म में अल्लाह के अतिरिक्त किसी दूसरे को प्रसन्न करना अभीष्ट हो उसे अल्लाह के यहाँ कभी भी स्वीकृति प्राप्त नहीं हो सकती। कुरआन में (सूर अन-नूर ३) 'शिक' करने वाले पुरुषों और स्त्रियों और जिना करने वाले पुरुषों और स्त्रियों का उल्लेख एक साथ किया गया है। 'तौरात' और इञ्जील में 'शिक' को स्पष्ट शब्दों में विभिन्न स्थानों पर जिना और व्यभिचार कहा गया है। उदाहरणार्थ देखिए निर्गमन (Ex.) २० : ३-७; ३४. १४-१८, लैव्यव्यवस्था (Lev.) २० ५-८, व्यवस्था विवरण (Deut.) ५ ८-१०, यसायाह (Isaih) ५७ ३-६, यरमियाह (Jer-miah) २ ५-२८, ३ १-६। 'शिक' और जिना में बड़ी समानता पाई जाती है। 'शिक' भी जिना (व्यभिचार) ही की तरह अत्यन्त घृणित कर्म है। इसी लिए कुरआन में 'शिक' को "रिज्स" अर्थात् नापाकी और 'मुशिरक' को "नज्स" (नापाक व अशुद्ध) कहा गया है।

'शिक' करने वाला उस उच्च और आदरणीय स्थान से, जो अल्लाह ने मनुष्य को प्रदान किया है, गिर जाता है। उसकी दशा कुरआन के शब्दों में यह होती है "जो कोई अल्लाह के साथ 'शिक' करे तो मानो वह आकाश से गिर पड़ा फिर चाहे चिड़ियाँ उसे उचक ले जाये या वायु उसे दूरवर्ती स्थान पर (ले जा कर) फेंक दे" (सूरा अल-हज्ज ३१)।

६. अर्थात् ऐसा न हो कि मेरे बाद लोग मेरी कब्र की पूजा करने में लग जायें।

कब्रों को सजदागाह बना डाला^७ । —मालिक (मुरसल रूप में)

७. हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जिसने अल्लाह के सिवा किसी दूसरे की कसम खाई उसने 'शिरक' किया^८ । —तिरमिजी

८. हजरत अबू सईद रजि० और हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि अल्लाह कहता है बड़ाई एव श्रेष्ठता मेरी चादर है और इज्जत मेरी तहमत है । जो व्यक्ति इनमें से कुछ छीनना चाहेगा, मैं उसे यातना दूँगा^९ । —मुस्लिम, अबूदाऊद

९. हजरत जाबिर बिन अतीक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : कतिपय गैरत (आत्माभिमान) सर्वोच्च अल्लाह

७ 'इबादत' और पूजा अल्लाह के सिवा किसी की भी वैध नहीं है । यह अल्लाह ही का हक है कि उसे अपना 'इलाह' (पूज्य) बनाया जाये और उसकी पूजा और 'इबादत' की जाये । जो व्यक्ति अल्लाह के अतिरिक्त किसी और की उपासना और 'इबादत' करता है वह वास्तव में अल्लाह की गैरत (आत्मा-भिमान) को चुनौती देता है । ऐसा व्यक्ति अल्लाह के प्रकोप से कैसे बच सकता है । पिछली जातियाँ जब 'शिरक' (बहुदेववाद) में ग्रस्त हुई और उन्होंने अल्लाह को छोड़ कर अपने 'नबियों' को अपना पूज्य और उनकी कब्रों को सजदागाह बना लिया फिर वे अल्लाह के प्रकोप से न बच सकी ।

८. कसम उसकी खाई जाती है जिसका दिल में असाधारण आदर, सम्मान और जिसकी महानता की अनुभूति हो । अल्लाह के अलावा किसी दूसरे की कसम खाने का अर्थ यह है आदमी अपने व्यवहार से उसे अल्लाह के बराबर स्थान देना चाहता है । इससे बढ़ कर अत्याचार क्या हो सकता है । कसम खाने की आदत को पसन्द नहीं किया गया है । बार-बार और बिना किसी विशेष आवश्यकता के कम-खा कर मनुष्य कसम और जिसकी कसम खाता है उसकी प्रतिष्ठा को घटाता है । यदि किसी कारण कसम खानी ही पड़े, तो मनुष्य को अल्लाह और उसके गुण की कसम खानी चाहिए, किसी और की कसम कदापि न खानी चाहिए । मक्का के लोगो को विशेष रूप से कुरैश वंश के लोगो की आदत थी, वह अपने पूर्वजो की कसम खाया करते थे । नबी सल्ल० ने इस से रोका ।

९. मतलब यह है कि इज्जत, बड़ाई, और महानता वास्तव में अल्लाह ही के लिये है । बन्दे को जो चीज शोभा देती है वह बन्दगी और विनय भाव है न कि झूठी बड़ाई और प्रतिष्ठा का दावा । ऐसे व्यक्ति के लिये अल्लाह के यहाँ अपमानजनक दण्ड है ताकि वह अपने अहंकार का मज्जा चख ले ।

को प्रिय है और कतिपय सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय नहीं है। जो गैरत अल्लाह को प्रिय है वह सन्देह के अवसर की गैरत है^{१०}। और जो गैरत अल्लाह को प्रिय नहीं वह सन्देह के अवसर की गैरत है^{११}। और कतिपय गर्व अल्लाह को प्रिय नहीं और कतिपय गर्व सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय है। जो गर्व सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय है वह मनुष्य का सग्राम के अवसर का गर्व है और उसका 'सदका' (दान) करने के समय का गर्व है^{१२}। और जो गर्व सर्वोच्च अल्लाह को प्रिय नहीं वह उसका जुल्म व सरकशी और बढ़ाई न गर्व करना है।
—अबू दाऊद, नसई

-
- १० अर्थात् जहाँ बदकारी और व्यभिचार का सन्देह या शका हो वहाँ अवश्य आदमी को गैरत और आत्म-प्रतिष्ठा का खयाल होना चाहिए। ऐसी गैरत अल्लाह को प्रिय है इसलिए कि वह स्वयं गैरत वाला है।
- ११ अर्थात् जहाँ किसी बदकारी या किसी अश्लील कर्म का सन्देह या शका न हो वहाँ अपनी गैरत होने का अकारण परिचय देने लगना अशोभनीय और मामाजिक नियम व लोक व्यवहार के प्रतिकूल है, इसलिए उसे अल्लाह कभी पसन्द नहीं कर सकता।
- १२ सत्य-अमत्य के युद्ध के अवसर पर यदि कोई सत्य के लिये लड़ने वाला गर्व करता है वह वास्तव में अल्लाह ही के लिये होता है। इससे धर्म-योद्धाओं का साहस बढ़ता और शत्रु पर उनका रोव छा जाता है। सदका के समय का गर्व यदि वह गर्व अल्लाह के लिये है, मनुष्य को विशाल-हृदय बनाता है और उसे तग दिली से वचाता है। इससे दूसरों में भी सदका करने का जोश उभरता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि गर्व की चीज यदि है तो वह शत्रु के मुकाबले में वीरता और दृढ़ता का प्रदर्शन और अल्लाह के मार्ग में अपना माल खर्च करना या इसी तरह के दूसरे सत्कर्म। ऐसे कर्म जिनके पीछे स्वार्थ के अतिरिक्त कोई उच्च भावना काम न कर रही हो, उन पर गर्व करने के बदले मनुष्य को लज्जित होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं है, तो इसे अज्ञान और निकृष्ट अभिरुचि ही का फल समझना चाहिए।



अल्लाह का हक़

عَنْ مَعَاذِ بْنِ جَبَلٍ قَالَ كُنْتُ رَدَفَ النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لَيْسَ بَيْنِي وَ
بَيْنَهُ إِلَّا مُوْخَرَةُ الرَّحْلِ، فَقَالَ يَا مَعَاذُ بْنُ جَبَلٍ أَقُلْتُ لَنَبِيِّكَ يَا رَسُولَ اللَّهِ وَ
سَعْدَيْكَ ثُمَّ سَارَ سَاعَةً، ثُمَّ قَالَ يَا مَعَاذُ بْنُ جَبَلٍ أَقُلْتُ لَنَبِيِّكَ يَا رَسُولَ اللَّهِ وَ
سَعْدَيْكَ ثُمَّ سَارَ سَاعَةً، ثُمَّ قَالَ يَا مَعَاذُ بْنُ جَبَلٍ أَقُلْتُ لَنَبِيِّكَ يَا رَسُولَ اللَّهِ وَ
سَعْدَيْكَ قَالَ هَلْ تَدْرِي مَا حَقُّ اللَّهِ عَمَّا وَجَلَ عَلَى الْعِبَادِ؟ قَالَ قُلْتُ اللَّهُ وَرَسُولُهُ
أَعْلَمُ، قَالَ فَإِنَّ حَقَّ اللَّهِ عَلَى الْعِبَادِ أَنْ يَعْبُدُوهُ وَلَا يُشْرِكُوا بِهِ شَيْئًا، ثُمَّ سَارَ سَاعَةً
ثُمَّ قَالَ يَا مَعَاذُ بْنُ جَبَلٍ أَقُلْتُ لَنَبِيِّكَ يَا رَسُولَ اللَّهِ وَسَعْدَيْكَ قَالَ هَلْ تَدْرِي مَا
حَقُّ الْعِبَادِ عَلَى اللَّهِ إِذَا فَعَلُوا ذَلِكَ؟ قُلْتُ اللَّهُ وَرَسُولُهُ أَعْلَمُ، قَالَ أَنْ لَا
يَعْبُدُوا إِلَّا اللَّهَ.

بخاری، مسلم

१. हजरत मुआज बिन जबल रज़ि० कहते हैं कि मैं नबी सल्ल० के पीछे एक सवारी पर बैठा हुआ था। और मेरे आपके बीच मैं कजावा का केवल पिछला भाग था। आपने कहा . हे मुआज बिन जबल, मैंने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! मैं आपकी सेवा के लिए बारम्बार हाजिर हूँ। फिर कुछ देर चले, फिर कहा . हे मुआज बिन जबल ! मैंने कहा हे लल्लाह के रसूल ! मैं आपकी सेवा के लिए बारम्बार हाजिर हूँ। फिर कुछ देर चले, फिर कहा हे मुआज बिन जबल ! मैंने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! मैं आपकी सेवा के लिए बारम्बार हाजिर हूँ। आपने कहा : क्या तुम जानते हो कि बन्दो पर प्रतापवान् तेजोमय अल्लाह का क्या हक है ? मैंने कहा : अल्लाह और उसका 'रसूल' अधिक जानते हैं। आपने कहा . 'अल्लाह' का हक बन्दो पर यह है कि वे उसकी 'इबादत' करें और उसके साथ किसी चीज़ को शरीक न करें।" फिर कुछ चले, फिर कहा . हे मुआज बिन जबल ! मैंने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! मैं सेवा में हाजिर हूँ। आपने कहा क्या तुम जानते हो कि बन्दो का अल्लाह पर क्या हक़ है, जबकि वे ऐसा कर दे ? मैंने कहा . अल्लाह और उसका 'रसूल' अधिक जानते हैं। कहा यह कि वह उन्हें यातना न दे'। —बुखारी, मुस्लिम

१. हजरत मुआज रज़ि० को नबी सल्ल० ने तीन बार इसलिए पुकारा ताकि वे पूर्ण रूप से ध्यान देकर आपकी बात सुनें। आपने जो बातें बताई वे ऐसी ही हैं कि उन्हें ध्यान से सुनकर हृदयंगम किया जाये।

यह 'हदीस' बताती है कि अल्लाह का यह हक़ है कि लोग उसकी बन्दगी करें और किसी को उसका सहभागी न बनाएँ। केवल एक अल्लाह के होकर

२ हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : अल्लाह ('कियामत' के दिन) उस जहन्नमी (नरकगामी) से जो सब से कम यातना में होगा, पूछेगा : क्या इस यातना से बचने के लिए तेरे हाथ में घरती की समस्त चीज़ें होती, तो दे देता ? वह कहेगा : हाँ (मेरे पास जो-कुछ भी होता यातना से छुटकारा पाने के लिए दे डालता) । अल्लाह कहेगा : मैंने तो तुझ से बहुत हल्की चीज़ चाही थी जबकि तू आदम की पीठ में था, वह यह कि मेरे साथ किसी चीज़ को शरीक न करना, परन्तु तू न माना और (मेरे हाथ) 'शिक' किया । —बुखारी, मुस्लिम

रहें । जब वे अल्लाह ही के दास और गुलाम हैं, तो फिर उन्हें अपना सम्पूर्ण जीवन अल्लाह ही के आज्ञापालन में व्यतीत करना चाहिए । न उन्हें अपनी तुच्छ इच्छाओं का दास होना चाहिए और न अपने जैसे दूसरे मनुष्यों की दासता स्वीकार करनी चाहिए और न किसी देवी-देवता के आगे अपना सिर झुकाना चाहिए । वे एक अल्लाह के बन्दे हैं, उन्हें एक ही की बन्दगी करनी चाहिए । अल्लाह की बन्दगी और ईश्वरीय इच्छा का अनुपालन हमारी प्रकृति की माँग है । अपनी प्रकृति की माँग की पूर्ति ही से वास्तविक आनन्द की प्राप्ति भी सम्भव है । इस प्रकार अल्लाह की बन्दगी और दासता कोई रस-हीन व्यस्तता नहीं रहती बल्कि वह मनुष्य के लिए परम सुख शान्ति एवं आनन्द का विषय सिद्ध होती है ।

बन्दा यदि अल्लाह के हक को नहीं भूलता, तो उसका अल्लाह भी उसे विनष्ट नहीं होने देता । वह उसे शाश्वत विनाश और 'जहन्नम' की यातनाओं से अवश्य ही बचा लेगा जो उन लोगों के लिए तैयार की गई हैं जो अल्लाह के सरकश और अवज्ञाकारी हैं ।

'रिवायत' से यह भी मालूम होता है कि हज़रत मुआज़ रजि० ने नबी सल्ल० से पूछा था कि क्या मैं लोगों को इसकी शुभ-सूचना दे दूँ ? आपने कहा . 'उनको शुभ सूचना न दो क्योंकि वे इसी पर भरोसा कर बैठेंगे अर्थात् लोग इस भ्रम में पड़ सकते हैं कि 'जहन्नम' से बचने के लिए मुख से अल्लाह के एक होने को मान लेना काफी है ।

२. अर्थात् मैंने तुझ से एक ऐसी चीज़ माँगी थी जो बिल्कुल स्वाभाविक और सहज थी मैंने तुझ से चाहा था कि तू केवल मुझे अपना उपास्य और 'इलाह' समझना और अपने जीवन में किसी को वह स्थान न देना, जो स्थान केवल मेरा है । परन्तु तूने मेरी इच्छा और माँग की उपेक्षा करके विश्वासघात किया । मेरे साथ तू दूसरों की उपासना करने लगा और प्रभुता एवं ईश्वरत्व को विभाजनीय वस्तु बनाकर तूने घोर अन्याय किया ।

३ हजरत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है मेरा और जिन्न व मनुष्य का मामला एक भारी बात बन चुका है पैदा मैं करता हूँ। और वह 'इबादत' (दासता एव उपासना) मेरे सिवा दूसरे को करता है। रोजी मैं देता हूँ और वह कृतज्ञता मेरे सिवा दूसरे के आगे दिखलाता है^३।

४ हजरत सलमान फारसी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रपूज सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है हे आदम के बेटे तीन बातें ऐसी हैं जिनमें से एक का सम्बन्ध तो केवल मेरे साथ है और एक बात ऐसी है जो मेरे और तेरे बीच समन्वित है। जिसका सम्बन्ध मुझ से है वह यह है कि मेरी 'इबादत' कर और मेरे साथ किसी चीज को शरीक न कर, जिस बात का सम्बन्ध तेरे साथ है वह यह है कि तू जो कर्म करे उसका मैं तुझे प्रतिदान दूँ और यदि मैं क्षमा कर दूँ, तो मैं क्षमाशील और दयावन्त हूँ। और जो चीज मेरे और तेरे बीच समन्वित है वह यह है कि तेरा काम प्रार्थना करना और माँगना है और मेरा काम प्रार्थना को स्वीकार करना और देना है^४। —तवरानी अल-कबीर

५. हजरत अबूजर गिफारी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के

३ अर्थात् यह कितनी विचित्र बात है कि लोगो को पैदा करने वाला तो कोई और हो और वे 'इबादत' और उपासना किसी और की करने लगे। रोजी तो उन्हें कोई दे रहा हो और वे कृतज्ञ किसी और के हो। आखिर इससे बढ़कर अप्रिय और असुन्दर बात और क्या हो सकती है।

४ मतलब यह है कि अल्लाह और उसके बन्दो के बीच जो सम्बन्ध एव सम्पर्क है स्वभावतः अपेक्षित यही है कि बन्दे केवल उसी की 'इबादत' और उपासना करे और किसी को उसका सहभागी न बनाये। वे अल्लाह ही को पुकारे और अपनी आवश्यकताओं के लिए उसी से प्रार्थनाएँ करे। और अल्लाह का काम यह है कि वह उनकी पुकार सुने, उनके विनयभाव को स्वीकार करे और उनकी प्रार्थनाओं को स्वीकृति प्रदान करे। यह लोगो की निकृष्टतम पथभ्रष्टता और विश्वासघात है कि वे अल्लाह का हक नहीं पहचानते और अपने सम्पूर्ण विनय भाव और दास्यभाव आदि मन की सुन्दरतम चेष्टाओं एव अनुभूतियों को उनपर निछावर करते हैं जो वास्तव में इसके अधिकारी नहीं होते। वे अपनी आशाओं को उन भूठे-प्रभुओं से सम्बद्ध रखते हैं जो स्वयं उनके अपने घड़े हुये होते हैं। जिनके हाथ में न लोगो की हानि होती है और न लाभ होता है। जो स्वयं उन्हीं की तरह विवश होते हैं।

रसूल सल्ल० ने कहा कर्मों मे सर्वोच्च अल्लाह को सब से प्रिय वह प्रेम है जो अल्लाह के मार्ग मे हो और वह द्वेष और बैर है जो अल्लाह के मार्ग में हो^५ । —अबू दाऊद

६. हजरत अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी किसी बन्दे ने अल्लाह के लिए किसी बन्दे से प्रेम किया, उसने अपने प्रतापवान तेजोमय, 'रब' (पालनकर्त्ता प्रभु) की प्रतिष्ठा की^६ । —अहमद

७. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह 'कियामत' के दिन कहेगा मेरे प्रताप के कारण परस्पर प्रेम करने वाले कहाँ है, आज मैं उन पर अपनी छाया करूँगा, आज मेरी छाया के अतिरिक्त कोई छाया नहीं^७ । —मुस्लिम

८. अबू उमामा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने प्रेम किया अल्लाह के लिए, दिया अल्लाह के लिए और

५. अर्थात् अल्लाह का बन्दे पर एक हक यह भी है कि उसका प्रेम और द्वेष व बैरभाव केवल अल्लाह के लिए हो वह जिस से प्रेम करे अल्लाह ही के लिए करे और यदि किसी से उसे बैर और घृणा हो, तो इसका कारण कोई व्यक्तिगत कलह एव शत्रुता न हो बल्कि उसका बैर और उसकी शत्रुता भी अल्लाह ही के लिए हो ।

६. अर्थात् अल्लाह की बड़ाई और प्रताप की अपेक्षा यह होती है कि मनुष्य को अल्लाह के सत्कर्मी बन्दो से प्रेम और स्नेह हो ।

७. अर्थात् वे लोग कहाँ है जिन्होंने साँसारिक जीवन मे मेरे हक को पहचाना । आज के दिन उन्हे उनकी वफादारियों और सेवाओं का पूरा बदला दिया जायेगा । आज उन्हे मेरी छाया प्राप्त होगी । मेरी दयालुता की छाया के अतिरिक्त और दूसरी कोई छाया नहीं है । मेरे सिवा आज कहीं भी किसी को शरण नहीं मिल सकती । आज उन लोगो पर मेरी कृपा दृष्टि होगी ससार मे जिनकी मित्रता का आधार केवल मेरा प्रताप और मेरी महानता थी । वे न स्वयं अपनी तुच्छ इच्छाओं के दास बने और न किसी और चीज के उपासक थे वे केवल मेरे उपासक थे । उन्हे जिस चीज ने परस्पर जोड़ा था वह परस्पर मेरी प्रतिष्ठा और मेरी बड़ाई की अनुभूति थी । निर्लिप्त और सच्चा प्रेम वही है जो अल्लाह के लिए हो । अल्लाह पवित्रता की चरम सीमा है । जिस मित्रता मे अल्लाह की इच्छा, उसकी प्रतिष्ठा और उसकी महानता का ध्यान न रक्खा गया हो वास्तविकता की दृष्टि मे उसका कोई मूल्य और मान्यता नहीं है ।

रोका अल्लाह के लिए, उसने 'ईमान' को पूर्ण कर लिया^८ ।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

९. हजरत अबूजर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारे पास आए और कहा . क्या तुम जानते हो कि कौनसा कर्म अल्लाह को सबसे अधिक प्रिय है ? कहने वाले ने कहा 'नमाज' और 'जकात' और कहने वाले ने कहा 'जिहाद' । नबी सल्ल० ने कहा सर्वोच्च अल्लाह की दृष्टि में सब से प्रिय कर्म है अल्लाह से प्रेम करना और अल्लाह के लिए द्वेष व बैर रखना^९ ।

—अहमद व अबू दाऊद

१०. हजरत मुआज बिन जबल रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि बरकत वाले, सर्वोच्च अल्लाह का कथन है मेरे लिए परस्पर प्रेम करने वालो, और मेरे लिए एक-दूसरे के पास बैठने वालो, और मेरे लिए एक-दूसरे से मिलने वालों, और मेरे लिए एक-दूसरे पर खर्च करने वालो के लिए मेरा प्रेम आवश्यक हो गया^{१०} ।

—मुअत्ता-इमाम मालिक

११. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने इस आयत "वह इस योग्य है कि उसका डर रक्खा जाये । और

८. अर्थात् मनुष्य के 'ईमान' की माँग है कि उसका सब-कुछ अल्लाह के लिए हो जाये और उसके समस्त कार्य ईश्वरीय इच्छा के अधीन हो जाये । वह किसी से मित्रता का सम्बन्ध जोड़े, तो अल्लाह के लिए जोड़े । किसी से उसका बैर हो, तो उसके पीछे भी अल्लाह को प्रसन्न करने की पवित्र भावना ही काम कर रही हो । किसी को कुछ दे तो अल्लाह के लिए दे और न दे तो यह न देना और हाथ रोक लेना भी अल्लाह के लिए हो । जब तक यह बात पैदा न हो मनुष्य का 'ईमान' पूर्ण नहीं होता और न वह सत्य और न्याय पर स्थिर रह सकता है । मनुष्य का सब-कुछ यदि अल्लाह की इच्छा के अधीन हो जाये, तो वह न तो किसी पर अत्याचार कर सकता है और न किसी के साथ अन्याय की नीति अपना सकता है । और न कभी सत्य एवं न्याय की माँग की उपेक्षा कर सकता है । तिरमिजी में यह 'हदीस' हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है और उसके अन्तिम शब्द ये हैं "उसने अपने 'ईमान' को पूर्ण कर लिया ।"

९. अबू दाऊद में केवल अन्त के शब्दों का उल्लेख हुआ है।

१०. अर्थात् जो लोग मेरी ही प्रसन्नता और मुखाकाक्षा के लिए परस्पर मिलते-जुलते और एक-दूसरे पर अपना माल खर्च करते हैं, मैं उन से अवश्य प्रेम करता हूँ । मेरे ये सेवक मेरी कृपा दृष्टि से कभी वंचित नहीं रह सकते ।

इस योग्य कि क्षमा करे”—के बारे में कहा, अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मैं इस योग्य हूँ कि मेरा डर रक्खा जाये और मेरे साथ मेरे गैर को शरीक न किया जाये । और मैं इस योग्य हूँ कि जो व्यक्ति इस से बचा कि वह किसी को मेरा सहभागी बनाये मैं उसे क्षमा कर दूँ^{११} ।

—इब्न माजह

१२ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : सर्वोच्च अल्लाह 'कियामत' के दिन कहेगा : मैंने तुम्हे हुक्म दिया था तो तुम ने उन आदेशों को अकारथ किया जो मैंने तुम्हे दिए थे और अपने कुल और गोत्र को ऊपर उठाया । आज मैं अपनी श्रेणी ऊँची करूँगा और तुम्हारे वंश-श्रेणी को अकारथ करूँगा । कहाँ हैं (अल्लाह का) डर रखने वाले ? निस्सन्देह अल्लाह की दृष्टि में तुम मे सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुम में सब से अधिक (अल्लाह का) डर रखने वाला हो^{१२} ।

—बैहकी-शोबुल ईमान

१३. हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . बूढ़े मुस्लिम की प्रतिष्ठा एव सम्मान, उस कुरआन-वाहक की प्रतिष्ठा जो कुरआन में अत्युक्ति और ज्यादाती करने वाला न हो, और न्यायशील सुलतान (राज्याधिकारी) की प्रतिष्ठा अल्लाह की प्रतिष्ठा में से है^{१३} ।

—अबू दाऊद, बैहकी-शोबुल ईमान

१४. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('जहन्नम' की) आग में दुर्भागी के अतिरिक्त और कोई न जायेगा । कहा गया : हे अल्लाह के रसूल ! दुर्भागी कौन होगा ? कहा . जो अल्लाह के लिए कोई आज्ञापालन का कार्य न करे और उसके लिए कोई अवज्ञा का काम न छोड़े ।

—इब्न माजह

११ अर्थात् जिसने मेरे हक को पहचाना, मुझ से डरता रहा और 'कुफ़' व 'शिक' की गन्दगियों से अपने-आपको बचाये रक्खा, मैं उसे क्षमा करूँगा और 'जहन्नम' की यातनाओं से बचा लूँगा ।

१२ अर्थात् आज मैं तुम्हारे सारे नस्ली और जाति एव गोत्र आदि सम्बन्धी गर्व को धूल में मिला दूँगा जिसके कारण तुम घरती पर अकड़ते फिरते थे और दूसरो को तुच्छ समझते और उन पर अत्याचार करते रहे थे । आज तुम्हे ज्ञात हो जायेगा कि अल्लाह की दृष्टि में सब से बढकर इज्जत वाला और सन्मानित व्यक्ति वही है जो सब से अधिक अल्लाह के हक और अधिकार को पहचानता हो और अपने मन में उसका डर रखता हो ।

१३. मालूम हुआ कि उनका आदर और सत्कार करना हमारे लिए आवश्यक है, जो इसके

योग्य हो । जिसके मन में उन लोगो का आदर और सम्मान नहीं जो वास्तव में आदर व प्रतिष्ठा का अधिकारी हैं वह जीवन के मौलिक मूल्यों (*Values*) और मान्यताओं से अनभिज्ञ है । इसका जीवन अभी उस अनुभूति और आत्मिक दृष्टि से रहित है जिसके कारण मनुष्य अल्लाह की प्रतिष्ठा करता और उसके प्रताप एवं महानता के आगे अपने को झुका देता है । अल्लाह की प्रतिष्ठा एवं महानता की अनुभूति से अपने हृदय को रिक्त न होने देना और आदरणीय व्यक्तियों का आदर करना वास्तविकता की दृष्टि से मे दो कृति नहीं हैं बल्कि यह एक ही कृति है । चरित्र एवं आचरण की पूर्णता उसी समय सम्भव है जबकि उसमें किसी अवसर पर भी दोष न दीख पड़े ।



अल्लाह से प्रेम

عَنْ أَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ثَلَاثٌ مَنْ كُنَّ فِيهِ وَجَدَ حَلَاوَةَ الْإِيمَانِ: أَنْ يَكُونَ لِلَّهِ وَرَسُولِهِ أَحَبَّ إِلَيْهِ مِمَّا سِوَاهُمَا وَأَنْ يُحِبَّ الْمَرْءَ لَا يُحِبُّهُ إِلَّا لِلَّهِ وَأَنْ يَكْرَهُ أَنْ يَعُودَ فِي الْكُفْرِ كَمَا يَكْرَهُ أَنْ يَقْذِفَ فِي النَّارِ. — بخاری، مسلم

१. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तीन चीज़ें हैं कि जिस व्यक्ति में वे हो उसे 'ईमान' की मिष्ठता प्राप्त होगी, यह कि अल्लाह और उसके 'रसूल' से उसे समस्त अतिरिक्त लोगो से बढ़कर प्रेम हो, वह जिस व्यक्ति से भी प्रेम करे, अल्लाह ही के लिए प्रेम करे और 'कुफ्र' की ओर पलटना उसे उतना ही अप्रिय हो जितना अप्रिय उसे यह बात है कि उसको आग में डाल दिया जाये^१ ।

—दुखारी मुस्लिम

२, हजरत अब्दुर्रहमान बिन अबी कुराद रज़ि० कहते हैं कि एक दिन नबी सल्ल० ने 'वजू' किया । आपके साथी आपके 'वजू' के पानी को अपने शरीर से मलने लगे । नबी सल्ल० ने कहा . तुम ऐसा क्यों कर रहे हो ? उन्होंने कहा : अल्लाह और उसके 'रसूल' के प्रेम के कारण । नबी

१ एक 'रिवायत' के शब्द हैं "तीन चीज़ें ऐसी हैं कि जिस व्यक्ति में हो उसे 'ईमान' की मिष्ठता (मज़ा एव आनन्द) प्राप्त होगा यह कि अल्लाह और उसका 'रसूल' उसे समस्त अतिरिक्त लोगो से बढ़कर प्रिय हो । वह किसी से प्रेम करे तो अल्लाह के लिए और द्वेष करे तो अल्लाह के लिए, और यह कि बड़ी आग भडकाई जाये और वह उसमें गिरा दिया जाये, तो वह उसे अल्लाह के साथ 'शिक' करने के मुकाबले में ज्यादा पसन्द हो (बुखारी व मुस्लिम) ।

अल्लाह का प्रेम वास्तव में 'ईमान' की आवश्यक माँग है । कुरआन में कहा गया है, "और जो लोग 'ईमान' लाये वे अल्लाह से अत्यन्त प्रेम करते हैं" (अल-बकरा, आयत १६५) । एक दूसरी जगह कहा गया (हे नबी !) कह दो , यदि तुम्हारे बाप, तुम्हारे बेटे, तुम्हारे भाई तुम्हारी पत्नियाँ और तुम्हारे घराने के लोग और माल जो तुमने कमाये है, और कारवार जिनके मन्द पड जाने का तुम्हें भय है, और घर जिन्हे तुम पसन्द करते हो, तुम्हें अल्लाह और उसके रसूल और उसके मार्ग में 'जिहाद'

करने से अधिक प्रिय हैं, तो प्रतीक्षा करो यहाँ तक कि अल्लाह अपना फँसला तुम्हारे सामने ले आये और अल्लाह सीमोल्लंघन करने वाले उन लोगो को राह नहीं दिखाता, जो मर्यादा का उल्लंघन करने वाले हैं। (अत-तौबा आयत २४)।

अल्लाह के अस्तित्व में विश्वास रखना और उसे सम्पूर्ण ससार का स्रष्टा, स्वामी, शासक, पूज्य और आराध्य मानना जीवन की किसी कटु वास्तविकता का इकरार नहीं है बल्कि यह इकरार और स्वीकरण वास्तव में हमारे जीवन को अर्थमय बनाता, और उसे वास्तविक आनन्द और जीवन के वास्तविक सौन्दर्य और सूक्ष्म आन्तरिक भावों से परिचित कराता है। 'ईमान' वालों का कर्तव्य है कि वे अल्लाह से सब से बढ़कर प्रेम करें। यह कोई अनिष्ट एवं अप्रिय कर्तव्य नहीं है बल्कि वास्तव में अल्लाह सब से बढ़कर प्रिय सत्ता है। प्रेम-भाव और मन की उमंगों को केवल उसी के चरणों में शान्ति एवं तृप्ति प्राप्त होती है। इसलिए ससार के दूसरे प्रेम-भाव उसके प्रेम के अधीन होने चाहिएँ न कि उस से स्वतन्त्र।

ईश्वर आनन्द रूप है। हमारी आत्माएँ उसी का प्रतिबिम्ब हैं इस कारण वे भी आनन्द रूपी और रस स्वरूप हैं। आनन्द से ही ससार का उद्भव हुआ है। 'आनन्दाद्येव सर्वानि भूतानि जायन्ते' आनन्द ही से सब पैदा होते हैं। गायक अपने आनन्द को गीत में बदलकर उसे प्रत्यक्ष रूप देता है। श्रोता आनन्द लेने के लिए गीत को उसके मूल-रूप आनन्द में बदलता है। इस क्रिया में गायक और श्रोता में एक सरसता और एकात्मता आती है। गायक की तरह आनन्द रूप ईश्वर भी अपने आनन्द को अनेक रूपों में प्रकट करता है। वह संसार रूपी अद्भुत सगीत के प्रत्येक स्वर में अपने को बाँधता है। हमारी साधना यह होनी चाहिए कि हम विश्व रूप सगीत के रहस्य को समझे और इसमें अन्तर्निहित आनन्द से आनन्दित हो। और इस प्रकार विविधता में एकता अथवा अनेक रूपता में एक रूपता (*Unity in diversity*) से परिचित हो जो आनन्दमय कौतूहल का मूल रहस्य हैं। इसी से हम अपने वास्तविक स्वरूप को भी जान सकते हैं। आनन्द का ही दूसरा नाम प्रेम है। प्रेम चेतना का पूर्ण रूप है। यही मुक्ति की चरम स्थिति है। और यही जीवन का वास्तविक ध्येय है। जीवन के सारे प्रयोजन-प्रेमस्थिति को प्राप्त करके ही पूर्णता को प्राप्त होते हैं। प्रेम के ही द्वारा हमें अल्लाह में स्थित रहने का आनन्द प्राप्त होता है और हमारा अल्लाह से गहरा सम्पर्क हो जाता है। यह सम्पर्क केवल ज्ञानात्मक ही नहीं होता बल्कि इस तरह हमारा अल्लाह से रागात्मक सम्बन्ध भी स्थापित हो जाता है। हमारी आत्मा का कल्याण हो जाता है।

सल्ल० ने कहा . जिसको यह पसन्द हो कि वह अल्लाह और उसके 'रसूल' से प्रेम करे या अल्लाह और उसका 'रसूल' उस से प्रेम करे उसे चाहिए कि वह बात-चीत करे तो सच बोले और जब उसके पास अमानत रक्खी जाये तो अमानत को अदा करे और जो कोई उसका पडोसी हो उसके साथ अच्छे प्रतिवास का व्यवहार करे^२ । —बैहकी

३. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अबूजर रजि० से कहा हे अबूजर ! 'ईमान' की कौन सी शाखा सबसे सुदृढ है ? उन्होंने कहा अल्लाह और उसके रसूल अधिक जानते हैं । आपने कहा . अल्लाह के लिए परस्पर मिलना या सम्बन्ध रखना, अल्लाह के लिए प्रेम करना और अल्लाह के लिए द्वेष और बैर रखना^३ ।

—बैहकी-शोबुल ईमान

२. मतलब यह है कि अल्लाह और उसके 'रसूल' से प्रेम करने के लिए यह भी आवश्यक है कि मनुष्य के व्यावहारिक जीवन से उस स्वभाव और चरित्र का प्रदर्शन हो जो अल्लाह और अल्लाह के 'रसूल' को प्रिय है । वह सच्चा और अमानतदार हो और अपने पडोसियों के साथ उसका व्यवहार अच्छा हो । वह न अल्लाह के हक और उसके प्रति अपने दायित्व को भूले और न अल्लाह के बन्दों के हक की उपेक्षा करे । इञ्जील में भी कहा गया है : "तू परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और सारी बुद्धि से प्रेम रख । बड़ा और मुख्य आदेश तो यही है । और दूसरा इसके समान यह है कि तू अपने पडोसी से अपने बराबर प्रेम रख । मैं इन ही दो आदेशों पर सम्पूर्ण 'तौरात' और 'नबियो' के 'सहीफे' (ग्रन्थ) आधारित हूँ ।" (मत्ता २२ : ३७-४०)

एक दूसरी जगह कहा गया है : "तुम परमेश्वर अपने प्रभु से प्रेम रखो और उसके समस्त मार्गों पर चलो और उसके आदेशों को मानो और उस से लिपटे रहो ।" (व्यवस्था विवरण (Deut) ११ . २२) । "अपने सम्पूर्ण मन और सारे प्राण से उसकी सेवा करो" (व्यवस्था विवरण ११ . १३) ।

३. यो तो 'ईमान' की माँग और उसके प्रतीक बहुत से हैं, परन्तु इस सिलसिले की सब से मौलिक चीज यह है कि मनुष्य की मित्रता हो या बैर, जो कुछ भी हो सब अल्लाह के लिए हो । उसकी सारी कामनाएँ, अभिरुचियाँ और चेष्टाएँ अल्लाह ही के लिए हो । उसके सम्पूर्ण जीवन से जो चीज व्यक्त होती हो वह, ईश-प्रेम और प्रभु-कामना के अतिरिक्त कुछ और न हो । अल्लाह की इच्छा और उसकी प्रसन्नता के विरुद्ध कुछ करना उसके लिए असम्भव हो जाए । जो कार्य अल्लाह के लिए होगा वह अवश्य ही न्याय और सच्चाई पर आधारित

४ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि एक आदमी नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित था एक दूसरा व्यक्ति आया और कहा : हे अल्लाह के रसूल ! मुझे इस से प्रेम है । आपने कहा : क्या तुम ने उसे बताया भी ? उस ने कहा नहीं । आपने कहा उसे बता दो . उसने उस व्यक्ति से मिल कर कहा : मैं तुम से अल्लाह के लिए प्रेम करता हूँ । उसने कहा : जिसके लिए तुम मुझ से प्रेम करते हो वह भी तुम से प्रेम करे^५ । —अबू दाऊद

५ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब अल्लाह किसी बन्दे से प्रेम करता है तो 'जिबरील' को बुला कर कहता है कि मैं अमुक व्यक्ति से प्रेम करता हूँ तुम भी उससे प्रेम करो । फिर जिबरील भी उससे प्रेम करने लगते हैं । और आकाश में घोषणा कर देते हैं कि अल्लाह अमुक व्यक्ति से प्रेम करता है तुम भी उससे प्रेम करो, तो आकाश वाले भी उस से प्रेम करने लगते हैं । फिर उसके लिए धरती (वालों के दिलों) में भी स्वीकृति रख दी जाती है । और जब अल्लाह को किसी बन्दे से द्वेष व बैर होता है तो 'जिबरील' को बुला कर कहता है कि मैं अमुक व्यक्ति से द्वेष व बैर करना हूँ तुम भी उससे द्वेष करो । फिर 'जिबरील' भी उससे द्वेष करते हैं और आकाश वालों में घोषणा करते हैं कि अल्लाह अमुक व्यक्ति से द्वेष करता है तुम भी उससे द्वेष करो अतः वे भी उससे द्वेष करने लगते हैं फिर उसके लिए

होगा । जो मित्रता अल्लाह के लिए होगी वह अवश्य ही उन व्यक्तियों से होगी जो वास्तव में मित्र बनाने योग्य होंगे, जो सच्चे, नेक और अल्लाह से डरने वाले होंगे । इसी प्रकार अल्लाह के लिए बैर और विरोध भी उन्हीं लोगों से होगा जो अल्लाह से फिरे हुये, सरकश और अत्याचारी होंगे । जो धरती में बिगाड़ पैदा करते तथा अल्लाह के बन्दों को सीधे मार्ग से भटकाते होंगे ।

४. उस प्रेम-भाव और स्नेह से जो कोई व्यक्ति किसी के लिए अपने मन में पाता हो उसको सूचित करने से मित्रता और प्रेम में और अधिक दृढता और गहराई आ जाती है । दोनों में अत्यन्त अच्छे सम्बन्ध की स्थापना हो जाती है । लोगों में पारस्परिक अच्छे सम्बन्ध हो यह इस्लाम को अभीष्ट है । 'दीन' के दूसरे उद्देश्यों की पूर्ति में भी इस से सहयोग मिलता है । एक दृढ और आदर्श समाज का निर्माण उसी समय सम्भव है जबकि उस समाज के व्यक्तियों में परस्पर एकात्मा और प्रेम पाया जाता हो ।

५. अर्थात् जिस तरह तुम मुझ से अल्लाह के लिए प्रेम करते हो, अल्लाह भी तुम से प्रेम रखे । तुम्हारी गणना अल्लाह के प्रिय सेवकों में हो ।

घरती (वालों के हृदयों) में द्वेष रख दिया जाता है^१। —मुस्लिम

६ हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति को अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक 'सरीया' पर भेजा। जब वे अपने साथ वालों को 'नमाज़' पढ़ाते तो उसे (सूरा) "कुल हु अल्लाहु अहद" पर समाप्त करते। जब वे लोग लौटे अल्लाह के रसूल से उसका जिक्र किया, आपने कहा कि उनसे पूछो कि वे ऐसा किस लिए करते थे? जब उनसे पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि उस में 'रहमान' (कृपाशील ईश्वर) के गुण का उल्लेख हुआ है, उसका पढ़ना मुझे प्रिय है^२। (यह सुन कर) अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा: उन्हें बता दो कि सर्वोच्च अल्लाह उनसे प्रेम करता है^३। —बुखारी, मुस्लिम

६. मतलब यह है कि जो व्यक्ति अल्लाह को प्रिय होता है अल्लाह उसे आकाश और घरती सब में प्रिय बना देता है। हजरत जिबरील अ० जैसे बड़े 'फिरिश्ते' भी उस से प्रेम करने लगते हैं। ऊपरी लोक में उसकी प्रियता की घोषणा कर दी जाती है। घरती पर भी उसका प्रभाव पड़ता है। घरती में ऐसा व्यक्ति चमकते सितारे की तरह होता है। वह लोगों के मन को मोह लेता है। उसके बड़े-से-बड़े शत्रु भी उस से उसकी प्रियता को छीन नहीं सकते। जो लोग उसकी शत्रुता के तत्पर होते हैं उनके विरोध और शत्रुता के पीछे कोई उच्च भावना काम नहीं कर रही होती है। वे केवल अपनी नीचता और सासारिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्वार्थवश उसका विरोध करते हैं। मन में वे भी उसकी बड़ाई स्वीकार करते हैं।

इसके विपरीत जिस व्यक्ति से अल्लाह को उसकी सरकशी और उसके बुरे चरित्र और बुरे कर्म के कारण द्वेष या नफरत होती है वह सारे ससार की दृष्टि में धृणित हो जाता है। न जिबरील अ० को उस से प्रेम होता है और न दूसरे 'फिरिश्ते' को उस से कोई लगाव हो सकता है। उसे घरती के रहने वाले मनुष्यों का प्रेम और स्नेह भी प्राप्त नहीं होता। जो लोग उस से सम्बन्ध और सम्पर्क रखते हैं उनका यह सम्पर्क केवल दिखाने को होता है। वे अपने किसी लाभ और स्वार्थ के लिए उसके साथ होते हैं। उनके हृदय में उसके लिए कोई उच्च स्थान और श्रद्धा कदापि नहीं होती।

७ अर्थात् 'कुलहु अल्लाहु' (सूरा अल-इखलास) में कृपाशील ईश्वर के गुण और उसकी पूर्णता का उल्लेख विशेष रूप से हुआ है जिसके कारण यह सूरा मुझे अत्यन्त प्रिय है। इसीलिए 'नमाज़' में इसी सूरा पर समाप्त करता रहा।

८ अर्थात् उन्हें अल्लाह से प्रेम है इस प्रेम के कारण उन्हें सूरा अल-इखलास से विशेष लगाव है, तो उन्हें इसकी सूचना दे दो कि अल्लाह भी ऐसे व्यक्ति से

७. हज़रत अबू हुसैन रह रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है . जिसने मेरे मित्र से वैर किया मैं उससे युद्ध की घोषणा करता हूँ^६। स्वयं मेरे निर्धारित किये हुये कर्म से बढ़ कर प्रिय चीज़ दूसरी नहीं हो सकती जिसके द्वारा बन्दा मेरा सामीप्य प्राप्त करे^७। मेरा बन्दा 'नफलों' (तद्-अधिक शुभ कर्मों) के द्वारा मुझ से निकट होता रहता है यहाँ तक कि मैं उससे प्रेम करने लगता हूँ। और जब मैं उससे प्रेम करता हूँ, तो मैं उसका कान बन

- प्रेम रखता है जो उस से प्रेम करता और उसे उसके गुणों के साथ याद करता है। किसी बन्दे के लिए इससे बढ़कर श्रेय की बात और क्या हो सकती है ?
८. अर्थात् मेरे आज्ञाकारी और प्रिय सेवक से किसी की शत्रुता वास्तव में मुझ से शत्रुता और विद्रोह है। ऐसा व्यक्ति मुझ से लोहा ले रहा है। ऐसा व्यक्ति अन्त में मुँह की खाता है। कुरआन में इस तरह के प्रकोप का उल्लेख उन लोगों के लिए भी हुआ है जो ब्याज खाने से वाज़ न आयें। कहा गया है 'हे 'ईमान' लाने वालो ! अल्लाह का डर रखो। और जो ब्याज (लोगों पर) रह गया है, उसे छोड़ दो, यदि तुम 'ईमान' वाले हो। यदि तुमने ऐसा न किया तो सावधान हो जाओ कि अल्लाह और उसके 'रसूल' की ओर से तुम्हारे विरुद्ध युद्ध की घोषणा है। अल-बक्रा आयत २७८-२७९।
९. अर्थात् सब से प्रिय कर्म वे हैं जिनको मैंने अपने बन्दों के लिए अनिवार्य किया है, जिनके द्वारा बन्दों को मेरा सामीप्य प्राप्त होता है। मालूम हुआ कि अल्लाह ने हमारे लिए जो चीज़ें अनिवार्य की हैं उनका वास्तविक ध्येय अल्लाह का सामीप्य प्राप्त करना ही है। मनुष्य के जीवन में इस सामीप्य का प्रदर्शन विभिन्न रूप और विभिन्न ढंग से होता है। अल्लाह के करीबी बन्दों को जहाँ एक ओर चरित्र की पवित्रता और कृत्य की महानता प्राप्त होती है वही उन्हें हृदय की वह मृदुलता, माधुर्य आनन्दमय वेदना और वह दिव्य शान्ति भी प्राप्त होती है जिसके मुँहासे में संसार का सारा सुख-वैभव तुच्छ है। उन्हें वह जीवन मिलता है जिसका वादा कुरआन के इन शब्दों में किया गया है : "जिस किसी ने अच्छा कर्म किया, पुरुष हो या स्त्री, यदि वह 'ईमान' पर है, तो हम उसे अवश्य अच्छा जीवन प्रदान करेंगे।"—(अल-नह्ल : ९७)। उस के व्यक्तित्व को वह ज्योति एवं प्रकाशमान जीवन प्राप्त होता है जिसके बारे में कहा गया है : "क्या वह व्यक्ति जो मुरदा था फिर हमने उसे जीवित किया, और उसके लिए प्रकाश कर दिया जिसको लिये हुये वह लोगों के बीच चलता-फिरता है, उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अंधेरो में पड़ा हुआ हो उनसे निकलने वाला न हो।"—अल-अनआम : १२२। इसी प्रकाश एवं

जाता हूँ जिससे वह सुनता है। और उसकी आँख बन जाता हूँ जिससे वह देखता है और उसका हाथ बन जाता हूँ जिससे वह पकड़ता और हमला करता है। और उसका पाँव बन जाता हूँ जिससे वह चलता है। यदि वह मुझ से माँगता है तो मैं उसे देता हूँ। यदि वह मुझ से पनाह का इच्छुक होता है, तो मैं उसे पनाह देता हूँ^{११}। और जिस काम को मैं करने वाला होता हूँ उसमें मुझे संकोच नहीं होता। मुझे संकोच उस 'ईमान' वाले व्यक्ति के प्राण अस्त लेने में होता है जिसे मृत्यु अप्रिय होती है, मुझे उसे तकलीफ पहुँचाना पसन्द नहीं परन्तु इससे किसी हानि में छुटकारा नहीं^{१२}।

—बुखारी

जीवन का प्रदर्शन 'ईमान' और धार्मिक आदेशों एवं नियमों के पालन के रूप में भी होता है। यही प्रकाश है जिस से उसका व्यक्तित्व जगमगा उठता है। "उनका प्रकाश उनके आगे-आगे दौड़ता होगा और उनके दाहिने हाथ में होगा (अत-तहरीम - ८)।" 'ईमान' की सच्चाई और चरित्र की पवित्रता से केवल संसार में ही 'ईमान' वालों का जीवन नहीं जगमगा उठता बल्कि 'आखिरत' में भी उनके व्यक्तित्व का प्रकाश अपने वातावरण को प्रकाशित रखेगा और हथ-क्षत्र से 'जन्नत' की ओर उनका मार्ग-दर्शन करेगा।

११. अल्लाह का प्रिय सेवक अनिवार्य कर्म से भी आगे बढ़कर अल्लाह के मार्ग में चेष्टा करता और अधिक-से-अधिक सत्कर्मों में लगा रहता है। वह 'फर्ज' (अनिवार्य कर्म) के अतिरिक्त 'नपल' कामों में भी भाग लेता और ज्यादा-से-ज्यादा अल्लाह की वन्दगी, उसकी 'इबादत' और उपासना में रत रहता है। ऐसा व्यक्ति अल्लाह का प्रिय वन्दा हो जाता है। अल्लाह की सहायता और सहयोग उसे प्राप्त होता है। फिर उसका सम्पूर्ण जीवन अल्लाह की इच्छाओं के अन्तर्गत व्यतीत होता है। उसका कोई भी काम ईश्वरीय इच्छा के विरुद्ध नहीं होता। उसका चलना-फिरना, देखना-सुनना कर्म-क्षेत्र में आगे बढ़ना आदि, सभी कार्य अल्लाह का इच्छा के अनुसार होने लगते हैं। 'ज़बूर' की भाषा में वह अल्लाह का 'ममसूह' होता है और अपने प्रभु के मुखारविन्दु के प्रकाश में चलता है (ज़बूर *Psalms* ८४ : ९, ८९. १५)। कुरआन करीम में एक जगह कहा गया है (हे 'ईमान' वाले!) तुम ने उन धर्म-विद्रोहियों का वध नहीं किया बल्कि अल्लाह ने उन का वध किया। और (हे 'नबी'!) तुमने नहीं फेंका बल्कि अल्लाह ने फेंका।" इस 'आयत' में अल्लाह ने 'ईमान' वाले और अपने 'नबी' के कर्म को अपना कर्म कहा क्योंकि यह कर्म अल्लाह ही के लिए और उसकी इच्छा के अनुसार था और इसमें अल्लाह का सहयोग व सहायता भी सम्मिलित थी।

१२. मालूम हुआ कि अल्लाह को 'ईमान' वालों से गहरा सम्बन्ध होता है। उसे

अल्लाह का भय

عَنْ أَبِي ذَرٍّ قَالَ قَالَ لِي رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِنَّ اللَّهَ حَيٌّ مَا كُنْتُو
أَصْبَحَ السَّيِّئَةُ الْحَسَنَةُ تَمْحُهَا وَخَالِقُ النَّاسِ يَخْلُقُ حَسَنِينَ . احمد، ترمذی، دارمی

१. हजरत अबू जर रज़ि० कहते हैं कि मुझ से अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जहाँ और जिस हाल में हो, अल्लाह का डर रखो और हर बुराई के पश्चात् नेकी करो, वह उसे मिटा देगी, और लोगों के साथ अच्छे शील-स्वभाव से पेश आओ^१ । —अहमद, तिरमिज़ी, दारमी

२. हजरत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा : तीन चीज़ें विनाशक और तीन चीज़ें मुक्त करने वाली हैं : खुले-छिपे अल्लाह का डर रखना, प्रसन्नता और अप्रसन्नता दोनों ही अवस्था में सत्य बात कहनी और सम्पन्नता व निर्धनता, दोनों ही

यह पसन्द नहीं कि 'ईमान' वालों को किसी तरह की तकलीफ या कष्ट पहुँचे, परन्तु कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं जिनका अपनी 'हिकमत', तत्त्वदर्शिता और महान् उद्देश्यों के कारण वह सहन कर लेता है । उनमें से एक 'मुस्लिम' या 'ईमान' वाले की मृत्यु भी है ।

१. यह नबी सल्ल० का एक संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित उपदेश है । मनुष्य का परम कर्तव्य है कि वह जहाँ और जिस हाल में हो अल्लाह से डरता रहे, कभी कोई ऐसा कार्य न करे जो अल्लाह की अप्रसन्नता का कारण बनता हो । यदि कभी भूल-चूक हो जाये, तो तत्काल अल्लाह के आगे झुक जाये और उस से क्षमा की प्रार्थना करे । और इसके पश्चात् कोई-न-कोई नेकी का काम भी उसे अवश्य कर लेना चाहिए ताकि नेकी से गुनाह और बुराई का प्रभाव उसके मन और मस्तिष्क से मिट जाये और उसकी आत्मा को पुनः पूर्ण शुद्धता प्राप्त हो । कुरआन में भी कहा गया है . "निस्सन्देह नेकियाँ बुराइयों को मिटा देती हैं (सूर. हूद, आयत ११४) ।"

जिस तरह बन्दे पर अल्लाह का हक्क है उसी तरह उस पर अल्लाह के बन्दों का भी हक्क है । अल्लाह के बन्दों के साथ सदा उसका व्यवहार अच्छा

दशा में, सन्तुलित नीति पर स्थिर रहना^३। विनाशक वस्तुएँ हैं : वासना जिसका अनुसरण किया जाये, कृपणता जिसका अनुपालन किया जाये और मनुष्य की आत्मश्लाघा और यह इन में सब से भारी है^४।

—बैहकी : शोबुल ईमान

३ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् तेजोमय अल्लाह ('कियामत' के दिन) हुक्म देगा कि जिस ने किसी दिन मुझे याद किया या किसी जगह मुझसे डरा हो उसे ('जहन्नम' की) आग से निकाल लो^५। —तिरमिजी, बैहकी किताबुल बअस वन्नुशूर

होना चाहिए।

२. जो व्यक्ति खुले-छिपे हर हाल में अल्लाह से डरता और उसकी अवज्ञा से बचता है, चाहे वह किसी से प्रसन्न हो या अप्रसन्न सदा सत्य बात कहता है, उसके मुख से कभी कोई असत्य बात नहीं निकलती; दुख हो या सुख, तगी हो या कुशादगी, प्रत्येक अवस्था में सन्तुलित मार्ग पर स्थिर रहता है, न वह धनवान् होकर व्यर्थ कामों में अपना धन नष्ट करता और न मर्यादाओं का उल्लंघन करता है, और न निर्धनता की अवस्था में वह धैर्य, धर्म और सन्तोष का परित्याग करके किसी अनुचित नीति का पालन करता है। ऐसे व्यक्ति को सासारिक जीवन में भी हार्दिक शान्ति और आत्मिक सन्तोष प्राप्त होगा और 'आखिरत' में भी वह अल्लाह के प्रकोप से बच जायेगा।

३. जो व्यक्ति अल्लाह का आज्ञाकारी न बखकर अपनी तुच्छ इच्छाओं का दास बना रहता है। और अपने में उदारता और दानशीलता की विशेषता पैदा करने के बदले तगदिली, कृपणता, आत्मश्लाघा और अभिमान जैसे रोगों में ग्रस्त हो जाता है वह सासारिक जीवन में भी तबाह व बरबाद होता है 'आखिरत' में भी तबाही के अतिरिक्त उसके हिस्से में कुछ न आ सकेगा। ऐसे व्यक्ति का कोई व्यक्तित्व और कोई चरित्र नहीं होता। वह तो वास्तव में एक बिकाऊ माल होता है जो किसी भी कीमत पर बिक सकता है। इस 'हदीस' में आत्मश्लाघा और खुदपसन्दी को सबसे अधिक बुरा कहा गया है। जब किसी को खुदपसन्दी की बीमारी लग जाती है, तो उसका सीधे मार्ग पर आना असम्भव सा हो जाता है। ऐसा व्यक्ति इस अवस्था में होता ही नहीं कि किसी की कोई भली बात सुन सके। अल्लाह को जो चीज सबसे अधिक अप्रिय और नापसन्द हो सकती है वह यही अहंकार, आत्मश्लाघा और खुदपसन्दी ही है। इसी चीज ने इबलीस का नाश किया और इसी के कारण ससार के कितने ही अभिमानी मारे गये।

४. मतलब यह है कि मनुष्य की मृत्यु यदि इस हालत में हुई है कि वह अल्लाह

४. हजरत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस किसी 'ईमान' वाले बन्दे की आँखों से आँसू निकले, यद्यपि वह मक्की के सिर के बराबर ही क्यों न हो फिर वह वह कर उसके चेहरे पर पहुँच जाये, तो अल्लाह उसे ('जहन्नम' की) आग के लिए निषिद्ध कर देगा^५ ।
—इब्न माजा

५. हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'अल्लाह के भय से रोने वाला व्यक्ति ('जहन्नम' की) आग में नहीं जायेगा जब तक कि दूध स्तन में न वापस हो जाये^६, और अल्लाह के मार्ग की धूल और 'जहन्नम' (नरक) का धुँवाँ एकत्र न होंगे^७ ।
—तिरमिजी

६. हजरत अबू उमामा सुदै बिन अजलात बाहिली रजि० से

और 'रसूल' का मानने वाला था, 'काफिर' और 'मुशिरक' होकर वह नहीं मरा है, तो वह अपने गुनाह या अपने किसी जुल्म और अन्यत्र के कारण भले ही 'जहन्नम' (नरक) में डाल दिया जाये, परन्तु यदि किसी अवसर पर उसने अल्लाह को याद किया है और कभी उसके मन में अल्लाह का डर पैदा हुआ है, तो इसके कारण अवश्य ही किसी न किसी दिन उसे क्षमादान प्राप्त होगा और वह 'जहन्नम' से निकाल लिया जायेगा ।

५. मतलब यह है कि जो चेहरा ईश-भय के कारण बहे हुये आँसुओं से भीगा हुआ हो उसे 'जहन्नम' की आग नहीं छू सकती । इन आँसुओं की यही विशेषता और इनका यही शुभप्रभाव होना चाहिए जिसका उल्लेख इस 'हदीस' में किया गया है । यह दूसरी बात है कि अल्लाह के भय से आँसू बहाने वाला व्यक्ति अल्लाह की अवज्ञा और जुल्म व ज्यादती का कर्म करके स्वयं अपने को अल्लाह की कृपा और दया का अधिकारी न रहने दे

६. कोई व्यक्ति जीवन में अनुचित नीति अपनाकर स्वयं अपने आँसुओं का मूल्य घटा दे, तो दूसरी बात है, यो इन आँसुओं का गुण और इनकी विशेषता यही है जिसका उल्लेख इस 'हदीस' और इससे पहले वाली 'हदीस' में किया गया है । अल्लाह के भय से गिरे हुये आँसू मनुष्य के जीवन को पवित्र बना देते हैं और वह 'आखिरत' में अल्लाह के विशेष सामीप्य और पुरस्कार का अधिकारी हो जाता है । परन्तु जो आँसू जीवन की मलिनता को धो कर उसे निर्मल न कर सकें जिनका मनुष्य के जीवन और उसके चरित्र पर कोई प्रभाव न पड़े, ऐसे आँसू अपना महत्व स्वयं खो देते हैं ।

७. अर्थात् वह व्यक्ति जिसके कदम या जिसके कपड़े अल्लाह की राह में धूल से

उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह को कोई भी चीज प्रिय नहीं जितने दो कतरे (बूँदें) और दो चिह्न प्रिय हैं। एक कतरा आँसुओं का जो अल्लाह के भय से गिरे, दूसरा रक्त का कतरा जो अल्लाह के मार्ग में बहाया जाये। रहे दो चिह्न तो एक चिह्न तो वह है जो अल्लाह के मार्ग में हो और दूसरा चिह्न वह है जो निर्धारित किये हुये किसी कार्य के सिलसिले में हो। —तिरमिजी

७. हजरत अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना : दो आँखें ऐसी हैं जिन को (जहन्नम की) आग नहीं छूयेगी : एक आँख वह जो मध्य रात में अल्लाह के डर से रोई, और दूसरी आँख वह जिसने अल्लाह के मार्ग में निगहबानी करते रात बिताई। —तबरानी

८. हजरत अबू हुंरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . सात व्यक्ति ऐसे हैं कि जिन पर अल्लाह उस दिन छाया करेगा

भर गये हों, जिनमें अल्लाह के 'दीन' को ऊँचा उठाने के लिए दौड़-धूप की हो, वह 'जहन्नम' की आग और उसके धुवों से बचा रहेगा। 'जहन्नम' की आँच कदापि उस तक नहीं पहुँच सकती।

५. अर्थात् रबन की वे बूँदें जो अल्लाह के 'दीन' की रक्षा या उसे ऊँचा उठाने के लिए रण-भूमि में बहाई जायें। सौन्दर्य केवल गुलाब के फूलों ही में नहीं है बल्कि उसे जीवन के अलौकिक सन्तुलन में भी देखा जा सकता है। सौन्दर्य त्याग में भी है, दान में भी है सत्य-मार्ग में असत्य से युद्ध करने में भी है और सत्य की प्रतिष्ठा के लिए रक्त बहाने में भी है।

६. इस 'हदीस' में दो व्यक्तियों को 'जहन्नम' की यातना से मुक्ति पाने की शुभ-सूचना दी गई है एक व्यक्ति तो वह है जो रात में उस समय उठकर अल्लाह के आगे आँसू बहाता और उस से क्षमा की प्रार्थना करता है जब ससार सुख की नींद सो रहा होता है। दूसरा वह 'ईमान' वाला है जिसके जिम्मे सीमा की रक्षा है। वह रातों को अपनी नींद कुरबान करके पहरा देता और दुश्मनों से सरहद को सुरक्षित रखता है। निस्सन्देह ये दोनों व्यक्ति इस योग्य हैं कि अल्लाह 'आखिरत' की यातना को इन से दूर रखे। यह आँसू और यह रात का जागरण अपना विशेष महत्व रखते हैं। ये आँसू इसके साक्षी हैं कि ये जिस के नेत्रों से बहे हैं उसका अपने 'रब' से असाधारण सम्बन्ध है। इसी प्रकार यह जागरण उस प्रेम को प्रदर्शित करता है जो सत्यप्रिय और कर्तव्यपरायण व्यक्ति को 'इस्लाम' और इस्लामी राज्य से होता है। वह उसकी रक्षा के लिए सहर्ष अपनी प्रत्येक सेवार्य प्रस्तुत करता है।

जिस दिन उस की छाया के अतिरिक्त और कोई छाया न होगी^{१०}। न्याय-शील नायक^{११}, वह नवयुवक जिसका अल्लाह की 'इबादत' में पालन-पोषण हुआ^{१२}, वह व्यक्ति जिसका मन मस्जिद में लगा रहे^{१३}, वे दो व्यक्ति जो अल्लाह के लिए परस्पर प्रेम करे, इसी ध्येय से परस्पर इकट्ठा हों और इसी पर एक-दूसरे से अलग हों, वह व्यक्ति जिसे कोई प्रतिष्ठित और सुन्दर स्त्री बुलाये तो वह कहे कि मैं अल्लाह से डरता हूँ^{१४}, वह व्यक्ति जो 'सदका' (दान) करे और उसे इतना छिपाये कि उसके वाये हाथ को न मालूम हो कि दाये हाथ ने क्या दिया^{१५}, और वह व्यक्ति जो एकान्त में अल्लाह को याद करे और उसकी आँखों से आँसू बह जाये^{१६}।

—बुखारी, मुस्लिम

१०. अर्थात् इन सात प्रकार के लोगो पर अल्लाह की विशेष दया होगी। ये 'आखिरत' में हर प्रकार के सकट और दुख से दूर होंगे। उस दिन अल्लाह की दयालुता जिस से रूठ गई उसे कहीं भी शरण न मिल सकेगी।
११. अर्थात् वह शासक और नायक जिसने अपने राज्य में न्याय की स्थापना की और अपने को हर प्रकार के अन्याय और अत्याचार से दूर रखा।
१२. अर्थात् जिस व्यक्ति ने अपनी जवानी अल्लाह की 'इबादत' में गुजारी।
१३. अर्थात् 'नमाज़' उसकी आँखों की ठढक और उसके हृदय की शान्ति बन चुकी हो। मस्जिद से निकलने के बाद भी उसका मन मस्जिद ही में अटका रहता हो कि कब फिर 'नमाज़' का समय आये और वह वहाँ पहुँच कर अल्लाह के आगे अपना सिर झुकाये और उसकी सेवा में 'सजदों' के रूप में मन के कोमल भावों और उमंगों का उपहार भेंट करे।
१४. जब मनुष्य को बुराई की ओर ले जाने वाली सभी चीज़ें मौजूद हो, दिल का शिकारी पूरे सामान के साथ शिकार को आया हो, सौन्दर्य हो, प्रतिष्ठा हो, सम्मान हों, यौवन हो, और सौन्दर्य स्वयं आमन्त्रण दे रहा हो, ऐसी अवस्था में केवल अल्लाह का भय ही किसी को बुराई से बचा सकता है। ऐसे समय में भी यदि कोई अल्लाह के डर से बुराई के निकट नहीं जाता, तो निश्चय ही उसका 'ईमान' पूर्ण है और वह इस योग्य है कि उसे 'आखिरत' में ईश्वरीय छाया प्राप्त हो।
१५. अर्थात् बहुत ही गुप्त रूप से 'सदका' (दान) करे कि किसी को खबर न हो। यह उसी समय सम्भव है जब मनुष्य को झूठी प्रतिष्ठा और झूठी ख्याति का लोभ न हो बल्कि वह केवल अल्लाह की कृपान्विता और उसकी दयालुता की ही अभिलाषा रखता हो।
१६. कोई व्यक्ति क्या है? इसका प्रदर्शन सबसे अधिक तब समय होता है जबकि

६. हज़रत अबू जर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उनसे कहा : तुम न किसी गोरे से अच्छे हो और न काले से । यह दूसरी बात है कि (अल्लाह का) डर रखने के कारण तुम्हें किसी की अपेक्षा श्रेष्ठता प्राप्त हो^{१०} ।
—अहमद

१०. हज़रत मुआज बिन जबल रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोगो में सबसे अधिक मेरा सामीप्य (अल्लाह का) डर रखने वालों को प्राप्त है, वे जो भी हो और जहाँ-कहीं भी हों^{११} ।
—अहमद

वह अकेला होता है और उसे देखने वाला दूसरा कोई नहीं होता । यदि ऐसे समय में भी वह अल्लाह को याद करे, उसके भय से काँपे और उससे सहायता चाहे, तो यह उस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण होगा कि उसकी 'इबादत' और बन्दगी संग्रह को दिखाने के लिए नहीं है बल्कि सच-मुच वह अल्लाह में विश्वास रखता है और अल्लाह की बड़ाई और उसकी महानता का उसे पूरा ज्ञान है । अल्लाह उसके लिए कोई निर्जीव कल्पनामात्र नहीं है बल्कि अल्लाह उसकी दृष्टि में सब ने व्यापी मत्ता और चेतना का मूल उद्गम है । वह उसके जीवन में पूर्णतः सम्मिलित हो चुका है । यदि वह लोगो से कहता है कि मैं एक अल्लाह का मानने वाला हूँ, तो निश्चय ही वह अपने दावे में सच्चा है । ऐसे व्यक्ति को यदि अल्लाह का सामीप्य प्राप्त न होगा, तो किसे होगा ।

१७. अर्थात् रंग, नस्ल या देश के आधार पर किसी को बड़ाई और श्रेष्ठता प्राप्त नहीं हो सकती । बड़ाई का वास्तविक आधार अल्लाह का डर, धर्मपरायणता और समय है । सब से श्रेष्ठ वही है जो सब से अधिक अल्लाह से डरने वाला और उसकी अवज्ञा में बचने वाला हो । यही बात कुरआन ने इन शब्दों में कही है “हे लोगो ! हमने तुम्हें पैदा किया एक पुरुष और एक स्त्री से और तुम्हारी बहुत सी नस्लें और कबीले बनाये, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचान सको । अल्लाह के यहाँ तो तुम में सब से अधिक प्रतिष्ठित वह है जो तुम में सब से अधिक (अल्लाह का) डर रखने वाला है । निस्सन्देह अल्लाह जानने वाला और खबर रखने वाला है (सूरा अल-हुजुरात १३) ।”

१८. नबी सल्ल० ने यह बात उस समय कही थी जब आप मुआज बिन जबल रजि० को यमन का काज़ी या कर्मचारी बनाकर भेज रहे थे । हज़रत मुआज रजि० अपनी सवारी पर थे और आप उनकी सवारी के साथ पैदल चल रहे थे । जब आप उन्हें आवश्यक उपदेश और जरूरी आदेश दे चुके, तो कहा मुआज ! बहुत सम्भव है मेरे जीवन के इस वर्ष के पश्चात् फिर तुम्हारी मुझ से मुलाकात न हो । और कदाचित् ऐसा हो कि तुम इस मज्जिद और मेरी कब्र :

अल्लाह के प्रति अच्छा गुमान

عَنْ أَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ، قَالَ اللَّهُ عَزَّوَجَلَّ أَنَا عِدَّةٌ ظَنِّ
عَبْدِي بِي فَلْيُظَنَّ بِي مَا يَشَاءُ ————— سَمِعِي، طِبْرَانِي وَالْكُفْرِي

१ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह कहता है कि मैं अपने बन्दे के गुमान (ख्याल व अनुमान) के साथ हूँ, वह जैसा चाहे मुझसे गुमान कायम कर ले^१ । —बैहकी, तबरानी-कबीर

२ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा सर्वोच्च अल्लाह कहता है : मैं अपने (सेवक) के

पास गुजरो । यह सुनकर हजरत मुआज रजि० रोने लगे । फिर रसूल सल्ल० ने उनकी ओर से मुख फेर कर मदीना की ओर कर लिया और कहा “लोगों में मुझ से सबसे ज्यादा करीबी लोग वे हैं जो अल्लाह का डर रखते हैं, वे जो भी हों और जहाँ कहीं हो ।” मतलब यह कि मेरे साथ सम्बन्ध का मूल आधार अल्लाह का डर और धर्मपरायणता है । यदि कोई अल्लाह से डरता और उसकी अवज्ञा से बचता है, तो भले ही देखने में वह मुझ से दूर हो परन्तु वास्तव में वह मुझसे दूर नहीं है । वह मुझ से करीब है और ‘आखिरत’ के शाश्वत जीवन में दोनों एक साथ होंगे । परन्तु यदि किसी के हृदय से अल्लाह का भय ही निकल जाये, तो चाहे शारीरिक रूप से वह मुझ से करीब हो, परन्तु वास्तव में वह मुझ से दूर है और मैं उस से दूर हूँ । इस तरह आपने हजरत मुआज रजि० को तसल्ली दी कि उन्हें जुदाई का अधिक गम न होना चाहिए । बल्कि अधिक-से-अधिक चिन्ता इस बात की करनी चाहिए कि जीवन धर्मनिष्ठा, ईश-प्रतिष्ठा और अल्लाह के भय से वंचित न हो ।

१ अल्लाह का यह हक है कि उसका बन्दा (सेवक) उसके साथ अच्छा गुमान रखे । बन्दा अल्लाह के साथ जैसा गुमान और अनुमान करता है, अल्लाह उसी के अनुसार उस से मामला करता है । बन्दा अल्लाह के साथ क्या गुमान व ख्याल रखता है, यह इस बात की पहचान होती है कि उसकी विचार एवं

गुमान (खयाल व अनुमान) के साथ हूँ और जब वह मुझे पुकारता है, तो मैं उसके साथ होता हूँ । —तिरमिजी

३. हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह का कथन है मैं अपने बन्दे (सेवक) के गुमान के साथ हूँ । यदि वह (मुझ से) अच्छा गुमान करे, तो उसी के लिए अच्छा है और यदि बुरा गुमान कायम करे, तो यह उसी के लिए बुरा है । —अहमद

४. हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि प्रतापवान् एवं तेजोमय अल्लाह कहता है “मैं अपने बन्दे (सेवक) के गुमान के साथ हूँ । मैं उसके साथ होता हूँ जहाँ वह मुझे याद करता है” । और अल्लाह की कसम अल्लाह अपने बन्दे (सेवक) की ‘तौबा’ से उससे अधिक प्रसन्न होता है जितना कि तुम में से कोई अपने खोये हुये ऊँट को चटियल मैदान में पाकर होता है । और (वह कहता है) जो मुझसे एक बालिश्त करीब होता है मैं उससे एक हाथ करीब होता हूँ । और जो मुझसे एक हाथ करीब होता है मैं उससे दो हाथ करीब होता हूँ । और जो मेरी ओर चलकर आता है, मैं उसकी ओर दौड़ कर आता हूँ^२ । —बुखारी, मुस्लिम

५. हज़रत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है . मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूँ वह जैसा मेरे साथ गुमान रखे^३ । मैं उसके साथ होता हूँ जब वह मुझे याद करता है । यदि वह मुझे अपने जी में याद करता है, तो मैं भी उसे अपने जी में याद करता हूँ और यदि वह किसी समूह में मुझे

व्यवहार सम्बन्धी दशा कैसी है ? अल्लाह की कृपा और उसके अनुग्रह का अधिकारी कोई व्यक्ति उसी समय हो सकता है जबकि वह अल्लाह के साथ अपने सम्बन्ध और कर्म को ठीक कर ले । अल्लाह के बारे में अच्छा गुमान रखे और उसके आदेशानुपालन में ही अपना जीवन व्यतीत करे । इस दशा में अवश्य ही उसका गुमान और उसकी आशा वास्तविकता के अनुरूप ही होगी ।

२ इस ‘हदीस’ से अल्लाह की अपार दयालुता प्रदर्शित होती है । बन्दा जब अल्लाह की ओर रुख करता और उसकी ओर ध्यान देता है, तो उससे कहीं अधिक अल्लाह की कृपा-दृष्टि उसकी ओर होती है ।

३ अर्थात् वह मेरे बारे में जैसा खयाल व गुमान रखता है, मैं उसके लिए वैसा

याद करता है, तो मैं भी उसे ऐसे समूह में याद करता हूँ जो उन से अच्छा हैं।

—बुखारी, मुस्लिम

६ हज़रत जाबिर रजि० कहते हैं कि मैंने नबी सल्ल० से आपके स्वर्गवास से तीन दिन पहले सुना, आप कहते थे कि तुम में से किसी को मृत्यु न आये परन्तु इस अवस्था में कि वह प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह के साथ अच्छा गुमान रखता हो।

—मुस्लिम

ही हूँ। मेरा मामला और व्यवहार उसके साथ उसके गुमान के अनुरूप ही होता है।

४. अर्थात् मैं उसका जिक्र और उसकी चर्चा उस मजलिस में करता हूँ जिस में 'फिरिश्ते' और स्वर्गवासी 'नबिया' और 'ईमान' वाले की आत्माएँ मौजूद होती हैं। ऐसी सभा और मजलिस से अच्छी कौन-सी मजलिस हो सकती है।
५. अर्थात् मृत्यु के समय मनुष्य को अल्लाह से क्षमा और दयालुता की आशा रखनी चाहिए।

—

अल्लाह का आज्ञापालन

عَنِ الْمُهَاجِرِينَ حَيْثُ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ، قَالَ اللَّهُ
تَعَالَى، إِنِّي لَسْتُ كَلَامٍ الْحَكِيمُ اتَّقَبَلُ وَلَكِنِّي اتَّقَبَلُ هَمَّةً وَ
هَوَاهُ، فَإِنْ كَانَ هَمُّهُ وَهُوَ اهْتِزَاجِيٌّ جَعَلْتُ صَمْتَهُ حَمْدًا لِي وَ
وَقَارًا وَإِنْ لَمْ يَتَكَلَّمْهُ ——— دَارِي

१ हजरत मुहाजिर इब्न हबीब रजि० कहते हैं कि अल्लाह के
रसूल सल्ल० ने कहा कि अल्लाह कहता है मैं मनीषी (हकीम) की
प्रत्येक वाणी (कलाम) को स्वाकार नहीं करता, परन्तु मैं उसके सकल्प
और इरादे को स्वीकार करता हूँ (यदि वह स्वीकार करने योग्य है) ।
यदि उसका सकल्प मेरे आज्ञापालन में है, तो मैं उसके मौन को अपनी
प्रशंसा ('हम्द') और प्रतिष्ठा निर्धारित करता हूँ यदि वह बातें न करे' ।

—दारमी

२ हजरत अबू हुदैरह रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने
कहा कि तुम्हारा प्रतापवान एव तेजोमय 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी)

१. मतलब यह है कि कोई कितना ही बड़ा बुद्धिमान और ज्ञानी क्यों न हो, मेरी
दृष्टि उसकी वाणी से अधिक उसकी भावनाओं, उसके सकल्प और उसकी
हृदयस्थिति को देखती है । यदि उसका सकल्प निर्दोष और उसकी भावनाएँ पवित्र
हैं, तो मैं उन्हें स्वीकार कर लेता हूँ । यदि उसके यहाँ मेरे आज्ञापालन के अतिरिक्त
कोई और भावना काम नहीं कर रही है, तो उसकी बात-चीत ही नहीं, उसका
मौन भी मेरी दृष्टि में मेरी प्रशंसा और प्रतिष्ठा करने के समान है । हर चीज
के बाह्य रूप से अधिक मैं उसकी वास्तविकता को देखता हूँ । यदि किसी की
वाणी तो बहुत सुन्दर और ज्ञानगर्भित है, परन्तु उसका मन अपवित्र और मेरे
प्रेम और भय से रहित है, और वह मेरी दासता के बदले अपनी ही इच्छाओं
का दास बना हुआ है, तो ऐसी दशा में उसकी सुन्दर-से-सुन्दर वाणी का मेरे
यहाँ कोई मूल्य नहीं ।

कहता है : यदि मेरे बन्दे मेरी आज्ञा का पालन करे, तो मैं उन पर रात में मेह बरसाऊँ (जबकि वे सो रहे हों) और दिन को सूर्य निकालूँ और बादल के गरजने की आवाज उन्हें न सुनाऊँ^२ । —अहमद

३. हजरत अली रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक छोटी सी सेना तैयार की और 'अनसार' में एक व्यक्ति को उसका नायक बनाया और उन (सैनिकों) को हुक्म दिया कि उसकी बात सुनें और उसके आदेश का पालन करे। उन्होंने किसी बात पर उसे क्रुद्ध कर दिया। उसने (क्रोध में) हुक्म दिया कि मेरे पास लकड़ी इकट्ठा करो। लोगों ने (लकड़ियाँ) इकट्ठा कर दी। फिर उसने कहा : इनको जलाकर आग तैयार करो। उन्होंने आग जलाई। फिर उसने कहा : क्या अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हुक्म नहीं दिया था कि तुम मेरी बात सुनो और मेरा आदेश मानो ? उन्होंने कहा : जी हाँ, हुक्म दिया है। उसने कहा : अच्छा तो इस आग में प्रवेश करो। वे आपस में एक-दूसरे की ओर देखने लगे और बोले : आग ही से तो बचने के लिए हम भाग कर अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास आये थे (अब उसी में कैसे दाखिल हों ?)^३ । वे इसी हाल में थे यहाँ तक कि उस (नायक) का क्रोध शान्त हो गया और आग भी बुझ गई। जब ये लोग वापस हुए तो इसका जिक्र अल्लाह के रसूल सल्ल० से किया। आपने कहा : "यदि ये लोग आग में दाखिल हो जाते, तो उस

२ अर्थात् यदि वे मेरे आज्ञाकारी बनेंगे तो 'आखिरत' के अतिरिक्त उन्हें इस लोक में भी हमारी ओर से बरकतें हासिल होंगी। अल्लाह उनके सुख और आराम के लिए उचित-से-उचित व्यवस्था करेगा। उदाहरणार्थ वे रात में आराम से सो रहे होंगे और उनकी भूमि मेह के जल से सिंचित हो रही होगी। इस प्रकार वे बादल की गरज और बिजली की कड़क से भी सुरक्षित रहेंगे और दिन में उन्हें धूप भी मिल सकेगी। कुरआन में भी हजरत नूह अ० के इस कथन का वर्णन मिलता है "और (हे 'रब' ! अपनी जाति के लोगों से) मैंने कहा : तुम अपने 'रब' से क्षमा की प्रार्थना करो निस्सन्देह वह क्षमा करने वाला है। वह आकाश को तुम पर खूब बरसता छोड़ेगा और तुम्हें और अधिक घन और बटे देगा। और तुम्हारे लिए बाग लगा देगा और तुम्हारे लिए नहरें निकालेगा।" —सूरा नूह १०-१२।

३ अर्थात् हम अल्लाह के रसूल सल्ल० पर 'ईमान' इसीलिए तो लाये थे कि हम 'आखिरत' में 'जहन्नम' की आग से बच सकें और दुनिया में भी बुरे परिणामों और बुरी मृत्यु से हमारी रक्षा हो सके, फिर आग के अलाव में हम कैसे कूद सकते हैं।

से कभी न निकलते^४ ।” और आपने कहा : ‘अल्लाह की अवज्ञा में कोई आज्ञापालन नहीं^५, आज्ञापालन तो केवल सुकर्म में है^६ ।’

—बुखारी, मुस्लिम

४. नौरस बिन सिमआन कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . सृष्टिकर्ता की अवज्ञा में किसी प्राणी के लिए कोई आज्ञापालन नहीं^७ ।

—शरहुस्सुन्नह

५. हजरत इब्न मसऊद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोगो ! कोई चीज़ सिवाय उसके जिसका मैं तुम को हुक्म दे चुका हूँ ऐसी नहीं जो तुम्हें ‘जन्नत’ से करीब कर दे और कोई चीज़ सिवाय उसके जिससे मैं तुम्हें वर्जित कर चुका हूँ ऐसी नहीं जो तुम्हें (जहन्नम की) आग से करीब और ‘जन्नत’ से दूर रखे^८ । और

४. अर्थात् ‘आखिरत’ में चिरकाल तक ‘जहन्नम’ की आग ही में जलते रहते । जीवन का यह भयानक परिणाम होता ।

५. अर्थात् वास्तव में जिसका आज्ञापालन किया जाना चाहिए वह अल्लाह है । ईमान वालों के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन, दोनों ही का वास्तविक केन्द्र अल्लाह की दासता और उसका आज्ञापालन है । किसी दूसरे का आज्ञापालन केवल उसी दशा में किया जा सकता है जबकि वह अल्लाह के आज्ञापालन के अन्तर्गत हो, उसके विपक्ष में न हो ।

६. आज्ञा का पालन केवल सुकर्म और भलाई के कामों में किया जायेगा । ऐसे कामों में किसी की आज्ञा का पालन कदापि नहीं किया जाना चाहिए जिनमें अल्लाह की अवज्ञा होती हो । एक ‘हदीस’ में है “मुस्लिम व्यक्ति के लिए जरूरी है कि वह अपने हाकिमों की बात सुने और माने, चाहे उसे पसन्द हो या नापसन्द हो जब तक कि उसे गुनाह (अल्लाह की अवज्ञा) का आदेश न दिया जाये और जब उसे गुनाह का आदेश दिया जाये, तो फिर न सुनना है न आज्ञापालन ।” —(बुखारी, मुस्लिम)

७. किसी की आज्ञा का पालन उसी समय तक किया जा सकता है जब तक वह अल्लाह की आज्ञा के विरुद्ध न हो ।

८. अर्थात् मैंने वे आदेश तुम तक पहुँचा दिए हैं जिनका पालन करके तुम ‘जन्नत’ के अधिकारी बन सकते हो । अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए वे आदेश पर्याप्त हैं जो मैंने तुम्हें दिये हैं । अल्लाह की प्रसन्नता और मुखाकाशा में तुम्हें इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं है । न तुम्हें इसके लिए जंगलों और बयाबानों की खाक छानने की जरूरत है और न बस्ती से दूर

‘रूहुल अमीन’^६ ने (एक ‘रिवायत’ के अनुसार रूहुल कुदुस ने) मेरे दिल में यह बात डाली है कि कोई व्यक्ति उस समय तक नहीं मरता जब तक अपनी रोजी पूरी न कर ले^{१०} । सावधान ! अल्लाह का डर रक्खो और रोजी प्राप्त करने में सन्तुलित नीति अपनाओ और रोजी में विलम्ब के कारण कही ऐसा न हो कि तुम उसे अल्लाह की अवज्ञा करके प्राप्त करो

वनो और पर्वतों की गुफाओं में जाकर कठिन तपस्या करनी है । तुम्हारा तप और तुम्हारी साधना यही है कि तुम उन आदेशों के पालन में लग जाओ जो मैं तुम्हें अल्लाह की ओर से पहुँचा रहा हूँ । इसके अतिरिक्त अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने का कोई और साधन नहीं है । दूसरे उपाय और कृत्रिम साधन तुम्हें पथभ्रष्ट तो कर सकते हैं, उनके द्वारा तुम्हें अल्लाह की प्रसन्नता नहीं मिल सकती ।

मैं तुम्हें उन बातों से भी सचेत कर चुका हूँ जिन से तुम्हें जीवन में बचने की आवश्यकता है । जिन से यदि तुम बचे नहीं तो, ‘जन्नत’ से दूर और ‘जहन्नम’ से करीब हो जाओगे । मैंने जिन बातों से तुम्हें रोका है वस उन से दूर रहना ‘जहन्नम’ की आग से सुरक्षित रहने के लिए पर्याप्त है । गुमराह जातियों ने अपनी ओर से जो मशक्कतें घड़ ली हैं और जो पाबन्दियाँ अपने-आप पर लागू कर रक्खी हैं या जिन चीजों को उन्होंने बिना किसी प्रमाण के वर्जित और अवैध निर्धारित कर लिया है, तुम कदापि उनके पाबन्द नहीं हो । जिस प्रकार अल्लाह की ‘हराम’ की हुई चीज किसी के ‘हलाल’ (Lawful) करने से हलाल (अवर्जित) नहीं हो सकती वह ‘हराम’ (Unlawful) ही रहेगी । इसी प्रकार जिन चीजों को अल्लाह ने हराम नहीं किया है बल्कि अवर्जित ही रक्खा है किसी को उन्हें हराम करने का अधिकार कदापि नहीं है ।

कुरआन में भी नबी सल्ल० के बारे में कहा गया है — “जो उन्हें सुकर्म (भले कामों) का हुक्म देता है और बुराई से रोकता है और उनके लिए पाक (शुद्ध) चीजों को हलाल और नापाक (अशुद्ध) चीजों को हराम ठहराता है । और उन पर से उनका बोझ दूर करता है और उन फन्दों को (काटता है) जो उन पर चढ़े हुए थे ।” —अल-आराफ आयत १५७

६ अर्थात् अल्लाह के विशेष ‘फिरिश्ते’ हजरत जिबरील अ० ने ।

१० मनुष्य के हिस्से की जो रोजी है वह उसे मिलकर रहेगी, इसलिए उसे रोजी हासिल करने में वैध व अवैध और हलाल व हराम का सदैव ध्यान रखना चाहिए । उसे प्रत्येक अवस्था में अल्लाह से डरते रहना चाहिए और रोजी प्राप्त करने के लिए वही साधन अपनाने चाहिए । जिन से न किसी का हक मारा जाता हो और न किसी के साथ अन्याय होता हो ।

क्योंकि वह चीज, जो अल्लाह के पास है तुम्हे, अल्लाह के आज्ञापालन के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है^{११} । —शरहुस्सुन्नह, बैहकी-शोबुल ईमान एकेश्वरवाद की प्रतिष्ठा

عَنْ أَنَسٍ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ لَيْسَ أَلَا أَحَدًا مَرَاتَبَةً حَاجَةً
كُلَّهَا حَتَّى يَسْأَلَ سَيِّئًا نَعْلَهُ إِذَا انْقَطَعَ
ترمذی

१. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में प्रत्येक को चाहिए कि वह अपनी समस्त आवश्यकताओं के लिए अपने 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी) से ही सवाल करे यहाँ तक कि यदि उसके जूते का तसमा टूट जाये तो वह भी उसी से माँगे^१ ।

—तिरमिज़ी

२ हजरत मुगीरा बिन शोबा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० 'फर्ज' नमाजों के पश्चात् यह पढा करते थे "कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं सिवाय एक अल्लाह के, उसका कोई सहभागी नहीं । राज्य उसी का है, प्रशंसा एव स्तुति ('हम्द') उसी के लिए है । और उसे हर चीज का सामर्थ्य प्राप्त है (वह सर्वशक्तिमान् है) । हे अल्लाह ! तू जो दे दे उस से कोई रोकने वाला नहीं और जो तू न दे उसका देने वाला कोई नहीं । और तेरे सामने किसी वैभवशाली का वैभव भी (उसको) कोई लाभ नहीं पहुँचा सकता^२ ।"

—बुखारी, मुस्लिम

११ यदि किसी समय रोज़ी मिलने में देर हो तो कदापि अधीर न होना चाहिए । और न घबराकर कोई ऐसा कदम उठाना चाहिए जो गलत हो । अल्लाह की ओर से यदि पाक रोज़ी मिल सकती है, तो अल्लाह के आज्ञापालन द्वारा ही मिल सकती है । अवैध और गलत रास्तों से मनुष्य जो-कुछ भी हासिल करता है वह उसके लिए पाक नहीं है । उसे यदि कोई ईश्वर की प्रदत्त वस्तु समझता है तो इसे एक घोखे के सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता ।

१ अर्थात् 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का अर्थ यह भी है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं के लिए अल्लाह ही से प्रार्थना करे और उसी से सहायता चाहे । इस लिए कि वास्तविक कार्य-साधक अल्लाह ही है । दूसरे सभी उसके आश्रित हैं । जो लोग अल्लाह को छोड़कर दूसरों को अपनी आवश्यकता-प्रति के लिए पुकारते हैं वे बड़े भ्रम में हैं ।

२ अर्थात् अल्लाह के यहाँ किसी का धन-वैभव काम आने का नहीं है वहाँ जो चीज काम आ सकती है वह है सत्यनिष्ठा, हृदय की शुद्धता और पुण्यकर्म । अल्लाह ही के अधिकार में सब-कुछ है । जिसको जो-कुछ मिलता है उसकी

३. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि जब नबी सल्ल० बीमार हुये, तो आपकी कुछ पत्नियों ने उस गिरजा की चर्चा की जिसे मारियह कहते थे (यह गिरजा हव्शा में था)। उम्म सल्मा और उम्मे-हबीबा हव्शा जा चुकी थी। जब उन्होंने उसकी सुन्दरता और उसके चित्रों का जिक्र किया, तो आप ने सिर उठाया और कहा : जब उनमें कोई भला व्यक्ति मर जाता तो वे उसकी कब्र पर एक इबादतगाह (उपासना गृह) का निर्माण कर देते और उसमें उसके चित्र बना देते थे^३। ये अल्लाह के सृष्टि जीवों में सब से बुरे हैं^४। —बुखारी, मुस्लिम

४. अता इब्न यसार कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० प्रार्थना करते थे : “हे अल्लाह ! मेरी कब्र को वुत न बना देना कि उसकी पूजा की जाने लगे। अल्लाह का गुस्सा उन लोगों पर भड़क उठा जिन्होंने अपने ‘नबियों’ की कब्रों को सजदागाह (उपासना गृह) बना लिया^५।”

—मानिक-हदीस-मुरसल

आज्ञा से मिलता है। उसका गौरव और महिमा अपार है। उसका कोई भी काम तत्त्वदर्शिता और शुभहेतु से अप्रयुक्त नहीं। कोई नहीं जो उसके फैसले को बदल सके। कोई नहीं जो उसके कामों में हस्तक्षेप कर सके।

३. इस प्रकार वे लोग ‘शिक’ (बहुदेववाद) की बुनियाद डाल देते थे।
४. इसलिए कि ये स्वयं पथभ्रष्ट होते और दूसरे लोगों को पथभ्रष्टता का कारण बनते। अल्लाह की उपासना के बदले सृष्टि पूजा और समाधि पूजा की नींव डालते।
५. अल्लाह के सिवा किसी दूसरे की ‘इबादत’ और उपासना ‘शिक’ है। ‘शिक’ निकृष्टतम पाप है। पिछले आसमानी ग्रन्थों (*Heavenly Books*) में भी ‘शिक’ की निन्दा की गई है और इसको जिना और व्यभिचार की उपमा दी गई है। कुरआन में भी इसकी ओर संकेत किए गए हैं। देखिए सूरा अन-नूर आयत ३, सूरा अल-फुरकान आयत ६८। कुरआन ‘शिक’ को अत्यन्त भारी अन्याय कहता है। ‘शिक’ से बढ़कर अल्लाह की हकतलफी (स्वत्व हरण) दूसरी नहीं हो सकती। पिछले ग्रन्थों में भी ‘शिक’ पर रोष प्रकट किया गया है। कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जाते हैं

“तुम्हें किसी दूसरे उपास्य की उपासना नहीं करनी होगी इसलिए कि परमेश्वर जिसका नाम स्वाभिमानी है, वह स्वाभिमानी ईश्वर है भी। अतः ऐसा न हो कि तू उस देश के निवासियों से कोई अनुबन्ध कर ले और जब वे अपने इष्ट देवों के अनुसरण में व्यभिचारी (जिनाकार) ठहरे और अपने इष्टदेवों के लिए कुरबानी करें और कोई तुम्हें को आमन्त्रित करे और तू उस

५ हजरत जुनदुब रजि० कहते हैं कि मैंने नबी सल्ल० से सुना, आप कहते थे कि सुन लो ! तुम से पहले जो लोग थे वे अपने 'नबियों' और अच्छे लोगों की कब्रों को सजदागाह (उपासना गृह) बना लिया करते थे^६। सावधान ! तुम कब्रों को सजदागाह न बनाना, मैं तुम्हें इस कर्म से वाज्र रहने की ताकीद करता हूँ^७। —मुस्लिम

६. इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कब्रों पर जाने वाली स्त्रियों पर लानत की है और उन लोगों पर जो उनको (कब्रों को) सजदागाह (उपासना गृह) बनाते और उन पर दीपक जलाते हैं। —अबू दाऊद, तिरमिजी, नसई

७ हजरत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अपशकुन का विचार एक प्रकार का 'शिक' है। आपने यह (ताकीद के रूप में) तीन बार कहा^८।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

की कुरवानी में से कुछ खा लें। और तू उनकी बेटियों का विवाह अपने बेटों से करे और उनकी बेटियाँ अपने उपास्यों के अनुसरण में व्यभिचारिणी ठहरें और तेरे बेटों को भी अपने उपास्यों के अनुसरण में व्यभिचारी बना दे।”

—निर्गमन ३४ १४-१८

“(उन्होंने) विमुख होकर अपने बाप-दादा की तरह विश्वासघात किया। और घोखा देने वाले अनुष की तरह एक ओर को झुक गए, क्योंकि उन्होंने अपने ऊँचे स्थानों के कारण उसके प्रकोप को उत्तेजित किया और अपनी खोदी हुई मूर्तियों से उसे गैरत दिलाई।”

—ज़बूर तीसरा भाग ७८ ५७-५८

“चालीस वर्ष तक मैं इस नस्ल से विरक्त रहा और मैंने कहा कि ये वे लोग हैं जिनके दिल आवारा हैं और इन्होंने मेरी राहों को नहीं पहचाना। इस कारण मैंने अपने प्रकोप की कसम खाई कि ये लोग मेरे विश्राम में कभी प्रवेश न करेंगे।”

—ज़बूर, चौथा भाग ६५ १०-११

६ अर्थात् उन्हें सजदा करते थे हालाँकि उनके लिए कदापि उचित न था कि किसी दूसरे के आगे सिर झुकाये और नतमस्तक हो।

७ खेद की बात है कि बहुत से लोग नबी सल्ल० की इस वसीयत और उपदेश को भूल गए और कब्रों और मजारों के साथ वह सब-कुछ करने लगे जिस से आपने वर्जित किया था।

८ अपशकुन के विचार में मनुष्य केवल शका की चीज को प्रभावकारी

८. हज़रत अबू हुदैर रह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . रोग का लग जाना, 'हामह', नक्षत्र, 'सिफ' इन की कोई वास्तविकता नहीं है^६ । —मुस्लिम

९. उम्म कुर्ज कहती हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना आप कहते थे : पक्षियों को उनके अपने घोंसलों में बैठे रहने दो (उन्हें उड़ाकर अच्छे या बुरे शकुन का विचार न करो) —अबूदाऊद, तिरमिज़ी

१०. हज़रत मुआवियह बिन हकम रजि० कहते हैं कि मैंने कहा :

भूल जाता है यह चीज़ 'शिक' है और शिक की भूमिका है । इसीलिए आपने ताकीद की कि इस से बचा जाये ।

९. केवल आशका के आधार पर यह समझना कि रोग उड़कर एक से दूसरे को लग जाते हैं, सही नहीं, किसी रोग के विषय में निश्चित रूप में उसके फैलने के कारणों का अनुसन्धान कर लिया गया हो, तो यह दूसरी बात है उनके मानने में कोई दोष नहीं है । इस्लाम कार्य-कारण का इन्कार नहीं करता । वह हमें जिस चीज़ से बचाना चाहता है वह है अन्धविश्वास और निर्मूल बातों में विश्वास रखना । अन्धविश्वास मनुष्य को वास्तविकता और सच्चाई से दूर कर देता और उसे विभिन्न प्रकार की पथभ्रष्टता में फसा देता है चाहे उन का सम्बन्ध विचार और धारणा से हो या व्यवहार और कर्म से ।

'हामह' और 'सिफ' से क्या अभिप्रेत है, इसमें मतभेद है । अज्ञान काल में एक धारणा यह थी कि जब मारे गए व्यक्ति के खून का बदला नहीं लिया जाता, तो उसकी आत्मा एक पक्षी के रूप में पुकारती फिरती है कि मैं प्यासी हूँ, मेरा बदला लिया जाये । 'सिफ' एक धारणा के अनुसार ऐसा जन्तु है जिस के काटने से भूख का एहसास होता है । इसके अतिरिक्त इस तरह की कुछ दूसरी धारणाएँ भी हैं । इस्लाम ने उन सबको निर्मूल ठहरा कर मनुष्य के मन और मस्तिष्क को अन्धविश्वास से मुक्त किया है ।

अज्ञान काल में अरब वर्षों की नक्षत्रों से सम्बद्ध करते थे । इस विचार का खण्डन किया गया और बताया गया कि धरती और आकाश की समस्त शक्तियों का मालिक अल्लाह है । जो-कुछ होता है उसके फैसले के अन्तर्गत होता है । इसलिए हमारा भरोसा उसी पर होना चाहिए न कि हम तारों और नक्षत्रों पर भरोसा करने लग जायें । कार्य-कारण की दुनिया में तारों का जो-कुछ प्रभाव पड़ता हो उसमें, वैज्ञानिक रूप में, जो बातें सिद्ध हो चुकी हो उनके मानने में हमारे लिए कोई दोष नहीं है । दोष की बात यह है कि कोई व्यक्ति अन्धविश्वास के कारण अल्लाह को छोड़कर दूसरी चीज़ों पर भरोसा करने लग जाये और उन्हीं का उपासक बन जाएँ और उन्हीं को अपना इष्ट देव बना ले ।

हे अल्लाह के रसूल ! कुछ बातें हम अज्ञानकाल में किया करते थे (उनके बारे में आप क्या कहते हैं) हम 'काहिनों' के गस (परोक्ष की बातें मालूम करने के लिए) जाया करते थे। आपने कहा उनके पास न जाओ^{१०}। उन्होंने कहा कि हम पक्षी उड़ाकर शकुन-अपशकुन का विचार करते थे। आपने कहा यह ऐसी चीज है जिसका तुम्हारे दिलों पर असर तो होगा (इसलिए कि तुम यह काम करते आये हो) परन्तु चाहिए कि यह चीज तुम्हारे लिए रुकावट न बनने पाए^{११}। वे कहते हैं कि मैंने कहा कि हमारे कुछ लोग रेखाये खींचते थे^{१२}। आपने कहा 'नबियों' में एक 'नबी' रेखा खींचते थे, अब किसी की रेखा उसके अनुरूप हो जाती होगी, तो वह भी ठीक होता होगा (परन्तु यह कैसे मालूम हो कि किसी की खींची हुई रेखा उनके अनुरूप है^{१३})। —मुस्लिम

१०. गैव और परोक्ष की बातें अल्लाह के सिवा कोई दूसरा नहीं जानता। दूसरों की सारी बातें अटकल और अनुमान पर अवलम्बित होती हैं जिसमें गलती की आशंका सदा बनी रहती है।

११. अर्थात् ऐसा नहीं होना चाहिए कि तुम उसके कारण अपने किसी प्रोग्राम को बदल दो।

१२ अर्थात् रेखा खींचकर, हिसाब लगाकर कुछ बातें मालूम करते थे।

१३ एक 'हदीस' में आपने, ऐसे अवसर के लिए, कुछ शब्द पढ़ने की शिक्षा दी है जिससे हृदय पर पड़े हुए बुरे प्रभाव मिट जाते हैं, मनुष्य अल्लाह पर भरोसा करने लगता है और उसे धैर्य और सन्तोष की परम निधि मिल जाती है, वे पवित्र शब्द ये हैं — "हे अल्लाह तू ही भलाई पहुँचाता है और तू ही बलाओं को दूर करता है और न कोई बन्ध है और न कोई शक्ति है सिवाय अल्लाह के द्वारा के।"

—अबू दाऊद



तकदीर पर ईमान

तकदीर पर 'ईमान' वास्तव में अल्लाह पर 'ईमान' का ही एक अंग है। कुरआन में इसको इसी हैसियत से बयान भी किया गया है, उदाहरणार्थ देखिए सूरा आले इमरान, आयत २६, ७३, अन-निसा आयत ७८, अल-आराफ आयत १२८, अल-फुरकान आयत २-३, अल-हदीद आयत २२-२३। अल्लाह के मानने में वस्तुतः तकदीर का मानना भी सम्मिलित है। तकदीर का इन्कार वास्तव में अल्लाह का इन्कार है। हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं "तकदीर पर 'ईमान' से 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की व्यवस्था सम्बद्ध है। जो व्यक्ति 'ईमान' लाये और तकदीर का इन्कार करे तो उस ने 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का क्षय कर दिया"। (दे० किताबुस्सुन्नह-इमाम अहमद पृष्ठ १२३)।

तकदीर पर 'ईमान' वास्तव में अल्लाह की प्रभुता और उसकी महानता को स्वीकार करना है। यह इस बात को मानना है कि अल्लाह सर्वशक्तिमान् और परम शासक है। उसका ज्ञान सबको अपनी परिधि में समेटे हुये है। कोई भी चीज उसकी ज्ञान-परिधि से बाहर नहीं है। उसने हर चीज का अन्दाजा ठहराया है, कोई भी चीज उससे बाहर नहीं जा सकती। उसकी शक्ति और अधिकार के अन्तर्गत हर चीज है। वह हर चीज के आरम्भ और अन्त को जानता है। यह ससार उसकी सोची-समझी योजना (Scheme) के अन्तर्गत चल रहा है। कोई उसे उसकी योजना में असफल नहीं कर सकता। फिर हानि-लाभ, सारी शक्तियाँ उसके अधिकार में हैं। जीवन प्रदान करने वाला और मृत्यु देने वाला नहीं है। रोजी का मालिक वही है, जिसे चाहे अधिक दे, जिसकी रोजी चाहे कम कर दे। आदर-सम्मान, वैभव, शक्ति, बल, शासन आदि सब-कुछ उसके अधिकार में है। वह अपनी तत्त्वदर्शिता की दृष्टि से, जिसको जितना चाहता है प्रदान करता है। उसकी हिक्मत (तत्त्वदर्शिता) त्रुटिहीन है, उसमें किसी प्रकार की अपूर्णता नहीं पाई जाती। उसका कोई काम और उसका कोई फैसला व्यर्थ और निरुद्देश्य नहीं है। इस लोक में धन, प्रसिद्धि, सुन्दरता, बल और दूसरी चीजें सबको समान रूप से नहीं मिली हैं। यह व्यवस्था उसी की स्थापित की

हुई है। और पूर्ण रूप से इसमें 'हिकमत' (*Wisdom*) और शुभ हेतु पाया जाता है। उसकी हिकमतों को पूर्ण रूप से जान लेना मनुष्य के लिए सम्भव नहीं। न किसी में यह सामर्थ्य है कि वह अल्लाह की निर्मित व्यवस्था को बदल सके। हमें चाहिए कि हम उन सीमाओं में रहते हुये अपने उन कर्तव्यों को पूरा करें जो अल्लाह ने हमारे लिए निर्धारित किये हैं। सफलता और असफलता सब उसके हाथ में है। वही है जो गिरे हुये को उठाता और उठे हुये को गिराता है। वही असफलताओं में सफलता की राहें निकालता है। वही उन लोगों को, जो अपनी सरकशी और उद्विग्नता में रत और अपनी सामग्री पर गर्व कर रहे होते हैं, असफलता के बुरे दिन दिखाता है।

तकदीर को मानने से मनुष्य के विचार और दृष्टि में बड़ी व्यापकता आ जाती है। उसे अपार शक्ति और बल मिल जाता है, वह निश्चिन्त और धैर्यवान् हो जाता है। उसका भरोसा अपने पालनकर्ता अल्लाह पर होता है। अल्लाह पर भरोसा उसमें सकल्प और उत्साह की वह शक्ति उत्पन्न कर देता है, जिसका मुकाबला नहीं किया जा सकता। वह चेष्टा और परिश्रम से नहीं भागता, प्रयास और कर्म के द्वारा उसे अपने 'रब' (पालनकर्ता स्वामी) की सहायता और उसकी कृपा की खोज होती है। वह कभी हताश नहीं होता। अल्लाह और तकदीर को मानने से आत्मसम्मान और निश्चिन्तता के साथ-साथ उसकी आत्मा को ऐसी शुद्धता और पवित्रता प्राप्त होती है जिस पर ससार की प्रत्येक वस्तु निष्ठावर की जा सकती है। लोभ, वासना और ईर्ष्या एवं द्वेष की तुच्छ भावनाएँ उसके हृदय में स्थान नहीं बना सकती। उसे यदि सब-कुछ मिल जाये तो वह गर्व नहीं करता, और यदि तंगी और सकट का सामना करना पड़े, तो वह अधीर नहीं होता। वह अल्लाह का एक कर्तव्यपरायण, धैर्यवान् और कृतज्ञ सेवक होता है। अल्लाह के गुणगान और स्मरण को मूल जीवन-निधि जानता है।

तकदीर पर ईमान और उसका महत्व

عَنْ جَابِرٍ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، لَا يُؤْمِنُ عَبْدٌ حَتَّى يُؤْمِنَ
بِالْقَدَرِ خَيْرِهِ وَشَرِّهِ حَتَّى يَعْلَمَ أَنَّ مَا أَصَابَهُ لَمْ يَكُنْ لِيُخْطِئَهُ وَمَا أَخْطَأَهُ
لَمْ يَكُنْ لِيُصِيبَهُ ————— تَرْمِذِي

१. हजरत जाविर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा वन्दा उस समय तक 'ईमान' वाला नहीं होता जब तक कि 'तकदीर' की भलाई और बुराई पर ईमान न लाये, और जब तक कि यह न जान ले कि जो चीज (भलाई और बुराई) उसको पहुँच गयी यह असम्भव था कि वह उसे न पहुँचती। और (इसी तरह) जो कुछ नहीं पहुँचा यह असम्भव था कि वह उसको पहुँच जाता'। —तिरमिजी

१. अर्थात् अल्लाह पर ईमान उसी समय पूर्ण होता है जबकि मनुष्य तकदीर पर ईमान लाये, इसके बिना 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की धारणा पूर्ण नहीं हो सकती। तकदीर पर ईमान रखने वाला यह जानता है कि जो तकलीफ और आराम उसे पहुँचा, वह पहुँच कर रहने वाला था और जो नहीं पहुँचा वह पहुँचने वाला था ही नहीं। ससार में जो कुछ होता है वह अल्लाह के फँसले के अन्तर्गत ही होता है। एक बड़ी स्कीम के अन्तर्गत ईश्वर इस विश्व-व्यवस्था को चला रहा है। जिस प्रकार सम्पूर्ण विश्व और उसके विभिन्न भागों में परस्पर सामंजस्य और अनुकूलता पाई जाती है, उसी प्रकार इस ससार में छोटी या बड़ी जो घटना भी घटित होती है वह स्थायी रूप से कोई अलग घटना नहीं होती बल्कि वह विश्व की घटनाओं के क्रम की एक कड़ी होती है और वह उस बड़े उद्देश्य के अन्तर्गत ही घटित होती है जिसकी पूर्ति के लिए इस विश्व का सृष्टिकर्त्ता इस विश्व-व्यवस्था को चला रहा है। इस व्यवस्था के पीछे जो उद्देश्य काम कर रहा है यदि उसकी पूर्ति वर्तमान व्यवस्था से उत्तम किसी व्यवस्था से हो सकती तो, निश्चय ही अल्लाह उसी को स्थापित करता। इस ससार में हर्ष के साथ शोक, सुख के साथ दुःख यदि पाया जाता है तो यो ही नहीं, बल्कि यह महान् तत्त्वदर्शिता (Wisdom) के अन्तर्गत ही

२ हज़रत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह को बलिष्ठ 'ईमान' वाला निर्बल ईमान वाले से अधिक प्रिय है। और हर एक में भलाई है, जो चीज तुम्हें लाभ पहुँचाये उसका लोभ करो और अल्लाह से सहायता की याचना करो और साहस न छोड़ो। और यदि तुम्हें कोई कष्ट पहुँचे तो यो न कहो कि "यदि" मैं ऐसा करता तो यों हो जाता बल्कि कहो अल्लाह ने जो चाहा किया, इसलिए कि (यह) "यदि" शैतान के कर्म का द्वार खोल देता है^२।

—मुस्लिम

३ हज़रत सहल बिन सअद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . (कभी ऐसा होता है कि) बन्दा 'जहन्नम' में जाने वालों का सा कर्म करता है और होता है वह 'जन्नत' में जाने वाला, और इसी प्रकार (कभी ऐसा होता है कि) 'जन्नत' वालों का सा कर्म करता है और होता है वह 'जहन्नम' में जाने वाला और बात यह है कि कर्म में एतवार अन्त ही का होता है^३।

—बुखारी, मुस्लिम

पाया जाता है। यह हमारी अदूरदर्शिता होगी यदि हम इसे अलल-टप्पू या अन्याय पर आधारित व्यवस्था समझने लग जायें।

२. अर्थात् ऐसा ईमान वाला, जो साहसी और सकल्प का दृढ़ हो, अल्लाह को उस ईमान वाले से अधिक प्रिय है जिसे तनिक भी असफलता हुई तो हिम्मत हार बैठता है। ईमान रखने वाले व्यक्ति का काम यह है कि वह किसी हालत में भी साहस न छोड़े, अल्लाह से सहायता का इच्छुक हो। यदि कोई मुसीबत या तकलीफ पेश आये तो समझे कि इसका आना पहले से तै था, इसलिए सब्र से काम ले। ईमान वाले व्यक्ति के लिए यह किसी तरह उचित नहीं कि वह ऐसे समय पर यह कहने लगे कि यदि मैं ऐसा करता तो, यह मुसीबत न आती और यदि मैंने अमुक उपायों को अपनाया होता तो, इस तकलीफ से बच जाता। सोचने की यह नीति उसे विह्वलता, सन्ताप और दुःख का ग्रास बनाकर हतोत्साह कर देगी। और शैतान यही चाहता है कि किसी-न-किसी तरह वह ईमान वाले व्यक्ति को उसके वास्तविक लक्ष्य से विमुख कर दे।

३ आदमी के जीवन का अन्त यदि 'कुफ्र' (अधर्म) पर होता है तो वह 'दोज़ख' नरक में जायेगा भले ही उसका सम्पूर्ण जीवन इस्लाम पर चलने में अन्तीत हुआ हो। उसने स्वयं अपने ईमान और शुभ कर्म को रद्द कर दिया। इसके विपरीत यदि आदमी की मृत्यु इस्लाम पर होती है और वह अन्तिम समय में इस्लाम को अपना लेता है तो उसकी गणना 'जन्नत' वालों में होगी, इसलिए कि उसने सच्चाई को अपनाकर अन्त में ईश्वर की दासता स्वीकार कर ली

४ अबू खिजामह अपने पिता के माध्यम से कहते हैं कि उनका बयान है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा हे अल्लाह के रसूल ! यह तो बताइए कि जो भाड़-फूँक हम करते हैं या दवाये जिनको हम प्रयोग में लाते हैं या बचाव की चीजे जिनसे हम अपनी रक्षा करते हैं क्या अल्लाह की (निश्चित की हुई) तकदीर को फेर सकती है ? आपने कहा : ये सब चीजे अल्लाह की निश्चित की हुई तकदीर में से हैं* ।

—तिरमिजी, इब्न माजह, अहमद

तकदीर पर ईमान लाने का मानव-चरित्र पर प्रभाव

عَنْ ابْنِ عَبَّاسٍ قَالَ كُنْتُ خَلْفَ النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَوْمًا فَقَالَ يَا عَلَّامُ
إِنِّي أَعْلَمُكَ كَلِمَاتٍ، احْفَظِ اللَّهَ يَحْفَظْكَ، احْفَظِ اللَّهَ يَحْدُدْهُ تَحَاكَ، إِذَا سَأَلْتَ
فَأَسْأَلِ اللَّهَ، وَإِذَا اسْتَعْتَبَ فَاسْتَعِنْ بِاللَّهِ، وَاعْلَمْ أَنَّ الْأُمَّةَ لَوِاجَتْ عَتَى عَلَى أَنْ
يَنْفَعُوكَ بِشَيْءٍ لَمْ يَنْفَعُوكَ إِلَّا بِشَيْءٍ قَدْ كَتَبَهُ اللَّهُ لَكَ، وَلَوْ أَحْسَنُوا عَلَى أَنْ تَضُرُّوكَ
بِشَيْءٍ لَمْ يَضُرُّوكَ إِلَّا بِشَيْءٍ قَدْ كَتَبَهُ اللَّهُ عَلَيْكَ. رُوِيَ عَنِ الْقَلَامِ وَجَفَّ الصُّحُفُ
بِرُمْدَى، أَحْمَدُ

१ इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि एक दिन मैं नबी सल्ल० के पीछे सवारी पर सवार था । आपने कहा हे लडके ! मैं तुम्हें कुछ बातों की शिक्षा देता हूँ अल्लाह का ख्याल रखो अल्लाह तुम्हारा ख्याल रखेगा । अल्लाह का ख्याल रखो तो उसे अपने सामने पाओगे । जब माँगो तो अल्लाह से माँगो और जब सहायता की याचना करो तो अल्लाह से सहायता की याचना करो । जान लो कि यदि सारे लोग मिल कर तुम्हें फायदा पहुँचाने के लिए एकत्र हो जाये, तो

और अधर्म मार्ग को छोड़ दिया । यह हदीस बताती है कि आदमी को अपने परिणाम की ओर से कभी भी गाफिल नहीं रहना चाहिए ।

४ अर्थात् दुआ, इलाज और रक्षा के उपायों को अपनाना अल्लाह की निश्चित की हुई तकदीर के विरुद्ध चेष्टा करना नहीं है बल्कि ये तकदीर ही के सिलसिले की चीजे हैं । इनमें और तकदीर में कोई टकराव और विरोध नहीं पाया जाता । इसलिए इन चीजों को अपनाने वाला तकदीर के विरुद्ध नहीं चलता बल्कि वह जो कुछ भी करता है तकदीर ही के अन्तर्गत करता है ।

तुम्हे फायदा नहीं पहुँचा सकते सिवाय उसके जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए लिख दिया है। और यदि सब लोग इकट्ठा होकर तुम्हे हानि पहुँचाना चाहे तो, वे तुम्हे हानि नहीं पहुँचा सकते सिवाय उसके जो अल्लाह ने तुम्हारे लिये लिख दिया है। लेखनियाँ उठा ली गई है और कागजों की स्याही सूख चुकी है^१। —तिरमिजी, अहमद

२ हजरत सौवान रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तकदीर को कोई चीज नहीं फेर सकती सिवाय दुआ के, और आयु को कोई चीज बढ़ा नहीं सकती सिवाय नेकी के, और निश्चय ही आदमी गुनाह को ग़ामत से कभी रोजी से भी वंचित हो जाता है^२।

—इब्न माजा

- १ यह हदीस बताती है तकदीर पर ईमान लाने से बहुत से नैतिक लाभ भी मनुष्य को पहुँचते हैं। मनुष्य लोगों से निर्भय हो जाता है उसे भय होना है तो केवल ईश्वर का। वह ईश्वर के सिवा किसी से न फायदे की आशा करता है, और न किसी हानि की उसे आशंका होती है। वह समझता है कि मुझे जो मिलना है मिल कर रहेगा और जो चीज मेरे हिस्से में नहीं है वह किसी के देने से मुझे नहीं मिल सकती। इसलिए वह भय और लोभ से रहित होकर सत्य मार्ग में आगे बढ़ने की कोशिश करता है। न कोई भय उसे सत्य मार्ग से विचलित कर सकता है और न कोई लालच और आशा उसे सत्य से फेर सकती है।
- २ यह हदीस बताती है कि तकदीर पर ईमान लाने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि आदमी कर्म और उपाय आदि से किनारा खींच ले। तकदीर पर ईमान लाने से कर्म और उपाय आदि का निषेध नहीं होता। ये चीजे तो हमारी तकदीर को निश्चित करती हैं। दुआ से तकदीर बदलती या निश्चित होती है यह बात वास्तव में हमारे एतवार से कही गई है, ईश्वरीय ज्ञान में तो हर चीज पहले से निश्चित होती है। मिसाल के तौर पर अल्लाह को पहले से मालूम है कि अमुक व्यक्ति मुसीबत में पड़ कर दुआ करेगा या नहीं। साधन, कार्य-कारण आदि तकदीर से भिन्न नहीं हैं। दुआ को लीजिए, दुआ कोई बेजान सी पुकार नहीं है बल्कि वह मनुष्य के लिए अतुल बल है। हजरत यूनुस अ० की जाति वालों पर अल्लाह की यातना टूट पड़ने वाली थी, परन्तु जाति वालों के विलाप, दुआ और विनय से अजाब टल गया। यदि ये लोग ईश्वर की ओर न झुकते और दुआ और 'तौबा' (पश्चाताप) का सहारा न लेते, तो अल्लाह इन्हे विनष्ट कर देने का फैसला कर चुका था। इनको तबाही से कोई चीज नहीं बचा सकती थी। दुआ की इसी विशेषता के कारण यह बात कही गई कि तकदीर को कोई चीज फेर सकती है तो, वह दुआ है, मनुष्य के

३. हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारे पास बाहर आये उस समय हम लोग तकदीर के विषय में वाद-विवाद कर रहे थे इस पर आप क्रुद्ध हुये, यहाँ तक कि आपका चेहरा लाल हो गया मानो अनार के दाने आपके चेहरे पर निचोड़ दिये गये हैं। फिर आपने कहा क्या तुम्हे इस बात का हुक्म दिया गया था या मैं इसके लिए तुम्हारे पास 'रसूल' बना कर भेजा गया हूँ। तुमसे पहले जो लोग गुजरे हैं जब वे इस विषय में उलझने लगे तो वे विनष्ट हो गये। मैं तुम्हे ताकीद करता हूँ कि तुम कदापि इस बारे में न झगडना^१।

—तिरमिजी, इब्न माजह

उपायों में सबसे बड़ा उपाय दुआ ही है। यही कारण है कि जब आदमी की सारी तदबीरों विफल हो जाती हैं, तो वह दुआ का सहारा लेता है।

आयु के बढ़ने का कारण स्वास्थ्य-रक्षक नियमों का पालन और स्वास्थ्य-वर्द्धक चीजों का सेवन ही नहीं है बल्कि इन भौतिक कारणों के अतिरिक्त नेकी-भलाई और लोगों के हक को अदा करना, लोक-सेवा आदि नैतिक और आध्यात्मिक कारण भी प्रभावकारी शक्तियाँ हैं जिन से मनुष्य की आयु में वृद्धि होती है। इसी प्रकार रोज़ी की कमी या रोज़ी से वंचित रह जाने का कारण केवल यही नहीं होता कि मनुष्य ने रोज़ी कमाने में कोई कोताही की है, आदमी अपने गुनाहों के कारण भी रोज़ी से वंचित हो सकता है। इस हदीस से मालूम होता है कि तकदीर में बन्दों की दुआओं, उनकी नेकियों और उनके भले-बुरे कर्मों तक का लिहाज़ रक्खा जाना सम्भव है। जो लोग 'तकदीर' को ज़न्न और विवशता का नाम देते हैं वे ग़लती पर हैं। लोगों को जिस हद तक कर्म और संकल्प की स्वतन्त्रता प्राप्त है 'तकदीर' उसे लोगों से छीनती नहीं बल्कि यह स्वतन्त्रता तो तकदीर ही की देन है, फिर दोनों में टकराव कैसे हो सकता है। यहाँ यह बात समझ लेने की है कि लोगों को जो-कुछ सामर्थ्य और अधिकार प्राप्त है वह सर्वशक्तिमान ईश्वर ही का दिया हुआ है। जिस प्रकार मनुष्य का अस्तित्व और उसका जीवन ईश्वर की शक्ति, बल और उसकी कृपा पर आश्रित है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य अपने कर्म, संकल्प आदि में भी उसी का मुहताज है। मनुष्य को जो कुछ शक्ति और सामर्थ्य प्राप्त है वह ईश्वर की शक्ति और सामर्थ्य पर अवलम्बित है। मनुष्य के पास अपना कुछ भी नहीं है, जो कुछ है, ईश्वर ही का दिया हुआ है।

३. एक दूसरी हदीस भी सामने रहनी चाहिए। हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति चाहता है कि उसकी रोज़ी में कुशादगी पैदा की जाये और उसकी मृत्यु में विलम्ब किया जाये उसे नातेदारों

के साथ अच्छा व्यवहार करना चाहि (बुखारी, मुस्लिम) ।

तकदीर का विषय कठिन और गूढ है इसलिए इस पर झगडने और वाद-विवाद करने से रोका गया । लोगो को इसका ध्यान दिलाया गया कि उन्हे अपने कर्त्तव्यो के पालन मे लगना चाहिए, जो उनके जीवन का मूल उद्देश्य है, जिसकी शिक्षा देने के लिए अल्लाह ने रसूलो को भेजा है । तकदीर पर ईमान लाना काफी है, इस विषय मे ज्यादा खोद-कुरेद करना उचित नही, समस्त ईश्वरीय रहस्यो को जान लेना मनुष्य के लिए सम्भव भी नही है ।

रिसालत की धारणा

मनुष्य को संसार में जहाँ भोजन, जल और प्रकाश आदि की आवश्यकता है, वही उसकी सब से बड़ी आवश्यकता यह है कि कोई एक मार्ग-दर्शक हो जो उसे अल्लाह का मार्ग बता सके। जो उसे बता सके कि उस के जीवन का वास्तविक ध्येय क्या है ? अल्लाह ने उसे संसार में किस लिए भेजा है ? मार्ग-दर्शन (*Guidance*) के बिना मनुष्य ईश्वरीय इच्छा के अनुसार जीवन-यापन नहीं कर सकता, हालाँकि अल्लाह की प्रसन्नता और शाश्वत सफलता की प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि मनुष्य का जीवन अल्लाह की दासता और आज्ञापालन में व्यतीत हो। जो अल्लाह हमारी छोटी-छोटी आवश्यकताओं को नहीं भूलता, बल्कि उन्हें पूरी करने की व्यवस्था करता है, उस से यह आशा कैसे की जा सकती है कि वह हमें योही संसार में भटकने के लिए छोड़ देगा और हमारे मार्ग-दर्शन की कोई व्यवस्था न करेगा।

मनुष्य के मार्ग-दर्शन के लिए एक मार्ग-दर्शक तो अल्लाह ने मनुष्य के अपने अन्तर में रख दिया है। अल्लाह ने मानव-प्रकृति को ऐसे साँचे में ढाला है कि वह अच्छे-बुरे विचार और भले-बुरे कर्म में अन्तर कर सके। इसके साथ ही अल्लाह ने विश्व में अपनी निशानियाँ और चिह्न फैला रखे हैं जिनके द्वारा मनुष्य को सत्य के लिए दिशा-दर्शन मिल सकता है। किन्तु मानवीय मार्ग दर्शन के लिए अन्तर्बोध या सहज ज्ञान सम्बन्धी (*Intuition*) और ऐहिक (*Cosmic*) दिशा दर्शन को ही पर्याप्त नहीं समझा गया बल्कि इसके साथ अल्लाह ने मनुष्यों के बीच अपने 'रसूलों' और 'नबियों' को भेजा ताकि वे लोगों को जीवन का सत्य और स्वाभाविक मार्ग दिखायें और उन्हें आचार-विचार की प्रत्येक पथ भ्रष्टता से बचायें। अल्लाह ने जिन महान् पुरुषों को 'रिसालत' (ईशदूतत्व) का पद प्रदान किया उन्हें उसने असाधारण ज्ञान और सूझ-बूझ दी ताकि वे स्वयं सत्यमार्ग पर स्थिर रह सकें और दूसरे लोगों को सत्यमार्ग दिखाने के प्रति अपने दायित्वों को पूरा कर सकें। पथभ्रष्टता और गुमराही से बचने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य 'रसूल' पर 'ईमान' लाये, उस के आदेशों का पालन करे। 'रसूल' अल्लाह के सन्देश होते हैं। उन पर 'ईमान' लाये बिना न अल्लाह के विषय में मनुष्य को धारणा

और कल्पना ठीक हो सकती है और न दूसरे परोक्ष सम्बन्धी वास्तविकताओं के सम्बन्ध में उसे ऐसा ज्ञान मिल सकता है जिस पर पूरा भरोसा किया जा सके और न उनका जीवन ईश्वरीय इच्छा के अनुसार व्यतीत हो सकता है।

फिर 'रिस्मालत' (ईश्वरत्व) पर 'ईमान' ही वह चीज है जो सारे मनुष्यों को एक आन्धा और विश्वास पर सगठित कर सकती है। लोगों में धारणा एवं विचार सम्बन्धी जितने भी मत-भेद पाये जाते हैं उनका कारण वास्तव में गुमान, अटकल और अनुमान का अनुपालन है। वास्तविकता विभिन्न नहीं हो सकती। रसूलों के पास अल्लाह का दिया हुआ वास्तविक ज्ञान होता है। उन्होंने ने एक सत्य की ओर लोगों को आमन्त्रित किया। नसार के विभिन्न भागों में जितने भी 'रसूल' आये सबकी मौलिक शिक्षा एक थी। सब ने लोगों को एक एकेश्वरवाद, ईश-दासता और ईश-उपासना की ओर बुलाया और उन्हें 'आखिरत' के दिन से सचेत किया। अल्लाह के 'रसूल' ने जो आदेश भी दिया वह अल्लाह की ओर से दिया और जीवन की जिस पद्धति की शिक्षा भी दी वह वही है जो अल्लाह की ओर से उन्हें मिली थी। अल्लाह के 'रसूलों' ने जो शिक्षा दी है वह सत्य और न्याय पर अवलम्बित है। वह अटकल, अनुमान और तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं से रहित है।

अल्लाह की ओर से लोगों के मार्ग-दर्शन के लिए बहुत से 'रसूल' और 'नबी' आये जिनमें कुछ का कुरआन में उल्लेख भी हुआ है। सब के अन्त में अल्लाह ने हजरत मुहम्मद सल्ल० को अपना 'रसूल' और पैगम्बर बना कर भेजा। आपका जीवन-चरित्र और आपके जीवन-वृत्तान्त विस्तार के साथ सुरक्षित है। आपकी लाई हुई किताब उन्हीं शब्दों के साथ मौजूद है जिन शब्दों में आपने उसे ससार के सामने प्रस्तुत किया था। अगले 'नबियों' के जीवन-चरित्र और उनकी शिक्षाएँ आज अपने वास्तविक रूप में सुरक्षित नहीं हैं। उनसे जिस चीज का भी सम्बन्ध जोड़ा जाता है, वह ऐसा नहीं जिसको पूरे भरोसे के साथ लोगों के सामने प्रस्तुत किया जा सके। अगले नबियों की मौलिक शिक्षाएँ क्या थी और उन्होंने लोगों को किस मार्ग की ओर बुलाया था इसे मालूम करने का एक ही साधन ऐसा है जिस पर पूरा विश्वास किया जा सकता है। वह है अल्लाह के अन्तिम 'रसूल' हजरत मुहम्मद स० का चरित्र, उनकी जीवनी और उनका लाया हुआ सन्देश, जो अपने वास्तविक रूप में हमारे सामने मौजूद है। आप ने ससार को जिस मार्ग की ओर बुलाया है वही वह मार्ग है जिसकी ओर अगले

‘नबियो’ ने भी लोगों को आमन्त्रित किया था ।

अगले ‘नबियों’ की ‘नुवूवत’ (ईश-दूतत्व) विशेष समय और विशेष लोगो के लिए थी जिनमे वे आये थे । हज़रत मुहम्मद की ‘नुवूवत’ को अल्लाह ने किसी विशेष युग या किसी विशेष जाति तक सीमित नहीं किया; बल्कि आपको अल्लाह ने ‘कियामत’ तक के लिए और सारे ससार का ‘रसूल’ बना कर भेजा । आपके द्वारा अल्लाह ने ‘दीन’ (धर्म) को पूर्ण कर दिया । मार्ग-दर्शन की जो जीवनदायिनी निधि पिछले ‘नबियो’ के द्वारा भेजी जाती रही है, पूर्ण कर दी गई । हज़रत मुहम्मद के पश्चात् न किसी नवीन नुवूवत की आवश्यकता है और न आप के पश्चात् कोई नया ‘नबी’ आने वाला है । अब सत्य-मार्ग पाने और शाश्वत-सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य आप का अनुसरण करे । जिसने आप का इन्कार किया उसके लिए सम्भव नहीं कि वह सही रास्ते को पा सके और दोनों लोक में सफल हो सके । आप का इन्कार वास्तव में अगले सभी ‘नबियों’ का इन्कार है । इसलिए कि आप उसी धर्म के आमन्त्रणदाता हैं जिसका आमन्त्रण अगले ‘नबियो’ ने दिया है । समस्त नबियो का सम्बन्ध एक गरोह से है ।

रहा यह प्रश्न कि ‘नबियों’ और ‘रसूलों’ के द्वारा अल्लाह ने अपना सन्देश क्यों भेजा ? जो अल्लाह रसूलों को अपनी इच्छा और अपने सन्देश की सूचना दे सकता था, वह सीधे (*Directly*) प्रत्येक व्यक्ति को मार्ग क्यों नहीं दिखाता ? यह प्रश्न केवल दृष्टि की सकीर्णता के कारण ही किया जाता है । विश्व की वर्तमान व्यवस्था और मार्ग-दर्शन की इस रीति में कि अल्लाह प्रत्यक्ष प्रत्येक व्यक्ति को सम्बोधित करे, कोई सम्पर्क नहीं है । रहस्यमयता इस जगत का सामान्य नियम (*General law*) है । संसार की प्रत्येक वस्तु अपने अस्तित्व को स्थिर रखने और अपने विकास के लिए हर क्षण ईश्वरीय अनुदान पर आश्रित है परन्तु फिर भी बीच में कार्य-कारण के इतने परदे डाले गये हैं कि वास्तविकता का प्रत्यक्ष निरीक्षण किसी के लिए सम्भव नहीं है । रहस्यमयता के नियम से मनुष्य को अलग कर देने का अर्थ यह है कि रहस्यमयता की समस्त व्यवस्था निरर्थक हो जाये । इसलिए ‘रिसालत’ और ‘वह्य’ (दैवी प्रकाशन, *Revelation*) या रिसालत ही मार्ग-दर्शन का वह साधन है जो वर्तमान जगत के अनुकूल है । ‘रिसालत’ ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा मनुष्य को जीवन के स्पष्ट आदेश भी मिल सकते हैं और साथ-साथ रहस्यमयता का नियम भी शेष रह सकता है । इस छिपाव और रहस्यमयता से अभीष्ट वास्तव में मनुष्य की अन्तःप्रेरणा और उसके संकल्प आदि की परीक्षा है ।

रिसालत पर ईमान

عَنْ جَابِرٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَالَّذِي نَفْسُ مُحَمَّدٍ
بِيَدِهِ لَوْ بَدَأَ الْكَفْرُ مُوسَى فَأَبْعَثْنَاهُ وَتَرَكْتُ مُوسَى لَضَلَّاهُ عَنْ سَوَاءِ السَّبِيلِ
وَلَوْ كَانَ مُوسَى حَبًّا وَادْرَكَ نُبُؤِي لَا تَبَعَنِي ——— دارمی، مہسدا احمد

१ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस (अल्लाह) की जिसके हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं, यदि मूसा तुम्हारे सामने प्रकट हो और तुम उन का अनुसरण करो और मुझे छोड़ दो, तो निश्चय ही तुम सीधे मार्ग से भटक जाओगे। यदि मूसा जीवित होते और मेरी 'नूबूवत' (के समय) को पाते, तो मेरा अनुसरण करते।
—दारमी, मुसनद अहमद

२ हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा उस (अल्लाह) की कसम जिसके हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं, इस 'उम्मत' (समय) का जो कोई भी—'यहूदी' हो या ईसाई—मेरी खबर

१ हजरत उमर रजि० नबी सल्ल० की सेवा में 'तौरात' की कोई प्रति ले के आए उस अवसर पर आपने वह बात कही है जिसका वर्णन इस 'हदीस' में हुआ है। आपका ध्येय वास्तव में इस बात को मन में बिठाना था कि सत्य मार्ग पाने के लिए यह बात आवश्यक भी है और पर्याप्त भी कि तुम मेरा अनुवर्तन करो। आज यदि हजरत मूसा अ० मौजूद होते जिन पर 'तौरात' का अवतरण हुआ था, तो उनके लिए भी अनिवार्य होता कि वे मेरी लाई हुई 'शरीअत' (धर्म विधान) का पालन करें। हजरत मुहम्मद सल्ल० की लाई हुई 'शरीअत' में ऐसी विशेषताएँ पाई जाती हैं कि वह 'कियामत' तक बदलते हुए समयों में साथ दे सके और समस्त लोगों के ग्रहण करने योग्य हो सके। अगली 'शरीअतें' और उनके आदेश विभिन्न समयों और विभिन्न जातियों के लिए उतरे थे। हजरत मूसा अब ससार में नहीं हैं। हजरत ईसा अ० जीवित हैं, अन्तिम समय में जब वे आयेंगे तो वे नबी सल्ल० का ही अनुवर्तन करेंगे।

मुन ले फिर वह उस चीज पर 'ईमान' लाये बिना मर जाये जिसे दे कर मुझे भेजा गया है, तो वह ('जहन्नम' की) आग वालो मे ही होगा^२।

—मुस्लिम

३ हजरत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रजि० कहते है कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल०) के पास आया, उसने कहा हे अल्लाह के रसूल ! ईसाइयो मे मे एक व्यक्ति है जो 'इञ्जील' को दृढतापूर्वक पकड़े हुये है (अर्थात् इञ्जील के आदेशो का पूर्णतः पालन करता है) और 'यहूदियो' में एक व्यक्ति है जो 'तौरात' को दृढतापूर्वक पकड़े हुये है, वह अल्लाह और 'रसूल' पर 'ईमान' भी रखता है फिर भी वह आप (की लाई हुई 'शरीअत' अर्थात् धर्म-विधान) का अनुसरण नहीं करता, तो कहिए उस के विषय में आप क्या कहते है ? आप ने कहा जिस 'यहूदी' या 'ईसाई' ने मेरे बारे मे सुना फिर उस ने मेरा अनुसरण नहीं किया वह ('जहन्नम' की) आग मे (जाने वाला) है। —दारकुतनी

४ हजरत अबूहुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं ('नबियो' में) ईसा सुत मरयम से सब से ज्यादा करीब हूँ, दुनिया में भी और 'आखिरत' मे भी 'नबी' परस्पर सौतेले भाई की तरह होते है, जिनका बाप एक होता है और माएँ अलग-अलग होती है, और उनका 'दीन' (धर्म) एक है^३ और हम दोनों के बीच कोई 'नबी' नहीं है^४।

२ अर्थात् जिस व्यक्ति को भी आपकी 'नुबूवत' और 'रिसालत' की सूचना मिल जाये उसके लिए आवश्यक है कि वह आपकी 'नुबूवत' और 'रिसालत' पर 'ईमान' ले आये और आपका अनुवर्तन करे। 'यहूदी' या ईसाई ही क्यों न हो, जो अगले 'नबियो' और अल्लाह की अगली किताबो पर 'ईमान' रखते हैं, उन के लिए भी आवश्यक है कि वे आप पर 'ईमान' लाये।

३ अर्थात् यद्यपि अल्लाह के 'नबी' विभिन्न युगो और विभिन्न देशो मे पदार्पण किये परन्तु उनका 'दीन' (धर्म) एक ही था। सबने एक ही मार्ग दिखाया। सबने अल्लाह की वन्दगी की ओर लोगो को बुलाया। सब एक ही अल्लाह के 'रसूल' या 'नबी' थे। समय और परिस्थिति के अनुसार आदेशो और कानून मे जो भी अन्तर रहा हो परन्तु मूल धर्म और मौलिक धारणाओ और विचारो मे कोई अन्तर नहीं था। हजरत मुहम्मद सल्ल० ससार के समक्ष ठीक वही धर्म प्रस्तुत कर रहे है जो दूसरे 'नबियो' ने प्रस्तुत किया है।

४ अर्थात् हजरत ईसा अ० के पश्चान् हजरत मुहम्मद सल्ल० ही को अल्लाह ने 'रसूल' (अपना मन्देशा) बनाकर भेजा बीच ने कोई और 'नबी' नहीं आया। 'रिवायतो' से मालूम होता है कि हजरत ईमा मसीह अ० को अल्लाह ने

५ हजरत उलाहा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल मन्ल० ने कहा जो व्यक्ति इनको गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई 'उलाह' (तूज) नहीं, और मुहम्मद उसके वन्दे और उस के 'रसूल' हैं और ईना मन्नाह के वन्दे, और उसके 'रसूल', उस का 'कलमा' (शब्द) जो उनसे मरयम तो और भेजा और उसकी ओर की आत्मा*

मानमान के उलाहिया। वे अभी जीवित हैं। उनका आगमान की ओर उठाया जाना मान्य में उलाही 'हजरत' है। 'कियामत' के निकट वे सत्तार में परांपर्य करेंगे। मन्ना मुहम्मद मन्ल० की 'रिवाज' और हजरत ईना मन्नीह अ० के शोका परांपर्य के बीच में कोई 'नबी' या 'रसूल' आने वाला नहीं है। दाइविन में जिन बारह रसूलों का उल्लेख हुआ है वे अल्लाह के रसूल नहीं बल्कि हजरत मन्नीह अ० के उत्तराधिकारी और सन्देशवाहक या दूत थे। ऐ० नूका ६ १३।

५ कुरआन में भी है : "मन्नीह गुन मरयम तो वग अल्लाह के 'रसूल' है, उसका 'कलमा' (शब्द, हुक्म) है जो उनसे मरयम तो और भेजा और उसके ओर की आत्मा, तो अल्लाह और उसके 'रसूल' पर 'ईमान' लाओ और तीन (ईश्वर) न रहो। बाज आ जाओ तुम्हारे लिए यही अच्छा है। अल्लाह तो केवल अकेला 'उलाह' (पूज्य) है उलाही महिमा के प्रतिकूल है कि उसके कोई बेटा हो, उमी की ह नारी चीजें जो आकाशों में और धरती में हैं और अल्लाह का कार्य नायक होना काफी है।"—मूर • अन्निमा आयत १७१

'इदीन' और कुरआन की इस 'आयत' में स्पष्ट है कि हजरत मुहम्मद मन्ल० भी अल्लाह के 'रसूल' और उसके वन्दे हैं और हजरत मसीह अ० भी अल्लाह के वन्दे और उसके 'रसूल' हैं। हजरत मसीह अ० को ईश्वर या ईश्वर का बेटा कहना वास्तविकता के विरुद्ध और अन्याय है। यह सत्य है कि हजरत मसीह अ० बिना पिता के पैदा हुए हैं। इसलिए वे अल्लाह की एक बड़ी निशानी अवश्य हैं, परन्तु उन्हें अल्लाह या अल्लाह का बेटा समझना सत्य के सर्वथा प्रतिकूल है वे उमी तरह अल्लाह के शब्द 'कुन' (हो जा) से पैदा हो गये हैं जिसे प्रकार हजरत आदम अ० को अल्लाह ने अपने हुक्म से पैदा किया है। अल्लाह के 'कुन' शब्द और धरती के तत्वों में अल्लाह की ओर से आत्मा का संचार होने से जिस तरह आदम अ० बिना माँ-बाप के पैदा हो गए उमी तरह मसीह अ० भी अल्लाह के 'कलमा कुन' ('हो' शब्द अर्थात् अल्लाह के हुक्म) और मरयम के गर्भाशय में अल्लाह की आर से आत्मा के डाले जाने से बिना पिता के पैदा हो गए हैं। कुरआन में एक जगह कहा भी गया है 'ईमा का हाल अल्लाह की दृष्टि में ऐसा ही है जैसे आदम का

है और 'जन्नत' और ('जहन्नम' की) आग सत्य है, अल्लाह उसे 'जन्नत' में दाखिल करेगा, जिस कर्म पर हो^६ । —बुखारी

६ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . तुम में से कोई 'ईमान' वाला न होगा यहाँ तक कि उसकी इच्छा उस (धर्म-विधान) की अनुयायिनी हो जाये जिसे ले कर मैं आया हूँ^७ । —शरहुस्सुन्नेह

अल्लाह ने उसे मिट्टी से पैदा किया फिर उस से कहा हो जा, तो वह हो जाता है" —सूरा आले इमरान आयत ५६ ।

६ अर्थात् जो व्यक्ति 'तौहीद' (एकेश्वरवाद), 'रिसालत', और 'आखिरत' पर 'ईमान' रखता है और अल्लाह के 'दीन' का इन्कार नहीं करता वह 'जन्नत' में अवश्य दाखिल होगा । यह दूसरी बात है कि किसी के कर्म अच्छे न हो और उसे 'जन्नत' में दाखिल होने से पहले सजा भुगतनी पड़े । "जिस कर्म पर हो" का एक अर्थ यह भी हो सकता है कि 'जन्नत' में मनुष्य का स्थान उसके कर्म के अनुसार होगा ।

७ मतलब यह है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० पर 'ईमान' लान का हक उस वक्त अदा होता है जब आदमी अपनी इच्छा को उस शिक्षा के अनुकूल बनाये जिसे लेकर आप आए हैं और अपनी मनमानी करने के बदले आपकी शिक्षाओं और आदेशों का पालन किया जाये । यहाँ तक कि अपनी इच्छाओं और आप के लाये हुए धर्मदेशों में कोई भेद शेष न रहे । मन की शुद्धता और विकास के पश्चात् यह बात अपने-आप प्राप्त हो जाती है कि मनुष्य पूरी रूचि और अनुराग के साथ अल्लाह के रसूल के आदेश और आपके लाये हुए ग्रन्थ के अनुसार जीवन यापन करने लग जाये ।



‘वह्य’-अवतरण

عَنْ عُبَادَةَ بْنِ الصَّامِتِ ۖ قَالَ كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِذَا أُنْزِلَ عَلَيْهِ الْوَحْيُ كُرِبَ لِدَاكَ وَتَرَبَّدَ وَجْهُهُ، وَفِي رِوَايَةٍ نَكَسَ رَأْسَهُ وَنَكَسَ أَصْحَاهُ مُرَّةً وَسَهْمًا. فَلَمَّا أُنْزِلَ عَنْهُ رَفَعَ رَأْسَهُ ————— مسلم

१ हजरत उबादह बिन सामित रजि० कहते हैं कि जब नबी सल्ल० पर ‘वह्य’ आती तो उस (की सख्ती) से आप को तकलीफ होती और आप के चेहरे का रंग बदल जाता। एक ‘रिवायत’ में है कि (उस समय) आप अपने सिर को झुका लेते और आप के ‘सहाबा’ भी अपने सिरों को झुका लेते। फिर जब ‘वह्य’ का अवतरण समाप्त हो जाता, तो आप अपना सिर उठाते। —मुस्लिम

२. हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० पर ‘वह्य’ का अवतरण होता तो जब तक ‘वह्य’ का अवतरण समाप्त न हो जाता हम में से किसी का साहस नहीं हो सकता था कि वह आपकी ओर निगाह उठा सकता?। —मुस्लिम, हाकिम

१ अर्थात् जब आप पर ‘वह्य’ अवतरित होती और दिव्य लोक से प्रत्यक्षत आप का सम्पर्क होता, तो स्वभावतः आपकी लौकिक चेतना और अलौकिक अनुभव शक्ति में एक प्रकार का सघर्ष होता जिसके कारण आपको एक प्रकार की तकलीफ होती, यहाँ तक कि इसका प्रभाव आपके चेहरे से भी व्यक्त होता था। उस समय आप अपना सिर झुका लेते थे। ‘वह्य’ की कठिनाई के अतिरिक्त ‘वह्य’ की महानता और उसकी प्रतिष्ठा के लिए भी यह आवश्यक था कि उस समय आपका सिर झुक जाये। और उन लोगों के सिर भी झुक जाये जो उस समय आपके पास मौजूद हों। कुरआन अल्लाह की ‘वह्य’ ही है जिसके बारे में कहा गया है “यदि हम इस कुरआन को किसी पर्वत पर उतारते, तो तुम उस (पर्वत) को देखते कि सझ्मा हुआ है और फटा जाता है अल्लाह के डर से।”—सूरा अल-हृश आयत २१।

२ वह्य-अवतरण के समय नबी सल्ल० की जो हालत होती थी उस से ऐसे तेज

३ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि हारिस बिन हिशाम रजि० ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा : हे अल्लाह के रसूल सल्ल० आप पर 'वह्य' कैसे आती है ? अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कभी-कभी वह मुझ पर इस प्रकार आती है कि जैसे घण्टी की आवाज हो और यह मुझ पर सब से अधिक कठिन होता है^३ । फिर इसका सिलसिला मुझ से कट जाता है और जो-कुछ कहा गया होता है उसे मैं सुरक्षित कर चुका होता हूँ^४ । और कभी-कभी 'फिरिश्ता' एक पुरुष के रूप में मेरे सामने प्रकट होता है, 'वह मुझ से बात करता है, तो जो-कुछ वह कहता है मैं याद कर लेता हूँ^५ । आइशा रजि० कहती है कि मैंने आपको देखा कडाके के जाड़े के दिन में आप पर 'वह्य' अवतरित हुई फिर उसका सिलसिला समाप्त हुआ और हालत यह थी कि आप के ललाट से पसीना बह रहा था^६ । —बुखारी

४. हजरत जैद बिन साबित रजि० कहते हैं कि (एक बार) अल्लाह ने अपने रसूल पर 'वह्य' उतारी उस समय आपकी रान मेरी रान पर थी । उसका मुझ पर इतना बोझ पड़ा कि मुझे भय हुआ कि कहीं मेरी रान न टूट जाये^७ । —बुखारी

और प्रनाप का प्रदर्शन होता था कि उस समय कोई व्यक्ति इसका साहस नहीं कर सकता था कि आपकी ओर निगाह उठा सके ।

- ३ अर्थात् इस प्रकार की 'वह्य' के समय घण्टी की सी आवाज आती जान पड़ती है और मुझे कठिन हालत से गुजरना पड़ता है ।
- ४ अर्थात् "वह्य" के अवतरण के पश्चात् 'वह्य' का विषय और वार्ता मुझे पूर्ण रूप से याद हो जाती है और 'वह्य' के द्वारा जो सन्देश मुझ तक अल्लाह की ओर से आता है वह मुझे कण्ठस्थ हो जाता है ।
- ५ अर्थात् कभी ऐसा होता है कि अल्लाह का 'फिरिश्ता' मानव-रूप में मेरे पास आता है, वह अल्लाह की ओर से जो सन्देश भी सुनाता है उसे मैं याद कर लेता हूँ ।
- ६ अर्थात् कडाके के जाड़े में भी मैंने देखा कि जब आप पर 'वह्य' का अवतरण हुआ तो आप का ललाट पसीने से भीग गया ।
- ७ यह हजरत जैद बिन साबित का अपना व्यक्तिगत निरीक्षण है । वे नबी सल्ल० के अत्यन्त निकट थे । नबी सल्ल० की रान उनकी रान पर थी । संयोग से आप (सल्ल०) पर 'वह्य' उतरने लगी । 'वह्य' के कारण आपकी रान का भार इतना बढ़ गया कि हजरत जैद बिन साबित रजि० को ऐसा लगा जैसे

५ सफवान बिन याला रजि० से उल्लिखित है कि याला रजि० ने उमर रजि० से कहा कि मुझे नबी सल्ल० को दिखाना जब आप पर ‘वह्य’ का अवतरण हो^५। वे कहते हैं कि उस बीच में जबकि आप जेराना^६ में थे और आप के साथ ‘सहाबा’ की एक मण्डली भी थी..... आप पर ‘वह्य’ का अवतरण हुआ। उमर रजि० ने याला रजि० को सकेत किया। याला आये। उस समय अल्लाह के रसूल सल्ल० के ऊपर एक कपडा था जिस के द्वारा आप पर छाया की गई थी। उन्होंने भीतर सिर डाला तो क्या देखा कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का मुखमण्डल लाल हो गया है और घरघराहट की आवाज आ रही है^{१०}। फिर (थोड़ी देर में) आपकी यह हालत समाप्त हुई। —बुखारी

- उनकी रान टूट जायेगी। कभी ऐसा भी होता था कि नबी सल्ल० ऊँटनी पर सवार होकर सफर कर रहे होते थे कि आप पर ‘वह्य’ उतरने लगती थी। ऊँटनी पर उसका इतना बोझ पड़ता कि वह बोझ से दब जाती थी और ऐसा लगता था कि वह बोझ का सहन न कर सकेगी और भूमि पकड़ लेगी।
- ८ अर्थात् हजरत याला रजि० चाहते थे कि जब नबी सल्ल० पर ‘वह्य’ आये, तो उस समय देखें कि आपकी क्या हालत होती है।
- ९ यह मक्का और तायफ के मध्य एक स्थान है।
१०. ‘वह्य’ की सख्ती के कारण आपका चेहरा लाल हो गया था और गले से घरघराहट की आवाज आ रही थी। जब ‘वह्य’ उतर चुकी, तो आपकी यह असाधारण दशा शेष नहीं रही बल्कि आप सामान्य रूप से जैसे ‘वह्य’ के पहले थे, उसी हालत में आ गये।

वह्य-अवतरण के सिलसिले में और बहुत-सी रिवायतें हैं यहाँ उदाहरणार्थ कुछ ‘रिवायतें’ प्रस्तुत की गई हैं। इन रिवायतों (उल्लेखों) से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ‘वह्य’ उतरने के समय नबी सल्ल० पर विशेष प्रकार की कैफियत छाई होती थी और आपकी हालत बदल जाती थी जिसका एहसास आपके निकट रहने वाले लोगों को भी हो जाता था। और वे समझ जाते थे कि इस समय आप पर ‘वह्य’ उतर रही है। वह्य-अवतरण के पश्चात् आप सहाबा रजि० को सूचित करते थे कि आप पर अल्लाह की ओर से क्या सन्देश अवतरित हुआ है। कुरआन क़रीम जो ‘वह्य’ के द्वारा आप पर उतर रहा था, उसे आप नियमित रूप से ‘वह्य’ समाप्त होने के पश्चात् लिपिबद्ध करा दिया करते थे।

मुखारविन्दु

عَنْ عَلِيِّ بْنِ ابْنِ طَالِبٍ كَانَ إِذَا وَصَفَ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ، لَمْ تَكُنْ
بِالطَّوِيلِ الْمَمِغُطِ وَلَا بِالْقَصِيرِ الْمَمَرَّدِ وَكَانَ رُبْعَةً مِّنَ الْقَوْمِ وَلَمْ يَكُنْ بِالْجَعْدِ
الْفَطِطِ وَلَا بِالسَّبِطِ كَانَ جَعْدًا رَحِيلًا وَلَمْ يَكُنْ بِالْمُطَهَّمِ وَلَا بِالْمُكَلَّمِ وَكَانَ
فِي الْوَجْهِ نَدْوِيرٌ أَبْيَضٌ مُّشْرَبٌ أَدْعَجُ الْعَبْنَيْنِ أَهْدَبُ الْأَسْفَارِ جَلِيلُ السُّتَاشِ
وَالْكَيْدِ أَجْرَدُ دُومِ مَرْبَةِ شَيْنِ الْكَفَيْنِ وَالْقَدَمَيْنِ إِذَا مَسْنَى بِيَتَقَطَّعُ كَأَنَّمَا
يَبْشَى فِي صَبَبٍ، وَإِنَّمَا التَّفَنُّ التَّفَتَّ مَعَابِيْرَ كَيْفِيَةِ خَاتِمِ النَّبُوَّةِ وَهُوَ خَاتِمُ
النَّبِيِّينَ أَجْوَدُ النَّاسِ صَدْرًا وَأَصْدَقُ النَّاسِ لَهْجَةً وَأَلْيَنُكُمْ عَرِيكَةً وَأَكْرَمَهُمْ
عَسِيرَةً، مَنْ رَأَاهُ بِيَدَيْهِ هَابَةٌ وَمَنْ خَالَطَهُ مَعْرِفَةً أَحَبَّهُ بِقَوْلِ مَاعِئُهُ لَمَّا رَأَى
قَوْلَهُ وَلَا بَعْدَهُ مِثْلَهُ — صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ — ترمذی

१ हजरत अली इब्न अबू तालिब रजि० जब नबी सल्ल० की विशेषता का वर्णन करते तो कहते कि आप न तो बहुत अधिक लम्बे थे और न कद के छोटे थे बल्कि लोगो में आप मध्य कद के थे^१। आप के केश न बहुत घुँघराले थे और न बहुत सीधे थे बल्कि हल्का बल खाये हुये थे। आप न तो बहुत मोटे थे और न छोटे चेहरे वाले थे। चेहरा (बिल्कुल मंडलाकार होने के बदले) हल्की गोलाई लिये हुये^२ और श्वेत लालिमा लिये था^३। आप की आँखे काली और पलके लम्बी, थी^४। हड्डियो के सिरे

१. 'रिवायतो' से मालूम होता है कि जब आप लोगो के बीच होते तो आप का कद दूसरो से निकला हुआ मालूस होता था। आप इतने ज्यादा लम्बे न थे कि बुरा लगता, आपका कद लम्बाई लिए हुए अवश्य था।

२. 'रिवायत' मे 'कान असीलुलखद' (आप लम्बे मुखारविन्दु वाले थे) के शब्द आते है।

३. आपका रंग गोरा लावण्य (सलोनापन) लिए हुए सरस, सौन्दर्य था।

४. आंतरिक गुणो के साथ अत्लाह ने आपको शारीरिक सुन्दरता भी प्रदान की

अर्थात् जोड़ मोटे थे। शरीर पर अधिक बाल न थे। सीने से नाभि तक बालों की एक पतली रेखा थी। हथेलियाँ और पाँव मासयुक्त थे^५। जब चलने को कदम उठाते तो ऐसा मालूम होता मानो ऊँचाई से ढाल में उतर रहे हैं^६। जब किसी ओर मुख करते तो पूरे शरीर के साथ मुख करते^७। आप के दोनों कन्धों के बीच 'नुबूवत' की मुह (छाप) थी^८। और आप 'नवियो' के समापक थे। आप लोगों में उदार और दानशील और जवान के अत्यन्त सच्चे थे। स्वभाव अत्यन्त कोमल और जाति के अत्यन्त भद्र और श्रेष्ठ थे। जो कोई आपको एकाएक देखता वह आप से भयभीत हो जाता और जो पहचान कर आप से मिलता-जुलता वह आपका अनुरागी बन जाता^९। आपकी प्रगसा करने वाला कहता है कि मैंने

थी। 'रिवायतो' से मालूम होता है कि सुन्दरता और आकर्षण की समस्त चीजें अल्लाह ने आपको दी थी। आपका माया चौड़ा था। मुख अत्यन्त पवित्र था। मुखमंडल उच्च विचारों का प्रतीक और निगाहे पवित्र भावों की सूचक थी। अधिकतर आप सोच-विचार में डूबे रहते। लोगों से मिलते, तो होंठों पर मुस्कराहट गनती होती। आवाज में भारीपन था और अपनी ओर आकर्षित कर लेने की अद्भुत क्षमता थी। आपकी खामोशी में भी मनोहरता होती थी। आपके सौन्दर्य और गम्भीरता में आनन्द-तत्त्व पाया जाता था। आपकी कोई अदा भी मनोहरता से वंचित न होती थी।

- ५ तलवे कुछ गहरे थे। आपके शुभ चरण बहुत ही चिकने थे। एडियो पर मास बहुत कम था।
- ६ आप चलते तो बलपूर्वक आगे को तनिक झुक कर चलते थे। तेज गति से चलते। कदम जमा कर रखते थे। देखने पर ऐसा लगता मानो आग ढालू भूमि में उतर रहे हों। आपकी चाल-ढाल आदि हर चीज से आपके सन्तुलित जीवन और चरित्र का पता चलता।
- ७ अर्थात् किसी की ओर रख करते, तो अभिमानी लोगों की तरह नहीं बल्कि उदार और विनयशील व्यक्ति की तरह पूरे तौर पर रख करते थे। आप किसी ओर मुख करते तो उसमें किसी समय भी किसी तरह की बेपरवाई नहीं होती थी।
- ८ 'रिवायतो' से मालूम होता है कि आपके दोनों कन्धों के बीच बाये कन्धे की नर्म हड्डी के पास कबूतर के अण्डे की तरह मास इकट्ठा था जिस पर सियाह तिल थे। यह भी दूसरी निशानियों की तरह आपकी 'नुबूवत' का एक प्रत्यक्ष लक्षण था। इसे 'मुह' नुबूवत' कहते थे।
- ९ अर्थात् पहले-पहल जो कोई आपको देखता उस पर हैवत और रोव छा जाता था, परन्तु जो आपके करीब और आपके सम्पर्क में आता और निकट से आपको

आप जैसा कोई नहीं देखा, न आप से पहले और न आप के बाद—आप पर अल्लाह की दयालुता और सलामती हो । —तिरमिजी

२ अबूउबैदा बिन मुहम्मद बिन अम्मार बिन यासिर कहते हैं कि मैंने रबीअ बिनत मुअविज बिन अफरा मे कहा कि हम से अल्लाह के रसूल सल्ल० के गुण बयान कीजिए । उन्होंने कहा वेटे । यदि तुम उन्हें देखते, तो इस तरह देखते जैसे सूर्य उदय हुआ है^{१०} । —दारमी

३ हजरत कप्रब बिन मालिक रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० को जब (किसी कारण) प्रसन्नता होती, तो आप का मुखमंडल ऐसा चमक उठता मानो आपका मुख चाँद का टुकड़ा है और हम इस से परिचित होते थे^{११} । —बुखारी-मुस्लिम

देखता और आप से मिलता-जुलता वह आप से प्रेम करने लगता । मित्रों के अलावा इस बात की गवाही शत्रुओं तक ने दी है । हुदैबिया की सन्धि के अवसर पर 'कुरैश' ने उरबा बिन मसऊद को अपना प्रतिनिधि बनाकर आपके पास भेजा । उसने वापसी पर कबीला 'कुरैश' के सम्मुख वयान दिया 'हैं कुरैश के लोगो । मैं 'किसरा' के पास उसके शाही दरबार मे जा चुका हूँ । 'कैसर' के पास उसके शाही दरबार मे जा चुका हूँ । और नज्जाशी के पास उसके शाही दरबार मे जा चुका हूँ । अल्लाह की कसम किसी जाति मे किसी भी बादशाह की वह शान (भव्यता) नहीं देखी जो शान मुहम्मद की मैंने उसके साथियों के बीच देखी । सच कहता हूँ मैंने ऐसे लोगो को देखा है जो किसी भी हालत मे उसका साथ नहीं छोड़ सकते । अब तुम सोच लो ।"

१० अर्थात् अल्लाह ने आपको पूर्ण रूप से मौन्दर्य, महिमा और प्रतिष्ठा प्रदान की थी ।

११ अर्थात् उस चमक को देख कर हमे आपकी प्रसन्नता का ज्ञान हो जाता था ।

आपके मुखाकृति आदि के विषय मे 'रिवायते' बहुत है । यहाँ उदाहरणार्थ केवल तीन 'रिवायते' दी गई हैं । 'नबी' अपनी जाति वालो मे विशिष्ट व्यक्तित्व का अधिकांगी होता है । उसका चरित्र उसके मन्चे और मन्ग पर होने का प्रत्यक्ष का प्रमाण होता है । मनुष्य का मुख उसके व्यक्तित्व, उसके कर्म, स्वभाव और उसके चरित्र का प्रतीक होता है । किसी की दृष्टि मे यदि दोष न हो, तो वह 'नबी' को देखने के बाद अवश्य ही उसके सच्चे होने की गवाही देगा । इतिहाम मे ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि केवल मुख देखकर लोगो ने आपके मन्चे होने की गवाही दी । हुसेन यहूद के एक प्रसिद्ध विद्वान थे । नबी सल्ल० जब मदीना पहुँचे, तो वे आपको देखने के लिए गए । बाद मे उन्होंने लोगो मे कहा मैंने जैसे ही आपको देखा समझ

आपकी मिसाल

عَنْ جَابِرِ بْنِ عَبْدِ اللَّهِ قَالَ جَاءَتْ مَلَائِكَةُ إِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَهُوَ نَائِمٌ فَقَالُوا إِنَّ لِمَا حَيْكُمُ هَذَا مَمَلًا فَأَضْرِبُوا لَهُ مَمَلًا فَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّهُ خَائِمٌ وَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّ الْعَيْنَ نَائِيَةٌ وَالْقَلْبُ يَقْظَانُ فَقَالُوا مَسَلَهُ كَسَلٌ رَجُلٌ بَنَى دَارًا وَجَعَلَ فِيهَا مَارِبَةً وَبَعَثَ دَاعِيًا وَمَنْ أَجَابَ الدَّاعِيَ دَخَلَ الدَّارَ وَآكَلَ مِنَ الْمَارِبَةِ وَمَنْ لَمْ يُجِبِ الدَّاعِيَ لَمْ يَدْخُلِ الدَّارَ وَلَمْ يَأْكُلْ مِنَ الْمَارِبَةِ فَقَالُوا أَوْ لَوْ هَالَهُ بَقَعَهَا فَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّهُ نَائِمٌ وَقَالَ بَعْضُهُمْ إِنَّ الْعَيْنَ نَائِيَةٌ وَالْقَلْبُ يَقْظَانُ فَقَالُوا الدَّارُ الْجَنَّةُ وَالدَّاعِيَ مُحَمَّدٌ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَمَنْ أَطَاعَ مُحَمَّدًا (صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ) فَقَدْ أَطَاعَ اللَّهَ (عَزَّ وَجَلَّ) وَمَنْ عَصَى مُحَمَّدًا (صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ) فَقَدْ عَصَى اللَّهَ (تَعَالَى) وَ مُحَمَّدٌ قَرْنِي بَيْنَ النَّاسِ ————— بحاری، مسلم

१ हजरत जाविर रजि० कहते हैं कि कुछ 'फिरिश्ते' नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुए जबकि आप सो रहे थे। उन्होंने (आपस में) कहा तुम्हारे इस साथी (अर्थात् नबी सल्ल०) की एक मिसाल है उसे

गया कि आपका चेहरा एक झूठे मनुष्य का चेहरा नहीं हो सकता। इसी प्रकार जब अबू रमसह तेमी अपने बेटे के साथ नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुये और लोगो ने दिखाया कि अल्लाह के रसूल ये हैं, तो देखते ही उन्होंने कहा कि वास्तव में यह अल्लाह के 'नबी' हैं (शमाइल-तिरमिजी)। एक बार मदीना में एक तिजारती काफिला आया और नगर में बाहर ठहरा। नबी सल्ल० ने उस से एक ऊँट का मौदा किया और मूल्य चुका देने का वादा करके ऊँट लेकर चले आये। वाद में काफिले वालों की चिन्ता हुई कि बिना जान-पहचान के मामला किया है कहीं ऐसा न हो कि हमारा धन मारा जाये। इस अवसर पर एक प्रतिष्ठित महिला ने कहा इतमिनान रखो मैंने उसका चेहरा देखा है जो पूर्णिमा की भौंति प्रकाशमान था वह कदापि तुम्हारे साथ बुरा मामला करने वाला नहीं हो सकता। यदि ऐसा व्यक्ति (ऊँट का धन) अदा न करे, तो मैं अपने पाम से अदा कर दूँगी।

इनके सामने बयान करो। उनमें से किसी ने कहा 'वे तो सो रहे हैं। इस पर दूसरे ने कहा : निस्सन्देह आँखें सोती हैं परन्तु मन जाग्रत है। फिर उन्होंने कहा आपकी मिसाल ऐसी है जैसे किसी व्यक्ति ने एक घर बनाया और उसमें खाने का एक दस्तर खान लगाया और बुलाने वाले को भेजा (कि लोगो को खाने के लिए बुलाये) जिसने इस बुलाने वाले को बान मान तो। वह घर में दाखिल हुआ और उसने दस्तर खान से खाना खाया। और जिसने बुलाने वाले की बात नहीं मानी वह न घर में दाखिल हुआ और न दस्तर खान से खाना खाया। फिर उन्होंने कहा आपके लिए इस (मिसाल) को स्पष्ट करो ताकि आप इसे समझ जाये, तो उन से किसी ने कहा वे सो रहे हैं और उनमें से कुछ ने कहा (ऐसा नहीं है) आँखें सो रही हैं परन्तु मन जाग्रत है। इस पर उन्होंने कहा 'घर (से अभिप्रेत) जन्नत है और बुलाने वाले मुहम्मद सल्ल० है, तो जिस किसी ने मुहम्मद सल्ल० की आज्ञा का पालन किया, उसने अल्लाह की आज्ञा का पालन किया, और जिसने मुहम्मद सल्ल० की अवज्ञा की, उसने प्रतापवान एव तेजोमय अल्लाह की अवज्ञा की'। और (वास्तव में) मुहम्मद सल्ल० लोगों के बीच अन्तर कर

१. इस हदीस में नबी सल्ल० के लिए जो मिसाल पेश की गई है उस से स्पष्ट रूप से यह बात सामने आ जाती है कि आपका स्थान क्या है। इस मिसाल से मालूम हुआ कि अल्लाह ने आपको आवाहक बना कर भेजा है। आप लोगो को उस घर की ओर बुलाते हैं जो अमर सफलता और सलामती का घर है जिसे 'जन्नत' कहते हैं, जिसे अल्लाह ने अपने उन बन्दो के लिए तैयार किया है जो उसके आवाहक की पुकार को सुने और मानें। ऐसे लोग 'जन्नत' में प्रवेश करेंगे और उसमें चुने हुए खानो को खायेंगे और उसकी चीजों से फायदा उठावेंगे। सदैव का सुख और आनन्द उन्हें प्राप्त होगा। कुरआन में भी कहा गया है (तुम नाशवान जीवन पर रीझते हो) और अल्लाह तुम्हें सलामती के घर (जन्नत) की ओर बुलाता है और जिसे चाहता है सीधे रास्ते पर लगा देता है (सूरा यूनस आयत २५)।

इस हदीस से एक मौलिक बात यह भी मालूम हुई कि अल्लाह का आज्ञाकारी बनने का एक मात्र उपाय यह है कि आदमी हजरत मुहम्मद सल्ल० के आदेशों का पालन करे। आप अल्लाह के 'रसूल' हैं। आप लोगो को जिन आदेशों के पालन का हुक्म देते हैं वे अल्लाह ही के दिए हुए आदेश हैं। मनुष्य तक अल्लाह के आदेश रसूलों ही के द्वारा पहुँचते हैं। अल्लाह की बन्दगी और उसके आज्ञापालन से जो आनन्द और परितोष प्राप्त होता है वह कही

देने वाले हैं ।

—बुखारी, मुस्लिम

२. नबीअ हरसी रजि० में उल्लिखित है कि अल्लाह के नबी सल्ल० की सेवा में 'फिरिदा' उपनि यन हुआ, तो आप ने कहा गया कि आपकी याँगों को नो जाना चाहिए और जानों को गुनना और दिल को समझना चाहिए । आप कहते हैं कि मेरी आप नो गई, मेरे जानों ने गुना और मेरे दिल ने समझा । आप कहते हैं कि उन समय यहाँ ने कहा गया कि एक सरदार ने एक घर बनाया और (उसमें) दन्नर खान चूना और एक बुलाने वाले को भेजा, तो जिस किसी ने उस बुलाने वाले के आमन्त्रण को स्वीकार किया उसने घर में प्रवेश किया और खान में ने खाया और उस ने वह सरदार भी प्रसन्न हो गया और जिस किसी ने उस बुलाने वाले के आमन्त्रण को स्वीकार नहीं किया उसने न घर में प्रवेश किया और न उसने दरदर खान में खाया खाया और सरदार भी उस से अप्रसन्न हुआ । कहा . अल्लाह सरदार (खाना) है और मुहम्मद (गल्ल०) बुलाने वाले है और वह घर इन्नाम . और दरदर खान जन्नत है । —दारमी

नही मिल जाता । प्राचीन ग्रंथों में भी अल्लाह के आदेश और उसके दिए हुए नियमों को अनुपम और मनोरम विधि गढ़ा गया है ।

"प्रभुवर १। (दिया हुआ) धर्मविधान पूर्ण है यह प्राण को बहाल करता है । प्रभुवर के नियम मिद्ध है, मन को आनन्दित कर देते है, प्रभुवर की आशा दोषरहित है, यह धर्मों में ज्यादाति न आती है । प्रभुवर के आदेश सत्य है और पूर्ण रूप में ठीक है ये स्वर्ण बलि कुन्दन में भी बढार प्रिय है, वे मधु से और (मधु के) छत्तों के टपकों से भी मधुर है ।"

(जबूर, भजन संहिता १६ ७-१२)

उस पर भी मनुष्य अल्लाह के बुलावों पर ध्यान नहीं देता और उस घर की ओर नहीं चलता जिस की ओर वह बुला रहा है तो वह एक भटका हुआ और आवाज़ मनुष्य है "अपने मकान से आवाज़ उस पक्षी के समान है जो अपने घोंसले में भटक जायें ।" अमसान (नीति वचन) २७ ८ ।

२. अर्थात् आप सत्य और असत्य को जानने की कसौटी है । आप के द्वारा सत्य और असत्य का भेद स्पष्ट रूप से सागरे आ गया । आपके कारण अल्लाह के आशाकारी और अवज्ञाकारी दोनों अलग-अलग हो गये । भले और बुरे एक-दूसरे से पृथक् पहचाने गये, और न्याय और अन्याय तथा सत्य और असत्य में भ्रम की कोई सम्भावना शेष नहीं रही ।

३. इस से पहले जो हदीस गुजारी है उस में घर से अप्रिप्रेत 'जन्नत' है, इस हदीस में घर से अभिप्रेत इस्लाम है । दोनों मिसालों का अभिप्राय एक ही है।

३ हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी मिसाल और उस चीज की मिसाल जिसे देकर अल्लाह ने मुझे भेजा है ऐसी है जैसे कोई व्यक्ति अपनी जाति वालों के पास आये और कहे हे मेरी जाति के लोगो ! मैंने (शत्रुओ की) एक सेना अपनी आँखो से देखी है और मैं नग्न डराने वाला हूँ तो (विपत्ति से) छुटकारा पाने की कोशिश करो । उसकी जाति वालो मे से कुछ लोगो ने उसकी बात मान ली और वे इतमिनान से रातो-रात निकल खड़े हुए और अपनी सामान्य चाल से चलते रहे और (अपने वैरियो से) छुटकारा पा गये । और उन में से कुछ लोगो ने झुठलाया और प्रात काल तक अपने स्थानो पर ठहरे रहे । (शत्रुओ की) सेना प्रात समय उन पर टूट पड़ी और उन्हें विनष्ट कर डाला और उनका पूर्ण रूप से उन्मूलन कर दिया । बस यही मिसाल उस व्यक्ति की है जिसने मेरा हुक्म माना और जो कुछ मैं लेकर आया हूँ उसका पालन किया । और यही मिसाल उस व्यक्ति की है जिसने मेरी अवज्ञा की और जो कुछ मैं लेकर आया हूँ उसे झुठला दिया^४ ।

—बुखारी, मुस्लिम

‘जन्नत’ मे प्रवेश पाने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य इस्लाम मे प्रवेश करे । इस्लाम को अपनाना परिणाम की दृष्टि से ‘जन्नत’ मे प्रवेश करना ही है । दोनो हदीसो मे विशेषत जोर इस पर दिया गया है कि ‘जन्नत’ मनुष्य को उसी दशा मे मिल सकती है जबकि वह नबी सल्ल० के आमन्त्रण को स्वीकार करे और आप पर ईमान ले आये । आप के आदेशो का पालन करने लग जाये । इस से ‘जन्नत’ मे प्रवेश पाने का अधिकार भी उसे प्राप्त होगा और अल्लाह की खुशी और प्रसन्नता भी उसे मिल सकेगी जो समस्त अमूल्य निधियो से बढ कर है, परन्तु यदि वह दूसरी नीति गृहण करता है, तो उसे ‘जन्नत’ मे प्रवेश भी प्राप्त न हो सकेगा और अल्लाह के प्रकोप का वह अलग भागी ठहरेगा ।

- ४ इस मिसाल से भी नबी सल्ल० के दायित्व और आपके स्थान का ज्ञान होता है । अरब मे लूट-मार साधारणत भोर मे होती थी, इसी लिए दुआ देने का यह तरीका वहाँ प्रचलित रहा है कि वे एक दूसरे से कहते थे कि ईश्वर तुम्हारा प्रात समय अच्छा रखे । अरब लोगो मे यह प्रथा भी थी कि किसी कबीले पर कोई विपत्ति आती और कोई वैरी आक्रमण करने के ध्येय से चढ आता, तो जो व्यक्ति उसे पहले देखता वह किसी ऊँची जगह चढकर अपने कपडे उतार कर सिर पर रख लेता और उनको हिलाता और चिल्ला-चिल्ला कर लोगो को सकट की सूचना देता । ऐसे व्यक्ति की हैमियत प्रत्यक्ष-

४. अबू हुरेरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी मिसाल उस व्यक्ति जैसी है जिसने आग जलाई, परन्तु जब उसने अपने वातावरण को भली भाँति प्रकाशमान कर दिया तो पतंगे और ये कीड़े जो आग पर गिरा करते हैं उसमें गिरने लगे । और वह है कि उन्हें रोक रहा है और ये हैं कि उसे विवश करके उसमें घुसे पड़ते हैं तो (मेरी और अपनी मिसाल ऐसी समझो कि) मैं तुम्हें आग (में पड़ने) से रोकता हूँ और तुम हो कि उसमें घुसे पड़ते हो' । —बुखारी

दर्शी गवाह की मानी जाती, और उनकी दी हुई सूचना पर सभी लोग विश्वास करने लगे । आगे चल कर लोगों को उराने और नावधान करने की यह रीति हर ऐसी परेशानी और विपत्ति के समय अपनाई जाने लगी जो अचानक सामने आई हो । नबी मल्ल० ने लोगों को समझाने के लिए अपने लिए नग्न उराने वाले की मिसाल बयान की ताकि लोग चौकें और अपनी जिम्मेदारियों को समझें और अल्लाह के अज्ञाव से बचने का उन्हें चिन्ता हो । आपने पहाड़ी पर चढ़कर भी लोगों को पुकारा था और उन्हें आने वाले कठिन दिन से (कियामत से) सावधान किया था ।

५. मुस्लिम की हदीस के अन्तिम शब्द ये हैं . आपने कहा यह मेरी और तुम्हारी मिसाल है कि मैं तुम्हारी कमरें पकड़-पकड़ कर ('जहन्नम' की) आग से बचाता हूँ । (कहना हूँ) आग से बचो, आग से बचो । तुम मुझे विवश करके उसमें घुसे जाते हो ।'

उस मिसाल से नासमझ लोगों की नादानी और अल्लाह के 'रसूल' के कर्ण भाव और हित-कामना का वास्तविक और जागरूक चित्र सामने आ जाता है । पतंगों को नहीं मालूम कि अग्नि उनके कोमल और निर्बल शरीर को भस्म कर डालेगी, वे उसमें गिरे पड़ते हैं । ठीक यही दशा उन लोगों की है जो अल्लाह के अज्ञाव और उसकी भडकाई हुई आग से निश्चिन्त होकर ईश्वरीय सीमाओं का उल्लंघन करते हैं और ईश-प्रकोप के भागी बनते हैं । अल्लाह का रसूल उन्हें अज्ञाव से बचाने का हर वह कोशिश करता है जो उनके बस में है । फिर भी कोई नहीं सँभलता, तो वह अपनी तबाही का स्वयं उत्तरदायी है ।



आप से प्रेम

عَنْ أَنَسٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: لَا يُؤْمِنُ أَحَدُكُمْ حَتَّىٰ أُوْنَّ
أَحَبَّ إِلَيْهِ مِنْ وَالِدَيْهِ وَوَلَدَيْهِ وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ————— بحاری، مسلم

१ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा तुम में से कोई व्यक्ति 'ईमान' वाला नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसको उसके बाप और उसकी औलाद और समस्त मनुष्यों से बढ़कर प्रिय न हो जाऊँ । — बुखारी, मुस्लिम

२ हजरत अब्दुल्लाह बिन हश्शाम रजि० कहते हैं कि हम नबी सल्ल० के साथ थे आप उमर बिन खत्ताब का हाथ अपने हाथ में लिये हुये थे । उमर रजि० ने आप से कहा : आप हे अल्लाह के रसूल ! मुझे

१ जो सम्बन्ध 'नबी' सल्ल० का मुसलमानों से और मुसलमानों का आप से है उस का मुकाबला कोई दूसरा नाता या रिश्ता नहीं कर सकता । कुरआन में भी कहा गया है " 'नबी का सम्बन्ध 'ईमान' वालों के साथ उस से अधिक है जितना उन लोगों का अपने-आप से है । " — अल-अहज़ाब आयत ६ । नबी सल्ल० को मुसलमानों से जितना ममत्व और प्रेम है उसके तुल्य माता-पिता का स्नेह और ममत्व भी नहीं हो सकता । बल्कि आप की शुभाकांक्षा तो उस से भी बढ़कर है जितनी कि किसी व्यक्ति को अपने लिए होती है । मनुष्य को उसके माता-पिता पथभ्रष्ट कर सकते हैं, उसके साथ स्वार्थपरता का व्यवहार कर सकते हैं । इसी प्रकार पत्नी और बच्चे भी मनुष्य को हानि पहुँचा सकते हैं । मनुष्य स्वयं अपने हाथों अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मार सकता है, परन्तु 'नबी' सल्ल० केवल वही करेंगे जिसमें हमारा कल्याण हो । आप हमारे लिए केवल वही प्रस्ताव कर सकते हैं जिसमें हमारा हित हो । ऐसी दशा में मुस्लिमों का भी कर्तव्य होता है कि वे सब से अधिक यहाँ तक कि अपने माता-पिता, पत्नी, बच्चे और अपने प्राण से भी बढ़कर आप से प्रेम करें । उनके लिए आप दुनिया की प्रत्येक वस्तु से अधिक प्रिय हो । वे आपके आदेशों का पालन करें । आपका जो फैसला या आदेश हो उसके आगे नतमस्तक हो जायें । मन में तनिक भी उन्हें यह चीज़ अप्रिय न लगे ।

अपने प्राण के सिवा हर चीज से ज्यादा प्रिय है। आपने कहा नहीं, उस (अल्लाह) की कसम जिसके हाथ में मेरे प्राण है जब तक तुमको मैं अपने प्राण से भी बढ़कर प्रिय न हो जाऊँ (तुम 'मोमिन' नहीं हो सकते)। उमर रजि० ने कहा . अब तो अल्लाह की कसम आप मुझे मेरे प्राण से भी अधिक प्रिय हो गए। आपने कहा अब हे उमर ! (तुम 'ईमान' वाले हो)^२।

—बुखारी

३. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह से प्रेम करो इसलिए कि वह तुम्हें विभिन्न प्रकार की नेमते (सुख सामग्री) प्रदान करता है और मुझ से प्रेम करो अल्लाह से प्रेम के कारण और मेरे घर वालों से प्रेम करो मुझ से प्रेम के कारण^३।

—तिरमिजी

४ हजरत अनस बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने 'नबी' सल्ल० से पूछा वह घड़ी ('कियामत') कब आयेगी ? आपने कहा तुमने उसके लिए क्या तैयार कर रखा है ? उसने कहा मैंने उसके लिए कुछ ज्यादा तयार नहीं किया है, न ज्यादा 'नमाजे' ही, न रोज़े और न 'सदका' परन्तु मैं अल्लाह और उसके 'रसूल' से प्रेम करता हूँ। आपने कहा तुम उन्हीं के साथ होगे जिनसे तुम्हें प्रेम है^४।

—बुखारी

२ इस 'हदीस' में भी वही बात कही गई है जो पहली 'हदीस' में कही गई है। कोई भी व्यक्ति वास्तविक रूप से 'मोमिन' (ईमान वाला) उसी समय होता है जबकि वह हर चीज से बढ़कर अल्लाह और 'रसूल' से प्रेम करे। वह अल्लाह और रसूल के प्रेम पर हर चीज निछावर कर सके। अल्लाह की राह में यदि माल व श्रीलाभ को छोड़ना पड़े तो छोड़ दे। यहाँ तक कि प्राण देने का अवसर आये तो इस से भी न हटे।

३ मतलब यह है कि यदि तुम अल्लाह के इसी उपकार पर विचार करो कि वह तुम्हें तरह-तरह की नेमते प्रदान करता है तो तुम्हारे मन में उस के प्रति कृतज्ञता और आदर की भावना जाग्रत होगी। और तुम अपने उपकारकर्ता प्रभु से प्रेम करने लग जाओगे। जब अल्लाह से प्रेम होगा तो उसके 'रसूल' से भी तुम्हें प्रेम होगा और रसूल से प्रेम होगा, तो अवश्य 'रसूल' के घर वालों से भी तुम प्रेम करोगे। प्रेम का मूलाधार और केन्द्र तो अल्लाह है। ईश-प्रेम को अपेक्षित है कि मनुष्य अल्लाह के 'रसूल' और उसके नातेदारों और सम्बन्धियों से भी प्रेम करे।

४ 'हदीस' का अन्तिम वाक्य विभिन्न अवसरों पर आपके मुख से निकला है।

५ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुगफ़फ़ल रज़ि० कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ और कहा मैं आप से प्रेम करता हूँ। आपने कहा . देख क्या कहता है ? उसने तीन बार कहा अल्लाह की कसम मैं आप से प्रेम करता हूँ। आपने कहा : यदि तू (अपनी बात में) सच्चा है, तो मुहताजी और फाके का मुकाबला करने के लिए हथियार तैयार कर ले। जो लोग मुझ से प्रेम करते हैं उनकी ओर मुहताजी और फाका उस से अधिक तेज़ी के साथ बढ़ते हैं जितना पानी की बाढ़ निचाई की ओर^५। —तिरमिजी

इब्न मसऊद रज़ि० की 'रिवायत' (अर्थात् उनकी उल्लिखित 'हदीस') में है कि जब 'सहाबा' ने आप से ऐसे व्यक्ति के बारे में पूछा जो किसी जमात या गरोह से प्रेम करता है परन्तु उसका कर्म उस जमात के लोगों के बराबर नहीं है, आपने यही उत्तर दिया "मनुष्य ('आखिरत' में) उसी के साथ होगा जिस से वह प्रेम करता था।" हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि मैंने मुसलमानों को इस्लाम के पश्चात् किसी चीज़ से उतना प्रसन्न होते नहीं देखा जितना इस शुभसूचना से उन्हें प्रसन्न होते देखा। यह 'हदीस' बताती है कि प्रेम का फल 'आखिरत' का साहचर्य है। किसी को जितना अधिक आपसे प्रेम होगा उसे उतना ही अधिक 'आखिरत' में आपका सामीप्य और साहचर्य प्राप्त होगा।

- ५ अर्थात् तुम्हें यदि वास्तव में मुझ से प्रेम है तो फिर हर प्रकार की कठिनाइयों और सकटों का मुकाबला करने के लिए तैयार रहो। मुझ से प्रेम है, तो तुम्हें वह मार्ग अपनाना होगा जिसका ज्ञान अल्लाह ने मुझे प्रदान किया है। इस मार्ग में नाना प्रकार की बाधाएँ सामने आती हैं। इसमें मुहताजी और फाके तक की नौबत भी आ सकती है। इस राह पर चलने वाले असत्य से किसी कीमत पर भी साँठ-गाँठ नहीं कर सकते। वे सत्य के लिए अपने प्राण दे सकते हैं, परन्तु अन्याय और असत्य के आगे अपना सिर नहीं झुका सकते। इस मार्ग पर वही चल सकता है जिसका अल्लाह पर पूरा भरोसा हो और 'आखिरत' पर पूर्ण ईमान हो। तुम्हें यदि अल्लाह के 'रसूल' से प्रेम है तो फिर आराम, सुख और विलास की अपेक्षा उस मुहताजी और फाके को प्रिय जानो जो अल्लाह की राह में पेश आता हो।

‘दरूद’ व सलाम

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عَمْرٍو بْنِ الْعَاصِ أَنَّه سَمِعَ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَقُولُ
مَنْ صَلَّى عَلَى صَلَوةٍ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ بِأَعَشْرًا _____ مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० से उल्लिखित है कि उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति मुझ पर एक बार ‘दरूद’ भेजता है, अल्लाह उस पर दस बार ‘दरूद’ भेजता है। —मुस्लिम

१ एक दयाशील पिता को अपने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा की चिन्ता होती है। वह अपने बच्चों को जीवन के सारे नियम सिखाता है। यहाँ तक कि वह उन्हें इस की भी शिक्षा देता है कि वे अपने बड़ों और माता-पिता का आदर-सत्कार किस प्रकार करें। इसी प्रकार अल्लाह का ‘रसूल’ भी, जिसकी हैसियत आध्यात्मिक दृष्टि से लोगों के बीच एक पिता ही की होती है, अपने अनुयायियों को छोटी-बड़ी हर चीज़ की शिक्षा देता है। नितान्त प्रेम और दया के साथ वह उन्हें इसकी भी शिक्षा देता है कि उन्हें अपने ‘रसूल’ और नायक से कितना गहरा सम्बन्ध होना चाहिए।

इस ‘हदीस’ में ‘ईमान’ वालों को इसकी शिक्षा दी जा रही है कि उन्हें अपने ‘रसूल’ पर ‘दरूद’ भेजना चाहिए। यह उस सम्बन्ध की स्वाभाविक मांग है जो सम्बन्ध कि ‘ईमान’ वालों को अल्लाह के रसूल से होता है। ‘ईमान’ वालों पर ‘रसूल’ के उपकार अगणित हैं। अल्लाह के रसूल सल्ल० ही के द्वारा उन्हें सत्य का प्रकाश मिला है। धर्म, ‘ईमान’ और नैतिक उच्चता उन्हें रसूल सल्ल० ही के द्वारा मिल सकी है। अब यह कृतज्ञता की बात है कि वे अपने ‘रसूल’ को प्राण और हृदय से भी अधिक प्रिय जानें, अल्लाह से उनके लिए दुआ करें, और उनके सच्चे आज्ञाकारी बन कर रहें। ‘दरूद’ के लिए अरबी में ‘सलात’ शब्द आया है। ‘सलात’ शब्द जब ‘अला’ के ‘सिला’ के साथ आता है तो इसके तीन अर्थ होते हैं। एक, किसी की ओर प्रेमपूर्वक रुख करना, और उस पर झुकना, किसी की ओर प्रवृत्त होना। दूसरे, किसी की प्रशंसा करना। किसी के लिए दुआ करना। इस ‘दरूद’ में प्रेम का अर्थ भी सम्मिलित है और प्रशंसा व स्तुति का अर्थ भी। इसके अतिरिक्त ‘रहमत’ अर्थात् दयालुता (*Divine Favour or Blessing*) का अर्थ भी इसमें सम्मिलित है। ‘रसूल’ पर ‘दरूद’ भेजने का अर्थ यह है कि हम ‘रसूल’ के अनुरागी हो जायें, उनकी प्रशंसा करें। उनकी विशेषताओं को

२ आमिर बिन रबीअह अपने बाप से 'रिवायत' करते हैं कि उन का बयान है कि मैंने रसूल सल्ल० को भाषण देते और कहते सुना कि जो व्यक्ति मुझ पर 'दरूद' भेजता है 'फिरिस्ते' उस पर 'दरूद' भेजते रहते हैं जब तक वह मुझ पर 'दरूद' भेजता रहता है^२ । —अहमद, इब्ने माजह

३ हूजरत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' के दिन मेरे साथ रहने का सबसे ज्यादा हकदार वह होगा जो मुझ पर सब से ज्यादा 'दरूद' भेजेगा^३ ।

—तिरमिज़ी

माने और अल्लाह से उनके लिए 'रहमत' की दुआ करे ।

यह जो कहा कि जो मुझ पर 'दरूद' भेजता है, अल्लाह उस पर दस बार 'दरूद' भेजता है, इसका अर्थ यह है कि ऐसे व्यक्ति पर अल्लाह की विशेष कृपा-दृष्टि होती है । ऐसा व्यक्ति अल्लाह को प्रिय हो जाता है । अल्लाह की उस पर दया और कृपा होती है । वह उसकी प्रशंसा करता है और उसके कार्य में बरकत देता है और उसे सम्मान और उच्चता प्रदान करता है । अल्लाह के 'रसूल' से गहरे हार्दिक सम्बन्ध और प्रेम के पीछे वास्तव में ईशकामना की भावना ही काम करती है । 'रसूल' से हमारे प्रेम और आसक्ति का कारण इसके अतिरिक्त और क्या है कि वे हमें अल्लाह का मार्ग दिखाते और हमें अल्लाह की इच्छा से परिचित करते हैं । इसलिए उस व्यक्ति की ओर जो 'रसूल' पर 'दरूद' भेजता है अल्लाह की 'रहमत' और दयालता का प्रवृत्त होना स्वाभाविक बात है ।

कुरआन में भी नबी सल्ल० पर 'दरूद' व सलाम भेजने का हुक्म हुआ है । कहा गया है "निस्सन्देह अल्लाह और उसके 'फिरिस्ते' नबी पर 'दरूद' (रहमत) भेजते हैं । हे लोगो जो 'ईमान' लाये हो । तुम भी उन पर 'दरूद' भेजो और खूब सलाम भेजो ।"—सूरा अल-अहज़ाब आयत ५६ ।

२ अर्थात् अल्लाह के 'फिरिस्ते' उस से अत्यन्त प्रेम करते हैं और उसके लिए अल्लाह से दुआये करते हैं ।

३ मनुष्य हृदय से 'इस्लाम' और 'ईमान' को जितनी अधिक मान्यता देगा उतना ही ज्यादा उसे नबी सल्ल० के उपकारों की अनुभूति होगी । और नबी सल्ल० के एहसानों का जितना ज्यादा एहसास होगा उतना ही ज्यादा वह आप पर 'दरूद' भेजेगा । 'दरूद' की अधिकता एक माप-दण्ड है जिस से मालूम होता है कि मनुष्य को 'दीन' (धर्म) से कितना लगाव है । आप पर ज्यादा-से-ज्यादा 'दरूद' भेजने का अर्थ यह है कि आदमी को आपके लाये हुए धर्म से गहना सम्पर्क है, आप उसे सब से बढकर प्रिय हैं । इसलिए अवश्य ही 'कियामत' में

४ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो लोग किसी मजलिस में बैठे और उस में अल्लाह का 'जिक्र' न करे और न अपने नबी पर 'दरूद' भेजे तो अवश्य ही वह मजलिस उनके हक में नवाही होगी, अल्लाह चाहे उन्हें यातना दे और चाहे उन्हें क्षमा कर दे ।
—तिरमिजी

५ हजरत अली रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कृपण है वह व्यक्ति जिसके सामने मेरा जिक्र किया जाये और वह मुझ पर दरूद न भेजे^५ ।
—तिरमिजी

६ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो कोई मुझे सलाम करता है, तो अल्लाह मेरी आत्मा को मुझ पर पलटाता है यहाँ तक कि मैं उसके 'सलाम' का उत्तर देता हूँ^६ ।
—अबू दाऊद

७. अबू हुमैद साइदी रजि० से उल्लिखित है कि लोगो ने निवेदन किया हे अल्लाह के रसूल सल्ल० हम आप पर किस तरह 'दरूद' भेजे ? आपने कहा कहो

“हे अल्लाह ! रहमत (दयालुता) भेज मुहम्मद पर और उनकी पत्नियों और उनकी सन्तति पर, जिस प्रकार तू ने 'रहमत' भेजी इबराहीम पर । और बरकत प्रदान कर मुहम्मद को और उनकी पत्नियों और उनकी सन्तति को जिस प्रकार तू ने बरकत प्रदान की इबराहीम को निस्सन्देह तू प्रशंसा (हम्द, दानशीलता) का अधिकारी और गौरव वाला है^७ ।”

—बुखारी, मुस्लिम

उसे आपका विशेष सामीप्य प्राप्त होगा । दूसरी 'रिवायतो' से मालूम होता है कि आदमी उसी के साथ होगा जिससे उसको प्रेम होगा ।

४ इस से बढ़कर कृपणता और वखीली की बात और क्या हो सकती है कि आदमी के सामने उसके सब से बड़े उपकारकर्त्ता का जिक्र आये और वह चुप रह जाये, उसके मुख से अपने उपकारकर्त्ता के लिए कोई प्रशंसा और शुभ कामना व्यक्त करने वाले शब्द या दुआ न निकले ।

५ अर्थात् अल्लाह सलाम करने वाले के सलाम रूपी उपहार को मुझ तक पहुँचा देते हैं और मेरी आत्मा को ऐसी दशा में लाते हैं कि मैं उसके मलाम का उत्तर दे सकूँ । इस तरह मृत्यु के पश्चात् भी आपको लोगो के दरूद का ज्ञान होता है ।

६ 'हदीसों' में नबी सल्ल० के सिखाये हुये और बहुतों ने 'दरूद' मिलते हैं । इस 'दरूद' से मालूम होता है कि नबी सल्ल० ने ऐसा नहीं किया कि इस दुआ को अपने ही लिए रखने । आपने अपनी पत्नियों और अपनी सन्तति को भी इनमें

आपका आज्ञापालन

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عَمْرٍو قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لَا يُؤْمِنُ أَحَدُكُمْ حَتَّى يَكُونَ هَوَاهُ تَبَعًا لِمَا جِئْتُ بِهِ ————— شرح السنة

१। हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम में से कोई 'ईमान' वाला न होगा जब तक कि उसकी इच्छा उस 'दीन' के अधीन न हो जाये जिसे लेकर मैं आया हूँ ।
—शरहुस्मुन्नह

शामिल कर लिया है । कुछ दरूदों में आपने अपनी 'आल' (अपने लोगो) को भी शामिल किया है । उदाहरणार्थ बुखारी और मुस्लिम में कअब बिन उजरह रजि० से उल्लिखित है कि एक दिन अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारे पास आये, तो हमने कहा हे अल्लाह के रसूल ! हमने आप पर सलाम भेजने का तरीका तो मालूम कर लिया मगर आप पर 'दरूद' किस तरह भेजे ? आप ने कहा यो कहा करो ।

“हे अल्लाह ! 'दरूद' भेज मुहम्मद और मुहम्मदकी 'आल' (लोगो) पर जिस प्रकार तू ने 'दरूद' भेजा इबराहीम पर । निस्सन्देह तू प्रशंसा ('हम्द', दानशीलता) का अधिकारी और गौरव वाला है । हे अल्लाह ! बरकत प्रदान कर मुहम्मद की आल (लोगो) को जिस प्रकार तू ने बरकत प्रदान की इबराहीम को । निस्सन्देह तू प्रशंसा ('हम्द', दानशीलता) का अधिकारी और गौरव वाला है ।”

'आल' में नबी सल्ल० के घर और घराने के लोगो के अतिरिक्त वे लोग भी आ जाते हैं जो आपके अनुयायी और आपके मानने वाले हों ।

- १ वास्तव में 'मोमिन' (ईमान वाला) वही है जो आचार-विचार की उस पद्धति को अपनाये जिसकी ओर नबी सल्ल० ने लोगो को आमन्त्रित किया है । और दिल से यह मान ले कि सत्य वही है जिसे अल्लाह के रसूल सल्ल० ने सत्य कहा, और जिसे आपने असत्य कहा वह वास्तव में असत्य है । 'ईमान' का वास्तविक भाव यही है कि मनुष्य की रुचि और उमकी कामनाएँ और इच्छाएँ उस मार्ग-दर्शन के अधीन हो जाएँ जिसे लेकर अल्लाह का 'रसूल' ससार में आया है । जिस ने नबी के मार्ग-दर्शन (Guidance) को छोड़ कर अपनी तुच्छ इच्छाओं का पालन किया वह मीचे और मृत्यु मार्ग से दूर जा पड़ा । करआन में भी कहा गया है “उस से बढ़ कर पथभ्रष्ट कौन होगा जिस ने अल्लाह के मार्गदर्शन के बिना अपनी (तुच्छ) इच्छाओं का अनुसरण किया, अल्लाह अन्यायी लोगो

२ हजरत अबू हुदैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय के सब लोग 'जन्नत' में दाखिल होंगे सिवाय उसके जो इन्कार कर दे। ('सहाबा' ने) कहा इन्कार कौन करता है ? आपने कहा जिसने मेरी आज्ञा का पालन किया वह 'जन्नत' में जायेगा और जिसने मेरी अवज्ञा की निश्चय ही उसने मेरा इन्कार किया^२। —बुखारी

३. हजरत मालिक बिन अनस से एक 'मुरसल' रिवायत है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं तुम्हारे बीच दो चीजें छोड़े जा रहा हूँ जब तक उन्हें थामे रहोगे कदापि पथभ्रष्ट न होंगे अल्लाह की किताब और उसके 'रसूल' की 'सुन्नत' (तरीका)^३। —मूत्ता

४ हजरत अबू राफेअ रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं कदापि तुम में से किसी व्यक्ति को न पाऊँ कि वह अपनी मसनद पर तकिया लगाये बैठा हो और उसे मेरे उन आदेशों में से कोई आदेश पहुँचे जिनका मैंने हुक्म दिया हो या जिनसे मैंने रोका हो, तो वह कहे कि मैं नहीं जानता, जो-कुछ मैंने अल्लाह की किताब में पाया उसका अनुसरण किया^४। —अहमद, अबूदाऊद, तिरमिजी, इब्न माजह

को राह पर नहीं लगाता।” —सूर अल-कसस आयत ५०।

२. अर्थात् जो आपकी अवज्ञा करता है और आपके आदेशों का पालन नहीं करता वह वास्तव में आप का इन्कार करता है।

३. मालूम हुआ कि गुमराही और पथभ्रष्टता से बचने के लिए जहाँ अल्लाह की किताब का अनुसरण आवश्यक है वही हमारे लिए यह भी आशंक है कि हम अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० की 'सुन्नत' (तरीके) और आप के आदेशों का पालन भी करें। आपके आदेशों और उपदेशों से बेपरवाह हो कर तो कोई वास्तविक रूप में अल्लाह की किताब का अनुयायी भी नहीं बन सकता। अल्लाह ने अपने रसूल सल्ल० को अपनी किताब का भाष्यकार बना कर भेजा है। आपके कथन, आपका चरित्र, वास्तव में अल्लाह की किताब (कुरआन) की ही व्याख्या और विस्तार है। आपकी जहाँ और बहुत-सी जिम्मेदारियाँ थी वही एक महत्त्वपूर्ण दायित्व यह भी था कि आप लोगों को किताब और 'हिकमत' (*Wisdom*) की शिक्षा दे। दे० सूर अल-वकरह आयत १२६, आले इमरान आयत १६४, अल-जुमुआ आयत २।

४ 'मोमिन' (ईमान वाले व्यक्ति) के लिए आवश्यक है कि वह अल्लाह की किताब की तरह उन आदेशों का भी पालन करे जो अल्लाह के रसूल सल्ल० की ओर से उस तक पहुँचे हैं। आपकी 'सुन्नत' (तरीका) कुरआन की

५ हजरत जाबिर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने ('खुतबा' देते हुये) कहा ईश-प्रशसा और सलाम के पश्चात् (अब यह बात सुन लो कि) उत्तम कलाम (वाणी) अल्लाह की किताब (कुरआन) है और उत्तम मार्ग मुहम्मद का (दिखाया हुआ) मार्ग है और बुरी बातें वे हैं जो ('दीन' में) नई निकली हों और ('दीन' में) हर नई और बढ़ाई हुई बात गुमराही (पथभ्रष्टता) है^५ ।
—मुस्लिम

६ हजरत गुजैब बिन हारिस सुमाली रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिस जाति ने ('दीन' में) कोई नई बात निकाली उसी जैसी एक 'सुन्नत' (उस जाति से) उठा ली गई, तो 'सुन्नत' (नबी के तरीके) को दृढ़ता से पकड़े रहना, नई बात निकालने से अच्छा है^६ ।
—अहमद

व्याख्या की हैसियत रखती है (अन नह्ल आयत ४४) । व्याख्या के लिए व्याख्या सम्बन्धी आदेश भी अल्लाह की ओर से आपको प्रदान हुये । कुरआन में आपके बारे में कहा गया है "वह (नबी) उन्हें नेकियों का हुक्म देता और उन्हें बुराई से रोकता है और उनके लिए पाक चीजें (शुद्ध वस्तुएं) हलाल (वैध) करता है और उनके लिए नापाक चीजें हराम (वर्जित) करता है"
—अल-आराफ आयत १५७ ।

५ हजरत आइशा रजि० का बयान है कि आप ने कहा "जिस ने हमारे इस 'दीन' में कोई ऐसी नई बात निकाली जो उस में नहीं है वह अस्वीकृत है"
—बुखारी, मुस्लिम ।

'दीन' में किसी नई चीज का दाखिल करना गुमराही है । 'दीन' में किसी परिवर्द्धन या सशोधन और निराकरण का अधिकार किसी को प्राप्त नहीं । अल्लाह की ओर से 'दीन' (धर्म) जिस रूप में हम तक पहुँचा है, हमें उसे उसी रूप में स्वीकार करना चाहिए । 'दीन' में किसी प्रकार का परिवर्द्धन करना वास्तव में दीन को विकृत करना और उस का रूप बिगाड़ना है । अगली जातियों का इतिहास साक्षी है कि जब उन के 'दीन' में 'विदअतों' (मनगढन्त नई बातों) को दाखिल होने का अवसर मिला, तो इस चीज ने 'दीन' को बिगाड़ कर रख दिया । विचार और धारणा स ले कर व्यवहार और कर्म तक सारी चीजों में बिगाड़ इतना पैदा, हो गया कि यह पता लगाना भी असम्भव हो गया कि उनका वास्तविक और मूल धर्म क्या था ।

६. 'विदअत' ('दीन' में मनगढन्त नई बातों) का 'सुन्नत' (नबी के तरीके) के साथ कोई जोड़ नहीं लग सकता । जिस प्रकार की मनगढन्त चीजें 'दीन' में शामिल की जायेगी उसी प्रकार की 'सुन्नत' लोगों के बीच से उठ

७ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिन किसी ने मेरे अनुयायी समुदाय के विगाड के समय मे मेरी 'मुन्नत' (तरीके) को अपनाया उसके लिए सी गहीदों का सवाब (पुण्य) है । —बैहकी

८. हजरत निलान हारिस मुजन्नी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने मेरी किसी ऐसी 'मुन्नत' (तरीका) को जीवित किया जो मेरे पश्चात् मुरदा हो गई हो, तो उसके अनुसार आचरण करने वालों के बराबर उसे बदला मिलेगा बिना इसके कि उन आचरण करने वालों के सवाब और बदले में कुछ कमी की जाये । और जिस व्यक्ति ने पयभ्रष्टता की कोई ऐसी बात निकाली जिस से अल्लाह और उसका रसूल प्रसन्न और सहमत नहीं तो उस (नई बात) के अनुसार आचरण करने वालों के गुनाहों के बराबर उसके हिस्से में गुनाह आयेगा बिना इसके कि उन (आचरण करने वालों) के बोझ में कुछ कमी की जाये । —तिरमिजी, इब्न माजह

जायेगी । 'दीन' अपनी जगह पूर्ण है, उसमें किसी परिवर्द्धन की न आवश्यकता है और न गुजायश । 'बिदअत' जब भी दाखिल होगी वह किसी 'मुन्नत' की जगह ले लेगी । उदाहरणार्थ 'नमाज' का एक तरीका नबी सल्ल० का मियाया हुआ है । अब यदि कोई व्यक्ति अपनी ओर से 'नमाज' में कोई बात दाखिल करे, तो उस से नमाज के उस भाग को आघात पहुँचेगा जिसमें वह अपनी ओर में कोई बात सम्मिलित कर रहा है । और फिर इस 'नमाज' का पूरा ढाँचा प्रभावित होगा । बुद्धिमानी यह नहीं है कि आदमी 'दीन' में मनगढ़न्त बातों का परिवर्द्धन करता रहे, बल्कि बुद्धिमानी की बात यह है कि आदमी 'मुन्नत' (नबी के तरीके) से चिमटा रहे । भलाई, बरकत और कल्याण सब-कुछ 'मुन्नत' ही से सम्बद्ध है ।

७ ऐसे समय में जबकि समुदाय में विगाड पैदा हो गया हो और लोग 'दीन' से गाफिल हो गये हो, तरह-तरह की बिदअतें प्रचलित हो गई हो दीन' के नाम पर तरह-तरह की आपत्ति सामने आ रही हो, ऐसे कठिन समय में नबी सल्ल० की 'मुन्नत' का पालन करना और उसे उजागर करना महान 'जिहाद' (धर्म-युद्ध) से कम नहीं है । इसलिए इसका बदला भी अल्लाह के यहाँ बहुत ज्यादा है ।

सारे संसार के रसूल

عَنِ الْحَسَنِ مُرْسَلًا قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ أَنَا رَسُولُ مَنْ
أَمْرًا حَيًّا وَمَنْ يُؤَلِّدُ بَعْدِي ————— السَّعْدُ، الْكَمِيُّ وَالْحَمَاضُ

१ हजरत हसन से 'मुरसल' रूप से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं उनका भी 'रसूल' हूँ जो (इस समय) जीवित है और उनका भी जो मेरे पश्चात् पैदा होंगे।

—इब्न सअद, अलकज्र वलखसाइस

२. हजरत अनस बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा उसे एक मुबारकबाद (बधाई) जिसने मुझे देखा और मुझ पर 'ईमान' लाया और उसे सात बार मुबारकबाद जिसने मुझे नहीं देखा और मुझ पर 'ईमान' लाया^१। —अहमद

३ हजरत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'पहले 'नबी' केवल अपनी जाति वालों की ओर भेजा जाता था और मैं समस्त मनुष्यों की ओर भेजा गया हूँ'^२।

—बुखारी, मुस्लिम

१ अर्थात् आपकी 'नुबूवत' का सम्बन्ध केवल आपके जीवन काल से ही नहीं है बल्कि आपकी 'रिसालत' कियामत तक के लोगों के लिए है।

२ इस 'हदीस' में बाद में आने वालों के लिए तसल्ली का सामान है। आपने उन्हें बार-बार मुबारकबाद इसलिए दी है कि वे आपको न देखने के बावजूद आपकी 'रिसालत' का इकरार करेंगे और आपको अपने प्राण से बढ़कर प्रिय समझेंगे। दूसरे पहलुओं से 'सहाबा' रजि० को जो श्रेष्ठता प्राप्त है उसमें उनका शरीक कौन हो सकता है।

३ अर्थात् यह आपकी विशेषता है कि आप सारे मनुष्यों के लिए रसूल बनाकर भेजे गए हैं जबकि अगले 'नबी' केवल अपनी जाति की ओर 'नबी' बनाकर भेजे गए थे। जो मार्ग दर्शन और ज्ञान लेकर आप आए हैं वह समस्त मनुष्य की सम्मिलित विरासत है। वह किसी विशेष जाति की विशिष्ट निधि नहीं है। वह किसी के लिए पराई कदापि नहीं है। यही कारण है कि नबी सल्ल० ने धर्म-प्रचार और सत्य आमन्त्रण के शुभ कार्य को अपनी जाति या अरब तक सीमित नहीं रक्खा, बल्कि बाहर के लोगों को भी आपने 'इस्लाम' की ओर आमन्त्रित किया। विभिन्न वादशाहों और शासकों को आपने आमन्त्रण-पत्र लिखे इसी उद्देश्य के लिए अल्लाह ने आपको एक ऐसा मुस्लिम समुदाय प्रदान किया

८ हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं काले और गोरे सबकी ओर भेजा गया हूँ ।

नुबूत' की समाप्ति

عَنْ أَبِي حَازِمٍ قَالَ قَاعَدْتُ أَبَاهُ زَيْدَ بْنَ مَخْرَمَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ فَقَالَ
السَّيِّدُ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ كَانَتْ بَيْنِي وَبَيْنَ آبَاءِ بَنِي إِسْرَءِيلَ تَسْوِيسَةٌ كَمَا
هَلَكَ سَيِّدِي خَلْفَهُ سَيِّدِي وَإِنَّهُ لَا يَنْتَبِهُ بَعْدِي وَسَيَكُونُ خُلَفَاءُ فَيَكْتُمُونَ قَالُوا
مَا تَأْمُرُنَا قَالَ أَوْفُوا بَبَيْعَةِ الْأَوَّلِ قَالُوا أَوَّلِ أَعْطَوْهُمْ حَقَّهُمْ قَالُوا إِنَّهُ سَأَلَهُمْ
عَمَّا اسْتَرَدَّاهُمْ ————— بخاری مسلم، ابن صالح، احمد

१. अबू हाजिम से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि मैं अबू हुरैरह रजि० के साथ पांच वर्ष रहा हूँ । मैंने उन्हें नबी सल्ल० से यह 'हदीस' बयान करते सुना कि आपने कहा 'बनी इसराईल' का नेतृत्व 'नबी' किया करते थे । जब कोई नबी मर जाता तो दूसरा नबी उसका उत्तराधिकारी होता परन्तु मेरे बाद कोई 'नबी' नहीं है बल्कि 'खलीफा' होंगे और वे बहुत होंगे । लोगो ने कहा : (उनके बारे में) आप हमें क्या हुक्म देते हैं ? कहा जो पहले हो उसको 'वैअत' (अनुपालन प्रतिज्ञा) पूरी करना । तुम उनका हक अदा करते रहना उस निगरानी और जिम्मेदारी के

जिमका दायित्व यह ठहरा कि वह अपने मिशन (Mission) को लेकर उठे और सत्य-सन्देश को सारे ससार में फैलाये । कुरआन में भी विभिन्न स्थानों पर स्पष्ट शब्दों में बयान किया गया है कि आप समस्त मनुष्यों के लिए 'रसूल' बनाकर भेजे गए थे । उदाहरणार्थ सूरा सबा आयत २८ पढ़िए "और (हे नबी !) हम ने तो तुम्हें समस्त मनुष्यों के लिए शुभसूचना देने वाला और सचेत करने वाला बनाकर भेजा है, परन्तु अधिकतर लोग नहीं जानते ।" एक दूसरी जगह है "और (हे नबी ! कहो) यह कुरआन मेरी ओर 'बह्य' किया गया है ताकि मैं इसके द्वारा तुम्हें और जिस किसी को यह पहुँचे सबको सचेत कर दूँ" सूरा अल-अनआम आयत १९ ।

पिछले 'नबियों' की 'नुबूत' विशेष काल और विशेष जाति के लिए थी, यह स्वयं उनके काम, उनकी कोशिश और उनके कथनों से सिद्ध है ।

४ अर्थात् मेरी 'नुबूत' किसी विशेष रंग और नस्ल की जाति के लिए नहीं है, बल्कि मैं समस्त मनुष्यों के लिए 'रसूल' बनाकर भेजा गया हूँ ।

विषय में अल्लाह स्वयं उनसे पूछेगा जो उसने उन्हें सौंपी है' ।

—बुखारी, मुस्लिम डब्नमाजह, अहमद

२ हजरत अबू हुदैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरी मिसाल और मुझ से पहले गुजरे हुए 'नबियों' की मिसाल ऐसी है जैसे किसी व्यक्ति ने एक घर बनाया और उसे अत्यन्त सुन्दर और छवि-सम्पन्न बनाया परन्तु एक कोने में एक ईंट की जगह छूटी हुई थी । लोग उस (घर) के चारों ओर फिरते और उसकी मनो-

१ यह 'हदीस' बताती है कि हजरत मुहम्मद सल्ल० अल्लाह के अन्तिम 'नबी' है । 'नुबूवत' का सिलसिला आप पर समाप्त है । यह हदीस वास्तव में कुरआन की इस 'आयत' की व्याख्या है "(हे लोगो !) मुहम्मद तुम्हारे पुम्पो में से किसी के पिता नहीं हैं, परन्तु वे अल्लाह के 'रसूल' और 'नबियों' के समापक हैं । और अल्लाह को हर चीज का ज्ञान है ।"—अल-अहजाव आयत ४० ।

'नुबूवत' वास्तव में एक पद है जिस पर अल्लाह विशेष आवश्यकता से किसी व्यक्ति को नियुक्त करता है । वह आवश्यकता जब होती है, तो अल्लाह की ओर से 'नबी' की नियुक्ति हो जाती है । जब आवश्यकता नहीं होती तो 'नबी' नहीं भेजे जाते । कुरआन के अध्ययन से मालूम होता है कि चार हालतों में नबी भेजे गए हैं (१) किसी विशेष जाति में कोई नबी न आया हो, और किसी दूसरी जाति में आये हुए 'नबी' का मन्देश भी उस तक न पहुँच सकता हो, तो उस जाति के मार्गदर्शन के लिए अल्लाह की ओर से 'नबी' आता है । (२) गुजरे हुए नबी की शिक्षाओं को लोगो ने भुला दिया हो या उस 'नबी' की शिक्षा में लोगो ने अपनी ओर से कुछ घटा-बढ़ा दिया हो कि सत्य और असत्य में अन्तर करना कठिन हो गया हो और वास्तविक रूप में उस 'नबी' का अनुसरण सम्भव न हो । (३) एक 'नबी' के साथ उसकी सहायता और सहयोग के लिए किसी और 'नबी' की आवश्यकता हो । (४) गुजरे हुए 'नबी' के द्वारा जो शिक्षा दी गई हो वह पूर्ण न हो अब उसे पूर्ण करने के लिए किसी 'नबी' के आने की आवश्यकता हो ।

नबी सल्ल० के आने के पश्चात् इनमें से कोई भी आवश्यकता शेष नहीं है । आप सम्पूर्ण ससार को सीधा मार्ग दिखाने के लिए 'रसूल' बनाकर भेजे गए हैं । आपकी 'नुबूवत' के समय से लेकर निरन्तर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती गई हैं कि आपका मन्देश सारे ससार में पहुँचाया जा सकता है और पहुँच रहा है । आपके बाद अलग-अलग जातियों में 'नबियों' को नियुक्त करने की आवश्यकता शेष नहीं रही । कुरआन इस बात का साक्षी है और नबी सल्ल० की जीवनी और 'हदीसों' का महान् भण्डार इस बात का स्पष्ट प्रमाण

हरता पर विस्मय प्रकट करते, और कहते थे यह ईंट भी क्यों न रख दी गई? तो वह ईंट में हैं और मैं 'नबियो' का समापक हूँ^२।

—बुखारी मुस्लिम

३ हजरत अबू हुदैर रह रजि० से उन्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे और ईसा के बीच कोई 'नबी' नहीं है वे अवश्य उतरेंगे जब तुम उन्हें देखोगे तो वे एक मध्य कद के लाल व श्वेत रंग वाले और दो केसरिया चादरे ओढ़े हुए होंगे (उन पर ऐसी ताजगी होगी जैसे वे अभी स्नान करके आ रहे हैं) मानो उनके सिर से पानी की बूँदें टपकी पड़ रही हैं यद्यपि उन्हें सजलता छुई भी न होगी। वे इस्लाम के लिए लोगो से युद्ध करेंगे^३।

—अबूदाऊद

है कि आपकी नाई हुई शिक्षा अपने वास्तविक रूप में सुरक्षित है। आपकी नाई हुई किताब अक्षरशः उसी रूप में मौजूद है जिस रूप में आपने उसे नमार के नमक प्रस्तुत किया था। आपके कथन, उपदेश और आपका सम्पूर्ण जीवन उस प्रकार हम तक पहुँचा है लगता है मानो आप हमारे बीच मौजूद हैं। नबी० मल्ल० के द्वारा अल्लाह ने 'दीन' (धर्म) को पूर्ण कर दिया। सुधारकर्ता आपकी सूचना के अनुसार मुस्लिम समुदाय में बराबर उठते रहे हैं और उनके द्वारा धर्म के पुनरुत्थान और उसे नवीनता प्रदान करने का कार्य होता रहा है।

२ मुस्लिम में इस विषय की चार 'हदीसों' आई हैं। एक 'हदीस' में ये शब्द मिलते हैं - "तो मैं आया और मैंने 'नबियो' के मिलसिले को समाप्त कर दिया।" मूसनद अबू दाऊद तयालसी में यह 'हदीस' जाविर बिन अब्दुल्लाह की उन्लिखित 'हदीसों' के मिलमिले में आई है। उसके अन्तिम शब्द ये हैं "मेरे द्वारा 'नबियो' का मिलसिला समाप्त हो गया।" इस 'हदीस' से मालूम होता है कि नबी मल्ल० के आने से 'नुबूवत' का भवन पूर्ण रूप से निर्मित हो गया और कोई जगह बाकी नहीं रही जिसे भरने के लिए किसी 'नबी' के आने की आवश्यकता हो। 'नुबूवत' और 'रिसालत' का सिलसिला आप पर पूर्ण हो गया। आपके बाद जो व्यक्ति भी अपने नबी 'होने' का दावा करे वह झूठा और मक्कार है।

३ यह 'हदीस' बताती है कि हजरत ईसा अ० आसमान पर मौजूद है। अल्लाह ने उन्हें जीवित उठा लिया है। यह धारणा सही नहीं है कि उन्हें सूली पर चढ़ा दिया गया है। अल्लाह ने उन्हें लोगो की शरारतों से सुरक्षित रखा। वे 'कियामत' के निकट अल्लाह के हुक्म से ससार में दोबारा पदार्पण करेंगे और 'इस्लाम' की सेवा करेंगे। हजरत मुहम्मद सल्ल० के रसूल होने और हजरत ईसा मसीह अ० के दोबारा पदार्पण करने के बीच कोई 'नबी' आने

४ हजरत अबू हुदैर रह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : हम सब से अन्तिम है और 'कियामत' के दिन सब से पहले हो जायेंगे केवल इतनी बात है कि पहले लोगों को किताब हम से पहले दी गई है और हमें उनके बाद दी गई है^४ ।

—बुखारी, मुस्लिम, नसई

५. हजरत जुबैर इब्न मुतइम रजि० कहते हैं कि मैंने नबी सल्ल० को कहते सुना मेरे कई नाम हैं, मैं मुहम्मद हूँ, और मैं अहमद हूँ और मैं 'माही' हूँ कि मेरे द्वारा अल्लाह 'कुफ्र' (अधर्म) को मिटायेगा^५ और मैं 'हाशिर' हूँ वह 'हाशिर' जिसके बाद लोग 'हश्म' (प्रलय-क्षेत्र) में एकत्र किए जायेंगे^६ और मैं 'आकिब' (पीछे आने वाला) हूँ । 'आकिब' उसे कहते हैं जिसके बाद कोई 'नबी' न हो । —बुखारी, मुस्लिम

६. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमारे सामने अपने ये नाम बयान किये : मैं मुहम्मद हूँ, अहमद हूँ, 'मुकफ्फी' हूँ^७, 'हाशिर' हूँ^८ तौबा वाला 'नबी' हूँ^९ और 'रहमत' वाला 'नबी' हूँ^{१०} ।

—मुस्लिम

वाला नहीं है ।

- ४ इस 'रिवायत' से भी मालूम हुआ कि हजरत मुहम्मद सल्ल० की 'रिसालत' (ईश-दूतत्व) अन्तिम रिसालत है । आप पर 'वह्य' (ईश्वरीय संकेत) और 'रिसालत' का सिलसिला समाप्त हो गया । इस 'हदीस' से आपके समुदाय की श्रेष्ठता पर भी प्रकाश पड़ता है ।
- ५ आपकी यह बात पूरी होकर रही, 'कुफ्र' जो आपसे संघर्ष कर रहा था, परास्त हुआ और धरती के एक बड़े भाग पर अल्लाह का 'दीन' कायम हुआ ।
- ६ अर्थात् मेरे बाद 'कियामत' ही आयेगी । मेरे बाद कोई 'नबी' न होगा ।
- ७ अर्थात् मैं समस्त 'नबियों' के अन्त में आने वाला हूँ । मेरे बाद कोई नवीन 'नुबूबत' कायम न होगी ।
- ८ अर्थात् 'कियामत' के दिन लोगो को एकत्र करने वाला । मेरे बाद 'कियामत' ही आयेगी जिस में लोग अल्लाह के सामने एकत्र किये जायेंगे ।
- ९ नबी सल्ल० अल्लाह के सामने अधिक 'तौबा' किया करते थे । आप बहुत ज्यादा अल्लाह की ओर पलटते और उस से क्षमा की प्रार्थनाएँ किया करते थे ।
- १० आप सम्पूर्ण ससार के लिए 'रहमत' (सर्वथा दयालुता) बना कर भेजे मये आप सारे ससार के नायक और सारे मनुष्यों को मुक्ति, कल्याण और सफलता का मार्ग दिखाने वाले हैं । कुरआन में भी कहा गया है "और (हे मुहम्मद !) हम ने तुम्हें सारे ससार के लिए 'रहमत' (दयालुता) ही बना कर भेजा है" ।

७ अब्दुल्लाह बिन इबराहीम बिन कारिज कहते हैं कि मैं गवाही देता हूँ कि मैंने हजरत अबू हुदैर रह रजि० को कहते सुना है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मैं अन्तिम 'नबी' हूँ और मेरी मस्जिद अन्तिम मस्जिद है^{११} । —मुस्लिम, नसई

८ अबुत्तुफैल से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे पश्चात् 'नुबूवत' नहीं है केवल शुभसूचक बाते हैं। कहा गया : वे शुभसूचक बाते क्या हैं, हे अल्लाह के रसूल ! कहा "अच्छा स्वप्न" या कहा "ठीक स्वप्न"^{१२} । —मुसनद अहमद, नसई, अबूदाऊद

९ हजरत अबू हुदैर रह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम से पहले के समुदायो में 'मुहद्दस' हुए हैं, यदि मेरे समुदाय में कोई ('मुहद्दस') है, तो वह उमर है^{१३} । —बुखारी, मुस्लिम

एक दूसरी 'हदीस' हजरत अबू हुदैर रह रजि० से उल्लिखित है कि आप ने कहा . मैं अल्लाह की भेजी हुई 'रहमत' (दयालुता) हूँ । —दारी, बैहकी-शोबुल ईमान ।

११, नसई की 'रिवायत' में 'अन्तिम' के लिए आखिर के बदले 'खातिम' शब्द प्रयुक्त हुआ है । इसका अर्थ वही है जो आखिर का होता है ।

दूसरी 'हदीसों' से मालूम होता है कि ससार में तीन मस्जिदें ऐसी हैं जिन्हें साधारण मस्जिदों के मुकाबले श्रेष्ठता प्राप्त है । जिन में 'नमाज' पढ़ने का 'सवाब' (पुण्य) दूसरी मस्जिदों में नमाज पढ़ने से हजार गुना अधिक है । इसी कारण इन मस्जिदों में 'नमाज' पढ़ने के लिए सफर कर के जाना वैध है । जबकि दूसरी किसी मस्जिद को यह हक नहीं पहुँचता कि आदमी अन्य मस्जिदों को छोड़ कर उस में 'नमाज' अदा करने के लिए सफर करे । इन श्रेष्ठतम मस्जिदों में पहली मस्जिद वह है जो जो 'मस्जिदे हराम' (*Inviolable Place of Worship*) के नाम से प्रसिद्ध है । जो आदर और विशेष प्रतिष्ठा वाली मस्जिद है । जिसके निर्माण कर्त्ता हजरत इबराहीम अ० थे । दूसरी 'मस्जिद मस्जिदे अकसा' (*Sacred Place of Jerusalem*) जिसे हजरत सुलैमान अ० ने बनाया था । तीसरी मस्जिद मदीना की 'मस्जिदे नबुई' जिसकी बुनियाद नबी सल्ल० ने रखी है ।

१२ अर्थात् मेरे बाद 'वह' व 'नुबूवत' की सम्भावना नहीं है । किसी को अल्लाह की ओर से कोई सकेत मिलेगा, तो वह अच्छे स्वप्न के रूप में मिलेगा ।

१३ अर्थात् मेरे समुदाय में यदि 'मुहद्दस' है तो उन में से निश्चय ही दूसरों के अतिरिक्त एक उमर (रजि०) भी है । कुछ 'रिवायतों' के शब्द ये हैं : "तुम से पहले बनी इसराईल में ऐसे लोग हुये हैं जिन से कलाम किया जाता था

१० हजरत सौबान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय मे तीस बड़े झूठे होंगे उन में से प्रत्येक अपने 'नबी' होने का दावा करेगा, हालाँकि मैं 'नबियो' का समापक हूँ मेरे बाद कोई 'नबी' नहीं^{१४} । —मुस्लिम

बिना इस के कि वे 'नबी' हो । मेरे समुदाय मे यदि कोई हुआ तो वह उमर होंगे' । 'मुहद्दस' और 'मुकल्लम' का अर्थ एक ही है । 'मुहद्दस' या 'मुकल्लम' उसे कहेंगे जो ईश्वरीय वार्त्तालाप या ईश्वरीय सम्बोधन से सम्मानित हो या जिसके साथ गैब के परदे (परोक्ष) से बात की जाये । मुस्लिम की कुछ रिवायतों मे मुलहमून शब्द भी प्रयुक्त हुआ है अर्थात् वे लोग जिन को 'इलहाम' होता हो, जिनके मन मे ईश्वर की ओर से बातें डाली जाती हो । जिनको दैवी प्रेणाएँ प्राप्त होती हो । अबू सईद खुदरी रजि० से 'मरफूअ' तरीके पर उल्लिखित है नबी सल्ल० से पूछा गया कि 'मुहद्दस' कैसा होता है? आपने कहा ये वे लोग है कि 'फिरिस्ते' इन की जिह्वा से बोलते है । विद्वानों ने इस का विभिन्न अर्थ समझा है । अधिकतर लोगो का विचार है कि यह वह व्यक्ति है जिसका ख्याल अधिकतर सही होता हो जिस के दिल मे अल्लाह के निकटवर्ती 'फिरिस्ते' की ओर से कोई बात इस तरह डाली जाये मानो उस से किसी ने कह दी है । किसी के विचार मे 'मुहद्दस' वह है जिस की ज़बान से सत्य और ठीक बात अकस्मात् बिना सकल्प के निकले ।

१४ इस 'हदीस' मे तीस बड़े मक्कारों का उल्लेख हुआ है । नबी सल्ल० ने मुस्लिम समुदाय को सचेत कर दिया कि 'नुबूवत' आप पर समाप्त है । आप के बाद 'नुबूवत' का जो भी दावेदार होगा वह झूठा होगा । आपकी यह भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई । आप के बाद अल्लाह की ओर से कोई नबी नहीं आया । आपकी सूचनानुसार 'नुबूवत' के झूठे दावेदार अवश्य उठे, परन्तु वे अपने छल और षड्यंत्र को छिपाने मे सफल न हो सके । उन का छल और उन की मक्कारी खुल कर रही । उनमे 'नुबूवत' का कोई तेज और पवित्रता नहीं पाई गई । इब्जील मे बयान हुआ है "झूठे नबियो से सावधान रहो जो तुम्हारे पास भेड़ों के भेष मे आते है, परन्तु अन्तर मे फाड़ने वाले भेड़िए है । उन के फलो से तुम उन्हें पहचान लोगे क्या झाड़ियो से अगूर, या ऊँट कटारो से अजीर तोड़ते है" ? —मत्ता ६ १५-१६ ।

आपकी कुछ प्रमुख विशेषताएँ

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: فَضَّلْتُ عَلَى الْأَنْبِيَاءِ
بِسَبْتٍ، أُعْطِيتُ مَحَامِيعَ الْكَلِمِ، وَنُصِرْتُ بِالرُّعْبِ وَأُحِلَّتْ لِيَ الْغَنَائِمُ وَجُعِلَتْ لِيَ
الْأَرْضُ مَسْجِدًا وَطَهُورًا، وَأُرْسِلْتُ إِلَى الْخَلْقِ كَأَقَّةٍ وَخَيْرَ مِنَ النَّبِيِّينَ — (ترمذی اور صحیح)

१ हजरत अबू हुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मुझे 'नबियो' में छ बातों में श्रेष्ठता प्रदान की गई है। मुझे सक्षिप्त और व्यापक अर्थयुक्त बात कहने की योग्यता दी गई है'। रोव के द्वारा मुझे सहायता प्रदान की गई^२, 'गनीमत' के माल को मेरे लिए अवर्जित किया गया^३, घरती को मेरे लिए मस्जिद और स्वच्छता प्राप्त करने का साधन बना दिया गया^४। मुझे सारे ससार के

१. अर्थात् मुझे ऐसी योग्यता प्रदान की गई है कि मेरे सक्षिप्त शब्द अत्यन्त सारगम्य और व्यापक अर्थ से युक्त होते हैं। नबी सल्ल० के शब्द स्पष्ट होते हैं परन्तु उनको विस्तृत कीजिए तो प्रत्येक विस्तार का वे ऐसा साध देते हैं कि मानो वे उसी के लिए आप के शुभ मुख से निकले हैं। कुरआन के बाद यह 'हदीस' का ही चमत्कार है कि स्पष्ट और सक्षिप्त होने पर भी उसमें अत्यन्त व्यापकता पाई जाती है।
२. अर्थात् दुश्मन पर रोव डाल कर और उसे आतंकित कर के मेरी सहायता की गई।
३. इस्लामी युद्ध में शत्रु का जो माल हाथ आता है उसे 'गनीमत' कहते हैं। अगले 'नबियो' के समय में इस माल को अपने काम में लाना अवैध था, परन्तु, अल्लाह ने अपनी कृपा से 'गनीमत' के माल को नबी सल्ल० की 'शरिअत' (धर्म विधान) में हलाल (वैध) कर दिया है।
४. अर्थात् मेरी 'शरिअत' (धर्म विधान) में 'नमाज' केवल मस्जिद और पूजा-गृहों तक ही सीमित नहीं है बल्कि घरती पर हर जगह नमाज पढ़ी जा सकती है और यदि पानी न मिले तो 'वजू' (शुद्धता के लिए हाथ-पाँव और मुँह आदि धोने) के बदले 'तयम्मूम' से काम चलाया जा सकता है और इसी तरह पानी न मिलने पर स्नान के बदले मिट्टी से 'तयम्मूम' किया जा सकता है। 'तयम्मूम' से अभिप्रेत यह है कि शुद्ध मिट्टी पर अपने दोनों हाथ मारे फिर सारे मुँह पर भली-भाँति मले इसी तरह दोबारा मिट्टी पर दोनों हाथों को मार कर दोनों हाथों को कुहनियों तक मले यह 'नमाज' का आदर

लिए 'रसूल' बना कर भेजा गया^५। और मुझ पर 'नवियों' के सिलसिले को समाप्त कर दिया गया^६। —मुस्लिम, तिरमिजी, इब्न माजह

२ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा 'कियामत' के दिन 'नवियों' में सबसे अधिक सख्या मेरे अनुयायियों की होगी। और मैं प्रथम व्यक्ति हूँगा जो 'जन्नत' का द्वार खुलवायेगा। —मुस्लिम

३ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मैं पहला व्यक्ति हूँ जो 'जन्नत' में सिफारिश करूँगा^७। नवियों में से किसी की उतनी तसदीक (समर्थन एवं पुष्टि) नहीं की गई जितनी मेरी तसदीक की गई। और 'नवियों' में से एक 'नबी' ऐसे है जिन की तसदीक उन के समुदाय के केवल एक व्यक्ति ने की है^८। —मुस्लिम

४. हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं 'कियामत' के दिन आदम की औलाद का नायक हूँगा। और सब से पहला व्यक्ति जो अपनी कब्र से उठेगा मैं हूँगा। सबसे पहले मैं सिफारिश करूँगा और सब से पहले मेरी सिफारिश कबूल की जायेगी —मुस्लिम

५. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'नवियों' में से हर एक 'नबी' को चमत्कारों में से उतना ही प्रदान किया गया जिस पर मनुष्य 'ईमान' ला सके और

और पवित्रता की भावना को बाकी रखने का एक उत्तम और मनोवैज्ञानिक उपाय है।

५ अर्थात् मैं सारे ससार का 'रसूल' हूँ। मुझे किसी विशेष जाति और देश के लिए 'रसूल' बना कर नहीं भेजा गया है, मैं तो सारे ससार को सत्यमार्ग दिखाने आया हूँ।

६ अर्थात् मेरे बाद कोई दूसरी 'नुबूवत' कायम होने वाली नहीं है, मैं अल्लाह का अन्तिम 'नबी' (सदेश वाहक और दूत) हूँ।

७ अर्थात् मेरी सिफारिश से बहुत से लोग 'जन्नत' में जायेंगे। और बहुत से लोगों के दर्जे मेरी सिफारिश से उच्च कर दिये जायेंगे।

८ अर्थात् मेरी 'नुबूवत' को मानने वालों की सख्या सब से अधिक है। एक 'नबी' तो ऐसे गुजरे है जिन को उन के समुदाय में से केवल एक व्यक्ति ने माना, शेष सब लोगो ने उन का विरोधी ही किया और उन्हें 'नबी' मानने से इन्कार कर दिया।

जो चीज मुझे प्रदान की गई वह 'वह्य' (ईश्वरीय वाणी) है जिसे अल्लाह ने मेरी ओर भेजा^६। इसलिए मुझे आशा है कि 'कियामत' के दिन मेरे अनुयायियों की सख्या समस्त 'नवियों' के अनुयायियों से अधिक होगी।
—बुखारी, मुस्लिम

६ मतलब यह है कि हर 'नबी' को उसके अपने युग और परिस्थिति के अनुसार चमत्कार (*Wonders*) प्रदान किए गए थे। मुझे अल्लाह ने जो विशेष चमत्कार प्रदान किया है वह वह्य एवं देवी प्रेरणा (*Inspiration*) का चमत्कार है। कुरआन जो 'वह्य' के द्वारा मुझ पर अवतरित हुआ है एक सर्वकालिक चमत्कार है। इसके द्वारा 'कियामत' तक लोग सीधा मार्ग पाते रहेंगे। मुझे जो चमत्कार मिला है उसकी विलक्षणता का कभी अन्त नहीं हो सकता।

कुरआन पर जितने पहलू से विचार कीजिए वह एक चमत्कार सिद्ध होगा। भाषा, साहित्य, वर्णनशैली, विषय, आशय आदि जिस पहलू से भी देखिए वह एक चमत्कार है। कुरआन जैसा कलाम पेश करने में सारा जग असमर्थ है। मानवीय मार्ग दर्शन के लिए कुरआन काफी है। विचार और धारणा से लेकर व्यक्तिगत और सामूहिक कार्यों और प्रयासों के लिए कुरआन एक मार्गदर्शक ग्रन्थ है।

कुरआन के चमत्कार का उल्लेख स्वयं कुरआन में भी हुआ है। उदाहरणार्थ एक स्थान पर कहा गया है "और यह कुरआन ऐसा नहीं है कि अल्लाह के सिवा कोई अपनी ओर से घड़ लाये बल्कि यह तो जो कुछ इस से पहले (आ चुका) है उसकी तसदीक और (अल्लाह की) किताब का विस्तार है—इस में कोई सन्देह नहीं—यह सारे ससार के 'रब' (पालन-कर्त्ता स्वामी) की ओर से है। क्या ये लोग कहते हैं कि इस (नबी) ने उसे स्वयं घड़ लिया है? कहो : यदि तुम (अपने दावे में) सच्चे हो, तो एक ही 'सूरा' उस की तरह बना लाओ। और अल्लाह के अतिरिक्त जिसको चाहो (इस कार्य में) अपनी सहायता के लिए बुला लो। —सूरा यूनस आयत ३७-३८।

अत्युक्ति से परहेज

عَنْ رَافِعِ بْنِ خَدِيجٍ قَالَ قَالَ قَدِيمُ النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الْمَدِينَةَ وَهُمْ
يَأْتِرُونَ النَّخْلَ. فَقَالَ مَا تَصْنَعُونَ؟ قَالُوا كُنَّا نَصْنَعُهُ. قَالَ لَعَلَّكُمْ لَوْ
لَمْ تَفْعَلُوا كَانَ خَيْرًا أَفْتَرَكُمُوهُ فَقَصَصْتُ. قَالَ: قَدْ كَرِهُوا ذَلِكَ لَهَا فَقَالَ إِنَّمَا
أَنَا بَشَرٌ إِذَا أَمَرْتُكُمْ بِشَيْءٍ مِنْ أَمْرِ دِينِكُمْ فَخُذُوا بِهِ وَإِذَا أَمَرْتُكُمْ بِشَيْءٍ
مِنْ رَأْيٍ فَإِنَّمَا أَنَا بَشَرٌ ————— مسلم

१ हजरत राफेअ बिन खदीअ रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० मदीना आये, तो उस समय मदीना वाले खजूर को 'ताबीर' किया करते थे। आप ने कहा यह क्या करते हो? लोगो ने कहा . हम ऐसे ही करते आये है। आप ने कहा . यदि तुम ऐसा न करो, तो शायद अच्छा हो। लोगो ने इस को छोड़ दिया। फलत पैदावार कम हो गई। उन्होने आप से इस का जिक्र किया तो आप ने कहा मैं तो केवल एक मनुष्य हूँ, जब मैं तुम्हे तुम्हारे किसी 'दीन' के (धर्म सम्बन्धी) मामले में हुक्म दूँ, तो तुम उसे ले लो और जब तुम्हे अपनी सम्मति से कुछ बताऊँ, तो बस मैं

१, खजूर की 'ताबीर' से अभिप्रेत एक प्रकार की पैवन्दकारी है। खजूर के मादा वृक्ष के शगूफे में नर वृक्ष का शगूफा रख दिया करते थे। इस प्रकार नर व मादा के मिलने से फल अच्छी आती थी। नबी सल्ल० ने 'ताबीर' के बारे में 'सहाबा' से पूछा तो वे इस के सिवा कुछ न बता सके कि हम इसे करते आये हैं। आपने कुछ सकोच के साथ इसे छोड़ देने की सम्मति दी, तो फल कम आई।

इस 'हदीस' से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आप एक मनुष्य थे कोई अलौकिक व्यक्तित्व आपका नहीं था। इसलिए यह आवश्यक नहीं था कि बागवानी के बारे में आप का अनुमान सही ही निकलता। आप बागवानी, कृषि, और शिल्प कला आदि सिखाने आये भी नहीं थे। परन्तु जिन मामलों में 'दीन' (धर्म) ने मार्ग दिखाया है उन में आपका अनुसरण अनिवार्य है। और उनमें आप के कथन के सत्य होने में कुछ सन्देह न होना चाहिए। जीवन के आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि समस्त क्षेत्र 'दीन' में सम्मिलित है और आप ने अल्लाह की ओर से इन सभी क्षेत्रों और विभागों में मार्गदर्शन का कार्य किया है। इन में आप के आदेशों का पालन करना हमारे लिए आवश्यक है।

एक मनुष्य हूँ^२ ।

—मुस्लिम

२ हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मुझे हृद से न बढ़ाओ जैसा कि 'नसारा' (ईसाइयो) ने मरयम के बेटे (हजरत ईसा मसीह अ०) को हृद से बढ़ा दिया । मैं तो बस अल्लाह का वन्दा और उस का 'रसूल' हूँ । अतः मुझे अल्लाह का वन्दा और उस का 'रसूल' कहा करो^३ ।

—बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'जुहू' (की नमाज) में पाँच ('रकअते') पढ़ी । आप से कहा गया कि क्या नमाज में इजाफा (परिवर्द्धन) हुआ है ? आप ने कहा नहीं । तो, ('सहाबा' ने) कहा : आप ने पाँच 'रकअते' पढ़ी, तो आप ने दो 'सजदे' किये, इस के पश्चात् कि आप सलाम फेर चुके थे (अर्थात् नमाज पूरी कर चुके थे) । एक 'रिवायत' में है कि आप ने कहा : मैं तुम नैसा एक मनुष्य हूँ, जैसे तुम भूलते हो मैं भी भूलता हूँ, तो जब मैं भूलूँ, तो मुझे याद दिला दो । और जब तुम में से किसी को अपनी 'नमाज' में सन्देह हो तो वह सही बात को जानने की कोशिश करे फिर उसके अनुसार 'नमाज' पूरी करे फिर सलाम फेरे^४ ।—बुखारी, मुस्लिम

४ हजरत उम्मे सलिमा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं एक मनुष्य ही हूँ । तुम लोग अपने भगड़े लेकर मेरे पास आते हो, सम्भव है कि तुम में से कोई अपने प्रमाण को बना-सँवार कर बयान करने में दूसरे से बढ़ कर हो और मैं (उस के बयान से प्रभावित हो कर) जैसा उस से सुनूँ उस के अनुसार उस के हक में फैसला कर दूँ, तो यदि मैं किसी के भाई के हक का फैसला उस के हक

२ दूसरी 'रिवायत' में है कि आप ने कहा "सासारिक मामलों में तुम अधिक खबर रखते हो" ।

३ अर्थात् मैं तो अल्लाह का वन्दा हूँ । उस ने मुझे अपना 'रसूल' अवश्य बनाया है इस से अधिक मैं कुछ नहीं हूँ । कहीं ऐसा न हो कि तुम अत्युक्ति से काम लो और मुझ से ऐसी विशेषताओं का सम्बन्ध जोड़ने लगे जो केवल अल्लाह के लिए विशिष्ट हैं । ईसाइयो ने हजरत मसीह को अल्लाह का बेटा कहा और उन्हें मानवीय स्तर से उच्च दर्जा दे दिया । तुम ऐसा न करना कि मुझे ईश्वर या ईश्वर का बेटा या अवतार समझने लग जाओ । मैं ईश्वर कदापि नहीं हूँ केवल अल्लाह का वन्दा हूँ ।

४ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि नबी सल्ल० मनुष्य होने की दृष्टि से हमारे मनुष्यों की तरह मनुष्य थे ।

में कर दूँ, तो वह उसे कदापि न ले क्योंकि जो-कुछ इस फैसले से उसे मिला है वह उसके लिए आग का एक अँगारा है^५। —बुखारी, मुस्लिम

नबी सल्ल० की विनम्रता एवं दास्य भाव

عَنْ مُطَرِّفِ بْنِ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ الشَّخِيرِ عَنْ أَبِيهِ قَالَ. أَتَيْتُ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَهُوَ يُصَلِّي وَلِجَوْفِهِ أَرِيْرٌ كَأَرْنِ الْمَرْجَلِ بَعَثَ يَدِي وَفِي رِوَايَةٍ قَالَ مَرَّيْتُ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يُصَلِّي وَفِي صَدْرِهِ أَرِيْرٌ كَأَرْنِ الرَّحَى مِنَ الْبُكَاءِ _____ احمد، نسائي، ابوداود

१. मुतरिफ बिन अब्दुल्लाह बिन शिखीर अपने पिता से 'रिवायत' करते हैं कि उन्होंने कहा 'मैं एक बार नबी सल्ल० की सेवा में हाजिर हुआ। उस समय आप नमाज़ पढ़ रहे थे आपके सीने से व्यग्र और भयभीत स्वर में ऐसी आवाज निकल रही थी जैसे हाँडी के जोश मारने की आवाज होती है। दूसरी 'रिवायत' में है मैंने आपको 'नमाज़' पढ़ते देखा और रोने के कारण आपके सीने से चक्की जैसी आवाज आ रही थी'। —अहमद, नसई, अबूदाऊद

२. हज़रत मुगीरह रजि० बयान करते हैं कि नबी सल्ल० (नमाज़ में) इतनी देर तक खड़े रहे कि आपके पाँव सूज गये। इस पर आपसे कहा गया कि 'आपके तो अगले-पिछले सब गुनाह क्षमा किये जा चुके हैं आप यह कष्ट क्यों करते हैं?' आपने कहा तो क्या मैं (अल्लाह का) कृतज्ञ दास न बनूँ^२? —बुखारी, मुस्लिम

५ यह 'हदीस' इस विषय में स्पष्ट है कि नबी सल्ल० अल्लाह के 'रसूल' होने के बावजूद मनुष्य ही थे। अतः आप के बारे में अत्युक्ति से बचना चाहिए। आप को किसी ऐसे गुण से युक्त समझना सही न होगा जिस से केवल ईश्वरीय सत्ता ही युक्त हो सकती है। जैसे गैब का जानने वाला होना, सर्वशक्तिमान् होना आदि।

१ इस हदीस में भली-भाँति इसका अन्दाजा किया जा सकता है कि आपको अल्लाह की महानता और उसके प्रताप एवं प्रतिष्ठा का कितना एहसास था। और आपका हृदय दास्यभाव से कितना परिपूर्ण था।

२ अर्थात् यद्यपि अल्लाह मेरा रक्षक है और उसने मेरी भूल-चूक को क्षमा भी कर दिया है परन्तु यह उसकी दया और कृपा है। और उसकी इस दयालुता

३. हजरत उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मेरे बारे में अत्युक्ति में काम न लो जैसा कि 'नसारा' (ईसाइयों) ने मरयम के बेटे (हजरत ईसा मसीह) के बारे में अत्युक्ति से काम लिया। मैं तो बस अल्लाह का बन्दा (दास, सेवक) और उसका एक 'रसूल' हूँ धत. मुझे अल्लाह का बन्दा और उसका रसूल कहो^३।

--बुखारी, मुस्लिम

४. हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि एक रात मैंने नबी सल्ल० को शय्या पर न पाया तो मैं ने आपको तलाश किया तो मेरा हाथ आपके पाँव के तनवो पर पड़ गया. आप 'मजदे' में थे और कह रहे थे हे अल्लाह ! मैं तेरे क्रोध एवं प्रकोप में तेरी प्रगन्नता की शरण लेता हूँ, और तेरे दण्ड एवं यातना से तेरी क्षमा की शरण लेता हूँ और तेरी पकड़ से तेरी ही शरण लेता हूँ। पूर्ण रूप में तेरी प्रशंसा करने का मुझे सामर्थ्य नहीं है, तू वैसा ही है जैसी तूने स्वयं अपनी प्रशंसा की है^४।

—मानिक, तिरमिजी, अबूदाऊद

पर मन्नायन बन्दे को और अधिक उमका कनश होना चाहिए और ज्यादा-से-ज्यादा उमंगी सेवा में विनम्रता और अपना दास्यभाव प्रदर्शित करना चाहिए।

३. अर्थात् मेरी ऐसी प्रशंसा न करना कि मुझे दासता के स्तर से उच्च देखने लगे। उमने पहले ईसाइयों ने ऐसा दुःसाहस किया है। उन्होंने हजरत मसीह की प्रशंसा में अत्युक्ति में काम लिया और उन्हें ईश या ईश्वर का पुत्र बना लिया, हालाँकि मसीह अ० अल्लाह के केवल एक चुने हुये श्रेष्ठ बन्दे और पैगम्बर थे। मुझे- तुम अल्लाह का एक बन्दा और उसका रसूल ही समझो, इससे अधिक मैं और कुछ नहीं हूँ।

४. इस हदीस में भी नबी सल्ल० की हालत और आपकी मनोदशा पर प्रकाश पड़ता है। 'हदीसों' में आपकी बहुत सी दुआओं और प्रार्थनाओं का उल्लेख किया गया है जिनके अध्ययन से प्रत्यक्षत यह बात मालूम होती है कि आप दामता के उच्च स्थान पर पहुँचे हुये थे। आपकी भावनार्यें, मनोवेग और अन्त तरंगें दामता के रंग में ललित थी। आपकी दुआयें वास्तव में ईश-ज्ञान की महान् निधि हैं। ये दुआयें बताती हैं कि आपको अल्लाह से कितना गहरा और हार्दिक सम्बन्ध था। आपका हृदय सूक्ष्म एवं पवित्रतम भावों का आगार था। आपका हृदय सदैव अल्लाह के प्रताप एवं सौन्दर्य की अनुभूति से आच्छादिन रहता था। अल्लाह के मुकाबले में सारे ससार की विवशता एवं दुर्बलता आप पर दिन के प्रकाश की भाँति विदित थी।

५. हजरत आइशा रजि० बयान करती हैं कि नबी सल्ल० का हाल यह था कि जब वायु तेज चलती तो आप कहते “हे अल्लाह ! मैं तुझ से माँगता हूँ अच्छाई इस वायु की और अच्छाई उसकी जो-कुछ कि इस में है और अच्छाई उसकी जिस (उद्देश्य) के लिए यह भेजी गई है। और मैं तेरी शरण चाहता हूँ बुराई से इस वायु की और उसकी बुराई से जो कुछ कि इस में है और उसकी बुराई से जिस (उद्देश्य) के लिए यह भेजी गई है।” और जब आकाश में बादल आता तो आपका रंग बदल जाता था और घबराहट में कभी बाहर आते और कभी भीतर जाते, कभी आगे आते और कभी पीछे हटते, फिर जब वर्षा हो जाती तो आपकी यह हालत दूर हो जाती^५। हजरत आइशा रजि० आपकी इस हालत को जान गई तो आप से (इस के बारे में) पूछा। आपने कहा : हे आइशा ! कदाचित् यह बादल ऐसा ही हो जिसके बारे में आद जाति ने कहा था जब उन्होंने बादल को अपनी उपत्यकाओं की ओर बढ़ते देखा, तो कहने लगे— यह घटा उठी है जो हम पर वर्षा करेगी^६। —बुखारी, मुस्लिम

६. हजरत अबू मूसा रजि० कहते हैं कि एक बार सूर्यग्रहण लगा

५. हजरत आइशा की इस हदीस से भी यह बात मालूम होती है कि नबी सल्ल० के हृदय पर अल्लाह का भय और डर कितना ज्यादा छाया रहता था। तनिक भी तेज हवा चले तो आप घबरा जाते और अल्लाह से प्रार्थना करने लगते थे कि हे अल्लाह ! यदि इसमें कोई बुराई और आपदा है तो हमें उस से बचा ले और यदि इसमें कोई अच्छाई और भलाई है तो हम तुझ से उसके इच्छुक हैं। बादल देखते तो आपका रंग बदल जाता, आपको अल्लाह का वह प्रकोप याद आ जाता जो आद नामक जाति पर हुआ था। हजरत हूद अ० की सरकश और अवज्ञाकारी जाति आद पर अज्ञात बादल के रूप में आया था। (दे० कुरआन सूर अल-अहकाफ आयत २४) जब उनके लोगो ने बादल को अपने भूभाग की ओर बढ़ते हुये देखा, तो लगे खुशियाँ मनाने कि वर्षा होगी हालाँकि वह अज्ञात की आँधी थी, जो तबाही लेकर आई थी। आद जाति जिस क्षेत्र में आबाद थी उसे कुरआन में ‘अल-अहकाफ’ कहा गया है। इससे अभिप्रेत अरब का दक्षिणीय भूभाग है। किसी समय में यह एक हरे-भरे मैदान के रूप में था। ।

६. नबी सल्ल० ने यहाँ कुरआन से एक आयत का टुकड़ा पेश किया है। आयत का शेष भाग यह है “(कहने लगे यह घटा उठी है जो हम पर वर्षा करेगी) जी नहीं, यह तो वह है जिसकी तुमने जल्दी मचा रखी थी, आँधी है, दुख-दायी अज्ञात लिये द्ये।” (अल-अहकाफ २४)।

तो नबी सल्ल० घबरा कर उठ खड़े हुये आप डर रहे थे कि कहीं वह (कियामत की) घड़ी न आ गई हो। मस्जिद में आये और इतने लम्बे-लम्बे 'क्रियाम'०, 'रुकूअ'० और 'सजदों'० के साथ नमाज पढ़ी कि मैंने इतने लम्बे कियाम व रुकूअ करते आप को कभी नहीं देखा था'०। (नमाज अदा करने के बाद) आपने कहा ये निशानियाँ अल्लाह किसी की मृत्यु या जीवन के कारण नहीं दिखता बल्कि इनके द्वारा अल्लाह अपने बन्दों को डराता है। जब इस प्रकार की कोई चीज देखो, तो दौड़ पड़ो उसकी याद की ओर उससे प्रार्थना करने और क्षमायाचना के लिए'११

—बुखारी, मुस्लिम

७ नमाज में खड़े होने की स्थिति।

८. नमाज में अल्लाह के सम्मुख झुकने की स्थिति।

९. नमाज में अल्लाह के सामने बिलकुल विछ जाने की स्थिति।

१०. आँधी, ग्रहण आदि के अवसर पर अल्लाह की महानता, प्रताप और गौरव का एहसास हृदय दर्जा बढ़ जाता था। आप ऐसे अवसर पर अल्लाह की सेवा में अधिक-से-अधिक अपनी विनम्रता, दीनता और निर्बलता का प्रदर्शन करते थे इस प्रदर्शन का उत्तम साधन 'रुकूअ' और सजदे ही हो सकते हैं।

११ अर्थात् इन निशानियों का सम्बन्ध किसी के मरने या जीने से कदापि नहीं है जैसा कि अज्ञान के कारण कुछ लोग समझते हैं बल्कि यह निशानियाँ तो अल्लाह की बड़ाई और उसके बल और सामर्थ्य को प्रदर्शित करती हैं। इस तरह की निशानियों को देखकर दिलों में अधिक-से-अधिक अल्लाह का भय उत्पन्न होना चाहिए और उससे अपनी भलाई और कल्याण के लिए अधिक-से-अधिक प्रार्थनाएँ करनी चाहिए। इन निशानियों को देखने के बाद भी यदि मनुष्य अल्लाह को याद न करे और उसकी ओर से असावधान ही रहे, न तो उसकी ओर पलटे और न उससे क्षमा की प्रार्थना करे, तो समझ लेना चाहिए उसका हृदय मर चुका है। उसमें वास्तविक चेतना और जीवन शेष नहीं है। ग्रहण आदि को देखकर साधारणतया हमारा ध्यान उसके भौतिक एवं प्राकृतिक कारणों की ओर जाता है। हम उस से वह शिक्षा ग्रहण नहीं करते जो वास्तव में हमें ग्रहण करनी चाहिये।

एक 'हदीस' में है कि नबी सल्ल० ने कहा अज्ञान काल में लोग कहते थे कि चन्द्रमा और सूर्य में ग्रहण पृथ्वी के किसी महान व्यक्ति की मृत्यु ही पर लगता है और वास्तविकता यह है कि उनको न तो किसी की मृत्यु से ग्रहण लगता है और न उसके जीने के कारण, ये दोनों (चन्द्र और सूर्य) अल्लाह के पैदा किए हुए हैं। अल्लाह जो चाहता है अपनी पैदा की हुई चीज में परिवर्तन

७ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे से किसी का कर्म उसे 'जन्नत' में नहीं ले जायेगा और न उसे (दोजख की) आग से बचा सकेगा और न मुझे ही (मेरा कर्म 'जन्नत' में ले जायेगा और यातना से बचायेगा) परन्तु अल्लाह की दयालुता से^{१२} ।
—मुस्लिम

८. हजरत अबू उमामह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मेरे रब (पालनकर्ता प्रभु) ने मेरे सामने यह बात रखी कि मक्का की उपत्यका को सोना बना दे। मैं ने कहा 'नहीं, हे रब' बल्कि (यह चाहता हूँ कि) मैं एक दिन तृप्त हूँ और एक दिन भूखा रहूँ। जब मैं भूखा हूँ तो तेरे आगे विनम्रता दिखाऊँ और तुझे याद करूँ और जब तृप्त हूँ तो मैं तेरी हम्द (प्रशंसा) करूँ और तेरे आगे कृतज्ञता दिखलाऊँ'^{१३} ।
—अहमद, तिरमिजी

९ हजरत असवद रजि० कहते हैं कि मैं ने हजरत आइशा (रजि०) से पूछा नबी सल्ल० अपने घर में क्या किया करते थे? उन्हो ने कहा अपने घर वालों की आवश्यकताये पूरी करते थे परन्तु जब

कर देता है, अतः जब इनमे किसी को ग्रहण लगे तो 'नमाज़' पढो यहाँ तक कि ग्रहण समाप्त हो जाये या अल्लाह कोई दूसरी बात जाहिर करे" । —नसई

१२ आपके इस कथन से मालूम होता है कि आप इस बात को कभी नहीं भूलते थे कि आप अल्लाह के दास और बन्दे हैं। और अल्लाह महान् और प्रतापवान है। आपके हृदय पर अल्लाह का भय और डर हर समय छाया रहता था। आप किसी समय भी निर्भय और स्वच्छन्द नहीं रहते थे। आप सदा अल्लाह के आदेशो और उसकी इच्छा के अधीन रह कर ही जीवन व्यतीत करते थे।

१३ अर्थात् मैं धन-दौलत का अभिलाषी नहीं हूँ बल्कि मुझे जो धन अपेक्षित है वह है विनयभाव और दासता। मैं तो यह समझता हूँ तेरी हम्द (प्रशंसा) करूँ, तेरा कृतज्ञ बनूँ और विवशता की हालत में तेरे आगे गिडगिड़ाऊँ और तुझे याद करूँ।

मालूम हुआ कि मनुष्य के लिए भूख और तृप्ति दोनों ही अभीष्ट हैं परन्तु शर्त यह है कि वह भूख में अल्लाह के सामने विनम्रता एवं विनयभाव का प्रदर्शन करे और जब तृप्त हो तो अल्लाह की हम्द (प्रशंसा) करे और उस के आगे कृतज्ञता दिखलाये। मनुष्य के जीवन में मूल्यवान वस्तु यही विनयभाव, हम्द (प्रशंसा) और कृतज्ञता है न कि कुबेर का धन, वैभव और सासारिक सुख और चैन।

नमाज का समय आता तो तुरन्त नमाज के लिए जाते^{१४} । —बुखारी

१०. हजरत अनस रजि० कहते हैं कि सहाबा रजि की निगाह में अल्लाह के रसूल सल्ल० से अधिक कोई प्रिय न था, फिर भी जब वे आप को देखते तो खड़े न होते क्योंकि वे जानते थे कि यह बात (आप को) ना-पसन्द है^{१५} । —तिरमिजी

११ हजरत अब्दुल्लाह बिन सलाम से उल्लिखित है कि जब अल्लाह के रसूल सल्ल० बैठे हुये वाते करते तो प्राय आप आकाश की ओर निगाह उठाते रहते^{१६} । —अबूदाऊद

१२. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . हे आइशा! यदि मैं चाहूँ तो मेरे साथ सोने के पहाड़ चला करे। मेरे पास एक 'फिरिस्ता' आया जिसकी कमर 'काबा' के बराबर थी^{१७} । उस ने कहा कि तुम्हारा 'रब' तुम्हे सलाम कहता है और कहता है कि यदि चाहो तो 'बन्दा पैगम्बर'^{१८} बनो और चाहो तो 'बादशाह पैगम्बर' बनो। मैंने 'जिबरील' की ओर देखा उन्होंने कहा कि अपने

१४ यह अल्लाह की बड़ाई का ही एहसास था कि 'नमाज' का समय आ जाने पर आप नमाज के अलावा किसी दूसरी चीज की ओर ध्यान नहीं देते थे बल्कि तुरन्त नमाज की तैयारी करते थे ।

१५ एक दूसरी 'रिवायत' अबू उमामा रजि० से है । वे कहते हैं कि एक बार अल्लाह के रसूल सल्ल० लाठी का सहारा लिये हुए बाहर आये हम आपके आदर एव सम्मान के लिए खड़े हो गए । आपने कहा "उस तरह खड़े मत हुआ करो जिस तरह 'अजम' के लोग (गैर अरब) खड़े होकर एक-दूसरे का सम्मान करते हैं । इन 'रिवायतो' से मालूम हुआ कि आपको वह तरीका पसन्द था जिसमे ज्यादा-से-ज्यादा मनुष्य की दासता का प्रदर्शन होता हो । जिस रीति से दास्य-भाव एव दास्य रीति को आघात पहुँचता हो उसे आप कभी भी पसन्द नहीं करते थे ।

१६ अल्लाह से आपको हर समय आशा लगी रहती, उसके आदेशों का आपको इन्तजार रहता । अल्लाह की महानता आपके लिए केवल कल्पना मात्र चीज नहीं थी बल्कि जीवन की सबसे बड़ी प्रत्यक्ष वास्तविकता थी । अपने जीवन में आप सबसे अधिक जिस चीज का ध्यान रखते थे वह अल्लाह की प्रसन्नता के अतिरिक्त कोई दूसरी चीज न थी ।

१७ अर्थात् फिरिस्ता बहुत ही लम्बे कद का था ।

१८ अर्थात् वह पैगम्बर, दासता और दीनता ही जिसकी विशेषता हो ।

आपको पस्त (विनम्र) कर दो^{१६}— इब्न अब्बास की एक 'रिवायत' में है कि फिरिस्ते की बात सुन कर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जिबरील की ओर रुख किया मानो उनसे परामर्श लेना चाहा। जिबरील ने अपने हाथ से सकेत किया कि विनम्रता अपनाओ— मैं ने कहा मैं बन्दा पैगम्बर बनना चाहता हूँ। हजरत आइशा रजि० कहती है कि इस के बाद अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कभी तकिया लगा कर खाना नहीं खाया। आप कहते थे मैं इस तरह खाना खाता हूँ जैसे दास खाता है और इस तरह बैठता हूँ जिस तरह दास बैठता है। —शर्हसुन्नह

आपका स्वर्गवास

عَنْ عُقْبَةَ بْنِ عَامِرٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ عَلَى قَتْلِ أَحَدٍ
بَعْدَ ثَمَانِ سِنِينَ كَالْمُودِّعِ لِلْأَحْيَاءِ وَالْأَمْوَاتِ ثُمَّ طَلَعَ الْمِنْبَرَ فَقَالَ إِنِّي بَيْنَ أَيْدِيكُمْ
فَوَظُّ وَأَنَا عَلَيْكُمْ شَهِيدٌ وَإِنْ مَوَّعِدْكُمْ الْحَوْضُ وَإِنِّي لَا أَنْظُرُ إِلَيْهِ وَأَنَا فِي مَقَامِي هَذَا
وَإِنِّي فَدَأُ أُعْطِيتُ مَفَاتِيحَ خَزَائِنِ الْأَرْضِ وَإِنِّي لَسْتُ أَخْشَى عَلَيْكُمْ أَنْ
تُشْرِكُوا بَعْدِي وَلَكِنِّي أَخْشَى عَلَيْكُمْ الدُّنْيَا أَنْ تَنَافَسُوا فِيهَا وَتَرَادَ بَعْضُهُمْ
مَقْتِلَ الْآخَرِ مَا هَلَكَ مِنْ كَانَ فَبَلَّكُمْ — بخاری، مسلم

१. हजरत उकबा बिन आमिर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उहुद के 'शहीदों' पर आठ वर्ष के पश्चात् 'नमाज' पढी^१ मानो आप जीवित लोगो और मुरदों को रुखसत कर रहे हैं। फिर आपने मिनबर पर पदार्पण किया और कहा "मैं तुम्हारे आगे इस तरह जा रहा हूँ जैसे काफिले का 'मीर मन्जिल'^२ प्रस्थान करता है^३। मैं तुम पर

१६ अर्थात् विनम्र एवं विनयशील बनो।

१ कुछ लोगो के विचार में यहाँ 'नमाज' से अभिप्राय 'नमाज' जनाजा है जो मुरदों की भलाई और उन के हक में अल्लाह से दुआ करने के लिए पढी जाती है। आपने 'उहुद' के युद्ध में वीरगति को प्राप्त होने वाले शहीदों के लिए अल्लाह से दुआ की।

२ अर्थात् काफिले या यात्री-दल से आगे ठिकाने पर पहुँच कर खाने-पीने और दूसरी आवश्यक चीजों की व्यवस्था करने वाला प्रधान कर्मचारी।

३ अर्थात् जिस प्रकार काफिले का 'मीर मन्जिल' काफिले में आगे बढ़कर मन्जिल

गवाह हूँ और तुम्हारे वादे का स्थान हीज़ है, और अपनी इस जगह खड़ा हुआ उसे देख रहा हूँ^५। और मुझे जमीन के खज़ानों को कुंजियाँ प्रदान की गई हैं^६। तुम्हारे बारे में मुझे इस का तो डर नहीं कि तुम मेरे बाद 'शिरक' करोगे, परन्तु मुझे तुम्हारे बारे में इस का डर है कि दुनिया की चाहत में पड़ जाओ^७। कुछ उल्लेखकारों ने इस 'रिवायत' में ये शब्द ज्यादा बयान किये हैं : "फिर तुम आपस में लड़ाई करो और विनष्ट हो जिस प्रकार तुम से पहले लोग विनष्ट हुये^८"। —बुखारी, मुस्लिम

२. हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब अल्लाह अपने बन्दों में से किसी समुदाय पर दयालुता का निश्चय करता है, तो उस के 'नबी' को उस समुदाय से पहले (संसार से) उठा लेता है और उसे उस समुदाय का मीर मजिल और अग्रगामी

पर काफिले की आवश्यकताओं की सामग्री जुटाता और काफिले की सुविधा के लिए उचित व्यवस्था करता है ताकि काफिले के लोग जब वहाँ पहुँचे, तो उन्हें किसी प्रकार की असुविधा न हो, उसी प्रकार इस दुनिया से कूच करना भी 'मीर मजिल' की हैसियत से है। मैं तुम्हें 'आखिरत' में 'मीर मजिल' की हैसियत से मिलूँगा।

नबी सल्ल० ने यहाँ अपने प्रिय साथियों और अनुयायियों को तसल्ली दी है ताकि वे आपकी जुदाई से होने वाले शोक और दुख का सहन कर सकें।

४ मैंने सत्य तुम तक पहुँचा दिया है। अब मैं 'हीज़ कौसर' (हीज़ कौसर का वर्णन आखिरत के अध्याय में देखिए) पर तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा। तुम उस हीज़ पर मुझ से मिलने की चेष्टा करो।

५. अर्थात् तुम्हारे लिए अल्लाह विजय के द्वार खोल देगा। घरती पर तुम्हें राज-सत्ता प्राप्त होगी। तुम से जो टकरायेगा टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। कितने ही राज्य तुम्हारे अधिकार क्षेत्र में आयेगे। इस्लामी इतिहास का अध्ययन करने वाले जानते हैं कि नबी सल्ल० की यह भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई। थोड़े ही समय में घरती के विस्तृत क्षेत्र पर इस्लामियों का कब्ज़ा हो गया।

६ अर्थात् ऐसा तो न होगा कि तुम सब 'मुशिरक' (बहुदेववादी) जाति बन जाओ परन्तु इसकी पूरी सम्भावना है कि तुम दुनिया से प्रेम करने लग जाओ और 'आखिरत' के प्रति अपने कर्तव्यों को भुला दो।

७ अर्थात् तुम आपस ही में लड़ने लगो और इस तरह तुम्हारा जत्था छिन्न-भिन्न हो जाये और तुम्हारी शक्ति क्षीण हो जाये।

बना देता है। और जब वह किसी समुदाय को विनष्ट करने का निश्चय करता है तो उस के 'नबी' के जीवन ही में उस को यातना देता है और 'नबी' की आखों के सामने उसे विनष्ट कर देता है, ताकि उस को विनष्ट कर के 'नबी' की आखों को ठढक प्रदान करे जब कि उस समुदाय ने उस (नबी) को झुठलाया और उस की अवज्ञा की है^८। —मुस्लिम

३ हजरत अबू हुदैर रह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस (अल्लाह) की जिस के हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं, तुम में से प्रत्येक पर एक दिन ऐसा आयेगा कि वह मुझे न देखेगा। फिर उसे मेरा देखना अपने घर वालों और अपने माल से बढ़ कर प्रिय होगा। —मुस्लिम

४ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि जिस दिन अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मदीना में प्रवेश किया तो (आप के आने से) हर चीज प्रकाशमान हो गई फिर जब वह दिन आया जब आप का स्वर्गवास हुआ तो हर चीज अँधेरी हो गई और हम अभी आपके दफ्न के कार्य में ही लगे थे, अपने हाथ की मिट्टी को भाड़ा भी न था कि हम ने अपने दिलों को बदला हुआ, अजनबी पाया^९। —तिरमिज़ी

५ हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने (अपनी मृत्यु के पश्चात्) न तो कोई दीनार छोड़ा, न दिरहम न कोई बकरी और न ऊँट और न आपने किसी चीज की वसीयत की^{१०}। —मुस्लिम

८ अर्थात् वह अवज्ञाकारी और सत्य-विरोधी लोगों के बुरे परिणाम को अपनी आखों से देख ले।

९ अर्थात् हमारे दिलों की वह हालत बाकी न रही जो आपकी सगति और आपकी मौजूदगी में रहती थी। आपके प्रस्थान के पश्चात् हम कितनी ही बरकतों से वंचित हो गए। साफ मालूम होता था कि एक प्रकाश हम से छिन गया। अब प्रत्येक चीज हमें अन्धकार में डूबी हुई दीख पड़ती थी। एक वह दिन था जब आपने मदीना में पदार्पण किया था और आपके आने से हर चीज चमक उठी थी। आपने यहाँ से प्रस्थान किया, तो हर चीज पर उदासी छा गई।

१० इस से बढ़कर आपके एक सच्चे 'रसूल' होने का क्या प्रमाण हो सकता है कि ससार में आपने न तो अपने लिए कोई सम्पत्ति संचित की और न कोई महल और प्रासाद निर्माण कराया। इस लोक में यात्री के समान आये और यात्री ही

६. हजरत अबू बक्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा "हमारा कोई वारिस नहीं होता", जो-कुछ हम छोड़े वह 'सदका' (दान) है।
—बुखारी, मुस्लिम

७ हिशाम बिन उरवह, अब्बाद बिन अब्दुल्लाह बिन जुवर से 'रिवायत' करते हैं कि उन्हें नबी सल्ल० की पत्नी आइशा रजि० ने खबर दी कि उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को आप की मृत्यु से पहले कहे मुना जब कि आप उन के सीने से तकिया लगाए हुए थे और वे आप की ओर झुकी हुई दत्तचित थीं हे अल्लाह! मुझे भ्रमा कर, मुझ पर दया कर और मुझे 'रफीक आला' (परम सगी) से मिला^{११}।

मुवत्ता-ईमाम मालिक

को तरह मर्गों ने वापस हुये। जीवन में जिम चीज तो और आपका विशेष ध्यान रहा वह यह कि अल्लाह का सन्देश लोगों तक पहुँचाने में कोई प्रभावधानी न हो और अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के प्रयास में कोई कोई कोताही न होने पाये।

११. अर्थात् 'नबियो' और 'रसूलों' का कोई वारिस नहीं होता। यह बात उनकी महानता से गिरी हुई है कि वे अपनी ओलाद के लिए धन-सम्पत्ति एकत्र कर जायें। उनकी दौट-चूप और कोशिशों सारे ही लोगों के लिए होती है।

१२ 'रफीक आला' (परम सगी) में मकेत 'नबियो' की जमात है जिसका निवास 'आला इल्लीयीन' में है। देखिए मूरा अल-ततफीफ आयत १८-१९।

इल्लीयीन' का अर्थ होता है बहुत ऊँचे लोग, इस 'आयत' में इससे अभिप्रेत उनका स्थान है।

एक विचार यह भी है कि 'रफीक आला' (परम सगी) अल्लाह ही का एक नाम है। मृत्यु के समय नबी सल्ल० के अन्तिम शब्द यही थे "अल्ला-हुम्म रफीकिल आला" (हे अल्लाह 'रफीक आला'!) —बुखारी, मुस्लिम हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित।

आपके 'सहाबा' रजि०

عَنْ عِمْرَانَ بْنِ حُصَيْنٍ قَالَ: قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ خَيْرُ أُمَّتِي
وَفِي شَمِّ الَّذِينَ يَكُونُكُمْ ثُمَّ الَّذِينَ يَكُونُهُمْ ثُمَّ إِنَّا بَعَدَهُمْ قَوْمٌ يَشْهَدُونَ وَ
لَا يُسْتَشْهِدُونَ وَيَخُونُونَ وَلَا يُؤْتَمَنُونَ وَيَنْذِرُونَ وَلَا يَقُونَ وَيُظْهِرُ فِيهِمُ
السَّيْمَ وَفِي رِوَايَةٍ وَيَخْلُقُونَ وَلَا يُسْتَحْلَقُونَ — بحارى وسلم

१. हजरत इमरान बिन हुसैन रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . “मेरे समुदाय के उत्तम लोग मेरे समय के लोग हैं। फिर वे लोग उत्तम हैं जो उनके सन्निकट हैं फिर वे लोग जो उन से सन्निकट हैं। फिर उनके पश्चात् वे लोग होंगे जो बिना मांगे गवाही देंगे। और ख्यानत (विश्वासघात और कपट) करेंगे, उनकी अमानतदारी (विश्वसनीयता) पर भरोसा नहीं किया जायेगा। वे ‘नज्र’ (भेद, प्रण, मन्नत) मानेंगे किन्तु उसे पूरा नहीं करेंगे। और उन में मासलता जाहिर होगी।” और एक ‘रिवायत’ में है “वे कसम खिलाये बिना कसम खायेगे।” —बुखारी मुस्लिम

२. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मेरे समुदाय में मेरे ‘सहाबा’ खाने (भोजन) में नमक की तरह है। नमक के बिना भोजन रुचता नहीं, ठीक नहीं होता। —शर्हुस्सुन्नह

१. अर्थात् उन में अधिकतर लोग ऐसे हों जो सत्यनिष्ठा, सज्जनता, मानवता और जिम्मेदारी के एहसास से विल्कुल खाली होंगे।

इस ‘हदीस’ से ‘सहाबा’ रजि० की महानता और श्रेष्ठता का पता चलता है। ‘सहाबा’ को नबी सल्ल० का शुभ जीवन काल प्राप्त हुआ। यह बहुत बड़े सौभाग्य की बात है। एक ‘हदीस’ में है कि आप ने कहा : मेरे ‘सहाबा’ की प्रतिष्ठा और आदर करो क्योंकि वे तुम में सब से अच्छे हैं। फिर वे लोग जो उन के सन्निकट हैं, फिर वे लोग जो उन के सन्निकट हैं। इस के बाद झूठ फैल जायेगा। —नसई

२. इस ‘हदीस’ से भी ‘सहाबा’ की श्रेष्ठता विदित होती है। यदि नमक न हो तो वेमजा मालूम होता है। नमक बहुत सी हानिकर तत्वों का निवारक और सुधारक भी है। ‘सहाबा’ मुस्लिम समुदाय के लिए मजिल के प्रतीक

३. हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे 'सहाबा' को बुरा न कहो इसलिए कि यदि कोई तुम में से 'उहुद' के बराबर सोना खर्च करे तो वह 'सहाबा' के एक 'मुद्' या आधा 'मुद्'^३ को भी नहीं पा सकता ।” —बुखारी, मुस्लिम

४. हज़रत इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब तुम उन लोगो को देखो जो मेरे 'सहाबा' को बुरा कहते हैं, तो तुम कहो . तुम्हारी बुराई (इस बुरी हरकत) पर अल्लाह की लानत (घिक्कार) हो^४ ।

५. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मेरे समुदाय मे मेरे समुदाय पर सबसे अधिक दयाशील अबू बक्र (रज़ि०) है और अल्लाह के आदेश के मामले मे सबसे ज्यादा सख्त (कड़े) उमर (रज़ि०) है, और उनमें सबसे सच्चे लज्जावान उस्मान (रज़ि०), विरासत-विधान के सबसे बढ कर ज्ञानी जैद बिन साबित (रज़ि०), सबसे बढ कर 'कारी' उबैय बिन कअब (रज़ि०) और हलाल व हराम (वैध व अवैध) का सबसे अधिक ज्ञान रखने वाले मुआज़ बिन जबल (रज़ि०) है । हर समुदाय का एक अमीन (विश्वसनीय व्यक्ति)

और उसका सौन्दर्य और शोभा हैं । उनके अनुसरण मे ही मुस्लिम समुदाय का जीवन और जागृति का रहस्य निहित है ।

३. एक नाप और पैमाना है जिस मे सेर भर जा आता है ।

४. ईमान वालो का कर्तव्य है कि वे 'सहाबा' का आदर करें और अपशब्द उनके बारे मे कदापि प्रयोग न करें । 'सहाबा' और विशेष रूप से नबी सल्ल० के मुख्य 'सहाबा' का पद और स्थान अत्यन्त उच्च है । कोई व्यक्ति यदि 'उहुद' पर्वत के बराबर सोना अल्लाह की राह मे खर्च कर दे, तो उसका यह 'सदका' (दान) सहाबा के एक या आधे 'मुद्' के बराबर भी नहीं हो सकता । 'सहाबा' को जिस दर्जा का 'ईमान' और हृदय की शुद्धता प्राप्त थी वह किसी दूसरे को कहीं प्राप्त हो सकती है । अल्लाह की दृष्टि मे वास्तविक रूप से मूल्यवान वस्तु आदमी का 'ईमान' उसकी सत्यप्रियता और आत्मशुद्धता ही है ।

५. मालूम हुआ कि 'सहाबा' से द्वेष या वैर रखना , उन्हें बुरा कहना किसी बुराई और अनाचार से कम नहीं है । और यह तिरस्कृत और धृणित कर्म है जिस से बचना आवश्यक है । माननीय 'सहाबा' का आदर और प्रतिष्ठा करना हमारे 'ईमान' का आवश्यक अंग है ।



होता है। इस समुदाय के अमीन अबू उबैदह बिन जरह (रजि०) हैं।

—अहमद, तिरमिजी

६. हजरत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : अबू बक्र 'जन्नत' में हैं। उमर 'जन्नत' में हैं, उस्मान 'जन्नत' में हैं, अली जन्नत में हैं, तलहा जन्नत में हैं, जुबैर जन्नत में हैं, अब्दुर्रहमान बिन औफ जन्नत में हैं, सअद बिन अबी वक्कास जन्नत में हैं, सईद बिन जैद जन्नत में हैं और अबू उबैदह बिन जरह जन्नत में हैं।

—तिरमिजी

७. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जन्नत तीन आदमियों की अभिलाषी है अली, अम्मार, और सलमान की।

—तिरमिजी

८. हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : चार आदमियों से कुरआन सीखो अर्थात् अब्दुल्लाह बिन मसऊद, सालिम मौला अबू हुजैफा, उबैय बिन कअब और मुअज बिन जबल से।

—बुखारी, मुस्लिम

६. इस 'हदीस' में नबी सल्ल० के कुछ मुख्य 'सहाबा' (साथियों) की विशेषता का उल्लेख किया गया है। दयाशीलता हो या लज्जा या अमानतदारी (विश्वसनीयता) या नियम और विधान सम्बन्धी ज्ञान हो, इन सब का मुस्लिम समाज में बड़ा महत्व है। नैतिकता, ज्ञान, कर्म आदि सभी गुणों से समुदाय के लोग सम्पन्न हो इसकी आवश्यकता पहले भी थी और हमारे युग में भी इसकी आवश्यकता है। इस के बिना धर्म की स्थापना और स्थायित्व असम्भव है। इस के बिना धर्म का पालन सम्भव ही नहीं है।

७. इन दस व्यक्तियों को नबी सल्ल० ने दुनिया ही में शुभ सूचना दे दी कि ये 'जन्नत' के बागों में दाखिल होंगे। इस 'हदीस' के कारण इन मुख्य 'सहाबा' को "अशरए मुवश्शरा" (दस शुभ सूचनाप्राप्त) की उपाधि दी गई है। इन श्रेष्ठ व्यक्तियों को अल्लाह के आज्ञापालन का उच्च पद प्राप्त था कि 'जन्नत' की खुशखबरी पाने के बाद भी ये कभी अल्लाह से निर्भय नहीं हुये और न कभी अपनी जिम्मेदारियों की ओर से गाफिल हुये। अल्लाह की महानता का एहसास और उस के 'रसूल' का जो प्रेम उन के मन में बस गया था वह कभी निकल न सका। ये लोग जीवन के रहस्य और उसकी वास्तविकता को पा चुके थे। सत्यमार्ग के सिवा, इन का कोई दूसरा मार्ग कैसे हो सकता था। हजरत अबू बक्र रजि० पर तो अल्लाह का ऐसा भय छा जाता था

६. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'ईमान' का लक्षण 'अनसार' से प्रेम करना है और 'निफाक' (कपट नीति) का लक्षण 'अनसार' से द्वेष एवं वैर है^८। —बुखारी, मुस्लिम

१०. हज़रत अबू हुदैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि हज़रत जिवरील नबी सल्ल० के पास आये तो कहा . हे अल्लाह के रसूल ! ये खदीजा (रज़ि०) आ रही हैं। इनके साथ वरतन है जिस में सालन या खाना है। जब वे आपके पास आ जायें, तो आप उन्हें उनके 'रब' की ओर से सनाम कहिए और मेरी ओर से भी^९। और उन्हें एक मोती के महल की शुभ सूचना दीजिए जो 'जन्नत' में (उनके लिए) होगा जिसमें न शोर व कोलाहल होगा और न कष्ट व क्लेश होगा^{१०}।

—बुखारी, मुस्लिम

११. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा सारे ससार की स्त्रियों में केवल इनकी श्रेष्ठता मालूम कर लेना

कि वे ऐसी आहे भरते थे कि अक्वाहुम्मुनीव' (बहुत आहे भरने वाला) उन का लकड़ पड़ गया था।

८. 'अनसार' (मदीना के मुस्लिम लोग जो नबी के सहायक हुये) ने नबी सल्ल० के नाये हुये 'दीन' (धर्म) को उस समय स्वीकार किया जबकि मक्का वाले उसका इन्कार कर चुके थे। 'अनसार' ने आप को और आप पर 'ईमान' लाने वाले मुसलमानों को अपने यहाँ जगह दी और हर तरह से उनकी मदद की जबकि मक्का वाले ने मुसलमानों का जीना दूभर कर दिया था और उनकी दुश्मनी यहाँ तक पहुँच चुकी थी कि वे नबी सल्ल० को शहीद कर देने की योजना कर चुके थे। 'अनसार' की सेवाओं को कभी भुलाया नहीं जा सकता। यही कारण है कि उनके प्रेम को 'ईमान' की निशानी और उन से वैर रखने को 'निफाक' (कपट नीति) कहा गया।

९. नबी सल्ल० की पत्नी हज़रत खदीजा रज़ि० की श्रेष्ठता का अन्दाजा इस से कीजिए कि उन्हें अल्लाह के विशेष 'फिरिश्ते' हज़रत जिवराईल अ० ही का नहीं अल्लाह का भी सलाम आया है।

१०. हज़रत खदीजा रज़ि० को तसल्ली दी जा रही है कि वे ससार के दुख और कष्ट की तनिक भी चिन्ता न करें। ये सारी तकलीफें समाप्त होने वाली हैं। अल्लाह उन्हें 'जन्नत' के ऐसे महल में जगह देगा जिसमें किसी प्रकार का शोर और कोलाहल न होगा और न वहाँ किसी प्रकार का दुख और क्लेश होगा।

तुम्हारे लिए काफी है. इमरान की बेटी मरयम (रजि०), खुवेलद की बेटी खदीजा (रजि०), मुहम्मद की बेटी फ़ातिमा और फ़िरअौन की पत्नी आसिया^{११}। —तिरमिजी

१२. हज़रत अबू सलमा रजि० से उल्लिखित है कि हज़रत आइशा रजि० ने बयान किया कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने (एक दिन) कहा : “हे आइशा ! ये जिबरईल हैं, तुम्हे सलाम कह रहे हैं।” हज़रत आइशा रजि० कहती हैं कि मैंने कहा : “व अलैहिस्सलाम व रहमतुल्लाह।” वे कहती हैं कि आप वह कुछ देखते थे जो मैं न देखती थी^{१२}।

—बुख़ारी, मुस्लिम

१३. हज़रत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मुझे ‘जन्नत’ दिखाई गई, मैंने वहाँ अबुल्लाह की स्त्री को देखा और अपने आगे मैंने कदमों का चाप सुना देखा तो बिलाल (रजि०) थे^{१३}। —मुस्लिम

११. ससार में यो तो कितनी ही पुण्यवती और महान् व्यक्तित्व की स्त्रियो ने जन्म लिया है जिनका जीवन अत्यन्त उज्ज्वल था। उनमें ये चार पुण्यवती स्त्रियाँ ही बहुत हैं यदि हम इनके जीवन से शिक्षा प्राप्त करना चाहे। इनकी पवित्रता और आदर्शजीवन के विषय में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। हज़रत मरयम और हज़रत आसिया के बारे में कुरआन में कहा गया है : “अल्लाह ‘ईमान’ लाने वालों के लिए फ़िरअौन की पत्नी को मिसाल में पेश करता है, जब उसने कहा . ‘रब’ ! मेरे लिए अपने पास ‘जन्नत’ में एक घर बना, और मुझे फ़िरअौन और उसके कर्म से छुटकारा दे, और छुटकारा दे मुझे ज़ालिम लोगों से; और इमरान की बेटी मरयम को (मिसाल में पेश करता है) जिसने सतीत्व की रक्षा की, फिर हमने उसमें अपनी (ओर से) ‘रूह’ फूँकी। और उसने अपने ‘रब’ की बातों और उसकी ‘किताबों’ की तसदीक की और वह आज्ञाकारी और विनयभाव वाले व्यक्तियों में से थी।”—सूरा अत-नहरीम आयत ११-१२।

१२ अर्थात् अल्लाह के ‘रसूल’ थे, आप परोक्ष लोक की कितनी ही वस्तुयें देखते थे, जिनको मैं न देख पाती थी।

इस ‘रिवायत’ से मालूम होता है कि हज़रत आइशा रजि० को भी अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त था। हज़रत जिबरील तक उन्हें सलाम कहते थे। वे लोग कितने नादान हैं जो ऐसी पुण्यवती स्त्री से, जिसे मुस्लिम समुदाय की माता होने का सौभाग्य प्राप्त है, द्वेष रखते हैं।

१३ नबी सल्ल० के ‘सहाबा’ की श्रेष्ठता के सम्बन्ध में रिवायतें बहुत मिलती हैं, यहाँ उदाहरण के रूप में केवल कुछ ही ‘हदीसों’ का उल्लेख किया गया है।

आपका अनुयायी समुदाय

عَنْ أَبِي مُوسَى قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ مَثَلُ الْمُسْلِمِينَ
وَالْيَهُودِ وَالنَّصَارَى كَمَثَلِ رَجُلٍ اسْتَأْجَرَ قَوْمًا يَعْمَلُونَ لَهُ عَمَلًا إِلَى اللَّيْلِ عَلَى
أَجْرٍ مَعْلُومٍ فَعَمِلُوا لَهُ إِلَى نِصْفِ النَّهَارِ، فَقَالُوا لِحَاجَةٍ لَنَا إِلَى أَجْرِكَ الَّذِي
شَرَطْتَ لَنَا وَعَمِلْنَا بَاطِلًا، فَقَالَ، لَا تَفْعَلُوا أَكْمِلُوا بَقِيَّةَ عَمَلِكُمْ وَحُدُّوا
أَجْرَكُمْ كَامِلًا فَأَبَوْا وَتَرَكَوْا وَاسْتَأْجَرَ آخَرِينَ بَعْدَهُمْ فَقَالَ أَكْمِلُوا بَقِيَّةَ يَوْمِكُمْ
هَذَا وَلَكُمْ الَّذِي شَرَطْتُ لَهُمْ مِنَ الْأَجْرِ فَعَمِلُوا حَتَّى إِذَا كَانَ حِينَ صَلَوةِ
الْعَصْرِ قَالُوا لَكَ مَا عَمِلْنَا بَاطِلًا وَلَكَ الْأَجْرُ الَّذِي جَعَلْتَ لَنَا فِيهِ، فَقَالَ
أَكْمِلُوا بَقِيَّةَ عَمَلِكُمْ فَإِنَّمَا بَقِيَ مِنَ النَّهَارِ شَيْءٌ يَسِيرٌ فَأَبَوْا فَاسْتَأْجَرَ
قَوْمًا يَعْمَلُونَ بَقِيَّةَ يَوْمِهِمْ فَعَمِلُوا فَاسْتَكْمَلُوا أَجْرَ الْقَرِيقَيْنِ كُلِّهِمَا فَذَلِكَ
مِثْلُهُمْ وَمِثْلُ مَا قِيلَ مِنْ هَذَا النَّوْصِرِ / بخاری

१ हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा • मुसलमानों और यहूद और 'नसारा' (ईसाई) की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने एक जाति को निश्चित मजदूरी पर रात तक के लिए कार्य पर लगाया । उन्होंने (उस जाति वालों ने) दोपहर तक उसका कार्य किया । फिर कहने लगे कि हमें तुम्हारी मजदूरी की आवश्यकता नहीं, जो तुमने हमारे लिए निश्चित की थी, और हमने जो काम किया वह अकारथ हुआ । उसने कहा ऐसा न करो, अपना शेष कार्य पूरा कर लो और अपनी पूरी मजदूरी ले लो । उन्होंने इन्कार किया और छोड़ गये । उसने उनके बाद दूसरे लोगों को मजदूरी पर लगाया और कहा कि तुम शेष दिन पूरा काम कर दो जो मजदूरी मैंने उनके लिए निश्चित की थी वह तुम्हें मिलेगी । उन्होंने काम किया यहाँ तक कि जब 'अस्ल' की 'नमाज' का समय हुआ, तो बोले: हमने तुम्हारा जो काम किया वह अकारथ हुआ और तुमने जो मजदूरी हमारे लिए निश्चित की थी वह हमने तुझे छोड़ दी । उसने कहा तुम अपना शेष कार्य पूरा कर दो, बस अब तो बहुत थोड़ा दिन रह गया है । उन्होंने इन्कार किया । फिर उसने दूसरे लोगों की मजदूरी पर लगाया जो शेष दिन कार्य करें । उन्होंने कार्य किया और दोनों गरोहों की पूरी मजदूरी भी ले ली । यह है

मिमाल उनकी और मिसाल है उस प्रकाश की जिसे उन्होंने स्वीकार किया' ।

—बुखारी
२ हजरत इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दूसरे समुदायों की मुद्दत और आयु की अपेक्षा तुम्हारी आयु और मुद्दत इतनी है जितना पूरे दिन के मुकाबले में 'अस्र' की नमाज से सूर्यास्त तक का समय होता है और तुम्हारी मिसाल और 'यहूद' व 'नसारा' (ईसाई) की मिसाल बस ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने कुछ मजदूरों को कार्य पर लगाया और कहा कि कौन दोपहर तक एक-एक 'कीरात' (एक मुद्रा, सिक्का) पर मेरा कार्य करेगा ? तो यहूद ने कार्य किया । फिर उस ने कहा कि कौन दोपहर से अस्र की नमाज तक एक-एक 'कीरात' पर मेरा कार्य करेगा ? तो यहूद ने कार्य किया । फिर उस ने कहा कि कौन दोपहर से अस्र की नमाज तक एक-एक 'कीरात' पर मेरा कार्य करेगा तो नसारा ने कार्य किया । फिर कहा कि कौन है जो 'अस्र' की नमाज से सूर्यास्त तक दो-दो 'कीरात' के बदले में मेरा कार्य करेगा ? जान लो कि ये तुम (मुस्लिम लोग) हो जिन्होंने 'अस्र' की नमाज से सूर्यास्त तक कार्य किया । सुन लो ! तुम्हारे लिए दोहरा प्रतिकार है । इस पर 'यहूद' व 'नसारा' क्रुद्ध हुये और कहा कि हमारा कार्य अधिक है और मिला कम । अल्लाह ने कहा : क्या मैंने

१ इस मिसाल में मुस्लिम समुदाय की बड़ाई बयान हुई है । 'यहूद' और 'नसारा' (यहूदी और ईसाई) ने स्वयं जब अपने आपको अल्लाह की दयालुता से वंचित कर लिया और अल्लाह की दयालुता और अनुकम्पा की अपेक्षा की, तो अल्लाह ने उन्हें उच्च पद से हटाकर मुस्लिम समुदाय को नायकता के श्रेष्ठ पद पर नियुक्त किया । और 'आखिरत' में मिलने वाला प्रतिकार भी उसे प्रदान किया । 'यहूद' और 'नसारा' जिन्होंने अवज्ञा और विद्रोह की नीति अपनाई, उनके लिए 'आखिरत' में कोई पारितोषिक और प्रतिकार नहीं, बल्कि वे उल्टे अजाब में ग्रस्त होंगे ।

मुस्लिम समुदाय के लिए किताब वालो (यहूद व नसारा) की अपेक्षा दोहरा बदला और प्रतिकार है । कुरआन में कहा गया है, "हे ईमान वालो ! अल्लाह का डर रक्खो और उसके रसूल पर 'ईमान' लाओ । वह तुम्हें अपनी दयालुता से दो हिस्से प्रदान करेगा । और तुम्हारे लिए एक प्रकाश कर देगा जिसके साथ तुम चलोगे-फिरोगे और तुम्हें क्षमा कर देगा, अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दयावन्त है ।"

इञ्जील (*Gospel*) की उपमा में भी इसकी ओर प्रत्यक्ष संकेत मिलता । दे० मत्ता २० . १-१६ ।

तुम्हारे साथ अन्याय किया है कि तुम्हारे हक में कोई कमी की हो? उन्होंने कहा नहीं। अल्लाह ने कहा . फिर यह तो मेरा फजल (अनुग्रह) है जिसे चाहूँ प्रदान करूँ^२। —बुखारी

३. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरे समुदाय का हाल वर्षा के सदृश है जिसके बारे में नहीं कहा जा सकता कि उसका प्रथम अच्छा है या अन्तिम अच्छा है^३। —तिरमिजी

४. अब्दुर्रहमान बिन अल हज़रमी कहते हैं कि मुझसे यह 'हदीस' उस व्यक्ति ने बयान की जिसने उसे नबी सल्ल० से सुना कि आपने कहा . इस समुदाय के अन्त में एक जनसमूह होगा। उनका (समूह वालों का) प्रतिकार उनके पहले लोगों के प्रतिकार के सदृश होगा। वे लोगों की भलाई का हुक्म देंगे और बुराई से रोकेंगे और फितना फैलाने वालों (उपद्रवकारी लोगों) से लड़ेंगे^४। —अल-बैहकी

२ अर्थात् यह तो मेरी दया और कृपा है कि मैंने मुस्लिम समुदाय के लिए दोहरा प्रतिकार रक्खा है। तुम्हारे साथ मैंने कोई अन्याय तो नहीं किया है। इस हदीस से यह भी मालूम हुआ कि यह अन्तिम मुद्त, जिसके पश्चात् 'कियामत' हो आने वाली है पिछली मुद्तों के मुकाबले में कोई अधिक लम्बी मुद्त नहीं है वल्कि इसकी मुद्त ऐसी ही कम है जैसे सम्पूर्ण दिन के मुकाबले में 'अस्त्र' और सूर्यास्त के बीच का समय होता है।

३ यो तो मुस्लिम समुदाय के प्रारम्भिक अथवा प्रथम युग को दूसरे समस्त युग की अपेक्षा प्रधानता एवं श्रेष्ठता प्राप्त है, परन्तु अन्तिम युग में भी इस समुदाय में ऐसे लोग पैदा होंगे जिनकी गणना अल्लाह के श्रेष्ठतम आज्ञाकारी बन्द होगी और वे इस्लाम की महान सेवा करेंगे, जैसा आगे आने वाली 'हदीस' से विदित है। अल्लाह के ऐसे सच्चे और सत्यनिष्ठ बन्दे वास्तव में अपने समय की आवरू हैं।

इस 'हदीस' में बाद वालों को तसल्ली दी गई है कि उन्हें इसका दुख न होना चाहिए कि वे प्रथम युग में क्यों नहीं पैदा हुये। इस्लाम के इतिहास में अन्तिम युग को भी किसी-न-किसी पहलू में महत्व प्राप्त होगा।

४ अर्थात् उनकी विशेषता यह होगी कि वे लोगों को भलाई और नेकी की ओर बुलायेंगे और उन्हें बुराई से रोकेंगे। और सत्य-विरोधी शक्तियों से लड़ेंगे। जिस प्रकार अन्धकार और प्रकाश में समझौता सम्भव नहीं ठीक उसी तरह असत्य के उपासकों और उपद्रवकारी लोगों से उनका भी समझौता न हो

५. अम्र बिन शुऐब अपने पिता से और वे अपने पितामह के माध्यम से कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'संहाबा' से पूछा : ईमान की दृष्टि से सृष्टिजीव में तुम्हें कौन सबसे अधिक प्रिय है ? उन्होंने कहा : 'फिरिश्ते' । आपने कहा वे आखिर ईमान क्यों न लाते जबकि वे अपने 'रब' के करीब रहते हैं । उन्होंने कहा : फिर हम नबियों को अच्छा जानते हैं । आपने कहा : वे आखिर क्यों 'ईमान' न लाते जबकि उन पर 'वह्य' आती है । उन्होंने कहा : फिर अपने-आपको अच्छा समझते हैं आपने कहा : तुम आखिर क्यों 'ईमान' न लाते जबकि मैं तुम्हारे बीच मौजूद हूँ उल्लेखकर्ता कहते हैं कि इसके बाद अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरे विचार में 'ईमान' की दृष्टि से वे लोग सबसे अच्छे हैं जो मेरे बाद होंगे । वे 'मसहफ' (सजिल्द ग्रन्थ, कुरआन) पायेंगे जिस में आदेश अंकित होंगे और वे उन पर ईमान लायेंगे^१ । —बैहकी

६. हज़रत अबूहुरैरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरे समुदाय में मुझसे अत्यधिक प्रेम करने वाले वे लोग हैं जो मेरे बाद पैदा होंगे । उनमें से प्रत्येक चाहेगा कि क्या ही अच्छा होता कि मुझे देखता और अपने घर वालों और अपने माल को मुझ पर निछावर करता^२ । —मुस्लिम

७. अबू मालिक अशअरी से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह ने तुम्हें तीन चीज़ों से सुरक्षा प्रदान की है यह कि तुम्हारा 'नबी' तुम्हें आप न दे कि तुम सब विनष्ट हो जाओ और यह कि अनृतवादी सत्य वालों पर आधिपत्य प्राप्त न कर सकें और

सकेगा । उन्हें असत्य के सामने झुकाया न जा सकेगा । वे असत्य से लड़ेंगे और ज़मीन से फ़ितना और बिगाड दूर करने की कोशिश करेंगे ।

४. बाद के लोगों ने नबी सल्ल० को देखा नहीं फिर भी वे आप पर और आपकी लाई हुई किताब (कुरआन) पर ईमान लायेंगे और आपके दिये हुये आदेशों को स्वीकार करेंगे । इस पहलू से उनके ईमान का बड़ा महत्व है । इस 'हदीस' में पश्चात्तर्वर्ती लोगों को तसल्ली दी गई है कि उनके ईमान और कर्म को असाधारण महत्व प्राप्त है ।

६. आज हम देखते हैं कि साधारण-से-साधारण मुसलमान को भी अल्लाह के रसूल सल्ल० के दर्शन की कामना ससार की समस्त वस्तुओं से अधिक प्रिय है ।

७. अर्थात् तुम्हारा नबी न तो तुम्हारे विनष्ट हो जाने की दुआ करेगा और न असत्य के पुजारी कभी तुम्हारी धारणाओं और तुम्हारे दीन और धर्म को

यह कि तुम सब गुमराही पर एकत्र न हो" ।

—अबू दाऊद

८. अबू मूसा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मेरा समुदाय दयापात्र समुदाय है^६, 'आखिरत' में उस पर अज़ाब न होगा. दुनिया में उसका अज़ाब फितना, (उपद्रव, विगाड) भूकम्प और हत्या है^{१०} ।

—अबू दाऊद

९. हज़रत मुगीरह रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा. मेरे समुदाय में से एक गरोह सदैव अविचल और छाया हुआ रहेगा यहाँ तक कि अल्लाह का हुक्म आ पहुँचेगा । और वे छाये हुये ही रहेंगे^{११} ।

—बुखारी, मुस्लिम

१०. हज़रत मुआवियह रज़ि० कहते हैं कि मैं ने नबी सल्ल० को कहते सुना मेरे समुदाय में एक गरोह सदैव अल्लाह के हुक्म पर कायम रहेगा, उसका न वह व्यक्ति कुछ विगाड सकेगा जो उसकी सहायता करनी छोड़ देगा और न वह व्यक्ति जो उसका विरोध करेगा

दलील, प्रमाण और तर्कों से पराजित कर सकेंगे । यदि सत्य के लिए असत्य के अनुयायियों से तुम्हारा युद्ध हुआ तो अन्त में विजय तुम्ही को प्राप्त होगी, परन्तु इसके लिए शर्त यह है कि तुम्हें 'ईमान' की शक्ति प्राप्त हो और तुम्हारी लड़ाई वास्तव में ईश्वर के मार्ग में हो और तुम अल्लाह की दी हुई शक्ति और क्षमता से पूर्ण रूप से काम लो ।

८. अर्थात् ऐसा कभी न होगा कि सम्पूर्ण मुस्लिम समुदाय पथभ्रष्ट हो जाये । बड़े-से-बड़े फितने उपद्रव (*Persecution*) और विगाड के समय में भी मुस्लिम समुदाय की कोई-न-कोई जमाअत सत्य पर अवश्य ही रहेगी ।

९. अर्थात् इस समुदाय पर ईश्वर की विशेष कृपा और दया है ।

१०. अर्थात् मुस्लिम समुदाय को यथा सम्भव आखिरत के अज़ाब से बचाया जायेगा । गुनाहों और गलतियों के सिलसिले में उसे दुनिया ही में कत्ल, भूकम्प और फितना, विगाड आदि के रूप में दण्ड मिल जायेगा । उसकी 'आखिरत' ज्यादा से ज्यादा प्रिय और शोभायमान रूप में सामने आयेगी । आखिरत में उसे अज़ाब न होगा यह बात सामूहिक दृष्टि से कही गई है यो तो इस समुदाय के कितने ही लोग अपने अनुचित कार्य के कारण उस दिन मुसीबत में ग्रस्त होंगे । यह दूसरी बात है कि अन्त में उन्हें अज़ाब से छुटकारा मिल जायेगा और वे 'जन्नत' में प्रवेश करेंगे ।

११. अर्थात् सत्य के अनुयायियों का यह गरोह अन्त तक सत्य पर दृढ़ रहेगा कोई भी शक्ति उसे सत्य से हटा न सकेगी ।

यहाँ तक कि अल्लाह का हुक्म आ पहुँचेगा और वह इसी हालत पर होगा ।

—बुखारी, मुस्लिम

११. अम्र बिन कैस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हम अन्त में है परन्तु 'कियामत' के दिन हम अग्रसर रहने वाले हैं^{१२} । और मैं एक बात कहता हूँ किन्तु गर्व से नहीं^{१३} । इब्राहीम अल्लाह के खलील (घनिष्ठ मित्र) हैं, मूसा 'सफीउल्लाह' (अल्लाह के चुने हुये महान् व्यक्ति) है और मैं अल्लाह का 'हबीब' (प्रिय) हूँ^{१४}, और 'कियामत' के दिन मेरे साथ प्रशसा (हम्द) का पताका होगा^{१५} । और अल्लाह ने मुझसे मेरे समुदाय के बारे में वादा किया है और मेरे समुदाय को अल्लाह ने तीन चीज़ों से सुरक्षित रक्खा है उसे सर्व अकाल में विनष्ट न करेगा, और न शत्रु उसका उन्मूलन कर सकेगा^{१६} और न सम्पूर्ण समुदाय गुमराही पर एकत्र (सहमत) होगा । —दारमी

१२. अर्थात् यद्यपि ससार मे हमारा समय सबसे अन्त मे है, परन्तु 'आखिरत' मे हमे प्राथमिकता और श्रेष्ठता प्राप्त होगी ।

१३ अर्थात् यह बात मैं किसी गर्व से नहीं कहता बल्कि यह तो केवल ईश्वर की दयालुता और उसकी अनुकम्पा की चर्चा मात्र है ।

१४ अर्थात् आप मे वे समस्त विशेषतायें एकत्र हो गई है जो हज़रत इब्राहीम अ० और हज़रत मूसा अ० सरीखे नबियो को प्राप्त हुई हैं ।

१५ अर्थात् 'कियामत' के दिन अल्लाह मुझे विशेष सम्मान और ख्याति प्रदान करेगा ।

१६ मतलब यह कि ऐसा कभी न होगा कि मेरा अनुयायी समुदाय पूरा-का-पूरा अकाल मे अस्त होकर तबाह हो जाये और न यही सम्भव होगा कि कोई शत्रु उसका उन्मूलन करने मे सफल हो सके । मेरे समुदाय को कोई मिटा न सकेगा । यह समुदाय धरती पर सत्य के दीप्त चिन्ह के सदृश है, इसे मिटाना सम्भव नहीं । मेरे समुदाय को 'कियामत' तक ससार मे जीवित रहना और ससार के लिए प्रकाश-स्तम्भ बनना है । इस स्तम्भ की अनुपस्थिति मे तो 'कियामत' ही आ जायेगी ।

आपके कुछ भविष्य-कथन

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ، بَادِرُوا بِالْأَعْمَالِ فِتْنًا
كَقَطْعِ اللَّيْلِ الْمُظْلِمِ يُصْبِحُ الرَّجُلُ مُؤْمِنًا وَيَتَسَبَّى كَافِرًا، وَيَسْبِي مُؤْمِنًا وَيُصْبِحُ
كَافِرًا يَبِغُ دِينَهُ بِعَرَضٍ مِنَ الدُّنْيَا ————— مسلم

१. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कर्म में जल्दी करो उस फितने (उपद्रव) से पहले जो अन्धेरी रात के टुकड़े की तरह होगा। मनुष्य प्रातःकाल एक ईमान वाले व्यक्ति के रूप में उठेगा और संध्या को 'काफिर' होगा और सन्ध्या को ईमान वाला होगा और प्रातःकाल 'काफिर' होगा। वह अपने 'दीन' (धर्म) को सांसारिक सामग्री के बदले बेच देगा।' —मुस्लिम

२. हजरत सौदान रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मैं जिन लोगों से अपने समुदाय के बारे में डरता हूँ वे पथ भ्रष्ट करने वाले नायक हैं। और जब मेरे समुदाय में तलवार चल जायेगी तो फिर 'कियामत' के दिन तक रुकने की नहीं'। —अबूदाऊद, तिरमिजी

१. अर्थात् एक समय बड़ी आजमाइश का आने वाला है, वह समय अत्यन्त कठिन होगा। उसमें अपने 'ईमान' की रक्षा करनी कोई सरल कार्य न होगा। लोगों की दशा यह होगी कि वे अपने धर्म और 'ईमान' को सांसारिक लाभ के लिए त्याग देंगे। 'ईमान' का क्या महत्व है? इसका एहसास बिल्कुल मिट सा जायेगा इस कठिन समय में जो लोग 'दीन' (धर्म) पर कायम रहेंगे उनके लिए ईश्वर के यहाँ बड़ा प्रतिकार और पुरस्कार है। हजरत मअकल बिन यसार रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'फितने के समय की 'इवादत' को मेरी ओर, 'हिजरत' करने का दर्जा प्राप्त है।

२. नबी सल्ल० के समुदाय अर्थात् आपके अनुयायियों के लिए सबसे बड़ा फितना (और विगाड का कारण) पथभ्रष्ट करने वाले और गलत रास्ते पर ले जाने वाले नायक और राज्याधिकारी लोग ही हैं। नबी सल्ल० के इस बयान में इस बात की ओर प्रत्यक्ष संकेत किया गया था कि 'मुस्लिम समुदाय को इस भयानक फितने का सामना करना पड़ेगा। इस समुदाय में परस्पर लड़ाई और युद्ध का सिल-सिला शुरू होगा। 'ईमान' वालों की शक्ति पारस्परिक कलह-विग्रह और संघर्ष में नष्ट होगी।' उनमें तलवार चलेगी और इस मुसीबत से अन्त तक छुटकारा

३. हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'किसरा' (फारिस का सम्राट) विनष्ट होगा और उसके बाद कोई 'किसरा' न होगा और 'कैसर' (रूम का सम्राट) भी विनष्ट होकर रहेगा फिर उसके बाद कोई 'कैसर' न होगा । और इन दोनों के खजाने अल्लाह के मार्ग में बाँटे जायेंगे^३ ।
—बुखारी, मुस्लिम

न मिल सकेगा । अल्लाह के रसूल सल्ल० की दी हुई यह सूचना अक्षरशः पूरी होकर रही । खलीफा हजरत उसमान रजि० के समय में सबसे पहले तलवार निकली, तो फिर वह रुक न सकी । और मुस्लिम समुदाय की कहानी एक दुखद कहानी बन कर रही । कितने ही करबला और जमल-युद्ध इस समुदाय के हिस्से में आये ।

३ नबी सल्ल० ने जो कहा था वही हुआ, मुसलमानों ने फारिस और रूम पर विजय प्राप्त की और उनके खजाने मुसलमानों के कब्जे में आये और अल्लाह के मार्ग में खर्च हुये ।

यहाँ मिसाल के तौर पर केवल कुछ ही भविष्य कथन का उल्लेख किया गया । आपके भविष्य कथन अगणित हैं जिनको 'हदीस' की किताबों में देखा जा सकता है । उदाहरणार्थ बद्र की लड़ाई के अवसर पर आप जब बद्र में ठहरे तो आप भूमि पर हाथ रख-रख कर बताते जाते थे कि यहाँ अमुक (मुशरिक) व्यक्ति गिरेगा और यहाँ अमुक व्यक्ति गिरेगा । हदीस के उल्लेखकर्त्ता का बयान है कि (सब उसी स्थान पर मारे गये जहाँ उनके मारे जाने की सूचना आपने दी थी) उनमें से कोई न था जो आपके बताये हुये स्थान से तनिक भी कहीं अलग गिरा हो । — (मुस्लिम, हजरत अनस रजि० से उल्लिखित)

आपने 'हज्जतुलविदा' (अपने अन्तिम हज्ज) के अवसर पर कहा था जान लो ! शैतान सदैव के लिए इस बात से निराश हो गया कि तुम्हारे इस नगर में उसकी 'इबाबत' की जाये । (इब्न माजह, तिरमिजी) । मतलब यह था कि अब ऐसा न होगा कि मक्का में मूर्ति की पूजा हो और 'शिक' और 'कुफ्र' (बहुदेववाद और अधर्म) फैले । यह और इस प्रकार के अगणित भविष्य कथन इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि आप अल्लाह के सच्चे 'रसूल' थे और भविष्य में पेश होने वाली बातों की सूचना आपने 'वाह्य' (ईश्वरीय सकेत) के द्वारा दी । यदि आप 'नुबुवत' के झूठे दावेदार होते, तो इस प्रकार भविष्य के बारे में कोई बात न कह सकते । यह बात बुद्धिमानी के भी विरुद्ध थी कि कोई व्यक्ति अकारण भविष्य के प्रति केवल अटकल और अनुमान से कुछ सूचनाएँ देने लग जाये और इस बात को भूल जाये कि उसके भविष्य कथनों में से यदि कोई असत्य

४. हज़रत नाफेअ बिन उतबा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम (मेरे बाद) प्रायद्वीप अरब में लड़ोगे, अल्लाह तुम्हें उस पर विजय प्रदान करेगा। फिर तुम फारिस से लड़ोगे अल्लाह उस पर भी तुम्हें विजय प्रदान करेगा। फिर तुम रूम से लड़ोगे अल्लाह उस पर भी तुम्हें विजय प्रदान करेगा। फिर तुम 'दज्जाल' से लड़ोगे* और अल्लाह उस पर भी विजय प्रदान करेगा। —मुस्लिम

५. हज़रत नोमान बिन बशीर रज़ि० हुज़ैफा रज़ि० के माध्यम से कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'तुममें 'नुबूवत' उस समय तक रहेगी जब तक अल्लाह चाहेगा फिर अल्लाह 'नुबूवत' को उठा लेगा और उसके बाद 'नुबूवत' के तरीके पर 'खिलाफत' कायम होगी जब तक अल्लाह चाहेगा, फिर अल्लाह उसे उठा लेगा। फिर उसके बाद क्रूर और परपोड़क बादशाहत होगी जब तक अल्लाह चाहेगा, रहेगी फिर अल्लाह उसे उठा लेगा जन्न की हुकूमत होगी और जब तक अल्लाह चाहेगा रहेगी फिर अल्लाह उसे उठा लेगा। और फिर नुबूवत के तरीके पर 'खिलाफत' कायम होगी। फिर आप मौन हो गये*।

—अहमद, अल-बैहकी —दलायलुन्नुबूवत

सिद्ध हुआ, तो इससे स्वयं उसकी 'नुबूवत' का खण्डन हो जायेगा। और अटकल से कही हुई बातों में गलती ही की सम्भावनायें अधिक रहती हैं।

४. 'दज्जाल' का विस्तारपूर्वक उल्लेख 'क्रियामत' की निशानियों के सिलसिले की 'हदीस' में मिलेगा।

५. इस 'हदीस' में जिन कालावधि (*Periods*) का उल्लेख किया गया है उनमें से 'नुबूवत' खिलाफत और बादशाही का समय व्यतीत हो चुका है। इस समय जन्न का शासन है। अब इसके बाद 'नुबूवत' के तरीके पर चलने वाली 'खिलाफत' की वारी है। संसार ने समस्त जीवन-प्रणालियों; वादों और इज्मों की असफलता देख ली। वह इस समय मृत्यु के दहाने पर पहुँच चुका है। यदि उसे जीवन और अपनी जटिल समस्याओं का समाधान अभीष्ट है, तो उसे अवश्य ही इस्लाम की ओर पलटना होगा। हज़रत ईसा मसीह अ० के समय में जबकि वे संसार में पुनः पदार्पण करेंगे 'इस्लाम' ही को प्रभुत्व प्राप्त होगा, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उससे पहले खिलाफत का कायम होना असम्भव है। उससे पहले भी 'खिलाफत' कायम हो सकती है। 'खिलाफत' में शासन-व्यवस्था ईश्वर के दिए हुए नियम और कानून पर आधारित होती है। राज्य की व्यवस्था के लिए जो अधिकारी चुने जाते हैं, वे भी कानून

६. हजरत सौबान रज़ि० कहते हैं कि जिस तरह खाना खाने वाले एक दूसरे को दस्तरखान की ओर बुलाते हैं उसी तरह जल्द ही ऐसा होगा कि (शत्रु) जातियाँ तुम पर टूट पड़ेंगी। एक पूछने वाले ने पूछा : क्या ऐसा हमारे कम संख्या में होने के कारण होगा ? आपने कहा : नहीं, बल्कि उस समय तुम बहुत ज्यादा होगे, परन्तु तुम ऐसे होगे जैसे जल-प्लावन के भाग से मिले हुये खर-पतवार होते हैं। तुम्हारे दुश्मन के दिलों से तुम्हारा भय निकल जायेगा और तुम्हारे दिलों में 'वह' (निर्बलता एवं सुस्ती) का रोग पैदा हो जायेगा। एक पूछने वाले ने कहा : हे अल्लाह के रसूल 'वह' क्या है ? कहा ससार का मोह और मौत से नफरत। —अबू दाऊद, अल्-बैहकी, दलायलुन्नुबूवत

के उसी तरह पाबन्द होते हैं जिस प्रकार जनसाधारण उसके पाबन्द होते हैं।

६. इस 'हदीस' में जिस समय का उल्लेख किया गया है वह सम्भवतः यही है जिसमें आज हम साँस ले रहे हैं। आज ससार में मुसलमान करोड़ों की संख्या में हैं, परन्तु शत्रुओं के दिलों से उनका भय निकल चुका है। वे उन्हें अपना नर्म चारा समझते हैं। अमेरिका के इशारे पर इसराईल ने ५ जून सन् ६७ ई० को अरबों पर जो आक्रमण किया है वह इसका एक पत्यक्ष उदाहरण है। हमारी अस्त-व्यस्तता और पराजय का मूल कारण इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि हमारे 'ईमान' की शक्ति क्षीण हो गई है, हममें 'ईमान' की वह ज्योति और अन्तर्दृष्टि भी नहीं रही जो सामुदायिक जीवन के प्रत्येक मोड़ पर और बदले हुये समय की विभिन्न अवस्था में हमारा पथ प्रदर्शन कर सके और हमारे अपने वास्तविक दायित्व से हमें अवगत करती रहे।

अल्लाह की किताब

अल्लाह ने अपने बन्दो के मार्गदर्शन के लिए अपने 'रसूलों' पर किताबें उतारी। अल्लाह की अन्तिम किताब कुरआन मजीद है जो अल्लाह के अन्तिम रसूल हज़रत मुहम्मद सल्ल० पर अवतीर्ण हुआ है। कुरआन अपने शब्द और अर्थ दोनों पहलुओं से अल्लाह का 'कलाम' है। यह किताब अल्लाह के रसूल सल्ल० की अपनी रचना कदापि नहीं है। रसूल का काम तो यह है कि वह एक अमानतदार की तरह उस किताब को जो अल्लाह की ओर से उसके दिल पर अवतीर्ण हुई है, अल्लाह के बन्दो तक पहुँचाये। और अपनी ओर से उस में कोई कमी-बेशी न करे। अल्लाह की दी हुई सूझ-बूझ से इस किताब की व्याख्या करे और अपनी शिक्षा और अपने चरित्र द्वारा लोगों के आचार-विचार को ठीक करे। उनके जीवन में क्रान्ति लाये। और उन्हें एक उत्तम गरोह या समुदाय बनाये। ऐसा गरोह जिसके द्वारा ससार में भलाई फैले और बुराई समाप्त हो।

तौरात, इञ्जील, जबूर आदि अल्लाह की ओर से बहुत सी किताबें अवतीर्ण हुईं, परन्तु उनमें से कितनी किताबें हैं जो बिल्कुल लुप्त हो चुकी हैं। जो किताबें आज पाई भी जाती हैं उनमें कुरआन के सिवा कोई किताब अपने वास्तविक शब्दों और अर्थों के साथ सुरक्षित नहीं है। उनमें अल्लाह के कलाम के साथ मानवीय कलाम भी सम्मिलित हो गया है। लोगो ने उनमें बहुत सी बातें अपनी ओर से मिला दी हैं। और कितनी ही बातों को लोगो ने बदल कर रख दिया है। अब यह निर्णय करना बहुत ही मुश्किल है कि उनमें कितना सत्य है कितना असत्य है। कुरआन की विशेषता यह है कि वह अपने उन्ही शब्दों और अर्थों के साथ मौजूद है जिन शब्दों और अर्थों के साथ अल्लाह के अन्तिम रसूल ने उसे दुनिया के सामने प्रस्तुत किया था। इस 'किताब' की भाषा आज भी संसार की एक जीवित भाषा है। इसकी भाषा को बोलने और समझने वाले करोड़ों की सख्या में दुनिया में मौजूद है। यह किताब दिव्य मार्गदर्शन का अन्तिम और नवीनतम संस्करण है जिसमें 'कियामत' तक

के लिए और संसार के सारे ही लोगो के मार्गदर्शन की सामग्री है। इस किताब के बाद किसी और किताब की आवश्यकता शेष नहीं रहती। सीधा मार्ग पाने और अल्लाह की इच्छानुसार जीवन व्यतीत करने के लिए जिन बातों की आवश्यकता थी वे सभी बातें इसमें बयान कर दी गई हैं। इस किताब में वे समस्त विशेषताएँ पाई जाती हैं जो अगली किताबों और 'सहीफ़ो' में अलग-अलग थी। कुरआन को आचार-विचार सम्बन्धी दिशा दर्शन और व्यावहारिक जीवन के लिए पूर्ण जीवन व्यवस्था और ऐसे कानून की हैसियत प्राप्त है जिसका पालन करना प्रत्येक के लिए अनिवार्य है। जिसने इस किताब की उपेक्षा की उसने अपना सम्बन्ध वास्तविक जीवन-स्रोत से काट लिया।

कुरआन मनुष्य को जिस 'दीन' (धर्म) की ओर आमन्त्रित करता है वही मानव का वास्तविक और स्वाभाविक धर्म है। यही कारण है कि उसने लोगो को उनकी बुद्धि और सूझ-बूझ के मार्ग से आमन्त्रित किया है। दूसरे शब्दों में उसने उनकी प्रकृति को आकर्षित किया है। उसने मानवीय प्रकृति में निहित तथ्यों से लोगों को परिचित किया है। मानव को उसकी वास्तविक प्रकृति और उसकी माँग का स्मरण कराया है। इसीलिए वह अपने-आप को 'जिक्र व तवसरा' (अनुस्मरण व आँखें खोल देने की सामग्री) के नाम से प्रस्तुत करता है। फिर वह ज्ञान, विश्वास और चिन्तन और सोच-विचार के लिए ऐसी दृढ़ बुनियाद संचित करता है जिसे सन्देह और शंका कभी हिला नहीं सकते। इस दृष्टि से वह 'हुदा' और 'तिबयान' (मार्ग-दर्शन व स्पष्टकर्त्ता) 'हक' व 'बुरहान' (सत्य व प्रमाण) है और हमारे लिए 'बसायर' व 'नूर' (अन्तर्दृष्टियों की सामग्री व प्रकाश) है।

कुरआन जो अल्लाह की 'वह्य' है इसी के द्वारा मनुष्य को वास्तविक जीवन प्राप्त होता है। यही हमारे शाश्वत जीवन का साधन है। इसके द्वारा हमें जीवन का सीधा और सुगम मार्ग मिलता है। अल्लाह की 'वह्य' वह पवित्र आहार है जिससे हमारा आत्मिक जीवन सम्बद्ध है। मूसा की किताब में है : "मनुष्य केवल रोटी से नहीं जीवित रहता बल्कि उस 'कल्मा' (शब्द) से जीवित रहता है जो प्रभु (ईश्वर) की ओर से आता है।" (मत्ता ४ ४) हज़रत मूसा कहते हैं : मनुष्य केवल रोटी ही से नहीं जीता बल्कि जो-कुछ प्रभु के मुख से निकलता है उससे जीवन पाता है"—(व्यवस्था विवरण ८ ३। हज़रत मसीह अ० की प्रार्थना है : "हमारी रोज की रोटी हमें रोज दिया कर"—लूका ११ ३।

कुरआन में भी कहा गया है कि 'वह्य' और मार्गदर्शन की हैसियत "रिज्क हसन" अर्थात् अच्छी रोजी की है। सूरह हूद आयत ८८ में कहा गया है। "(शुऐब ने) कहा हे मेरी जाति वालो ! देखो तो, यदि मैं अपने 'रब' की खुली दलील पर हूँ, और उसने मुझे (अपनी ओर से) "रिज्क हसन" (अच्छी रोजी) प्रदान किया है (तो मैं कैसे तुम्हारी तुच्छ इच्छाओं का पालन कर सकता हूँ)"। इस रोजी से वंचित रह जाना बड़े दुर्भाग्य की बात है।

— — —

किताब पर 'ईमान'

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ قَالَ قَالَ أَهْلُ الْكِتَابِ يَفْرَهُونَ السَّمَاءَ بِالْعِبْرَانِيَّةِ وَيُفَسِّرُونَهَا بِالْعَرَبِيَّةِ لِأَهْلِ الْإِسْلَامِ فَقَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ لَا تَصْدَقُوا أَهْلَ الْكِتَابِ وَلَا تَكْذِبُوا بِهِمْ وَقُولُوا آمَنَّا بِاللَّهِ وَمَا أُنْزِلَ إِلَيْنَا ——— حاز

१. हजरत अबूहुरैरह रजि० कहते हैं कि 'किताब वाले' (यहूदी व इसाई) इब्रानी में 'तौरात' को पढ़ते और मुसलमानों के लिए अरबी में उस की व्याख्या करते थे इस पर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'तुम 'किताब वालों' की न तसदीक करो और न उन को झुठलाओ' और कहो हम 'ईमान' लाये अल्लाह पर और उस चीज पर जो हमारी ओर उतारी गई'। —बुखारी

१. मतलब यह है कि अल्लाह की ओर से भगले 'नबियो' पर भी किताबें उतरी हैं और मुसलमान अल्लाह की ओर से आई हुई सभी किताबों पर 'ईमान' रखते हैं। परन्तु किताब रखने वाले 'यहूदी' और 'इसाई' आज जो कुछ 'तौरात' और 'इन्जील' के नाम से प्रस्तुत करते हैं उसके बारे में नहीं कहा जा सकता कि उनकी कितनी बातें वास्तव में तौरात व इन्जील की हैं और कितनी बातें लोगो की अपनी ओर से घड़ी हुई हैं। आसमानी किताबें आज अपने वास्तविक रूप में सुरक्षित नहीं हैं अत उचित बात यही है कि 'किताब वाले' ईश्वरीय ग्रंथ के नाम से जो कुछ प्रस्तुत करते हैं उनके बारे में चुप रहा जावे। न उनका समर्थन किया जाये और न उनका इन्कार किया जावे। हाँ जिन बातों की पुष्टि कुरआन से होती है उनकी तसदीक की जायेगी और जिन बातों का असत्य होना कुरआन से सिद्ध है उन्हें असत्य कहा जायेगा।

२. यह सकेत कुरआन की एक विशेष 'आयत' की ओर है। पूरी आयत यो है :
 "कहो हम 'ईमान' लाये अल्लाह पर और उस चीज पर जो हमारी ओर उतारी गई और उस पर जो इबराहीम, इसमाईल, इसहाक और याकूब, (याकूब की) औलाद की ओर उतारी गई, और जो मूसा और ईसा को दी गई, और जो दूसरे सभी 'नबियो' को उनके 'रब' की ओर से मिलती रही है, हम उनके बीच कोई अन्तर नहीं करते; और हम उसके मुस्लिम (आज्ञाकारी) हैं।"
 —अल बकरा आयत १३६।

عَنْ عُثْمَانَ بْنِ عَفَّانَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ أَخْبَرْتُكَ مِنْ تَعْلَمُ الْقَارِ
وَعَلِمَهُ ————— بخاري

२ हजरत अबू हुररह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी लोग अल्लाह के घरों में से किसी घर (मस्जिद) में एकत्र होकर कुरआन पढ़ते-पढ़ाते हैं तो उन पर 'सकीनत' (शान्ति) अवतरित होती है और अल्लाह की दयालुता उन्हें ढाँक लेती है। और 'फिरिश्ते' उन्हें घेर लेते हैं और अल्लाह उनकी चर्चा अपने पास वालों में करता है। और जिस व्यक्ति का कर्म उसे पीछे कर दे उसका वश उसे आगे नहीं बढ़ा सकता। —मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी

१ 'सकीनत' (शान्ति) से अभिप्रेत दिल का इत्मीनान, स्थिरता और धैर्य है। कुरआन के पाठ में यह आध्यात्मिक प्रभाव पाया जाता है कि उससे दिल में इत्मीनान (*conviction*) और शान्ति का अवतरण होता है। सन्देह और हर प्रकार की खटक दूर हो जाती है। 'शैतान' के हस्तक्षेप से आदमी बच जाता है। कुरआन एक ऐसा प्रकाश है जिससे दिलों के सभी गोशे प्रकाशित हो जाते हैं। अन्धकार लेशमात्र को भी शेष नहीं रहता। दिल की बेचैनी दूर हो जाती है। 'ईमान' में दृढ़ता और निखार आ जाता है। फिर आदमी को सच्चाई के लिए प्राण तक देने में कोई भिन्नता नहीं होती। अल्लाह के मार्ग में चलने ही में उसके दिल को शान्ति और ठढक मिलती है।

२ अर्थात् अल्लाह के यहाँ जिस चीज का वास्तव में महत्व है वह यह है कि मनुष्य ने सत्य और सच्चाई को पहचान लेने के पश्चात् कहीं तक उसे अपने जीवन में अपनाया और कहीं तक उसके तकाज्जे पूरे किये । जो व्यक्ति कर्म सम्बन्धी अपने दायित्व के प्रति असावधान रहा वह 'आखिरत' में केवल इस कारण ऊँचा दर्जा न पा सकेगा कि उसका जन्म एक उच्च और पवित्र वंश में हुआ था । इसलिए मनुष्य को वश-श्रेष्ठता पर भरोसा करने के बदले ज्यादा-से-ज्यादा ध्यान कर्म की ओर देना चाहिए ।

कहा : हर एक 'नबी' को कुछ चमत्कार दिये गये- जिनके अनुसार लोग उन पर 'ईमान' लाये, मेरा चमत्कार जो मुझे प्रदान हुआ, 'वह्य' है, जिसे अल्लाह ने मेरी ओर भेजा है और मुझे आशा है कि 'कियामत' के दिन मेरे अनुयायी समस्त 'नबियो' से अधिक होंगे^३ । —बुखारी, मुस्लिम, अहमद

४. हज़रत जाबिर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० अपनी 'नमाज' में 'तशहहुद' के पश्चात् कहा करते थे . सबसे अच्छा 'कलाम' अल्लाह का 'कलाम' है और सबसे अच्छा तरीका महम्मद (सल्ल०) का तरीका है । —नसई

५. हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कुरआन पाँच प्रकार की बातों पर अवतरित हुआ है^४ . हलाल-इराम, अटल^५, उपलक्षित^६ सौर मिसाले^७, तो तुम हलाल (वैध) को

३. अगले 'नबियो' को अल्लाह ने विभिन्न चमत्कार प्रदान किये थे । उन चमत्कारों से यह सिद्ध होता था कि वे उसी अल्लाह के भेजे हुए 'रसूल' या 'नबी' हैं जिसका अखिल विश्व पर शासन है । स्वयं 'नबी' सल्ल० को भी बहुत से चमत्कार प्रदान किये गये परन्तु आपका सबसे बड़ा चमत्कार कुरआन है जो 'कियामत' तक शेष रहने वाला है । कुरआन अपने विषय, वर्णन शैली, साहित्य आदि प्रत्येक दृष्टि से एक महान् चमत्कार है । कुरआन एक ऐसा चमत्कार है जिसे देखकर 'कियामत' तक लोग प्रभावित होते रहेंगे । नबी सल्ल० के अनुयायी समस्त 'नबियो' के अनुयायियों से अधिक होंगे ।

४. अर्थात् कुरआन में पाँच प्रकार की चीज़ें मिलती हैं ।

५. ऐसी 'आयतें' जिनका अर्थ बिल्कुल स्पष्ट है । जिनमें वे सभी बातें स्पष्ट रूप से बता दी गई हैं जिनकी ओर आमंत्रित करने के लिए कुरआन का अवतरण हुआ है । उदाहरणार्थ 'ईमान' और मौलिक धारणा सम्बन्धी बातें, भलाई क्या है ? बुराई किसे कहते हैं ? सत्य क्या है ? असत्य क्या है ? इनके अतिरिक्त वे सभी बातें जिनका सम्बन्ध व्यावहारिक जीवन और समाज से है ।

६. उपलक्षित और अस्पष्ट (*Allegorical*) 'आयतें' वे हैं जिनमें वे बातें बयान हुई हैं जिन तक हमारी बुद्धि नहीं पहुँच सकती । जिन्हें पूर्ण रूप से समझना हमारे लिए सम्भव नहीं । उदाहरणार्थ अल्लाह की सत्ता, 'आखिरत' (परलोक) में पेश आने वाली बातें आदि । इन बातों के बारे में एक हद तक जानना मनुष्य के लिए आवश्यक था । इसलिए कि जब तक इनके बारे में कुछ बातें न बता दी जायें जीवन की कोई रूपरेखा नहीं प्रस्तुत की जा सकती और न इसके बिना कोई जीवन-दर्शन ही प्रस्तुत किया जा सकता था ।

७. मिसालों से अभिप्रेत उदाहरण, उपमाएँ और प्राचीन जातियों की कथाएँ हैं

हलाल जानो, हराम (अवैध) को हराम समझो, अटल का पालन करो, उपलक्षित पर 'ईमान' लाओ और मिसालों से शिक्षा ग्रहण करो।

—मसावीह-वैहकी

६ हजरत वासिला रजि० ने नबी सल्ल० से उल्लेख किया है कि (आप ने कहा .) मुझे 'तीरात' के बदले में 'सब्ब तवाल' मिली हैं और 'जबूर' के बदले में 'मईन' और टज्जील, के बदले में 'मसानी' और 'मुफ-स्सल' के साथ मुझे श्रेष्ठता प्रदान की गई। —अहमद व अल-कबीर

७ हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . कुरआन पढ़ने वाले 'मोमिन' (ईमान वाले व्यक्ति) की मिसाल तुरज (एक प्रकार का नीबू) की तरह है कि उसकी महक भी अच्छी और उसका मजा भी अच्छा है और उस 'ईमान' वाले व्यक्ति की मिसाल जो कुरआन नहीं पढ़ता खजूर की तरह है कि उसमें महक नहीं होती परन्तु उसका मजा मीठा होता है। और उस 'मुनाफिक' की मिसाल जो कुरआन पढ़ता है 'रैहान' (एक महकता पौधा) की तरह है कि उसकी महक तो अच्छी है परन्तु उसका मजा कड़वा होता है। और उस 'मुनाफिक' की मिसाल जो कुरआन नहीं पढ़ता इन्धायन की तरह है जिसमें कोई महक नहीं होती और उसका मजा भी कड़वा होता है।

—बुखारी, मुस्लिम

जिनका उल्लेख कुरआन में जगह-जगह हुआ है।

८. कुरआन की सात आरम्भिक सूरते 'तुवाल' कहलाती हैं। इसके बाद ग्यारह सूरते 'मईन' कहलाती हैं और इसके बाद को बीस सूरतें 'मसानी'। इसके बाद कुरआन के अन्त तक 'मुफस्सल' हैं। कुछ सूरतों के बारे में मतभेद भी है कि वे 'तुवाल' में से हैं या 'मईन' में सम्मिलित हैं। इसी प्रकार कुछ सूरतों के बारे में यह मतभेद भी पाया जाता है कि वे 'मसानी' हैं या 'मुफस्सल' हैं। मालूम हुआ कि जो आसमानी किताबें पहले अवतीर्ण हो चुकी हैं कुरआन में उन सब की मिसाल मौजूद है। इसके अलावा 'मुफस्सल' इस कुरआन की विशेष चीज हैं, इसकी मिसाल अगली किताबों में नहीं मिलती।

९ मतलब यह है कि जो 'मोमिन' कुरआन पढ़ता है वह बाह्य और आन्तरिक हर प्रकार के गुणों से युक्त होता है। जो 'मोमिन' कुरआन नहीं पढ़ता उसमें एक दोष रह जाता है, परन्तु उसके आन्तरिक अस्तित्व को श्रीहीन नहीं कहा जा सकता, इसलिए कि 'ईमान' उसके दिल में मौजूद है। 'मुनाफिक' (कपटनीति वाला) का आन्तरिक अस्तित्व श्रीहीन होता है। वह पढ़ने को तो कुरआन पढ़ रहा होता है, परन्तु उसके दिल में 'निफाक' (कपट) का रोग मौजूद होता है।

८ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : कुरआन वाले व्यक्ति से^{१०} ('कियामत' के दिन) कहा जायेगा कि पढ़ते जाओ और चढ़ते जाओ और उसी तरह सँभाल-सँभाल कर (कुरआन) पढ़ो जिस तरह से दुनिया में सँभाल-सँभाल कर पढ़ते थे इसलिए कि तुम्हारा स्थान तुम्हारी 'तिलावत' (पठन) की अन्तिम 'आयत' पर होगा^{११} ।

—तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्न माजाह

९ हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति सर्वोच्च अल्लाह की किताब में से एक अक्षर पढ़े उसे प्रत्येक अक्षर के बदले एक नेकी मिलेगी और हर नेकी दस नेकी के बराबर होगी । मैं "अलिफ० लाम० मीम०" को एक अक्षर नहीं कहता 'अलिफ०' एक अक्षर है, लाम० एक अक्षर है, है, और मीम० एक अक्षर है^{१२} ।

—तिरमिजी

१० हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा हे अल्लाह के रसूल ! कौन सा कर्म अल्लाह

ऐसा 'मुनाफिक' जो कुरआन नहीं पढ़ता उसके न बाह्य अस्तित्व में सुन्दरता होती है और न उसके आन्तरिक जीवन में कोई अच्छाई पाई जाती है ।

१० अर्थात् उस व्यक्ति से जो कुरआन पढ़ता और अपने जीवन को कुरआन के अनुसार बनाने की कोशिश करता है ।

११ अर्थात् कुरआन की 'तिलावत' (पठन) के अनुसार तुम्हारे दर्जे ऊँचे होते जायेंगे । कुरआन की प्रत्येक 'आयत' मनुष्य के दर्जे को बढ़ाने वाली है । मनुष्य यदि वास्तव में समझ कर और जी लगा कर कुरआन की 'तिलावत' करे तो सासारिक जीवन में ही वह अपने विचार और कर्म की दृष्टि में ऊँचा होता चला जायेगा । विचार, स्वभाव और कर्म की दृष्टि से जो उच्चता उसे सासारिक जीवन में प्राप्त होती है उसी का पूर्ण प्रकाशन 'आखिरत' के जीवन में होगा ।

१२ अर्थात् कुरआन के प्रत्येक शब्द और उसके प्रत्येक अक्षर की 'तिलावत' (पठन) पुण्य और नेकियों का कारण बनती है । अल्लाह अपनी विशेष कृपा से प्रत्येक अक्षर पर दस नेकियों का 'सवाव' प्रदान करता है । कुरआन ऐसा अनुपम और कल्याणकारी ग्रन्थ है कि आदमी को उसके प्रत्येक शब्द से प्रेम होना चाहिए । एक नेकी पर दस नेकियों का सवाव प्रदान करना अल्लाह का सामान्य नियम है, कुरआन में है "जो व्यक्ति एक नेकी लेकर आयेगा उसे उस जैसी दस नेकियों का 'सवाव' दिया जायेगा ।"—सूरा अल-अनआम आयत १६० ।

को बहुत रिक्त है ? धारने का मकर समाप्त करने वाला और फिर मकर शुरू करने वाला । उस व्यक्ति में तब मकर समाप्त करने और फिर शुरू करने करने में बड़ा अभिप्रेत है ? कहा इससे अभिप्रेत वह व्यक्ति है जो कुर्रधान को शुरू में बन्त वह पूरा करके फिर शुरू करता है और इसी तरह मकर समाप्त करता और फिर शुरू कर देता है^{१३} ।

—तिरमिजी

१३. इसका अर्थ है कि मकर समाप्त करने में उल्लिखित है कि नतीजतन में तब मकर समाप्त होता है जब मकर समाप्त होता है, जो तब उस के अन्त में मकर की ओर बढ़ी जाता वह तबने जो मकर शुरू कुर्रधान धरनाह की रस्ती है और प्रयोग प्रयोग है । और अभिप्रेत आयोग्यकर है । इस व्यक्ति में विश्व ज्ञान और मुरझा (जो नामगी) है जो उसे दुःखता के साथ धरने, और इस व्यक्ति के लिए छटपटाता यह मुरझा (का माघन) है जो उनका मुरझा करे । न तब तब में हटेंगे कि उसके प्रयोग की आवश्यकता को और न देता होगा कि सीमा करने की आवश्यकता पड़ नगे । और उसमें नम तब एवं विनियमनाएँ तब होने को नहीं^{१४} और

१४. इस 'हरीम' में कुर्रधान धरना वह नतीजतन में मकर की उपमा दी है । यह ऐसा मकर है जो नतीजतन मारी होता । कुर्रधान ऐसी विताव है जिससे नतीज नतीज शुरू नहीं हो पाता । इसका ज्ञान और तब वह नतीज नतीज समाप्त होने की नहीं है । यह मकर मरने नतीज ही रहता है । धरने वाला यदि समझ-बूझ करता है तो उनका प्रयोग मकर नतीज ही रहता, यह 'विताव' का पठा और इनकी 'धारण' काच-विचार और विनियम करने काचों के लिए अत्यन्त आनन्द-समक है ।

१५. इस 'हरीम' में मानूँ कि कुर्रधान समस्त गुणों और विशेषताओं से युक्त है । हमने तब धारित और मोच-विचार सम्बन्धी आहार प्राप्त होता है । और तब-क्षेत्र में उत्तरने की शक्ति मिलती है । यह अतनाह की रस्ती और मजबूत सतारा है जो किसी हासत में टूट नहीं सकता । कुर्रधान के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करने वाला कभी गुप्त राह पर नहीं पड़ सकता । यह किताब ज्ञान, साहित्य और नृत्य की व्याख्या की वह निधि है जिसके रहस्यों को हम पूर्ण रूप में जान नहीं सकते । कुर्रधान के प्रेमी मरद्व कुर्रधान में सोच-विचार करते रहेंगे और उन पर कुर्रधान का अर्थ खुलता जायेगा और वे सदैव ज्ञान के मोतियों में अपने दामन को भरते रहेंगे । ऐसा कभी न होगा कि वे कह सकें कि हमने कुर्रधान के समझने का हक अदा कर दिया । वे यही कहते रहेंगे कि हमने जो

न अधिक पढ़ने से वह पुराना होता है^{१५}। अल्लाह तुम्हें उसकी तिलावत (पठन) पर हर अक्षर के बदले दस नेकियाँ प्रदान करेगा, मैं यह नहीं कहता कि 'अलिफ़० लाम० मीम०' एक अक्षर है बल्कि अलिफ़० एक अक्षर है और लाम० एक अक्षर है और मीम० एक अक्षर है। —हाकिम

१२. हज़रत अबू हुदैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल रल्ल० ने "कुल हुवल्लाहु अहद" के बारे में कहा कि यह तिहाई कुरआन के बराबर है^{१६}। —मुस्लिम

कुछ कुरआन से प्राप्त किया वह उसके मुकाबले में बहुत थोड़ा है जो अभी हम हासिल नहीं कर सके हैं।

१५. कुरआन का मामला दूसरी किताबों से भिन्न है। इस किताब को जितना अधिक पढ़िए और इसमें सोच-विचार कीजिए उतना ही आनन्द बढ़ता जाएगा। इस किताब में सदैव एक नयापन महसूस होता है जब कि दूसरी किताबों का हाल यह है कि उनके बारबार पढ़ने से आनन्द और इसमें कमी होती चली जाती है।

१६ कुरआन में मौलिक रूप से तीन बातें बयान हुई हैं उनमें सबसे महत्वपूर्ण 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) है। सूरा 'कुल हुवल्लाहु अहद' (सूरा अल-इखलास) वास्तव में 'तौहीद' की सूरा है। यो तो 'तौहीद' का प्रकाश पूरे कुरआन में फैला हुआ है लेकिन इस सूरा में विशेष रूप से 'तौहीद' की प्रकाशमान किरणों केन्द्रित हो गई हैं। इसलिए आपने इस सूरा को तिहाई कुरआन कहा।

हदीसों में दूसरी सूरतों की विशेषताओं का भी वर्णन मिलता है जिनसे मालूम होता है कि कुरआन की प्रत्येक सूरा का अपने स्थान पर बड़ा महत्व है। सूरतों के अतिरिक्त कुरआन की विशिष्ट 'आयतों' के गुणों का उल्लेख भी हदीस में किया गया है जिससे उन 'आयतों' की महानता का अनुमान किया जा सकता है। 'हदीसों' में जिन 'सूरतों' के गुणों का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है वे ये हैं - अल-फातिहा, अल-बकरा, आले इमरान, या० सीन०, अल-वाक़िआ, अल-मुल्क, अलिफ० लाम० मीम० तनज़ील, अल-कहफ़, अर-रहमान, अल-आला, अल-ज़िलज़ाल, अत-तकासुर, अल-काफ़िरून, अल-इखलास, अल-फलक, अन-नास। कुरआन की जिन 'आयतों' की विशेष रूप से महानता और विशेषता बयान हुई हैं वे ये हैं आयतल कुरसी, (अर्थात् सूरा अल-बकरा की आयत २५५), सूरा अल-बकरा की अंतिम दो 'आयतें', आले इमरान की आयत १६०-२००, सूरा अल-कहफ़ की आरम्भिक और अन्तिम दस आयतें।

१३ हज़रत अलो रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि हर चीज़ का एक शृंगार होता है कुरआन का शृंगार सूर अर-रहमान है^{१०} । —बैहकी

१४. हज़रत उमर बिन खत्ताब रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : अल्लाह इस किताब के द्वारा बहुत से लोगों को उच्चता प्रदान करता है और इसके द्वारा बहुत से लोगों को पस्त करता है^{१५} । —मुस्लिम

१५ हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने कुरआन पढ़ा उसने 'नुबूवत' को अपने अक में ले लिया अन्तर केवल यह है कि उसकी ओर 'वह्य' नहीं की जाती । कुरआन वाले व्यक्ति को यह बात शोभा नहीं देती कि वह क्रोध करने वाले के साथ स्वयं क्रोध करे या झगड़ने वाले के साथ झगड़े जबकि उसके सीने में अल्लाह का कलाम मौजूद है^{१६} । —हाकिम

१६. हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के नबी सल्ल० ने कहा . 'कियामत' के दिन 'अर्श' (ईश्वरीय सिंहासन) के नीचे तीन चीज़ें होंगी^{२०} : कुरआन जो बन्दों से झगड़ेगा^{२१}

१७ सूर अर-रहमान ऐसी सूर है जिसमें स्पष्टतः सौंदर्य पाया जाता है । जिसको प्रत्येक व्यक्ति यहाँ तक कि अरबी भाषा न जानने वाले भी महसूस कर लेते हैं । यो तो प्रत्येक सूर सुन्दरता ही का प्रतीक है ।

१८. मतलब यह है कि जो लोग कुरआन को पढ़ते और उसके आदेशों का पालन करते हैं और वास्तव में उसे अपने जीवन में एक मार्गदर्शक ग्रंथ समझते हैं अल्लाह उन्हें उच्चता, आदर और शक्ति प्रदान करता है यहाँ तक ससार में उन्हें राजसत्ता भी प्रदान करता है और 'आखिरत' में उनके दर्जे बढ़ाता है । इसके विपरीत जो लोग इस किताब के हक को नहीं पहचानते, अल्लाह भी उन्हें पस्ती में डाल देता है जिससे वे कभी निकल नहीं पाते ।

१९ 'कुरआन' बहुत बड़ी नेमत और 'नुबूवत' का साराश है । कुरआन के प्रेमी को चाहिए कि वह उसका सम्मान करे और अपने चरित्र और कर्म को उच्च से उच्च रखने का प्रयास करे ।

२० अर्थात् कुरआन, अमानत और नाते-रिश्ते के मामले विशेष रूप से 'कियामत' के दिन अल्लाह के सामने पेश होंगे । और इनके बारे में वह फैसला करेगा । इन तीनों चीज़ों को मानव-जीवन में मौलिक महत्व प्राप्त है । कुरआन जीवन

उसका एक बाह्य है और उसका एक अन्तर है^{२२}—अमानत (न्यास) और रिश्ता-नाता। यह पुकार कर कहेगा • सुन लो ! जिसने मुझे मिलाया उसे अल्लाह अपनी दयालुता से मिलायेगा और जिसने मुझे तोड़ा अल्लाह उसे तोड़ डालेगा^{२३} । —शरहुस्सुन्नह

१७ हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति कुरआन (की व्याख्या) में बिना ज्ञान के कोई बात कहे वह अपना ठिकाना ('जहन्नम' की) आग में बना ले^{२४} । —तिरमिजी, नसई, अहमद

मे एक प्रकाश-स्तम्भ और मार्गदर्शक है । अमानतदारी और नाते-रिस्ते का हक अदा करना वास्तव में 'दीन' (धर्म) और नैतिकता का साराश है । इसलिए 'कियामत' में सफल होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य इन तीनों के हक को पहचाने और उन्हें अदा करने की कोशिश करे ।

२१. अर्थात् 'कुरआन' एक दलील और प्रमाण के रूप में लोगों के सामने पेश होगा । जिन लोगों ने कुरआन के आदेशों और उसकी निश्चित की हुई सीमाओं का आदर किया होगा वे उस दिन सफल होंगे । परन्तु उन लोगों की कमर उस दिन टूट जायेगी जो गर्व और अहंकार के मद में कुरआन के आदेशों का निरादर करते और अपनी तुच्छ इच्छाओं के पालन में लगे रहते हैं ।

२२ कुरआन में जहाँ नियम, अनुशासन, कानून आदि की शिक्षा दी गई है वही उसमें ऐसे आंतरिक ज्ञान और सूक्ष्म वास्तविकताओं की ओर भी संकेत किये गये हैं जिन तक अपनी चेतना और बुद्धि-स्तर के अनुसार मनुष्य की पहुँच होती है । इसके लिए सोच-विचार, चिन्तन और आत्मा की शुद्धता एवं विकास आवश्यक है ।

२३ मतलब यह है कि जिन लोगों ने मेरा हक अदा किया होगा उन ही पर अल्लाह की दया होगी । मेरे हकको दवाने वाले आज असफल और अपमानित होंगे ।

२४ कुरआन की सही 'तफसीर' (टीका, व्याख्या) वही है जो ज्ञान और सूझ-बूझ पर अवलम्बित हो । जो लोग कुरआन का अर्थ करने में ज्ञान के स्थान पर अपनी तुच्छ इच्छाओं का पालन करते हैं । वे अल्लाह की किताब पर अत्याचार करते हैं । उनका ठिकाना 'जहन्नम' ही हो सकता है । कुरआन में सोच विचार और चिन्तन करना गलत और अनुचित बात कदापि नहीं है । कुरआन ने स्वयं सोच-विचार और चिन्तन करने का आदेश दिया है । कुरआन में एक जगह है • "तो क्या ये लोग कुरआन में विचार नहीं करते या दिलों पर ताले डाले पड़े हुये हैं ?"—सूरा मुहम्मद आयत २४ । जिस चीज से हमें रोका गया है वह

कुरआन की 'तिलावत' (पठन)

عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِنَّ هَذِهِ الْقُلُوبَ تَصْدَأُ
كَمَا يَصْدَأُ الْحَدِيدُ إِذَا أَصَابَهُ الْمَاءُ، فَيَلْ يَأْسُ رَسُولُ اللَّهِ وَ مَا حِلًّا وَهَاءَ قَالَ
كَثْرَةُ ذِكْرِ السُّورِ وَتِلَاوَةِ الْقُرْآنِ ————— يَهْدِي سُبُلَ الْإِيمَانِ

१. हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'इन दिलों को भी मोरचा लग जाता है जैसे लोहे को मोरचा लग जाता है जब कि उस पर पानी पहुँच जाये। कहा गया हे अल्लाह के रसूल ! इन (दिलों) को चमक प्रदान करने वाली क्या चीज है ? कहा मृत्यु को अधिक याद करना और कुरआन की 'तिलावत' (पठन)। —बैहकी-शोबुलईमान

यह है कि हम ऐसी नीति न अपनायें कि, कुरआन का अनुसरण करने के बदले खुद कुरआन को अपने व्यक्तिगत भावनाओं और रुचि का अनुवर्ती बनाने लग जायें। कुरआन को किसी 'आयत' का जो अर्थ भी हम ले वह ऐसा होना चाहिए जिसका समर्थन प्रसंग और वाणी-व्यवस्था आदि से होता हो। इसके लिए भाषा और साहित्य का गहरा ज्ञान और 'दीन' की गहरी सूझ-बूझ अपेक्षित है। जो लोग न तो अरबी भाषा और अरब साहित्य का पूरा ज्ञान रखते हैं और न जिनमें अल्लाह का डर और जिम्मेदारी का एहसास होता है वे जब कुरआन की 'तफसीर' (टीका) करने बैठेंगे तो वे कुरआन को विकृत करके रख देंगे।

कुरआन की 'आयतों' के बारे में जो कुछ कहा जाये वह ज्ञान पर अवलम्बित हो, केवल अटकल और गुमान से कुरआन के बारे में कुछ कहना बहुत ही गैर जिम्मेदारी की बात है। एक 'हदीस' में है कि नबी सल्ल० ने कहा "जो व्यक्ति कुरआन की 'तफसीर' (टीका) अपनी सम्मति से करे वह सही निकले जब भी वह गुनहगार होगा।" —अबूदऊ, तिरमिजी।

१ मृत्यु की याद सासारिक इच्छाओं और वासनाओं की दासता से छुटकारा दिलायेगी और कुरआन की 'तिलावत' (पठन) से उसे वास्तविकता और सत्य का परिचय मिलेगा। हृदय की शुद्धता के लिए ये दोनों चीजें आवश्यक हैं। इच्छाओं और वासनाओं पर जब तक नियंत्रण प्राप्त न हो अभीष्ट भाव मन में नहीं पल सकते। हृदय कभी असावधानी और अस्वच्छता से छुटकारा नहीं पा सकता।

२ हजरत बरा इब्न आजिव रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम अपनी आवाजों से कुरआन को विभूषित करो^२।

—अबूदाऊद, नसई, इब्नमाजह

३ ताऊस से मुरसल तरीके से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० से पूछा गया कि कुरआन पढ़ने में कौन व्यक्ति अधिक अच्छी आवाज वाला है ? कहा वह व्यक्ति कि जब तू उसे पढ़ता हुआ सुने, तो तुझे ऐसा लगे कि वह अल्लाह से डरता है^३। ताऊस कहते हैं कि तल्क ऐसे ही थे। —दारमी

४. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उनसे कहा तुम्हें आले दाऊद के 'मिजमारों' (एक बाजा) में से 'मिजमार' प्रदान किया गया है^४। —बुखारी, मुस्लिम

२ अर्थात् अच्छी आवाज के साथ कुरआन पढ़ो। उसे बिगाड़ कर न पढ़ो। कुरआन जहाँ अपने अभिप्रायो, अर्थों और वास्तविकता के सूक्ष्म रहस्यों की दृष्टि से महान् ग्रंथ हैं वही उसकी ध्वनि और स्वर में भी पूर्ण सगति और सौंदर्य पाया जाता है। एक 'हदीस' में कहा गया है : "अल्लाह किसी चीज को भी उतने ध्यान से नहीं सुनता जितने ध्यान से वह 'नबी' को कुरआन गुनगुनाते हुये सुनता है।" —बुखारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, नसई। एक दूसरी 'हदीस' है : "वह व्यक्ति हममें से नहीं है, जो 'कुरआन' को अच्छी आवाज से न पढ़े" — बुखारी। इन 'रिवायतों' से जाहिर है कि कुरआन को जहाँ तक हो सके उत्तम ढंग से पढ़ना चाहिए। दिल में तड़प, द्रवण, कोमलता हो, स्वर में रमणीयता हो, शब्दों के साथ-साथ कुरआन के अर्थ एवं अभिप्राय की ओर भी ध्यान हो।

३ वास्तव में रमणीय और सुन्दर स्वर में उसी समय सजीवता आती है जब उसमें मन के भाव भी सम्मिलित हो। ऐसे स्वर जिसमें मन के भाव भी मिले हो सीधे दूसरे दिलों को प्रभावित करते हैं। मन के भावों में सबसे बढ़कर रस और सौंदर्य ईश-भय के भाव में है यही भाव बन्दगी, विनयशीलता का प्राण है। प्रेम को भी यह भाव अभीष्ट है, ज्ञानी जन इस तथ्य को भली-भाँति जानते हैं।

४ हजरत अबू मूसा अशअरी असाधारण तौर पर सुकण्ठ और अच्छी आवाज वाले थे। वे कुरआन पढ़ रहे थे। नबी सल्ल० उधर से गुजरे तो आप उनकी आवाज सुनकर खड़े हो गये और देर तक कुरआन सुनते रहे। जब वे कुरआन पढ़ चुके तो आपने वह बात कही जिसका उल्लेख इस 'हदीस' में हुआ है। आपने अबू मूसा रजि० की आवाज और स्वर की मिठास को 'मिजमार' की ध्वनि की

५. हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिस के अन्तर में कुरआन में से कुछ न हो वह उजाड़ घर के समान है^५ । —तिरमिज़ी, दारमी, हाकिम

उपमा दी । हज़रत दाऊद अ० अत्यन्त सुकठ थे । आपके कथन का अभिप्राय यह है कि अबू मूसा रज़ि० को स्वर में हिस्सा मिला है ।

५. मालूम हुआ कि कुरआन से दिलो की आवादी है । पवित्र से पवित्र और सुन्दर से सुन्दर वाणी भी कुरआन का स्थान नहीं ले सकती । कुरआन हमें हमारी श्रुति और उस अभिरुचि से परिचित कराता है जिसके बिना हमारा जीवन भावहीन ही रह जाता ।

कुरआन हृदय-लोक ही की शोभा नहीं बल्कि वह हमारे घरों की भी शोभा और बहार है । एक 'हदीस' में आया है "अपने घरों को कब्रिस्तान न बनाओ निश्चय ही 'शैतान' उस घर से भागता है जिसमें सूरा अल-बकरा पढ़ी जाती हो ।"—(मुस्लिम, नसई, तिरमिज़ी, अबू दाऊद, अहमद) मालूम हुआ कि जिस घर में कुरआन की 'तिलावत' न हो वह घर कब्रिस्तान के समान उजाड़ है । उसमें कोई जीवन नहीं है । 'शैतान' यही चाहता है कि लोग वास्तविक जीवन से दुनिया और 'आखिरत' में बचित रहे । परन्तु यदि घर में कुरआन की 'तिलावत' होती है, तो 'शैतान' की मक्कारी और चाल वहाँ नहीं चल सकती । सूरा अल-बकरा कुरआन की सबसे बड़ी सूरा है और उसमें वह सब कुछ मौजूद हैं जिसके द्वारा मनुष्य शैतानी हथकड़ों से अपने-आपको सुरक्षित रख सकता है । इस सम्पर्क से इस 'हदीस' में सूरा अल-बकरा का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है ।

कुरआन और 'नमाज़' में गहरा सम्बन्ध है । इसीलिए 'हदीसों' में कुरआन की 'तिलावत' (पठन) की तरह 'नमाज़' के बारे में भी यह आदेश दिया गया है कि मनुष्य उसके द्वारा अपने घर को आवाद रखे और उसे उजाड़ भूमि न बनाये । हज़रत अबुल्लाह इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : "अपनी 'नमाज़ों' का कुछ हिस्सा अपने घरों में अदा करो और उन्हें कब्रिस्तान न बनाओ ।"—(मुसनद अहमद) हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने कहा : "आदमी की घर में नमाज़ मेरी इस मस्जिद से उत्तम है, सिवाय 'फर्ज़' (अनिवार्य) नमाज़ के ।"—(अबू दाऊद) मस्जिद के अतिरिक्त अपने घर में भी 'नमाज़' पढ़ते रहने का अर्थ यह होता है कि नमाज़ आदमी के जीवन में पूर्णतः सम्मिलित हो चुकी है, उसकी हैसियत किसी परिशिष्ट की कदापि नहीं है ।

६ हजरत सअद बिन उबादा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति कुरआन पढ़े और फिर उसे भुला दे वह 'कियामत' के दिन अल्लाह से इस दशा में मिलेगा कि उस का हाथ कटा हुआ होगा^६ ।
—अबू दाऊद

७, जुन्दुब बिन अब्दुल्लाह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कुरआन पढ़ो जब तक तुम्हारे दिलों की रुचि उस की ओर रहे और जब उकता जाओ तो उठ खड़े हो^७ ।

—बुखारी, मुस्लिम

८ हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा बरकत वाले सर्वोच्च पालन कर्ता स्वामी का कहना है कि जिस व्यक्ति को कुरआन ने व्यस्त रखा और उसे इतना अवकाश न दिया कि वह मेरा जिक्र करता या मुझ से मागता, मैं उसे उस से बढ़ कर प्रदान करूँगा जो माँगने वालों का प्रदान करना हूँ^८ । दूसरे कलामों के मुकाबले में सर्वोच्च अल्लाह के कलाम की श्रेष्ठता ऐसी ही है जैसी स्वयं अल्लाह की श्रेष्ठता एवं उच्चता उस की पैदा की हुई चीजों के मुकाबले में है ।
—तिरमिजी, दारमी, बैहकी-शोअबुलईमान

९ हजरत उबादा मुलैकी से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हे कुरआन वालो ! तुम कुरआन से तकिया न करो^९ ।

६ कुरआन से विमुख होकर मनुष्य स्वयं अपने व्यक्तित्व और अपने अस्तित्व को क्षति पहुँचाता है ।

७ मतलब यह है कि कुरआन को हार्दिक लगाव और आनन्द से पढ़ना चाहिए । जब उकताहट पैदा हो, तो तुरन्त 'तिलावत' (पठन) समाप्त कर देनी चाहिए ।

८ अर्थात् यदि किसी व्यक्ति को कुरआन से ऐसा अनुराग है कि उसका अधिक समय कुरआन पढ़ने और उसमें सोच-विचार और चिन्तन करने में व्यतीत होता है, दुआ, जिक्र आदि के लिए उसके पास समय कम ही रहता है तो वह यह ख्याल न करे कि वह घाटे में रहेगा । अल्लाह के यहाँ ऐसे व्यक्ति का जो कुरआन से गहरा लगाव रखता है अत्यन्त उच्च स्थान है । ऐसे व्यक्ति को वह उससे कहीं बढ़ कर प्रदान करेगा जो 'जिक्र' और दुआएँ करने वालों को प्रदान करेगा ।

९ अर्थात् कुरआन की ओर से असावधान न हो । उसके हक को पहचानो और उसे अदा करने की कोशिश करो ।

रात-दिन कुरआन की 'तिलावत' (पठन) करो जैसा कि उसकी 'तिलावत' का हक है, उसे फैलाओ^{१०}, उसे गुनगुनाओ (अच्छी आवाज से पढो), और जो कुछ उस में है उसमे चिन्तन और सोच-विचार करो^{११} कदाचित् तुम सफल हो जाओ। उस के 'सवाब' (पुण्य) में जल्दी न करो उसका 'सवाब' तो रक्खा हुआ है।
—बैहकी-शोबुलईमान

कुरआन के अनुसार आचरण

عَنْ زَيْدِ بْنِ لَبِيدٍ قَالَ. ذَكَرَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ سُبًّا فَقَالَ ذَلِكَ عِنْدَ
أَوَانِ ذَهَابِ الْعِلْمِ. فُلْتُ بِأَرْسُولِ اللَّهِ وَكَيْفَ بَدَّ هَبُ الْعِلْمِ وَخَرُّ نَفَرٍ
الْقُرْآنَ وَنُفَرُهُ أَبْنَاءَنَا وَنُفَرُهُ أَبْنَاؤُنَا أَنْشَاءَهُمْ. فَقَالَ رَبِّ كَلِّمْكَ أُمَّكَ
بَارِيَادُ إِنْ كُنْتُ لَأَمْرًاكَ مِنْ أَفْقِهِ رَجُلٌ بِالْمَدِينَةِ. أَوَلَيْسَ هَذِهِ إِلَيْهِمْ
وَالنَّصَارَى. بَقَرَاءُ وَنَوْرَاءُ وَالْإِنْحِيلَ لَا بَعْمَلُونَ بِشَيْءٍ مِمَّا فِيهَا
اسـمـلـجـه

१ हजरत जियाद बिन लबीद रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने एक (भयानक) चीज का जिक्र किया और कहा कि यह उस समय होगा जब कि ('दीन का') ज्ञान उठ जायेगा। मैं ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! ज्ञान कैसे मिटेगा जब कि हम कुरआन पढ रहे हैं और अपनी औलाद को पढा रहे हैं और हमारे बेटे उसे अपनी औलाद को पढायेगे ? आप ने कहा . तुम्हे तुम्हारी माँ खोये हे जियाद ! मैं तो तुम्हे मदीना का अत्यन्त समझदार व्यक्ति समझता था। क्या ये 'यहूदी' और

१० अर्थात् कुरआन के प्रचार मे हिस्सा लो। पठन-पाठन और अर्थ, टीका आदि द्वारा कुरआन की शिक्षा को प्रसारित करो।

११ अर्थात् कुरआन मे सोच-विचार से काम लो क्योंकि इसके बिना कुरआन की बहुमूल्यता का अनुमान नहीं हो पाता। और न कुरआन के गहरे अर्थ और रहस्यो से मनुष्य परिचित हो पाता है। कुरआन से पूर्णतः लाभान्वित होने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य उसमे सोच-विचार और चिन्तन से काम ले। कुरआन को हमारी पूरी रुचि और ध्यान अभीष्ट है इसके बिना हमारी पहुँच कुरआन के उच्च और पवित्र उद्देश्यो तक नहीं हो सकती।

‘ईसाई’ तौरात और इञ्जील को नहीं पढ़ते परन्तु उन में से किसी चीज़ को व्यवहार में नहीं लाते^१। —इब्नमाजह

२ हजरत सुहब रजि० से उल्लिखित है—कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कुरआन पर ‘ईमान’ नहीं लाया वह व्यक्ति जिस ने उस की हराम की हुई चीजों को ‘हलाल’ (वैध) कर लिया^२।

—तिरमिजी

३. हजरत अबू सईद खुदरी रजि० बयान करते हैं कि मैं ने नबी सल्ल० को कहते सुना इस समुदाय में कुछ लोग पैदा होंगे, उन की ‘नमाज’ के सामने तुम अपनी नमाज को तुच्छ समझोगे। वे कुरआन पढ़ेंगे परन्तु वह उन के गले के नीचे न उतरेगा। ‘दीन’ (धर्म) से वह इस प्रकार साफ़ निकल जायेंगे जैसे तीर शिकार से निकल जाये। तीर चलाने वाला अपने तीर की लकड़ी, उस के लोहे और पंरों को देखता है और उसके पिछले भाग को देखता है कि उस में कुछ रक्त भी लगा (या नहीं)^३। —बुखारी, मुस्लिम

१. अर्थात् जब ज्ञान के अनुसार मनुष्य का कर्म और व्यवहार न हो, तो समझ लेना चाहिए कि ज्ञान शेष नहीं रहा। ज्ञान से फायदा उठाने वाले न हो तो किताब के पृष्ठों में उसके मौजूद होने का कोई अर्थ नहीं होता। यदि कुरआन के अनुसार हम चलते हैं तो निश्चय ही ‘आखिरत’ में हमें सफलता प्राप्त होगी। परन्तु यदि कुरआन से बेपरवा होकर हम जीवन व्यतीत कर रहे हैं, तो फिर यही कुरआन हमारे विरुद्ध हुज्जत होगा। हम अपनी बेअमली का कोई उज्र भी अल्लाह के सामने पेश न कर सकेंगे। एक ‘हदीस’ में आता भी है . कुरआन तुम्हारे हक में हुज्जत (दलील व तर्क) होगा या तुम्हारे विरुद्ध ‘हुज्जत’ होगा।” —मुस्लिम, तिरमिजी इब्न माजह, अहमद, दारमी।

२. ऐसा हृदयहीन व्यक्ति जिसके मन और मस्तिष्क और आचार व व्यवहार में कुरआन के पढ़ने के बाद भी कोई परिवर्तन न हो, कुरआन पढ़ने के बाद भी वही कुछ करता है जिससे कुरआन रोकता है, ऐसा व्यक्ति वास्तव में कुरआन को मानता नहीं। कुरआन के मानने का तो अर्थ यह होता है कि मनुष्य अपने आपको बिल्कुल कुरआन के नेतृत्व में दे दे। उन सभी चीजों से बाज आ जाये जिनसे कुरआन रोकता है।

३. मतलब यह है कि जिस प्रकार शिकार के शरीर को फाड़कर कोई तीर निकल जाये और उसमें कुछ भी रक्त का घब्बा न लग सके यहाँ तक कि शिकारी तीर को ध्यान से देखे फिर भी उसे इस बात में सन्देह ही रहे कि उसमें रक्त का कुछ घब्बा लगा भी या नहीं। ठीक इसी तरह कुछ लोग ‘दीन’ (धर्म) से बिल्कुल

४ हजरत बुरीदा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति कुरआन पढ़े और उस के द्वारा लोगो से खाये वह 'कियामत' के दिन इस दशा में आयेगा कि उस का चेहरा हड्डी-ही-हड्डी होगा, उस पर मांस न होगा^५।

—अल-बैहकी, शोअबुलईमान

५ हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ईर्ष्या के योग्य दो ही व्यक्ति हैं एक वह जिसे अल्लाह ने कुरआन (का ज्ञान) दिया तो वह रात-दिन के समयों में उसे कायम करता है^६ और दूसरा वह जिसे अल्लाह ने माल दिया तो वह उसे रात-दिन (अल्लाह के मार्ग में) खर्च करता है।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिजी इब्नमाजह अहमद, दारमी

निकल भागेगे। वे 'दीन' से कुछ भी प्रभावित न हो सकेंगे। कुरआन पढ़ेंगे परन्तु कुरआन का उनके दिल पर कुछ भी असर न होगा। हालाँकि उनकी नमाज़ें देखने में ऐसी शुद्ध और सुन्दर लगेंगी कि देखने वालों के मन में उनके प्रति प्रतिस्पर्धा की भावना उत्पन्न होगी।

४ अर्थात् कुरआन को दुनिया हासिल करने का साधन बनाए।

५. अल्लाह ऐसे व्यक्ति का सम्मान और उसके मुख का तेज छीन लेता है जो कुरआन का निरादर करता और उसे तुच्छ उद्देश्य के लिए प्रयोग करता है। 'आखिरत' में पूर्ण रूप से उसकी अपमानित दशा लोगों के सामने होगी। सासारिक जीवन में भी उसकी हीनता निगाह रखने वाले व्यक्तियों से छिपी हुई नहीं रहती।

६ अर्थात् उसका हक अदा करने में लगा रहता है। उसकी 'तिलावत' (पठन) करता, 'नमाजों' में उसे पढ़ता, उसकी शिक्षाओं का पालन करता, उसके सन्देशों का ससार में प्रचार करता और उन्हें व्यावहारिक रूप में मानव-जीवन में लाने की कोशिश करता है। कुरआन की 'तिलावत' (पठन) और उसके आदेशों के पालन के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि उसे दूसरों तक पहुँचाया जाये। उसकी शिक्षाओं को अधिक-से-अधिक प्रसारित किया जाये। 'हदीस' में आया भी है : "मेरी ओर से (दूसरों तक) पहुँचाओ यद्यपि एक ही 'आयत' हो।"

—बुखारी, तिरमिजी, अहमद, दारमी।

‘आखिरत’ की धारणा

‘आखिरत’ से अभिप्रेत वह जीवन है जो मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों को प्रदान किया जायेगा। वर्तमान लोक को अल्लाह तोड़-फोड़ कर नष्ट कर देगा। और नये सिरे एक स्थायी और उच्च श्रेणी के लोक का निर्माण किया जायेगा। मनुष्यों को पुनः जीवित करके उठाया जायेगा। और उनसे उनके कर्मों का हिसाब लिया जायेगा। उनके कर्म के अनुसार अल्लाह उनके अन्तिम परिणाम के बारे में निर्णय करेगा। ‘आखिरत’ की धारणा में उन बहुत से प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है जो इस जीवन में मनुष्य के मन में उठते रहते हैं।

संसार में इस पर कम ही लोग विचार करते हैं कि यह संसार क्या है? इसका सृष्टिकर्त्ता कौन है? जीवन क्या है? इसका प्रारम्भ कैसे हुआ? इस जीवन का वास्तविक उद्देश्य और अभिप्राय क्या है? इन प्रश्नों पर गहरे विचारक ही सोचते और चिन्तन करते हैं। परन्तु मृत्यु की घटना एक ऐसी घटना है जो सभी को चौंका देती है। हर व्यक्ति यह सोचने पर विवश होता है कि मृत्यु के पश्चात् क्या होगा? यह अभिलाषा प्रत्येक को होती है कि क्या ही अच्छा होता यदि वह भाँक कर देख सकता कि मृत्यु के उस पार क्या है? मर कर मनुष्य कहाँ जाता है और उस पार का लोक कैसा है? क्या मृत्यु के पश्चात् भी कोई जीवन है? या मृत्यु के पश्चात् मनुष्य सदैव के लिए मिट्टी में मिल जाता है? मनुष्य के मन में स्वभावतः उठने वाले इन प्रश्नों के मानव-मस्तिष्क ने विभिन्न उत्तर दिये हैं। परन्तु यह एक वास्तविकता है कि ‘आखिरत’ की धारणा के रूप में इन प्रश्नों का जो उत्तर ‘इस्लाम’ ने दिया है वही उत्तर सबसे अधिक दिल को लगता है। इस लोक में फैली हुई अल्लाह की निशानियों से भी इसी धारणा की पुष्टि होती है। इसी धारणा की शिक्षा अल्लाह के सभी ‘नबियो’ ने दी है।

यह मनुष्य की स्वाभाविक इच्छा है कि उसे ऐसा जीवन प्राप्त हो जो कभी समाप्त होने वाला न हो। जिसमें हर प्रकार का सुख और आनन्द हो। और जिसमें किसी प्रकार के कष्ट और दुःख का सामना न

करना पड़े। मनुष्य एक ऐसी बहार का स्वप्न देखता है जो पतझड़ से मुक्त हो। मनुष्य की यह कामना वर्तमान जीवन में पूर्ण नहीं हो सकती। यहाँ किसी व्यक्ति को शाश्वत जीवन प्राप्त नहीं है और न इसकी वर्तमान लोक में कोई सम्भावना पाई जाती है कि कोई सदैव जीवित रह सके। फिर इस जीवन में जहाँ सुख है वही दुख भी है। निरोगता के साथ रोग और जवानी के साथ बुढ़ापा की मुसीबत भी लगी हुई है। किसी भी चीज को स्थायित्व प्राप्त नहीं है। मनुष्य की इच्छाएँ यदि पूरी हो सकती हैं और उसका स्वप्न यदि सत्य सिद्ध हो सकता है, तो वह किसी ऐसे जीवन में सिद्ध हो सकता है जो इसके पश्चात् आने वाला हो।

एक और पहलू से विचार किजिए। इस ससार में मनुष्य यदि न्याय करता है, तो बहुत से ऐसे लोग भी होते हैं जिनका मानो व्यवसाय ही यह है कि वे संसार को अन्याय और अत्याचार से भर दे। फिर इसके साथ बहुधा ऐसा भी होता है कि अत्याचारी व्यक्ति ससार में सुख और चैन से जीवन व्यतीत करता है और सच्चाई के रास्ते पर चलने वाला व्यक्ति मुसीबत और दुख में अस्त होता है। न्याय की बात यह है कि जालिम को उसके जुल्म की सजा मिले और सत्य प्रिय एवं सज्जन और सुधारक को उसकी सेवाओं का पूरा-पूरा बदला दिया जाये। न्याय की यह माँग उसी समय पूरी हो सकती है जबकि यह मान लिया जाये कि इस जीवन के पश्चात् भी कोई जीवन है जिसमें हर एक को उसके कर्मों का पूरा-पूरा बदला दिया जायेगा।

मनुष्य की यह कामना भी 'आखिरत' के जीवन में ही पूरी हो सकती है कि वह उन वास्तविकताओं को जान ले जिनका निरीक्षण इस ससार में सम्भव नहीं। वे वास्तविकताएँ जिन पर आज परोक्ष का आवरण पड़ा हुआ है 'आखिरत' ही में अनावृत हो सकेगी।

वह अल्लाह जो विशाल विश्व का निर्माता है, जिसने हमें इस ससार में जीवन प्रदान किया, उसके लिए यह कुछ भी मुश्किल काम नहीं है कि वह इस वर्तमान विश्व को अस्त-व्यस्त कर के नये सिरे से एक दूसरे ससार का निर्माण करे और मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों को दोबारा जीवन प्रदान करे। जिस अल्लाह की दयालुता और न्याय पर वर्तमान विश्व की व्यवस्था कायम है। उसकी दयालुता और न्याय की ही माँग है कि इस ससार के पश्चात् वह एक दूसरे ससार की रचना करे और इस जीवन के पश्चात् मनुष्यों को एक नया जीवन प्रदान करे। इसलिए अल्लाह इस ससार के नष्ट-भ्रष्ट होने के पश्चात् एक दूसरे ससार का निर्माण अवश्य

करेगा और मनुष्यों को उनकी मृत्यु के पश्चात् दोबारा जीवन प्रदान करेगा। लोगो के अन्तिम परिणाम का निर्णय उनके कर्म के अनुसार होगा। अच्छे लोग 'जन्नत' में दाखिल होंगे जहाँ उनके लिए वह सुख और आनन्द है जिसकी आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते। बुरे लोगो का ठिका 'जहन्नम' (नरक) होगा। 'जहन्नम' अजाब और यातनाओं का घर है, जहाँ किसी प्रकार की शान्ति और आराम नहीं।

'आखिरत' सम्बन्धी धारणा की समस्या केवल एक दार्शनिक समस्या नहीं है। इस धारणा का मनुष्य के नैतिक एवं व्यावहारिक जीवन से गहरा सम्पर्क है। 'आखिरत' को मानने के पश्चात् मनुष्य अवश्य ही अपने आपको अल्लाह के सामने उत्तरदायी समझेगा। वह संसार में यह समझते हुये सारे काम करेगा कि एक दिन उसे अल्लाह के यहाँ अपने कामों का हिसाब देना है। उसके अपने कर्मों पर ही उसके भविष्य की सफलता अथवा असफलता अवलम्बित है। 'आखिरत' को मानने वाला कभी भी न्याय, सच्चाई और सत्यवादिता की उपेक्षा नहीं कर सकता। भले ही इसके कारण संसार में उसे हानि ही हो। वह जानता है कि 'आखिरत' का लाभ ही वास्तविक लाभ है। और 'आखिरत' की हानि ही वास्तविक हानि है। सासारिक जीवन अस्थायी और नाशवान है। और 'आखिरत' का जीवन इस से उत्तम और स्थायी है। उसकी दृष्टि में यह बड़ी ही नादानी की बात है कि मनुष्य सासारिक सुख और वैभव के लिए अपनी 'आखिरत' को तबाह होने दे। इसके विपरीत जो व्यक्ति 'आखिरत' को नहीं मानता जिसे किसी आने वाले जीवन के बनने-बिगडने की आशका नहीं है वह बस इसी सासारिक जीवन के लाभ-हानि को अपने सामने रखेगा। वह आग में हाथ डालने से तो अवश्य बचेगा इसलिए कि वह जानता है कि आग हाथ को जला देगी परन्तु झूठ, अन्याय, विश्वासघात, धोखा, वचन-भङ्ग, जिना और ऐसे ही दूसरे उन कर्मों से बचना उसके लिए मुश्किल है जिनका फल पूर्ण रूप से वर्तमान जीवन में सामने नहीं आता।

आखिरत पर ईमान

عَنْ عَلِيِّ بْنِ ابْنِ طَالِبٍ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: لَا يُؤْمِرُ مُعَذِّبُ حَتَّى
يُؤْمِنَ بِأَرْبَعٍ سَنَهْدُ أَنْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَنِّي مُحَمَّدٌ رَسُولُ اللَّهِ. بَعَثَنِي بِالْحَقِّ وَ
بُؤْمِنَ بِالْمَوْتِ وَبُؤْمِنَ بِالْبَعْدِ بَعْدَ الْمَوْتِ وَبُؤْمِنَ بِالْقَدَرِ ———— ترمذی

१ हजरत अली बिन अबू तालिब रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कोई वन्दा उस समय तक मोमिन (ईमान वाला) नहीं हो सकता जब तक कि चार चीजों की गवाही न दे अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नहीं, मैं अल्लाह का रसूल हूँ मुझे हक के साथ भेजा गया है, मृत्यु पर और मृत्यु के पश्चात् उठाने जाने पर ईमान लाये और तकदीर पर ईमान लाये। —तिरमिजी

‘बरजख’

● عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عُمَرَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِنَّ أَحَدَكُمْ إِذَا مَاتَ
غُرِضَ عَلَيْهِ مَقْعَدُهُ بِالْغَدُوءِ وَالْعِيسَى إِنْ كَانَ مِنْ أَهْلِ الْحَنَّةِ فَفِي أَهْلِ
الْجَنَّةِ. وَإِنْ كَانَ مِنْ أَهْلِ النَّارِ فَفِي أَهْلِ النَّارِ فَعَالٌ هَذَا مَقْعَدُكَ حَتَّى
تَعْلَمَ أَنَّكَ إِلَهُ تَوْمَ الْقِيَامَةِ ————— بخاری مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से कोई मर जाता है, तो प्रातः समय और सन्ध्या को उस के सामने उस का ठिकाना पेश किया जाता है। यदि मरने वाला ‘जन्नत’ वालों में से है, तो ‘जन्नत’ वालों के ठिकानों में से और यदि वह (‘जहन्नम’ की) आग वालों में से है, तो आग वालों

१ अर्थात् ‘मोमिन’ होने के लिए जिस तरह यह आवश्यक है कि आदमी ‘तौहीद’ (एकेश्वरवाद) और ‘रिसालत’ (ईशदत्तत्व) पर ईमान लाये उसी तरह इसके लिए यह भी आवश्यक है कि वह इस पर विश्वास रखता हो कि मरने के पश्चात् भी कोई जीवन है। मृत्यु के पश्चात् उसे दोबारा उठाया जायेगा और उसके जीवन-कर्म की परीक्षा की जायेगी और उसके कर्म के अनुसार उसे जन्नत या जहन्नम में दाखिल किया जायेगा।

के ठिकानों में से (उस के सामने पेश किया जाता है) । और कहा जाता है कि यह तेरी मजिल है यहाँ तक कि 'कियामत' के दिन तुझे दोबारा उठा कर उस तक पहुँचा देगा^१ । —बुखारी, मुस्लिम

२, हजरत अबूहुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : जब मरने वाला कब्र में पहुँचता है (यदि वह नेक और 'मोमिन' है) तो वह बिना भय और घबराहट के कब्र में बैठता है फिर उस से कहा जाता है कि तुम किस ('दिन') में थे ? वह कहता है : मैं 'इस्लाम' में था । फिर कहा जाता है कि ये व्यक्ति कौन हैं ? वह कहता है कि ये मुहम्मद, अल्लाह के 'रसूल' हैं, जो अल्लाह की ओर से प्रकाशमान प्रमाणों के साथ आये, हम ने इन की तसदीक की । फिर उस से कहा जाता है कि क्या तुम ने अल्लाह को देखा है ? वह कहता है कि किसी के लिए सम्भव नहीं कि वह (संसार में) अल्लाह को देख सके । फिर उस के लिए ('जहन्नम' की) आग की ओर एक खिड़की खोली जाती है । यह उस की ओर देखता है कि उस का कुछ हिस्सा कुछ हिस्से को खाये जा रहा है । फिर उस से कहा जाता है कि उस चीज़ को देख ले जिस से अल्लाह ने तुझे बचा लिया । फिर उस के लिए 'जन्नत' की ओर एक

- १ यह 'हदीस' बताती है कि मरने के पश्चात् मनुष्य बिल्कुल लुप्त नहीं हो जाता । उसकी आत्मा अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं के साथ शेष रहती है । प्रातः समय और सायंकाल उसे उसके वास्तविक ठिकाने की झाँकी दिखाई जाती है । 'जन्नत' को देख कर 'जन्नत' वाले को जो प्रसन्नता होगी उसकी आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते । इसी तरह 'जहन्नम' (नरक) को देखकर नारकी की जो दशा होगी और वह जिस दुख और सन्ताप में अस्त होगा उसका अनुमान करना भी हमारे लिए असम्भव है । कुरआन मजीद से भी इस 'हदीस' के बयान की पुष्टि होती है । दे० सूरा या सीन० आयत २६-२७ । सूरा अल-मोमिनून में फिरअन के लोगो के बारे में कहा गया है . "तो जो चाल बे चल रहे थे उसकी बुराइयों से अल्लाह ने उसे बचा लिया, और फिरअन के लोगो को बुरी यातना ने आ घेरा, आग है, जिसके सामने वे प्रातः समय और सायंकाल पेश किये जाते हैं; और जिस दिन वह घड़ी (अर्थात् 'कियामत') कायम होगी (कहा जायेगा) . फिरअन के लोगो को सख्त यातना में दाखिल करो (आयत ४५-४६) । मालूम हुआ कि मृत्यु के पश्चात् मनुष्य बिल्कुल लुप्त और विनष्ट नहीं हो जाता केवल उससे उसका वर्तमान शरीर छिन जाता है । उसका व्यक्तित्व मृत्यु के पश्चात् भी शेष रहता है । उसे दुख-सुख का एहसास भी होता है ।

खिड़की खोली जाती है। वह उस की ताजगी ओर शोभा ओर जो-कुछ उस में हैं देखता है। फिर उस से कहा जाता है कि है यह तुम्हारा ठिकाना है। तुम विश्वास पर स्थिर रहे, उसी पर तुम मरे और उसी पर अल्लाह ने चाहा तो तुम उठाये जाओगे।

और बुरा आदमी अपनी कब्र में बैठता है तो वह डर और परेशानी की हालत में होता है। उस से कहा जाता है कि तू किस ('दीन') में था? वह कहता है कि मैं नहीं जानता। फिर कहा जाता है कि ये कौन व्यक्ति है? कहता है कि मैं ने लोगो को जो बात कहते सुना वही बात मैं ने भी कह दी। उस समय उस के लिए 'जन्नत' की ओर एक खिड़की खोली जाती है, तो वह उस की ताजगी ओर शोभा और जो-कुछ उस में हैं देखता है। फिर उस से कहा जाता है कि उस चीज की ओर देखो जिसे अल्लाह ने तुम्हारी ओर से फेर दिया है। फिर उसके लिए ('जहन्नम' की) आग की ओर एक खिड़की खोल दी जाती है। वह उस की ओर देखता है कि उस का कुछ हिस्सा कुछ हिस्से को खाये जा रहा है। उस से कहा जाता है कि यह तुम्हारा ठिकाना है। तुम सन्देह में पड़े रहे और इसी पर तुम मरे और इसी पर अल्लाह ने चाहा तो तुम उठाये जाओगे^२।

—इब्न माजह

२. मरने के पश्चात् अपने कर्म के अनुसार ससुष्य की आत्मा या तो सुख में होती है या कष्टों और यातनाओं में ग्रस्त रहती है। शरीर से विलग होने के पश्चात् भी आत्मा में व्यक्ति-विशेषता शेष रहती है। शरीर से विलग होने के पश्चात् आत्मा विनष्ट नहीं होती बल्कि अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ जिसका निर्माण विचारों, भावनाओं और कर्मों के द्वारा सासारिक जीवन में होता है शेष रहती है। मृत्यु के पश्चात् से लेकर 'क़ियामत' के दिन तक आत्मा जिस लोक में रहती है और उसे जिन चीजों का सामना करना पड़ता है उसे पूरे तौर पर समझना हमारे लिए मुश्किल है। मरने के बाद से लेकर 'क़ियामत' के दिन तक आत्मा जिस लोक में रहती है उसे 'वरजख' कहते हैं कब्र की तकलीफ या आराम से अभिप्रेत वास्तव में 'वरजख' की तकलीफ या आराम है। मरने वाला चाहे जमीन में गाड़ दिया गया हो या उसके शव को जला दिया जाये या दरिया में डाल दिया जाये। यदि वह अज्ञाव और यातना का भागी है तो वह अवश्य यातना में ग्रस्त होगा। और यदि उसके कर्म अच्छे हैं और वह अल्लाह की कृपा और दयालुता का अधिकारी है, तो उसकी आत्मा को वे समस्त सुख और आनन्द प्राप्त होंगे जिनका अन्दाजा करना भी हमारे लिए

३ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा जब मुर्दे को कब्र में दाखिल किया जाता है तो उस के सामने सूर्य के अस्त होने के निकट के समय का दृश्य प्रस्तुत किया जाता है। वह अपनी आँखें मलता हुआ उठ बैठता है और कहता है कि मुझे छोड़ो, 'नमाज' अदा कर लेने दो^३। —इब्न माजाह

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जब 'मोमिन' ('ईमान' वाले व्यक्ति) की मृत्यु का समय आ जाता है तो 'रहमत' (दयालुता) के 'फिरिश्ते' सफेद रेशमी वस्त्र ले कर आते हैं और कहते हैं कि निकल आओ— इस अवस्था में कि तुम उस (अल्लाह) से राजी हो और वह तुम से राजी है— अल्लाह की 'रहमत' (दयालुता) और सुगन्धित फूल-पौधों की ओर और 'रब' (पालन कर्त्ता स्वामी) की ओर जो क्रुद्ध नहीं है, तो वह (आत्मा) निकलती है अत्यन्त उत्तम कस्तूरी की सुगन्ध की भाँति यहाँ तक कि हाथों-हाथ उसे एक-दूसरे से लेते हैं यहाँ तक कि आसमान के दरवाजों पर लेकर पहुँचते हैं। (आसमान वाले 'फिरिश्ते') कहते हैं : क्या ही अच्छी है यह सुगन्ध जो घरती की ओर से तुम्हारे पास आई है ! फिर उसे 'ईमान' वालों की आत्माओं के पास लाते हैं। तो वे उस से मिल

कठिन है। मरने के बाद तकलीफ और आराम का सम्बन्ध प्रत्यक्षता मनुष्य की आत्मा से होता है जबकि सासारिक जीवन में शरीर बीच में माध्यम का कार्य करता है। 'बरज़ख' की अवस्था का अन्दाज़ा स्वप्न देखने वाले व्यक्ति के आराम और तकलीफ के अनुभव से लगाया जा सकता है। यदि स्वप्न देखने वाले की नीद न टूटे, तो स्वप्न में उस पर जो कुछ गुज़रेगा वह उसके लिए वास्तविकता होगी, वह उसे स्वप्न नहीं समझ सकता। कुरआन और 'हदीस' में 'बरज़ख' के वृत्तान्तों को उन ही मिसालों और उपमाओं के द्वारा बुद्धिगम्य बनाने की कोशिश की गई है जिनसे हम सासारिक जीवन में परिचित हैं।

३ कब्र या 'बरज़ख' में उठने और बातचीत करने का सम्बन्ध शरीर से नहीं है बल्कि मनुष्य के आत्मिक अस्तित्व से है। इस 'हदीस' में एक 'मोमिन' व्यक्ति का उल्लेख किया गया है जिसे सासारिक जीवन में 'नमाज़' की चिन्ता लगी रहती थी। ऐसे व्यक्ति के पास जब 'फिरिश्ते' आयेगे तो उसे ऐसा लगेगा जैसे शाम हो रही है और उसने अभी 'अस्त्र' की 'नमाज़' अदा नहीं की है। उसको सबसे पहले 'नमाज़' की चिन्ता होगी और यह उसकी सफलता का प्रत्यक्ष प्रमाण होगा।

फिर उन ने कहीं अधिक प्रसन्न होते हैं जितनी प्रगल्भता कि तुम में से किनो को अनुपमिण व्यक्ति में मिल कर होनी है जो उस के पास आये। फिर वे उन में पूछते हैं कि शमुक व्यक्ति का क्या हाल है और शमुक व्यक्ति का क्या हाल है ? तो (उन में में कुछ लोग) कहते हैं इन्हे छोड़ो कि मनान के दुन में पड़े गये थे (इन्हे कुछ आराम करने दो) फिर जब जाना है कि शमुक व्यक्ति का तो देहान्त हो गया क्या वह तुम्हारे पास नहीं आया ? वे कहते हैं : उसे उस के ठिकाने 'हावियर' ('जहन्नम') की ओर ले गये।

और जब 'काफिर' के मरने का समय आता है तो यातना के 'किन्हे' टाट ले कर आते हैं फिर कहते हैं कि निकलो—उस अवस्था में कि तुम उन (शम्माह) में अप्रगल्भ और वह तुम में अप्रसन्न है—शम्माह की यातना की ओर, जो वह मुर्दार की अत्यन्त तीव्र दुर्गन्ध की तरह निकलती है यहाँ तक कि उसे घरनी के दरवाजे पर लाते हैं, तो वे कहते हैं कि कौसी दुर्गन्ध है यहाँ तक कि उसे 'काफिरो' की आत्माओं में पहुँचा देने है^४। —नसई

- ४ इस 'हदीस' में मालूम होता है कि 'बरजरा' एक अलग लोक है जिसकी व्यवस्था और नियम आदि का वर्तमान जीवन में सही अन्दाजा नहीं किया जा सकता। 'हदीसों' में उन लोक के बारे में जो बातें बताई गई हैं उनसे मालूम होता है कि 'बरजरा' एक विस्तृत लोक है। यहाँ पहुँचने वाली आत्माओं का उन आत्माओं से मिलन भी होता है जो उनसे पहले वहाँ पहुँची होती हैं। वे दुनिया का हाल भी पूछती हैं। इससे मालूम हुआ कि ससार से उनका कुछ न कुछ सम्बन्ध और लगाव शेष रहता है। इस 'हदीस' से इस बात का भी पता चलता है कि 'बरजरा' में नैक लोगो का निवास बुरे लोगो से अलग होता है। अच्छे लोगो को उच्च स्थान मिलता है। बुरो को अधमस्थल में डाल दिया जाता है।

‘क़ियामत’ के लक्षण

عَنْ أَنَسٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يُعِثُّ أَنَا وَالسَّاعَةُ
كَمَا تَبَيَّنَ ————— بخاری مسلم

१. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मुझे रसूल बना कर (ससार में) भेजा जाना और वह (‘क़ियामत’ की) घड़ी इन दो उँगलियों के समान है^१ ।

—बुखारी, मुस्लिम

२. हजरत अनस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . “‘क़ियामत’ कायम नहीं होगी जब तक कि ऐसा समय न आ जाये कि धरती में अल्लाह-अल्लाह न कहा जाये” । और एक ‘रिवायत’ के शब्द ये हैं : “‘क़ियामत’ कायम न होगी किसी ऐसे व्यक्ति पर जो अल्लाह-अल्लाह कहता हो” ।

—मुस्लिम

३. हजरत अब्दुल्लह बिन मसऊद रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : ‘क़ियामत’ केवल बुरे लोगों पर कायम होगी^३ ।

—मुस्लिम

४. हजरत अनस रज़ि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि ‘क़ियामत’ के चिन्ह ये हैं ज्ञान उठा लिया जायेगा^४,

१. नबी सल्ल० ने अपनी दोनों उँगलियाँ उठाकर यह बात कही थी । मतलब यह था कि जिस प्रकार ये दोनों उँगलियाँ क़रीब-क़रीब हैं, दोनों के बीच कोई तीसरी उँगली नहीं है ठीक इसी तरह मेरे बाद ‘क़ियामत’ ही आयेगी ।

२. अर्थात् जब तक धरती पर अल्लाह का नाम लेने वाले मौजूद होंगे, यह धरती और आकाश शेष रहेंगे, ‘क़ियामत’ नहीं आयेगी । परन्तु जब धरती पर अल्लाह का नाम लेने वाला कोई न होगा, तो फिर इस दुनिया का विलय हो जायेगा । यह कितनी विचित्र बात है कि ससार में साधारणतया उन ही लोगों पर जुल्म और अत्याचार किया जाता है जिनके अल्लाह का नाम लेने के कारण ही यह ज़मीन और आसमान कायम है ।

३. अर्थात् जिस समय ‘क़ियामत’ आयेगी उस समय ज़मीन पर वही लोग होंगे जो चरित्रहीन और अल्लाह को भूले हुये होंगे ।

४. ज्ञान से अभिप्रत ‘दीन, (धर्म)’ का ज्ञान है आशय यह है कि ‘दीन’ का ज्ञान

अज्ञान अधिक होगा, जिना (व्यभिचार) की अधिकता होगी, शराब बहुत पी जाने लगेगी। पुरुष कम स्त्रियाँ अधिक हो जायेगी यहाँ तक कि पचास स्त्रियों का सिरधरा एक (पुरुष) होगा।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजह, अहमद

५. हजरत अबूहुरैरा कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० बाते कर रहे थे कि एक ‘आराबी’ (ग्रामीण) आया और उस ने कहा ‘कियामत’ कब होगी? आपने कहा जब अमानत (न्यास) नष्ट हो जाये तो ‘कियामत’ की प्रतीक्षा करो। उस ने कहा वह कैसे नष्ट होगी? आप ने कहा . जब मामले अयोग्य व्यक्ति के हाथ में दे दिये जाये तो ‘कियामत’ की प्रतीक्षा करो^५।

—बुखारी

रखने वाले ढूँढने से नहीं मिलेंगे। लोग धर्म एवं ज्ञान के अनुसार आचरण करना छोड़ देंगे। अल्लाह के आदेश के बदले लोग अपनी तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं के दास हो जाएँगे। अज्ञान का राज्य होगा। ऐसा ज्ञान जिसे प्राप्त करने के पश्चात् मनुष्य अल्लाह से अपरिचित ही रहे वह ज्ञान नहीं अज्ञान है, भले ही उसका मनोविज्ञान, दर्शन, नैतिक शास्त्र आदि सुन्दर-से-सुन्दर नाम क्यों न रख लिया जाये। ऐसे ज्ञान और ऐसी विद्याओं की बहुतायत इस बात का लक्षण कदापि नहीं है कि ज्ञान मौजूद है। ज्ञान तो वही है जिस से अल्लाह कि पहचान हो सके, जिस से मनुष्य को अल्लाह की इच्छा अथवा अनीच्छा का ज्ञान हो सके। और जीवन के समस्त मामलों में वह अल्लाह का आज्ञाकारी बन सके।

५. अर्थात् जब हुकूमत, राज्यसत्ता, अधिकार और मामला ऐसे लोगों के हाथों में आ जाये जो अयोग्य और अल्लाह से विमुख हों तो समझ लो की ‘कियामत’ दूर नहीं है। कुछ ‘हदीसों’ से मालूम होता है कि ‘कियामत’ के निकट अज्ञान छा जायेगा। हर तरह के फितने और आपदाये सिर उठायेंगी। आदमी अपने दायित्व को भूल बैठेगा। एक ‘रिवायत’ के शब्द ये हैं “समय जल्द-जल्द आयेगा, कर्म कम हो जायेगा। कृपणता और लोभ छाया होगा। फितने (उपद्रव) बढ़ेंगे, कत्ल और लूट-पाट का बाजार गर्म होगा” —बुखारी, मुस्लिम। एक ‘रिवायत’ में है कि ‘कियामत’ उस समय तक कायम न होगी जब तक कि तुम अपने ‘इमाम’ (नायक, खलीफा) की हत्या न करोगे और परस्पर एक दूसरे पर तलवार न चलाओगे। और तुम्हारी दुनिया के वारिस (उत्तराधिकारी) तुम्हारे दुर्जन और दुराचरण लोग न हो जायेंगे”

—तिरमिजी

६. हजरत अबूहुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' नहीं आयेगी जब तक कि माल दौलत की रेल-पेल न हो जाये यहाँ तक कि आदमी अपने माल की 'जकात' निकालेगा तो उसे ऐसा कोई व्यक्ति न मिलेगा जो उसे कबूल कर ले। और 'कियामत' नहीं आयेगी जब तक कि अरब की भूमि (मरुस्थल) लहलहाते शस्यस्थलो और नहरों में न परिवर्ति हो जाये^६।

—मुस्लिम

७. हजरत आइशा रजि० कहती है कि अरब के अक्खड बद्नू नबी सल्ल० के पास आते और आप से पूछते कि 'कियामत' कब आयेगी? आप उन में सब से कम आयु वाले व्यक्ति की ओर देखते और कहते यदि यह जीवित रहा तो यह बूढा न हो पायेगा कि तुम पर तुम्हारी 'कियामत' आ जायेगी^७।

—बुखारी, मुस्लिम

८. हजरत अबूहुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब 'फै' ('गनीमत' का माल) धन ठहरा लिया जाये, और 'अमानत' (न्यास) को 'गनीमत' (लंडाई में मिला दुश्मन माल जिस का उपभोग वैध है) समझा जाये और 'जकात' को तावान समझा जाये और ज्ञान 'दीन' (धर्म) के अतिरिक्त दूसरी चीज के लिए प्राप्त किया जाये और पुरुष स्त्री का आज्ञाकारी हो जाये और अपनी माता का

६. मालूम हुआ कि 'कियामत' के निकट ससार धर्म और नैतिकता से रिक्त होगा, परन्तु सासारिक उन्नति चरम सीमा को पहुँच रही होगी। अरब में पिट्रोल और सोने आदि खनिज पदार्थ की खोज से धन की जो बहुतायत हो रही है और वहाँ के मरुस्थल की तह में जिस निहित बड़े जलाशय का पता चला है उसे सामने रखते हुए यह बात कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं मालूम होती कि निकट भविष्य में अरब की भूमि लहलहाते खेतों या शस्यस्थलों में बदल जाये। और वहाँ नहरें बहने लगे। वैज्ञानिक साधनों को अपना कर बजर और मरुभूमि को कृषि के योग्य बनाया जा सकता है। और नहरें निकाली जा सकती हैं।

७. अर्थात् तुम्हारी मृत्यु आ जायेगी जो किसी 'कियामत' से कम नहीं। ससार का अन्त कब होगा? इसके बारे में सोचने के बदले मनुष्य को यह देखना चाहिए कि उसे कितनी मुहलत हासिल है जिसमें वह 'आखिरत' की तैयारी कर सकता है। जीवन में वास्तविक महत्व रखने वाली चीज मनुष्य के विचार और कर्म हैं न कि कोई दूसरी चीज।

अवज्ञाकारी हो और उसे दुख दे, और अपने मित्र को पार्श्ववर्ती बनाये और अपने पिता को दूर कर दे और मस्जिदों में आवाजे ऊँची होने लगे और कज़ीले की सरदारी कज़ीले का एक पा पाचारी व्यक्ति करे, और जाति का नायक जाति का नीच और कमीना व्यक्ति हो और आदमी की प्रतिष्ठा उस की बुराई से बचने के लिए की जाये, और गाने वाली बाँदियाँ और बाजे फैल जाये, और शराबे पी जाने लगे और इस समुदाय के पिछले लोग इस के अगले लोगों को बुरा कहने लगे, तो उस समय प्रतीक्षा करो लाल आँवो, भूकम्प, भूमि के धँसने, रूप के विकृत होने, पत्थरों के बरसने की और उन निरन्तर निशानियों की मानो मोतियों की एक टूटा हुई लड़ी है जिस से मोती लगातार गिर रहे हों।

—तिरमिजी

६ हज़रत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ‘कियामत’ नहीं आयेगी जब तक तीस ‘दज्जाल’ मिथ्याचारी न पैदा हो ले, उन में से हर एक का दावा होगा कि वह अल्लाह का ‘रसूल’ है (हालाँकि वह झूठा और मक्कार होगा)६।

—अबूदाऊद, तिरमिजी

१०. हज़रत हुजैफह बिन उसैद गिफारी कहते हैं कि एक बार अल्लाह के रसूल सल्ल० हमारी मजलिस में आये और हम आपस में बात-चीत कर रहे थे। आप ने कहा तुम लोग किस चीज का जिक्र कर रहे हो? कहा हम ‘कियामत’ की चर्चा कर रहे थे। आप ने कहा : वह कदापि कायम न होगे जब तक उस से पहले दस निशानियाँ जाहिर न हो जाये। फिर आप ने उन का जिक्र किया धुआँ, दज्जाल, दाब्बा, (जानवर) पश्चिम से सूर्य का उदय होना, ईसा सुत मरयम का उतरना याजूज व माजूज, तीन बड़े ‘ख़स्फ’ (भूमि का धँसना) एक पूर्वदिशा में, दूसरा पश्चिम में तीसरा अरब प्रायद्वीप में। अन्त में एक बड़ी आग

८ मतलब यह है कि यह बात भी ‘कियामत’ की निशानियों में से है कि हर प्रकार की बुराइयाँ फैल जाये, खेल-तमाशा, निर्लज्जता और कमीनापन साधारण-सी बात हो। शान्ति और निश्चिन्तता दुर्लभ हो जाये आसमानी और भूमि की आपदाओं से सुरक्षित रहना कठिन हो जाये।

९ ‘नुबूवत’ के झूठे दावेदार तो न मालूम कितने होंगे। तीस के लगभग तो वे होंगे जो बड़े उपद्रवी और सरकश होंगे। चाले चलने और धोखा देने में जिन की टक्कर का मिलना मुश्किल होगा।

जो यमन से उठेगी और लोगों को हाँकती हुई उन के 'महशर' (प्रलय क्षेत्र) की ओर ले जायेगी^{१०} । —मुस्लिम

११ हजरत जाबिर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : “अन्तिम युग में एक खलीफा होगा जो माल को तक्रसीम करेगा

१० इस 'हदीस' में 'कियामत' की दस बड़ी निशानियों का उल्लेख हुआ है। घुआँ से अमिप्रेत सम्भवत वह घुआँ है जिसका उल्लेख कुरआन की सूरा अद-दुखान आयत १० में मिलता है। यह घुआँ अज्जाब के रूप में आसमान में जाहिर होगा। 'कियामत' से पहले एक 'दज्जाल' जाहिर होने वाला है यह बात विभिन्न 'हदीसों' से मालूम होती है। 'हदीसों' में उसके उपद्रव और खड्यन्त्रों आदि का उल्लेख भी किया है। 'रिवायत' से यह भी मालूम होता है कि वह कैसा होगा और उसकी क्या विशेषताएँ होगी। 'दाल्बा' का उल्लेख कुरआन में भी किया गया है। कहा गया है “जब हमारी बात उन पर पूरी (होने को) होगी (अर्थात् 'कियामत' करीब आ जायेगी जिसका वादा हमने कर रखा है) तो हम उनके लिए एक दाब्बा (जानवर) ज़मीन से निकालेंगे जो उन से बात करेगा कि लोग हमारी 'आयतो' पर विश्वास नहीं करते थे। —सूरा अन-नम्ल आयत ८२। सूर्य का पश्चिम से उदय होना भी 'कियामत' की बड़ी निशानियों में से है। हजरत ईसा मसीह का आना वास्तव में 'दज्जाल' के उपद्रव को शान्त करने के लिए होगा। 'यहूद' की 'रिवायतो' (Traditions) और उनके इतिहास से मालूम होता है कि हजरत सलैमान अ० के पश्चात् जब यहूदियों पर बुरे दिन आये यहाँ तक कि बाबिल और असीरिया के राज्यों ने उन्हें गुलाम बनाकर उनके जातीय सगठन को छिन्न-भिन्न कर दिया और वे तितर-बितर हो गये तो 'बनी इसराईल' के 'नबियों' ने उन्हें एक मसीह के आगमन की शुभसूचना दी जिसके द्वारा वे अपमान से मुक्ति पा सकेंगे। यहूदी यह आस लगाए बैठे थे कि आने वाला मसीह एक एक प्रभावशाली शक्ति के साथ उभरेगा, वह एक योद्धा सैनिक, विजेता और नेता होगा। वह उन्हें वह क्षेत्र वापस दिलाएगा जिसे वे अपनी मीरास समझते हैं। हजरत मसीह अ० आये तो वे कोई सेना लेकर नहीं आये। यहूद ने उन्हें मानने से इन्कार कर दिया और उनके दुश्मन हो गये। आज तक यहूद मसीह की प्रतीक्षा में है। मध्यपूर्व (Middle East) की वर्तमान अवस्था इस बात का पता दे रही है कि उस 'दज्जाल' के प्रकट होने का समय दूर नहीं जो यहूद का “मसीह मौऊद” (वह मसीह जिसका वादा किया गया हो) बन कर उठेगा और महान उपद्रव का आयोजन करेगा। इसराईल की योजना है कि वह न केवल यह कि सीरिया, लबनान, उरदुन और लग-

और एकत्र कर के (अपने पास) न रक्खेगा” । और एक ‘रिवायत’ में है कि आप ने कहा : “मेरे समुदाय के अन्त में एक ‘खलीफा’ होगा जो

भग पूरे इराक को अपने अधिकार क्षेत्र में सम्मिलित कर ले बल्कि उसकी स्कीम यह है कि वह टरकी से इस्कन्दोन, मिस्र से सीना और डेल्टा का अधिक्षेत्र और सऊदी अरब से ऊपरी हिजाज और नज्द का क्षेत्र जिसमें मदीना भी सम्मिलित है ले ले । इसराईल को जब भी अवसर प्राप्त होगा वह अपनी योजना को सफल बनाने की कोशिश करेगा । इस अवसर पर ‘दज्जाल’ उनका “मसीह” बन कर प्रकट होगा । ‘हदीसो’ से मालूम होता है कि वह समय मुसलमानों के लिए अत्यन्त कठिन होगा । फिर अल्लाह की कृपा होगी, वह यहूद के मसीह के मुकाबले के लिए वास्तविक मसीह अर्थात् हज़रत मरयम के बेटे हज़रत ईसा मसीह अ० को भेजेगा । हज़रत ईसा मसीह अ० ठीक उस समय पर दिमश्क में उतरेगे जबकि दज्जाल ७० हज़ार यहूदियों की सेना ले कर सीरिया में घुसेगा और दिमश्क के सामने पहुँच चुका होगा । हज़रत मसीह अ० मुसलमानों को लेकर उसके मुकाबले के लिए निकलगे । दज्जाल परास्त होकर इसराईल की ओर भागेगा । हज़रत मसीह अ० उसका पीछा करेंगे वह लुद (Lydda) के स्थान पर आपके हाथों मारा जायेगा । यहूदी इस तरह मारे जायेंगे कि उनके समुदाय का सत्तानाश हो जायेगा । हज़रत मसीह अ० के दोबारा आने के बाद ईसाई धर्म भी शेष न रहेगा । इस्लाम को प्रभुत्व प्राप्त होगा ।

याजून-माजून का फैल पडना भी ‘कियामत’ की निशानियों में से है । याजूम-माजूम (*Gog and Magog*) का उल्लेख कुरआन में भी हुआ है । इसके अतिरिक्त बाइबिल में भी उनका उल्लेख किया गया है । याजूज-माजूज से अभिप्रेत एशिया के उत्तरीय और दक्षिणीय क्षेत्र की असभ्य और जंगली जातियाँ हैं जो तातारों, मंगोल, होण, सेथीन (*Seythians*) आदि नामों से जानी-पहचानी जाती हैं । ये जातियाँ प्राचीन समय से आक्रमण करके लूटमार मचाती रही हैं । ये जातियाँ एशिया और यूरोप दोनों ओर लूटमार के आक्रमण करती रही हैं । बाइबिल में रूस, तूबल (*Tubal*) और मेसेक को याजूज-माजूज का अधिक्षेत्र बताया गया है । द० हेज़कीएल (*Ezekiel*) अध्याय ३८ और ३९ । तूबल और मेसेक को वर्तमान समय में तोवालक और मासको (*Tobalak and Mascow*) कहते हैं । यूसिफस (*Josephus*) ने जो एक इबरानी इतिहासकार है सेथीन (*Scythians*) जाति को याजूज-माजूज कहा है जिसका अधिक्षेत्र कृष्ण सागर (*Black sea*) के उत्तर और पूर्व में था । जेरोम (*Jerome*) के विचार

हाथों में भर-भर कर माल लुटाएगा और उस की गणना न करेगा^{११} ।

—मुस्लिम

१२. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' से फितने (उपद्रव) होंगे जैसे अँधेरी रात के टुकड़े । आदमी प्रातः समय 'मोमिन' होगा, और सायंकाल 'काफिर' हो जायेगा । कितने ही लोग अपने दीन (धर्म) को सासरिक सामग्री के बदले बेच देगे^{१२} ।

—तिरमिज़ी

१३. हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' कायम न होगी जब तक कि समय निकट न हो जायेगा^{१३} । वर्ष मास के समान हो जायेगा, मास सप्ताह के समान होगा, सप्ताह एक दिन की तरह हो जायेगा और दिन एक घड़ी की तरह

मे याजूज व माजूज की आबादी काकेशिया (*Caucasus*) के उत्तर, कैस्पियन सागर (*Caspian sea*) के निकट पड़ती थी । इब्न बतूता के विचार मे याजूज व माजूज से अभिप्रेत पूर्वी एशिया की असम्य जातियाँ हैं (*Ibn Batutah's Tranel's iv P 274*) ।

'खस्फ' से अभिप्रेत भूमि का घस जाना (*Land slide*) है । इसको अपनी भयकरता की दृष्टि से 'कियामत' से एक तरह का सम्पर्क भी है । फिर 'कियामत' की एक निशानी वह आग है जो सब को हाँक कर एकत्र कर देगी । फिर इसके पश्चात् 'कियामत' ही आयेगी ।

११ यह संकेत संभवतः उस 'खलीफा' की ओर है जिसको कुछ 'रिवायतों' मे "अल-महदी" की उपाधि दी गई है । 'महदी' का अर्थ है 'राह पाया हुआ' 'हदीस' से मालूम होता है कि वह आने वाला खलीफा 'खिलाफत' (राज्य) की स्थापना 'नुबूवत' की रीति के अनुसार करेगा जबकि घरती बिगाड, उपद्रव और अत्याचार से भर चुकी होगी और इस्लामी खिलाफत (इस्लामी राज्य व्यवस्था) छिन्न-भिन्न हो चुकी होगी । उसके समय मे घरती न्याय से भर जायेगी । और अल्लाह अपनी बरकतें उतारेगा ।

१२. मतलब यह है कि 'कियामत' के पहले का समय अत्यन्त फितने और बिगाड का समय होगा । 'दीन' व ईमान को सुरक्षित रखना अत्यन्त कठिन होगा ।

१३. अर्थात् समय (*Time*) तेज़ी से गुज़रने लगेगा । चाहे यह विश्व मे या मानव लोक मे किसी महान् परिवर्तन के कारण हो या यह इस बात की ओर संकेत हो कि उपद्रव और कठिनाइयों के कारण वक्त अपनी बरकतें खो देगा ।

होगा और घड़ी आग की एक लपट उठने के समान हो जायेगी^{१४} ।

—तिरमिजी

पुनर्जीवन

عَنْ أَبِي سَعِيدٍ الْخُدْرِيِّ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ كَبَفَ
أَنْعَمُ وَصَاحِبُ الصُّورِ قَدِ اتَّقَاهُ وَأَصْبَغَ سَمْعَهُ وَفِي جَبْهَتِهِ يَنْتَظِرُ مَنِي بَوْمَرٍ
بِالنَّفْخِ، فَقَالُوا يَا رَسُولَ اللَّهِ فَمَاذَا تَأْمُرُنَا؟ قَالَ قُولُوا أَحْسَبُنَا
اللَّهُ وَنِعْمَ الْوَكِيلُ ————— ترمذی

१ हजरत अबूसईद खुदरो रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैं कैसे सुख-चैन (निश्चिन्तता के साथ) रह सकता हूँ जब कि हाल यह है कि 'सूर' वाले ('फिरिश्ता' हजरत इसराफील अ०) 'सूर' मुख में लिए, अपना कान लगाये, और अपना मस्तक झुकाये प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कब 'सूर' में फूँक मारने का आदेश होता है^१ । लोगो ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! फिर आप हमें क्या आदेश देते हैं ? आप ने कहा कहते रहो "अल्लाह हमारे लिए काफी है और वह उत्तम कार्यसाधक है^२ "।

—तिरमिजी

१४ अर्थात् जिस प्रकार आग भडकने पर लपट उठे और तुरन्त ही बैठ जाये उसी तरह घड़ियाँ पलक भपकते ही बीत जायेंगी ।

१ मतलब यह है कि 'सूर' फूँकने वाला 'फिरिश्ता' 'सूर' में फूँक मारने के लिए बिल्कुल तैयार है, केवल आज्ञा पाने की देर है । हुक्म पाते ही वह सूर फूँक देगा और 'कियामत' आ जायेगी । धरती और आकाश की व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जायेगी । और फिर दोबारा 'सूर' में फूँकने से पुनः संसार वजूद में आयेगा और सारे लोग जीवित हो कर 'हश्र' के मैदान (प्रलयक्षेत्र) में इकट्ठा होंगे । और उन्हें उनके कर्म के अनुसार बदला दिया जायेगा । जब स्थिति ऐसी हो तो कोई व्यक्ति आराम-चैन और निश्चिन्तता के साथ कैसे दुनिया में जीवन व्यतीत कर सकता है । उसे तो हर समय 'आखिरत' की चिन्ता लगी रहेगी ।

२ मतलब यह है कि तुम अपने मामले को अल्लाह को सौंप दो और उस पर भरोसा करो, और उसी से सहायता चाहो । सफल जीवन उन्हीं का है जो उसकी सरपरस्ती और सरक्षकता में और उसकी दासता और आज्ञापालन में जीवनयापन करते हैं ।

२ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो कोई 'कियामत' का दिन आँखों से देखना चाहता है तो उसे इजश्शम्स कूविरत, 'इजम्समाउनफतरत', और इजस्समा उनशक्कत' पढनी चाहिए^३ । —अहमद, तिरमिजी

३ हजरत अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि वे अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुये और कहा मुझे बताया कि कौन 'कियामत' के दिन खड़ा रह सकेगा जिस के बारे में प्रतापवान् एव तेजोमय अल्लाह ने कहा है "जिस दिन लोग सारे ससार के 'रब' (पालनकर्ता स्वामी) के समक्ष खड़े होंगे" आप ने कहा वह 'मोमिन' के लिए हल्का होगा यहाँ तक कि वह उस के लिए 'फर्ज' नमाज के समान हो जायेगा^४ । —बैहकी

४ हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' में हर बन्दा उस अवस्था में उठाया जायेगा जिस अवस्था में वह मरा होगा^५ । —मुस्लिम

३ अर्थात् कुरआन की तीन सूरते अत-तकवीर अल-इनफितार और अल-इन शिकाक पढनी चाहिए । इन सूरतो में ऐसा नक्शा पेश किया गया है कि 'कियामत' का दृश विल्कुल निगाहों के सामने आ जाता है । और ऐसा लगता है मानो 'कियामत' अपनी समस्त भयकरता के साथ आ गई है ।

४ मालूम हुआ कि वह दिन 'काफ़िरो' और अल्लाह के अवज्ञाकारी लोगों के लिए अत्यन्त कठिन होगा । 'ईमान' वालों के लिए अल्लाह उसे फर्ज नमाज की तरह हल्का कर देगा । 'नमाज' और अल्लाह के सामने उस दिन की हाजिरी में जो अनुरूपता है वह स्पष्ट है ।

५ मालूम हुआ कि वास्तव में भरोसे की चीज मनुष्य का परिणाम है । यदि किसी का देहान्त 'ईमान' पर होता है, तो वह 'कियामत' के दिन एक 'मोमिन' की हैसियत से उठेगा और यदि वह 'कुफ़' पर मरता है, तो वह 'कियामत' में एक 'काफ़िर' ही के रूप में उठेगा । मनुष्य का परिणाम ही उसके जीवन का साराश है । मनुष्य अपना एक नैतिक अस्तित्व रखता है । उसका एक व्यक्तित्व होता है । व्यक्तित्व ही का निर्माण जीवन की समस्त दौड़-भाग की प्राप्ति होती है । मनुष्य क्या है इसकी पहचान इससे नहीं होती कि उस के पास कितनी दौलत है ? बल्कि इससे होती है कि वह स्वयं क्या है ? अल्लाह के यहाँ वास्तविक पश्न इसी बात का होगा कि लोगों को उनके अपने व्यक्तित्व के निर्माण का जो अवसर सासारिक जीवन में प्रदान किया गया था, उन्होंने

५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कियामत' के दिन सारे लोग तीन किस्मों में उठाए जायेंगे एक किस्म पैदल चलने वाले, एक किस्म सवार और एक किस्म मुँह के बल चलने वाले" । कहा गया हे अल्लाह के रसूल ! ये मुँह के बल कैसे चलेगे ? कहा जिस (अल्लाह) ने उन्हें पाँव पर चलाया है उसे इस का भी सामर्थ प्राप्त है कि उन्हें उन के मुँह के बल चलाये । मालूम होना चाहिए कि ये लोग अपने मुँह के द्वारा ही हर टीले और काँटे से बचेगे^६ । —तिरमिजी

६ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि हल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति भी मरेगा उसे अवश्य लज्जा और ग्लानि होगी । लोगों ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! उसे ग्लानि क्यों होगी ? आप ने कहा यदि वह (मरने वाला) सत्कर्मों है तो उसे ग्लानि होगी कि उस ने और अधिक (अच्छे कर्म) क्यों न किये और यदि दुराचारी है तो उसे ग्लानि होगी कि वह (बुराई से) बाज क्यों न रहा^७ । —तिरमिजी

उससे कहाँ तक फायदा उठाया । वे दुनिया से क्या बन कर लौटे हैं । मनुष्य के बनने-बिगडने की सम्भावनाएँ जीवन के अन्तिम क्षण तक रहती हैं इसलिए वास्तव में एतबार अन्त ही का है ।

एक 'रिवायत' में है कि आपने कहा कि जब अल्लाह किसी जाति पर अजाब उतारता है, तो उस अजाब और यातना की लपेट में हर वह व्यक्ति आ जाता है जो उस जाति में होता है फिर ('आखिरत' में) लोगो को उनके कर्म के अनुसार उठाया जायेगा । —बुखारी, मुस्लिम

६ जिन तीन गरोहो का उल्लेख इस 'हदीस' में किया गया है उनमें पैदल चलने वाला गरोह तो साधारण मुस्लिमों का होगा । जो लोग सवारियों पर होंगे वे अल्लाह के विशेष बन्दे होंगे । और सिर के बल चलने वाले वे बदनसीब लोग होंगे जिन्होंने सासारिक जीवन में 'नवियों की शिक्षा के अनुसार सीधा चलने के बदले मरते दम तक उल्टे ही चलते रहे । 'कियामत' के दिन वे अपनी उलटी चाल का परिणाम देख लेंगे । वहाँ उन्हें मुँह के बल चलना होगा । वे अत्यन्त अपमानित होंगे जो कष्ट और द्रव्य उनको भोगने होंगे वह अलग है ।

७ इसलिए बुद्धिमानी की बात यह होगी कि आदमी दुनिया में अधिक-से-अधिक अच्छे काम कर ले और जहाँ तक हो सके बुराइयों से अपने-आप को दूर

७ हजरत अदी बिन हातिम रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से प्रत्येक से अल्लाह इस तरह बात-चीत करेगा कि बीच में कोई अनुवादक न होगा और न कोई परदा होगा जो उसे छिपा सके। यह अपनी दाहिनी ओर देखेगा तो सिवाय उस कर्म के जो उस ने भेजा था उसे कुछ दिखाई न देगा फिर अपनी बाईं ओर देखेगा तो सिवाय उस के जो उस ने भेजा था उसे कुछ दिखाई न देगा और अपने सामने देखेगा तो सिवाय ('जहन्नम' की) आग के और कुछ दीख न पड़ेगा^८। तो उस आग से बचो, खजूर के एक टुकड़े के द्वारा ही सही^९ ! —बुखारी, मुस्लिम

८ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह किसी 'मोमिन' पर उसकी नेकी के सिलसिले में अन्याय नहीं करता उसका बदला दुनिया में भी दिया जाता है और 'आखिरत' में भी दिया जाता है। रहा 'काफिर' तो जो नेकियाँ उसने अल्लाह के लिए की थी उनका पूरा बदला दुनिया में ही दे दिया जाता है यहाँ तक कि जब वह 'आखिरत' में पहुँचता है तो उसकी कोई ऐसी नेकी बाकी नहीं रहती जिसका बदला उसे दिया जाये^{१०}। —मुस्लिम

रक्खे।

- ८ अर्थात् आदमी का मामला उस दिन प्रत्यक्षत अपने अल्लाह से होगा। 'ईमान' 'इस्लाम' और अच्छे कर्म के सिवा उस दिन कोई चीज न होगी जो आदमी को उस आग से छुटकारा दिला सके जिमकी लपटे निगाहों के सामने उठ रही होगी।
- ९ मनुष्य को 'जहन्नम' की आग से बचने के लिए हर वह प्रयत्न करना चाहिए १) वह कर सकता है, यहाँ तक कि यदि वह खजूर का एक टुकड़ा ही 'सदका' कर सकता है, तो इससे बाज न रहे।
- १० 'मोमिन' और 'मुस्लिम' व्यक्ति पर दुनिया और 'आखिरत' दोनों में अल्लाह की कृपा होती है। उसे अपने सत्कर्म से इस लोक में भी लाभ होता है और 'आखिरत' में तो वह 'जन्नत' का वारिस होगा। रहा 'काफिर' तो उसके पास नेकियाँ होती ही कहाँ हैं। नेकी तो वास्तव में उसी काम को कहा जायेगा जो अल्लाह के लिए किया गया हो। यदि 'काफिर' व्यक्ति ने कोई काम अल्लाह के लिए किया भी है तो वह सांसारिक जीवन में अल्लाह की प्रदान की हुई चीजों से फायदा भी उठा चुका है। 'आखिरत' में उसके लिए यातना के अतिरिक्त कुछ न होगा। अल्लाह किसी पर जुल्म नहीं करता। वह

६. हजरत आइशा रजि० कहती है कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को अपनी कुछ 'नमाजों' में यह दुआ करते सुना "हे अल्लाह ! मेरा हिसाब आसान कर ।" मैंने कहा " हे अल्लाह के नबी ! आसान हिसाब का क्या अर्थ है ? आपने कहा यह कि बन्दे के कर्म-पत्र पर निगाह डाली जाये और उसे छोड़ दिया जाये । बात यह है कि जिसके हिसाब में उस दिन जिरह की गई, हे आइशा ! (उसका कुशल नहीं) वह विनष्ट हुआ^{११} । —अहमद

१०. हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('कियामत' के दिन) अल्लाह 'मोमिन' को करीब करेगा और फिर उस पर अपना विशेष आवरण डालेगा और उसे छिपा लेगा फिर कहेगा क्या तुम इस गुनाह को जानते हो ? तुम इस गुनाह को जानते हो वह कहेगा हाँ हे मेरे रब ! यहाँ तक कि वह उस से उसके सारे गुनाह का इकरार करा लेगा । और वह अपने मन में सोचेगा कि मैं विनष्ट हुआ । अल्लाह कहेगा मैंने दुनिया मे तेरे इन गुनाहों को छिपाया था और आज मैं इन्हे क्षमा कर देता हूँ फिर उसे उसकी नेकियों का कर्म-पत्र दिया जायेगा ।

रहे 'काफिर' और 'मुनाफिक' (पापाचारी) लोग तो उन्हें जन साधारण के सामने पुकारा जायेगा कि ये हैं वे लोग जिन्होंने झूठ घडकर उसे अपने 'रब' से सम्बद्ध किया था । सावधान ! अल्लाह की लानत (फिटकार) है ऐसे जालिमों पर^{१२} —बुखारी, मुस्लिम

प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्म के अनुसार बदला देता है ।

११ मतलब यह है कि इस नाजुक मौके पर वही लोग सफल होंगे जिनसे कोई जिरह और हुज्जत न हुई । केवल उनके कर्म अल्लाह के सामने पेश कर दिये गये । यही "आसान हिसाब" है, जिसका उल्लेख कुरआन में भी हुआ है । दे० सूरा अल-इनशिकाक आयत ८-८ । परन्तु जिस किता से पूछ-ताछ हुई वह अल्लाह की पकड़ से बच नहीं सकता ।

१२ अर्थात् ऐसा 'मोमिन' जो अपने कर्म और चरित्र की दृष्टि से अल्लाह की दयालुता और कृपा का अधिकारी होगा अल्लाह उस दिन उसके गुनाहों को लोगों की निगाहों में छिपायेगा । अल्लाह की दयालुता उसे रसवा और अपमानित होने में बचा लेगी जिस तरह उसने दुनिया से उसे रसवाई में बचाया था । उसे नेकियों का कर्म-पत्र दिया जायेगा जिसे वे दूसरों को बेझिझक दिखा सकें, परन्तु 'काफिरों' और 'मुनाफिकों' के लिए तो वह दिन रसवाई और दुर्गति

११. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि उन्हें एक बार ('जहन्नम' की) आग का खयाल आया और वे रो पड़ी। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : "तुम्हे किस चीज ने रुलाया ?" कहती है कि मैंने कहा : मुझे ('जहन्नम' की) आग याद आई और उसी ने मुझे रुलाया, तो क्या आप लोग 'कियामत' के दिन अपने घर वालों को याद रख सकेंगे ? अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तीन स्थान ऐसे हैं जहाँ कोई किसी को याद न करेगा। 'मीजान' (तुला) पर, जब तक यह न मालूम हो जाये कि उसका पल्ला भारी है या हल्का। और कर्म-पत्र मिलने के समय—जब कि दाहिने हाथ में कर्म-पत्र पाने वाला कह उठेगा कि आओ मेरा कर्म-पत्र पढो—जब तक कि यह न मालूम हो जाये कि उसका कर्म-पत्र उसके दाहिने हाथ में पडता है या उसकी पीठ के पीछे से उसके बाये हाथ में आता है और 'सिरात' पर जबकि वह 'जहन्नम' के ऊपर रक्खा जायेगा (और लोगों को उस पर से गुजरने का हुक्म दिया जायेगा) ^{१३}

—अबूदाऊद

लेकर आयेगा। वे सबके सामने अपमानित होंगे। उनकी बुराइयाँ और गुनाह उस दिन सबके सामने होंगे।

१२ ये तीन अवसर बहुत ही कठिन होंगे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी-अपनी पड़ी होगी, इसलिए हर व्यक्ति को उस दिन की चिन्ता करनी चाहिए। किसी पर भरोसा करके नहीं बैठ रहना चाहिए। 'मीजान' (तुला) से अभिप्रेत कर्म-तुला है। उस दिन सफल वही व्यक्ति होगा जिसका पलड़ा भारी रहा। वह व्यक्ति उस दिन तबाह हुआ जिसका पलड़ा उस दिन हल्का रहा (दे० सूर अल-अविया आयत ४७, अल-आराफ आयत ८)। लोगों के कर्म-पत्र जिन में उनके जीवन के बुरे-भले कर्म अंकित होंगे उस दिन तकसीम किए जायेंगे। जिसके दाहिने हाथ में उसका कर्म-पत्र दिया गया, तो यह उसकी सफलता का प्रमाण होगा। इसके विपरीत जिसका कर्म-पत्र उसके बाये हाथ में पीठ की ओर से दिया गया वह असफल रहा (दे० सूर अन-शिकाक आयत ७-१२)। 'सिरात' की वास्तविकता को पूर्ण रूप से समझना वर्तमान लोक में मुश्किल है। 'कियामत' के दिन प्रत्येक व्यक्ति को इस 'सिरात' (मार्ग) से गुजरना होगा। अल्लाह के आज्ञाकारी बन्दे देखटके उस पर से गुजर जायेंगे परन्तु जो अल्लाह के अवज्ञाकारी और सरकश होंगे वे उसे पार न कर सकेंगे, वे 'जहन्नम' की आग में जा गिरेंगे। अल्लाह के दिखाये हुये मार्ग पर चलकर जिसने जीवन व्यतीत किया होगा वह इस "सिरात" से आसानी से गुजर जायेगा। परन्तु जो व्यक्ति अपने जीवन में उस 'सिरात मुस्तकीम' (सरल मार्ग) से

१२ हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि ('कियामत' के दिन) हमारा 'रब' अपनी पिडली खोलेगा,^{१४} उस समय प्रत्येक 'मोमिन' पुरुष और स्त्री उसे 'सजदा' करेंगे और वह व्यक्ति 'सजदा' न कर सकेगा जिसने केवल दिखाने और सुनाने के लिए 'सजदा' किया होगा। वह 'सजदा' करना चाहेगा परन्तु उसकी पीठ तख्ते की तरह हो जायेगी (और वह 'सजदा' न कर सकेगा)^{१५}। —बुखारी, मुस्लिम

१३ हजरत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोग ('जहन्नम' की) आग पर हाज़िर होंगे ('सिरात' से गुजरते हुए) फिर अपने कर्म के अनुसार उस से छुटकारा पायेंगे। उनमें जो सबसे अच्छे होंगे वे विजली चमकने के सदृश उस से गुजर जायेंगे। फिर वायु के सदृश, फिर घोड़े के सदृश, फिर ऊँट के सदृश फिर दौड़ते हुए व्यक्ति के सदृश फिर पैदल साधारण चाल से चलने वाले की तरह^{१६}। —तिरमिज़ी, दारमी

मुँह मोड़ता रहा जिसकी ओर अल्लाह ने अपने 'रसूलो' के द्वारा बुलावा दिया था वह 'जहन्नम' में गिरेगा। अल्लाह की दिखाई हुई राह के अतिरिक्त जो-कुछ है विनाशता है। सीधे मार्ग से मुख मोड़ने का परिणाम उस दिन सामने आ जायेगा।

१४ इसका आशय क्या है? इसके बारे में विभिन्न बातें कही जाती हैं। इसका एक अर्थ यह भी हो सकता है कि यह कठिनाई और सख्ती का स्पष्टीकरण है अर्थात् यह उस समय का जिक्र है जब अल्लाह की ओर से सख्त और कठिन घड़ी आ जायेगी और लोगो में हलचल पड़ जायेगी।

१५ अर्थात् उस दिन 'मुनाफिक' और अपराधी लोग 'सजदा' न कर सकेंगे। वे सजदा करना चाहेंगे तो उनकी पीठ तख्ते की तरह सख्त हो जायेगी वे सजदे के लिए झुक न सकेंगे। कुरआन मजीद में भी कहा गया है "जिस दिन पिडली खोली जायेगी (यह मुहावरा है अर्थात् जिस दिन हलचल पड़ेगी) और ये सजदे के लिए बुलाये जायेंगे तो 'सजदा' न कर सकेंगे। इनकी निगाहे झुकी होगी और इन पर जिल्लत छा रही होगी। और उस समय भी सजदे के लिए बुलाये जा रहे हों जबकि ये भले-चगे हैं।"—सूरा अल-कलम आयत ४२-४३।

१६ अर्थात् जिस व्यक्ति ने जितना अधिक 'दीन' का पालन किया होगा और जितना अधिक 'इस्लाम' के सीधे मार्ग पर चला होगा वह उसी के अनुसार तेज़ी से गुजर जायेगा और आग से छुटकारा पा लेगा। सासारिक जीवन में जिसकी

१४. हजरत सल्ल विन सअद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . मैं हीज पर तुम्हारा 'मीर मजिल' हूँगा । जो मेरे पास से गुजरेगा (उस से) पियेगा और जो पियेगा कभी प्यासा न होगा । मेरे पास बहुत से लोग आयेगे जिन्हे मैं पहचानता हूँगा और वे मुझे पहचानेंगे फिर मेरे और उनके बीच कोई चीज रोक बना दी जायेगी । मैं कहूँगा : ये तो मेरे हैं, तो कहा जायेगा . आपको मालूम नहीं कि इन्होंने आपके पीछे क्या-क्या नई बातें पैदा की । (यह सुनकर) मैं कहूँगा . दूर हो दूर जिन्होंने मेरे पीछे ('दीन' में) परिवर्तन किया है ।^{१४}

१५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कोई व्यक्ति उस समय तक 'जन्नत' में दाखिल न किया जायेगा जब तक कि उसे वह ठिकाना न दिखा दिया जाये जो उस के लिए 'जहन्नम' में निश्चित था यदि वह बुरे कर्म करता, ताकि उस का कृतज्ञता-भाव बढ़ जाये और (इसी प्रकार) कोई व्यक्ति 'जहन्नम' में दाखिल नहीं किया जायेगा जब तक कि उसे वह ठिकाना न दिखा दिया जाये जो उस के लिए 'जन्नत' में था यदि वह अच्छे कर्म करता, ताकि उस का पश्चात्ताप बढ़ जाये ।^{१५}

—बुखारी

गति धीमी रही होगी उसका धीमापन उसदिन स्पष्ट हो जायेगा ।

१७ नबी सल्ल० की हैसियत उस दिन 'मीर मजिल' की होगी जो काफिले से पहले पहुँच कर आने वालों के लिए आराम और सुविधा की व्यवस्था करता है । आप हीज पर जिसका नाम 'हीज कौसर' होगा अपने अनुयायियों की प्रतीक्षा करेंगे । आपके अनुयायी और उस "कौसर" से जाभ उठाने वाले जो दुनिया में आपको प्रदान किया गया था, हीज से पीकर शीतलता प्राप्त करेंगे फिर उन्हें प्यास न सतायेगी । किन्तु जो व्यक्ति दुनिया में आपके मार्ग-दर्शन शीतल स्रोत से सिंचित न हुआ बल्कि उन्हें गर्माही करने में लगा रहा और आपके निर्मल 'दीन' (धर्म) में मन-घटत नई बातें सम्मिलित करके उसकी सुन्दरता को विकृत करना चाहा, वह 'हीज' के निर्मल एवं शीतल जल में वंचित रहेगा । आप उसको अपने पास से दूर कर देंगे ।

१८ अर्थात् 'जन्नत' (में प्रवेश करने) वालों को केवल 'जन्नत' पाने की प्रसन्नता न होगी बल्कि उनको इस बात की भी प्रसन्नता होगी कि अल्लाह ने उन्हें 'जहन्नम' के अजब में बचा लिया । इसी तरह 'जहन्नम' (में जाने) वालों को केवल 'जहन्नम' (नरक) में जलते रहने ही की यातना न भुगतनी पड़ेगी बल्कि 'जन्नत' न मिलने का दुख और सन्ताप भी उनके हिस्से में आयेगा । वे पश्चात्ताप

१६ हजरत अबू बरदह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मनुष्य 'कियामत' के दिन हटने नहीं पायेगा जब तक कि चार बातें (उस से) न पूछ ली जायें उस की आयु के बारे में कि उसे किस काम में समाप्त किया, उस के कर्म के बारे में कि उस ने क्या कर्म किये, और उस के माल के बारे में कि कहाँ से उसे कमाया और कहाँ उसे खर्च किया और उस के शरीर के बारे में कि किस काम में उसे गलाया ।^{१६} —तिरमिजी

१७ हजरत इब्न मसऊद रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आप ने कहा 'आदम के बेटे (मनुष्य) के कदम (कियामत के दिन अपनी स्थान से) हट न सकेंगे जब तक कि उस से पाँच बातों के बारे में प्रश्न न कर लिया जायें उस की आयु के बारे में कि उसे उस ने किन कामों में समाप्त किया, उस की युवावस्था के बारे में कि उसे उस ने कहाँ लगाया, और उस के माल के बारे में उसे कहाँ से कमाया और कहाँ खर्च किया और जो ज्ञान उसे प्राप्त था उस के अनुसार कहाँ तक उस ने आचरण किया । —तिरमिजी

१८. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : 'कियामत' के दिन मेरी सिफारिश से वही व्यक्ति लाभ उठा सकता है जिस ने अपने मन और प्राण की पूर्ण शुद्धता एवं एकाग्रता के साथ "ला इलाह इल्लल्लाह" (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य एवं प्रभु नहीं है) कहा हो ।^{१७} —बुखारी

ही करते रहेंगे परन्तु अब इसका कोई अवसर उन्हें न मिल सकेगा कि वे अपने अपराध और गुनाह के घबड़े धोकर अपने को 'जन्नत' में जाने योग्य बना सकें । 'जहन्नम' में उन्हें आत्मिक और शारिरिक हर प्रकार का दुख भुगतना होगा ।

१९ अर्थात् जब तक मनुष्य ये और इस प्रकार की बातों का उत्तर न दे लेगा वह हटने नहीं पायेगा । जिन बातों के बारे में उस से प्रश्न होगा उनके अन्तर्गत मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन आ जाता है । जब तक मनुष्य अपने सम्पूर्ण जीवन के नकशे को ठीक न कर ले और हर मामले में अल्लाह के सामने अपने को उत्तरदायी समझकर काम न करे वह 'आखिरत' की पकड़ से बच नहीं सकता ।

२० अर्थात् नबी सल्ल० की सिफारिश उम्मी को हासिल हो सकेगी और उम्मी व्यक्ति के लिए आप सिफारिश कर सकेंगे जो 'कुफ' व 'शिक' की गन्दगी से پاک होगा और अपने हृदय की शुद्धता के कारण इस बात का हक रखता

१६. हजरत उसमान बिन अफफान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'क्रियामत' के दिन तीन प्रकार के लोग (विशेष रूप से) सिफारिश करेंगे 'नबी' फिर ज्ञानी जन फिर 'शहीद' ।^{११}

—इब्न माजह

२०. हजरत अबू सईद रजि० का वयान है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय में कुछ लोग होंगे जो एक जमात की सिफारिश करेंगे, कुछ एक कबीले की सिफारिश करेंगे, कुछ एक घराने की सिफारिश करेंगे और कुछ केवल एक व्यक्ति की यहाँ तक कि लोग 'जन्नत' में दाखिल हो जायेंगे ।^{१२}

—तिरमिज़ी

होगा कि उसकी खताएँ और गलतियाँ क्षमा कर दी जायें ।

२१ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'सिफारिश' करने का सम्मान 'नबियों' के अतिरिक्त दूसरे विशेष लोगों को भी प्राप्त होगा । धर्म का ज्ञान रखने वाले लोग, अल्लाह की राह में प्राण निछावर करने वाले वीरगति को प्राप्त शहीद आदि दूसरे अच्छे और नेक लोगों को अपने दर्जों के अनुसार यह सम्मान प्राप्त होगा । 'हदीस' से मालूम होता है कि छोटे-नन्हे बालक, बालिकाएँ भी अपने माँ-बाप के हक में सिफारिश करेंगे ।

यहाँ यह बात समझ लेने की है कि 'सिफारिश' या सिफारिश अपने तौर पर कोई चीज़ नहीं । अल्लाह की अनुमति के बिना कोई व्यक्ति किसी के हक में सिफारिश न कर सकेगा, न अल्लाह के आगे ज़वान खोल सकेगा (दे० सूर अल-बकरा आयत २५५) । फिर सिफारिश की इजाज़त उन ही लोगों को मिल सकेगी जो वास्तव में इसका हक रखते होंगे और जिनको अल्लाह क्षमा करना चाहेगा । सिफारिश का अवसर प्रदान करके वास्तव में अल्लाह अपने विशेष प्रिय बन्दों के सम्मान का प्रदर्शन करेगा ।

२२ अर्थात् लोगों को अपने दर्जों और पद के अनुसार सिफारिश का हक हासिल होगा । कोई इतने ऊँचे दर्जों का व्यक्ति होगा कि उसे एक बड़ी जमात की सिफारिश का अधिकार होगा । कोई एक कबीले की सिफारिश का हक रखता होगा और कोई एक कुटुम्ब ही के हक में सिफारिश कर सकेगा । कुछ लोग ऐसे होंगे कि वे केवल एक व्यक्ति की सिफारिश कर सकेंगे ।

‘जन्नत’ और ‘जहन्नम’

وَعَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ اللَّهُ تَعَالَى
أَعَدَدْتُ لِعِبَادِيَ الصَّالِحِينَ مَا لَا عَيْنٌ رَأَتْ وَلَا أُذُنٌ سَمِعَتْ وَلَا خَطَرَ عَلَى قَلْبِ
بَشَرٍ وَاَقْرَبُ وَأَشَدُّ فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَّا أُخْفِيَ لَهُم مِّنْ قُرَّةِ أَعْيُنٍ — بخاری، مسلم

१. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : सर्वोच्च अल्लाह ने कहा मैं ने अपने नेक बन्दो के लिए वह-कुछ तैयार किया है जिसे न किसी आँख ने देखा, न किसी कान ने सुना और न किसी आदमो के दिल में उस का खयाल गुजारा । यदि तुम चाहो तो (यह ‘आयत’) पढ़ लो “फिर जो कुछ आँखों की ठण्डक (की सामग्री) उन के कर्मों के बदले में उन के लिए छुपा रखी गई है उस की किसी जीव को खबर नहीं ।” —बुखारी, मुस्लिम

२ हजरत अबूहुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मैंने ‘जहन्नम’ जैसी कोई चीज नहीं देखी जिस से भागने वाला सोता हो’ और न ‘जन्नत’ जैसी कोई चीज देखो जिस का चाहने वाला सोता हो ।” —तिरमिज़ी

१. अर्थात् अल्लाह ने ‘जन्नत’ में अपने आज्ञाकारी प्रिय सेवकों के लिए जो चीजें और उनके सुख-चैन की जो सामग्री संचित कर रखी है वर्तमान जीवन में हम उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते । इसलिए कामना करने की चीज ‘जन्नत’ ही है, न यह कि मनुष्य दुनिया के पीछे अपने शाश्वत निवास-स्थान को भूल जाये । ‘जन्नत’ में वही लोग प्रवेश कर सकेंगे जो अल्लाह के उपासक और उसके आज्ञाकारी होंगे । जो उसकी राह में कोशिश करने वाले और उसकी ‘इबादत’ के दिव्य आनन्द से परिचित होंगे । अल्लाह की वन्दगी जिनके लिए इस लोक में आँखों की ठण्डक न बन सकी जो सरकशी और अवज्ञा ही में जीवन व्यतीत करते रहे वे ‘आखिरत’ में उस आनन्द में दूर रखे जायेंगे जो अपने विशेष बन्दों के लिए अल्लाह ने तैयार कर रखा होगा ।

२. ‘जहन्नम’ की आग से बढ़कर भयानक और विनाशकारी चीज क्या हो सकती है जिस से मनुष्य भागे परन्तु मनुष्य की दशा आश्चर्यजनक है वह उस से साधारणतया असावधान ही रहता है, उस से बचने की चेष्टा नहीं करता । इसी

३. हजरत अबू सईद रजि० और हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : एक पुकारने वाला ('जन्नत' वालों को सम्बोधित कर के) पुकारेगा कि (यहाँ) तुम स्वस्थ रहोगे, कभी बीमार न होगे, जीवित रहोगे तुम्हारी कभी मृत्यु न होगी। युवा रहोगे कभी तुम बूढ़े न होगे। और चैन से रहोगे कभी भी कठिनाई और दुख न देखोगे।^३

—तिरमिजी

४. हजरत अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : कसम है उस (अल्लाह) की जिस के हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं कि उन में से (जिन्हें 'जन्नत' में जाने की अनुमति मिल जायेगी) प्रत्येक अपने 'जन्नत' के घर को अपने दुनिया के घर से अधिक पहचानता होगा।^४

—बुखारी

५. हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' तुम्हारी जूती के तसना से भी अधिक निकट है और इसी तरह ('जहन्नम' की) आग भी।^५

—बुखारी

तरह 'जन्नत' से बढकर प्रिय चीज कोई दूसरी नहीं हो सकती जिसे प्राप्त करने में मनुष्य अपनी शक्ति और योग्यता को लगाये और उस से तनिक भी गाफिल न हो।

३. अर्थात् 'जन्नत' वालों को किसी भी प्रकार का भय और आशंका न होगी 'जन्नत' में न कभी वे बीमार होंगे, न वहाँ उन्हें मृत्यु का सामना करना पड़ेगा। और न उनकी शक्ति, बल और यौवन को किसी प्रकार की क्षति पहुँचेगी। सुख और आनन्द ही उनका जीवन होगा। किसी कठिनाई और दुख को वे न देखेंगे।

४. इस से मालूम हुआ कि 'जन्नत' का घर उसका वास्तविक निवास-स्थान होगा। उसका निवास-स्थान उसकी अपनी रुचि, भावना और कामना के अनुरूप होगा। दूसरे शब्दों में वह उसकी अभिलाषाओं का प्रत्यक्ष रूप होगा। वह निवास-स्थान ऐसा होगा जिसको यद्यपि उसने पहले देखा नहीं था, परन्तु उस की आत्मा उस से पूर्णतः परिचित थी। इस प्रकार 'जन्नत' के रूप में उसे अपना अतीत भी मिल जायेगा। अपना अतीत प्रत्येक को प्रिय होता है।

५. अर्थात् मनुष्य से न तो उसकी 'जन्नत' दूर है और न 'जहन्नम' दूर है। यदि उसके कर्म अच्छे हैं तो मानो 'जन्नत' उसके निकट आ गई है। उनके और 'जन्नत' के बीच एक ऊपरी आवरण के अतिरिक्त और कोई चीज बाधक नहीं

६ हजारत उबादा बिन सामित रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ‘जन्नत’ में सौ दर्जे हैं। हर दो दर्जे के बीच इतना फासला है जितना कि आकाश और धरती के बीच है। ‘फिरदौस’ उन में दर्जे की दृष्टि से सब से उच्च है और उस से ‘जन्नत’ के चार दरिया निकलते हैं। और उस के ऊपर ‘रहमान’ (कृपाशील ईश्वर,) का ‘अर्श’ (सिंहासन) है, तो जब तुम अल्लाह से माँगे, तो उस ‘फिरदौस’ को माँगो ।^६ —तिरमिजी

है। इस लोक से प्रस्थान करने के पश्चात् उसका निवास जन्नत की रमणीय उद्यानो में ही होगा। और यदि उसके कर्म बुरे हैं, तो वह ‘जन्नत’ के नहीं बल्कि ‘जहन्नम’ के निकट है। उसके और ‘जहन्नम’ के मध्य कोई अधिक दूरी नहीं है। यदि वह सँभलता नहीं तो कोई चीज उसे ‘जहन्नम’ में गिरने से नहीं बचा सकती। बल्कि ‘जन्नत’ और ‘जहन्नम’ की वास्तविकता तो हमारे अच्छे या बुरे कर्म ही है। मानो यही हमारे कर्म ही ‘जन्नत’ के सुख और ‘जहन्नम’ की यातनाओं और कष्टों का रूप धारण कर लेंगे। यही कारण है कि कर्म और उनके प्रतिकार अथवा दण्ड में अत्यन्त अनुरूपता पाई जाती है। स्वयं नबी सल्ल० ने भी कहा है “सावधान ! समस्त नेकियाँ और भलाइयाँ अपने ओर-छोर और पहलुओं सहित ‘जन्नत’ में हैं। सावधान ! समस्त बुराइयाँ अपने ओर-छोर और पहलुओं सहित ‘जहन्नम’ में हैं। अतः कर्म करो और अल्लाह से डरते रहो और जान लो कि तुम्हें अपने कर्मों के साथ पेश होना है, तो जो कण भर भी कोई भलाई करेगा वह उसे देख लेगा और जो कण-भर भी कोई बुराई करेगा यह उसे देख लेगा।” —अश-शाफई यह टुकड़ा कि जो कण भर भी कोई भलाई करेगा वह उसे देख लेगा और जो कण-भर भी कोई बुराई करेगा वह उसे देख लेगा, कुरआन की सूरा अल-जिलजाल से उद्धृत है। यही बात कुरआन में एक दूसरे स्थान पर इन शब्दों में बयान हुई है “उस दिन तुम लोग पेश किये जाओगे, तुम्हारी कोई चीज छिपी नहीं रहेगी।” —सूरा-अल-हाक्का आयत १८।

६ इस ‘हदीस’ में यह शिक्षा दी गई है कि ‘मोमिन’ को उच्च काटि की ‘जन्नत’ का अभिलाषी होना चाहिए। उच्च कोटि की ‘जन्नत’ के अधिकारी वही लोग होंगे जो ‘ईमान’ स्वभाव और कर्म की दृष्टि में सब से उच्च होंगे। इसलिए ‘फिरदौस’ के इच्छुक (*Seeker of Paradise*) को ‘ईमान’ चरित्र, आचरण और कर्म आदि प्रत्येक दृष्टि से ऊँचा उठने की कोशिश करनी चाहिए।

७ हजरत अली रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' में बाजार है उस में क्रय-विक्रय न होगा बल्कि उस में पुरुषों और स्त्रियों के रूप होंगे । जब कोई व्यक्ति किसी रूप की इच्छा करेगा तो उस में प्रवेश करेगा ।^{१०} —तिरमिजी

८ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल ने कहा अल्लाह के मार्ग में प्रातः समय और साय काल निकलना संसार और ससार में जो कुछ है सब से उत्तम है ।^{११} — और यदि 'जन्नत' वालों की स्त्रियों में से कोई स्त्री घरती की ओर भाँके तो इन दोनों के बीच जो-कुछ है उसे प्रदीप्त कर दे और उसे सुगन्ध से भर दे । और उस के सिर की ओढ़नी दुनिया और दुनिया में जो-कुछ है सब से उत्तम है ।^{१२} —बुखारी

९ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति 'जन्नत' में प्रवेश करेगा वह सुख और आनन्द से रहेगा, न तो उसे दुख और कष्ट पहुँचेगा और न उस के वस्त्र जीर्ण और पुराने होंगे और न उस की जवानी का अन्त होगा । —मुस्लिम

यदि कोई व्यक्ति 'फिरदीस' के लिए केवल दुआ और प्रार्थना ही करता है और इस सिलसिले की दूसरी जिम्मेदारियों को भूल जाता है, तो वास्तव में 'फिरदीस' का वह सच्चा अभिलाषी नहीं है ।

एक 'हदीस' में है कि 'जन्नत' वाले अपने ऊपर के बाला खाने वालों को इस तरह देखेंगे जिस प्रकार तुम उस प्रकाशमान तितारे को देखते हो जो उदय और अस्त होने के समय क्षितिज में होता है । यह दर्जों और पद के उस अन्तर के कारण होगा जो उनके बीच पाया जायेगा —बुखारी, मुस्लिम

७ इस तरह की और बहुत सी हदीसे हैं जिन से मालूम होता है कि 'जन्नत' में मनुष्य की प्रत्येक इच्छा पूरी होगी । बाह्य एवं आन्तरिक हर प्रकार की सुख-दायक वस्तुएँ वहाँ उसे प्राप्त होगी ।

८ सफर के लिए साधारणतया लोग प्रातः समय और सायकाल निकलते थे इस लिए प्रातः काल और सन्ध्या समय के निकलने का जिक्र किया गया ।

९ अर्थात् सारा वातावरण उसकी सुन्दरता से चमक उठेगा और उसकी सुगन्ध से सुवासित हो जायेगी । केवल उसके सिर की ओढ़नी इतनी बहुमूल्य होगी कि सारा ससार उसका मूल्य चुकाने में असमर्थ है । इस 'हदीस' के आरम्भिक भाग में अल्लाह की राह में निकलते और उसके 'दीन' (धर्म) के लिए दौड़-घुप करने के महत्व का वर्णन किया गया है और अन्त में 'जन्नत' की 'हुरी'

१० हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ‘जन्नत’ में एक बाजार है जिस में हर जुमा को ‘जन्नत’ वाले इकठ्ठा होंगे और वहाँ उत्तरी वायु चलेगी जो उन के मुख और वस्त्रों पर सुगन्ध बखेर देगी। और उन का सौन्दर्य और सुरूपता बढ़ जायेगी जब वे अपने घर वालों के पास लौट कर इस हाल में जायेंगे कि उन की सुन्दरता और सुरूपता बढ़ी हुई होगी, तो उन के घर वाले उनसे कहेंगे अल्लाह की कसम ! हम से अलग हो कर तो तुम ने अपने सौन्दर्य और सुरूपता को बढ़ा लिया। इस पर वे कहेंगे और तुम भी अल्लाह की कसम ! हमारे बाद सौन्दर्य और सुरूपता में बढ़ गये।^{१०}

—मुस्लिम

११ हजरत मुआज बिन जबल रजि० से उल्लिखित है नबी सल्ल० ने कहा ‘जन्नत’ वाले ‘जन्नत’ में इस तरह प्रवेश करेंगे कि उन के शरीर बालों से साफ होंगे, (मसे भीग रही होगी परन्तु) दाढ़ी न निकली होगी, आँखें अजित होंगी और तीस तैंतिस वर्ष की आयु होगी^{११}

—तिरमिजी

१२ हजरत जाबिर रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति ने पूछा है अल्लाह के रसूल सल्ल० ! क्या ‘जन्नत’ के लोग सोयेंगे भी ? कहा .

(मृगनैनी रूपवती स्त्रियो) की सुन्दरता और उनके वस्त्रों की बहुमूल्यता का उल्लेख हुआ है। इसमें इस बात की ओर संकेत है कि जो लोग अल्लाह की राह में निकलते हैं और अपने घर वालों की जुदाई गवारा करते हैं उन्हें ‘जन्नत’ में ऐसी पत्नियाँ मिलेंगी जिनका सौन्दर्य सम्पूर्ण ससार को सुन्दरता एवं प्रकाश प्रदान कर सकता है। जिनके केश की सुगन्ध सारे वातावरण को सुरभित कर सकती है और जिनके वस्त्र ससार की सारी चीजों से अच्छे और बहुमूल्य होंगे।

१० अर्थात् उनके घर वालों और उनकी पत्नियों का सौन्दर्य भी पहले की अपेक्षा बढ़ा हुआ होगा।

११ वे सदैव युवा और सुन्दर ही रहेंगे। शरीर बालों से साफ होंगे, मसे भीग रही होगी परन्तु दाढ़ी न निकली होगी। वे गोरे-चट्टे होंगे। शरीर गठे हुये आँखें सुन्दर अजित होंगी। तिरमिजी में यह ‘रिवायत’ हजरत अबू सईद रजि० से भी उल्लिखित है और मुसनद अहमद में हजरत अबू हुरैरा रजि० की वयान की हुई ‘हदीसों’ में भी यह ‘हदीस’ मिलती है।

निद्रा मृत्यु की बहिन है। 'जन्नत' के लोग मरेगे नहीं।^{१२}

१३ हजरत अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह 'जन्नत' वालों से कहेगा. हे 'जन्नत' वालो !” वे कहेगे. उपस्थित है हम हे हमारे रब ! तेरी सेवा मे उपस्थित है और सारी नेमतें तेरे हाथ में है। फिर वह कहेगा क्या तुम राजी और खुश हो ? वे कहेगे हम क्यों न राजी होंगे जब कि आप ने हमें वह कुछ दिया जो अपने किसी सृष्टजीव को नहीं दिया था। वह कहेगा क्या मैं तुम्हें उस से भी उत्तम एक चीज न दूँ ? वे कहेगे हे 'रब' ! वह क्या चीज है जो इस से भी बढ़ कर होगी ? (अल्लाह) कहेगा मैं तुम्हें अपनी प्रमन्नता प्रदान करता हूँ, इस के बाद अब कभी भी मैं तुम से अप्रसन्न न हूँगा।^{१३} —बुखारी, मुस्लिम

१४ हजरत नोअमान बिन वशीर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ('जहन्नम' की) आग वालों में सब से हल्की यातना वाला वह व्यक्ति होगा जिस की चप्पलें और जिन के तसमें आग के होंगे। जिन से उस का मस्तिष्क इस तरह खौलेगा जिस तरह तेगची (चूल्हे पर) खौलती है और वह नहीं समझेगा कि कोई उस से बढ़ कर यातना में है हालाँकि वह समस्त 'जहन्नम' वालों से हल्की यातना में होगा^{१४}। —बुखारी मुस्लिम

१२. अर्थात् वे सदैव जाग्रत अवस्था में रहेंगे। उनका यह जागना उनके लिए आनन्ददायक होगा। वे सदैव ताजादम रहेंगे उनका यह जागना उनके लिए आनन्ददायक होगा। वे सदैव ताजादम रहेंगे। उन्हें किसी प्रकार की थकान और शिथिलता न छू सकेगी और न उन्हें ऊँघ आयेगी।

मधु-मक्खियों के बारे में कहा जाता है कि वे जीवन भर जाग्रत अवस्था में रहती हैं, कभी सोती नहीं। वे विश्राम अवश्य करती हैं सोने की आवश्यकता उन्हें नहीं होती।

१३ अल्लाह की शाश्वत प्रसन्नता की प्राप्ति सब से बड़ी दौलत है जो 'जन्नत' वालों को प्राप्त होगी। कुरआन मजीद में भी इस ईश-अनुग्रह का उल्लेख इन शब्दों में किया गया है “ईमान वाले पुरुषों और 'ईमान' वाली स्त्रियों से अल्लाह ने ऐसे वागों का वादा किया है जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी जिन में वे सदैव रहेंगे—सदा बहार वागों में (उनके लिए) घर होंगे—और अल्लाह की लुशी और रजामन्दी तो बड़ी चीज है !”—सूरा अत-तौबा आयत ७२।

१४ जब हल्के अज़ाब और यातना की सख्ती और तकलीफ का यह हाल है तो

१५. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ‘कियामत’ के दिन (‘जहन्नम’ की) आग वालों में से एक ऐसे व्यक्ति को लाया जायेगा जो ससार का बड़ा ही सुखी और सम्पन्न व्यक्ति था और फिर उसे (‘जहन्नम’ की) आग में एक डुबकी दी जायेगी।^{१५} फिर उस से कहा जायेगा कि हे आदम के बेटे ! क्या तुम ने कभी अच्छी हालत भी देखी है ? क्या कभी सुख और आनन्द का समय भी तुम पर बीता है ? वह कहेगा . कभी नहीं । अल्लाह की कसम । हे ‘रब’ !^{१६}

और ‘जन्नत’ के लोगों में से एक व्यक्ति को लाया जायेगा जो ससार में सब से अधिक कष्ट और दुख उठाने वाला होगा और उसे ‘जन्नत’ में एक डुबकी दी जायेगी।^{१७} फिर उस से कहा जायेगा : क्या तुम ने कभी कोई दुख देखा है ? क्या कभी तुम पर कोई कठिन समय बीता है ? वह कहेगा . अल्लाह की कसम हे ‘रब’ ! न तो मुझ पर कभी कोई तंगी और दुख का समय बीता है और न मैं ने कभी कोई कठिनाई देखी है ।^{१८}

—मुस्लिम

१६. हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ‘जहन्नम’ वालों (नारकी लोगो) में सब से हल्की यातना अबू तालिब को होगी वे केवल आग के जूते पहने होंगे जिस के कारण उन का दिमाग खौलता होगा !^{१९}

—बुखारी

कठोर यातना की क्या हालत होगी । अल्लाह हम सबको ‘जहन्नम’ की यातना से बचाये ।

१५ अर्थात् ‘जहन्नम’ में डालकर उसे तुरन्त निकाल लेंगे ।

१६. इस से इसका अन्दाजा किया जा सकता है कि ‘जहन्नम’ का अज्ञाब कितना सख्त होगा । ‘जहन्नम’ का एक क्षण भी मनुष्य के सारे सुख-चैन को भुला देगा । उसे याद भी नहीं रहेगा कि कभी उसके सुख और आनन्द के दिन भी रहे हैं ।

१७. अर्थात् ‘जन्नत’ के वातावरण में पहुँचा कर तुरन्त उसे वापस लायेंगे ।

१८ ‘जन्नत’ में एक क्षण रहने का यह परिणाम होगा कि मनुष्य जीवन भर के कष्टों और दुखों को भूल जायेगा । जिन्हे सदैव के लिए ‘जन्नत’ में रहने का स्थान मिल जायेगा उनके सौभाग्य का क्या कहना ।

१९ अबू तालिब नबी सल्ल० के चचा थे । जब तक वे जीवित रहे आपक साथ

अल्लाह के दर्शन

وَعَنْ أَبِي مُوسَى رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ، قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، جَنَّاتٍ مِنْ فِضَّةٍ
 أَنْبِيئُهُمْ وَأَمَّا فِيهِمْ، وَجَنَّاتٍ مِنْ ذَهَبٍ أَنْبِيئُهُمْ وَأَمَّا فِيهِمْ وَأَمَّا بَابُ الْقَوْمِ
 وَبَابُ أَنْ يَنْظُرُوا إِلَى رَبِّهِمْ إِلَّا رِجَاءَ الْكِبْرِيَاءِ عَلَى وَجْهِهِ فِي
 جَنَّةٍ عَدْنٍ ————— بحاری، مسلم، ترمذی

१. हज़रत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दो 'जन्नत' चाँदी की हैं । बरतन और जो वस्तुये उनमें है सब चाँदी की हैं । और दो 'जन्नत' सोने की हैं उन के बरतन और जो चीज़े उनमें हैं सब सोने की है । (जन्नत के) लोगों और उनके अपने 'रब' की ओर देखने में कोई चीज रुकावट न बनेगी सिवाय महानता और बड़ाई की चादर के जो उसके मुख पर होगी सदा-बहार जन्नत में^१ ।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी

रहे परन्तु चूँकि वे 'ईमान' न लाये थे इसलिए 'जहन्नम' की यातना से वे कभी छुटकारा न पा सकेंगे । यदि मनुष्य के पास 'ईमान' नहीं है, तो भले ही वह ऊँचे कुल का सदस्य हो अल्लाह की दृष्टि में उसका कोई सम्मान नहीं ।

- १ अर्थात् 'जन्नत' वालो और उन के 'रब' के बीच कोई परदा न होगा । यदि कोई आवरण होगा तो वह केवल अल्लाह की महानता और उस के प्रताप का आवरण होगा । उस की महानता और उस के प्रताप के कारण उस की ओर देखना साधारण बात न होगी, परन्तु अल्लाह अपनी विशेष कृपा से 'जन्नत' वालो को अपने दर्शन से वंचित न करेगा । वह उन को देखने की ऐसी शक्ति प्रदान करेगा कि वे अपने 'रब' के दर्शन कर सकेंगे ।

नबी सल्ल० की सिखाई हुई एक दुआ के शब्द ये हैं , हे अल्लाह ! तुझ से आँख की ऐसी ठढक का इच्छुक हूँ जो कभी छिन न सके, तुझ से तेरे फैसलो पर राज़ी रहने का योग माँगता हूँ । तुझ से मृत्यु के पश्चात् सुखमय जीवन चाहता हूँ । तुझ से तेरे मुखारविन्दु के दर्शन का आनन्द चाहता हूँ, तेरी मुलाकात की आकाक्षा का इच्छुक हूँ जो किसी परेशान कर देने वाली सस्ती और गुमराह (पथभ्रष्ट) करने वाले फितने के बिना प्राप्त हो जाये ।” दुआ के इन शब्दों से स्पष्ट है कि अल्लाह की मुलाकात और उस के दर्शन कितने आनन्द दायक है इस बड़ी चीज़ की प्राप्ति की अभिलाषा स्वयं एक बड़ी नेमत है ।

२ हजरत जरीर त्रिन अब्दुल्लाह रजि० कहते हैं कि हम अल्लाह के रसूल सल्ल० के पास बैठे हुये थे, आपने चाँद की ओर देखा पूर्णिमा की रात थी फिर कहा निश्चय ही तुम अपने 'रब' को स्पष्ट रूप से देखोगे जिस तरह इस चाँद को देख रहे हो । उसके देखने में तुम्हें कोई जहमत (कठिनाई) न होगी^२, तो यदि तुमसे हो सके तो सूर्य के उदय और अस्त होने से पहले की 'नमाज' के मुकाबले में कोई चीज तुम्हें पराजित न करे तो ऐसा अवश्य करो फिर आपने (कुरआन का यह टुकड़ा) पढ़ा . "और 'तसबीह' करो अपने 'रब' की प्रशंसा (हम्द) के साथ सूर्य उदय होने और उसके अस्त होने से पहले^३ ।"

—बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत सुहैब रूमी रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने कहा जब 'जन्नत' वाले 'जन्नत' में दाखिल हो जायेंगे तो सर्वोच्च अल्लाह कहेगा क्या तुम चाहते हो कि तुम्हें एक चीज और प्रदान करूँ ? वे कहेगे क्या आप ने हमारे चेहरे उज्ज्वल नहीं किये ? क्या आप ने हमें ('जहन्नम' की) आग से बचा कर 'जन्नत' में दाखिल नहीं किया ? (अब क्या चीज शेष है जिस की हम इच्छा कर सकें ?) आप कहते

२ अर्थात् जिस तरह चाँद देखने में तुम्हें कोई कठिनाई नहीं होती । तुम सब एक साथ बिना किसी रुकावट के उसे देखते हो इसी तरह बिना किसी कठिनाई के और रुकावट के 'कियामत' के दिन अपने 'रब' को देखोगे, सासारिक जीवन में अल्लाह का 'दीदार' (दर्शन) सम्भव नहीं परन्तु 'आखिरत' में अल्लाह 'जन्नत' वालों को जहाँ और बहुत सी विशेषताएँ और गुण प्रदान करेगा वही वह उन्हें ऐसी योग्यता और सहन-शक्ति भी देगा कि वे अपने 'रब' के दर्शन का आनन्द ले सकें ।

एक और रिवायत में है "तुम अपने 'रब' को अपनी आँखों से देखोगे" ।

३ अर्थात् यदि तुम अल्लाह के दर्शन के अधिकारी बनना चाहते हो तो प्रातः काल और सायं काल की नमाज को विशेष रूप से पूरे मनोयोग और नियमित रूप से अदा करो । और उस के महत्व को समझो । यह 'नमाज' वास्तव में अल्लाह की 'तसबीह' और उस की 'हम्द' (गुण गान) है, तुम्हें इस से कदापि असावधान न होना चाहिए । अल्लाह के दर्शन के अधिकारी वही लोग होंगे जो प्रातः समय और सायं काल अपने 'रब' के सामने खड़े होते और उस के गुण गाते हैं । जो लोग उस की सेवा में उपस्थित नहीं होते वे कल भी उस के सामीप्य और दर्शन से वंचित रहेंगे । 'आखिरत' हमारे वर्तमान जीवन का स्वाभाविक परिणाम है ।

हैं कि फिर आवरण उठ जायेगा और वे अल्लाह के मुख को देख रहे होंगे, तो कोई भी चीज़ अपने 'रब' को देखने से अधिक प्रिय उन्हें न मिली होगी। फिर आप ने (इस 'आयत' का) पठन किया : "जिन लोगों ने भलाई की उन के लिए अच्छा परिणाम है और उस के सिवा और भी" ५। —मुस्लिम

४. हज़रत जाबिर रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने कहा कि जब 'जन्नत' वाले अपने सुख और आनन्द में होंगे, अचानक उन्हें एक तेज़ प्रकाश दीख पड़ेगा वे अपने सिर को उठायेगे तो क्या देखेंगे कि उन का 'रब' उन के ऊपर प्रकट है। अल्लाह कहेगा "तुम पर 'सलाम' हो, हे 'जन्नत' वाले।" नबी सल्ल० ने कहा : यही सर्वोच्च अल्लाह के इस कथन का अर्थ होता है "सलाम ! शब्द दयावन्त 'रब' का !।" ५" आप ने कहा फिर अल्लाह उन की ओर देखेगा और वे ('जन्नत' वाले) अल्लाह की ओर देखेंगे और वे 'जन्नत' की सुखसामग्री में से किसी चीज़ की ओर भी ध्यान न देगे (वे अल्लाह के दर्शन में लीन हो कर रह जायेंगे) ६। वे अल्लाह की ओर देख रहे होंगे यहाँ तक कि वह उन

४ ईश-मुखार विन्दु के दर्शन का आनन्द 'जन्नत' के सार आनन्दा से बड़ा होगा। इस लोक में अल्लाह के दर्शन की कोई सम्भावना नहीं। यहाँ कुछ विशेष नियम हैं जिन के अन्तर्गत मनुष्य की चेतना शक्ति काम करती है। जो चीज़े उन नियमों के अन्तर्गत नहीं आती मनुष्य को उन का बोध नहीं हो पाता। इस लिए हज़रत मूसा अ० ने जब 'दीदार' (दर्शन) की अभिलाषा व्यक्त की तो अल्लाह ने कहा कि तुम मुझे नहीं देख सकते। परन्तु 'आखिरत' के नियम सासारिक नियमों से भिन्न और उच्च होंगे। वहाँ मनुष्य की चेतन शक्ति भी आज से भिन्न होगी।

५. दे० कुरआन सूरा या सीन० आयत ५८ । इस 'आयत' में अल्लाह की ऐसी ही कृपाओं की ओर संकेत किया गया है। एक 'रिवायत' में है कि 'जन्नत' वालों में अल्लाह की दृष्टि में सब से प्रतिष्ठित वह होगा जिसे प्रातः और साय काल दोनों ही समयों में अल्लाह के दर्शन मिलेंगे। इस के पश्चात् आप ने कुरआन की यह 'आयत' पढ़ी : "कितने चेहरे उस दिन खिले हुये होंगे, अपने 'रब' की ओर देख रहे होंगे" (अहमद, तिरमिज़ी इब्न, उमर रज़ि से उल्लिखित)।

६ अल्लाह के दर्शन की अपेक्षा कोई भी चीज़ उन के ध्यान को अपनी ओर आकर्षित न कर सकेगी।

की निगाहों से छिप जायेगा और उस का प्रकाश शेष रह जायेगा *।

—इब्न माजा

मानव विचार और कर्म पर आखिरत की धारणा का प्रभाव

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عُمَرَ قَالَ، قَالَ أَخَذَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بِمَنْكِبِي
فَقَالَ: كُنْ فِي الدُّنْيَا كَأَنَّكَ غَرِيبٌ أَوْ عَابِرُ سَبِيلٍ ————— بحاری

१. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उम्र रजि० से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मेरा कन्धा पकड़ कर कहा : तुम संसार में इस प्रकार रहो मानो तुम परदेशी हो या राह चलते राही ।*

—बुखारी

२. हज़रत अबू अय्यूब अनसारी रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ उस ने कहा मुझे संक्षेप में उपदेश दीजिए । आप ने कहा जब तुम 'नमाज' में खड़े हो तो उस व्यक्ति की-सी नमाज अदा करो जो विदा किया जा रहा हो । और कोई ऐसी बात मुँह से न निकलो जिस के बारे में कल तुम्हें उज्र करना पड़े । और जो-कुछ लोगो के हाथों में है उस से बिल्कुल निराश हो जाओ *।

—अहमद

७ अर्थात् ईश-दर्शन का प्रभाव बाह्यान्तर पर शेष रह जायेगा ।

१. संसार में मनुष्य की वास्तविक स्थिति एक पथिक की है । उसे यहाँ इस प्रकार जीवन व्यतीत करना चाहिए जैसे उसे यहाँ सदैव रहना है, बल्कि उसे संसार में एक मुसाफिर की तरह रहना चाहिए । मुसाफिर विदेश में मन नहीं लगाता । उसका मन तो अपने वतन में लगा रहता है । ठीक इसी प्रकार मनुष्य को 'आखिरत' की ओर अपना मन लगाना चाहिए जो उसका वास्तविक ठिकाना है । संसार को बिल्कुल विदेश समझना चाहिए, बल्कि इस से भी आगे यदि सम्भव हो तो वह उस पथिक के समान जीवन व्यतीत करे जो रास्ता चल रहा होता है, कहीं ठहरा हुआ नहीं होता बल्कि हर क्षण अपनी मजिल की ओर बढ़ रहा होता है । यदि मनुष्य इस भावना के साथ जीवन व्यतीत करे तो फिर संसार उसे उसके वास्तविक उद्देश्य से कभी शाफिल नहीं कर सकता । और न कोई लोभ और लालच उसे सीधे मार्ग से हटा सकता है ।

२. मतलब यह है कि तुम अपने को हर समय 'आखिरत' के लिए तैयार रखो ।

३. हजरत उकबा बिन आमिर रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने कहा : तेजोमय प्रतापवान अल्लाह बन्दे की अवज्ञा पर भी उस की पसन्द और इच्छा के अनुसार दुनिया की चीजे दे रहा है, तो समझ लो कि यह (अल्लाह की ओर से) ढील है। फिर अल्लाह के रसूल सल्ल० ने (करआन की इस 'आयत' को) पढा "फिर जब ऐसा हुआ कि जिस से उन्हे याद दिहानी कराई गई थी उन्हों ने उसे भुला दिया, तो हम ने उन पर हर तरह की नेमतों के द्वार खोल दिये यहाँ तक कि जब वे उस पर इतराने लगे तो अचानक हम ने उन्हे पकड़ लिया अब तो वे बिल्कुल निराश थे ^३ (सूरा ६ ४४)"।

—अहमद

४ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : दुनिया उस का घर है (जिस का) 'आखिरत' में कोई घर नहीं और उस का माल है जिस का ('आखिरत' में) कोई माल नहीं और उसे वही एकत्र करता है जिस के पास बुद्धि नहीं ^४।

—अहमद, बैहकी-शोबुल ईमान

किसी समय भी इस से असावधान न हो। 'नमाज' अदा करो तो इस तरह मानो यह अन्तिम 'नमाज' है इसके बाद फिर 'नमाज' पढने का अवसर न मिल सकेगा। और कोई बात कहो तो पूरी जिम्मेदारी के साथ कहो। यह भावना सदैव बनी रहनी चाहिए कि तुम्हे हर बात का अल्लाह के यहाँ उत्तर देना है। ससार में लोगो को जो-कुछ सुख-वैभव और धन-दौलत प्राप्त है उस से अपने को निरपेक्ष रक्खो। उसके लिए मन में किसी प्रकार का लोभ न होना चाहिए। तुम्हे आशा केवल एक ईश्वर से करनी चाहिए। यही 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) है और यही 'आखिरत' पर विश्वास करने का अभिप्राय है।

३ यह 'हदीस' बताती है कि किसी व्यक्ति या जानि की सासारिक दृष्टि से उन्नति और उसकी सम्पन्नता या उसका मत्ता प्राप्त कर लेना इस बात का प्रतीक नहीं है कि उस से अल्लाह प्रसन्न है। यह अल्लाह की ओर से एक ढील हो सकती है। इसके पश्चात् अल्लाह का अजाव अपराधियो को अचानक आ दबोचता है फिर उन्हे कहीं शरण नहीं मिलती और वे विनष्ट होकर रह जाते हैं।

४ अर्थात् 'आखिरत' में उस व्यक्ति के लिए कोई ठिकाना और सुख-सामग्री नहीं जिसने ससार ही को अपना सब-कुछ समझा और सासारिक जीवन में 'आखिरत' की ओर से बिल्कुल गाफिल रहा। इस से बढ़कर अज्ञानता की

५ हजरत अबू मूसा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा - जिस व्यक्ति ने अपनी दुनिया से प्रेम किया उस ने अपनी 'आखिरत' को हानि पहुँचाई और जिस ने अपनी 'आखिरत' से प्रेम किया उस ने अपनी दुनिया को नुकसान पहुँचाया, तो तुम स्थायी वस्तु को उस के मुकाबले में प्राथमिकता दो जो विनष्ट होने वाली है ५।

—अहमद, बैहकी-शोबुल ईमान

६ हजरत शहाद विन औस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा शक्तिशाली व्यक्ति वह है जो अपने जी को कानून में रखे और मृत्यु के पश्चात् के लिए कार्य करे और शक्तिहीन और असमर्थ है वह व्यक्ति जो अपनी (तुच्छ) इच्छाओं का अनुपालन करे और अल्लाह से (अच्छी) कामनाएँ करे ६।

—तिरमिजी, इब्न माजह

७ हजरत अब्दुल्लाह विन मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने (कूरआन की) इस 'आयत' का पाठ किया "अल्लाह

कौन सी बात हो सकती है कि कोई माल-दौलत के पीछे दीवाना बना रहे और अपनी 'आखिरत' के लिए कुछ भी सामग्री न जुटाये ।

५. अर्थात् बुद्धिमानी की बात यही है कि मनुष्य 'आखिरत' के जीवन को प्रिय समझे जो सदैव रहने वाला है । दुनिया के पीछे 'आखिरत' को तबाह न करे । सासारिक जीवन में बहुधा ऐसे अवसर आते हैं जबकि मनुष्य को 'आखिरत' के लिए सासारिक हानि सहन करनी पड़ती है । ऐसे अवसरों पर मनुष्य को दुनिया और 'आखिरत' दोनों में से किसी एक को प्राथमिकता देनी पड़ती है । सफल व्यक्ति वही है जो 'आखिरत' के मुकाबले में सासारिक लाभ को प्राथमिकता न दे । लेकिन यह उस समय सम्भव हो सकता है जबकि मनुष्य के मन से ससार का मोह निकल गया हो और 'आखिरत' की इच्छा उसके मन में करवटें लेने लगी हो ।

६ अर्थात् यह अत्यन्त मूर्खता की बात है कि मनुष्य सत्य को त्याग कर तुच्छ इच्छाओं का वशवर्ती होकर रहे और आशा इसकी करे अल्लाह उसे 'आखिरत' में उच्च स्थान प्रदान करेगा और उसे विभिन्न प्रकार की निधियों और सुख-सामग्री से सम्मानित करेगा हालाँकि 'आखिरत' की सफलता तो उन ही लोगों के लिए है जो प्रत्येक अवस्था में सत्य का पालन करते हैं, अपनी इच्छाओं के दाम नहीं होते ।

जिसे (सीधा) मार्ग दिखाना चाहता है उस के सीने (दिल) को इस्लाम के लिए खोल देता है”, इस के बाद आप ने कहा जब प्रकाश सीने में प्रवेश करता है, तो सीना कुशादा हो जाता है। कहा गया : हे अल्लाह के रसूल! क्या कोई ऐसी चीज़ है जिस से उस की पहचान हो सके ? आप ने कहा : हाँ, धोखे के घर (अर्थात् दुनिया) से दिल का उठ जाना और सदा रहने वाले घर का अभिलाषी होना और मृत्यु आने से पूर्व उस के लिए तैयार हो जाना १।

—बैहकी-शोबुल ईमान

८ हजरत अबू हुरैरह रजि० कहते हैं कि अबू कासिम (अर्थात् नबी) सल्ल० ने कहा . उस की कसम जिस के हाथ मे मेरे प्राण हैं जो कुछ मैं जानता हूँ यदि तुम्हे मालूम हो जाये, तो तुम रोओ अधिक और हँसो कम २।

—बुखारी

९ हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो डरता है वह रात के आरम्भिक भाग में चल देता है और जो रात के आरम्भ में चल पड़ता है वह मजिल पर पहुँच जाता है। जान रक्खो! अल्लाह का सौदा बहुमूल्य है। जान रक्खो! अल्लाह का सौदा ‘जन्नत’ है ३।

—तिरमिजी

७. मतलब यह है कि जब बन्दे के अन्दर का अन्धकार दूर हो जाता है और उसे सत्य का ज्ञान मिल जाता है तो स्वभावतः उसे ‘आखिरत से लगाव और प्रेम हो जाता है। दुनिया जो मृत्युलोक है उसका मोह मन से निकल जाता है। और वह उस जीवन के निर्माण में लग जाता है जो मृत्यु के पश्चात् मिलने वाला है।

८ अर्थात् वास्तविकता यदि इस प्रकार तुम्हारे सामने खुलकर आ जाये जिस प्रकार वह मेरे लिए प्रत्यक्ष है और तुम्हे अल्लाह के प्रताप, और ‘आखिरत’ के भयावह और मन को कँपा देने वाले दृश्य का ज्ञान हो जाये, तो तुम्हारा सुख और आराम-चैन सब छिन जाये।

९. अरब मे साधारणतया काफिले रात के अन्तिम भाग मे चलते थे। यही कारण है कि डाकुओ और बटमारो के आक्रमण भी भोर ही मे होते थे। जिस मुसाफिर या काफिले को लुटेरो का भय होता वह रात के आखिरी हिस्से मे चलने के बजाय रात के आरम्भ ही मे चल देता था। और इस तरह कुलता पूर्वक अपनी मजिल पर पहुँच जाता था। इस मिसाल के द्वारा नबी सल्ल० ने लोगों को समझाते कि जिस तरह मजिल की चिन्ता रखने वाले और बट-

१० हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा . हे अल्लाह के नबी! लोगों में सब से बढ कर बुद्धिमान और दूरदर्शी कौन है? आप ने कहा . जो उन मे मृत्यु को अधिक याद करता और उन में सब से अधिक उस की तैयारी करता है। ऐसे ही लोग है, उन्होंने ने ससारिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त की और 'आखिरत' का सम्मान भी १०।

—तबरानी-मोजमुस्सगीर

११. हजरत आइशा रजि० कहती है कि मै ने अल्लाह के रसूल० से 'आयत'— "और जो देते है जो-कुछ कि देते है इस हाल में कि दिल उन के काँप रहे होते है" के बारे मे पूछा कि क्या ये वे लोग है जो शराब पीते है और चोरी करते है? आप ने कहा हे सिद्दीक की बेटी! नहीं, बल्कि ये वे लोग हैं जो 'रोजा' रखते, 'नमाजे' पढते और 'सदका' करते है और इस पर भी डरते रहते है कि कही उनकी ये नेकियाँ अस्वीकृत न हो जाये ११। यही लोग है जो भलाइयों की और तेजी से

मारो से डरने वाले मुसाफिर अपने आराम और अपनी नीद को कुरबान कर के रात के आरम्भ मे ही चल देते है उसी तरह 'आखिरत' के मुसाफिर को भी चाहिए कि अपनी मजिल तक पहुँचने की चिन्ता करे और कदापि असा-वधान न हो। अपने सुख और अपनी इच्छा को इसके लिए कुरबान कर दे। बन्दे को अपने ईश्वर से जो चीज प्राप्त करनी है वह साधारण नहीं है वह बहुमूल्य है। अल्लाह ने अपने सच्चे और वफादार सेवको के लिए 'जन्नत' तैयार की है जिसे हासिल करने के लिए सब-कुछ त्याग जा सकता है। 'जन्नत' का वास्तविक मूल्य यही है कि बन्दा अपने प्राण और धन को अल्लाह के समर्पण कर दे। और हर ओर से कट कर केवल एक अल्लाह का हो जाये। यही बात कुरआन मे इन शब्दो मे कही गई है . "निस्सन्देह अल्लाह ने 'ईमान' वालो की जान और उनके माल को 'जन्नत' के बदले खरीद लिया है" (सूरा अत-तौबा आयत १११)।

१० ससार मे प्रतिष्ठा का पद भी उन ही लोगो को प्राप्त होता है जो दुनिया के लोभी नहीं बल्कि 'आखिरत' के इच्छुक होते है। और 'आखिरत' का उच्च पद और सम्मान तो उन ही लोगो के लिए है। दुनियादारो के लिए 'आखिरत' के जीवन मे तिरस्कार और अपमान के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

११ कुरआन का यह टुकडा जो इस 'हदीस' मे पेज किया गया है सूरा अल-मोमिनून

बढ़ते हैं १२।

—तिरमिजी, इब्नमाजा

१२. हजरत मस्तूर बिन सदाद रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना, आप कहते थे . अल्लाह की कसम दुनिया की मिसाल 'आखिरत' के मुकाबले में वस ऐसी है जैसे तुम में से कोई अपनी एक उँगली समुद्र में डाल कर निकाले और फिर देखे कि

का है। सूर अल-मोमिनून में एक जगह उन लोगों के गुणों का उल्लेख किया गया है जिन्हें भलाइयों से अत्यन्त लगाव होता है। जो अल्लाह की ओर तेजी से बढ़ते हैं। इस सिलसिले में उनका एक गुण यह वयान किया गया है कि वह देते हैं जो कुछ कि देते हैं और हाल उनका यह होता है कि उनके दिल डर से काँप रहे होते हैं। इस 'आयत' में देने से अभिप्रेत केवल भौतिक चीजों का ही देना नहीं है बल्कि अरबी भाषा में देने के लिए 'ईता' शब्द प्रयुक्त हुआ है जो अभीतिक और अन्तरात्मा से सम्बन्ध रखने वाली चीजों के देने के लिए भी प्रयोग होता है। इस प्रकार इस 'आयत' का अर्थ यह हुआ कि वे जो-कुछ भी खर्च करते हैं और जो नेकी और 'इवादत' भी करते हैं इस हालत में करते हैं कि दिल उनके काँप रहे होते हैं कि मालूम नहीं अल्लाह के यहाँ यह नेकियाँ कबूल भी होती हैं या नहीं। हजरत आइशा रजि० ने इस 'आयत' के बारे में पूछा कि क्या इस से सकेत उन लोगों की ओर है जो गुनाह करते हैं किन्तु वे अल्लाह से बिल्कुल निश्चित नहीं हो जाते। नबी सल्ल० ने उत्तर दिया नहीं, इस 'आयत' में चर्चा उन लोगों की है जो अच्छे कर्म करते हैं फिर भी अल्लाह से डरते रहते हैं। आपने कहा कि वास्तव में ऐसे ही लोग हैं जिनके बारे में कहा गया है कि वे भलाइयों के लिए तेजी दिखाते हैं। इस से मालूम हुआ कि यह भावना 'दीन' में अभीष्ट है कि मनुष्य किसी दशा में भी निश्चिन्त हो कर न बैठ रहे। उसे अल्लाह से अच्छी आशा भी हो किन्तु वह अल्लाह के प्रताप से हर समय डरता भी रहे। ऐसे ही लोग 'दीन' के मार्ग में आगे बढ़ते रहते हैं। वे ठहरते नहीं और न उनमें किसी प्रकार की शिथिलता आती है। अधिक-से-अधिक कार्य करने के बाद भी वे यही समझते हैं कि अभी वे कुछ भी नहीं कर सके हैं। अभी तो बहुत से काम हैं जो करने को पड़े हैं। न्यूटन ने उस समय जबकि विज्ञानलोक में उसकी खोजों की शुरुआत थी, कहा था हम जो-कुछ मालूम कर सके हैं वह उनकी अपेक्षा बहुत कम है जिन से हम अभी परिचित नहीं हैं। हमारी हालत उस व्यक्ति की सी है जिसके हाथ में समुद्र की कुछ घोंघियाँ आ गई हों जब कि समुद्र में अभी अगणित बहुमूल्य मोती मौजूद हैं। न्यूटन को इसकी अनुभूति हो गई थी कि प्रकृति (Nature) के जो नियम उसने मालूम किये हैं वे उन नियमों के

कितना पानी उस में लग कर आया है ^{१३}।

—मुस्लिम

१३. हजरत सद्दल बिन सअद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा यदि अल्लाह की दृष्टि में दुनिया की कीमत मच्छर के पर के बराबर भी होती, तो किसी 'काफिर' व्यक्ति को एक घूँट पानी भी न देता ^{१४}।

—अहमद, तिरमिजी, इब्नमाजा

१४ हजरत उमर रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ तो आप एक खुरी चटाई पर लेटे हुये थे और उस के और आप के शरीर के बीच कोई विस्तर न था। चटाई ने पहलू पर निशान डाल दिये थे। आप चमड़े के एक तकिया का सहारा लगाए हुये थे जिस में खजूर की छाल भरी हुई थी। मैं ने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! अल्लाह से प्रार्थना कीजिए कि वह आप के समुदाय को कुशादगी प्रदान करे। ये फारिस और रोम भी तो है,—इन्हे कितनी कुशादगी प्राप्त है, हालाँकि ये अल्लाह की 'इवादत' नहीं

मुकावले में कुछ भी नहीं हैं जो अभी मानव के लिए रहस्य मात्र है। इसी प्रकार जब एक मुस्लिम व्यक्ति को इसका एहसास हो जाता है कि उसके जिम्मे कितने काम हैं जो वह कर सकता था किन्तु वे यो ही पडे हुए है और जो काम उसने किये है मालूम नहीं उनमें कितनी त्रुटियाँ मौजूद है तो इस हालत में उसके दिल का वही हाल होता है जो 'कुरआन' में बयान हुआ है।

१२ यह कुरआन का हिस्सा है। उन्दो के अभीष्ट गुणों के उल्लेख के पश्चात् कहा गया कि यही लोग भलाइयों की ओर तेजी से दौड़ते है।

१३ मतलब यह है कि दुनिया 'आखिरत' के मुकावले में इतनी तुच्छ है जितना समुद्र के मुकावले में उँगली में लगा हुआ पानी। आपने यह मिसाल केवल समझाने के लिए बयान की है, नहीं तो दुनिया और 'आखिरत' में यह अनुपात भी नहीं है। 'आखिरत' असीमित है और दुनिया सीमित है। जो चीज सीमित हो उसका असीमित से क्या जोड़। इसलिए 'आखिरत' को छोड़ कर दुनिया ही को सब-कुछ समझ लेना मूर्खता है।

१४ 'आखिरत' के मुकावले में दुनिया की कोई कीमत नहीं है इसलिए यहाँ 'काफिरों' और धर्म विरोधियों को भी फायदा उठाने का मौका मिल रहा है। 'आखिरत' में किसी 'काफिर' या सत्यविरोधी को पानी की एक बूँद भी प्यास बुझाने को न मिल सकेगी।

करते। आप ने कहा हे इब्न खत्ताब ! क्या अभी तुम इसी ख्याल में हो। ये तो वे लोग हैं जिन की नेमतें (सुख-सामग्रीयाँ) सासारिक जीवन ही में दे दी गई ('आखिरत' में इन का कोई हिस्सा नहीं है)। और एक दूसरी 'रिवायत' में है कि (आप ने कहा) क्या तुम इस पर राजी नहीं हो कि इन के लिए दुनिया हो और हमारे लिए 'आखिरत' १५।

—बुखारी, मुस्लिम

१५. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा. दुनिया 'ईमान' वाले का कारागार है और 'काफिर' की 'जन्नत' है १६।

—मुस्लिम

१६. हजरत अम्र बिन औफ रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की कसम मैं तुम पर मुहताजी और निर्धनता आने से नहीं डरता किन्तु मुझे तुम्हारे बारे में डर है कि दुनिया तुम पर कुशादा कर दी जाये जैसे कि उन लोगो पर कुशादा की गई थी जो तुम से पहले थे फिर तुम उसे एक-दूसरे से बढ़ कर चाहने लगे जैसा कि उन्हो ने उसे चाहा था और वह तुम्हे उसी प्रकार विनष्ट

१५. नबी सल्ल० ने सदैव दुनिया के मुकाबले में 'आखिरत' को प्राथमिकता दी।

ससार में जिस चीज को आप ने हमेशा अपने सामने रखा वह अल्लाह की प्रसन्नता और 'आखिरत' की तलब थी, दुनिया कमाने की चिन्ता कभी आप को न हो सकी और न आप ने भोग-विलास के जीवन को पसन्द किया आप की धर्म पत्नी हजरत आइशा रजि० का बयान है कि मुहम्मद सल्ल० के घर वालों ने कभी दो दिन निरन्तर जो की रोटी से पेट नहीं भरा यहाँ तक कि अल्लाह के रसूल सल्ल० का स्वर्गवास हो गया (बुखारी, मुस्लिम)।

१६. अर्थात् 'आखिरत' में 'ईमान' वालों को जो जीवन प्राप्त होगा उसके मुकाबले में सासारिक जीवन एक कारावास का जीवन है जो व्यक्ति कारागार में होता है उसकी हार्दिक इच्छा होती है कि उसे कैद से छुटकारा प्राप्त हो और वह अपने घर पहुँच जाये। ठीक इसी प्रकार जिन लोगो ने दुनिया की वास्तविकता को समझ लिया है वे उस से जी नहीं लगाते वे तो उस 'जन्नत' की वामना में जीते हैं जिनका उनके 'रब' (पालनकर्त्ता प्रभु) ने उन से वादा किया है। इसके विपरीत एक 'काफिर' जिसका 'आखिरत' में कोई हिस्सा नहीं है उसके लिए दुनिया ही सब कुछ है। यही उसकी 'जन्नत' है। यह वह जितना चाहे चर चुग ले। 'आखिरत' में तो उसे एक ऐसे सख्त अज्बाब में अस्त होना है जिसकी आज कल्पना करना भी हमारे लिए मुश्किल है।

कर दे जैसे उन्हें विनष्ट किया। १७।

—बुखारी, मुस्लिम

१७ कअब बिन इयाज् रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना आप कहते थे हर समुदाय के लिए ‘फितना’ है और मेरे समुदाय का ‘फितना’ माल है १८।

—तिरमिज़ी

१८ कअब बिन मालिक रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दो भूखे भेड़िए जो बकरीयो में छोड़ दिये गये हों उन (बकरियों) को उस से ज्यादा तबाह नहीं करते जितना मनुष्य का धन-वैभव और मानमर्यादा का लोभ उस के ‘दीन’ (धर्म) को तबाह

१७ अर्थात् मैं तुम्हारे बारे में गरीबी और मुहताजी में नहीं डरता बल्कि मुझे भय इस बात का है कि कहीं तुम्हें सासारिक सम्पन्नता और सुख वैभव प्राप्त हो और ‘आखिरत’ को भुला दो और इसके परिणामस्वरूप तबाही और वरवादी तुम्हारे हिस्से में आये। तुम से पहले पिछली जातियों का यही हाल हुआ कि उन्हें सासारिक सुख वैभव प्राप्त हुआ, तो उन्होंने जीवन के वास्तविक उद्देश्य को भुला दिया, वे दुनिया की उपामक बन गईं उन में तरह-तरह के नैतिक रोग पैदा हो गये। जब उन की सरकशी हृदय से आगे बढ़ गई तो अल्लाह ने उन का सर्वनाश कर दिया।

१८ इस ‘हदीस’ में माल को ‘फितना’ (पूतना) अर्थात् आजमाइश (*Persecution*) कहा गया है। कुरआन मजीद में भी माल और औलाद को ‘फितना की सज़ा दी गई है (अल-अनफाल २८, अत तगावुन १५)। माल और औलाद के प्रेम में पड़कर अधिकतर लोग सत्य की उपेक्षा करते हैं। माल तो मनुष्य की सेवा के लिए है लेकिन जब उसका लोभ मनुष्य के अन्दर पैदा हो जाता है, तो उलटे वह दीलत का पुजारी बन जाता है। और इस लोभ की कोई सीमा नहीं रहती। धन-दीलत के पीछे आदमी ऐसा दीवाना हो जाता है कि वह ‘दीन’ और धर्म को भी भुला देता है। इसीलिए आपने माल को ‘फितना’ या आजमाइश कहा है। इस आजमाइश में कम ही लोग पूरे उतरते हैं। ऐसे लोग कम होते हैं जो दीलत पा कर अल्लाह से गाफिल न हो और ‘दीन’ (धर्म) के तकाजों को न भूले। माल की ‘जकात’ दें और दीन-दुखियों के काम आयें। और सामाजिक कल्याण के कार्यों में अपने माल से योग दें।

वर्तमान युग में तो कितने ही आन्दोलन आर्थिक समस्या के आधार पर चलाए गए हैं। इन आन्दोलनों ने आर्थिक समस्याओं को जीवन की वास्तविक समस्या ठहराया है जिसके परिणाम स्वरूप समस्याएँ हल होने के बजाय और अधिक चिन्ताजनक रूप धारण करती जाती हैं।

करता है^{१६}।

—तिरमिजी

१६, हजरत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे कौन है जिसे अपने माल से वढ कर अपने वारिस का माल प्रिय हो ?^{२०} लोगो ने कहा हे अल्लाह के रसूल हम में से तो प्रत्येक को अपने वारिस के माल से वढ कर अपना ही माल प्रिय है^{२१}। आप ने कहा . उस का माल तो वही है जो उस ने आगे भेजा और वह उस के वारिस का माल है जो उस ने पीछे छोडा^{२२}।

—बुखारी

२० अबूहुरैररा रजि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते है कि आप ने कहा . जब मरने वाला मरता है तो 'फिरिश्ते' कहते हैं इस व्यक्ति ने आगे क्या भेजा ? जब कि सामान्य लोग (ऐसे अवसर पर)

१६ नबी सल्ल० ने एक स्पष्ट मिसाल से यह बात समझाई है कि मनुष्य को जब माल-दौलत और झूठे सम्मान का लोभ हो जाता है तो उसका 'दीन' (धर्म) तबाह हो जाता है। इसलिए कि 'दीन' (धर्म) तो वास्तव मे इसी चीज़ का नाम है कि मनुष्य को दुनिया की अस्थिरता और उसके नाशवान होने का पूरा एहसास और अल्लाह की महानता का पूरा ज्ञान हो। जब मनुष्य के मन मे दुनिया को बडाई और अपने वैभव, मान और आदर की इच्छा उभर आई तो फिर उसका 'दीन' (धर्म) कहाँ सुरक्षित रहा। ऐसे व्यक्ति से इसकी आशा नहीं की जा सकती कि वह धर्म की माँगो को पूरा करेगा और अपने जीवन मे अल्लाह की निर्धारित सीमाओ एव मर्यादाओ का आदर कर सकेगा।

२०. अर्थात् जिसे अपने हाथ मे माल आने से प्रिय यह बात हो कि माल उसके वारिसो के हाथ मे आये।

२१ अर्थात् हम मे से तो कोई ऐसा नहीं है जिसे अपने माल से ज्यादा वारिसो का माल प्रिय हो। जो यह चाहे कि माल उसके हाथ मे न आये बल्कि उसके वारिसो के हाथ मे आये।

२२ मतलब यह है कि वास्तव मे आदमी का अपना माल तो बस उतना ही है जिस को उसने अल्लाह की राह मे खर्च करके आगे भेजा। जो उसने अपने पीछे छोडा वह उसका नहीं है। वास्तव मे धनवान वह नहीं है जो दुनिया मे धन-दौलत का अधिकारी है बल्कि धनवान केवल वह है जिसने ज्यादा-से-ज्यादा माल अल्लाह के मार्ग मे खर्च करके आने वाले जीवन मे के लिए एकत्र किया हो।

कहते हैं: उस ने क्या छोड़ा ^{२३}।

—बैहकी-शोबुलईमान

२१ जुबैर बिन नुफैर से ‘मुरसल’ तरीके से ‘रिवायत’ है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी ओर यह ‘बह्य’ (ईश्वरीय प्रेरणा) नहीं की गई है कि मैं धन एकत्र करूँ और व्यापारी बनूँ ^{२४} बल्कि मेरी ओर ‘बह्य’ की गई है ^{२५} • “अपने ‘रब’ की ‘हम्द’ (प्रशंसा एवं कृतज्ञता प्रकाशन) के साथ ‘तस्वीह’ (महान्ता का वर्णन) करो और ‘सजदा’ करने वालों में सम्मिलित हो और अपने ‘रब’ (पालनकर्ता प्रभु) की ‘इबादत’ किये जाओ यहाँ तक कि यकीनी चीज (मृत्यु) तुम्हारे सामने आ जाये” ^{२६}

—शरहुस्सुन्नह

२२. हजरत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस की नीयत ‘आखिरत’ हासिल करने की हो अल्लाह उस के दिल को बेपरवा (अपेक्षारहित) बना देता है और उस के अव्यवस्थित कामों को, एकत्र कर देता है। दुनिया उस के सामने आती है और वह उस की निगाह में हीन और तिरस्कृत होती है। और जिस की नीयत दुनिया हासिल करने की ही अल्लाह निर्धनता और

२३ मतलब यह है कि मरने के बाद जो चीज देखने की होती है वह यह नहीं कि आदमी ने अपने पीछे क्या माल छोड़ा है जैसा कि आम तौर पर लोग समझते हैं बल्कि देखने की चीज केवल यह होती है कि उसने क्या अच्छे कर्म किये और क्या चीज आने वाले जीवन के लिए भेजी है।

२४ अर्थात् मेरा दायित्व और मेरा वास्तविक मेशन यह नहीं है कि मैं दुनिया में माल-दौलत एकत्र करूँ और एक सफल व्यापारी बनने का प्रयास करूँ बल्कि अल्लाह ने जिसकी ‘बह्य’ मुझे की है वह कुछ दूसरी ही चीज है।

२५. आगे जिस ‘बह्य’ का उल्लेख इस ‘हदीस’ में किया गया है वह सूरा अल-हिज्र की अन्तिम दो ‘आयते’ हैं।

२६. अर्थात् मेरे जीवन का वास्तविक लक्ष्य तो अल्लाह की ‘हम्द’ (प्रशंसा, गुणगान) और उसकी दासता एवं आज्ञापालन है। और यह ‘हम्द’ और उस की वन्दगी मुझे जीवन के अन्तिम क्षणों तक करते रहना है। यही मेरी वास्तविक सम्पत्ति है, न कि वह जिसे दुनिया वाले अपना धन समझते हैं।

नबी सल्ल० का यह केवल ज़वानी दावा न था बल्कि आपने इसी के अनुसार अपना पूरा जीवन व्यतीत किया। यह आपके एक सच्चे ‘नबी’ होने का स्पष्ट प्रमाण है। जिस व्यक्ति का जीवन आपके जीवन के जितना अधिक अनुरूप होगा उतना ही अधिक वह अपने जीवन में सफल समझा जायेगा।

मुहताजों को उस की निगाहों के समक्ष कर देता है और उस के, कामों को उस के लिए छिन्न-भिन्न कर देता है और दुनिया उसे बस उतनी ही मिलती है जितनी उस के लिए, निश्चय होती है ^{२७}।

—तिरमिजी, दारमी, अहमद

२३ अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा मेरे मित्रों में सबसे बढ कर वह ईमान वाला व्यक्ति है जिस से स्पर्द्धा की जाये जो हल्का-फुल्का (भारमुक्त) हो, 'नमाज' में उस का हिस्सा हो, अपने 'रब' (पालनकर्त्ता स्वामी) की 'इबादत, उत्तम ढंग से करता हो और उस का आज्ञापालन छिपा कर करता हो और लोगों में गुमनामी की हालत में हो, उस की ओर उँगलियों से सकेत न किये जाते हो, उस की रोजी बस, इतनी ही हो कि काम चल जाये और उसे उस पर सन्तोष हो। फिर आप ने अपने हाथ की चुटकी बजाई और कहा 'जल्द आ गई उस की मृत्यु उस के लिए रोने वाली स्त्रियाँ भी कम है और उस का तरका (छोडा हुआ घन) भी थोडा है ^{२८}।

—अहमद, तिरमिजी इब्नमाजा

२७ अर्थात् उसे हर समय मुहताजी और गरीबी का भय लगा रहता है। एकाग्र-चित्तता और मन की शान्ति और परितोष से वह सदा वचित रहता है। इन तमाम परेशानियों और आपत्तियों के बाद भी दुनिया उसे उस से अधिक नहीं मिलती जो उसके लिए अल्लाह के यहाँ पहले से नियत हो चुकी है। मानसिक शान्ति और मन की धीरता खोकर भी वह उस से अधिक कुछ नहीं पाता जो उसे मिलना ही था।

इस 'हदीस' को इमाम अहमद और दारमी ने अबान से और जैद बिन साबित अनसारी से 'रिवायत' किया है।

२८. आपके कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जीवन में देखने की मूल चीज यह नहीं है कि मनुष्य के पास धन-सम्पत्ति की अधिकता है, और जिस ओर से वह गुजरे लोगो की निगाहे उसकी ओर उठती हो। लोग उसकी ओर सकेत करके कहते हो कि यह तो अमुक व्यक्ति के बोट है बल्कि जो चीज जीवन में अपना विशेष मूल्य रखती है वह मनुष्य का अपने ईश्वर से सम्पर्क और सम्बन्ध है ईश्वर से सबध यदि ठीक है, तो फिर उसका जीवन प्रशसीय है। ऐसा व्यक्ति यदि भारमुक्त है तो वह अपने के धर्म के लिए अधिक समय निकाल सकेगा। वह ज्यादा-से-ज्यादा अल्लाह की बन्दगी और 'इबादत' में अपने को लगा सकेगा। मृत्यु उसे ससार से बिदा करने आयेगी तो वह बोझल और भारग्रस्त होकर

२४ अबू हुरैरा रजि० और अबू खल्लाद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब तुम किसी बन्दे को देखो कि उसे दुनिया के प्रति उदासीनता और अल्प भाषिता (कम बोलने की रुचि) प्रदान की गई है तो उस का सामीप्य प्राप्त करो क्योंकि उस की ओर 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) प्रेरित की जाती है २६।

—बैहकी-शोबुलईमान

२५. अबूजर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो बन्दा दुनिया की ओर से उदासीन हो जाये अल्लाह अवश्य उस के दिल में 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) उगाएगा और उस की ज़बान पर उस (हिकमत) को जारी करेगा और दुनिया का ऐब और उस का रोग और उस का इलाज उसे सुभायेगा और उसे वहाँ से सलामती (कुशलता) के साथ निकाल कर 'दारुस्सलाम' (सलामती के घर

नहीं बल्कि हल्का-फुल्का होकर अल्लाह के यहाँ हाज़िर हो सकेगा। न उसके पीछे धन-सम्पत्ति और तरका का कोई भगडा खडा होगा और न उसके यहाँ रोने वाली अधिक स्त्रियों की समस्या होगी।

२६ ऐसे व्यक्ति को सत्य का ज्ञान हो जाता है। उसकी ज़बान पर ऐसी बातें आती हैं जो ज्ञान और 'हिकमत' (तत्वदर्शिता) का सार होती हैं। ऐसे व्यक्ति की सगति अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होती है। इसके विपरीत गाफिल आदमी जो ससार के लोभ में ग्रस्त हो उसकी आवाज़ भी ग़फलत में डूबी हुई होगी। उसकी सगति अत्यन्त आशकापूर्ण हो सकती है, किन्तु ऐसे व्यक्ति की सगति जिसकी ओर 'हिकमत' और ज्ञान का अवतरण होता हो अत्यन्त लाभप्रद और कल्याणकारी है। इसलिए आप ऐसे व्यक्ति का सामीप्य ग्रहण करने की शिक्षा दे रहे हैं।

यह 'हदीस' बताती है कि सासारिक मोह-माया और व्यर्थ वार्तालाप आत्मिक विकास के लिए घातक है। व्यर्थ वार्तालाप और दुनिया का बड़ा हुआ मोह मनुष्य की अन्तरात्मा को मुरदा बना देता है। ऐसे हृदय का प्रकाश अत्यन्त मन्द हो जाता है। ऐसे हृदयों में 'हिकमत' और रहस्य-ज्ञान का अवतरण नहीं होता। ऐसे व्यक्ति की बात-चीत से मन को जीवन नहीं मिलता और न उस से मनुष्य के 'ईमान' को ताज़गी मिलती है। 'हिकमत' (तत्वदर्शिता एवं ज्ञान) वास्तव में अल्लाह की ओर से एक नकद इनाम (पुरस्कार) है। कुरआन मजीद में भी कहा गया है "जिसे 'हिकमत' (*wisdom*) प्रदान की गई उसे बड़ी दौलत दी गई" —सूर अल-बकरा आयत २६६।

अर्थात् 'जन्नत') में पहुँचा देगा ^{३०}।

—बैहकी-शोबुलईमान

२६. मुआज्ज बिन जबल रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने जब उन्हें यमन की ओर भेजा तो कहा : अपने-आप को सुख भोगने से बचाना क्योंकि अल्लाह के विशेष बन्दे सुखभोगी नहीं होते ^{३१}।

—अहमद

२७. अबूज्जर रज़ि० नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि आप ने कहा : 'दीन' के बारे में उदासीनता (जुहद) हलाल (जायज़ चीजों) को अपने ऊपर हराम (अवैध) कर लेने और माल को बरबाद करने का नाम नहीं बल्कि दुनिया के प्रति उदासीनता यह है कि जो-कुछ

३०. अर्थात् मनुष्य जब दुनिया से बेपरवा हो जाता है और उसके जीवन में पवित्रता आ जाती है, सासारिक मोह-माया की लिप्सा उसमें शेष नहीं रहती, तो अल्लाह उस के दिल में 'हिकमत' और ज्ञान को बढ़ाता है और उसकी ज़बान और लेखनी से ज्ञान और 'हिकमत' (*wisdom*) की ऐसी बातें निकलने लगती हैं जिन से हृदय को आहार और मन एवं मस्तिष्क को बल मिलता है। दुनिया की बुराइयाँ और रोग उस पर स्पष्ट होते हैं। अल्लाह की दी हुई अन्तर्दृष्टि से रोगों के वास्तविक इलाज और उनके दूर करने के उपाय को भी वह समझ जाता है। उसके द्वारा लोगों में सुधार होता है। फिर ऐसे व्यक्ति पर अल्लाह की विशेष कृपा यह होती है कि वह उसे 'ईमान' और 'इस्लाम' की सलामती के साथ इस दुनिया से उठाता और उसे 'जन्नत' में जगह प्रदान करता है। जहाँ हर तरह की सलामती और कुशलता है जहाँ किसी प्रकार का भय और दुख नहीं पाया जाता।

३१. अर्थात् अल्लाह के विशेष बन्दों की निगाह में तो 'आखिरत' का जीवन होता है वे उसी के निर्माण में लगे होते हैं। वे ससार के भोग विलास में नहीं लगे रहते। वे दुनिया पर मोहित नहीं होते। हर समय 'आखिरत' की चिन्ता बनी रहती है। यदि वास्तविक रूप से मनुष्य को 'आखिरत' की चिन्ता हो जाये, तो स्वभावतः विलासता के लिए उसके पास समय ही नहीं रहेगा। उसका सारा ध्यान 'आखिरत' की तैयारी में लग जायेगा। वह अल्लाह की प्रदान की हुई चीजों से फायदा उठायेगा किन्तु उस तरह नहीं जिस तरह एक दुनियादार व्यक्ति उठाता है बल्कि वह उस से फायदा उठायेगा जिस तरह एक जिम्मेदार और अमानतदार व्यक्ति किसी चीज़ से फायदा उठाता है उसे हर समय इसका खटका रहेगा कि एक दिन उसे अल्लाह की दी हुई तमाम नेमतों का हिसाब देना है।

तुम्हारे हाथ में हो उस से अधिक भरोसा और विश्वास तुम्हें उस पर हो जो अल्लाह के हाथ में है और यह कि जब तुम मुसीबत में हो तो उस मुसीबत (और विपत्ति) का सवाब (फल) तुम्हें इतना प्रिय हो कि तुम इस की इच्छा करो कि काश यह मुसीबत बाकी रहे ^{३१}। —तिरमिज़ी, इब्नमाज़

२८. अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . हे अल्लाह ! मुहम्मद के सम्बन्धी लोगों की रोज़ी उतनी हो जितने से उन का काम चल जाये ^{३२}। —बुखारी, मुस्लिम

३२. कुछ लोग भ्रम से यह समझते हैं कि 'जुहद' और परहेज़गारी (त्याग, और सयम) इस चीज़ का नाम है कि मनुष्य अल्लाह की दी हुई नेमतों और सुख-सामग्री से किनारा खींच ले। नबी सल्ल० ने 'जुहद', त्याग और उदासीनता की इस कल्पना का सुधार किया और बताया कि त्याग अपने आशय की दृष्टि से किसी प्रत्यक्ष वस्तु का नाम नहीं है बल्कि 'ईमान' के इस भाव का नाम है कि मनुष्य का वास्तविक भरोसा उन चीज़ों से अधिक जो उसके हाथ में हैं उन चीज़ पर हो जो अल्लाह के हाथ में है जिसका उसने अपने बन्दों से वादा किया है। उन्हीं की अधिक-से-अधिक इच्छा मनुष्य को होनी चाहिए जिसका वादा अल्लाह ने अपने वफ़ादार बन्दों से किया है। यदि यह बात आदमी के अन्दर पैदा हो जाये, तो स्वभावतः वह दुनिया के मोह-माया और विलासता से छुटकारा पा लेगा। उसकी ज़्यादा-से-ज़्यादा कोशिश इसके लिए होगी कि वह उस चीज़ का अधिकारी बन सके जो अल्लाह के हाथ में है। उसका भरोसा सदैव अल्लाह की कृपा और उसके अक्षय कोष पर होगा न कि नाश-वान चीज़ों पर। 'जुहद' और त्याग की दूसरी निशानी इस 'हदीस' में यह बताई गई है कि मनुष्य पर जब कोई मुसीबत और सकट आ जाये तो अल्लाह ने उस मुसीबत के कारण जो 'सवाब' और प्रतिकार बन्दे के लिए नियत किया है उसकी चाहत वह अपने मन में इस इच्छा की अपेक्षा कि वह मुसीबत और सकट उस पर न आया होता, ज़्यादा महसूस करे। यह बात आदमी के अन्दर उसी समय पैदा हो सकेगी जबकि सासारिक सुख-सामग्री के मुकाबले में वह कहीं ज़्यादा 'आखिरत' के लिए चिन्तित हो। 'आखिरत' की चिन्ता ही वास्तव में 'जुहद' और त्याग का आधार है। इस 'हदीस' का अर्थ कदापि नहीं है कि मनुष्य तकलीफ़ और मुसीबत की कामना करे बल्कि इस 'हदीस' का वास्तविक अभिप्राय यह है कि मनुष्य के लिए सब से अधिक प्रिय वस्तु वह 'सवाब' और प्रतिकार हो जो 'आखिरत' में मिलने वाला है।

३३ अर्थात् उनके लिए इतनी रोज़ी प्रदान करे कि जितने में उनका काम चल

२९. महमूद बिन लबीद रजि० स उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'दो चीजे ऐसी हैं जो आदम के बेटे (मनुष्य) को अप्रिय हैं। मृत्यु उसे अप्रिय है हालाँकि मृत्यु 'ईमान' वाले के लिए 'फितना' से अच्छी है। उसे धन की कमी और (निर्धनता) अप्रिय है हालाँकि धन की कमी ('आखिरत' के) हिसाब को बहुत सक्षिप्त कर देती है ३४।

—अहमद

३०. इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि (एक बार) अल्लाह के रसूल सल्ल० चटाई पर सोये जब उठे तो आप के शरीर पर उस (चटाई) के निशान पड़े हुये थे, तो इब्न मसऊद रजि० ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! काश आप हमें हुक्म दे तो हम आप के लिए बिस्तर बिछा दे और कोई काम करे। आप ने कहा मुझे दुनिया से क्या मतलब ? मेरा और इस दुनिया का सम्बन्ध तो बस ऐसा है जैसे कोई सवार किसी वृक्ष के नीचे छाया लेने को ठहरे और फिर उसे छोड़ कर (अपनी मंजिल की ओर) चल दे ३५।

—अहमद, तिरमिजी, इब्नमाजा

सके। इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि इस दुनिया में यदि मनुष्य को आवश्यकतानुसार रोज़ी हासिल है, तो उसे अल्लाह का आभारी होना चाहिए।

३४ किसी 'फितना' और आपत्ति में पड़ने से अच्छा यह है कि मनुष्य का जीवन समाप्त हो जाये और वह हर तरह के 'फितनो' से सुरक्षित हो जाये। निर्धन व्यक्ति को धन-दौलत की कमी का एहसास सताता है हालाँकि उसे सोचना चाहिए कि माल अपने साथ बड़ी जिम्मेदारियाँ और आजमाइशें लेकर आता है। माल यदि कम है तो 'कियामत' में उसका हिसाब भी थोड़ा ही होगा। और 'कियामत' में बहुत जल्द वह हिसाब की कठिन समस्या से निवृत्त हो जायेगा।

३५ मतलब यह है कि जब दुनिया हमारी असल मंजिल नहीं है तो फिर यहाँ के सुख-वैभव के लिए हम अधिक चिन्तित क्यों हो। क्या वह सवार जो छाया के लिए किसी वृक्ष के नीचे थोड़ी देर के लिए ठहरता है, वृक्ष के नीचे विश्राम गृह बनाने की कोशिश करता है या आगे अपनी मंजिल की ओर बढ़ने की कोशिश करता है ? बुद्धिमानी की बात तो यह है कि मनुष्य सासारिक सुख और भोग-विलास की सामग्री जुटाने में अपने अधिक समय और शक्ति को नष्ट करने के बजाय अपने समय और शक्ति को अधिक-से-अधिक 'आखिरत' के निर्माण में लगाए।

३३ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति दुनिया की हलाल (वैध) नेमतों को इस ध्येय से प्राप्त करना चाहे कि उसे दूसरों से माँगना न पड़े और अपने घर वालों के लिए रोजी और सुविधा-सामग्री संचित हो सके और अपने पड़ोसियों के साथ एहसान और मेहरबानी का बरताव कर सके, तो वह 'कियामत' के दिन सर्वोच्च अल्लाह से इस अवस्था में मिलेगा कि, उस का चेहरा पूर्णिमा के चन्द्र के समान कान्तिवान होगा। और जो व्यक्ति दुनिया की हलाल नेमतों (वैध सुख सामग्री) इस ध्येय से प्राप्त करना चाहे कि वह बहुत बड़ा धनवान हो जाये और दूसरों के मुकाबले में अपनी शान ऊँची दिखा सके और (लोगों की दृष्टि में बड़ा बनने के लिए) दिखावे और प्रदर्शन कब कार्य कर सके, तो ('कियामत' के दिन) वह सर्वोच्च अल्लाह से इस अवस्था में मिलेगा कि अल्लाह उस पर क्रुद्ध होगा ३५।

—बैहकी-शोबुल ईमान

यह है कि मनुष्य को वास्तव में चिन्ता इस की होनी चाहिए कि उसे दुनिया और 'आखिरत में अल्लाह' की प्रसन्नता कैसे प्राप्त हो, उसे ऐसे काम में दिल खोल कर हिस्सा लेना चाहिए जिस से अल्लाह राजी होता है। यदि इस से दूसरे लोग अप्रसन्न होते हैं तो हुआ करें ऐसे अवसर पर जब की लोगों की खुशी अल्लाह की खुशी से टकरा रही है, मनुष्य को अल्लाह की ही खुशी का पालन करना चाहिए, यदि वह ऐसा करता है, तो अल्लाह उसे बेपरवा कर देगा, उस की आवश्यकताओं की पूर्ति का स्वयं प्रबन्ध करेगा, उस की जरूरतें इस तरह पूरी होगी कि वह पहले से उस की कल्पना भी नहीं कर सकता, लेकिन यदि उसे अल्लाह की प्रसन्नता की कोई चिन्ता नहीं है, बल्कि वह मनुष्य को राजी करने में सारी सफलता समझता है तो ऐसे व्यक्ति का ज़िम्मेदार अल्लाह नहीं होता वह उसे लोगों के ही हवाले कर देता है और वह उनकी दासता से कभी छुटकारा नहीं पा सकता अल्लाह के संरक्षण से वंचित हो कर वह ऐसे लोगों के हवाले कर दिया जाता है जो उसी की तरह निर्बल और विवश होते हैं।

३८ मालूम हुआ नीयत यदि ठीक और उद्देश्य अच्छा है, तो वैध रूप से माल-दीलत प्राप्त करने में कोई दोष नहीं है बल्कि ऐसा व्यक्ति अल्लाह के यहाँ सफल होगा लेकिन यदि धनोपार्जन के पीछे केवल यह भावना है कि वह ससार का धनी व्यक्ति बन जाये और लोगों पर अपनी बड़ाई जनाये और दिखावे और प्रदर्शन मात्र कार्य करे, तो चाहे वह वैध रूप से ही दीलत हासिल करे 'कियामत' के दिन वह अल्लाह के प्रकोप से बच नहीं सकता। और यदि वह

३४. अब बररा रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने कहा :
हे अल्लाह के रसूल ! लोगों में उत्तम कौन है ? आप ने कहा : वह
जिन की आयु दीर्घ हुई और कर्म उस का चच्छा रहा । उस ने कहा :
लोगों में दुःख कौन है ? कहा : जिस की आयु दीर्घ हुई और कर्म उस
का बुरा रहा ॥

—अहमद

३५. अब दन्दा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल
सल्ल० ने कहा : 'गियामत' के दिन दर्ज की दृष्टि से सब से बुरा
आदमी वह है जिस ने अपनी 'आगिरन' को दूसरों की दुनिया के पीछे
नष्ट कर दिया ।

—इब्नमाजा

३६. अब उम्मान रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने
कहा : उन चीजों के प्रतिरिक्त आदम के बेटे का किसी चीज पर कोई
हक नहीं है : रहने के लिए घर, धरोर एकने को कपड़ा, सूखी रोटी
और जल ॥

—तिरमिजी

३७. अब अब रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने एक दिन
'खुदा' (भाषण) दिया । आप ने अपने तत्वों में कहा : सावधान !
दुनिया एक अग्नि पर्वी है उस में से नेक भी खाता है और बुरा भी
और निश्चय ही आगिरन एक सच्चा निश्चित समय है ॥ जिस में
सामर्थ्यवान मन्नाट (दिवर) फैसला करेगा । सावधान ! समस्त भलाइयाँ

इसम और अर्थम रूप से एक एक करता है तो तेजी दया में उसके लिए
भी अधिक रसवाई और तबली है ।

३८ आयु का दीर्घ होना एक नेमत और ईश्वरीय प्रसाद है शतं यह है कि इसके
माय कर्म भी अच्छे हों । यदि कर्म अच्छे नहीं हैं तो नेमत होने के बजाय उस
की आयु उनके लिए पाटा और संताप का ही कारण बनेगी ।

४० अर्थात् मनुष्य को यदि दुनियादी जरूरतें पूरी हो रही हैं, तो यह उसके लिए
काफी है । उसे चिन्ता अधिक-से-अधिक जिस बात की होनी चाहिए वह यह
कदापि नहीं है कि वह अधिक-से-अधिक अपने जीवन को सासारिक सुख-सामग्री
में सम्पन्न करे बल्कि उसे अधिक-से-अधिक अपनी उस ज़िम्मेदारी के पूरा
करने में लग जाना चाहिए जो ज़िम्मेदारी अल्लाह की ओर से उस पर
डाली गई है ।

४१ अर्थात् 'आगिरन' का दिन निश्चित है वह अपने समय पर आकर रहेगा ।
यह बात प्रमाणिक रूप से भी सिद्ध है और मनुष्य का अन्तरात्मा भी इसी

अपने तमाम पहलुओं और दिशाओं के साथ 'जन्नत' में हैं ^{४२}। सावधान ! समस्त बुराइयाँ अपने तमाम पहलुओं और दिशाओं के साथ (जहन्नम की) आग में हैं ^{४३} अतः सावधान हो कर तुम जान लो और अल्लाह से डरते रहो और इस बात को याद रखो कि तुम्हें तुम्हारे कर्मों के साथ (अल्लाह के समक्ष) पेश किया जायेगा, तो जो व्यक्ति कण भर भी भलाई करेगा उसे देख लेगा और जो कण भर भी बुराई करेगा उसे देख लेगा ^{४४}। —शाफिई

३८. हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा चार चीज़ें हैं यदि वे तुम में पाई जायें तो दुनिया (ससारिक वैभव) के नष्ट होने की तुम्हें कोई परबाह न होनी चाहिए : अमानत की हिफाजत (रक्षा) करना, सत्य बात कहना, स्वभाव का अच्छा होना और खाने में संयम का ध्यान रखना ^{४५}।

—अहमद, अल-बैहकी-शोबुलईमान

बात का साक्षी है ।

४२. यहाँ एक बड़ी वास्तविकता की ओर संकेत किया गया है । आध्यात्मिक दृष्टि से 'जन्नत' भलाई, नेकी, सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् का केन्द्र और उद्गम है । सारी भलाइयों की वह चरम सीमा और लक्ष्य है । बाह्य और आंतरिक हर प्रकार की भलाइयों का पूर्ण रूप 'जन्नत' है । भलाई के अतिरिक्त मनुष्य वहाँ और कुछ नहीं देखेगा । जो भलाई और नेकी से भागता है वह वास्तव में उस 'जन्नत' से भागता है जो उसकी आत्मा की परम स्थिति है । जिसकी खोज उसकी आत्मा को है । जिसकी प्राप्ति की कोशिश और साधना उसकी आत्मा को करना है । जिसमें प्रवेश पाने योग्य यहाँ अपने को बनाना है । 'जन्नत' ईश्वर का सामीप्य पाने का वास्तविक स्थान है । 'जन्नत' के वातावरण में निवास करना वास्तव में ईश्वर की अनन्त दयालुता की प्राप्ति है ।

४३. 'जहन्नम' मनुष्य की अधमता और बिगाड़ की अन्तिम स्थिति हैं । 'जहन्नम' समस्त बुराइयों का केन्द्र और मज़िल है । 'जहन्नम' से बढ़कर किसी असुन्दर और दुःखदायिनी चीज़ की कल्पना नहीं की जा सकती । जो व्यक्ति बुराइयों में लिप्त रहता है वह वास्तव में 'जहन्नम' की ओर बढ़ता और अपने को तबाही के गड्ढे में गिराता है ।

४४. दे० सूरा ९६ आयत ७-८ ।

४५. यह बात जीवन की पवित्रता और 'आखिरत' के दृष्टिकोण से कही गई है ।

ईमान और इस्लाम

ईमान का प्रतिफल और उसके लक्षण

عَنْ أَنَسٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الْإِيمَانُ شُعْءٌ وَسَبْعُونَ شُعْءَةً فَأَفْضَلُهَا قَوْلُ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَدْنَاهَا إِسَاطَةُ الرَّذَى عَنْ النَّفْسِ وَالْحَبَاءُ شُعْءٌ مِنَ الْإِيمَانِ ————— بِعَلْوَى، مُسْلِمٌ

१. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'ईमान' की सत्तर से ऊपर कुछ शाखाएँ हैं उनमें सबसे उत्तम तो यह कहना है कि अल्लाह के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नहीं और (इसके मुकाबले में) उनमें सबसे छोटी (शाखा) तकलीफ देने वाली चीजों का दान्ते से हटा देना है और लज्जा भी ईमान की एक शाखा है।
—बुखारी, मुस्लिम

२ अबू उमामा रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा 'ईमान' क्या है? आप ने कहा जब तुम्हें अपने शुभ कर्म से प्रसन्नता और अपने बुरे कर्म से तकलीफ और खेद हो, तो तुम 'ईमान' वाले हो।
—अहमद

१ ईमान अपने विस्तृत रूप में जीवन के सभी क्षेत्रों और अंगों से सम्बन्ध रखता है। मनुष्य की धारणाओं और विचारों में लेकर उसके छोटे बड़े हर तर्क में उसकी अभिव्यक्ति होती है। ईमान से मनुष्य का एक विशेष प्रकार का स्वभाव बनता है और उससे विशेष प्रकार के जीवन का निर्माण होता है। 'ईमान' की हैसियत एक ऐसे बीज की है जो मनुष्य के हृदय में अपनी जड़ जमाता है फिर उसके अनुसार व्यवहारिक जीवन का वृक्ष अपनी शाखाओं और पत्तियों के साथ बढ़ता और फलता-फूलता है। 'इस्लाम' ने 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) की जो शिक्षा दी है उसका सम्बन्ध जीवन के किसी सीमित भाग से नहीं है, बल्कि उसकी अभिव्यक्ति जीवन के प्रत्येक पहलू और उसके व्यक्तिगत और सामाजिक समस्त क्षेत्रों में होती है। 'इस्लाम' में 'ईमान', स्वभाव और कर्म का ऐसा समन्वय पाया जाता है जिसके सौन्दर्य और पूर्णता को हर सूझ-बूझ रखने वाला व्यक्ति स्वीकार करता है। यह 'हदीस' बताती है कि 'ईमान' का मनुष्य के कर्म से गहरा सम्पर्क है। यह मनुष्य के ईमान का ही फल है कि जब उसे अच्छे कर्म करने का सौभाग्य प्राप्त होता है, तो उसे प्रसन्नता होती है और यदि उससे कोई

३. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि तीन चीजे ऐसी है कि जिस व्यक्ति मे वे हो उसे 'ईमान' की मिष्ठता प्राप्त होगी . यह कि अल्लाह और उसका 'रसूल' उसे अन्य सभी चीजों से अधिक प्रिय हों । उसे जिस व्यक्ति से प्रेम हो अल्लाह के लिए प्रेम हो, और 'कुफ़' की ओर पलटना उसे उतना ही अप्रिय हो जितना अप्रिय उसे यह बात है कि उसे आग में डाल दिया जाये ^३।
—बुखारी, मुस्लिम

४. हजरत अब्बास (रजि०) बिन अब्दुल मुत्तलिब से उल्लिखित है, उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना, आप कहते थे 'ईमान' का रसास्वादन उसने कर लिया जो अल्लाह के 'रब' होने, 'इस्लाम' के 'दीन' होने और मुहम्मद के 'रसूल' होने पर राजी हो गया ^४।

—मुस्लिम

गलत काम हो जाता है तो उसे पछतावा होता है ।

३. इस हदीस से मालूम होता है कि ईमान सर्वदा आनन्द और सुस्वाद वस्तु है । इस हदीस मे जिन तीन मौलिक बातों का उल्लेख है वे वास्तव मे ईमान के लक्षण हैं । ईमान वाले व्यक्ति को अल्लाह और, 'रसूल' की प्रियता की पहचान होती है इस लिए उसे अल्लाह और उसका रसूल सबसे अधिक प्रिय होते हैं । वह बस एक अल्लाह का सेवक एव दास होता है । उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति होती है । अल्लाह की प्रसन्नता मे ही उसे वास्तविक आनन्द मिलता है । जिस किसी से भी उसकी मित्रता होगी अल्लाह ही के लिए होगी, जिस किसी से उसका वैर होगा, अल्लाह ही के लिए होगा । जिस से वह कटेगा अल्लाह ही के लिए कटेगा, जिस से जुड़ेगा अल्लाह ही के लिए जुड़ेगा । अल्लाह ही के आदेशों पर उसके सारे प्रोग्राम आधारित होते हैं । 'ईमान' के बाद 'कुफ़' ग्रहण करना उसे उतना ही अप्रिय होता है जितना आग मे डाला जाना । सासारिक जीवन मे भी कुफ़ मानव-प्रकृति के लिए विनाश के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । 'आखिरत' मे इसका परिणाम दोख की आग के ही रूप मे सामने आयेगा ।

४. यह हदीस बताती है कि 'ईमान' कोई बेमज़ा चीज़ नहीं है बल्कि मनुष्य के लिए वह अत्यन्त सुखद एव सुस्वाद वस्तु है । सुस्वाद वस्तु हम उसी को कहते हैं जिससे हमारी उमंगों और हमारी प्राकृतिक आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति होती हो जिनसे हम आनन्दित होते हो । 'ईमान' वास्तव मे वास्तविक आनन्दों का स्रोत है । ईमान मानव-जीवन की एक आवश्यकता है । इसके

५ मन्नाज बिन जबल रजि० से उल्लिखित है, उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से उत्तम ईमान के बारे में पूछा। आपने कहा “यह कि अल्लाह ही के लिए तुम किसी से प्रेम करो, और अल्लाह ही के लिए तुम किसी से द्वेष रक्खो और अपनी जिह्वा को अल्लाह के जिक्र में लगाये रहो।” (हज़रत मन्नाजने) कहा . और क्या है अल्लाह के रसूल! आप ने कहा : और यह कि दूसरों के लिए भी वही प्रसन्न करो जो अपने लिए प्रसन्न करते हो और उनके लिए भी उसको नापसन्द करो जो अपने लिए नापसन्द करते हो १।” —अहमद

६ हज़रत अबू उमामा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसने अल्लाह ही के लिए प्रेम किया, और अल्लाह ही के लिए द्वेष रक्खा, अल्लाह ही के लिए दिया और अल्लाह ही के

दिना मनुष्य एक बड़ी नेमन में बन्ति रहता है। यह दूसरी बात है कि उसे इसका ज्ञान न हो। जिस व्यक्ति को वास्तविक ‘ईमान’ प्राप्त होगा वह ईमान के स्वाद से अनभिज्ञ नहीं रह सकता। वास्तविक एवं पूर्ण ईमान मनुष्य को उन्नी समय प्राप्त होगा जब कि उसे अपने ‘रब’ (पालनकर्ता प्रभु) की और उनके उतारे हुये दीन (धर्म) और रिवाज की पहचान हो। फिर तो यह सम्भव ही नहीं है कि अल्लाह को वह दिल से अपना ‘रब’ न माने या इस्लाम को न्येच्छापूर्वक अपना धर्म स्वीकार न करे। और हज़रत मुहम्मद सल्ल० को अपना ‘रसूल’ और मार्गदर्शक न माने। अल्लाह की प्रभुता और बड़ाई का इकारार मानव-प्रकृति की पुकार है। इस्लाम जीवन का वह सहज और सरल मार्ग है जिस पर चलने के बाद ही मनुष्य की समस्त बाह्य एवं आंतरिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और उसके व्यक्तित्व को पूर्णता मिलती है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० ऐसे मार्ग-दर्शक हैं जो हमें जीवन का स्वाभाविक मार्ग दिखाते हैं।

५ मतलब यह है कि ईमान की सबसे अच्छी स्थिति यह है कि मनुष्य का सम्बन्ध अल्लाह और उसके बन्दों के साथ ठीक हो। उसका दिल अल्लाह के प्रेम से परिपूर्ण हो, उसकी ज़बान पर अल्लाह का जिक्र हो। उसके समस्त कार्य और सकल्प के पीछे केवल अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने का ध्येय काम कर रहा हो। उसकी दोस्ती और दुश्मनी, प्रेम और द्वेष सब कुछ अल्लाह के हुक्म और उसके फैसले के ही अधीन हो। उसके जीवन में ईश्वर इस प्रकार प्रवेश पा चुका हो कि उसके जीवन का अर्थ प्रसन्नता की प्राप्ति के अतिरिक्त और कुछ न हो।

लिए देने से रोका, उसने (अपने) ईमान को पूर्ण कर लिया ।

—अबू दाऊद

७ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'ईमान' वालों में सबसे पूर्ण 'ईमान' वाला वह व्यक्ति है जिस का स्वभाव उन में सब से अच्छा हो १। —अबू दाऊद, दारमी

८ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : 'मुस्लिम' वह है जिस की ज़बान और जिस के हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहें २। और 'मुहाजिर' (त्याग कर्त्ता) वह है जिस ने उन चीज़ों को छोड़ दिया जिन से अल्लाह ने वर्जित किया है ३। ये शब्द बुखारी के हैं मुस्लिम (की 'हदीस') में है कि एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से पूछा कि उत्तम 'मुस्लिम' कौन है? आप ने कहा : वह व्यक्ति जिस की ज़बान और हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहे । —बुखारी, मुस्लिम

९. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मुस्लिम वह है जिस की ज़बान और हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहे ४। यह तिरमिजी और नसई की

६. मालूम हुआ कि आदमी के 'ईमान' को पूर्ण उसी समय कहा जा सकता है जब कि उसका व्यवहारिक जीवन 'ईमान' के साँचे में ढल गया हो । यह सम्भव ही नहीं है कि मनुष्य के 'ईमान' में तो कोई कमज़ोरी और त्रुटि न हो, परन्तु उस के जीवन पर 'ईमान' की कोई छाप न पड़े ।

७. आदमी के स्वभाव और चरित्र से उसका ईमान प्रदर्शित होता है । यदि किसी के ईमान ने नैतिक दृष्टि से उसे ऊँचा नहीं उठाया तो यह इस बात का प्रमाण है कि अभी उसके ईमान में त्रुटि है । उसकी ईमानी हालत जितनी अच्छी होगी उसका स्वभाव और चरित्र भी उतना ही उच्च और महान होगा ।

८. अर्थात् जो न तो अपनी ज़बान से किसी मुसलमान को दुःख या हानि पहुँचाए और न अपने हाथों से किसी मुसलमान को कष्ट दे वही वास्तव में मुस्लिम है ।

९. अर्थात् 'हिजरत' केवल यही नहीं है कि आदमी अल्लाह की राह में घरबार छोड़ दे बल्कि वास्तविक हिजरत तो यह है कि मनुष्य उन सभी चीज़ों को त्याग दे जो अल्लाह को नापसन्द है, जिन से उसने हमें रोका है ।

१०. अर्थात् न वह लोगो का नाहक खतपात करे और न उनकी समर्पित आदि को

‘रिवायत’ है और बैहकी ने शोबुल ईमान में फुजाला से जो रिवायत की है उस में ये शब्द भी हैं : और ‘मुजाहिद, वह है जिस ने अपने-आप से ‘जिहाद’ (संघर्ष) किया और ‘मुहाजिर’ (त्याग कर्त्ता) वह है जिसने खताओं और गुनाहों को छोड़ दिया ^{११}।

—तिरमिजी, नसई, बैहकी-शोबुलईमान

१०. अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० का बयान है कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि उस (अल्लाह) की कसम जिस के हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं कि ‘मोमिन’ (ईमान वाले) की मिसाल सोने के टुकड़े की-सी है जिस के मालिक ने उसे तपाया फिर न तो उस में कोई परिवर्तन हुआ और न उस में कोई कमी हुई। उस (अल्लाह) की कसम जिस के हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं ‘मोमिन’ की मिसाल उस मधु-मक्खी की-सी है जिस ने उत्तम पुष्प का रस चूसा और उत्तम मधु बनाया। और जिस शारवा पर बैठी न तो उसे तोड़ा और न खराब किया ^{१२}।

—अहमद

११. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : यह बात मनुष्य के इस्लाम के सौन्दर्य में से है कि वह व्यर्थ बातों को छोड़ दे ^{१३}।

—इब्नमाजा, तिरमिजी, बैहकी-शोबुलईमान

हानि पहुँचाए, लोगों को उस से किसी प्रकार का भय न हो।

११. अर्थात् वास्तव में ‘जिहाद’ उसका है जो अपनी वासनाओं और इच्छाओं पर क़ाबू पाये और उन्हें अल्लाह के आदेशों के अधीन रखे। अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन से कभी विमुख न हो। मालूम हुआ कि ‘जिहाद’ का अवसर रण-क्षेत्र ही में नहीं बल्कि प्रत्येक समय इसका अवसर रहता है।
१२. अर्थात् ‘मोमिन’ (ईमान वाला) असली सोने की तरह खरा होता है तपाने से न तो उसके रंग में कोई अन्तर आता है और न भार में। ‘मोमिन’ व्यक्ति का आहार शुद्ध होता है। भलाई और कल्याणकारी बातों के अतिरिक्त और कोई चीज़ उस से व्यक्त नहीं होती। वह किसी को हानि नहीं पहुँचाता।
१३. मनुष्य का ‘दीन’ और ‘ईमान’ जितना अधिक पूर्ण होगा उतना ही अधिक उस के स्वभाव और कर्म में शुद्धता और सौन्दर्य पाया जायेगा। आदमी यदि व्यर्थ बातों को छोड़ देता है, तो वह अपने इस अमल से इस बात का प्रमाण सचित

१२ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि बहुत कम ऐसा हुआ कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमें 'खुतबा' (भाषण) दिया हो और यह न कहा हो कि उस व्यक्ति में 'ईमान' नहीं जिस में अमानतदारी नहीं और उस में 'दीन' (धर्म) नहीं जो प्रतिज्ञा का पाबन्द नहीं १४।

—बैहकी-शोबुलईमान

१३. अम्र बिन अबसा रजि० कहते हैं कि मैं ने कहा . हे हल्लाह के रसूल ! 'इस्लाम' क्या है ? कहा . सुभाषता और भोजन कराना । मैं ने कहा . 'ईमान' क्या है ? कहा . धैर्य और उदारहृदयता । मैं ने कहा : कौन सा 'इस्लाम' उत्तम है ? आप ने कहा (उस का) जिस की

करता है कि उसकी दीनी हालत अच्छी है । 'दीन' व 'ईमान' की मांगों को पूरा करके मनुष्य वास्तव में अपनी प्रकृति ही की मांगों को पूरा करता है । और अपने 'इस्लाम' को ठीक रखने का अर्थ इसके सिवा कुछ और नहीं है कि इस तरह मनुष्य अपने जीवन को सँवारता और उसे अच्छे-से-अच्छा बनाने की कोशिश करता है । अपने इस्लाम की सुन्दरता को नष्ट करके मनुष्य वास्तव में अपने जीवन को असुन्दर करता है । अल्लाह की बन्दगी और उसके आदेशों के पालन में ही मनुष्य को वास्तविक और सुखद जीवन प्राप्त होता है । मनुष्य को अल्लाह के आदेशों के पालन में वास्तविक उत्तम एवं पवित्रतम जीवन प्राप्त होता है । "मनुष्य केवल रोटी से जीवित नहीं रहता बल्कि उस 'कलमा' (Word) से जीवित रहता है जो प्रभु की ओर से आता है" (लूका की इजील ११ . १३) । अर्थात् अल्लाह के आदेश ही मनुष्य को जीवन प्रदान करते हैं । यह बात कुरआन में इन शब्दों में कही गई है . "क्या जो मुरदा हो फिर हमने उसे जीवन प्रदान किया हो जिसे लेकर वह लोगो में चलता-फिरता हो, क्या उसकी तरह होगा जो अँधेरो में हो उन से निकलने वाला न हो ।" कुरआन की इस आयत में 'ईमान' को जीवन और अल्लाह के आदेशों के अनुपालन को प्रकाश लेकर चलने की सज्ञा दी गई है । दोनों चीजों में गहरा सम्बन्ध है ।

१४ अर्थात् यह मनुष्य के 'ईमान' ही की मांग है कि वह अमानतदार हो और अपने वचनों का पक्का हो । विश्वासघात, छल-कपट आदि का वास्तव में ईमान के साथ कोई जोड़ नहीं है । ऐसे व्यक्ति का 'ईमान' अत्यन्त कमजोर और अपूर्ण है जो अल्लाह पर और जीवन की उन वास्तविकताओं पर विश्वास भी रखता हो जिनकी सूचना अल्लाह के रसूल ने दी है और इसी के साथ न उसे अमानत का खयाल रहता है और न वह अपने वचनों का आदर करता है ।

जवान और हाथ से मुसलमान बचे रहे। मैं ने कहा . कौन सा 'ईमान' उत्तम है ? कहा : उत्तम स्वभाव ^{१५}। मैं ने कहा . कौन सी 'नमाज' उत्तम है ? जो दीर्घ विनयभाव एवं दासता लिए हुये हो ^{१६}। मैं ने कहा : कौन सी 'हिजरत' उत्तम है ? कहा उन चीजों को छोड़ देना जिन को तेरा 'रब' नापसन्द करता हो। उस के बाद मैं ने कहा . कौन सा 'जिहाद' उत्तम है ? कहा उस का जिम का घोड़ा ('जिहाद' में) मारा जाये और स्वयं उस का भी रक्त बहाया जाये। मैं ने कहा . कौन सी वेला उत्तम है ? आप ने कहा रात्रि का अन्तिम अर्ध भाग। —अहमद

१४. अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा . लज्जा और कम श्रोनता 'ईमान' की दो शाखाएँ हैं और दुर्वचन और वाचालता 'निफाक' (कपटाचार) की दो शाखाएँ हैं ^{१७}।

--तिरमिजी

१५. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि वह व्यक्ति 'मोमिन' (ईमान वाला) ही नहीं जो पेट भर खाये और उस का पड़ोसी उस के पहलू में भूखा रह जाये ^{१८}।

—अहमद, वैहकी

१५. दूसरी 'हदीसों' की तरह यह 'हदीस' भी बताती है कि 'इस्लाम' और 'ईमान' का सम्बन्ध मनुष्य के केवल विचार और दृष्टिकोण से ही नहीं है बल्कि मनुष्य के व्यावहारिक जीवन ने भी उनका गहरा सम्पर्क है। मनुष्य का 'दीन' (धर्म) और उसका 'ईमान' उनके स्वभाव एवं चरित्र के माध्यम से प्रदर्शित होता है। मनुष्य का 'दीन' और 'ईमान' यदि ठीक है, तो उसका जीवन उत्तम चरित्र एवं स्वभाव का प्रतीक होगा।

१६. अर्थात् वह 'नमाज' जिसमें देर तक बन्दा अल्लाह के सामने खड़ा रहे, जिसमें देर तक कुरआन पढ़ा जाये और जिसमें विनयभाव और ईश-भय भी अधिक पाया जाये जो नमाज का वास्तविक तत्व है।

१७. 'ईमान' वाला व्यक्ति कभी दुर्भाषी और वाचाल नहीं हो सकता, दुराचार, अश्लीलता, असभ्यता आदि बातें 'मुनाफिक' (कपटाचारी) को ही शोभा दे सकती है। लज्जा, दूसरों का आदर, बात-चीत और व्यवहार में सभ्यता और मर्यादा का ध्यान रखना ये 'ईमान' के लक्षण हैं। 'ईमान' वास्तव में समस्त मानवीय विशेषताओं और गुणों का सार है। इस से वञ्चित रहना विनाश के सिवा और कुछ नहीं है।

१८ 'ईमान' का मनुष्य के स्वभाव और चरित्र से गहरा सम्पर्क है। यह मनुष्य के

१६ हजरत इब्न मसऊद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा सर्वोच्च अल्लाह ने तुम्हारे बीच स्वभाव को इस प्रकार विभक्त किया है जिस प्रकार उस ने तुम्हारी आजीविका को तुम्हारे बीच विभक्त किया है। सर्वोच्च अल्लाह दुनिया उस व्यक्ति को भी देता है जिस से वह प्रेम करता है और उसे भी जिस से प्रेम नहीं करता किन्तु 'दीन' (धर्म) केवल उस को देता है जिस से वह प्रेम करता है ^{१६}। तो जिस किसी को अल्लाह ने 'दीन' दिया है उस से उसे प्रेम है। और कसम है उस (अल्लाह) की जिस के हाथ में मेरे प्राण है बन्दा उस समय तक मुस्लिम नहीं होता जब तक उस का दिल और उस की ज़बान मुस्लिम न हो ^{१७}। और वह उस समय तक 'मोमिन' नहीं होता जब तक कि उस का पड़ोसी उस की बुराईयों से सुरक्षित न हो।

—अहमद, बैहकी

१७ हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अबूजर रजि० से कहा : हे अबूजर ! 'ईमान' की कौन सी शाखा अधिक मजबूत है ? उन्हो ने कहा . अल्लाह और उस के रसूल ज्यादा जानते है। आप ने कहा . लोगो से अल्लाह के लिए मित्रता का सम्बन्ध रखना, अल्लाह के लिए प्रेम करना और अल्लाह के लिए द्वेष रखना ^{१८}।

—बैहकी-शोबुलईमान

ईमानी तकाज़ो के सर्वथा प्रतिकूल है कि वह स्वयं तो पेट भर कर खाये परन्तु उसके पहलू ही में उसका पड़ोसी भूखा रह जाये।

१९. इस 'हदीस' में 'दीन' (धर्म) शब्द स्वभाव के स्थान पर प्रयुक्त हुआ है इस से मालूम हुआ कि 'दीन' वास्तव में स्वभाव ही का दूसरा नाम है। 'दीन' और अच्छा स्वभाव जिसे मिल जाये समझ लीजिए उस पर अल्लाह की विशेष कृपा है।

२० मनुष्य का इस्लाम उसी समय पूर्ण होता है जब कि उस का दिल और उस की ज़बान भी मुस्लिम हो, उस के दिल में अल्लाह की बन्दगी और उस के प्रेम-भाव के सिवा कोई दूसरा भाव न हो, उसकी ज़बान से सत्य के सिवा कोई दूसरी बात न निकलती हो, उस की ज़बान अल्लाह की बड़ाई और उस की प्रभुता को स्वीकार करती हो और दिल असत्य भावनाओं और विचारों से सर्वथा निर्लिप्त हो

२१ मालूम हुआ कि 'ईमान' का स्वभाव, चरित्र और मनुष्य के व्यावहारिक जीवन

१८. हजरत अबूहुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लज्जा 'ईमान' का एक हिस्सा है और 'ईमान' का स्थान 'जन्नत' है और निर्लज्जता बदी में से है और बदी का ठिकाना ('जहन्नम' की) आग है ^{२२}। —अहमद, तिरमिजी

१९. हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : लज्जा और 'ईमान' को एक साथ रक्खा गया है। इन में से जब एक उठाया जाता है, तो दूसरा भी उठा लिया जाता है। इब्न अब्बास रजि० की 'रिवायत' में है कि जब इन में से एक छीन लिया जाता है, तो दूसरा भी उसी के साथ जाता रहता है ^{२३}।

—बैहकी-शोबुलईमा

से गहरा सम्बन्ध है। 'ईमान' को यदि मनुष्य के नैतिक एवं व्यावहारिक जीवन में अलग कर दिया जाये तो वह केवल निष्प्राण कल्पना होकर रह जायेगा।

२२. 'ईमान' वालों का शाश्वत निवास स्थान 'जन्नत' और बुरे लोगों का ठिकाना 'जहन्नम' है। लज्जा 'ईमान' की अनिवार्य मांग है। जिस व्यक्ति को अपने 'ईमान' की अनिवार्य मांग है। जिस व्यक्ति को अपना 'ईमान' प्रिय हो उसके लिए आवश्यक है कि वह निर्लज्जता और अश्लील कर्मों से दूर रहे क्योंकि इस से यही नहीं कि 'ईमान' को आघात पहुँचता है बल्कि इस की भी आशंका रहती है कि कहीं उस का 'ईमान' ही न छिन जाये।

२३. अर्थात् जिस प्रकार यह आवश्यक है कि जहाँ दीप हो वहाँ प्रकाश भी हो उसी प्रकार लज्जा और 'ईमान' में भी गहरा सम्बन्ध है। इसी तरह यदि 'ईमान' नहीं तो किसी लज्जा की आशा करनी मूर्खता है। इसी तरह यदि किसी के पास लज्जा नहीं तो समझ लेना चाहिए कि या तो वह 'ईमान' से वंचित है या फिर उसका 'ईमान' इतना निर्बल है कि जीवन में वह कोई प्रभावकारी शक्ति सिद्ध नहीं हो सकता।

ईमान को प्र रणाएँ

عَنْ جَابِرٍ قَالَ قَالَ رَجُلٌ لِلنَّبِيِّ ﷺ يَوْمَ أُحُدٍ أَرَأَيْتَ
 إِنْ فُتِلْتُ فَأَبْنَيْتَ أَنَا، قَالَ: فِي الْجَنَّةِ فَلَمْ تَمُتْ فِي سِدِّهِ شَمًّا
 قَاتِلَ حَقِّ قَتِيلٍ ————— بخلافه مسلم

१. हजरत जाविर रजि० से उल्लिखित है कि उहुद (की लड़ाई) के दिन एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से कहा : कहिए यदि मैं मारा जाऊँ तो कहाँ हूँगा ? आप ने कहा 'जन्नत' में। यह सुन कर उस ने अपने हाथ की खजूरे फेक दी फिर लडा यहाँ तक कि वीरगत को प्राप्त हुआ १।
 —बुखारी, मुस्लिम

२. हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जन्नत' तलवारों की छाया तले है ३। यह सुनकर एक शीणस्थिति व्यक्ति खडा हुआ और कहा हे अबूमूसा ! क्या तुम ने स्वयं अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना है ? उन्होंने ने कहा हाँ। इस के बाद वह अपने साथियों के पास आया और कहा : मेरा सलाम लो। फिर उस ने अपनी तलवार का म्यान तोड कर फेक दिया और अपनी तलवार ले कर शत्रु पर आक्रमण कर दिया और लडा यहाँ तक कि शहीद हो गया ४।
 —मुस्लिम

१ अर्थात् मैं कहाँ जाऊँगा, मेरा ठिकाना कहाँ होगा ?

२ यह सुनने के पश्चात् कि यदि वह सत्य और असत्य के युद्ध में सत्य की ओर से लडता हुआ मारा गया, तो 'जन्नत' में जायेगा, वह रण-भूमि में कूद पडा और लडता हुआ शहीद हो गया। उसके हाथ में कुछ खजूरे थीं उनको उस ने पहले ही फेक दिया था। उसे जिस चीज की आशा दिलाई गई थी उस ने उसे खजूरो के रसास्वादन से बेपरवा कर दिया था।

३ अर्थात् उन लोगों को 'जन्नत' अवश्य मिलेगी जो अल्लाह की राह में लडे और अपनी तलवारों और हथियारों से असत्य का डट कर मुकाबला करे चाहे इस युद्ध में उन्हें अपने प्राण तक निछावर करने पडे।

४. जब उस व्यक्ति को विश्वास हो गया कि यह सूचना नबी सल्ल० ने दी है कि 'जन्नत' तलवारों की छांव में है तो इसके सत्य होने में उसे कोई सन्देह नहीं

३. हज़रत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल और आपके 'असहाब' (सहचरवृन्द) निकले^५ यहाँ तक कि वे 'बद्र' में 'मुशिरको' से (अनेकेश्वरवादियों) से पहले जा पहुँचे फिर 'मुशिरक' लोग भी आ गये तो आप ने (अपने साथियों से) कहा : उस 'जन्नत' के लिए खडे हो जाओ जिस की चौड़ाई आकाशों और घरती की चौड़ाई के समान है^६ । उमैर बिन हुमाम बोले खूब खूब ! आप ने कहा तुम ने ये शब्द क्यों कहे ? उन्हो ने कहा अल्लाह की कसम हे अल्लाह के रसूल ! केवल इस आशा से कि शायद 'जन्नत' वालो में मैं भी हो जाऊँ । आप ने कहा तुम उन्ही 'जन्नत' वालो में से हो । उल्लेखकर्त्ता का बयान है कि इस के

रहा । फिर तो कोई भी चीज कर्तव्य पालन के मार्ग में बाधक न बन सकी । वह शत्रुओं पर दूट पड़ा और अपने प्राण अल्लाह के मार्ग में निछावर कर दिये ।

५ यह बद्र-मग़ाम के अवसर की बात है जैसा कि आगे के शब्दों से स्पष्ट होता है । बद्र की लड़ाई शवान सन् २ हि० में हुई है । मुसलमानों की सेना में ३१६ सैनिक थे, मुकाबले में एक हजार की सेना थी । मुसलमानों के पास लड़ाई का सामान भी ठीक तौर से न था । नबी सन्न० परिस्थिति को समझते थे । आपने अपने दोनों हाथ फैला दिये और उच्च स्वर से प्रार्थना करने लगे "हे अल्लाह ! तूने जो वादा मुझ से किया था उसे पूरा कर, हे अल्लाह ! यदि तू 'इस्लाम' के इस छोटे से गरोह को नष्ट कर देगा, तो इस घरती पर तेरी पूजा और वन्दगी न होगी ।" आप निरन्तर इसी तरह हाथ फैलाये हुये उच्च स्वर में प्रार्थना करते रहे यहाँ तक कि आपके कन्धों से चादर नीचे गिर पड़ी ।

—मुस्लिम-उल्लेखकर्त्ता उमर बिन सत्ताब रजि०

इस युद्ध में अल्लाह की सहायता से मुसलमानों की विजय हुई । 'काफ़िरो' और 'मुशिरको' को मुख की खानी पड़ी । वे बुरी तरह परास्त हुये और उनके सत्तर सरदार मारे गये ।

६ आपने मुसलमानों को 'जिहाद' के लिए उभारा और उन्हें बताया कि इस युद्ध के लिए बढ़ना वास्तव में अल्लाह की उस विस्तृत 'जन्नत' की ओर बढ़ना है । कुरआन मजीद में भी कहा गया है बढो अपने 'रब' की क्षमा और उस 'जन्नत' की ओर जिसका विस्तार आकाशों और घरती के विस्तार के सदृश है, जो उन लोगों के लिए तैयार की गई है जो अल्लाह पर और उसके 'रसूलों' पर 'ईमान' लाए ।"

—अल-हदीद आयत २१ ।

बाद उमैर बिन हुमाम ने अपने निषग से कुछ खजूरें निकाली और उन्हें खाने लगे। फिर बोले : यदि मैं इतनी देर तक जीवित रहा कि अपनी खजूरों को खा लूँ तो यह तो दीर्घ जीवन होगा। (हज़रत अनस) कहते हैं कि यह कह कर जो खजूरे उन के पास थी फेंक दी और 'मुशिरको' (अनैकेश्वरवादियों) से लड़ने लगे यहाँ तक कि ग़हीद हो गये। —मुस्लिम

७. अर्थात् वे इतने विलम्ब का भी सहन न कर सके कि खजूरों को खा कर दुश्मन के मुकाबले में निकलें। 'जन्नत' की कामना में ससार में थोड़ी देर रुकना उन्हें असह्य प्रतीत हुआ। इतना विलम्ब कि खजूरें खा सकें उन्हें एक दीर्घ आयु जैसा लगा। अतएव उन्होंने खजूरें फेंक दी और 'मुशिरको' पर दृढ़ पड़े और अल्लाह के मार्ग में वीरगति को प्राप्त हुये।

यहाँ केवल कुछ 'रिवायतो' का उल्लेख किया गया जिनसे अनुमान किया जा सकता है कि जब विश्वास दिलो में घर जाता है, तो मनुष्य की क्या दशा होती है। 'सहाबा' रजि० के इस प्रकार के कितने ही वृत्तान्त हैं जिनसे पता चलता है कि उन्होंने 'ईमान' का रसास्वादन किया था। मनुष्य को 'ईमान' प्राप्त हो और जीवन का वास्तविक उद्देश्य उसके समक्ष हो, तो उसकी भावनाएँ साधारण लोगो से अत्यन्त भिन्न हो जाती है। जिस परिश्रम के कार्य को लोग बोझ समझते हैं उसे वह जीवन की प्राप्ति समझता है और उसके लिए अत्यन्त भावुक हो जाता है। उद्देश्य से हार्दिक एवं विमुग्धतापूर्ण सम्बन्ध का प्रदर्शन यो तो ज्ञान एवं विद्या, और व्यापार आदि के लोक में भी हुआ है, परन्तु इसका सबसे गढ़ कर प्रदर्शन धर्म एवं चरित्र-लोक में हुआ है। जिन लोगो ने धर्म और नैतिकता को जीवन का उद्देश्य समझा और अल्लाह के वादे पर 'ईमान' लाए उनका जीवन बदल गया। धूल और रक्त से निर्मित मानव किसी और लोक का प्राणी मालूम होने लगा। उन्होंने अपने चरित्र से ससार को वह प्रकाश प्रदान किया जिसकी ससार को हर क्षण आवश्यकता है। उनके 'ईमान' ने उन्हें ऐसा स्वतन्त्र, आनन्द और परितोष प्रदान किया था जिसकी कल्पना से आत्माएँ विमुग्ध हो जाती है। तबूक-सग्राम के अवसर पर हज़रत अबू बक्र सिद्दीक रजि० अपना सारा माल ला कर नबी सल्ल० के चरणों पर निछावर कर देते हैं। नबी सल्ल० के पूछने पर कि घर वालों के लिए क्या छोड़ आएँ हो ? कहते हैं "घर पर अल्लाह और 'रसूल' को छोड़ा है।" मतलब यह कि हमारे घर की आबादी धन-दौलत से नहीं, अल्लाह और उसके रसूल से है। अल्लाह और उसके रसूल से कुछ बचा कर रखना हमारे लिए सम्भव ही नहीं। जिस चीज ने हज़रत सिद्दीक

रज़ि० को इतना ऊँचा उठाया था वह 'ईमान' की उच्चतम प्रेरणाओं की चेतना थी। हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० उनके बारे में कहते हैं : "अबू बक्र रज़ि० ने नमाज़ और रोज़े की अधिकता के कारण अग्रसरता प्राप्त नहीं की बल्कि एक चीज़ के कारण जो उनके मन में घर कर गई।"

हज़रत खुवैव रज़ि० को उनके शत्रु कत्ल करने के लिए 'हरम' की सीमा से बाहर ले गए तो उन्होंने दो 'रकअत' नमाज़ पढ़ने की इजाजत चाही। नमाज़ अदा करने के बाद कहा मन तो चाहता था कि ढ़ेर तक नमाज़ पढ़ूँ लेकिन तुम समझते कि मैं मृत्यु से डर गया। फिर उन्होंने कविता पढ़ी जिस के एक छन्द का अर्थ यह है "जब मैं 'इस्लाम' के लिए कत्ल किया जा रहा हूँ तो मुझे इसकी चिन्ता नहीं कि मैं किस पहलू पर कत्ल किया जाता हूँ। यह जो-कुछ है वस अल्लाह के लिए है। यदि वह चाहे तो इन टुकड़ों पर बरकत उतारेगा।"

हज़रत खुवैव रज़ि० अल्लाह की राह में प्राण निछावर करके अपने बाद आने वालों को मजिल का पता दे गये। उनके पदचिह्नों पर चलने वाले सफल हैं चाहे वे हसनुल बन्ना हो या अब्दुल कादिर ऊदह या सैयद कुतुब और उनके साथी। जीवन का अभिलाषी प्रत्येक व्यक्ति है। अल्लाह जिसे जीवन प्रदान करना चाहता है उसे यो जीवन प्रदान करता है। तुच्छ उद्देश्य तो मनुष्य को विनष्ट कर डालते हैं। उनके पीछे पड़ कर मनुष्य चाहे जो-कुछ प्राप्त कर ले किन्तु व्यक्तित्व और आत्मसम्मान नाम की कोई चीज़ उस के पास नहीं रह सकती। व्यक्तित्व और चरित्र के अधिकारी तो वही लोग हैं जो उच्च उद्देश्य के लिए जीने और उसके लिए मरने का साहस करते हैं। दुर्गों पर विजय प्राप्त करना और शत्रुओं को परास्त करना सरल है किन्तु मन की इच्छाओं को नियंत्रित रखना और स्थायी रूप से अपने-आपको एक मार्ग पर लगा देना अत्यन्त कठिन कार्य है। लेकिन यह मुश्किल उन लोगों के लिए आसान हो जाती है जो ऊँचे सोच-विचार के अधिकारी और किसी मजिल के जिज्ञासु होते हैं। 'ईमान' की शक्ति उनकी है तो वह हर चीज़ पर काबू पा लेती है। मनुष्य यदि उस स्थान को अपने सामने रखे जो मानवीय कल्याण का सबसे उच्च स्थान है, तो इससे उसे चरित्र-बल प्राप्त होता है और उसके सकल्प में दृढ़ता आ जाती है। जब हमारी निगाह मजिल के सिवा दूसरी ओर बहकी हो और हमारा दिल वास्तविक उद्देश्य के अतिरिक्त कहीं और अटका हुआ हो तो सत्य की ओर हमारा एक कदम भी उठाना कठिन है। मजिल से दृष्टि न हटे और मनुष्य 'ईमान'

मोमिन का चित्र

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ أَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: الْمُؤْمِنُ مَالِفٌ وَلَا حَرَّ
وَيَمِينٌ لَا مَالِفٌ وَلَا يُؤْلَفُ ————— احمد، السيق في سبل الامان

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'मोमिन' (ईमान वाला व्यक्ति) प्रेम एव स्नेह का आगार होता है। उस व्यक्ति में कोई भलाई नहीं जो न किसी से प्रेम करे और न जिस से कोई प्रेम करे १।
—अहमद, बैहकी-शोबुलईमान

२ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'मोमिन' भोला-भाला और सुशील होता है २। और दुस्साहसी एव अवज्ञाकारी व्यक्ति चालाक, कृपण और दुराचारी होता है।
—अहमद, तिरमिजी, अबूदाऊद

३, हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'ईमान' में सब से पूर्ण 'मोमिन' वे लोग हैं जो स्वभाव में सब

का रसास्वादन कर चुका हो, तो वह उस चीज का आज ही अभिलाषी हो जाए जिसकी अभिलाषा वह कल मृत्यु के पश्चान् करेगा। मोमिन की निगाह सतही चीजों पर नहीं टिकती उसे उन चीजों की जिज्ञासा होती है जो अपना स्थायी मूल्य (Value) रखती हैं।

१ 'मोमिन' को सब से सहानुभूति होती है। वह स्वार्थी नहीं होता। उमका हृदय विशाल और उसकी दृष्टि विस्तृत होती है। उसको सभी से प्रेम होता है। सारे मनुष्य उसकी दृष्टि में ईश्वर का परिवार है। ऐसा व्यक्ति स्वभावतः सबका प्रिय बन जाता है। वह व्यक्ति जिसको न किसी से प्रेम और सहानुभूति हो और न दूसरों को ही उस से प्रेम हो 'ईमान' के आस्वादन से अनभिज्ञ होता है। उसका अस्तित्व ही निरर्थक है। वह एक ऐसे पुष्प के समान है जिसमें न कोई रंग है और न गन्ध।

२. 'मोमिन' सज्जन और सरल स्वभाव का होता है। वह बुराईयों और लोगों के दोषों की टोह में नहीं रहता। वह अज्ञानता के कारण नहीं बल्कि अपनी सुशीलता के कारण लोगों के दोषों पर दृष्टि नहीं डालता बल्कि क्षमा से काम लेता है। छल-कपट और झूठ या विश्वासघात से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है।

से अच्छे है ३।

—अबूदाऊद, दारमी

४. हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' का पेट भलाई से कभी नहीं भरता वह उसे सुनता रहता है यहाँ तक कि 'जन्नत' में पहुँच जाता है ५। —तिरमिजी

५ हजरत सुहैब रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' का अजीब हाल है उस के सभी कार्य अच्छे हैं और यह विशेषता केवल 'मोमिन' की है। यदि उसे प्रसन्नता प्राप्त हो तो (अल्लाह के आगे) कृतज्ञता दिखलाये यह उस के लिए अच्छा है और जब उसे कोई तकलीफ पहुँचे तो धैर्य से काम ले यह भी उस के लिए अच्छा है ५।

—मुस्लिम

६. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' अल्लाह की दृष्टि में कतिपय 'फिरिश्तो' से

३ 'ईमान' का मनुष्य के स्वभाव और कर्म से वह सम्बन्ध है जो सम्बन्ध बीज और वृक्ष में होता है। 'ईमान' से एक विशेष प्रकार के स्वभाव और चरित्र का निर्माण होता है, फिर इस से इस्लामी जीवन का निर्माण सम्भव होता है। हम किसी व्यक्ति के दिल में झाँक कर यह नहीं मालूम कर सकते कि उसमें 'ईमान' की मात्रा क्या है? मनुष्य के 'ईमान' और धारणाओं के विषय में हमें जो-कुछ अनुमान होता है वह उसकी व्यावहारिक नीति और उसके स्वभाव और चरित्र को देखकर ही होता है। यदि किसी 'मोमिन' का स्वभाव अच्छा है, तो हम कह सकते हैं कि उसके 'ईमान' की दशा अच्छी है।

४ मतलब यह है कि 'मोमिन' नेकी और भलाई और ज्ञान और तत्वदर्शिता (*Wisdom*) की बातों से कभी तृप्त नहीं होता। वह ज्ञानार्जन में लगा रहता है यहाँ तक कि उसकी आयु पूरी हो जाती है और ज्ञान और कर्म के कारण वह 'जन्नत' में प्रवेश पा लेता है।

५. कृतज्ञता प्रकाशन और धैर्य दोनों ही मनुष्य के चरित्र की महानता के प्रतीक होते हैं। 'मोमिन' खुशी की हालत में यदि अपने 'रब' को धन्यवाद देता है, तो वह सफल है। इसी प्रकार सकट और मुसीबत में यदि वह अधीर नहीं होता बल्कि धीरज से काम लेता है, तो उस समय भी वह सफल है। 'मोमिन' के जीवन से जो चीज़ अभीष्ट है वह यही कि वह विभिन्न परिस्थितियों में उत्तम नीति अपनाए और उसके जीवन से उच्च चरित्र का प्रदर्शन हो। धैर्य और कृतज्ञता प्रकाशन से उच्च चरित्र ही का प्रदर्शित होता है।

भी श्रेष्ठ है १।

—इब्नमाजा

७ हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मोमिन' ताना देने वाला नहीं होता, न वह लानत करने वाला होता है, न अश्लील वाते बकता है और न वाचाल होता है १।

—तिरमिजी, बैहकी

८. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उस सत्ता की जिस के हाथ में मेरे प्राण हैं, बन्दा उस समय तक 'मोमिन' नहीं होता जब तक कि अपने भाई के लिए उसी चीज को पसन्द न करे जिसे वह अपने लिए पसन्द करता है ५।

—बुखारी, मुस्लिम

९. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह की कसम वह 'ईमान' नहीं रखता, अल्लाह की कसम वह 'ईमान' नहीं रखता । कहा गया . हे अल्लाह के रसूल ! कौन व्यक्ति 'ईमान' नहीं रखता ? कहा वह व्यक्ति जिस का पड़ोसी उस की बुराइयों से सुरक्षित न हो ६।

६. मनुष्य को अल्लाह ने ऊँचा पद प्रदान किया है । 'फिरिस्तो' तक को उसकी सेवा में लगाया । सामान्य दृष्टि से 'ईमान' वाले मुस्लिम बन्दो का दर्जा 'फिरिस्तो' से बढ़कर है । साधारण मोमिनो का दर्जा भी अल्लाह की दृष्टि में कम नहीं है और 'नबियो' का दर्जा तो महान एव श्रेष्ठ 'फिरिस्तो' से भी बड़ा हुआ है ।

७ मतलब यह है कि 'मोमिन' का जीवन अत्यन्त पवित्र होता है । वह स्वभाव एव चरित्र के उच्च पद पर होता है ।

८. 'मोमिन' व्यक्ति की एक मौलिक विशेषता यह होती है कि वह उदार होता है । उसकी दृष्टि सकीर्ण नहीं होती । वह दूसरो के लिए भी वही बात पसन्द करता है जो उसे स्वयं अपने लिए पसन्द है । वह यदि अपना अहित नहीं चाहता । आज मुसलमान यदि अपने 'नबी' की इसी शिक्षा का पालन करने लग जाँएँ तो कितने ही झगडो और कलह से छुटकारा मिल जाये । इसलिए कि अधिकतर झगडों और बिगाड के पीछे स्वार्थ, सकीर्ण दृष्टिता और अगम्भीरता ही काम करती है ।

९. अर्थात् उस व्यक्ति का 'ईमान' से कोई सम्बन्ध नहीं है वह व्यक्ति अपने 'ईमान' के दावे में झूठा है जिसकी बुराई से उसका पड़ोसी तक सुरक्षित नहीं । उस 'ईमान' का अल्लाह के यहाँ क्या मूल्य हो सकता है जिसका कर्म

इस्लाम की विशेषताएँ

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ مِنْ حُسْنِ إِسْلَامِ
الْمَرْءِ تَرْكُهُ مَا لَا يَعْنِيهِ ————— تِرْمِذِي، ابْنُ حَكَمٍ

१. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि आदमी के 'इस्लाम' की एक खूबी यह है कि वह व्यर्थ बातों को छोड़ दे ।
—तिरमिजी, इब्नमाजा

२ हजरत अबू हुरैरा रजि० नबी सल्ल० से रिवायत करते हैं कि आप ने कहा जब तुम में से कोई व्यक्ति अपने 'इस्लाम' में खूबी और सौन्दर्य पैदा कर लेता है, तो जो नेकी वह करता है वह उस के लिए दस गुना से सात सौ गुना तक लिखी जाती है और जो बुराई करता है

से कोई नाता ही दीख नहीं पड़ता । उस वृक्ष को वृक्ष कहना ही व्यर्थ है जिसमें हरियाली नाममात्र को भी नहीं पाई जाती । उस दीप को दीप कौन कहेगा जो न स्वयं प्रकाशमान हो और न अपने वातावरण को प्रकाशित कर सके ।

१ इस्लाम वास्तव में हमारे जीवन को सँवारता और उसे सौन्दर्य और निर्माल्य से सुसज्जित करता है । यह 'इस्लाम' की विशेषता है कि मनुष्य व्यर्थ कामों से दूर रहे और अपने समय को अच्छे कामों में लगाये । कोई व्यक्ति यदि अपने समय को व्यर्थ कामों में नष्ट करता है, तो इसका अर्थ यह है कि या तो वह 'इस्लाम' से बिल्कुल अपरिचित है या फिर 'इस्लाम' को अभी वह पूर्ण रूप से अंगीकृत नहीं कर सका है । 'इस्लाम' तो मानव-जीवन का उत्तम उपयोग सचित करता है । उसकी उपेक्षा विवेक और 'ईमान' के प्रतिकूल है ।

मालिक और अहमद ने इसे अली बिन हुसैन से रिवायत की है ।
तिरमिजी और बेहकी ने दोनों से रिवायत की है ।

२ मतलब यह है कि जब कोई व्यक्ति अपने 'ईमान' और 'इस्लाम' को सँवार लेता है, तो उसकी एक-एक नेकी का दर्जा बढ़ जाता है । दुनिया में भी उस की नेकियों की बरकतें बढ़ जाती हैं और 'आमाल नामे' (कर्मपत्र) में भी एक एक नेकी दस गुना से लेकर सौ गुना तक अंकित की जाती है । कर्म के पीछे जितनी अधिक हृदय की शुद्धता काम कर रही होगी उतना ही अधिक उसका दर्जा और महत्व बढ़ता चला जायेगा । कभी समय पर जरूरत का एहसास भी एक नेकी को अगणित नेकियाँ बना देता है । फिर नेकी के बढ़ने

वह उतनी ही लिखी जाती है^३। एक 'रिवायत' में है सिवाय इस के कि अल्लाह उसे क्षमा कर दे (तो उतनी बुराई भी नहीं लिखी जाती)।

—बुखारी, मुस्लिम

३ अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब 'काफिर' व्यक्ति ('इस्लाम' कबूल कर लेता है और उस) के 'इस्लाम' में खूबी और सौन्दर्य आ जाता है तो उस की समस्त नेकियाँ जो शिर्क के समय में की गई थी इस्लाम के पश्चात् लिख दी जाती है^४।

—दारकुतनी

४ अब्दुल्लाह इब्न मसऊद से उल्लिखित है कि कुछ लोगो ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा हे अल्लाह के रसूल ! क्या हमारे उन कर्मों के बारे में पकड़ होगी जो हम ने अज्ञान (काल में इस्लाम से पहले) में किये है ? आप ने कहा तुम में से जिस किसी ने 'इस्लाम' में अच्छे

का नियम सात सौ पर समाप्त नहीं हो जाता बल्कि उस से भी अधिक नेकियाँ मिल सकती है । "दस गुना में सात सौ गुना तक" कहकर वास्तव में वरकतो और वृद्धि के नियम की ओर संकेत किया गया है । कुरआन मजीद में सामान्य नियम यह बयान किया गया है "जो नेकी लेकर आयेगा उसको उसका दस गुना मिलेगा" (सूरा अल-अनआम १६०) लेकिन इसी के साथ यह भी कहा गया है "और यदि नेकी हो, तो उसको बढ़ाता है और उसको अपने पास से बड़ा प्रतिदान प्रदान करता है ।" (अन-निसा ४०)

३ कुरआन में भी कहा गया है "और जो कोई बुराई लेकर आया, उसे उसका उतना ही बदला दिया जायेगा और उन पर जुल्म नहीं किया जायेगा ।"

(अल-अनआम १६०)

४ मतलब यह है कि मनुष्य जब सही तौर पर 'इस्लाम' को अपना लेता है, तो उसकी वे नेकियाँ भी नष्ट नहीं होती जो उसने 'कुफ्र' और 'शिर्क' के समय में की होती है, बल्कि वे भी उसके हिसाब में लिख ली जाती है । इसलिए कि अपनी धारणा और कर्म को सँवार कर मनुष्य जहाँ अपने पिछले बुरे कर्मों के दागों से अपने जीवन को स्वच्छ करता है वही उसकी नेक अमली से उसके अच्छे कर्मों को रथायित्व मिल जाता है । सही तौर पर 'इस्लाम' कबूल करने के पश्चात् नेकियों के नष्ट होने का कोई सवाल पैदा नहीं होता । 'इस्लाम' के द्वारा तो नेकियों और भलाइयों को पूर्णता प्राप्त होती है । 'इस्लाम' अच्छे कर्मों के लिए सही और दृढ़ आधार और प्रेरक वस्तु भी संचित करता है ।

कर्म किये उस की तो पकड़ न होगी लेकिन जिस ने बुरे कर्म किए उससे उस के अज्ञान और 'इस्लाम' दोनों समय के कर्मों के बारे में पकड़ होगी ५।

—बुखारी, मुस्लिम

५ हकीम बिन हिजाम रजि० से उल्लिखित है कि उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से कहा है अल्लाह के रसूल ! बताइए वे कर्म जो मैं अज्ञान काल में किया करता था जैसे 'सदका', गुलाम आजाद करना, नातेदारों के साथ अच्छा व्यवहार करना क्या उन का भी प्रतिदान है ? अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम जो नेकियाँ कर चुके हो, उन सब के साथ ही 'ईमान' लाये हो १।

—बुखारी, मुस्लिम, हाकिम-मुस्तदरक

६ अबूसईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जब कोई बन्दा 'इस्लाम' कबूल कर लेता है और उस के 'इस्लाम' में खूबी और सौन्दर्य पैदा हो जाता है, तो जितनी बुराइयाँ वह पहले कर गुजरा था अल्लाह सब क्षमा कर देता है १। और उस के बाद हिसाब यह रहता है कि एक नेकी के बदले में दस नेकियों से सात सौ गुना तक नेकियाँ मिल सकती हैं बल्कि उस

५ 'इस्लाम' कबूल करने के पश्चात् यदि कोई बुरे कर्मों को नहीं छोड़ता, तो इस के बिना और क्या हो सकता है कि अभी उसका आचरण पहले ही जैसा है । जब उसने अपनी नीति ही नहीं बदली, तो फिर वह कौन सी चीज होगी जो उसके दामन को उसके पिछले बुरे कर्मों के धव्यों को धो सके । हाँ यदि कोई सच्चे दिल से 'इस्लाम' कबूल करके अपने को सुधार लेता है । अपने पिछले गुनाहों और दुष्टियों के लिए अल्लाह से क्षमा याचना करता है तो फिर उस का 'इस्लाम' समस्त गुनाहों का 'कफारा' (प्रायश्चित्त) बन जाता है । पिछले गुनाहों की कोई गन्दगी बाकी ही नहीं रहती कि उसकी पकड़ हो सके ।

६ अर्थात् तुम्हें पहले की नेकियों का बदला क्यों न मिलेगा, 'इस्लाम' कबूल करके उन नेकियों को त्याग तो दिया नहीं है कि वे नेकियाँ नष्ट हो जाएँ । 'इस्लाम', कबूल करने का अर्थ तो नेकियों को पूर्णता प्रदान करना ही होता है ।

७ आदमी जब सच्चे दिल से 'इस्लाम' कबूल करता और अपने-आप को 'इस्लाम' के सचि में ढालता है, तो फिर उसे एक नवीन और पवित्र जीवन प्राप्त होता है । पिछले गुनाहों की मलीनता और बुरे प्रभाव जो उसके मन-मस्तिष्क और आत्मा पर पड़े हुये होते हैं मिट जाते हैं और उसे पूर्ण शुद्धता प्राप्त होती है । ईश्वरीय नियम के अनुसार भी उसके पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जाते हैं ।

से भी अधिक, और बुराई के बदले में केवल एक बुराई यह और बात है कि अल्लाह उसे क्षमा कर दे (तो अब बुराई के बदले एक बुराई भी नहीं लिखी जायगी) । —बुखारी

७. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह किसी 'ईमान' वाले पर उस की किसी नेकी के बारे में जुल्म नहीं करता । उस का बदला दुनिया में भी दिया जाता है और 'आखिरत' में भी दिया जाता है, रहा काफिर तो जो नेकियाँ उस ने (जानते-बूझते) अल्लाह के लिए की थी उन का बदला उसे दुनिया ही में दे दिया जाता है यहाँ तक कि जब वह 'आखिरत' में पहुँचता है, तो उस के पास ऐसी कोई नेकी बाकी नहीं रहती जिसका बदला दिया जाए। —मुस्लिम

८. अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : 'मुस्लिम' वह है जिस की जवान और जिस के हाथ से मुसलमान सुरक्षित रहे और 'हिजरत' करने वाला ('मुहाजिर') वह है जो उन बातों को छोड़ दे जिन से अल्लाह ने रोका है । —बुखारी, मुस्लिम

९. अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल ने कहा वृक्षों में एक वृक्ष ऐसा है जिस के पत्ते कभी नहीं झड़ते

८. 'काफिर' और 'मुशिरक' की यदि कुछ नेकियाँ होती हैं तो उनका बदला उसे सासारिक जीवन ही में दे दिया है । यदि किसी कारण उसे ससार में अपनी नेकियों का बदला न मिल सका, तो ज्यादा-से-ज्यादा यह हो सकता है कि उसकी यातना में कुछ कमी कर दी जाए । 'जहन्नम' से छुटकारा दिलाने वाली चीज तो केवल 'इस्लाम' है ।

९. अर्थात् सही अर्थों में 'मुस्लिम' वही है जिसकी जवान या हाथ से किसी मुसलमान को तकलीफ या हानि न पहुँचे ।

१०. अर्थात् 'हिजरत' केवल इसका नाम नहीं है कि मनुष्य अल्लाह के 'दीन' के लिए अपना घरबार छोड़कर किसी दूसरी जगह चला जाए । बुराइयों और उन चीजों को छोड़ देना भी 'हिजरत' है जो अल्लाह को अप्रिय है । यदि कोई अप्रिय बातों को नहीं छोड़ता तो इसका अर्थ यह है कि अभी 'हिजरत' के मूल तत्व और आशय से वह अपरिचित ही है, भले ही वह अल्लाह के मार्ग में अपने घरबार और स्वदेश को छोड़ चुका हो ।

और यही वृक्ष 'मुस्लिम' की मिसाल है। अच्छा बताओ वह कौन सा वृक्ष है? लोगो का ख्याल तो जंगल के वृक्षो की ओर गया, अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० कहते हैं कि मेरे दिल में आया कि यह खजूर का वृक्ष है, लेकिन मुझे अपने बड़ों के सामने बोलते हुये शर्म आई। इस के बाद लोगो ने कहा हे अल्लाह के रसूल! आप ही बताये कि वह कौन सा वृक्ष है? आप के कहा वह खजूर का वृक्ष है^{११}।

—बुखारी, मुस्लिम

१० जैद बिन सलाम से उल्लिखित है कि उन से अबू सलाम ने कहा कि उन से हारिस अशअरी ने बयान किया कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह ने यहया (अ०) को पाँच बातों के बारे में आदेश दिया था कि स्वयं भी उन का पालन करे और 'बनी इसराईल' से कहे कि वे भी उन का पालन करे। यहया (अ०) को इस में (अर्थात् बनी इसराईल से कहने में) कुछ विलम्ब होने लगा, तो ईसा (अ०) ने कहा अल्लाह ने आप को पाँच बातों के बारे में आदेश दिया था कि आप स्वयं भी उन का पालन करे और 'बनी इसराईल' से भी उन का पालन करने को कहे, तो या तो आप उन से कह दीजिए या फिर मैं ही उन से कह दूँ। यहया (अ०) ने कहा कि (आदेश मुझे दिया गया है इस लिए) मुझे भय है कि यदि इस सिलसिले में आप मुझ से अग्रसर रहे, तो कहीं मैं घरती में घँसा न दिया जाऊँ या किसी यातना में ग्रस्त न हो जाऊँ^{१२}। इस के बाद उन्हो ने लोगो को 'बैतुलमकदिस' में एकत्र किया जब वह खूब भर गया और लोग गेलरियों तक बैठ गये, तो कहा अल्लाह ने मुझे पाँच बातों के बारे में आदेश दिया है कि स्वयं भी उन का पालन करूँ और तुम्हे भी उन का पाल करने की ताकीद करूँ। पहली बात यह है कि तुम अल्लाह ही की 'इबादत' करो और किसी

११ अर्थात् जिस प्रकार खजूर का वृक्ष सदैव हरा-भरा रहता है पतझड़ उसके निकट नहीं आती ठीक यही दशा 'इस्लाम' के कारण मुस्लिम की होती है। सदैव वह लोगो को लाभ ही पहुँचाता है। भलाई और बरकत के अतिरिक्त उस से कोई दूसरी चीज प्रकट नहीं होती।

१२ इस से अनुमान लगाया जा सकता है कि नबियो और महान् व्यक्तियों की हृदयगत भावनाएँ कैसी होती हैं। उन्हें अल्लाह की म्हानता का कितना एहसास होता है। वे सदैव अल्लाह से डरते रहते हैं कभी गाफिल नहीं होते।

चीज को उस का सहभागी न बनाओ क्योंकि जो व्यक्ति अल्लाह का सहभागी ठहराये उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति केवल अपने सोने-चाँदी के माल से एक गुलाम खरीदे और उसे बता दे कि देख यह मेरा घर है और यह मेरा कार्य है तो कार्य करना और उजरत मुझे देते रहना। वह कार्य तो करे परन्तु उजरत अपने स्वामी के वजाय किसी और व्यक्ति को दे दे। भला तुम मे कौन यह पसन्द करेगा कि उस का गुलाम ऐसा हो। और यह कि अल्लाह ने तुम्हे 'नमाज' का हुक्म दिया है अतः जब तक 'नमाज' मे रहो इधर-उधर न देखो क्योंकि अल्लाह अपने बन्दे की ओर पूरी तरह मुख किये रहता है, जब तक वह इधर-उधर नहीं देखता^{१३}। और उस ने तुम्हे रोजे का आदेश दिया है। इस की मिसाल ऐसी है जैसे किसी जमात में एक व्यक्ति हो जिस के पास एक थैली हो जिस में कस्तूरी हो और प्रत्येक व्यक्ति को उसकी सुगन्ध अच्छी मालूम होती हो और अल्लाह की दृष्टि में रोजेदार की सुगन्ध कस्तूरी की सुगन्ध से अधिक प्रिय होती हैं^{१४}। और उस ने तुम्हे 'सदके' का आदेश दिया है। उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति को शत्रु ने कैद कर लिया हो और उस के हाथ उस की गर्दन से बाँध दिये हो। और उस की गर्दन मारने के लिए उसे ले जा रहे हों। वह कहे कि मैं अपने प्राण के बदले थोड़ा और बहुत (जो कुछ भी मेरे पास है) सब देता हूँ और इस प्रकार 'फिदया' (मुक्ति प्रतिदान) दे कर उन से अपने प्राण छुड़ा ले^{१५}। और उसने तुम्हे अल्लाह के 'जिक्र' का आदेश दिया

१३ 'नमाज' में इधर-उधर देखने का अर्थ यह है कि बन्दा अल्लाह की ओर अभी पूर्णरूप से प्रवृत्त नहीं हो सका है। ऐसी दशा में अल्लाह की कृपादृष्टि का भागी वह कैसे बन सकता है ?

१४ 'रोजे' से हमें आध्यात्मिक और आशययुक्त जीवन प्राप्त होता है। 'रोजे' को सुगन्ध की उपाधि देना वास्तविकता के सर्वथा अनुकूल है। सुगन्ध भौतिक जगत में एक सूक्ष्म और पवित्रतम वस्तु है। आध्यात्मिक एवं आंतरिक जीवन के लिए इस से उत्तम उपमा क्या हो सकती थी। रोजेदार का अस्तित्व मानो सुगन्ध से सुरभित होता है, परन्तु वह सुगन्ध ऐसी होती है जिसके मुकाबले में ससार की कोई सुगन्ध नहीं लाई जा सकती। कस्तूरी की सुगन्ध भी नहीं लाई जा सकती। कस्तूरी की सुगन्ध भी इसके मुकाबले में तुच्छ है।

१५ 'सदका' से वास्तव में मनुष्य की आत्मा और उसके मन को वास्तविक स्वातन्त्र्य और विकास प्राप्त होता है। 'सदके' के द्वारा मनुष्य की आत्मा

है क्योंकि उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति हो जिस का पीछा शत्रु तेजी से कर रहा हो, यहाँ तक कि यह व्यक्ति (दौड़ते-दौड़ते) किसी दृढ़ दुर्ग के भीतर आ जाए और (उस में आ कर) अपने प्राण को शत्रु से बचा ले। इस प्रकार बन्दा अल्लाह के 'जिक्र' के सिवा किसी प्रकार भी अपने-आप को 'शैतान' से नहीं बचा सकता ^{१६}।

—तिरमिजी

अनुचित बन्धनो और विनाश से मुक्त हो जाती है। भौतिक और वासना, सम्बन्धी लिप्सा से मुक्ति प्राप्त करने का उत्तम उपाय 'सदका' है। 'सदका' के द्वारा मानवीय आत्मा भौतिक बन्धनो एवं वासनाओं से छुटकारा पा लेती है और उसे विकास का अवसर मिलता है। यही बात कुरआन में इन शब्दों में कही गई है “(हे नबी!) तुम उनके मालो में से 'सदका' लेकर उन्हें स्वच्छता प्रदान करो, उसके द्वारा उनकी आत्मा को शुद्ध करके उसके विकसित होने का अवसर दो।” (अत-तौबा : १०३)। अर्थात् वे 'सदका' करेंगे तो उन्हें शुद्धता प्राप्त होगी और इस प्रकार उनकी आत्मा विकसित होगी। घन-दौलत के मोह में अस्त व्यक्ति जीवन के वास्तविक मूल्यों से अपरिचित रह जाता है। इस से बढ़कर दुर्भाग्य की बात और क्या हो सकती है। कुरआन में है : “तो जहाँ तक हो सके अल्लाह का डर रखो, और (उस का हुक्म) सुनो और मानो और खर्च करो कि तुम्हारा भला हो और जो कोई अपने मन के लोभ से बचा रहे, तो ऐसे ही लोग सफलता प्राप्त करने वाले हैं।” (अत-तगाबून . १६) मनुष्य के मन से जब तक कृपणता और लोभ निकल न जाए नैतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से उसे उच्चता प्राप्त नहीं हो सकती। यह बात इजील में इन शब्दों में बयान की गई है : “मैं तुम से सच कहता हूँ कि (कजूस) घनवान का स्वर्ग के राज्य (*The Kingdom of heaven*) में प्रवेश करना कठिन है। और मैं फिर तुम से कहता हूँ कि ऊँट का सूई के नाके से निकल जाना इस से सहज है कि (कजूस) घनवान परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करे।” (मत्ता १९ २३-२४) 'सदका' देने से घन दौलत का मोह मन से निकल जाता है। मनुष्य जीवन के वास्तविक मूल्यों से परिचित होता है। दुनिया और 'आखिरत' की पकड़ और यातना से सुरक्षित रहता है।

१६ इस फितना भरी दुनिया में अल्लाह की याद ही वह सब से मजबूत किला है है जिसमें शरण लेकर मनुष्य 'शैतान' के छल से बच सकता है। जीवन के कोलाहल में अल्लाह को भूलकर मनुष्य कभी भी विनाश से बच नहीं सकता।

११. हजरत ज़द बिन तलहा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : प्रत्येक 'दीन' (धर्म) का एक स्वभाव (प्रकृति एवं गुणा) होता है इस्लाम का स्वभाव लज्जा है ^{१५}। —मालिक

१२. हजरत अबू सईद रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मैं सोया हुआ था, देखा कि लोगों को मेरे समक्ष लाया जा रहा है और वे कुरते पहने हुये थे जिन में से कुछ लोगों के कुरते इतने लम्बे थे जो सीने तक पहुँचते थे और कुछ लोगों के इस से नीचे तक पहुँचे हुए थे। मेरे सामने उमर बिन खत्ताब को लाया गया उनका कुरता इतना लम्बा था कि वे उसे घसीटते हुये चलते थे। लोगों ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! इस का अर्थ आप ने क्या लगाया ? कहा : 'दीन' (धर्म) ^{१६}।

१७. इस हदीस से दो बातें मालूम होती हैं। एक यह कि इस्लाम का सम्बन्ध मनुष्य से अत्यन्त निकट का है। इसीलिए लज्जा को इस्लाम का स्वभाव बताया जो वास्तव में मनुष्य का स्वभाव या गुण होता है। इस्लाम वास्तव में मानव का अपना स्वभाव है। अपने स्वभाव से बढ़कर निकट की वस्तु क्या हो सकती है। दूसरी महत्वपूर्ण बात जो इस हदीस से मालूम होती है वह यह कि इस्लाम की प्रकृति अत्यन्त पवित्र, सुन्दर एवं शुद्ध है। स्वभाव में लज्जा से बढ़कर सुन्दर कौमल और पवित्र स्वभाव क्या हो सकता है।

यह हदीस इब्नमाजा और वैहकी-शोबुल ईमान में अनस रज़ि० और इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है।

१८. इस हदीस से मालूम हुआ कि 'दीन' (धर्म) वास्तव में मानव-हित के लिए है। क्या कोई इस बात को पसन्द करेगा कि वह नग्न और वस्त्रहीन हो या उसका वस्त्र अत्यन्त छोटा और ज़रूरत से इतना कम हो कि वह न शरीर की शोभा बन सके और न उसकी रक्षा कर सके। आदर्श पुरुष वह नहीं है जो धर्म से वंचित हो या जिसके जीवन में धर्म का बहुत थोड़ा अंश सम्मिलित हो सका हो बल्कि पूर्ण व्यक्ति वही है जिसके व्यक्तित्व पर पूर्णतः धर्म की छाप हो, जिसके जीवन का कोई अंश धर्म से वंचित न हो।

अध्यात्म और 'इबादतें'

— — — — —

इस्लामी इबादतें

मनुष्य को सदैव एक ऐसे इष्ट आराध्य की खोज रही है जिसे वह अपना जीवनोद्देश्य और अपनी अभिलाषाओं और कामनाओं का केन्द्र बना सके। जिस के आगे वह अपने विनय एवं दास्य-भावों का प्रदर्शन कर सके। आराध्य की तलाश और खोज में मनुष्य ने तरह-तरह की ठोकरें खाईं और वह विभिन्न प्रकार की धारणा-सम्बन्धी और व्यावहारिक गुमराहियों में पड़ता रहा लेकिन फिर भी वह कभी भी अपने दास्य-भाव और अपने अन्दर पाये जाने वाली अस्पष्ट विकलता एवं वेदना को जो एक उपास्य एवं आराध्य को पा लेने के बाद ही दूर हो सकती थी, कभी विनिष्ट न कर सका। अल्लाह के 'नबियों' ने सदा मनुष्य को सही मार्ग दिखाया। उन्होंने ने बताया कि मनुष्य का उपास्य या आराध्य केवल अल्लाह है जो इस विश्व का सृष्टिकर्ता और 'रब' है प्रत्येक 'नबी' का सन्देश यही था :

“हे मेरी जाति वालो ! अल्लाह की 'इबादत' करो उस के सिवा तुम्हारा कोई 'इलाह' (आराध्य) नहीं” । —कुरआन सूरा अल-आराफ आयत ५६

अल्लाह के अन्तिम रसूल सल्ल० ने भी ससार को यही आमन्त्रण दिया .

“हे लोगो ! अपने 'रब' को 'इबादत' करो” —सूरा २ आयत २१ कुरआन मजीद ने स्पष्ट शब्दों में बताया कि 'इबादत' ही मानव-सृष्टि का वास्तविक अभिप्राय है। जो जोवन अल्लाह का आज्ञापालन और 'इबादत' न बन सका, वह नष्ट हुआ।

“मैं ने जिनो और मनुष्यों को केवल इस लिए पैदा किया है कि वे मेरी 'इबादत' करे।

—सूरा अज-ज़ारियात आयत ५६

'इबादत' शब्द अपने अर्थ की दृष्टि से अत्यन्त व्यापक है। 'इबादत' का मूल अर्थ है विनयशीलता, अन्तिम हृद तक झुक जाना, बिछ जाना। फिर इसमें प्रेम, पूजा और आज्ञापालन और दासता का अर्थ भी

सम्मिलित है। 'इस्लाम' में 'इबादत' का सम्पर्क मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से है। अल्लाह की 'इबादत' का अर्थ यह है कि मनुष्य केवल अल्लाह का उपासक हो, उसी के आगे सिर झुकाए, उसी को सजदा करे, अपनी सूक्ष्म एवं पवित्रतम भावनाओं उसी की सेवा में प्रस्तुत करे और अपना सम्पूर्ण जीवन उसी की बन्दगी और आज्ञापालन में व्यतीत करे जीवन के किसी क्षेत्र को भी अल्लाह की बन्दगी से स्वतन्त्र न रखे; जीवन के प्रत्येक मामले में अल्लाह ही का आज्ञाकारी हो। राज-नीति, समाज, अर्थ आदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अल्लाह के दिए हुए आदेशों का पालन करे। यहाँ तक कि उसका खाना-पीना, लोगों से मिलना-जुलना, सोना-जागना सब-कुछ अल्लाह के आदेश और उसकी इच्छा के अनुसार हो। इस तरह पूरे 'दीन' (धर्म) का पालन 'इबादत' में सम्मिलित है। किसी कर्तव्य-पालन के विषय में भी हम यह नहीं कह सकते कि वह 'इबादत' में सम्मिलित नहीं है।

धार्मिक व्यवस्था में 'इस्लाम' के 'अरकान' (मौलिक स्तम्भों) नमाज़, रोज़ा, हज्ज, और ज़कात को बड़ा महत्व प्राप्त है। इन 'अरकान' का सम्बन्ध अपने बाह्य और आन्तरिक दोनों ही दृष्टि से प्रत्यक्षत अल्लाह से है। मनुष्य में दास्य भाव को जाग्रत करने और बन्दगी की भावना पैदा करने में 'इस्लाम' के 'अरकान' का बड़ा भाग है। इनको 'दीन' (धर्म) में एक विशेष स्थान प्राप्त है। इन्हीं पर वास्तव में 'दीन' (धर्म) का सम्पूर्ण भवन खड़ा होता है। ये मानो ऐसी विशेष 'इबादतें' हैं जिनके द्वारा मनुष्य में वह शक्ति आती है जिस से वह अपना सम्पूर्ण जीवन अल्लाह की बन्दगी और 'इबादत' में व्यतीत कर सके। यही कारण है कि साधारणतया नमाज़, रोज़ा, हज्ज ही को 'इबादत' कह दिया जाता है हालाँकि वास्तव में 'दीन' (धर्म) की कोई चीज़ भी 'इबादत' से अलग नहीं है।

'इबादत' केवल अल्लाह का हुक्म है। अल्लाह के सिवा किसी दूसरे 'इबादत' करना 'शिरक' है। शिरक और अल्लाह के अलावा दूसरे की उपासना को प्राचीन ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से ज़िना और व्यभिचार की संज्ञा दी गई है। कुरआन में कहा गया है : "जो कोई अल्लाह के साथ 'शिरक' करे तो मानो वह आकाश से गिर पड़ा फिर चाहे उसको पक्षी उचक ले जाएँ या हवा उसे दूरवर्ती स्थान पर (ले जा कर) फेंक दे।" —सूरा अल-हज्ज आयत ३१

‘इस्लाम’ जीवन की पूर्णता का एक मात्र मार्ग है। इसी के द्वारा प्रकृति-अभिप्राय तक हमारी पहुँच हो सकती है। अल्लाह की दयालुता के चिह्न घरती से आकाश तक फैले हुए हैं। अल्लाह अपने अनुग्रह और दयालुता का विस्तार हमारे संकल्प और अधिकार-क्षेत्र तक करना चाहता है। वह हमें जीवन के नियमों की शिक्षा देता है। हमारे जीवन को निर्मलता एवं उच्चता प्रदान करना चाहता है। अल्लाह के सिवा कोई नहीं जिस से इस विशेष अनुग्रह की आशा की जाए। “उन से कहो कि क्या उनमें जिन्हे तुम अल्लाह के साथ शरीक ठहराते हो कोई ऐसा भी है जो हक की ओर मार्ग दिखा सके ? कहो हक की ओर तो अल्लाह ही मार्ग दिखा सकता है।” —कुरआन सूरा यूनुस आयत ३५

अल्लाह के आज्ञापालन और ‘इबादत’ के बिना मानव-जीवन का पूर्ण होना सम्भव नहीं है। अल्लाह की बन्दगी और ‘इबादत’ के बिना जीवन वास्तविक अभिप्राय एवं आशय से वंचित ही रह जाता है।

नमाज

मनुष्य अल्लाह का बन्दा और दास है। अल्लाह ही उस का सृष्टि-टकर्ता, 'रब' और 'इलाह' (पूज्य) है। अल्लाह को अपना 'रब' पूज्य मानने का अर्थ यह होता है कि बन्दा अपना जीवन अल्लाह के आज्ञा-पालन और बन्दगी में व्यतीत करे। उस के दिए हुए आदेश को अपने जीवन का कानून बनाए। उसी के आगे सिर झुकाए, उसी के आगे सजदा करे। उस के सिवा किसी की उपासना न करे। 'नमाज' वास्तव में अल्लाह की 'इबादत' और उस की उपासना का पूर्ण रूप है। 'नमाज' में बन्दा बार-बार अल्लाह के सामने हाज़िर होता और उस के आगे अपनी दीनता, विनम्रता और दासता का प्रदर्शन करता है। उस के दिखाए हुए मार्ग पर चलने की प्रतिज्ञा करता है। उस से अपने गुनाहों और कोताहियों के लिए क्षमा चाहता है।

अल्लाह और उस के, बन्दों के हक को पहचानना और उन्हें अदा करना यही धर्म का सारांश है। नमाज और 'जकात' इस्लाम के दो ऐसे मौलिक आधारास्तम्भ हैं जो इन दोनों हकों के रक्षक और मनुष्य को सीधे रास्ते पर कायम रखने वाले हैं। 'नमाज' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से एक चेतना सम्बन्धित कर्म है। 'नमाज', वास्तव में भय और प्रेम और विनीति भाव के साथ अल्लाह की ओर आकृष्ट होने और उस से निकट होने का नाम है। 'नमाज' में बन्दे को अल्लाह से वार्तालाप का श्रेय प्राप्त होता है। नमाज हमारी चेतना की प्रथम देन है। 'नमाज' वास्तव में अपने दिल, जबान और शरीर के द्वारा अपने 'रब' के सामने अपनी बन्दगी, दासता और उस की बड़ाई और महानता का प्रदर्शन है। नमाज अल्लाह की याद, उस के उपकारों के प्रति आभार प्रदर्शन, और आदि-सौन्दर्य की प्रशंसा ('हम्द') और गुणगान ('तस्बीह') है। यह हृदय-वीणा की झंकार, विकल आत्मा की पुकार और हमारे जीवन का सारांश है।

शाह वलीबुल्लाह ने 'नमाज' की वास्तविकता पर प्रकाश डालते ५ लिखा है। "जानना चाहिए कि 'नमाज' में तीन चीज़ें मौलिक हैं।

दिल से अल्लाह के लिए विनम्र और विनयशील होना, जबान से अल्लाह को स्मरण करना और अपने शरीर से अल्लाह की अधिक-से-अधिक प्रतिष्ठा करना । —हुज्जतुल्लाहुल बालिगा

अत्यन्त प्रेम जिस में अधिक-से-अधिक विनम्रता एवं विनयशीलता हो अल्लाह के सिवा किसी के साथ जायज़ नहीं है । यह केवल अल्लाह का हक है कि मनुष्य अपने-आपको उस के आगे बिल्कुल झुका दे । और अपनी समस्त भावनाओं और आन्तरिक भावों को उस की सेवा में प्रस्तुत कर दे । कभी-कभी नबी सल्ल० 'नमाज़' में रो पड़ते थे, आँखों से आँसू बहने लगते थे । एक 'सहाबी' कहते हैं कि मैं ने नबी सल्ल० को देखा कि आप 'नमाज़' में हैं, आँखों से आँसू बह रहे हैं, रोते-रोते हिचकियाँ बँध गई हैं । ऐसा लगता था मानो चक्की चल रही है । या हॉडी उबल रही है' ।

नमाज़ एक विश्व व्यापी वास्तविकता है । 'नमाज़' न केवल मनुष्य की बल्कि समस्त सृष्टि की प्रकृति एवं स्वभाव है । 'नमाज़' के बिना किसी चीज़ के अस्तित्व और उस के बाकी रहने की कल्पना नहीं की जा सकती । कुरआन का वयान है कि सम्पूर्ण विश्व अल्लाह की 'तस्बीह' (गुणगान) में लगा हुआ है क्या तुम ने नहीं देखा कि आकाशों और धरती में जो भी है अल्लाह की 'तस्बीह' करता है, पक्ष फैलाए पक्षी भी (उस की 'तस्बीह' करते हैं) । हर एक अपनी 'नमाज़' और 'तस्बीह' से परिचित है । और अल्लाह जानता है जो-कुछ वे करते हैं । —अल-नूर आयत ४१

'कुरआन' में 'नमाज़' के लिए 'सलात' शब्द प्रयुक्त हुआ है । अरबी में 'सलात' का अर्थ है किसी चीज़ को ओर बढ़ना और उसमें प्रवेश करना । 'सलात' में अत्यन्त सामोप्य का अर्थ पाया जाता है । 'नमाज़' पूर्ण अभिरूचि के साथ अल्लाह की ओर आकृष्ट होने का प्रिय कर्म है । अल्लाह की ओर मन का झुकाव ही 'नमाज़' की वास्तविक आत्मा है । इसी को अरबी में 'इबादत' कहा जाता है । इबादत का अर्थ है सारे दिल से अल्लाह से प्रेम करना और उसकी ओर ध्यान देना । अल्लाह के लिए एक स्वाभाविक प्यास और अभिलाषा प्रत्येक हृदय में पाई जाती है । मनुष्य जिस प्रकार रोज़ी प्राप्त करने में अल्लाह की कृपा का मुहताज है उस से कहीं अधिक वास्तविक शान्ति और परितोष के

लिए उसे अल्लाह की 'इबादत' और उस की उपासना की आवश्यकता है। 'नमाज' बन्दा और अल्लाह के बीच सम्बन्ध एवं सम्पर्क स्थापित करने का वास्तविक साधन है। 'नमाज' के माध्यम से मनुष्य को अल्लाह की सेवा में पहुँच प्राप्त होती है। और उस की अन्तिम अभिलाषा पूरी होती है। 'नमाज' में उसे इस का अवसर मिलता है कि वह अपने सूक्ष्मतम एवं पवित्रतम आंतरिक भावों को अल्लाह की सेवा में प्रस्तुत करे और उस से उस की कृपाओं का इच्छुक हो। नबी सल्ल० कहते हैं - "मेरी आँख की ठण्ठक 'नमाज' में है"। 'नमाज' से लगाव इस बात की पहिचान है कि बन्दे ने अल्लाह को अपनी सारी आशाओं और कामनाओं का केन्द्र बना लिया। ऐसा व्यक्ति अल्लाह का समीपवर्ती होता है। अतएव ऐसे व्यक्ति को जिस का मन मस्जिद से निकलने के बाद भी मस्जिद में लगा रहता है इस बात की शुभ सूचना दी गई है कि अल्लाह उसे छाया में जगह देगा।

अपने जीवन में 'नमाज' को सम्मिलित करना वास्तव में अल्लाह को अपना सरक्षक बनाना है। नबी सल्ल० कहते हैं - "जिस ने जान-बूझ कर 'नमाज' छोड़ दी, अल्लाह उस की रक्षा से हाथ उठा लेता है।" जो अल्लाह के सरक्षण से वंचित हो जाए उसे विनाशता और तबाही से कौन बचा सकता है। 'नमाज' अपने महत्व के कारण किसी समय भी छोड़ी नहीं जा सकती यदि कोई खड़ा हो कर 'नमाज' नहीं अदा कर सकता तो बैठ कर अदा करे और यदि यह भी सम्भव न हो तो लेट कर ही अदा करे। यदि मुँह से न बोल सके तो सकेतों से ही अदा करे^१। और यदि विवशता के कारण रुक कर अदा न कर सकता हो, तो चलते हुए अदा करे^२ और यदि अत्यन्त भय की दशा में सवारी पर है, तो जिस तरफ मौका हो उसी तरफ अदा करे^३।

फिर 'नमाज' को उन्ही प्राचीन और स्वाभाविक रीति के साथ अदा करने का आदेश है जो हजरत इबराहीम अ० के समय से चली आ रही है। इनसाइक्लोपीडिया के संकलन कर्त्ताओं ने भी इसे स्वीकार किया है। वे लिखते हैं - "इस्लामी 'नमाज' अपनी तरकीब में बड़ी हद तक 'यहूदियों' और 'ईसाइयों' की 'नमाज' के अनुरूप है।"

१. दारकुतनी।

२. अबू दाऊद अध्याय 'सलातुल तालिब'।

३. बुखारी।

‘नमाज’ पाँच बार अदा करनी अनिवार्य है। उन तरह हमारे पूरे समय को ‘नमाज’ से घेर दिया गया है ताकि हम अल्लाह से किसी समय भी गाफिल न हों। और हमारा सम्पूर्ण जीवन अल्लाह की याद बन जाये। कुरआन में कहा गया है “मेरी याद के लिए ‘नमाज’ कायम करो”—ता०हा० १४

फिर ‘कुरआन’ को भी ‘नमाज’ का एक आवश्यक अंग ठहरा दिया गया है। सूरत अल-फातिहा ‘नमाज’ की प्रत्येक ‘रकाअत’ में पढ़ी जाती है। सूरत अल-फातिहा पूरे कुरआन का सारांश है। ‘नमाज’ में कुरआन को सम्मिलित करके कुरआन की हिकमत (तत्वदर्शिता), प्रकाश और उसकी बरकतों को भी ‘नमाज’ में समेट लिया गया है। कुरआन के आदेशों की याद-दिहानी भी ‘नमाज’ में होती रहती है।

नमाज ‘कियामत’ में अल्लाह की सेवा में खड़े होने का चित्र भी है। जब बन्दा ‘नमाज’ में खड़ा होता है, तो वह उस दिन को याद करता है जब वह ‘आखिरत’ में अल्लाह के सामने हाज़िर होगा। ‘नमाज’ में हम अल्लाह की ओर लपकते और पक्किन्न होकर उसकी प्रशंसा करते हैं। ‘हश्म’ के दिन भी हमारा यही हाल होगा। उस दिन अल्लाह हमें पुकारेगा तो हम उसकी प्रशंसा करते हुए कब्रों से निकल कर उसकी ओर दौड़ पड़ेंगे।

सत्य-मार्ग में असत्य से लड़ना और इसके लिए हर समय तैयार रहना मुसलमान का कर्तव्य है। ‘नमाज’ इस तैयारी का नमूना भी पेश करती है। ‘रियायत’ में आता है कि अल्लाह को दो पक्किनियाँ बहुत प्रिय हैं। एक ‘नमाज’ की पक्ति और दूसरे ‘जिहाद’ के क्षेत्र में ‘शुजातियों’ की पक्ति। ‘नमाज’ और ‘जिहाद’ में कुछ पहलुओं में अनुमान भी पाई जाते हैं। जब दाऊद की ‘हदीन’ है “नदी मन्द० और घाटों के मेल-दम जब पहाड़ी पर चढ़ते, तो नदीदीर” (अल्लाह की बरकत का वर्णन) और जब नीचे उतरते तो ‘नन्दीर’ (अल्लाह का गुनगान और उसकी महानता का वर्णन) करते थे, ‘नमाज’ इसी तरीके पर काम करती है।

‘नमाज’ में नमाज़ियों का पंक्तिबद्ध होना, एक दूसरे का अनुमान, एक आवाज़ पर समस्त पंक्ति की तरफ से बुद्धि की केन्द्रित होना, सभी नमस्ते सामाजिक जीवन के नियमों की सीख देता है।

से जहाँ उस सम्बन्ध का प्रदर्शन होता है जो वन्दे और अल्लाह के बीच पाया जाता है वही 'नमाज' से अल्लाह के वन्दों के पारस्परिक सम्बन्ध और उनकी सामाजिकता पर भी प्रकाश पड़ता है। यह सामाजिकता ही की माँग थी कि हमें 'जमाअत' से (सामूहिक रूप से) 'नमाज' पढ़ने का आदेश दिया गया। 'नमाज' हमें अल्लाह से ही नहीं- बल्कि वह हमारे आपस के सम्बन्धों को भी ठीक रखती है और हमारे दिलों को भी जोड़ती है। लेकिन शर्त यह है कि हमारी 'नमाज' वास्तव में नमाज हो और वह अपने बाह्य और अंतरिक प्रत्येक पहलू से ठीक हो। मुस्लिम में है : "अल्लाह के वन्दो ! ('नमाज' में) अपनी सफों (पकितियों) को सोधा और ठीक रखो अन्यथा अल्लाह तुम्हारे रूख को एक दूसरे के विरुद्ध कर देगा।" —मुस्लिम

'नमाज' इस्लाम की समस्त धारणाओं को जाग्रत करती है जिन पर 'ईमान' लाए बिना आत्मा की शुद्धता, आचरण की पवित्रता और व्यावहारिक जीवन का सुधार सम्भव नहीं है। धैर्य, अल्लाह पर भरोसा और शुद्धता और आत्मा की पवित्रता आदि नैतिक गुणों की प्राप्ति का उत्तम साधन 'नमाज' है। 'नमाज' में मनुष्य को पुण्यवान और धर्म-परायण बनाने की अपार शक्ति मौजूद है। 'नमाज' हमें साहसी और उदार बनाती है। और एक पवित्रतम और आनन्दमय जीवन का हमें मार्ग दिखाती है। अल्लाह कहता है : "निस्सन्देह नमाज अश्लीलता और बुराई से रोकती है।" —अल-अनकबूत आयत ४५

नमाज वास्तव में धर्म का एक ऐसा शीर्षक है जिसमें अत्यन्त व्यापकता पाई जाती है। नमाज मुस्लिम-जीवन आदि और अन्तः सब कुछ है। नमाज मुस्लिम की नैतिक, आध्यात्मिक, और वास्तविक जीवन का प्रतीक है। नमाज की इसी मौलिक विशेषता के कारण कुरआन कभी अच्छे कर्मों में केवल नमाज का नाम लेने को काफी समझता है। एक जगह कहा गया है "जो लोग किताब को मजबूती से पकड़े हुए हैं और 'नमाज' कायम कर रखी है। निश्चय ही हम ऐसे सुधार करने वालों के कर्म-फल को नष्ट नहीं करेंगे।" —अल-आराफ आयत १७०

एक जगह अल्लाह के विरोधी और सरकश का जिक्र इन शब्दों में किया गया है "इस ने न तो (अल्लाह और रसूल की) तस्दीक की और न 'नमाज' अदा की बल्कि उसने झुठलाया और मुख मोड़ा"।

—अल-कियमा आयत ३१-३२

नमाज की इसी मौलिक विशेषता के कारण नबी सल्ल० कहते हैं: “दीन (धर्म) में नमाज का वही स्थान है जो शरीर में सिर का है।”

—अल-मोजमुस्सगीर

हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति को नबी सल्ल० ने ‘नमाज’ पढ़ते देखा जो न पूरा रकू करता था और न पूरा ‘सजदा’ करता था। उसकी जल्द बाजी को देखकर आपने कहा यदि यह व्यक्ति इसी हालत में मर गया और अपनी ‘नमाज’ दुस्त न की तो मुहम्मद के पन्थ के अतिरिक्त किसी और पन्थ पर उसका अन्त होगा।

‘नमाज’ के इसी महत्व के कारण हजरत उमर रजि० ने अपने गौरवरों को लिखा था “तुम्हारे समस्त कर्मों में सब से बढ़कर महत्व मेरी दृष्टि में ‘नमाज’ का है। जिस किसी ने इसकी रक्षा की और निगहबानी में लगा रहा उसने पूरे धर्म की रक्षा की और जिसने ‘नमाज’ को खो दिया वह दूसरी सारी चीजों को और अधिक खोने वाला होगा।”

सारांश यह कि ‘नमाज’ को मुस्लिम-जीवन में मौलिक स्थान, प्राप्त है। ‘नमाज’ से केवल यही नहीं कि हमारे जीवन का सुधार होता है बल्कि ‘नमाज’ हमें वास्तविक जीवन से परिचित कराती और अल्लाह से हमारा दृढ सम्बन्ध स्थापित करती है।

—

‘नमाज़’ की वास्तविकता और महत्व

عَنْ أَنَسٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ سَمِعْتُ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ يَقُولُ: أَمَّا آيَتُكُمْ
لَوْ أَنَّ نَهْرًا بِبَابِ أَحَدِكُمْ يَغْتَسِلُ فِيهِ كُلَّ يَوْمٍ مِائَتَ مَرَّاتٍ هَلْ يَبْقَى مِنْ دَرَنِهِ
شَيْءٌ؟ قَالُوا: لَا بَقِيَّةَ مِنْ دَرَنِهِ شَيْءٌ، قَالَ: فَكَذَلِكَ مَثَلُ الصَّلَاةِ الْخَاطِيَةِ
يَسْجُدُ اللَّهُ بِهِنَّ الْخَطَايَا ————— بخاری، مسلم، ابوداؤد، نسائی، ابن ماجہ

१. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना तुम्हारा क्या विचार है यदि तुम में से किसी के द्वार पर दरिया हो और वह प्रति दिन पाँच बार नहाए, तो क्या (उस के शरीर पर) कुछ भी मैल-कुचैल बाकी रहेगा ? (‘सहाबा’ ने) कहा : कुछ भी मैल बाकी न रहेगा । आप ने कहा . पाँचो नमाज़ों की यही मिसाल है । अल्लाह उन के द्वारा गुनाहों को मिटा देता है ।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजा

२. अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक दिन ‘नमाज़’ के बारे में बात-चीत करते हुये कहा . जो व्यक्ति उस की रक्षा करता है तो वह उस के लिए ‘कियामत’ के दिन प्रकाश, प्रणाम और मुक्ति होगी और जो व्यक्ति उस की रक्षा न करे तो वह उस के लिए न प्रकाश होगी, न प्रमाण और न मुक्ति होगी और

१. अर्थात् जिस प्रकार पाँच बार नहाने से शरीर पर मैल बाकी नहीं रह सकती उसी प्रकार पाँचो वक्त की ‘नमाज़’ अदा करने से गुनाह बाकी नहीं रह सकते, अल्लाह उन्हें क्षमा कर देता है । गुनाहो और खताओं के बुरे प्रभाव दिल पर पड़ते हैं ये बुरे प्रभाव मिट जाते हैं । लेकिन शर्त यह है कि ‘नमाज़’ वास्तव में नमाज़ हो, केवल दिखाने की ‘नमाज़’ न हो बल्कि पूर्णतः विधिवत् रूप से हृदय के साथ अदा की गई हो । अल्लाह का सामीप्य और इस सामीप्य की जो आंतरिक स्थिति मनुष्य को ‘नमाज़’ में प्राप्त होती है उस की मौजूदगी में गुनाह कैसे बाकी रह सकता है ।

कुरआन में इस वास्तविकता पर इन शब्दों में प्रकाश डाला गया है .
“दिन के दोनों किनारों पर और रात के कुछ हिस्सों में ‘नमाज़’ कायम किया करो, निस्सन्देह नेकियाँ बुराइयों को दूर कर देती हैं यह नसीहत है याद रखने वालों के लिए” । सूर अहद आयत १० ।

वह 'कियामत' के दिन कारून, फिरऔन, हामान और उबई बिन खल्फ (जैसे अल्लाह के अवज्ञाकारी शत्रुओं) के साथ होगा २।

—अहमद, दारमी, बैहकी-शोबुलईमान

३. हजरत अनस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : स्त्रियाँ और सुगन्ध मेरे लिए प्रिय बनाई गई हैं और मेरी आँख की ठढक 'नमाज' में रक्खी गई है ३।

—नसई

४ हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : 'फज्र' की दो 'रकअते' (सुन्नत) दुनिया और दुनिया की हर चीज़ से उत्तम हैं ४।

—मुस्लिम

२. मतलब यह है कि जब कोई व्यक्ति ठीक तौर से 'नमाज' अदा करता है, 'नमाज' में तनिक भी असावधानी नहीं दिखाता, अपनी 'नमाज' को उस के बाह्य और आंतरिक दोनों ही दृष्टि से सँवारने की कोशिश करता है, तो उसकी यह 'नमाज' ससार में उस के लिए प्रकाश, दलील और प्रमाण सिद्ध होती है और 'आखिरत' में भी उस के काम आएगी। ऐसी 'नमाज' दुनिया में आदमी को उन खराबियों से बचाती है जो उसे सीधे मार्ग से भटकाने वाली और उसके लिए विनाशक हैं। 'आखिरत' में भी वह उसके द्वारा मुक्ति और अल्लाह की दयालुता का अधिकारी होगा। 'नमाज' सर्वथा मुक्ति और प्रकाश है। जो लोग नमाज से गाफिल हैं वे वास्तव में अन्धकार में हैं। उनके न मस्तिष्क को प्रकाश प्राप्त है जिसे 'बुरहान' (कसौटी, प्रमाण) कहते हैं और न उनके हृदय को ही प्रकाश प्राप्त है। जब ससार में उनकी यह हालत है, तो 'आखिरत' में उनके लिए किसी भलाई की आशा कैसे की जा सकती है।

३ मतलब यह है कि दुनिया की नेमतों में जहाँ पवित्र आचरण की स्त्री और सुगन्ध मुझे बहुत प्रिय है वही सब से बड़ी नेमत मेरे लिए 'नमाज' है। नमाज मेरे लिए हृदय-शान्ति और परितोष की सामग्री है। मनुष्य का सम्बन्ध अपने 'रब' से जितना अधिक होगा उतना ही अधिक उसे नमाज में आनन्द और शान्ति की प्राप्ति होगी।

४. मनुष्य को केवल रोटी ही नहीं चाहिए, उसे मानसिक शान्ति और आत्मिक आनन्द भी अभीष्ट है। और यह चीज़ वह 'नमाज' द्वारा प्राप्त कर सकता है। यदि हृदय-शान्ति और मानसिक परितोष ससार की सारी नेमतों से बढ़कर है तो निश्चय ही नमाज की कुछ 'रकअतें' दुनिया की सारी नेमतों से ज्यादा कीमती हैं। कुरआन में कहा गया है : "जान रक्खो ! अल्लाह की याद से

५. सालिम बिन अबी जअद कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना है बिलाल ! 'नमाज' कायम करो ताकि हम उस से आन्नद प्राप्त करे ।
—अबूदाऊद

६ इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'नमाज' पढ़ने वाला (नमाज में) अपने 'रब' से सरगोशी करता है, इस लिए उसे यह देखना चाहिए कि वह अपने 'रब' से क्या सरगोशी कर रहा है ? तुम में से कोई इस तरह ऊँचे स्वर से 'कुरआन' न पढ़े कि दूसरों को असुविधा हो ५
—अहमद

७ इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अपने घरों में भी अपनी 'नमाजों' में से कुछ हिस्सा पढ़ा करो और उन को कब्रिस्तान न बनाओ ६।
—अबूदाऊद

ही दिलों को इतमीनान हासिल होता है" । नमाज अल्लाह की याद ही का दूसरा नाम है ।

५. बन्दा 'नमाज' में अपने 'रब' से बात-चीत करता है इसलिए उसे ज्यादा-से-ज्यादा अपने 'रब' की ओर ध्यान देना चाहिए । उसे इसका ज्ञान होना चाहिए कि वह अपने 'रब' से क्या कह रहा है ? यह हालत तो अत्यन्त अप्रिय है कि मनुष्य देखने में तो 'नमाज' में हो लेकिन वास्तव में वह कहीं और ही हो । नमाज पढ़ने वालों का पूरा ख्याल रखना भी आवश्यक है । ऐसी हालत में जबकि नमाज हो रही हो ऊँचे स्वर में कुरआन पढ़ना सही न होगा क्योंकि इस से नमाज पढ़ने वाले का मन बँटेगा वह एकाग्रता के साथ अपनी नमाज न अदा कर सकेगा । एक 'हदीस' में है कि आपने कहा : "नमाज में व्यस्तता होती है (बुखारी, मुस्लिम) । मतलब यह है कि नमाज में आदमी अल्लाह की याद में लगा होता है ऐसी हालत में उसे किसी व्यक्ति से बात-चीत नहीं करनी चाहिए और न किसी की बातों का उत्तर देना चाहिए उसे एकाग्रचित होकर नमाज अदा करनी चाहिए ।

६. अर्थात् अपने घरों में भी 'सुन्नत' और 'नफ़ल' नमाज पढ़ा करो । घरों की आवादी और शोभा वास्तव में अल्लाह के स्मरण और उसकी याद ही से है । और नमाज अल्लाह की याद का पूर्ण रूप है । एक 'हदीस' में है जिसके रावी हज़रत जाविर रजि० हैं कि आपने कहा : जब तुम में से कोई व्यक्ति मस्जिद में नमाज अदा करे तो उसे चाहिए कि अपनी नमाज का कुछ हिस्सा अपने घर के लिए रख ले । इसलिए कि अल्लाह उसकी 'नमाज' के द्वारा उसके

८. हजरत आइशा रजि० कहती है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब भी इशा की 'नमाज' पढ़ कर मेरे पास आए, तो आप ने चार या छ रकअतें पढ़ी^० । —अबूदाऊद

९ हजरत अबू उमामा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह बन्दे के किसी कर्म में भी बन्दे की ओर उतना अधिक ध्यान नहीं देता जितना कि दो रकअतों पर जिन को बन्दा अदा करता है। नेकी बन्दे के सिर पर छिड़की जाती है जब तक वह 'नमाज' में रहता है। और बन्दा अल्लाह का सामीप्य जितना उस चीज से प्राप्त करता है जो अल्लाह से निकली हुई है (अर्थात् कुरआन से) किसी दूसरी चीज से नहीं^८ । —अहमद, तिरमिज़ी

घर में भलाई प्रदान करता है ।

इसमें सन्देह नहीं कि 'नमाज' जीवन की वास्तविक सम्पत्ति और घर की शोभा है। जिस घर में नमाज नहीं वह घर भलाई और बरकत से खाली है।

७ इस 'हदीस' से जहाँ यह मालूम होता है कि आप नमाज की सुन्नते घर पर अदा करते थे वही यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि 'नमाज' आपके जीवन में पूर्ण रूप से प्रवेश कर चुकी थी। मस्जिद तक ही आप अल्लाह के उपासक न थे बल्कि अपने घर, और अपने घर वालों में भी आप अल्लाह को याद करते और उसकी मेवा में 'सजदे' किया करते थे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में और जीवन के प्रत्येक मोड़ पर 'नमाज' आपके साथ रहती थी। न नमाज आपके जीवन से अलग हो सकती थी और न आपका जीवन नमाज से वंचित रह सकता था। नमाज जीवन की वास्तविक सम्पत्ति है।

८ अर्थात् कुरआन के द्वारा जितना बन्दा अपने 'रब' का सामीप्य प्राप्त कर सकता है किसी दूसरी चीज के द्वारा नहीं प्राप्त कर सकता। और कुरआन 'नमाज' का विशेष और महत्वपूर्ण भाग है।

'नमाज' में समय लगाना समय को नष्ट करना नहीं है बल्कि यह तो अपने समय को अत्यन्त उपयोगी और लाभदायक बनाना है। आदमी जब तक 'नमाज' में होता है उस पर नेकी छिड़की जाती है। नमाज सत्य की परिचायक है। वह मनुष्य को नेक और सुकर्म बनाती है। वह उसके जीवन को बुराइयों से پاک कर के अल्लाह के रंग में रंग देती है। यह एक ऐसा वपतिस्मा (Baptism) है जिसके समान कोई वपतिस्मा नहीं हो सकता।

१०. रबीआ बिन कअब असलमी रजि० से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि मैं रात को अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में रहता था। मैं आप के 'वजू' का पानी और जरूरत की चीजें लाता था। आप ने कहा मुझ से माँगो। मैं ने कहा : मैं तो आप से यह माँगता हूँ कि मुझे 'जन्नत' में आप का साहचर्य प्राप्त हो। आप ने कहा इस के सिवा कुछ नहीं चाहते ? मैं ने कहा बस यही (आप का साथ मुझे चाहिए)। आप ने कहा : अच्छा तो अपने मामले में 'सजदों' की अधिकता के द्वारा मेरी सहायता करो^६।

—मुस्लिम, अबूदाऊद

११. शुबरा बिन माबद कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब लड़का सात वर्ष का हो जाये तो उसे 'नमाज' का आदेश दो और जब दस वर्ष का हो जाए, तो 'नमाज' के लिए उसे मारो^७।

—अबूदाऊद

१२. हज़रत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा आदमी और 'कुफ़' के बीच 'नमाज' का छोड़ देना है^८।

—अहमद, मुस्लिम

६. अर्थात् यदि यह चाहते हो कि 'जन्नत' में तुम्हें मेरा साहचर्य प्राप्त हो तो अल्लाह को आगे अधिक-से-अधिक 'सजदे' करो। इसी तरह तुम इसके अधिकारी हो सकते हो कि तुम्हें मेरा साहचर्य प्राप्त हो। यदि ऐसा करोगे तो फिर तुम्हें मेरा साहचर्य प्राप्त करने में कोई कठिनाई न होगी। यह 'हदीस' बताती है कि 'आखिरत' में नबी सल्ल० का विशेष सामीप्य उन लोगों को प्राप्त होगा जिनके सिर अधिकतर अल्लाह के आगे 'सजदों' में होते हैं और जो 'नमाज' का विशेष ध्यान रखते हैं। वह विशेष कर्म जो इस उच्च स्थान तक पहुँचाने में सहायक होता है वह अल्लाह की सेवा में 'सजदों' की अधिकता है। सजदों की अधिकता स्पष्ट निशानी होती है कि बन्दे को अल्लाह से गहरा सम्पर्क है और अल्लाह के रसूल के अनुसरण का पूरा ध्यान है।

१०. अर्थात् यदि 'नमाज' नहीं पढ़ता तो इसके लिए तुम उसे सज़ा भी दे सकते हो।

११. अर्थात् 'इस्लाम' से 'कुफ़' तक पहुँचने के लिए बीच में एक दर्जा है और वह है नमाज का छोड़ देना। यदि किसी ने नमाज छोड़ दी तो मानो वह इस्लाम और 'कुफ़' के बीच लटक रहा है। एक कदम यदि आगे बढ़े तो 'कुफ़' की सीमा में पहुँच जाए। 'नमाज' 'इस्लाम' का विशेष चिह्न है। उसे छोड़ने का

१३. इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति को अस्त्र की 'नमाज' जाती रही, तो मानो उस के लोग और उस का माल सब नष्ट हो गया^{१२} ।

—बुखारी, मुस्लिम

१४. हजरत जुन्दुब बिन सुफयान रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति सुबह की 'नमाज' पढ़ता है वह अल्लाह के जिम्मे और उस के सरक्षण में होता है, तो हे आदम के बेटे ! देख अल्लाह कही तुझ से अपने सरक्षण के प्रति कोई पूछ-गच्छ न करे^{१३} ।

—मुस्लिम

अर्थ यह है कि मनुष्य इस्लाम की रीति को त्याग कर 'कुफ' की नीति अपना रहा है ।

१२. कारवार और दूसरे कामों के कारण अस्त्र की 'नमाज' के कच्चा होने का अधिक भय रहता है इस लिए आप ने इस के लिए विशेष रूप से सचेत किया, यो तो हर 'नमाज' का अपना महत्व है । इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'नमाज' का कच्चा होना कोई साधारण बात नहीं है । 'नमाज' यदि जाती रही तो मानो मनुष्य लुट गया । जिस प्रकार परिवार धन, दौलत सम्पत्ति आदि के विनष्ट होने से आदमी का घर उजड़ जाता है ठीक उसी तरह 'नमाज' के बिना मानव का जीवन विल्कुल उजाड़ है । भले ही देखने में वह आनन्द और सुख में जीवन क्यों न व्यतीत कर रहा हो । इसे एक मिसाल से समझिए । एक व्यक्ति के पास माल-दौलत भी है, कोठी और बाग भी उसके पास हैं । आप कल्पना कीजिए यदि उसका अकलीता बेटा मर जाए तो उसका क्या हाल होगा । वह समझेगा कि अब उससे पास कुछ भी नहीं रहा । उसे अपना घर विल्कुल उजाड़ मालूम होगा । उसकी सम्पत्ति, उसका बाग और मकान सब-कुछ मौजूद होगा लेकिन उसकी दृष्टि में इन चीजों का कुछ भी मूल्य न होगा । वह सोचेगा कि जिसके लिए ये सारे सामान थे जब वही नहीं रहा, तो ये सब व्यर्थ है । ठीक इसी तरह 'नमाज' जो मुस्लिम के जीवन की प्राप्ति और उसकी सुख-सामग्री है यदि वही न रहे, तो उसके जीवन में क्या रह जाएगा । जब कोई अल्लाह की सेवा में उपस्थित होने से वंचित रहा तो मानो वह हर चीज से वंचित रहा ।

१३ मतलब यह है कि जब मनुष्य फज्र की 'नमाज' अदा करता है, तो मानो वह अपने को अल्लाह के सरक्षण में दे देता है । लेकिन यदि कोई व्यक्ति 'नमाज'

१५. अबू दरदा रजि० कहते हैं कि मेरे मित्र (अल्लाह के रसूल सल्ल०) ने मुझे यह वसीयत की कि अल्लाह के साथ किसी चीज को रीक न करना भले ही तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएँ तुम्हें जला दिया जाए। और न जानते-बूझते फ़र्ज नमाज छोड़ना क्योंकि जो व्यक्ति जानते-बूझते 'नमाज' छोड़ बैठता है अल्लाह उस की रक्षा से हाथ उठा लेता है। और शराब न पीना क्योंकि वह समस्त बुराइयों का द्वार खोलने वाली है। —इब्नमाजा

१६ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना 'कियामत' के दिन बन्दे के जिस कर्म का सब से पहले हिसाब होगा वह उस की 'नमाज' है। तो यदि 'नमाज' ठीक अदा की गई है, तो सफलता और मुक्ति प्राप्त हो जाएगी और यदि ठीक अदा नहीं की गई है, तो असफलता और घाटा है। यदि 'फ़र्ज' नमाज में कोई कमी होगी तो अल्लाह कहेगा देखो मेरे बन्दे के पास 'नफ़ले' है? फ़र्ज में जो कमी हो उसे 'नफ़लों' से पूरा करो। फिर इस प्रकार उसके दूसरे सारे कर्मों का हिसाब होगा^{१४}। —अबू दाऊद, अहमद

१७ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस ने 'अस्स' की 'नमाज' छोड़ दी, उस का किया-घरा

त्याग देता और उस प्रतिज्ञा को भुला देता है जो उसके और अल्लाह के बीच नमाज के द्वारा वजूद में आती है, तो वह अल्लाह के संरक्षण और रक्षा से वंचित हो जाता है। ऐसे व्यक्ति को जो अल्लाह की बड़ाई और महानता का आदर नहीं करता न अल्लाह की सहायता मिनती है और न उसके कामों में अल्लाह का सहयोग और समर्थन प्राप्त होता है। अल्लाह उसे उसकी अवज्ञा का अवश्य दण्ड देगा।

१४ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि मुस्लिम के जीवन में 'नमाज' को मौलिक महत्व प्राप्त है। इसलिए सब से पहले 'कियामत' में बन्दे की 'नमाज' देखी जाएगी। यदि किसी के पास नमाज नहीं है तो इसका अर्थ यह है कि उसने वास्तव में उस पवित्र और अभीष्ट जीवन को अपनाने का फैसला ही नहीं किया जिसका प्रतीक 'नमाज' होती है। इस 'हदीस' से यह भी मालूम होता है कि 'मोमिन' के जीवन में 'नफ़लें' सुन्नतें आदि इबादतें फ़र्ज से भिन्न चीजें नहीं हुआ करती बल्कि नफ़ल आदि से वास्तव में फ़र्ज ही को पूर्ण बनाना अभीष्ट होता है।

अकारण हुआ^{१५} ।

—बुखारी, नसई

१८. इब्न उमर रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'नमाज़' का आरम्भिक समय अल्लाह की प्रसन्नता का है और अन्तिम समय अल्लाह की क्षमा का है^{१६} । —तिरमिज़

१९ हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि अल्लाह कहता है कि मेरे और मेरे बन्दे के बीच 'नमाज़' आधी-आधी विभक्त है । आधी 'नमाज़' मेरे लिए और आधी मेरे बन्दे के लिए है । और मेरे बन्दे को वह मिलेगा जो वह माँगेगा । जब बन्दा कहता है . "प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब है" तो प्रतापवान एव तेजोमय अल्लाह कहता है मेरे बन्दे ने मेरी प्रशंसा की । और जब वह कहता है . "जो कृपाशील और दयावान् है", अल्लाह कहता है कि मेरे बन्दे ने मेरी सराहना की । और जब वह कहता है "उस दिन का मालिक है जब कर्मों का बदला दिया जाएगा" तो (अल्लाह) कहता है कि मेरे बन्दे ने मेरी बड़ाई और महानता का प्रदर्शन किया^{१७} । और जब वह कहता है : "हम तेरी ही 'इबादत

१५. 'नमाज़' त्याग देने का अर्थ यह हुआ कि उसके समस्त कार्य और उसकी सारी कोशिशें व्यर्थ हो गई । उसका जीवन ही 'नमाज़' के बिना निरर्थक है ।

१६ आरम्भिक समय पर 'नमाज़' पढ़नी इस बात की पहिचान है कि बन्दे को 'नमाज़' से हार्दिक लगाव है । वह उसे अपने लिए बोन नहीं समझता अन्तिम समय में 'नमाज़' पढ़ने से फर्ज तो अदा हो जाता है लेकिन उस में वह विशेषता कैसे पैदा हो सकती है जो उसे आरम्भ समय में पढ़ने में है । जब 'नमाज़' का वह समय आ जाए जिसे नबी सल्ल० ने उत्तम कहा है तो 'नमाज़' अदा कर लेनी चाहिए । उस समय अकारण नमाज़' को टालना इस बात की निशानी होगी कि नमाज़ से जैसा लगाव और प्रेम होना चाहिए था वह नहीं है ।

१७ इस से मालूम हुआ कि 'आखिरत' और अल्लाह की उस अदालत का जो 'कियामत' में कायम होगी, इन्कार करने वाले वास्तव में अल्लाह की महानता का इन्कार करते हैं । यह अल्लाह की महानता के प्रतिकूल है कि वह एक ऐसा दिन न लाए जिसमें लोगो को उनके भले-बुरे कर्मों का बदला दिया जा सके ।

करते हैं और तुझ से ही मदद माँगते हैं”, तो वह कहता है यह मेरे और मेरे बन्दे के बीच (सम्मिलित) है और मेरे बन्दे को वह चीज मिलेगी जिस की उस ने प्रार्थना की। और जब वह कहता है हमें सीधा मार्ग दिखा, उन लोगों का मार्ग जिन पर तू ने कृपा की, उन का नहीं जिन पर तेरा प्रकोप हुआ और न गुमराहों का”, तो कहता है कि यह मेरे बन्दे के लिए है और मेरे बन्दे को वह चीज प्राप्त होगी जिस की उस ने प्रार्थना की^{१८}।

१८ इस ‘हदीस’ से साफ जाहिर है कि ‘नमाज’ में बन्दा अपने ‘रब’ से बातें करता है और उसका ‘रब’ उसकी समस्त बातों को सुनता और उसका उत्तर देता है। वह अपने बन्दे के प्रस्तुत किए हुए सूक्ष्मतम भावों और भावनाओं और प्रशंसा एवं गुणगान को स्वीकार करता और उसकी प्रार्थना को स्वीकृति प्रदान करता है। बन्दे ने यदि उस से सहायता की याचना की है और उस से धर्म के सीधे और स्वाभाविक मार्ग पर चलने में मदद चाही है, तो वह वादा करता है कि वह अपने बन्दे की अवश्य सहायता करेगा।

एक दूसरी ‘हदीस’ से भी मालूम होता है कि ‘नमाज’ में बन्दा अपने ‘रब’ से बातें करता है। हज़रत इब्न उमर रज़ि० कहते हैं कि एक दिन नबी सल्ल० मस्जिद में आए। देखा कि लोग उच्च स्वर में ‘नमाज’ पढ़ रहे हैं। आपने कहा : “नमाज पढ़ने वाला अपने ‘रब’ से सरगोशी करता है। इसलिए उसे यह देखना चाहिए कि वह अपने ‘रब’ से क्या सरगोशी कर रहा है ? तुम में से कोई इस तरह ऊँची आवाज़ में कुरआन न पढ़े कि दूसरों को असुविधा हो।

—मुसनद अहमद

नमाज की संख्या और समय

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عَبَّادٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ وَقْتُ الظُّهْرِ إِذَا زَالَتِ الشَّمْسُ وَكَانَ ظِلُّ الرَّجُلِ كَطُولِهِ مَا لَمْ يَحْضُرِ الْعَصْرُ وَوَقْتُ الْعَصْرِ مَا لَمْ تَصْفُرِ الشَّمْسُ وَوَقْتُ الصَّلَاةِ الْمَغْرِبِ مَا لَمْ يَغِبِ الشَّفَقُ وَوَقْتُ صَلَاةِ الْعِصَاءِ إِلَى نِصْفِ اللَّيْلِ الْأَوْسَطِ وَوَقْتُ صَلَاةِ الصُّبْحِ مِنْ طُلُوعِ الْفَجْرِ مَا لَمْ تَطْلُعِ الشَّمْسُ ————— مسلم

१. हजरत अब्दुल्लाह बिन अब्र रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'जूह' का समय वह है जबकि सूर्य ढल जाये और आदमी की छाया उसके कद के बराबर हो जब तक कि 'अस्त्र' का समय न आ जाए। और 'अस्त्र' का समय वह है (जो इसके बाद हो और उस समय तक) जब तक कि सूर्य पीला न हो जाए। और 'मगरिब' की नमाज का समय (उस समय तक रहता है) जब तक कि सान्ध्य अरुणिमा लुप्त न हो जाये। 'इशा' की नमाज का समय आधी रात तक है और 'फज्र' की नमाज का समय अरुणोदय से लेकर सूर्य उदय होने तक है।
—मुस्लिम

१ जुह, अस्त्र, मगरिब, इशा और फज्र की पांच समय की नमाजें हर मुसलमान के लिए अनिवार्य हैं। इस 'हदीस' में उनके समय निश्चित किये गये हैं। कुरआन में कहा गया है "निस्सन्देह 'नमाज' ईमान वालों पर समय की पाबन्दी के साथ अनिवार्य की गई है" —सूरा अननिसा आयत १०३।

नमाज के समय क्या हो ? कुरआन में विभिन्न स्थानों पर इसका उल्लेख किया गया है। उदाहरणार्थ एक जगह कहा गया है "नमाज कायम करो जब सूर्य ढले रात के अँधेरे तक और फज्र के कुरआन को भी ज़रूरी ठहरा लो। निस्सन्देह 'फज्र' का कुरआन (पढ़ना) साक्षात् होता है।" —सूरा बनी इसराइल आयत ७८। सूर्य ढले से रात के अँधेरे तक में चार वक्तों की नमाजें आ जाती हैं। सूर्य पहली बार दोपहर के बाद ढलता है वह 'जूह' की नमाज का समय होता है। सूर्य का दूसरा ढलना पहाड़ों और ऊँचे टीलों आदि से होता है और 'अस्त्र' की नमाज का समय आरम्भ हो जाता है। फिर इसके पश्चात् सूर्य पृथ्वी की सतह से ढलता हुआ अस्त हो जाता है जो 'मगरिब' की नमाज का समय है। सूर्य का एक ढलना इसके बाद भी होता है

नमाज और शुद्धता

عَنْ أَبِي مَالِكٍ الْأَشْعَرِيِّ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الطَّهْوُ
شَطْرُ الْإِيمَانِ، وَالْحَمْدُ لِلَّهِ تَمْلَأُ الْمِزَانَ، وَسُبْحَانَ اللَّهِ وَالْحَمْدُ لِلَّهِ تَمْلَأَانِ
أَوْثَانًا مَابَيْنَ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَالصَّلَاةُ نُورٌ وَالصَّدَقَةُ بُرْهَانٌ وَالصَّبْرُ
ضِيَاءٌ وَالْقُرْآنُ حُجَّةٌ لَكَ أَوْ عَلَيْكَ كُلُّ النَّاسِ يَغْدُو فَيَاثِرُ نَفْسَهُ
فَمُعِيقُهَا أَوْ مَوْبِقُهَا _____ مسلم

१. अबू मालिक अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के
रसूल सल्ल० ने कहा • स्वच्छता एवं पवित्रता 'ईमान' का अंश है' और
"अलहम्दुलिल्लाह" मीज़ान को भर देता है और "सुबहानल्लाह" व

जबकि क्तिज पर उसकी लालिमा और उसके चिह्न शेष नहीं रहते और
बिल्कुल अन्धकार छा जाता है और 'इशा' की नमाज का समय शुरू हो जाता
है। पांचवी नमाज 'फज्र' की है जिसका सग्य पौ फटने से लेकर सूर्य निकलने
तक है। इस 'नमाज' का जिक्र भी इस 'आयत' में आ गया है।

नमाज के समय हमारी दुनिया में जाहिर होने वाले महत्वपूर्ण परिवर्तनों
और निशानियों की दृष्टि से नियुक्त किए गये हैं। ये निशानियाँ अल्लाह के
सामर्थ्य और उसकी महानता को प्रदर्शित करती हैं। मुस्लिम भी इन
निशानियों के जाहिर होने के समय अल्लाह के आगे 'सजदे' में गिरकर अपने
को विश्व की महान निशानियों के अनुरूप बनाता है।

१. अर्थात् ईमान के जहाँ और बहुत से तकाज़े हैं वही उसका एक तकाज़ा यह
भी है कि मनुष्य अपने शरीर और वस्त्र को शुद्ध रखे। 'ईमान' केवल दिल
में रहने वाली चीज़ नहीं है, बल्कि मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से 'ईमान' का
प्रदर्शन होना चाहिए। एक 'हदीस' में है कि आप (सल्ल०) ने कहा • "और
स्वच्छता, आधा 'ईमान' है"—तिरमिज़ी। मतलब यह है कि यह 'ईमान' ही
की माँग है कि मनुष्य का शरीर और मन दोनों स्वच्छ और पवित्र हों। जिस
ने अपने शरीर और वस्त्र को स्वच्छ रखा उसने 'ईमान' ही के तकाज़े पूरे
किए। पूरी स्वच्छता और पवित्रता तो उस समय प्राप्त हो सकती है जब
कि हमारा बाह्य अस्तित्व और हमारा अन्तर दोनों ही स्वच्छ हों। जिसने
अपने शरीर और वस्त्र को स्वच्छ रखा उसने 'ईमान' ही की माँग को पूरा

“अलहम्दुलिल्लाह” आकाशों और धरती के बीच जो कुछ है सब को

किया। पूर्ण स्वच्छता और पूर्ण ‘ईमान’ तो उस समय प्राप्त हो सकता है जबकि हमारा शरीर और मन दोनों ही स्वच्छ और शुद्ध हो। हम में ‘शिक’ और ‘कुफ’ और किसी बुराई की गन्दगी न हो बल्कि उसमें प्रेम और मन की शुद्धता हो। अल्लाह की महानता और बड़ाई का एहसास हो। उसके बन्दों के लिए सहानुभूति, करुणा और वेदना हो।

‘दीन’ (धर्म) और ‘शरीअत’ में स्वच्छता और पवित्रता का बड़ा महत्व है। केवल यही नहीं कि ‘नमाज़’, कुरआन का पढ़ना और ‘काबा’ के ‘तवाक’ के लिए ही स्वच्छ रहना आवश्यक है बल्कि स्वच्छता स्वयं धार्मिक दृष्टि से अभीष्ट है। कुरआन में कहा गया है “निस्सन्देह अल्लाह ‘तौबा’ करने वालों से प्रेम करता है और उन लोगों से प्रेम करता है जो पाक-साफ रहने वाले हैं”—सूरा अल-वकरा आयत २२२।

इस ‘आयत’ से मालूम होता है कि जिस प्रकार स्वच्छता का ध्यान रखने से मनुष्य का शरीर और वस्त्र दोनों शुद्ध और स्वच्छ रहते हैं उसी प्रकार ‘तौबा’ और अल्लाह की ओर पलटने से मनुष्य के हृदय और उसकी आत्मा को निर्मलता प्राप्त होती है। और वह गुनाह की मलिनता और उसके बुरे प्रभावों से छुटकारा पा लेता है। ‘रिवायतो’ में ‘बजू’ के पश्चात् शहादत का कलमा और यह दुआ पढ़ने का उल्लेख किया गया है . “हे अल्लाह तू मुझे तौबा करने वालों में से कर दे और उन लोगों में से कर दे जो स्वच्छता और पवित्रता अपनाने वाले हैं।” इस से मालूम हुआ कि पूर्ण स्वच्छता और पवित्रता उसी समय प्राप्त होती है जबकि शरीर, वस्त्र आदि को स्वच्छ रखने के साथ-साथ बन्दा अपने ‘ईमान’ को ताजा करता रहे और अल्लाह की सेवा में ‘तौबा’ और क्षमायाचना के द्वारा अपने गुनाहों की माफी माँगता रहे।

एक दूसरी जगह कहा गया है “उसमें ऐसे लोग हैं जो पाक-साफ रहना पसन्द करते हैं। और अल्लाह पाक-साफ रहने वालों से प्रेम करता है”।

—अत-तौबा आयत १०८।

‘हदीस’ में स्वच्छता और पवित्रता को ईमान का अंश ठहराया जा रहा है। एक ‘हदीस’ में स्वच्छता को आघा ‘ईमान’ कहा गया। शरीर और वस्त्र की स्वच्छता और सुथराई का मनुष्य के मन और उसकी आत्मा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि शरीर और वस्त्र स्वच्छ हैं तो अवश्य ही मन में विशेष प्रकार का आनन्द और प्रसन्नता की अनुभूति होगी और मनुष्य का मन विकसित पुष्प के समान खिल उठेगा। स्वच्छता अपनी वास्तविकता की दृष्टि में मन और

भर देते हैं^२ । और 'नकाज' प्रकाश है^३ । 'सदका' दलील और प्रमाण है^४ ।

आत्मा का विकास और आनन्द है । और अपवित्रता अपनी वास्तविकता की दृष्टि से मन के विकार, सकुचित अवस्था और तिमिरता का नाम है । नापाकी या पेशाब, पाखाने के पश्चात् आदमी जब नहाता या 'वजू' कर लेता है और साफ-सुथरे कपड़े पहनता और सुगन्ध का प्रयोग करता है, तो उसके मन की मलिनता दूर हो जाती है । और उसे एक प्रकार की प्रसन्नता प्राप्त होती है और वह इस योग्य होता है कि अल्लाह के आज्ञापालन और 'इबादत' के पवित्रतम कर्तव्य का पालन कर सके । उसे 'फिरिशतो' से एक प्रकार की समानता प्राप्त हो जाती है जो सदैव پاک-साफ रहते और पवित्रतम एवं सूक्ष्मतम भावों को मन में धारण किए रहते हैं ।

जिस व्यक्ति को पाकी और नापाकी की चिन्ता नहीं होती, जो सदा नापाकी की ही दशा में रहना पसन्द करता है उसकी आत्मा अन्धकार में घिरी रहती है । वह पवित्रतम अन्तरभावों और 'ईमान' के रसास्वादन से वंचित ही रह जाता है । उसकी आत्मा नाना प्रकार के वसवसों में जकड़ी रहती है । तत्व-दर्शिता (*Wisdom*) और बुद्धि-विवेक के द्वार उसके लिए नहीं खोले जाते ।

२ अर्थात् "अलहम्दुलिल्लाह" (प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है), सुबहानल्लाह व अलहम्दुलिल्लाह" (महिमावान् है अल्लाह, प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है) इन पवित्रतम 'कलमों' की बरकत से घरती और आकाश का वातावरण परिपूर्ण हो जाता है । ये पवित्र कलमों आदमी के नेकी के पल्ले को झुकाने वाले हैं । 'आखिरत' में इनका असीम बदला मिलेगा । इन 'कलमों' को यदि मनुष्य समझकर बड़े, तो अवश्य ही उसके जीवन में क्रान्ति आ जाए । वह दुनिया में कभी अल्लाह से गाफिल नहीं हो सकता ।

३ मुस्लिम के जीवन का प्रारम्भ और अन्त 'नमाज' ही है । नमाज मनुष्य के जीवन को अर्थमय बनाती और मानवीय आत्मा को अन्धकार और तुच्छ इच्छाओं से छुटकारा दिलाती है । 'नमाज' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से अल्लाह का स्मरण और उसकी 'तस्वीह' और गुणगान है । अल्लाह के स्मरण से बढकर जावन का प्रकाश कहाँ पाया जा सकता है ।

४ 'सदका' मनुष्य के मन्चे 'मोमिन' होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है । 'मोमिन' अल्लाह के मार्ग में अपना माल खर्च करके इस बात का प्रमाण सचित करता है कि वह अल्लाह और उसकी उतारी हुई 'शरीअत' पर 'ईमान' रखता है । सदका 'आखिरत' में भी मनुष्य के अल्लाह का उपासक होने का प्रमाण बनेगा

‘सब्र’ ज्योति है ५। और ‘कुरआन’ या तो तर्क है तुम्हारे हक में या तुम्हारे विरुद्ध ६। हर व्यक्ति सुबह करता है तो अपनी आत्मा का सौदा करता है फिर या तो उसे छुड़ा लेता है या तो उसे विनष्ट कर देता है”। —मुस्लिम

और इस प्रकार सदा देने वाला अल्लाह के पुरस्कार का अधिकारी होगा।

५ ‘मोमिन’ के जीवन में सब्र का स्थान अत्यन्त उच्च है। सब्र वास्तव में ‘ईमान’ और अल्लाह पर भरोसा करने का आवश्यक परिणाम है। सब्र के बिना मानवीय जीवन का विकास सम्भव नहीं। सब्र ‘मोमिन’ का आवश्यक गुण है। अर्थात् सदैव ‘ईमान’ के अभाव या उसके कमजोर होने का प्रमाण होता है। जिस व्यक्ति की दृष्टि परिणाम पर होगी वह कभी धैर्य को हाथ से जाने नहीं देगा। कितने ही सकट क्यों न आएँ वह कभी सत्य-मार्ग से विचलित नहीं हो सकता। धर्म-विरोधी उसे कितना ही प्रलोभन क्यों न दें वह कभी भी अपनी अन्तरात्मा और ‘ईमान’ की माँगों की उपेक्षा नहीं कर सकता। उसके आचरण को भ्रष्ट करने वाले सामान कितने ही अधिक क्यों न हों। गनगना और अश्लीलता का कितना ही जोर क्यों न हो वह इन सबके मुकाबले के लिए जो हथियार इस्तेमाल करता है वह सब्र का हथियार है। वह अल्लाह की निश्चित की हुई सीमाओं का सदैव और प्रत्येक अवस्था में ध्यान रखता है। सब्र के इस मौलिक महत्व के कारण उसे कुरआन में ‘नमाज’ के अर्थ में भी प्रयोग किया गया है। कुरआन में है “हे ‘ईमान’ लाने वाले! सब्र और ‘नमाज’ से सहायता लो। निस्सन्देह अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है।” —सूरा अल-वकरा आयत १५३। इस ‘आयत’ में ‘नमाज’ शब्द सब्र के पर्याय के रूप में प्रयुक्त हुआ है। ‘सब्र’ की इन्हीं विशेषताओं के कारण उसे प्रकाश या ज्योति की सजा दी गई है।

६ अर्थात् यदि तुम्हारा जीवन कुरआन के आदेशों और उसके पेश किए हुये आदर्श के अनुसार व्यतीत होगा, तो ‘कुरआन’ तुम्हारे लिए साक्षी और प्रमाण बनेगा परन्तु यदि तुम्हारी नीति इसके विरुद्ध है, तो कुरआन की गवाही तुम्हारे विरुद्ध होगी।

७ मतलब यह है कि दुनिया में प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी अवस्था में हो और किसी काम में हो वास्तविकता की दृष्टि से वह प्रतिदिन अपने प्राण का सौदा करता है। या तो उसे छुटकारा दिलाता है या उसे विनष्ट करता है। मनुष्य का जीवन एक व्यापार है। वह यदि अपना जीवन अल्लाह के आज्ञापालन में व्यतीत करता है, तो वह अपनी मुक्ति का प्रयास करता है। इनके विपरीत

२ शुबैब बिन अबी रौह नबी सल्ल० के एक सहाबी से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक दिन 'फ़ज्र' की 'नमाज़' पढ़ी और उस में आपने 'सूरा' अर-रूम पढ़ी उस में आप को सदेह हो गया। जब आप 'नमाज़' से पढ़ चुके तो कहा : कुछ लोगों की यह क्या दशा है कि हमारे साथ 'नमाज़' अदा करते हैं और स्वच्छता का भली-भाँति ध्यान नहीं रखते बस यही लोग हमारे 'कुरआन' पढ़ने में सन्देह पैदा कर देते हैं।

—नसई

३ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दतुवन मुँह को अधिक साफ रखने वाली और अल्लाह को अधिक प्रसन्न करने वाली चीज़ है ६।

—मुसनद इमाम शाफई, अहमद , नसई, बुखारी

४ हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि नबी सल्ल० का नित्यकार्य था कि दिन या रात में जब भी आप सोते तो उठने के पश्चात् दतुवन

यदि वह जीवन में अल्लाह को भुला देता है, तो वह स्वयं अपने विनाश में लगा हुआ है। ससार उसे नैतिक एवं आध्यात्मिक मृत्यु और 'आखिरत' में 'जहन्नम' की यातना से उसे बचाने वाला कोई नहीं।

५. इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'इबादत' के लिए स्वच्छता और 'बजू' आदि का ध्यान रखना कितना आवश्यक है। 'बजू' और स्वच्छता एवं शुद्धता का भली-भाँति ध्यान न रखने का बुरा प्रभाव दूसरो पर भी पड़ता है। यहाँ तक कि इसके प्रभाव से 'कुरआन' पढ़ने में भी गड़बड़ी हो सकती है।

६. दतुवन से मनुष्य को दोहरा लाभ पहुँचता है। इससे मुँह की सफाई भी हो जाती है और यह एक प्रिय कार्य है इसलिए इस से अल्लाह भी प्रसन्न होता है। इसी तरह की एक 'हदीस' है "जो व्यक्ति अपनी रोजी कमाने के लिए काम करे और अपने काम में अल्लाह की प्रसन्नता को सामने रखे उसकी मिसाल हजरत मूसा की माता की-सी है कि उन्होंने अपने ही बेटे को दूध पिलाया और उसकी मजदूरी भी ली" अर्थात् रोजी कमाने में भी मनुष्य दोहरा लाभ उठाता है रोजी भी कमाता है और अल्लाह से बदला भी पाता है। शर्त यह है कि वह अल्लाह की प्रसन्नता को सामने रखे और ईमानदारी के साथ काम करे। दोहरे लाभ की बात दतुवन और रोजी कमाने तक ही सीमित नहीं है बल्कि धर्म के समस्त आदेश ऐसे हैं जिनमें मनुष्य के वर्तमान जीवन और आखिरत की भलाई और कल्याण अपेक्षित हैं।

अवश्य करते ।

—अहमद, अबूदाऊद

५. शुरैह बिन हानि रज़ि० कहते हैं कि मैं ने हजरत आइया रज़ि० से पूछा कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब बाहर से घर में आते, तो सब से पहले क्या काम करते थे ? कहा सब से पहले आप दनुवन करते थे^{१०} ।

—मुस्लिम

६ हजरत अबू अब्दूत्र से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा चार चीजें 'रसूल' की 'मुन्नतो' (रीनियो) में से हैं लज्जा^{११}, सुगन्ध लगाना, दनुवन करना^{१२} । और विवाह करना^{१३} ।

—तिर्मिजी

१०. इन 'हदीसों' ने मानूँ हूँ कि नबी सल्ल० दनुवन का कितना ध्यान रखते थे । उस से यह मालूम हुआ कि दनुवन 'बजू' ही के साथ नहीं है बल्कि जब भी आवश्यकता हो दनुवन कर लेनी चाहिए । पाँच अवसरों पर विशेष रूप से दनुवन का महत्व है 'बजू' में नमाज के लिए खड़े होते समय (यदि 'बजू' और 'नमाज' के बीच अधिक समय हो गया हो), कुरआन मजीद पढ़ने के समय, सोकर उठने के समय, मुँह में दुर्गन्ध पैदा हो जाने पर और दाँतों का रंग बदल जाने के समय ।

११. लज्जा मनुष्य के चरित्र का सौन्दर्य है । नबी सल्ल० की एक 'हदीस' है : "जिसमें लज्जा होगी उसमें एक विशेष प्रकार की शोभा ही सिद्ध होगी ।" एक 'हदीस' में है "लज्जा 'ईमान' ही की एक शाखा है ।" अल्लाह के नबी चरित्र की दृष्टि से एक उच्च स्थान पर होते हैं इसलिए उनके यहाँ यह अभीष्ट चीज न पाई जायेगी, तो कहाँ पाई जायेगी ।

१२. सुगन्ध और दनुवन दोनों ही चीजें बहुत ही प्रिय हैं दनुवन से मुँह की सफाई होती है, सुगन्ध से हमारी आत्मा और हृदय को एक विशेष प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है । उपासना-आनन्द में सुगन्ध और पवित्रता दोनों ही चीजें सहायक होती हैं ।

१३. विवाह समाज की आधारशिला है । अल्लाह के नबी मानव-समाज के लिए पूर्ण आदर्श बनकर आते हैं इसलिए वे विवाह को कैसे वृणित ठहरा सकते हैं । सासारिक जीवन में अच्छी पत्नी एक बड़ी नेमत है । विवाह वह चीज है जिस से दृष्टि और हृदय की पवित्रता की रक्षा होती है । 'नबी' न तो इसकी शिक्षा देने आते हैं कि मनुष्य ससार को त्याग दे और न उन्होंने विवाह और मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों को ईश-भक्ति के उच्च आदर्शों के प्रतिकूल ठहराया ।

७ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : वह 'नमाज' जिस के लिए दतुवन की जाए उस 'नमाज' की अपेक्षा सत्तर गुना श्रेष्ठ है जो बिना दतुवन के अदा की जाए^{१४}। —बैहकी-शोबुलईमान

८. हजरत उस्मान रजि० उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि जिस व्यक्ति ने 'वजू' किया और अच्छी तरह से 'वजू' किया उस के सारे गुनाह निकल जायेंगे यहाँ तक कि उस के नखों के नीचे से भी^{१५}। —बुखारी, मुस्लिम

९ अबू मालिक अशअरी से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

इस तरह की चीजें तो वास्तव में रोगग्रस्त मस्तिष्क की उपज हुआ करती हैं।

१४ अर्थात् जो 'नमाज' दतुवन करके अदा की जाएगी वह उस 'नमाज' की अपेक्षा जो बिना दतुवन किये पढ़ी जाये श्रेष्ठतम होगी। इस से मालूम हुआ कि बाह्य शुद्धता एवं पवित्रता का धर्म में कितना महत्व है। बाह्य शुद्धता का मनुष्य के कर्मों पर बाह्य और अन्तरिक दोनों ही दृष्टि से प्रभाव पड़ता है।

१५ अर्थात् 'वजू' से केवल बाह्य शुद्धता ही प्राप्त नहीं होती बल्कि इस से आदमी के गुनाह भी धुल जाते हैं। इसलिए कि हर 'वजू' वास्तव में अल्लाह की बन्दगी की नये सिरों से प्रतिज्ञा भी है इसीलिए 'हदीसों' में 'वजू' के पश्चात् कलमा-ए-शहादन अशहदु अन ला इलाह इल्लल्लाह व अन्न मुहम्मदन अब्दुह व रसूलुह (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नहीं और यह कि मुहम्मद अल्लाह के बन्दे और उसके 'रसूल' हैं) पढ़ने का जिफ्र भी आता है। इस 'शहादत' (गवाही) प्रतिज्ञा, और ईमान के पुनरावृत्ति के बिना आन्तरिक पवित्रता प्राप्त नहीं होती। इस कलमा से मानो पवित्रता पूर्ण हो जाती है। बन्दगी की प्रतिज्ञा और 'ईमान' की पुनरावृत्ति के परिणाम स्वरूप मनुष्य के गुनाहों को क्षमा कर दिया जाता है। एक 'हदीस' में आता है कि उसके लिए 'जन्नत' के सभी दरवाजे खुल जाते हैं।

'वजू' से छोटे गुनाह तो अवश्य ही क्षमा हो जाते हैं, बड़े गुनाहों के क्षमा होने की भी राह निकलती है। किसी व्यक्ति से यदि बड़े गुनाह हुए हों, तो 'तौबा' और 'कफोर' (प्रायश्चित्त) के दूसरे तरीके भी अपनाए ताकि अल्लाह उसके सभी गुनाहों को क्षमा कर दे और उसे पवित्र जीवन प्राप्त हो।

सल्ल० ने कहा : शुद्धता एव पवित्रता 'ईमान' का अर्ध भाग है^{१९} ।

—मुस्लिम

१०. कअूव विन उजरा रजि० का वयान है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब तुम में से कोई अच्छी तरह 'वजू' करे फिर मस्जिद के इरादे से निकले तो 'तशवीक' न करे क्योंकि वह 'नमाज' में होता है^{२०} ।

—अबूदाऊद

१६ 'इस्लाम' ने जहाँ आध्यात्मिक और शुद्धता एव पवित्रता की शिक्षा दी है वही वह हमें बाह्य शुद्धता एव पवित्रता और शिष्टाचार आदि की शिक्षा भी देता है इसीलिए बाह्य शुद्धता एव पवित्रता को आधा ईमान कहा गया । ईमान की समस्त माँगें तो उस समय पूरी हो सकती हैं जब कि मनुष्य अपने बाह्य और अन्तर दोनों को पवित्र रखे । दोनों में गहरा सम्पर्क है और दोनों की पूर्णता से मानव के व्यक्तित्व को पूर्णता प्राप्त होती है ।

१७. एक हाथ की उँगलियों को दूसरे हाथ की उँगलियों में यों ही अकारण डालना या के चटखाने के लिए डालना 'तशवीक' है । यह एक फजूल हरकत है या सुस्ती और गफलत का चिह्न है । इससे रोका गया । जब किसी व्यक्ति ने अच्छी तरह 'वजू' कर लिया, तो वह सामान्य और बेखबर लोगो जैसा नहीं रहा, बल्कि उसे बाह्य पवित्रता के साथ आत्मा की शुद्धता भी प्राप्त हो गई । अब वह उस अल्लाह की ओर प्रवृत्त हो गया जिसकी ओर रुख करना मन की समस्त मलिनता को दूर करता और मनुष्य को पवित्र बनाता है । वास्तविकता की दृष्टि से अब वह 'नमाज' की दशा में है । और यदि मस्जिद आने के इरादे से वह घर से निकल पड़ा तो फिर उसके 'नमाज' की दशा में कोई सन्देह नहीं रहा । मस्जिद का मार्ग तै करने में उसे 'नमाज' ही का सवाब मिलेगा । इसलिए उसे अकारण कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जो 'नमाज' के प्रतिकूल हो । हज़रत अबू सईद से भी एक 'हदीस' में उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा : 'जब तुममें से कोई मस्जिद के भीतर हो, तो उसे अपने हाथों की उँगलियों को एक-दूसरे के भीतर न डालना चाहिए । तुममें से कोई व्यक्ति जब तक मस्जिद में रहता है वह 'नमाज' ही में होता है यहाँ तक कि वह मस्जिद से चला जाए ।

—मुसनद अहमद

नमाज के अधिनियम

عَنْ أَبِي ذَرٍّ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لَا يَزَالُ اللَّهُ مُقْبِلًا عَلَى الْعَبْدِ وَهُوَ صَلَاتِهِ تَابَلَّتْ فَإِذَا التَفَتَ انْصَرَفَ عَنْهُ ————— ابوداود سانی

१ अबूजर रजि० से उल्लिखित है कि रात के रसूल सल्ल० ने कहा वन्दा जब 'नमाज' में होता है तो अल्लाह अवश्य ही उसकी ओर ध्यान देता है जब तक कि वह इधर-उधर न देखे और जब वह इधर-उधर देखने लगता है तो अल्लाह उस की ओर से मुख फेर लेता है।

—अबूदाऊद, नसई

२ अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन अबू बक्र से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि हम हजरत आइशा रजि० के पास थे इतने में उनका भोजन आया तो कासिम बिन मुहम्मद 'नमाज' पढ़ने के लिए खड़े हो गये तो (हजरत आइशा रजि० ने) कहा मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना है कि जब खाना सामने आ जाये तो उस समय 'नमाज' नहीं (पढ़नी चाहिये) और न उस समय ('नमाज' पढ़नी चाहिए) जब कि पेशाब-पाखाने की जरूरत हो^१। —मुस्लिम, अबूदाऊद

१ अर्थात् अल्लाह उस समय तक उस व्यक्ति की ओर ध्यान देता और उस पर कृपा-दृष्टि डालता है जब तक वह 'नमाज' में अल्लाह की ओर ध्यान देता है, और इधर-उधर नहीं देखता। लेकिन जब वह दूसरी ओर ध्यान देता है तो अल्लाह भी उसकी ओर से अपना रुख फेर लेता है। उसके आत्म-गौरव को यह कब स्वीकार हो सकता है कि वह उस व्यक्ति की ओर ध्यान दे जो उस की महानता और बड़ाई का आदर नहीं करता।

२ मतलब यह है कि भूख हो और खाना आ जाये तो उसे खा कर 'नमाज' के लिए जाना चाहिए अन्यथा 'नमाज' में पूरी एकाग्रता प्राप्त न हो सकेगी। इसी तरह पेशाब-पाखाना की जरूरत है तो उस समय भी 'नमाज' में जी नहीं लग सकता। इसलिए ऐसी दशा में मनुष्य को चाहिए कि पेशाब-पाखाने से निवृत्त हो कर 'नमाज' अदा करे। 'शरीअत' ने मनुष्य की विवशता का ध्यान रखा है। कुरआन में है "अल्लाह ने धर्म में तुम्हारे लिए तंगी और मुश्किल नहीं रखी"—अल-हज्ज आयत ७८। एक 'हदीस' में है कि आपने कहा "जब तुमसे किसी के सामने रात का खाना रखा जाये और 'नमाज' की तकबीर कही जाने लगे तो पहले खाना खाये, खाने में जल्दी न

३ अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब तुम में कोई व्यक्ति लोगों को 'नमाज' पढ़ाये तो उसे हल्की (नमाज) पढ़ानी चाहिए इसलिए कि उनमें कमजोर, बीमार और आवश्यकता रखने वाले सब सम्मिलित होते हैं और जब अकेले 'नमाज' पढ़े तो जितनी चाहे लम्बी करे ३। —बुखारी, मुस्लिम

४ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि (कभी ऐसा होता है कि) मैं 'नमाज' शुरू करता हूँ और मैं चाहता हूँ कि उसे लम्बी करूँ इतने में बच्चे के रोने की आवाज सुन लेता हूँ तो मैं अपनी 'नमाज' को सक्षिप्त कर देता हूँ इसलिए कि मैं उस तकलीफ को जानता हूँ जो उसकी माता को उसके रोने से होगी ४।

—बुखारी, मुस्लिम, इब्नमाजा, नसई, तिरमिजी

५. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

करे यहाँ तक कि वह उससे निवृत्त हो जाये ।”

—मुस्लिम, बुखारी

हजरत इब्न उमर रजि० के सामने खाना रक्खा जाता और 'नमाज' शुरू हो जाती तो वे 'नमाज' को न जाते जब तक कि खाना खा न लेते हालाँकि 'नमाज' में 'इमाम' के कुरआन पढ़ने की आवाज सुनते होते थे ।

३. अर्थात् 'इमाम' को चाहिए कि वह 'नमाज' पढ़ने वालों का ख्याल रखे । 'नमाज' बहुत लम्बी न करे ताकि हर व्यक्ति आसानी से श्रदा कर सके । अकेले नमाज पढ़ रहा हो तो उसे अधिकार है, जितनी देर चाहे 'नमाज' में खड़ा रहे । हजरत अनस रजि० का बयान है कि मैंने कभी किसी इमाम के पीछे 'नमाज' नहीं पढ़ी जो नबी सल्ल० की नमाज की तरह हल्की और पूर्ण हो ।

—बुखारी

४. बच्चे के रोने की आवाज आती तो नबी सल्ल० इस ख्याल से 'नमाज' को सक्षिप्त कर देते थे कि सम्भव है बच्चे की माँ नमाज में सम्मिलित हो और उसे बच्चे के कारण परेशानी हो । इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि अच्छी 'नमाज' के लिए यह आवश्यक नहीं कि मनुष्य इतना लीन हो जाये कि उसे 'नमाज' के अतिरिक्त किसी चीज की खबर ही न हो सके । अच्छी और आदश नमाज के लिए मौलिक रूप से जो चीज अभीष्ट है वह है अल्लाह की महानता का एहसास और उसकी ओर दिल का झुकाव, भय और विनय-शीलता । 'नमाज' में यह चीज जितनी अधिक होगी उतनी ही हमारी 'नमाज' अच्छी हो सकेगी ।

सल्ल० ने कहा : जब तक आनन्द और तत्परता के साथ 'नमाज' पढ़ सको पढ़ो और सुस्त हो जाओ तो बैठ जाओ ५।

६. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जब तुम में कोई व्यक्ति 'नमाज' में ऊँघने लगे तो फिर उसे सो रहना चाहिए यहाँ तक कि उसकी नीद जाती रहे इसलिए कि ऊँघते हुए तुम में कोई 'नमाज' पढ़ेगा तो वह नहीं जान सकता (कि क्या कह रहा है) सम्भव है कि क्षमा का इच्छुक हो और अपने हक में बुरे शब्द निकालने लगे ।
—बुखारी, मुस्लिम

७. इमरान इब्न हुसैन रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा खड़े होकर 'नमाज' पढ़ो । खड़े हो कर न पढ़ सको तो बैठकर पढ़ो और बैठ कर भी न पढ़ सको तो लेट कर पढ़ो ६।

—बुखारी

८. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल०

५. अर्थात् 'नमाज' का आदेश देकर अल्लाह ने तुम्हें किसी मशक्कत में नहीं डाला है । 'नमाज' तो तुम्हारा आध्यात्मिक आहार है । इसलिए उसे अधिक-से-अधिक तत्परता और आनन्द-स्थिति में अदा करो ताकि तुम उससे अधिक-से-अधिक शक्ति प्राप्त कर सको और तुम 'नमाज' से पूरा लाभ उठा सको ।

यह बात ध्यान में रहे कि यहाँ खास-तौर से 'नफल' नमाज का जिक्र किया गया है :

जीवन में 'नमाज' का इतना महत्व है कि उसे किसी दशा में नहीं छोड़ा जा सकता । जिस तरह भी हो सके उसे अदा करते रहो । खड़े हो कर न पढ़ सको तो बैठ कर पढ़ो और यदि बैठ कर पढ़ना भी सम्भव न हो तो लेट कर ही 'नमाज' अदा कर लो ।

'शरीअत' के आदेश मनुष्य के लिए मुसीबत कदापि नहीं हैं । 'हदीसों' से इसकी बहुत सी मिसालें प्रस्तुत की जा सकती हैं । 'सहाबा' इस रहस्य से भली-भाँति परिचित थे कि 'शरीअत' के आदेश मनुष्य को मुश्किल में डालने के लिए कदापि नहीं हैं । हजरत अबूजर रजि० का कथन है . 'मनुष्य के धर्म के विषय में समझ रखने की एक पहिचान यह है कि यदि उसे 'नमाज' के समय कोई बड़ी जरूरत पेश आ जाये तो पहले वह अपनी जरूरत पूरी कर ले ताकि जब वह नमाज की ओर आये तो एकाग्रचित्त होकर आये ।—बुखारी

ने हमें हुक्म दिया : जब तुम मस्जिद में हो और 'नमाज' के लिए 'अजान' दी जाये, तो तुम मे से कोई उस समय तक मस्जिद से बाहर न निकले जब तक कि 'नमाज' न पढ ले" ।
—अहमद

६ हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तीन व्यक्ति ऐसे हैं कि उनकी 'नमाज' उनके सिर से एक बालिश्त भी ऊपर नहीं उठती^८ वह इमाम जिसे लोग नापसन्द करते हों और वह स्त्री जो इस दशा मे रात गुजारे कि उसका पति उससे अप्रसन्न हो और वे दो भाई जो आपस मे क्रुद्ध हों और सम्बन्ध तोड ले^९ ।
—इब्न माजा

१० हजरत अनस रजि० मे उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति 'नमाज' (पढनी) भूल जाये या 'नमाज' से गाफिल हो कर सो जाये तो इसका बदला यह है कि जिस समय याद आ जाये 'नमाज' पढ ले और एक 'हदीस' में ये शब्द हैं कि उसका बदला इसके सिवा और कुछ नहीं कि जिस समय याद आ जाये अदा कर ले ।

/

—बुखारी, मुस्लिम

११ हजरत अबू कतादा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : सो जाने से ('नमाज' मे विलम्ब होने पर) कोई

७ अर्थात् जब 'अजान' हो गई तो 'नमाज' पढकर ही मस्जिद से निकलना चाहिए । बिना किसी वास्तविक विवशता के 'नमाज' अदा किये बिना मस्जिद से निकल जाना इस बात की पहिचान है कि आदमी के मन मे 'नमाज' का आदर और अल्लाह की महानता का सही एहसास नहीं है, अन्यथा 'मुवज्जिन' की पुकार को रद्द करने का साहम उसे कभी नहीं हो सकता था ।

८ अर्थात् वह तनिक भी स्वीकार नहीं होती ।

९ यह 'हदीस' बताती है कि अल्लाह का हक भी उस समय अदा होता है जब कि बन्दो का हक भी अदा हो । भाई यदि भाई के हक को भूल जाये, इसी प्रकार स्त्री यदि पति को अप्रसन्न रखे या 'इमाम' यदि लोगो की इच्छा और उनकी उचित मांगो को न पहिचाने तो उसकी 'नमाज' वास्तव मे 'नमाज' नहीं हो सकती । 'नमाज' तो उच्च चरित्र है जिसका प्रदर्शन बन्दा अल्लाह के हक को अदा करके करता है लेकिन यदि दूसरे हकदारो के हक अदा करने मे उसमे कोताही होती है तो इसका अर्थ यह है कि अभी उसके चरित्र ही मे त्रुटि या दोष है ।

दोष नहीं, दोष तो जागने की दशा में ('नमाज' में विलम्ब करने पर) है। अतः जब तुम में कोई (नमाज पढ़नी) भूल जाए या 'नमाज' से गाफिल होकर सो जाये, तो जिस समय याद आए तुरन्त पढ़ ले क्योंकि सर्वोच्च अल्लाह ने कहा है 'नमाज' कायम करो मेरी याद के लिए।"

—मुस्लिम

१२ हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है। उन्होंने एक अत्यन्त ठण्ठ और आँधी वाली रात में 'नमाज' की 'अजान' दी फिर कहा सुन लो। अपने-अपने घरों में 'नमाज' अदा कर लो। उसके बाद कहा कि अल्लाह के रसूल सल्ल० उस समय जबकि कडाके की सर्दी और वर्षा की रात होती 'मुवज्जिन' (अजान देने वाले) को हुक्म देते कि वह ('अजान में) कह दे कि सुन लो। अपने-अपने घरों में 'नमाज' पढ़ लो।

—बुखारी, मुस्लिम

१३. हजरत अम्मार रजि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना किसी व्यक्ति की 'नमाज' लम्बी होनी और 'खुतबा' सक्षिप्त होना उसके समझदार होने का प्रमाण है। अतः 'नमाज' को लम्बी और 'खुतबा' को सक्षिप्त करो निस्सन्देह कुछ 'खुतबे' जादू होते हैं ११।

१४ उकबा बिन अमिर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो मुसलमान अच्छी तरह 'वजू' करे फिर खड़े होकर

१० अर्थात् यदि कोई व्यक्ति भूल गया और उसने 'नमाज' अदा नहीं की या उस पर ऐसी नींद छा गई कि वह 'नमाज' अदा किये बिना सो गया तो इस पर उसकी पकड़ न होगी। जब उसे याद आ जाए या जब वह जाग जाए तो तुरन्त 'नमाज' पढ़ ले। 'नमाज' का सम्बन्ध मनुष्य की चेतना और उसकी याद से है यदि मनुष्य किसी कारण से गाफिल हो गया या उसे याद नहीं रहा कि उसने अभी 'नमाज' अदा नहीं की है, तो वह विवश समझा जायेगा। परन्तु यदि कोई व्यक्ति जान-बूझ कर बिना किसी विवशता के 'नमाज' छोड़ देता है तो उसका दिल गुनहगार है, अवश्य ही उसकी पकड़ होगी।

११ अर्थात् वे जादू का असर दिखाते हैं। वे अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होते हैं। खुतबा या भाषण प्रभावकारी हो इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि वह लम्बा भी हो। सक्षिप्त भाषण लम्बे भाषण की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावकारी हो सके है।

अपनी पूरी हादिक एकाग्रता के साथ एक चित्त हो कर दो 'रकात' 'नमाज' अदा करे तो 'जन्नत' उसके लिए अनिवार्य हो जायेगी ^{११}। —मुस्लिम

नमाज जमाअत के साथ

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ ۖ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ مَنْ نَوَّضًا
فَاحْسَنَ وَضُوءَهُ سَمِعَ رَاحَةً فَوَجَدَ النَّاسَ قَدْ صَلَّوْا أَعْطَاهُ اللَّهُ مِنْ أَحَبِّ مَنَ
سَلَاهَا وَحَضْرَاهَا لَا تَنْقُصُ ذَلِكَ مِنَ الْجُزْءِ شَيْئًا ————— رَوَاهُ

१. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति ने 'वजू' किया और अच्छी तरह 'वजू' किया फिर वह (नमाज के लिए) गया और देखा कि लोग 'नमाज' अदा कर चुके हैं तो उसे उन लोगों के बराबर बदला मिलेगा जो वहाँ 'नमाज' में उपस्थित हुए और नमाज अदा की और इस में उन के सवाब में कुछ भी कमी न होगी ^१। —अबू दाऊद, नसई

१२ अर्थात् ऐसी 'नमाज' मनुष्य को इस योग्य बना देती है कि वह जन्नत में जगह पा सके। भावात्मक दृष्टि से वह मासारिक जीवन में ही 'जन्नत' में प्रवेश पा चुका होता है। 'आखिरत' में तो उसका ठिकाना 'जन्नत' ही है। शर्त यह है कि अपनी असावधानी और कोताहियों में वह अपने को इस हक से वंचित न कर ले। इस बात को इमाम इब्न तैमिया ने इन शब्दों में कहा है "दुनिया में एक ऐसी 'जन्नत' है कि जो उसमें दाखिल न हुआ आखिरत में भी दाखिल न होगा।"

१. एक व्यक्ति नियमपूर्वक 'नमाज' पढ़ता है और पावन्दी के साथ जमाअत में शरीक होता है, यदि सयोग से किसी दिन उसे जमाअत से नमाज न मिल सकी तो भी अल्लाह उसे पूरा-पूरा सवाब प्रदान करेगा। उसके सवाब में किसी प्रकार की कमी न होगी। अल्लाह केवल बाह्य को नहीं देखता उसके यहाँ निर्णय लोगों की नीयतों और उनकी शुद्ध हृदयता के आधार पर होता है। एक रिवायत में है कि आपने कहा। "जिसने एक रकअत (जमाअत के साथ) पा ली उसने पूरी 'नमाज' पा ली" (अबू दाऊद)। उसे पूरी नमाज का सवाब मिलेगा। लेकिन शर्त यह है कि उसकी नीयत और शुद्ध हृदयता में कोई दोष न हो।

२. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : (नमाज़ में) अपनी 'सफ़ो (पक़्तियों) को सीधी और बराबर रखो क्योंकि 'सफ़ो को सीधा और बराबर रखना 'नमाज़' कायम करने का हिस्सा है^२ । —बुख़ारी, मुस्लिम

३. हज़रत अबू हुदैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . कसम उस की जिस के हाथ में मेरे प्राण हैं मैं ने इरादा किया कि हुक्म दूँ कि लकड़ियाँ एकट्ठा की जाये फिर नमाज़ का हुक्म दूँ और उसके लिए अज़ान दी जाये फिर एक व्यक्ति को लोगो का 'इमाम' नियुक्त करूँ फिर उन लोगो की ओर जाऊँ (जो नमाज़ में हाज़िर नहीं होते) और उन के घरों को आग लगा दूँ^३ ।

—बुख़ारी, मुस्लिम

४. उबई बिन कअब रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : आदमी का 'नमाज़' जो वह किसी दूसरे आदमी के साथ की अदा करता है उस 'नमाज़' के मुकाबले में अधिक उत्तम है जो वह अकेले अदा करे और जो 'नमाज़' दो आदमियों के साथ अदा की वह उस 'नमाज़' से उत्तम है जो उस ने एक आदमी के साथ अदा की और फिर जितने अधिक आदमी हो तेजोमय एव प्रतापवान् अल्लाह को प्रिय है^४ ।

—अहमद, अबूदाऊद, नसई

२. अर्थात् 'नमाज़' को पूरे तौर पर अदा करने में यह बात भी सम्मिलित है कि जमाअत की सफ़े (पक़्तियाँ) ठीक और सीधी हो । कर्म के बाह्य और आन्तरिक दोनों पहलुओं की ओर ध्यान देना चाहिए । दोनों के ठीक होने पर मानव-व्यक्तित्व का विकास और पूर्णता अवलम्बित है ।

३. जमाअत के साथ 'नमाज़' पढ़ने का जो महत्व है उसका अनुमान इस 'हदीस' से पूर्णतः किया जा सकता है । 'नमाज़' जमाअत सहित एक ओर हमारा सम्बन्ध हमारे अल्लाह से बढ़ाती है, दूसरी ओर उसके द्वारा एक सुदृढ़ सामाजिकता वजूद में आती है । शर्त यह है कि हमें 'नमाज़' के तकाज़ों और उसके सभी नियमों और अधिनियमों का ज्ञान हो और हम उनका पालन करते हो ।

४. अर्थात् जमाअत जितनी बड़ी होगी उतनी ही अधिक अल्लाह को प्रिय होगी और उतना ही अधिक वह हमारे नैतिक एव आध्यात्मिक विकास का कारण बन सकेगी । बुख़ारी और मुस्लिम में हज़रत इब्न उमर रज़ि० से भी एक रिवायत आती है कि नबी सल्ल० ने कहा ' जो नमाज़ जमाअत के साथ

५. अबू बरदा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : किसी बस्ती या 'बादिया'५ में तीन आदमी हों और वहाँ जमाअत के साथ नमाज कायम न की जाती हो, तो उन पर शैतान काबू पा लेता है, तो तुम जमाअत की पाबन्दी को अपने ऊपर अनिवार्य कर लो क्योंकि भेड़िया उसी भेड़ को खाता है जो गल्ले से दूर रहती है१।

—अहमद, अबूदाऊद, नसई

‘इमामत’

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عُمَرَ قَالَ: قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: اجْعَلُوا أَمَّتَكُمْ
خِيَارَكُمْ فَإِنَّهُمْ وَقَدْ كَفَّ فِي مَا بَيْنَكُمْ وَبَيْنَ رَبِّكُمْ ————— بهی، داری

१ अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में जो अच्छे हों उन्हें अपना ‘इमाम’ बनाओ क्योंकि वे तुम्हारे और तुम्हारे ‘रब’ के बीच तुम्हारे प्रतिनिधि हैं १।

—बैहकी, दारकुतनी

अदा की जाये उसे अकेला पढ़ने की अपेक्षा सत्ताईस दर्जा अधिक श्रेष्ठता प्राप्त है।”

५. जहाँ कोई स्थायी रूप से बस्ती न हो बल्कि कुछ दिनों के लिए कोई वहाँ ठहर गया हो।

६. इस ‘हदीस’ से एक दृष्टान्त के द्वारा यह बात समझाने की कोशिश की गई है कि जमाअत से नमाज अदा करने और जमाअत से सम्बद्ध रहने के फायदे अगणित हैं। जमाअत की ताकत मनुष्य के सुधार और उसे सत्य पर कायम रखने में सहायक होती है। शैतान की उकसाहटों और हस्तक्षेपों से मनुष्य सुरक्षित रहता है। कुछ लोग इरादे के कमजोर होते हैं। व्यक्तिगत रूप से ‘नमाज’ का पाबन्द होना उनके लिए कठिन होता है। जमाअत की व्यवस्था के कारण वह भी सरलतापूर्वक ‘नमाज’ के पाबन्द हो सकते हैं। जमाअत के साथ ‘नमाज’ अदा करने से एक ऐसी आध्यात्मिक वातावरण पैदा हो जाता है जिसका मनुष्य के मन और मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

१. जब इमाम अल्लाह के समक्ष पूरी जमाअत का प्रतिनिधित्व करता है, तो उसे जमाअत का निर्वाचित व्यक्ति होना ही चाहिए। नबी सल्ल० स्वयं ‘इमामत’ करते थे। अन्त समय में जब बीमार हुए तो उस व्यक्ति (हज़रत अबू बक्र रजि०) को ‘इमामत’ पर नियुक्त किया जो मुस्लिम समुदाय में श्रेष्ठ था।

मस्जिद का आदर

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: أَحَبُّ الْبِلَادِ إِلَى اللَّهِ
نَسَاحِدُهَا وَأَبْغَضُ الْبِلَادِ إِلَى اللَّهِ أَسْوَافُهَا — مسلم

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'अल्लाह की दृष्टि में सारी आबादी में प्रिय स्थान मस्जिदे हैं और अल्लाह की दृष्टि में सब से बुरे स्थान बाजार हैं'।

—मुस्लिम

२. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति मेरी इस मस्जिद में केवल नेकी के ध्येय से आयेगा कि वह उसे सीखेगा और सिखायेगा उस का दर्जा अल्लाह के मार्ग में 'जिहाद' करने वाले के बराबर होगा। और जो व्यक्ति इस के अतिरिक्त किसी और ध्येय से आये, तो वह उस व्यक्ति के समान होगा जो दूसरे के माल को तकता है^१। —इब्नमाजा, अल-बैहकी-शोबुलईमान

३ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरी इस मस्जिद में एक 'नमाज' दूसरी मस्जिदों की

१ सारे स्थानों और आबादियों में सब से प्रिय स्थान अल्लाह की दृष्टि में मस्जिदे है। घरती में इन से बढ़कर पवित्र स्थान दूसरे नहीं हो सकते। मस्जिदें अल्लाह की महानता और पवित्रता की यादगार हैं। इसीलिए उन्हें अल्लाह का घर कहा जाता है। वे हमारी 'इबादत गाह' (उपासना गृह) हैं। है। उनमें एक अल्लाह की 'इबादत' और उपासना की जाती है। इस 'हदीस' में बाजार को सब से बुरा स्थान कहा गया है। बाजार वास्तव में फितना और फसाद की जगह होता है। बिगड़े हुए वातावरण के बाजार तो धोखा, छल आदि हर प्रकार की बुराइयों के अड्डे होते हैं। आज के बाजारों में नग्नता, अश्लीलता और निर्लज्जता का बाजार जैसा गर्म दीख पड़ता है उसे बयान करने की आवश्यकता नहीं। किसी भले व्यक्ति के लिए बाजार में निगाह बचा कर निकलना मुश्किल है।

२. अर्थात् ऐसा व्यक्ति जो किसी अच्छे ध्येय से मेरी मस्जिद में न आये। वह बिल्कुल ही बे-नसीब है। उसके हिस्से में पश्चाताप और दुख के अतिरिक्त और कुछ नहीं आ सकता।

हज़ार 'नमाजों' से उत्तम है सिवाय 'मस्जिदे हराम ('काबा') के^३।

—बुखारी, मुस्लिम

४. हज़रत हसन से 'मुरसल' तरीके से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा लोगों पर ऐसा समय आने वाला है कि वे अपनी दुनिया की बातें अपनी मस्जिदों में करेंगे। उस समय तुम उन लोगों में न बैठना, अल्लाह को ऐसे लोगों की आवश्यकता नहीं^४।

—अल-वैहकी-शौबुल ईमान

३ अर्थात् 'काबा' के सिवा दूसरी मस्जिदों में 'नमाज' पढ़ने का जो सवाब है उस के हज़ार गुना सवाब से भी अधिक नबी सल्ल० की 'मस्जिद नववी' में 'नमाज' पढ़ने का सवाब है। नबी सल्ल० की मस्जिद में जब ईमान वाले पहुँचते हैं और वहाँ 'नुबूवत' की यादगार चीज़ों को देखते हैं, तो मन के कितने ही पर्दे उठ जाते हैं। वहाँ आदमी को अपनी दो 'रकअतें' दुनिया की प्रत्येक चीज़ में अधिक प्रिय प्रतीत होती हैं। जीवन का समस्त अभिप्राय दो 'सजदों' में सिमट आता है। ऐसी 'नमाजें' अल्लाह के यहाँ जो स्थान भी पा लें वह कम ही है।

४ अर्थात् 'मस्जिद' में आने के बाद भी उनकी दुनिया की बात-चीत समाप्त न हो सकेगी। मस्जिद में दाखिल होकर भी वे अल्लाह की याद से गाफिल रहेंगे। अल्लाह को ऐसे लोग कदापि पसन्द नहीं है। ऐसे लोगों के पास बैठकर अपने समय को नष्ट करना या ऐसे लोगों की बात-चीत में सम्मिलित होकर अपनी नेकियों को नष्ट करना बड़ी ही नादानी की बात होगी। इसलिए ऐसे लोगों से दूर ही रहना चाहिए। 'शरहुलहिदाया' में है कि मुवाह' (वैध) बात-चीत भी 'मस्जिद' में 'मकरूह' है, वह नेकियों को खा जाती है।

‘नफ़ल’ नमाज़ और ‘तहज्जुद’

عَنِ الْمُغِيرَةِ بْنِ شُعْبَةَ رَضِيَ قَالَ: قَامَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ حَتَّى نَوَسَّ مَتَّ قَدَامَهُ
فَقِيلَ لَهُ لِمَ تَصْنَعُ هَذَا وَقَدْ غُفِرَ لَكَ مَا تَقْدَمُ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَأْخُرُ؟ قَالَ:
أَفَلَا أَكُونُ عَبْدًا شَكُورًا۔ — حَارِي مُسْلِم

१. मुगीरा रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने (रात को) इतनी देर तक (नमाज में) खड़े रहे कि आप के पाँव सूज आये। आप से कहा गया कि हे अल्लाह के रसूल ! आप ऐसा क्यों करते हैं जब कि आप के अगले-पिछले सब गुनाह क्षमा किये जा चुके हैं। आप ने कहा क्या मैं कृतज्ञ बन्दा न बनूँ ? — बुखारी, मुस्लिम

२. अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल के कहा अल्लाह उस व्यक्ति पर दया करे जो रात को उठा और ‘नमाज़’ पढ़ी और अपनी स्त्री को जगाया और उस ने भी ‘नमाज़’ पढ़ी और यदि वह स्त्री न उठे तो उस के मुँह पर पानी के छीटे मारे। अल्लाह उस स्त्री पर दया करे जो रात को उठे और ‘नमाज़’ पढ़े और अपने पति को (‘नमाज़’ के लिए) जगाए और वह भी ‘नमाज़’ पढ़े और न उठे तो उस के मुँह पर पानी के छीटे मारे २। — अबूदाऊद, नसई

१. अर्थात् यह अल्लाह के उपकारो ही की माँग होती है कि बन्दा अधिक-से-अधिक अपने ‘रब’ की ‘इबादत’ और बन्दगी में लग जाए। अल्लाह का कृतज्ञ बन्दा बनने का उत्तम तरीका यही है। वे लोग बड़े तग़दिल हैं जो अल्लाह के उपकारो का आभार स्वीकार नहीं करते। ऐसे लोग उन भावनाओं और उन कोमल अनुभूतियों से परिचित नहीं होते जो ‘भोमिन’ के आंतरिक जीवन के सौन्दर्य का आशय होवे हैं। जिनके बिना मनुष्य की दशा ऐसे पुष्प की होती है जो रंग से वंचित और गन्धहीन हो या फिर वह ऐसी मदिरा के सदृश है जो मादकता से वंचित हो।

२. इस ‘हदीस’ से रात में ‘नमाज़’ पढ़ने के माहात्म्य पर प्रकाश पड़ता है। रात में जब दुनिया सो रही होती है बिस्तर छोड़कर ‘नमाज़’ में अल्लाह के आगे खड़ा होना इस बात का पता देता है कि आदमी को अपने ‘रब’ से असाधारण सम्बन्ध प्राप्त है। यह चीज उसे अल्लाह से अधिक-से-अधिक निकट करे वाली है।

३. असमा विन्त यजीद रजि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : ‘कियामत’ में सारे लोग एक साथ उठाए जायेंगे फिर एक पुकारने वाला पुकारेगा कहाँ हैं वे लोग जो रात को ‘इबादत’ करने के कारण अपने विस्तरों को खाली छोड़ दिया करते थे। यह सुन कर ‘तहज्जुद’ पढ़ने वाले बन्दे एक जगह इक्ठ्ठा हो जायेंगे और उन्हें बिना हिसाब ‘जन्नत’ में दाखिल कर दिया जायेगा इस के बाद और लोगों का हिसाब लिया जायेगा ३। —बैहकी-शोबुलईमान

४. अबू हुरैरा रजि से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : ‘फर्ज’ नमाज के बाद सब से श्रेष्ठ मध्य रात्रि की ‘नमाज’ है ४। —मुस्लिम

५. अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम अवश्य रात में (नमाज के लिए) खड़ा हुआ करो क्योंकि वह तुम में पूर्व नेक लोगों का तरीका रहा है और वह तुम्हारे ‘रब’ का सामीप्य (प्राप्त करने का साधन) है और बुराइयों (के प्रभावों को) मिटाने वाली और गुनाहों से रोकने वाली चीज है ५। —तिरमिजी

३. इस ‘हदीस’ से एक बड़ी वास्तविकता खुल कर सामने आती है। रात को जब दुनिया आराम कर रही होती है, तो वे अपने विस्तर छोड़कर अल्लाह के आगे खड़े होते हैं। अल्लाह के आगे रुकूअ और सजदे करते हैं, उससे अपने गुनाहों के लिए क्षमा की प्रार्थनाएँ करते और उस से उसकी कृपा-दृष्टि की याचना करते हैं। अल्लाह के ऐसे बन्दों का जीवन इतना पवित्र होता है कि उनका हिसाब दुनिया ही में माफ हो जाता है। वे किसी प्रकार की मलिनता लेकर अल्लाह की सेवा में उपस्थित नहीं होते। ‘आखिरत’ में वे बिना हिसाब के ‘जन्नत’ में दाखिल कर दिए जायेंगे।

४. इस ‘हदीस’ से ‘तहज्जुद’ की ‘नमाज’ का महत्व और माहात्म्य का अनुमान किया जा सकता है। ‘तहज्जुद’ की ‘नमाज’ अल्लाह से विशेष सम्बन्ध पैदा करने का साधन है।

५. इस ‘हदीस’ में ‘तहज्जुद’ की ‘नमाज’ की वरकतो और उस की विशेषताओं का उल्लेख किया गया है। इस में सन्देह नहीं कि ‘तहज्जुद’ की नमाज में वे सारी विशेषताएँ मौजूद होती हैं जिन का उल्लेख इस ‘हदीस’ में हुआ है। लेकिन शर्त यह है कि उसे सही तरीके से, पूरी शुद्धहृदयता के साथ अदा किया जाये और उस के नियमों आदि का पूरा आदर किया जाए। तहज्जुद का समय ऐसा

६ हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मेरे समुदाय के श्रेष्ठ पौर (उच्च पद वाले) कुरआन के वाहक और रात (मे अल्लाह की सेवा में जागने) वाले लोग हैं^६।

—वैहकी-शोबुलईमान

७ अबू मालिक अगअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'जन्नत' में ऐसे वाला खाने हैं जिन के भीतर से बाहर की चीजे दीख पड़ती हैं और बाहर से भीतर की चीजे दिखाई देती हैं अल्लाह ने उन को उन लोगों के लिए तैयार कर रखा है जो नमी से बाते करते हैं, खाना खिलाते हैं, लगातार 'रोजे' रखते हैं और रात को नमाज पढ़ते हैं जब कि लोग सो रहे होते हैं^७। —वैहकी-शोबुलईमान

होता है कि उम में बड़ी ही शान्ति और पूर्ण एकाग्रता प्राप्त होती है फिर मनुष्य का आराम छोड़ कर 'नमाज' पढ़ना दीक्षा का बड़ा ही प्रभावपूर्ण साधन है। कुरआन में कहा गया है "रात का समाँ जो है वह अत्यन्त अनुकूलता रखता है और उस की बात अत्यन्त सधी हुई होती है"। —सूरा ६३, आयत ६। नबी सल्ल० को सम्बोधित करते हुए कहा गया "और कुछ रात इस (कुरआन) के साथ जागते रहो, वह तुम्हारे लिए तद्-अधिक ('नफ़ल') है करीब है कि तुम्हारा 'रब, तुम्हें प्रशसापूर्ण स्थान पर खड़ा करे'^८।

—सूरा १७ आयत ७६।

६ अर्थात् मेरे समुदाय में विशेष हैसियत वाले उच्च श्रेणी के लोग वे हैं जो कुरआन पढ़ते और उसके आदेशों का पालन करते हैं और रातों में जब कि लोग सो रहे होते हैं, वे अपने 'रब' की सेवा में सजदे करते और नमाज पढ़ते हैं। अल्लाह के यहाँ ऐसे कुरआन के भारवाहक और जाग्रत व्यक्ति को उच्च-से-उच्च स्थान मिलना ही चाहिए।

७ यह मनुष्य के स्वभाव की कोमलता और उस की चेतना के निर्माण की बात है कि उस की बात-चीत रसमय और माधुर्य लिए हुये हो, उसे दूसरों के दुखों और भूख का खयाल हो, उसे खाना-पीना ही नहीं अल्लाह के लिए अपने को खाने-पीने से अलग रखना भी प्रिय हो, वह एकान्त और रात के सन्नाटे में जब कि दुनिया आराम कर रही हो मन की विकलता और आकुलता लिए हुये अल्लाह की सेवा में हाज़िर हो और उस ने उस की प्रसन्नता और क्षमा का इच्छुक हो। अल्लाह के यहाँ ऐसे लोगों के लिए बदला भी अत्यन्त पवित्र प्रदान किया जायेगा यहाँ तक कि उन्हें जो वाला खाने मिलेगे वे भी अत्यन्त पवित्रतम, उज्ज्वल और प्रकाशमय होंगे।

ईदुल फित्र की नमाज

عَنْ الْحُسَيْنِ بْنِ الْحَدَّادِ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ كَانَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بِخَرْبٍ يَوْمَ الْفِطْرِ
وَالْأَصْحَى إِلَى الْمَضَلَّةِ فَأَوَّلُ شَيْءٍ سَدَّ بِهِ الصَّلَاةَ ثُمَّ بَنَصَرَفُ مُقَابِلِ النَّاسِ
وَالنَّاسُ جُلُوسٌ عَلَى صَفَائِهِمْ مَعْظَمُهُمْ وَيُوصِيهِمْ وَيَأْمُرُهُمْ وَإِنْ كَانَ كَرِيدًا أَنْ
يَبْطِئَ نَحْنًا وَقَطَعَهُ أَوْ بِأَمْرِ نَسَى أَمْرِي بِهِ نَحْنُ بَنَصَرَفُ ————— بحار، مسلم

१. अब सईद खुदरी रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० 'ईदुलफित्र और 'ईदुल अजहा के दिन ईदगाह की ओर निकलते और सब से पहले 'नमाज' शुरू करते फिर नमाज से निवृत्त होकर लोगों की ओर रुख करके खड़े होते और लोग अपनी सफो (पक्तियों) में बैठे रहते फिर आप उन्हें उपदेश देते, वसीयत करते और आदेश देते और कही आपको कोई सेना भेजनी होती, तो उसे भेजते या कोई विशेष आदेश देना होता तो वह भी देते फिर वापस होते। —बुखारी, मुस्लिम

१ यह है इस्लामी त्योहार मनाने का स्वाभाविक तरीका जो इस 'हदीस' में हमारे सामने पेश किया गया है। त्योहार के दिन आप और आप के 'सहाबा' रजि० अपनी जिम्मेदारियों से गाफिल नहीं हो जाते थे और न वे किसी प्रकार के खेल-तमाशों में पड़ते थे। 'ईद' का दिन मुसलमानों की खुशी और प्रसन्नता मुस्लिम का दिन होता है। मुसलमान रमजान में निरन्तर एक महीना 'रोज़ा' रखकर अल्लाह के आदेश का पालन करते हैं। ईद के दिन उन्हें आशा होती है कि अल्लाह उन के कर्म को अवश्य स्वीकार करेगा और हर प्रकार की बुराइयों से पाक कर के उन्हें पवित्रतम जीवन प्रदान करेगा। 'ईद' का दिन 'आखिरत' की असाधारण प्रसन्नता और सफलता की आशा दिलाता है। ईद की प्रसन्नता कोई साधारण प्रसन्नता नहीं होती। यह प्रसन्नता मुसलमानों के जीवन और उन के जातीय और धार्मिक जीवन का लक्षण है। ईद की प्रसन्नता मुस्लिम समुदाय को ससार की दूसरी जातियों के मुकाबले में एक विशेषता प्रदान करती है। ससार ने खुशी मनाने के जो तरीके निकाले हैं उन में मौलिक रूप से इम का ख्याल रखा गया है कि वह मनुष्य के लिए आनन्द और रसास्वादन के साधन बन सकें। इसके लिए साधारणतया गुमराही घ्येय और ओछेपन के कारण ससार ने राग-रग और गाने-बजाने का सहारा लिया। 'इस्लाम' ने ईद मनाने का जो तरीका सिखाया है वह यही नहीं कि हर तरह की बुराइयों और दोषों से पाक है बल्कि सौन्दर्य मत्तता, निर्माल्य

और आनन्द का उच्चतम सुदर्शक भी वही है। खुशी और आनन्द के प्रदर्शन का इस से उत्तम और पूर्ण तरीका सम्भव नहीं। 'इस्लाम' का सिखाया हुआ तरीका उच्चतम सम्यता का प्रतीक है। इस्लाम ने मानव-जीवन के लिए वही तरीका पसन्द किया जो मानवीय स्वभाव के अनुकूल और स्वस्थ जीवन का प्रदर्शक है।

मनुष्य अल्लाह का बन्दा है यह एक ऐसी वास्तविकता है जिस को इन्कार नहीं किया जा सकता बल्कि जीवन का मादक पहलू भी यही है, इस्लामी सम्यता की विशेषता यह है कि उस में ईश-भक्ति के भावों की पूरी रिआयत पाई जाती है। भक्ति-भाव मनुष्य की सब से बहुमूल्य निधि है। इस भाव में मालूम नहीं जीवन के कितने मनोरम सगीत निहित हैं। बन्दे और अल्लाह का नाता एक ऐसा नाता है जिस पर ससार का सम्पूर्ण सौन्दर्य और कोमलता निछावर की जा सकती है। मनुष्य के लिए गौरव और वास्तविक आनन्द की चीज वह सम्बन्ध और सम्पर्क है जो उस के और अल्लाह के बीच पाया जाता है।

'इस्लाम' ने ईद मनाने का जो तरीका सिखाया है उस से उस सम्बन्ध का जो अल्लाह और बन्दे के बीच पाया जाता है पूर्णतः प्रदर्शन होता है। ईद में खुशी का प्रदर्शन विशेष रूप से 'नमाज' और 'तकवीर' के द्वारा किया जाता है। आनन्द-प्रदर्शन के अतिरिक्त यह अल्लाह की सेवा में बन्दे की ओर से कृतज्ञता प्रकाशन भी है। 'मोमिन' की दृष्टि में सब से अधिक प्रिय और आनन्ददायक स्थिति वही है जिस में उस सम्बन्ध का प्रदर्शन पूर्णतः होता हो जो अल्लाह और उसके बीच पाया जाता है। 'रुकूअ' और 'सजदो' से बढ़ कर दूसरी कोई अवस्था नहीं हो सकती है जिस को यह विशेषता प्राप्त हो। नमाज अपनी बन्दगी और अल्लाह के स्वामित्व और उस की महानता के प्रदर्शन का उत्तम और पूर्ण माध्यम है। अल्लाह और बन्दे के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध का प्रदर्शन जीवन का सब से मधुर सगीत है।

जकात

अल्लाह के बाद हम पर उस के बन्दों का हक है । 'दीन' या धर्म वास्तव में अल्लाह और उस के बन्दों के हक को अदा करने का ही दूसरा नाम है । 'नमाज' और 'जकात' हमें इन ही दोनों प्रकार के हक को याद दिलाते हैं । मौलाना हमीदुद्दीन फराही जिन्हें कुरआन का विशेष ज्ञान प्राप्त था लिखते हैं : "नमाज की वास्तविकता बन्दे का अपने 'रब', की ओर प्रेम और भय से झुकना है और 'जकात' की वास्तविकता बन्दे का बन्दे की ओर प्रेम और ममत्त्व भाव से प्रवृत्त होना है ।"

—तफसीर निजामुल कुरआन पृष्ठ ६ ।

'दीन' (धर्म) के इस मौलिक तथ्य की ओर कुरआन में विभिन्न स्थानों पर संकेत किया गया है । 'तौरात' और इञ्जील में भी इस मौलिक तथ्य पर प्रकाश डाला गया है । कुरआन नमाज और 'जकात' को विशेष महत्त्व देते हुये इन को मूल धर्म निर्धारित करता है "और उन्हें हुक्म इसी का तो दिया गया था कि अल्लाह की 'इबादत' करे दिन को उसी के लिए खालिस कर के, एकाग्र हो कर और 'नमाज' कायम करे और 'जकात' दें और यह है ठोस और सिद्ध वाला 'दीन' (धर्म)" ।

—सूरा अल-बैयना ५

- १ "एक धर्मज्ञाता ने परीक्षा के लिए उस से पूछा हे गुरु ! तौरेत में कौन सा आदेश सब से बड़ा है ? उस ने उस से कहा कि परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी बुद्धि के प्रेम रख । बड़ा और मुख्य आदेश यही है । और इसी के समान यह दूसरा भी है कि अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख । इन ही दो आदेशों पर सम्पूर्ण 'तौरात' और 'नबियों' के 'सहीफें' आधारित हैं"—मत्ता २२ : ३५-४० ।

एक दूसरी जगह है "परमेश्वर हमारा प्रभु एक ही परमेश्वर है और तू परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण और अपनी सारी बुद्धि से प्रेम रख । दूसरा यह कि तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख । इन से बड़ा और कोई आदेश नहीं" । —मुरकुस १२ २८ ।

‘दीन’ वास्तव में अल्लाह और उस के बन्दो ‘दोनों के हक को अदा करने का नाम है। इस की पुष्टि हदीस से भी होती है उदाहरणार्थ यहाँ “एक हदीस प्रस्तुत की जाती है : “हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा” : तीन व्यक्ति ऐसे हैं कि उन की ‘नमाज’ उन के सिर से एक बालिशत भी उपर नहीं उठती “एक वह ‘इमाम’ जिस को लोग नापसन्द करते हों, दूसरे वह स्त्री जिस ने रात इस तरह गुजारी कि उस का पति उस से रुठ हो और तीसरे वे दो भाई जो परस्पर सम्बन्ध-विच्छेद कर लें”। इस ‘हदीस’ से ज्ञात हुआ कि बन्दे के लिए आवश्यक है कि वह अल्लाह और उस के बन्दो दोनों का हक पहचाने और अदा करे अल्लाह का हक भी वास्तव में उस समय तक अदा नहीं हो सकता जब तक कि कोई अल्लाह के बन्दो का हक अदा न करे।

‘जकात’ अदा कर के मनुष्य केवल एक कर्तव्य के पालन से ही निवृत्त नहीं होता बल्कि इस से उस के व्यक्तित्व को भी पूर्णता प्राप्त होती है। पूर्णता, विकास एवं निर्माल्य ही ‘शरीअत’ के (और कर्मकाण्ड सम्बन्धी) आदेशों का मौलिक उद्देश्य है। जिस चीज का नाम ‘दीन’ (धर्म) में ‘हिकमत’ (*Wisdom*) है वह इस के अतिरिक्त कुछ नहीं कि ज्ञान और अन्तर्दृष्टि के साथ मनुष्य की आत्मा का विकास और शुद्धिकरण हो। ‘जकात’ का वास्तविक उद्देश्य ही यह है कि उस से मनुष्य की आत्मा शुद्ध और विकसित हो। ‘जकात’ का अर्थ है पवित्रता और विकास। जकात ‘देने’ से आदमी स्वार्थपरता, तंगदिली और घन के लोभ से छुटकारा पाता है। उस की आत्मा को शुद्धता एवं विकास प्राप्त होता है। अतएव कुरआन में कहा गया है : “और उस (‘जहन्नम’) से बचा लिया जायेगा वह व्यक्ति जो अल्लाह का बड़ा डर रखने वाला है जो अपना माल दूसरों को देता है कि अपने को निखारे”

—सूरा ६२ आयत १७-१८

एक दूसरी जगह नबी सल्ल० को सम्बोधित करते हुए कहा गया है . “उन के मालों में से ‘सदका’ लो जिस के द्वारा उन्हें शुद्ध करोगे और उन (की आत्मा) को विकसित करोगे” —अत-तौबा . १०४

‘जकात’ का यह मौलिक उद्देश्य उसी समय प्राप्त हो सकता है जबकि जकात देने के साथ-साथ इस उद्देश्य के प्राप्त करने की सच्ची तलब भी पाई जाती हो। आदमी ‘जकात’ केवल अल्लाह की

प्रसन्नता के लिए दे। इस के पीछे कोई और ध्येय काम न कर रहा हो। उस की 'जकात' न दिखाने के लिए हो और न दीन-दुखियों को दुख पहुँचाने और उन पर अपना एहसान जताने के लिए हो।

कुरआन में यह बात बार-बार कही गई है कि आदमी का 'दीन' (धर्म) और उस का 'ईमान' उसी समय पूर्ण होगा और उसे वास्तविक और आध्यात्मिक जीवन उसी समय प्राप्त होगा जब कि अल्लाह का प्रेम सब से बढ़ कर हो और ससार की अपेक्षा मनुष्य 'आखिरत' को प्राथमिकता देने लग जाए। 'नमाज' यदि मनुष्य का नाता अल्लाह से जोड़ती है, तो 'जकात' उसे सासारिक और धन सम्बन्धी लोभ और मोह को उस के मन से निकालती है। 'जकात' दे कर मनुष्य इस बात का प्रमाण सचित्त करता है कि वह जीवन के वास्तविक उद्देश्य से बेखबर नहीं है। उस के पास जो-कुछ है उसे वह अल्लाह की सम्पत्ति समझता है। वह उस में से गरीबों और मुहताजों का भी हक निकालता है और अल्लाह ही के हुक्म से वह उसे प्रयोग में भी लाता है। अल्लाह का डर रखने वालों की यह विशेष पहचान है कि वे अपने माल की 'जकात' अदा करते हैं उन के बारे में कहा गया है "तो मैं अपनी दयालुता उन लोगों के लिए लिख दूँगा जो डर रखते हैं और 'जकात' देते हैं और हमारी 'आयतों' पर 'ईमान' रखते हैं"। --सूरा अल-आराफ १५६।

'जकात' अदा करने से मनुष्य की आत्मा भी शुद्ध होती है और उस का माल भी शुद्ध हो जाता है। लेकिन यदि वह इतना बड़ा स्वार्थी है कि वह अल्लाह के प्रदान किये हुये धन में से अल्लाह का हक अदा नहीं करता, तो उस का माल भी अशुद्ध रहता है और उस की आत्मा भी अशुद्ध रहती है। आत्मा के लिए सकीर्णता, कृतघ्नता और स्यार्थपरता से बढ़कर घुटन और अशुद्धता को बात और क्या हो सकती है। 'जकात' उन लोगों की समस्या का हल है जो मुहताज हैं। मुसलमानों का कर्तव्य है कि वे अपने भाई की सहायता करें। कोई भाई नगा, भूखा और अपमानित न होने पाये। ऐसा न हो कि जो धनवान् हैं वे तो अपने भोग-विलास में पड़े रहे और समुदाय के यतीमों, मुहताजों और विधवा स्त्रियों की खबर लेने वाला कोई न हो। उन्हें यह बात महसूस करनी चाहिए कि उन के धन में दूसरों का भी हक है। उस में उन लोगों का भी हक है जो निर्धनता के कारण कोई कार्य नहीं कर सकते हालाँकि उन में कार्य की क्षमता पाई जाती है। उन के धन में उन गरीब बच्चों का भी हक है

जो गरीबी के कारण शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकते। और उन के घन मे उन कमजोरी और विवशताग्रस्त लोगों का भी हक है जो किसी कार्य के योग्य नहीं हैं।

फिर जो घन भी समुदाय और समाज के हित के लिए व्यय किया जाता है वह नष्ट नहीं होता। जो रुपया भी सामूहिक एवं सामाजिक कल्याण के लिए व्यय किया जाता है वह अगणित लाभ का कारण बनता है। जिन से स्वयं व्यय करने वाले व्यक्ति को भी अगणित लाभ पहुँचते हैं। इस के विपरीत जो व्यक्ति अपने घन को अपने पास सुरक्षित रखना चाहता है या लोगों से ब्याज ले कर उसे बढ़ाना चाहता है वह वास्तव में अपने घन के मूल्य (Value) को घटाता और स्वयं अपने विनाश की सामग्री जुटाता है। कुरआन मे कहा गया है • “अल्लाह ब्याज का मठ मार देता है और ‘सदकों’ को बढ़ाता है” —अल-बकरा २७६

दूसरे स्थान पर कहा • “तुम जो ब्याज इस ध्येय से देते हो कि लोगों के माल को बढ़ाये तो अल्लाह की दृष्टि में उस से घन नहीं बढ़ता हाँ जो ‘जकात’ तुम अल्लाह की प्रसन्नता के लिए दो वह बढ़ता चला जायेगा”। —अर-रूम • ४

‘जकात’ का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य ‘दीन’ (धर्म) की सहायता और उस की रक्षा भी है। अल्लाह के ‘दीन’ (धर्म) के लिए जो कोशिश की जा रही हो और जो लड़ाइयाँ लड़ी जा रही हों उन के सिलसिले मे भी ‘जकात’ का घन खर्च किया जा सकता है (दे० सूरा अत-तौबा आयत ६०)।

माल की जो थोड़ी सी मात्रा ‘जकात’ के रूप मे अनिवार्य की गई है उस का अर्थ यह कदापि नहीं होता कि घनवान् बस उतना ही खर्च करे उस के पश्चात् यदि कोई अपनी जरूरत ले कर आ जाये या धर्म की सेवा का कोई अवसर आ जाये तो खर्च करने से साफ इन्कार कर दे। बल्कि इस का अर्थ वास्तव में यह है कि कम-से-कम निश्चित घन तो हर घनवान् व्यक्ति को खर्च करना ही चाहिए। उस से अधिक जितना भी हो सके खर्च करे। इसी प्रकार यदि ‘जकात’ एक निश्चित मात्रा से कम माल पर अनिवार्य नहीं है तो इस का अर्थ यह नहीं होता कि जिन लोगों के पास इस निश्चित मात्रा से कम माल है वे अल्लाह के मार्ग मे कुछ खर्च ही न करे। अल्लाह के मार्ग मे जिस किसी से जो भी हो सके वह व्यय करे, इस मे स्वयं उस का अपना हित है।

‘जकात’ के लिए एक महत्व की बात यह भी है कि लोगों की ‘जकात’ एक केन्द्र पर एकत्र की जाये। फिर वहाँ से एक व्यवस्था के अन्तर्गत उसे खर्च किया जाये। जिस तरह ‘फर्ज’ (अनिवार्य) ‘नमाज’ जमाअत के साथ एक ‘इमाम’ की अध्यक्षता में अदा की जाती है उसी तरह ‘जकात’ की भी एक सामूहिक व्यवस्था हो जिस के अन्तर्गत ‘जकात’ भी दी जाये और फिर उसे व्यवस्थित रूप में खर्च किया जाए। इस प्रकार ‘जकात’ से समाज को अधिक-से-अधिक लाभ पहुँच सकता है।

— — — — —

जकात का महत्व

عَنِ ابْنِ عَبَّاسٍ أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بَعَثَ مُعَاذًا إِلَى الْيَمَنِ فَقَالَ
 إِنَّكَ تَأْتِي قَوْمًا أَهْلَ كِتَابٍ فَأَدْعُهُمْ إِلَى سُبُحَةِ الْإِلَهِ إِلَّا اللَّهُ وَأَنَّ مُحَمَّدًا
 رَسُولُ اللَّهِ فَإِنْ هُمْ أَطَاعُوا لِذَلِكَ فَأَعْلِمُهُمْ أَنَّ اللَّهَ فَرَضَ عَلَيْهِمْ
 خَمْسَ صَلَوَاتٍ فِي الْيَوْمِ وَاللَّيْلَةِ فَإِنْ هُمْ أَطَاعُوا لِذَلِكَ فَأَعْلِمُهُمْ أَنَّ
 اللَّهَ فَرَضَ عَلَيْهِمْ صَدَقَةً تُؤْخَذُ مِنْ أَعْيَانِهِمْ فَتُرَدُّ عَلَى فُقَرَاءِهِمْ
 فَإِنْ هُمْ أَطَاعُوا لِذَلِكَ فَإِنَّكَ وَكَّرَائِمَ أَمْوَالِهِمْ وَإِنِ دَعَاكَ الْمَظْلُومُ
 فَإِنَّهُ لَيْسَ بَيْنَهُمَا وَبَيْنَ اللَّهِ حِجَابٌ

بخاری مسلم

१. हजरत इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुआज रजि० को यमन (हाकिम) बना कर भेजा तो कहा तुम ऐसे लोगों के पास जा रहे हो जो किताब वाले है तो तुम उन्हें इस बात की गवाही की ओर आमन्त्रित करना कि अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (इष्टपूज्य) नहीं और मुहम्मद अल्लाह के रसूल है। यदि वे इस को मान ले तो उन को बताना कि अल्लाह ने उन पर दिन-रात में पाँच 'नमाज़े' फर्ज (अनिवार्य) की है। यदि वे इस को भी मान ले तो उन्हें बताना कि अल्लाह ने उन पर 'सदका' (जकात) फर्ज किया है जो उन के धनवान लोगों से लिया जायेगा और उन के गरीबों को लौटा दिया जायेगा। यदि वे इस बात को भी मान ले तो सावधान ! उन के

१. इस 'हदीस' से कुछ महत्वपूर्ण बातों पर प्रकाश पड़ता है। जो व्यक्ति इस्लामी राज्य की ओर से राज्यपाल (Governor) या हाकिम बनाया जाये उसका प्रथम कर्तव्य लोगों को एक अल्लाह की ओर आमन्त्रित करना है दूसरे समस्त उद्देश्यों की हैसियत गौण है। गैर इस्लामी राज्य में राज्यपाल का मौलिक दायित्व राज्य की व्यवस्था बनाये रखना है। इसके विपरीत इस्लामी राज्य छोटे-बड़े प्रत्येक कार्यकर्त्ता या कर्मचारी का पहला काम लोगों को अल्लाह के मार्ग को ओर बुलाना है। जिस राज्य का पहला काम लोगों को सत्य की ओर बुलावा देना हो वह राज्य ससार को दयालुता और सुख-शान्ति से भर देगा, उस राज्य में अत्याचार और अन्याय को फलने-फूलने का अवसर नहीं मिल सकता।

उच्च कोटि के माल (छाँट-छाँट) न लेना^२ और पीड़ित की पुकार से बचना

इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि लोगो के सामने 'दीन' (धर्म) को प्रस्तुत करने में सदैव उचित ढंग अपनाना चाहिए। जिस जाति को भी हम 'दीन' (धर्म) की ओर आमन्त्रित करें उसकी जातीय विशेषताओं का पूरा ध्यान रखना आवश्यक है। फिर 'दीन' को पूरा-पूरा एक साथ पेश करने के बदले पहले मौलिक बातें क्रम से पेश करनी चाहिए। इससे 'दीन' को समझने और उसे मानने में सुविधा होगी। 'तौहीद', 'रिसालत' पर 'ईमान' लाने के पश्चात् सर्व प्रथम चीज 'नमाज' है। नमाज का समय आ जाने पर साफ जाहिर हो जाता है कि कौन व्यक्ति इसकी मानता और इसकी घोषणा करता है कि वह अल्लाह का है और अल्लाह ही की वन्दगी और आज्ञापालन में अपना जीवन व्यतीत करना चाहता है। और कौन अल्लाह से मुख मोड़ता है। 'नमाज' के बाद दूसरी चीज जकात है। 'जकात' के दो रूप हैं। एक तो सामान्य 'सदका' या 'जकात' है जिसे 'ईमान' वाले अपने मालो में से हर समय अदा करते रहते हैं। और यथा सम्भव मुहताजों की सहायता करते रहते हैं। 'जकात' का दूसरा रूप यह है कि मुसलमान अपने मालो में से कानून के अनुसार एक निश्चित मात्रा निम्नालते है इस 'हदीस' में इसी 'जकात' के बारे में कहा कि वह समाज के मालदारो से ली जाती है और समाज ही के गरीबों और मुहताजों पर खर्च की जाती है। गरीबों और मुहताजों की सहायता 'जन्नत' के महत्वपूर्ण उद्देश्यों में से है। अल्लाह ने मालदारो के मालों में गरीबों का हक रक्खा है। गरीबों का हक उन तक पहुँचाना मालदारो पर वाजिब है। कुरआन में भी कहा गया है : "उनके मालो में एक जाना-बूझा हक है माँगने वाले का और जो पाने से रह गया हो उसका।"—सूरा ७० आयत २३-२४।

- २ नबी सल्ल० ने यह आदेश दे दिया कि 'जकात' लेते समय ऐसा न हो कि अच्छे-अच्छे माल छाँट कर ले लिए जायें बल्कि औसत दर्जे का माल लिया जाए। इस आदेश का नतीजा यह था कि 'सहाबा' और 'ताबईन' अपना सबसे अच्छा माल 'जकात' में पेश करते लेकिन लेने वाला लेने से इन्कार करता यहाँ तक कि यह मामला खलीफा के सामने लाया जाता। आदेश का अभिप्राय यह है कि कर्मचारी अपने तौर से छाँट कर न लें हों यदि 'जकात' देने वाला अपनी खुशी से अच्छा माल छाँट कर पेश करे, तो उसके कबूल करने में कोई दोष नहीं।

क्योंकि उस के और अल्लाह के बीच में कोई परदा नहीं है^३ ।

—बुखारी, मुस्लिम

२. हज़रत आइशा रजि० कहते हैं कि मैं ने अल्लाह के रसूल० सल्ल० को कहते सुना 'सदका' जब किसी माल में मिला हुआ होगा (निकाला न जायेगा) तो वह उस को तबाह कर के छोड़ेगा^४ ।

मुहम्मद शाफई, तारीख कबीर बुखारी, मुसनद हुमैदी ।

३. हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति को अल्लाह ने माल दिया फिर उस ने उस की 'ज़कात' नहीं अदा की तो उस का माल 'कियामत' के दिन ज़हरीले गंजे साँप का रूप धारण कर लेगा जिस(के सिर) पर दो काले बिन्दु होंगे^५ और वह 'कियामत' के दिन उस (के गले) का तौक बन जायेगा । फिर वह साँप उस के दोनों जबड़ों को पकड़ेगा और कहेगा : मैं तेरा माल हूँ, मैं तेरा खज़ाना हूँ । फिर आप ने पढ़ा : "वे लोग जो उस चीज़ में कज़ूसी करते हैं जो अल्लाह ने अपने अनुग्रह से उन्हें दी है वे यह न समझे कि यह उन के लिए अच्छा है बल्कि यह उन के हक में बुरा है । जो कुछ उन्होंने ने कज़ूसी की वही आगे वही 'कियामत' के दिन उन (के गले) का तौक बन जायेगा^६ ।

३. पीड़ित की पुकार और आप से बचो अर्थात् लोगो पर ज़्यादती न की जाए, अल्लाह उनकी पुकार को जल्द सुनता है ।

४. अर्थात् यदि माल से 'ज़कात' का हिस्सा मिला हुआ होगा, निकाल कर हकदारों को न दिया जाएगा, तो यह चीज़ आदमी के 'दीन' और 'ईमान' को तबाह करने वाली है ही, साथ ही उसकी पूरी सम्पत्ति भी उसके अत्याचार के कारण विनष्ट हो सकती है । 'ज़कात' न अदा करने के कारण आदमी का सारा माल नापाक रहता है । इससे बड़ी तबाही की बात क्या हो सकती है । इसी प्रकार वह व्यक्ति भी अपने माल को नापाक और तबाह करता है जो 'ज़कात' लेने का हकदार न होने के बावजूद 'ज़कात' ले कर अपने माल में सम्मिलित करता है ।

५. यह साँप के अत्यन्त ज़हरीले होने की पहचान है ।

६. 'ज़कात' देने से जो माल 'कियामत' के दिन उसके आराम का कारण बन सकता था, उस दिन मुसीबत बन कर उसकी जान को लागू होगा । कज़ूस

४. हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि नबी ल्ल० ने कहा जो भूमि वर्षा के जल से या बहते स्रोत से सिंचित होती हो या नदी के निकट होने के कारण पानी देने की आवश्यकता होती हो उस की पैदावार का दसवाँ भाग ('जकात' के रूप में) निकाला जायेगा और जिस को मजदूर लगा कर सीचा जाये उस में बीसवा भाग —बुखारी

५ इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल० ने 'सदका-ए-फित्र' को वाजिव किया ताकि व्यर्थ और अश्लील बातों का जो 'रोजे' में हो गई हो कफ़फारा (प्रायश्चित्त) बने और मुहताजों के खाने की व्यवस्था हो जाए" । —अबू दाऊद

६ हजरत उम्मे सलमा रजि० कहती हैं कि मैं सोने के 'अवजाह, (एक विशेष जेवर) पहनती थी। मैं ने पूछा हे अल्लाह के रसूल ! क्या यह भी 'क़ंज' (सचय) है ? आप ने कहा जो इस मात्रा को पहुँच जाये जिस में 'जकात अदा करने का आदेश है, और उस की 'जकात अदा की जाए तो "क़ंज" नहीं है" ।

और धन का लोभी अपनी दीलत से लिपटा रहता है। अपने माल और खजाने पर साँप बना बैठा रहता है, दूसरों को उससे फायदा उठाने का मौका ही नहीं देता। इसका परिणाम इस रूप में उसके सामने आएगा कि उसकी दीलत और उसका खजाना उसके लिए साँप बन जाएगा और उसे डसता रहेगा।

७ रमजान के एक मास के 'रोजे' रखने के बाद 'सदका-ए-फित्र' अदा करने का आदेश दिया गया। ताकीद की गई कि घर के सभी लोगों की ओर से 'ईद' की नमाज़ से पहले-पहल 'सदका-ए-फित्र' अदा किया जाए। इस 'सदका' के वाजिव होने के दो कारण इस 'हदीस' में बयान किए गए हैं। एक यह कि रोज़ेदार से 'रोजे' की हालत में कोशिश के बावजूद जो कोताही या कमजोरी जाहिर हुई हो 'सदका' के द्वारा उसकी क्षतिपूर्ति हो सके। दूसरे यह कि जिस दिन सारे मुसलमान 'ईद' की खुशी मनाने जा रहे हो उस दिन समाज के गरीब लोगों के खाने-पीने का भी प्रबन्ध हो जाए ताकि वे भी ईद की खुशी में शरीक हो सकें।

८ कुरआन में कहा गया है "जो लोग सोना और चाँदी एकत्र करके रक्ते हैं और उन्हें अल्लाह के मार्ग में खर्च नहीं करते उन्हें दुखदायिनी या ग़ा की

७. समरा बिन जुन्दुब रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० आदेश दिया करते थे कि जिस चीज को विक्रय (व्यापार) के लिए तैयार किया हो उस में से 'सदका' (जकात) निकाले ६। —अबू दाऊद

८. अता बिन यसार 'मुरसल' तरीके से बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . सदका मालदार के लिए वैध नहीं है सिवाय उस के 'जिहाद' में हो या मुसाफिर हो या एक मुहताज पड़ोसी हो उसे कोई चीज़ 'सदका' में मिली वह 'हदया' (उपहार, भेंट) के रूप में तुम्हें पेश करे या तुम्हें आमंत्रित करे १०। —अबू दाऊद

९. अबू सईद खुदरी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'सदका लेना धनवान् के लिए वैध नहीं सिवाय उसके जो 'जिहाद' में हो या मुसाफिर हो या एक मुहताज पड़ोसी हो उसे कोई चीज़ सदका में मिली वह 'हदया' (उपहार) के रूप में तुम्हें पेश करे या तुम्हें आमंत्रित करे। —अबू दाऊद

मंगल सूचना दे दो।"—६ ३४। इस आयत में सोने-चाँदी की जिस 'तखज़ीत' (संचय) पर यातना की धमकी दी गई है इस 'रिवायत' में हज़रत उम्मे सलमा का संकेत उसी की ओर था। प्रश्न का अभिप्राय यह था कि क्या इस ज़ेवर की गणना भी उस संचय में होगी जिस पर कुरआन में धमकी दी गई है। आपने कहा कि यदि ज़ेवरो की 'जकात' अदा की जाती रहे, तो फिर वह 'कंज़' (संचय) नहीं है जिस पर यातना की धमकी दी गई है।

६. मालूम हुआ कि कारबार के माल पर 'जकात' बाज़िब (अनिवार्य) है।

१०. इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'जकात' का माल जिहाद करने वालों पर खर्च किया जा सकता है, और उसमें से 'जकात' वसूल करने वाले को वेतन भी दिया जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति को तावान भरना है या कोई ऋण के बोझ से लदा हुआ है, तो 'जकात' से उसकी सहायता की जा सकती है। यह भी वैध है कि किसी मुहताज में 'जकात' के माल को कोई मालदार खरीद कर अपने काम में ले आए। इसी प्रकार उस 'हदया' या उपहार को स्वीकार करने में भी कोई दोष नहीं जो मुहताज व्यक्ति 'जकात' या सदका के माल में से पेश करे।

दान की श्रेष्ठता

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ قَالَ: قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ قَالَ اللَّهُ تَعَالَى
أَنْفِقْ يَا ابْنَ آدَمَ أَنْفِقْ عَلَيْكَ _____ بخاری، مسلم

१. हजरत अबू हुरैरह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि सर्वोच्च अल्लाह कहता है हे आदम के बेटे ! तू (मेरे बन्दो पर) खर्च कर, मैं तुझ पर खर्च करूँगा^१ । —बुखारी, मुस्लिम

२. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा सदका (दान) 'रब' के प्रकोप को ठण्डा करता है और बुरी मृत्यु को हटाता है^२ । —तिरमिजी

३. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह रसूल सल्ल० ने कहा : 'सदका' (दान) से, माल में कमी नहीं आती^३ और कामा कर देने में अच्चा इज्जत हो बढ़ाता है और जो व्यक्ति अल्लाह के लिए

१ अर्थात् यदि तू लोगो पर खर्च करेगा तो मैं तुझे निर्धन न होने दूँगा बल्कि मैं तुझे और अधिक प्रदान करूँगा ।

२ किसी व्यक्ति ने यदि किसी भूल-भूक और गुनाह से अपने को अल्लाह के प्रकोप का भागी बना लिया है, तो 'सदका' (दान) अल्लाह के प्रकोप को शान्त कर सकता है, 'सदका' दे कर बन्दा अल्लाह की दयालुता और उसकी क्षमा का अधिकारी बन जाता है । इसके अतिरिक्त 'सदका' की बरकत से मनुष्य बुरी मृत्यु से सुरक्षित रहता है । 'सदका' की बरकत से अच्छे और नेक कामों की रुचि बढ़ती है । 'ईमान' दृढ और पूर्ण हो जाता है । मनुष्य को सत्य पर चलने का सौभाग्य प्राप्त होता है अतः 'सदका' करने वाले का परिणाम अच्छा ही होगा । कुरआन मजीद में भी कहा गया है "और अच्छा परिणाम 'तकवा' (अल्लाह का डर रखने) के लिए है ।"—(२० १३२) ।

३ साधारणतया लोग सदका इस भय से नहीं देने कि इससे माल में कमी आ जाएगी । आपने कहा कि यह विचार सत्य नहीं है । सदका से माल घटता नहीं, उसमें बरकत आती है । सदका के कारण ससार में भी अल्लाह और अधिक प्रदान करता है । 'आखिरत' में जो-कुछ देगा वह अलग है जैसा कि एक 'हदीस' है "खर्च करो तुम पर खर्च किया जाएगा ।"—(बुखारी, मुस्लिम) कुरआन मजीद में भी कहा गया है : "तुम जो-कुछ खर्च करते हो

नम्रता अनपाता है अल्लाह उसे उच्चता ही प्रदान करता है^४ । —मुस्लिम

४. मुसअद बिन सअद रजि० कहते हैं कि सअद ने अपने बारे में यह ख्याल किया कि उन्हें अपने से छोटे पर श्रेष्ठता प्राप्त है। अल्लाह के रसूल० ने कहा तुम्हें (अल्लाह को ग़ार से) सहायता और रोज़ी तुम्हारे इन्ही कमजोरो (और मुहताजो) के कारण मिलती है^५ । —बुखारी

५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा बहुत से लोग ऐसे हैं जो बहुत ही परेशान और धूल-धूसरित हैं और जिन्हें दर्वाज़ो से धक्के दे कर हटा दिया जाता है और वे अल्लाह पर कसमे खाये तो अल्लाह उन की कसमो को अवश्य पूरी कर दे^६ । —मुस्लिम

(अल्लाह) उसकी जगह तुम्हें और देता है ।” —सबा ३६ ।

४ किसी को क्षमा कर देने से आदमी छोटा नहीं हो जाता बल्कि नैतिक दृष्टि से वह बहुत ऊँचा हो जाता है । लोगों में अल्लाह उसे आदर और सम्मान प्रदान करता है । इसी तरह यदि कोई व्यक्ति अल्लाह की प्रसन्नता के लिए विनम्रता अपनाता है तो इससे वह अपने को नीचे नहीं गिराता बल्कि अपने प्राकृतिक स्वभाव की माँग पूरी करके उच्चता प्राप्त करता है । अल्लाह इसे ऐसा सम्मान प्रदान करता है जिसे प्राप्त करने का कोई और साधन नहीं है । एक रिवायत में है कि आपने कहा “बन्दे का माल सदका से कम नहीं होता और जिस बन्दे पर जुल्म और अत्याचार किया जाए और वह उस पर सन्न कर जाए, तो अल्लाह अवश्य ही उसका सम्मान बढ़ाता है और जिस बन्दे ने सवाल का दर्वाज़ा खोला अल्लाह उसके लिए मुहताजी का दर्वाज़ा खोल देता है ।”

५ अर्थात् किसी व्यक्ति को कमजोरो और गरीबो के मुकाबले में अपने को उच्च समझना नादानी है । अल्लाह कितने ही लोगो को केवल कमजोरो और मुहताजो के कारण और उनकी दुआओ की बरकत से रोज़ी देता है और इस्लाम के शत्रुओ के मुकाबले में विजय प्रदान करता है । इसलिए कमजोरो और गरीबो की प्रतिष्ठा को घटाना ठीक नहीं है । मालदारो का कर्तव्य है कि वे कमजोरो और मुहताजो के हक को पहचानें और उनके साथ अच्छा व्यवहार करें ।

६ अर्थात् कितने ही लोग ऐसे होते हैं जो देखने में परेशान होते हैं कोई उनका ख्याल नहीं करता हालाँकि अल्लाह से उनका गहरा सबन्ध होता है । वे यदि अल्लाह

६. हज़रत अबू हुदैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कजूस और 'सदका' देने वालों की मिसाल उन दो आदमियों की - सी है जिन्हो ने लोहे के कवच पहन रखे हो। उन दोनों के हाथ सीने और गले तक जकड़े हुये हैं। 'सदका' देने वाला जब भी सदका देता है तो वह कवच कुशादा हो जाता है। और कजूस 'सदका' देने का ख्याल करता है, तो वह कवच और अधिक तग हो जाता है और कवच का प्रत्येक कु डल अपने स्थान पर बैठ जाता है^८।

—मुस्लिम, बुखारी

७. अदी बिन हानिम रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : आग से वचो आधे छुआरे के द्वारा ही सही। दूसरी रिवायत में है कि जो व्यक्ति नुम में से इस का सामर्थ रखता हो कि बच

के भरोसे पर किसी बात पर कसम खा लें, तो अल्लाह उनकी कसम को पूरा कर के रहेगा। उनकी बात और प्रार्थना रद्द नहीं हो सकती।

एक रिवायत में है कि आपने 'जन्नत' में दाखिल होते अधिक सख्या मुहताजों की देखी, और मालदारों को देखा कि उन्हें रोक लिया गया है।

—बुखारी, मुस्लिम

७ कवच की तगी के कारण उनके हाथ ऊपर से नीचे तक बिल्कुल शरीर से चिमट गए हैं।

८. अर्थात् दानशील व्यक्ति जब 'सदका' देने का निश्चय करता है तो उसका सीना कुशादा हो जाता है। वह खुले दिल से 'सदका' (दान) देता है। वह तग दिल नहीं होता है। इसके विरीत कजूस व्यक्ति जब कुछ देने को सोचता है, तो उसका सीना और तग हो जाता है। मानो उसका शरीर किसी तग कवच में ऐसा कसा हुआ है कि वह हाथ बाहर निकालकर किसी को कुछ देने का सामर्थ्य नहीं रखता। पैसा देने हुये ऐसा लगता है कि पैसे के साथ उसके प्राण भी निकल जायेंगे।

कवच शरीर की रक्षा के लिए होता है। जब वह कुशादा हो जाती है, तो पूरा शरीर सुरक्षित हो जाता है, अर्थात् 'सदका' के कारण मनुष्य पूर्ण रूप से अल्लाह के संरक्षण में आ जाना है। रहा कजूस व्यक्ति तो वह सदैव तगदिली में अस्त रहता है। न वह सुरक्षित होता है और न उसे वास्तविक आराम और शान्ति प्राप्त होती है।

सके आधे चुआरे के द्वारा ही सही, उसे अवश्य वचना चाहिए।

—बुखारी, मुस्लिम नसई

८ इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब कि आप मिवर पर थे और 'सदके' का और माँगने से बचने का जिक्र करते थे ऊपर का हाथ नीचे के हाथ से उत्तम है। ऊपर का (हाथ) देने वाला है और नीचे का माँगने वाला।—बुखारी, मुस्लिम आदि

९ इब्न मसऊद से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में किस को अपने माल से बढ कर अपने वारिस का माल अधिक प्रिय है ? (लोगों) ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! हम में तो प्रत्येक को अपना ही माल सब से अधिक प्रिय है आप ने कहा : उस का माल तो वही है जो उस ने आगे भेजा और वह उस के वारिस का माल है जो उस ने पीछे छोड़ा^{१०} ।

—बुखारी, मुस्लिम

१० हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि एक बकरी जन्ह की गई (और उस का मास बाँट दिया गया) । आप ने कहा उस मे से क्या बाकी रहा ? (हजरत आइशा ने) कहा उस की केवल एक रान बची है । आप ने कहा सब बाक़ी है सिवाय उस रान के (जो बाँटी नहीं गई)^{११} ।

६ अर्थात् 'सदका' अवश्य दो । यह अल्लाह के प्रकोप को शान्त करने वाली और 'जहन्नम' की आग से बचाने वाली चीज़ है । यदि अधिक देने का सामर्थ्य न हो तो जो भी हो सके यद्यपि वह अत्यन्त थोड़ा हो, 'सदका' दो ।

१० अर्थात् यदि तुम्हे अपना माल प्यारा है तो तुम्हारा माल तो वह है जो तुम अल्लाह के मार्ग में खर्च करके अपने शाश्वत जीवन के लिए भेजते हो । जो-कुछ एकत्र करके तुम अपने पीछे दुनिया में छोड़ते हो वह तुम्हारा अपना नहीं तुम्हारे वारिसों का माल है । यदि तुमने अपने लिए आगे कुछ नहीं भेजा है या बहुत कम भेजा है, तो तुम निर्धन हो भले ही ससार में तुमने कारून का खजाना ही क्यों न एकत्र कर रक्खा हो । परन्तु यदि तुमने आगे के लिए प्रबन्ध कर रक्खा है और प्रबन्ध करते रहते हो, तो तुम्हे निर्धन और कगाल कदापि नहीं कहा जा सकता । दुनिया तुम्हे निर्धन समझती है तो यह उसकी दृष्टि का दोष है ।

११ अर्थात् जो मास बाँट दिया गया वास्तव में वही बाकी और काम आने वाला है, सदैव का लाभ उसी से उठाया जा सकता है । जो भाग अपने लिए रोक

११. अबूज्जर रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में हाज़र हुआ, आप 'काबा' की छाया में बैठे हुये थे। मुझे देखा तो कहा : काबा के 'रब' की कसम वे लोग बड़े घाटे में हैं ? मैं ने कहा मरे मेरे माता-पिता आप पर निछावर हों ! वे कौन लोग हैं। कहा : वे लोग जो बड़े धनवान् हैं, सिवाय उन लोगो के जिन्होने अपने आगे-पीछे और दाये बाये (हर भलाई के काम में) खर्च किया और ऐसे लोग कम है^{१२}।

—बुखारी, मुस्लिम

१२. हज़रत सौबान रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : उत्तम दीनार (एक सिक्का का नाम) वह है जिसको आदमी अपने बाल-बच्चों पर खर्च करता है और वह दीनार उत्तम है जिसे वह अल्लाह के मार्ग में सवारी के लिए खर्च करता है^{१३}। और वह दीनार उत्तम है जिसे वह अल्लाह के मार्ग में अपने साथियो पर खर्च करता है^{१४}।

—मुस्लिम

१३. हज़रत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक दीनार वह है जो तू अल्लाह के मार्ग में खर्च करता है, एक दीनार वह है जो तू किसी गुलाम को आजाद कराने में खर्च करता है। एक वह दीनार है जो तू किसी मुहताज पर खर्च करता है और एक दीनार वह है जो तू अपने घर वालो पर खर्च करता है। इन में बदला (पाने) की दृष्टि से सब से बढकर वह दीनार है जिसे तू अपने घर वालों पर खर्च करता है^{१५}।

—मुस्लिम

लिया गया वह समाप्त होने वाला है।

१२. मतलब यह है कि माल-दौलत बड़ी परीक्षा की चीज़ है। इस परीक्षा में सफल वही हो सकते हैं जिनके मन में माल का मोह न हो, जो अपने माल को खुले दिल से अच्छे कामों में खर्च करते हैं। जो ऐसा नहीं करते वे धन पाकर भी घाटा उठाते हैं।

१३. अर्थात् 'जिहाद' के लिए घोडा आदि खरीदने में व्यय करता है।

१४. अर्थात् अपने उन साथियो पर खर्च करता है जो अल्लाह की राह में 'जिहाद' कर रहे होते हैं।

१५. मालूम हुआ कि नबी सल्ल० ने जिस 'दीन' (धर्म) की शिक्षा दी है उसमें अत्यन्त सन्तुलन है। उसमें असन्तुलित नीति अपनाने से रोका गया है। सब से

१४ फातिमा बिनत कैस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा माल में 'जकात' के अनिवार्य भी (अल्लाह का) हक है। फिर आप ने पढा, 'नेकी और वफादारी यह नहीं है कि वस तुम अपने चेहरे को पूर्व या पश्चिम की ओर कर लो, बल्कि वफादारी है जो अल्लाह पर, अन्तिम दिन पर, 'फिरिस्तो पर' अल्लाह की, किताब पर और 'नबियों' पर' ईमान लाये' और माल उस का (स्वाभाविक,) मोह के होने पर भी नातेदारों और यतीमों और मुहताजों और माँगने वालों को दे और गरदने छुड़ाने (गुलाम आजाद कराने में) खर्च करें। और 'नमाज' कायम करें और 'जकात' दें। .. ।" १६ — तिरमिजी, इब्न माजा, दारमी

१५ अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस मुसलमान ने किसी मुसलमान को जिस के पास कपडा नहीं था कपडा पहनाया अल्लाह उस को 'जन्नत' को हरा वस्त्र पहना देगा और जिस मुस्लिम ने किसी ही मुस्लिम को भूख की दशा में खाना खिलाया अल्लाह उस को 'जन्नत' के फल खिलाएगा और जिस मुस्लिम ने किसी मुस्लिम को प्यास की दशा में पानी पिलाया अल्लाह उस को ('जन्नत' की) खालिस शराब पिलायेगा जो मुहर-वन्द होगी।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

अधिक महत्व इस बात को दिया गया कि करीबी लोगों की खबर ली जाए। घर के लोगों और परिवार का हक अदा करना 'फर्ज' (अनिवार्य) है। इस कर्तव्य को पूरा करके ही 'नफल' की ओर ध्यान देना चाहिए। हर एक के हक को समझना चाहिए और हर एक के हक और दर्जे का ध्यान रखते हुए हक को अदा करना चाहिए।

१६ 'जकात' देने के पश्चात् भी लोगों की जिम्मेदारियाँ बाकी रहती हैं। 'जकात' देने के पश्चात् आदमी को अपना हाथ बिल्कुल खींच नहीं लेना चाहिए। और न सामाजिक माँगों और मुहताजों और गरीबों को भूलना चाहिए। 'जकात' देने के बाद भी यदि कोई मुहताज और मुसीबत का मारा आ जाये या समाज की कोई बड़ी आवश्यकता सामने आ जाये तो आदमी को इस सिलसिले में भी माल खर्च करना चाहिए। नबी सल्ल० ने प्रमाण के रूप में सूर अल-बकरा की 'आयत' पेश की। इस 'आयत' में नेकी के कामों के अन्तर्गत 'ईमान' के पश्चात् नातेदारों, अनाथों, यात्रियों, माँगने वालों आदि की माली सहायता का उल्लेख हुआ है। इसके पश्चात् 'नमाज' कायम करने और

१६ हजरत अबू हुदैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा यदि मेरे पास उहद के बराबर सोना हो, तो मेरे लिए बड़ी खुशी की बात यही होगी कि तीन रातें गुजरने से पहले-पहले मेरे पास उस में से कुछ भी न रहे सिवाय इस के कि ऋण चुकाने के लिए उस में से कुछ बचा लूँ^{१७} । —बुखारी

१७. अबू हुदैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दीनार और दिरहम का वन्दा तिरस्कृत हैं^{१८} ।

—तिरमिजी

१८ अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दो आदते किसी 'ईमान' वाले व्यक्ति में डकट्ठी नहीं

'जकात' अदा करने का उल्लेख भी किया गया है । इसलिए मालूम हुआ कि मुहताजों, मुसाफिरों आदि की माली सहायता का जो जिक्र यहाँ किया गया है वह 'जकात' के अतिरिक्त है ।

१७. अर्थात् मेरे लिए खुशी की बात यह नहीं है कि माल मेरे पास डकट्ठा हो बल्कि खुशी की बात मेरे लिए यह है कि मेरे पास जो-कुछ हो मैं उसे जल्द-से-जल्द अल्लाह के मार्ग में खर्च कर दूँ । यहाँ तक कि अपने पास कुछ न रहने दूँ । यही 'नवियो' का गौरव है । उनका जीवन इसका प्रत्यक्ष माक्षी होता है कि वे सच्चे हैं, वे जो-कुछ कहते हैं सत्य हैं । सत्यता का जो आन्दोलन वे दुनिया में चलाते हैं उसके पीछे कदापि उनका कोई व्यक्तिगत सासारिक और भौतिक लाभ नहीं होता । वे जो-कुछ करते हैं सत्य के लिए करते हैं ।

१८ अर्थात् जो लोग धन के पुजारी हैं, जिन्हें अल्लाह के मार्ग में अपना माल खर्च करना अत्यन्त कठिन होता है वे अल्लाह की दयालुता से दूर हैं । उनके हिस्से में फिटकार और तिरस्कार के अतिरिक्त और कुछ नहीं आ सकता ।

धन-दौलत का उपासक बनना बहुत ही बुरा है । इसीलिए 'सदका' केवल उसे लेना चाहिए जो मुहताज हो । मुहताज व्यक्ति भी यदि स्वस्थ है, तो उसे भी यथासम्भव 'सदका' और 'जकात' लेने से बचना चाहिए । उसे परिश्रम करके अपना जीवन निर्वाह करना चाहिए । एक 'हदीस' में आता है : "मालदार के लिए 'सदका' (जकात) हलाल नहीं है और न उस व्यक्ति के लिए जो बलिष्ठ और स्वस्थ हो" । —तिरमिजी, अबूदाऊद, दारमी, नसई, अहमद, इब्न माजा ।

हो सकती कंजूसी और दुःशीलता^{१६} ।

—तिरमिजी

२० हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दान-शील व्यक्ति निकट है अल्लाह से निकट है 'जन्नत' से, निकट है लोगों से, दूर है ('जहन्नम' की) आग से और कंजूस व्यक्ति दूर है अल्लाह से, दूर है 'जन्नत' से, दूर है लोगों से, निकट है ('जहन्नम' की) आग से^{२०} । और जाहिल दानशील व्यक्ति अल्लाह को कंजूस उपासक से अधिक प्रिय है ।

—तिरमिजी

२१ हजरत बरोदा कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी किसी ने 'जकात' रोक ली अल्लाह ने उसे अकाल ग्रस्त कर दिया^{२१} ।

—तबरानी-अवसत

२२ इब्न अमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब भी किसी जाति ने अपने मालो की 'जकात' रोक

१६ अर्थात् कंजूसी और कृपणता का 'ईमान' से कोई सम्पर्क नहीं है 'ईमान' तो आदगी को उदार, साहसी और विशाल हृदय बनाता है जबकि कंजूसी और दुःशीलता वास्तव में सकीर्ण दृष्टिता और सकीर्ण हृदयता की उपज है ।

२० दानशीलता से मनुष्य को अल्लाह की प्रसन्नता और उसका सामीप्य प्राप्त होता है । दानशील व्यक्ति से लोग भी प्रसन्न रहते हैं और ऐसा व्यक्ति परिणाम की दृष्टि से भी सफल होता है । 'जन्नत' उसका शाश्वत ठिकाना है । इसके विपरीत कंजूस से न अल्लाह खुश होता है और न दुनिया के लोग उसे आदर की दृष्टि से देखते हैं और परिणाम उसका यह होता है कि 'जन्नत' के स्थान पर वह 'जहन्नम' का अधिकारी होता है ।

दानशीलता दुर्गुणों के निदान में अत्यन्त सहायक होती है । मनुष्य इसके द्वारा नैतिकता एवं आध्यात्मिकता के उच्च स्तर को पहुँच जाता है । वह इस योग्य हो जाता है कि उसमें अल्लाह की बड़ाई और महानता की अनुभूति जाग्रत हो सके । कंजूस व्यक्ति स्वार्थपरता और तगदिली में कुछ इस प्रकार ग्रस्त होता है कि उसे आध्यात्मिक एवं नैतिक उच्चता प्राप्त ही नहीं होती । उसका दिल भौतिक लाभ-हानि की चिन्ताओं में ही उलझा रहता है जीवन के उच्चतम अर्थ और मूल्य से वह परिचित ही नहीं हो पाता ।

२१ इसलिए अकाल को दूर करने के लिए केवल यही काफी नहीं है कि अधिक-से अधिक नहरें निकाली जाएँ और ट्यूब वेल और पम्पिंग सेट आदि सिंचाई के साधनों को जुटाया जाए बल्कि इसके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि माल की 'जकात' भी निकाली जाए ।

ली उस से आकाश की वर्षा रोक ली गई और यदि जानवर न हों तो (बिल्कुल) वर्षा न हो^{२२} । —तबरानी

सदका (दान) का व्यापक अर्थ

عَنْ أَبِي مَسْعُودٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِذَا انْفَقَ الْمُسْلِمُ نَفَقَةً عَلَى أَهْلِهِ وَهُوَ خَيْرٌ بِكَ أَنْتَ لَهُ صَدَقٌ — بحاری

१. हज़रत अबू मसऊद से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब कोई मुस्लिम व्यक्ति अपने घर वालों पर पुण्य के ध्येय से खर्च करता है, तो इसकी गणना भी उसके लिए 'सदका' (दान) में होती है^१ ।

—बुखारी, मुस्लिम

२ सुलेमान बिन आमिर रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा किसी मुहताज को सदका देना केवल 'सदका' है और किसी करोब्रो नातेदार को देने में दो पहलू हैं वह 'सदका' भी है और नाता-रिश्ता जोड़ना भी है^२ ।

—अहमद, तिरमिज़ी, नसई इब्न माजा, दारमी

२२ अर्थात् अल्लाह कभी बेगुनाह जानवरों के कारण वर्षा कर देता है हालांकि मनुष्यों के अपराध और अवज्ञा का परिणाम तो यह होना चाहिए था कि वर्षा बिल्कुल न हो ।

१ अर्थात् इस पर भी वह ईश्वर के यहाँ शुभ फल, पुरस्कार और पारिश्रमिक का अधिकारी होता है । मुस्लिम व्यक्ति जब दूसरों पर अपना धन खर्च करता है उस समय भी वास्तव में ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति ही उसका मुख्य ध्येय होता है और जब वह अपने बाल-बच्चों और अपने घर वालों पर खर्च करता है उस समय भी वह ईश-प्रसन्नता का ही इच्छुक होता है । एक ही चरित्र और स्वभाव (*Character*) है जिस का प्रदर्शन 'मुस्लिम' व्यक्ति के जीवन में विभिन्न अवस्थाओं में होता है । अपनी मूल प्रकृति की दृष्टि से उसका प्रत्येक कर्म 'सदका' कहलाने योग्य ही है

२ अर्थात् किसी निकटतम नातेदार पर खर्च करने से सदका के अतिरिक्त नाते-रिश्ते के आदर करने का शुभ फल भी उसे प्राप्त होगा, क्योंकि अपने नातेदार की सेवा कर के उसने सदका का पुण्य ही नहीं कमाया बल्कि उसे अपने नातेदार के साथ अच्छा व्यवहार करने का श्रेय भी प्राप्त हुआ ।

३ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है, उन्होंने कहा हे अल्लाह के रसूल ! कौन सा 'सदका' उत्तम है ? आपने कहा जो गरीब अपने परिश्रम को कमाई से करे^३ । और शुरू उन लोगों से करो जिनके तुम जिम्मेदार हो^४ ।

—अबुदाऊद

४ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल सल्ल० को सेवा में उपस्थित हुआ और कहा कि मेरे पास एक दीनार है । आपने कहा अपने ऊपर खर्च करो । उसने कहा कि मेरे पास और है । आपने कहा उसे अपने बच्चों पर खर्च करो । उसने कहा : मेरे पास और है । आपने कहा इसे अपनी पत्नी पर खर्च करो उसने कहा कि मेरे पास और है । आपने कहा फिर इसको अपने मेवक पर खर्च करो । उसने कहा कि मेरे पास और है । आपने कहा तुम अधिक जानते हो^५ ।

—अबू दाऊद, नसई

५ हजरत सुराका बिन मालिक रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ने कहा क्या मैं तुम्हें उत्तम सदका से परिचित कराऊँ ? वह अपनी उस बेटी के साथ अच्छा व्यवहार करता है जो तेरी ओर लौटा दी गई हो और तेरे सिवा उसका कोई कमाने वाला न हो^६ । —इब्न माजा

६ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल

३. अर्थात् गरीब और निर्धन व्यक्ति जब अपने परिश्रम से कमा कर खर्च करता है, तो अल्लाह के निकट उसके दान और सदके का बड़ा महत्व होता है । इसलिए कि 'सदका' देना उसके लिए कठिन कार्य है, फिर भी वह सदका देता है ।
- ४ खर्च करने में सबसे पहले उन लोगों का ध्यान रखना चाहिए जिनकी मनुष्य पर विशेष रूप से जिम्मेदारी होती है । यदि कोई व्यक्ति अपने बाल-बच्चों और घर के लोगों से बेपरवा होकर इधर-उधर 'सदका' बाँटता फिरता है, तो उसकी यह नीति धार्मिक दृष्टि से कदापि सराहनीय नहीं हो सकती ।
- ५ इस 'हदीस' से विदित है कि इस्लामी आदेश बुद्धि और प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है, इस्लामी आदेशों का उल्लंघन वास्तव में बुद्ध और प्रकृति का उल्लंघन है ।
६. अर्थात् उस के पति ने उसे तलाक दे दिया हो या उस की मृत्यु हो गई हो और उस का खर्च चलाने वाला तेरे सिवा कोई और न हो ।

सल्ल० ने कहा उत्तम 'सदका' ज्यादा दूध देने वाली ऊटनी है जो किसी को दूध पीने के लिए मगनी दे दी जाये, और वह अधिक दूध देने वाली बकरी जो दूध पीने के लिए किसी को दे दी जाये कि वह प्रातःकाल बरतन भर कर दूध देती हो और सन्ध्या को एक और बरतन भर कर^७ ।

—बुखारी, मुस्लिम

७ हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो मुस्लिम कोई वृक्ष लगाये या खेती करे और उसमें से मनुष्य पक्षी और जानवर खाये, तो यह भी उसके लिए 'सदका' है^८ । मुस्लिम की एक 'हदीस' में हजरत जाविर से उल्लिखित है की उसमें से जो चोरी चला जाये वह भी उसके लिए 'सदका' है^९ । —बुखारी, मुस्लिम

८ सअद बिन उबादा कहते हैं कि मैंने कहा हे अल्लाह के रसूल ! सअद की माता (अर्थात् मेरी माता) मर गई, तो कौन स 'सदका' उत्तम होगा ? आपने कहा पानी, सअद ने कुआँ खोदा और कहा यह सअद की माता के लिए है^{१०} । —अबू दाऊद, नसई

७ ऐसे सदका से एक 'तरफ' सदका करने वाले व्यक्ति की उदारता का पता चलता है, दूसरी तरफ इससे लोगो की आवश्यकता भी पूरी होती है इसीलिए आपने इस शुभ कार्य की प्रशंसा की । अरबों में इसका रिवाज था कि लोग दूध पीने के लिए बकरी और ऊटनी दूसरो को दे देते थे आपने इसे सराहनीय ठहराया ।

८ उसके द्वारा सृष्टि के जीव आदि को जो लाभ भी पहुँचे उसमें उसके लिए शुभ प्रतिफल है ।

९ चोर ने यदि उसको हानि पहुँचाई, तो इसमें भी उसके लिए शुभ प्रतिफल है । ईमान वाला व्यक्ति किसी दशा में भी घाटे में नहीं रहता । चोरी करने वाला वास्तव में अपने को हानि पहुँचता है किसी मुस्लिम व्यक्ति को वह वास्तविक हानि नहीं पहुँचा सकता ।

१० अर्थात् इसका पुण्य सअद की माता को मिले । कुआँ की गणना सचारित सदके (सदका-ए-जारिया) में होती है जब तक कुआँ बाकी रहता है और लोग उससे फायदा उठाते रहते हैं । उसका सबाब पहुँचना रहता है । यहाँ कुछ बातें समझ लेने की हैं ।

पुण्य और सबाब केवल उस कर्म के बदले मिलता है जो 'शरीअत'

६: अबू हुरैरा रजि कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'मनुष्य की हड्डी के जितने जोड़ हैं हर एक पर 'सदका' जरूरी है, प्रत्येक दिन जिसमें सूर्य उदय हो। दो व्यक्तियों के बीच न्याय करना सदका है। किसी व्यक्ति को सवारी पर सवार होने में या उसका सामान उस पर लादने में सहायता करना सदका है। और एक अच्छी बात भी सदका है और नमाज के लिए जो पग भी उठाता है वह भी सदका है और तकलीफ देने वाली चीज़ रास्ते से दूर करना भी 'सदका' है"।

—बुखारी, मुस्लिम

१०. हज़रत जाबिर रजि० और हज़रत हुज़ैफा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर नेकी सदका है। —बुखारी, मुस्लिम

(धर्म शास्त्र) के अनुसार और अल्लाह ही के लिए किया गया हो। दूसरी बात यह है कि पुण्य-पुरस्कार का उपहार केवल उन ही लोगों को पहुँच सकता है जिन्होंने ईमान की हालत में ससार से प्रस्थान किया हो जिसकी हैसियत अल्लाह के यहाँ मेहमान की होती है। अल्लाह के विद्रोहियों को पुण्य और सवाब का उपहार कदापि नहीं पहुँच सकता।

शुभ कार्य के दो लाभ होते हैं। एक उसके वे परिणाम जो कर्म करने वाले व्यक्ति की आत्मा और उसके स्वभाव पर अंकित होते हैं, जिनके कारण वह ईश्वर के यहाँ प्रतिफल का अधिकारी होता है। दूसरे उसका वह बदला जो अल्लाह की ओर से उसे पुरस्कार के रूप में मिलता है। पुण्यपुरस्कार के उपहार के भेजने का सम्बन्ध केवल दूसरी चीज़ से है पहली चीज़ से उसका सम्बन्ध नहीं है। अच्छे कर्म के आध्यात्मिक और नैतिक लाभ और उनका प्रतिफल किसी दूसरे व्यक्ति को प्रदान नहीं किया जा सकता हाँ उनके पुण्यपुरस्कार के लिए वह ईश्वर से प्रार्थना कर सकता है कि वह उसके अमुक नातेदार या उपकारी व्यक्ति को प्रदान कर दिया जाये।

११ शरीर का प्रत्येक जोड़ और अवयव वास्तव में ईश्वर की एक कृपा और उपकार है। ईश्वर के हर उपकार के प्रति कृतज्ञता दिखलाने के लिए जरूरी है कि मनुष्य दान और 'सदका' करे। 'सदका' केवल इमका नाम नहीं है कि कोई व्यक्ति अल्लाह की राह में रुपये-पैसे ही खर्च करे बल्कि अपनी वास्तविकता की दृष्टि से सदके के विभिन्न रूप हो सकते हैं जैसा कि आगे इस 'हदीस' से भी इसकी पुष्टि होती है। जिन चीज़ों को इस 'हदीस' में 'सदका' कहा गया है वह केवल नाममात्र को 'सदका' नहीं हैं, बल्कि वास्तव में उनमें सदके का भाव और आत्मा विद्यमान है।

११. हजरत जाविर कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर भलाई 'सदका' है और यह बात भी भलाई और नेकी में से है कि तुम हर्षित चेहरे के साथ अपने भाई से मिलो और अपने डोल से अपने भाई के बरतन में पानी डाल दो^{१२} । —अहमद, तिरमिजी

१२. अबू मूसा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अमानतदार मुस्लिम खजानची (कोषाध्यक्ष) जब प्रसन्नता पूर्वक वह चीज देता है जिसके देने का उसे आदेश दिया जाता है, तो वह 'सदका करने में से एक होता है'^{१३} । —बुखारी, मुस्लिम

१२ अर्थात् वास्तविकता की दृष्टि से सदके का अर्थ इस्लाम में अत्यन्त व्यापक है, इसमें हर भलाई और नेकी सम्मिलित है। विचार करने से मालूम होता है कि 'सदका' ही नहीं इस्लाम के दुसरे मौलिक आधार और कर्म भी अपना महान् मूल्य (*Values*) रखते हैं और उनमें बड़ी व्यापकता और गहराई पाई जाती है।

एक व्यक्ति 'सदके' में रुपये-पैसे तो खर्च कर देता है परन्तु वही व्यक्ति दूसरी भलाई और नेकी के कामों से दूर रहता है। न वह अवसर पड़ने पर इन्साफ की बात कहता है, न भाइयों से हँसी-खुशी से मिलता है और न मुहताजों और असहायों से उसका व्यवहार सहानुभूति लिये हुये होता है। लोगों को उस से कष्ट ही पहुँचता रहता है। ऐसी अवस्था में इसके अतिरिक्त और क्या कहा जायेगा कि वह अभी वास्तव में 'सदका' देने वालों में सम्मिलित नहीं हो सका। यह कैसे सम्भव है कि एक व्यक्ति एक ओर तो गरीबों और निर्धनों के प्रति सहानुभूति दिखाने और ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए अपना माल खर्च करे दूसरी ओर वह लोगों को कष्ट पहुँचाये और भलाई और नेकी के कामों से उसका दूर का सम्बन्ध भी न हो। ऐसे व्यक्ति का 'सदका' वास्तव में 'सदका' नहीं केवल दिखावा है। एक आत्महीन कर्म है जिसके पीछे कोई वास्तविक चेतना और सच्ची और हार्दिक प्रेरणा नहीं पाई जाती। या फिर वह धर्म सम्बन्धी सूझ-बूझ से रहित है कि अपनी समस्त घिनावनी हरकतों के बावजूद अपने सदके को 'सदका' ही समझता रहता है, हालाँकि उस का 'सदका' उस रोजेदार के रोजे से भिन्न नहीं है जो रोजा रखते हुये भी ईश्वर की अवज्ञा से नहीं बचता और न तुच्छ इच्छाओं के वशीभूत होने और जुल्म और अत्याचार से अपने आप को बचाता है। रोजे से उसके पल्ले भूख-प्यास के अतिरिक्त और कुछ नहीं पड़ता।

१३ वह 'बैतुलमाल' (राज्य कोष) से जो धन निकाल कर पेश करता है वह

१३. हजरत अबू सईद खुदरी रजि० कहते हैं एक व्यक्ति (मस्जिद) में आया। अल्लाह के रसूल सल्ल० नमाज पढ़ चुके थे। आपने कहा तुममें कोई व्यक्ति है जो उस पर 'सदका करे, (अर्थात्) उसके साथ नमाज पढ़े। एक व्यक्ति उठा उसने उसके साथ नमाज पढ़ी^{१४}।

—तिरमिज़ी, अबू दाऊद

१४. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर मुसलमान के जिम्मे 'सदका' है। लोगों ने कहा . यदि किसी के पास (देने को) कुछ न हो ? आप ने कहा . अपने हाथों से काम करे और कमाये इस तरह खुद भी फायदा उठाये और 'सदका' भी करे। लोगो ने कहा यदि वह इस का सामर्थ्य न

उस की कोई निजी सम्पत्ति नहीं होती, फिर भी उसकी गणना 'सदका' करने वाली में होती है। इसलिए कि माल पेश करते हुये वह अपने अन्दर किसी प्रकार की तंगी नहीं पाता, बल्कि जो-कुछ कहा जाता है खुशी दिल से पेश कर देता है अमानतदारी, उदारता मन की प्रसन्नता और आनन्द 'सदका' और दान के अनिवार्य लक्षणों में से है इसलिए ऐसा कोषाधिकारी या खजानची जो तंग दिल न हो 'सदके' के प्रतिफल से कैसे बचित रह सकता है।

१४ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि यदि कोई देर से आये और 'जमात' हो चुकी हो (लोग सामूहिक रूप से नमाज पढ़ चुके हो) कोई व्यक्ति भी ऐसा न हो जिसे नमाज अदा करनी हो, तो उसके अकेले नमाज पढ़ने से अच्छा वह होगा कि जो लोग नमाज पढ़ चुके हैं उनमें से कोई उसका साथ दे ताकि वह 'जमाअत' की बरकत और सवाब से बचित न रहे। नबी सल्ल० इसको 'सदका' कह रहे हैं जिससे 'सदके' के व्यापक अर्थ की पुष्टि होती है। दूसरों के लिये जो त्याग और कुरबानी भी की जाये वह 'सदका' ही है यह याद रहे कि यह 'सदका' केवल 'जुह्द' मगरिब और इशा कि नमाज में हो सकता है, 'फज्र' और 'अस्त्र' की नमाजों के बाद यह 'सदका' नहीं हो समता इस लिये कि 'फज्र' और 'अस्त्र' की नमाज के बाद 'नफल' नमाज नहीं पढ़ी जाती। नमाज में 'सदका' करने वाले के लिये वह नमाज 'नफल' हो जाती है, फर्ज तो वह अदा कर चुका होता है। इस नमाज में 'इमामत' नफल पढ़ने वाला भी कर सकता है और फर्ज अदा करने वाला भी जैसा कि नबी सल्ल० के समय में होता रहा है। हदीसों से मालूम होता है कि ऐसा 'सदका' हजरत अबूवक्र रजि० ने भी किया है।

रखता हो या यह भी न कर सके ? आपने कहा किसी गम के मारे हुये जरूरत वाले व्यक्ति की सहायना करे^{१५} । लोगो ने कहा यदि यह भी न कर सके ? आप ने कहा (लोगो को) नेकी का हुक्म दे । लोगो ने कहा यदि यह भी न कर सके ? कहा अपने-आप को बुराई से बचाये क्योंकि यह भी 'सदका' है^{१६} । —बुखारी मुस्लिम

१५ सदका प्रत्येक मुस्लिम का आवश्यक गुण है । यदि 'सदका' करने के लिए माल मही है तो, मनुष्य तो मरून-मजदूरी कर के यह धन प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए । यदि वह किसी कारण से यह भी नहीं कर सकता, तो किसी जरूरत वाले और विरल व्यक्ति को सेवा ही करे । यह भी एक प्रकार का 'सदका' है । यदि वह भी नहीं कर सकता, तो उद्यान से लोगो के काम आये उन्हें बनाई का हुक्म दे । 'ईमान' के कारण मनुष्य को एक प्रकार का मानसिक, हादिक और आत्मिक आनन्द और विद्वानता प्राप्त होती है उस का यह आनन्द स्वभावतः जीवन में विभिन्न शैलियों में प्रदर्शित होता है । और उसे प्रदर्शित होना भी चाहिए क्योंकि यह उनके 'ईमान' की एक बड़ी मांग है । इन आनन्द का एक विशेष प्रमुख मूलक चीज 'सदका' है । 'ईमान' और आत्मिक आनन्द का मूलक होने कारण 'सदका' हमारे अन्तर को शुद्ध और विकसित करने में भी सहायक होता है इन ही कारणों से 'सदका' मुस्लिम के लिए अनिवार्य ठहराया गया है । आत्मिक दृष्टि से 'सदका' (दान) 'ईमान' का माध्यम, हृदय की विद्वानता और मानसिक एवं आत्मिक आनन्द है जो रूप-रूप से दूसरो की सहायता करने के अतिरिक्त लोगो की दूसरी सेवाओं का प्रेरक भी बनाता है । यही कारण है कि उन सर्व को 'सदका' शब्द से अभिव्यजित किया गया है । यहाँ तक कि इस चीज को भी 'सदका' कहा गया कि मनुष्य इस बात का ध्यान रखे कि उस से किसी को किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचे ।

१६ इस से 'सदका' की और भी व्यापक व्याख्या होती है । इस से ज्ञात हुआ कि 'सदका' स्वीकारात्मक रूप में केवल माली और शारीरिक चीज ही नहीं है और न वह केवल वचन और कर्म तक सीमित है, बल्कि सदके का निषेधात्मक रूप भी होता है । जिस व्यक्ति ने अपने आप को बुराई से बचाया उस ने नेकी ही के पक्ष को दृढ़ करने में अपना योगदान दिया इसे भी एक प्रकार का 'सदका' कहा जायेगा ।

दान के कुछ अधिनियम

عَنْ أَنَسٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ أَنْفَقِي وَلَا تَحْمِلِي مِجْرَةَ
اللَّهِ عَلَيْكَ وَلَا تَوُعِي قَبُولَ اللَّهِ عَلَيْكَ إِرْضَانِي مَا اسْتَطَعْتِ — بحاری مسلم

१ हजरत असमा रजि० कहती हैं कि कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा खर्च करतो रहो गिनो मत, यदि तुम इस तरह हिसाब कर के दोगी तो अल्लाह भी तुम्हे हिसाब ही से देगा। और माल को रोको मत नहीं तो अल्लाह भी तुम से मान को रोक लेगा। खुने हाथ तुम से जितना हो सके देती रहो। —बुखारी, मुस्लिम

२ अबू उमामा से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हे आदम के बेटे। जो तेरी आवश्यकता से अधिक हो उसका खर्च करना तेरे लिए अच्छा है और उस का रोकना तेरे लिए बुरा है। और हाँ गुजारे और आवश्यकता की मात्रा में रखने पर तुम्हारे लिए कोई निन्दा की बात नहीं और सबसे पहले उन पर खर्च करो जिन की तुम पर जिम्मेदारी हैं। —मुस्लिम

१. 'इस्लाम' में उचित रूप से माल खर्च करने को पसन्द किया गया है। अकारण माल एकत्र करने को पसन्द नहीं किया गया है। कृपणता और माल के लोभ से एक ओर धन का फैलाव और, गर्दिश रुक जाती है, जिस धन से बहुत से लोगो की जरूरतें पूरी हो सकती थी वह अकेले एक व्यक्ति की त्रिजोरियो में बन्द रह कर अपनी उपयोगता खो देता है, दूसरी ओर दान और खर्च के द्वारा मनुष्य को आत्मिक और नैतिक उन्नति प्राप्त होती है। उसकी आत्मा विकसित होती है। धन-दौलत का लोभ मन से निकल जाता है। वह जीवन के उन उच्चतम मूल्यों से परिचित होता है जिनका ज्ञान कृपणता और लोभ की दशा में उसे कदापि नहीं हो सकता था। 'सदके' का आत्मा को निखारने और शुद्ध करने में बड़ा योग होता है। इस बात का हर वह व्यक्ति स्वीकार करेगा जिसे 'दीन' (धर्म) के विषय में कुछ भी सोच-विचार और चिन्तन करने का अवसर मिला होगा।

खर्च करने में मनुष्य को सब से पहले उन लोगो की आवश्यकताओं को देखना चाहिए जिनके सरक्षण और भरण-पोषण का दायित्व स्वयं उस पर आता है। इसके पश्चात् वह दूसरो पर खर्च करे। ऐसा न हो कि वह दूसरो

३. अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० एक बार बिलाल रजि० के पास आये उन के पास छुहारो का ढेर लगा हुआ था, आप ने कहा हे बिलाल यह क्या है ? कहा मैं ने इसे कल के लिए एकत्र कर रक्खा है। आप ने कहा : क्या तुम इस से नहीं डरते कि 'कियामत' के दिन तुम 'जहन्नम' की आग में उस की आँच देखो। हे बिलाल ! खर्च करो और अर्ग के मालिक से कम देने का भय न करो^३।

—बैहकी-शोबुलईमान

४ अबू हुरैरा नबी सल्ल० से 'रिवायत' करते हैं कि (आप ने कहा अर्श को छाया में होगा) वह व्यक्ति जिस ने 'सदका' दिया और उसे इतना छिपाया कि उस का बायाँ हाथ नहीं जानता कि उस के दाये हाथ ने क्या खर्च किया^३।

—बुखारी

के लिए तो बड़ा दानशील हो और अपने परिवार आदि के जरूरी हक का भी उसे ध्यान न हो।

२ इस 'हरीस' का यह अर्थ कदापि नहीं है कि कल के लिए कुछ रखने की 'शरीअत' में कोई गुजाइश ही नहीं है बल्कि वास्तव में आपने यह बात मन में बिठानी चाही है कि मनुष्य का असल भरोसा धन-दौलत पर नहीं बल्कि अल्लाह पर होना चाहिए। जिस अल्लाह ने आज रोजी का प्रवन्ध किया है वह कल भी करेगा। यदि हमारा भरोसा अल्लाह को छोड़कर किसी भौतिक पदार्थ पर हुआ और हम अल्लाह की दयालुता और उसकी शक्ति को भूल गए, तो यह चीज हमारे हक में यातना का कारण बन सकती है।

३ अर्थात् वह बहुत ही छिपाकर 'सदका' करता है। इसलिए कि वास्तविक उद्देश्य तो अल्लाह को प्रसन्न करना है न कि लोगो को यह दिखाना कि हम बड़े दाता हैं। यदि वह दुनिया को दिखाने के लिए खर्च करता है, तो वह न केवल यह कि 'सदका' के 'सवाब' से वंचित रह जायेगा बल्कि उलटे एक बड़े गुनाह का भागी होगा। इसलिए कि जो काम उसे अल्लाह के लिए करना चाहिए था उसको उसने दुनिया को दिखाने के लिए किया। यह एक प्रकार का 'शिक' हुआ।

यदि लोगो को दिखाने की नीयत न हो तो खुले रूप से खर्च करने में कोई दोष नहीं है; परन्तु छिपाकर देना अधिक उत्तम है। कुरआन में कहा गया है . "यदि खुले रूप से 'सदका' दो तो यत्र भी अच्छा है और यदि छिपा कर गरीबो को दो, तो यह तुम्हारे लिए ज्यादा अच्छा है और इस में तुम्हारी

५. अम्न बिन शुऐब अपने पिता और दादा से 'रिवायत' करते हैं कि नबी सल्ल० ने लोगों के बीच 'खुतवा' (भाषण) दिया और कहा सावधान ! जो व्यक्ति किसी यतीम (अनाथ) का संरक्षक हो और उस यतीम के पास माल हो तो उस संरक्षक को चाहिए कि वह उस माल को व्यापार में लगाये और उसे छोड़ न दे कि 'जकात' उसे खा जाये^५ ।

—तिरमिजी

६ जरीर बिन अब्दुल्लाह रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब तुम्हारे पास कोई 'जकात' की वसूली के लिए आये तो चाहिए कि वह तुम्हारे पास से इस हाल में लौटे कि वह तुम से प्रसन्न हो^६ ।

—मुस्लिम

७ अब्दुल्लह रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक दिरहम (सिक्के का नाम) लाख दिरहम से अग्रसर रहा । कहा गया यह कैसे ? हे अल्लाह के रसूल ! आप ने कहा एक व्यक्ति के पास दो दिरहम हैं जो उन दोनों में खरा है उस को उस ने 'सदका' कर दिया । दूसरा व्यक्ति अपने (फँले हुए अधिक) माल के एक गोशे में गया वहाँ से एक लाख दिरहम निकाल कर 'सदका' कर दिया (तो पहले व्यक्ति का एक दिरहम उस के लाख दिरहम से उत्तम है^७ । —नसई

बुराईयाँ घुलती हैं"—२ २७१

४ यतीमों और अनाथों का माल यदि तुम्हारे पास है और तुम ने उसकी रक्षा और निगरानी की ज़िम्मेदारी स्वीकार की है, तो उस माल को व्यापार में लगाओ उनके माल को यो ही न छोड़ दो क्योंकि यदि तुमने उनके माल को यो ही छोड़ दिया और उसे व्यापार में नहीं लगाया, केवल उसकी 'जकात' ही निकालते रहे, तो इसका परिणाम इसके सिवा और क्या हो सकता है कि उनका माल धीरे-धीरे समाप्त होकर रह जाएगा । इसलिए यतीमों का हित इसमें है कि तुम उनके माल की रक्षा करो उसे बढ़ाओ न कि उनके हानि-लाभ की तुम्हें कोई चिन्ता ही न हो ।

५ अर्थात् तुम अपनी 'जकात' सहर्ष पूरी-पूरी अदा करो ।

६ ऐसे व्यक्ति के लिए जिसके पास धन-दौलत का भण्डार है एक लाख खर्च कर देना कुछ भी मुश्किल नहीं है जबकि एक दूसरे व्यक्ति का एक दिरहम खर्च करना भी एक बड़ी कुरबानी हो सकती है । जो 'सदका' तगी की हालत में किया जाता है उसका महत्व अल्लाह की दृष्टि में उस 'सदका' के मुकाबले में

८ जैद विन असलम से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा माँगने वाले को दो यद्यपि वह घोड़े पर सवार होकर आये। मालिक ने इस को 'रिवायत' किया है। अबू दाऊद हजरत अली से रिवायत करते हैं कि माँगने वाले का हक है यद्यपि वह घोड़े पर चढ़ कर आये^{१०}।

९ हजरत जाविर रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति अण्डे के बराबर सोना लाया और कहा हे अल्लाह के रसूल । इस को मैं ने एक मकान में पाया है आप इसे ले लें। यह 'सदका' है। इस के अतिरिक्त मेरी मिलकियत में कुछ नहीं है। आप ने उस की ओर से मुँह फेर लिया। फिर वह दाहिनी ओर से आया और यही बात कही। आप ने उस से फिर मुँह फेर लिया। फिर वह बाईं ओर से आया और वही बात कही फिर आप ने उस से मुँह फेर लिया। फिर वह पीछे से आया और वैसी ही कही। फिर आप ने उस को ले लिया और उस से उस व्यक्ति को खींच कर मारा, यदि उस को लग जाता, तो उसे तकलीफ पहुँचती। आप ने कहा तुम में से कोई अपनी सारी मिलकियत लाता है और कहता है कि यह 'सदका' (दान) है। फिर इस के पश्चात् वह बैठ कर लोगों से भिक्षा माँगता है। सब से उत्तम 'सदका' वह है जो बेपरवाई के साथ हो^{११}।

—अबूदाऊद

कही अधिक है जो खुशहाली की दशा में मनुष्य करता है।

७ 'हदीस' से मालूम होता है कि जिसके पास खाने को हो या जो इसका सामर्थ्य रखता हो कि कमा सके उसका काम यह नहीं है कि वह माँगे या 'जकात' ले, यह साहस की शिक्षा है। रहा कानून तो जो व्यक्ति हिसाब से कम माल रखता है उसे 'जकात' दी जा सकती है। नबी सल्ल० ने एक ओर तो लोगों में यह भावना जाग्रत की कि वे यथासम्भव माँगने से बचें। आपने यहाँ तक कहा कि जिस व्यक्ति को सुबह ग़ाम की रोटी की सामग्री प्राप्त हो वह यदि माँगने के लिए हाथ फैलाता है, तो वह अपने हक में आग संचित करता है, दूसरी ओर आपने मुसलमानों में पूर्णतः दानशीलता का गुण पैदा किया और यह शिक्षा दी कि माँगने वाले को दो यद्यपि घोड़े पर सवार होकर (अर्थात् अच्छी दशा में) आये।

८ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि हाकिम या ज़िम्मेदार व्यक्ति को 'सदका' वसूल करते समय देने वाले व्यक्ति की परिस्थिति और उसकी दूसरी आवश्यक

१० अबू हुरैरा रजि० बयान करते हैं मैं ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! कौन सा 'सदका' उत्तम है ? आप ने कहा थोड़े माल वाले की कोशिश और मशक्कत और 'सदका' देने में आरम्भ उन लोगों से करो जिनकी तुम पर जिम्मेदारी है^{१०} ।
—अबू दाऊद

११ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा उत्तम 'सदका' यह है कि तू भूखे जिगर का पेट भर दे ।
—वैहकी शोबुलईमान

१२. सईद से उल्लिखित है कि सअद नबी सल्ल० के पास आये और पूछा कौन सा 'सदका' आप को अधिक प्रिय है ? आप ने कहा पानी पिलाना^{११} ।
—अबू दाऊद

१३ अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मुहताज वह नहीं है जो लोगों से माँगता फिरता है और उस को एक दो आस या दो खजूरे दे दी जाती है, बल्कि मुहताज वह है जिस के पास अपनी आवश्यकता पूरी करने की सामग्री भी नहीं है और किसी को उस की मुहताजी का एहसास भी नहीं हो पाता कि उस को 'सदका' दिया जाए और न वह लोगों से माँगने के लिए जाता है^{१२} ।
—बुखारी, मुस्लिम

बातों को ध्यान में रखना चाहिए । 'सदका' देने वाले को भी चाहिए कि वह 'सदका' देते समय इस पहलू से अवश्य देख ले कि वह यदि अपनी मारी मिलकियत या अपनी सम्पत्ति का अधिक भाग अल्लाह के मार्ग में 'सदका' कर रहा है, तो उसके नतीजे में कल वह लोगों से भिक्षा नहीं माँगेगा बल्कि वह कमा कर खायेगा । यदि वह इसका साहस अपने में नहीं पाता तो उसके लिए यही अच्छा है कि बस उतना ही 'सदका' करे जितना वह आसानी से कर सकता है ।

९ अर्थात् परिश्रम करके जो कुछ थोड़ा-बहुत प्राप्त किया उसमें से तकलीफ और मशक्कत उठाकर अल्लाह के मार्ग में खर्च भी करे ।

१० इसलिए कि उनका हक सबसे अधिक है ।

११ भूखे को खाना खिलाना और प्यासे के लिए पानी का प्रवन्ध करना सब से बढ़कर नेकी और 'सदका' है । इस प्रकार के 'सदके' से लोगों को तत्काल ही आराम मिलता है ।

१२ मतलब यह है कि ऐसे लोगों की खबर लेनी सबसे पहले जरूरी है जो अपनी

१४. अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने कहा : हे अल्लाह के रसूल ! किस 'सदका' का सवाब अधिक है ? आप ने कहा तेरा इस हाल में 'सदका' करना कि तू स्वस्थ हो और तुझे माल की चाहत और इच्छा हो, निर्धनता से डरता और धनवान होने की आशा रखना हो^{१३} और ऐसा न हो कि तू सोचता और टालता रहे यहाँ तक कि जब प्राण गले में पहुँच जाए, तो कहने लगे कि इतना अमुक व्यक्ति के लिए है और इतना अमुक व्यक्ति के लिए है हालाँकि अब तो वह अमुक व्यक्ति ही को मिलेगा^{१४} ।
—बुखारी, मुस्लिम

१५. हजरत हसन रजि० से 'मुरसल' तरीके से उल्लिखित है कि

तकलीफ लोगो से बयान नहीं करते और न लोगो के सामने हाथ फैलाते हैं जिसके कारण साधारणतया लोगो को इसका अनुमान नहीं हो पाता कि वे किस हालत में हैं । ये सब से बढ़कर इसके हकदार हैं कि इनकी सहायता की जाए । और इस तरह से सहायता की जाए कि इनके मान प्रतिष्ठा आदि को क्षति न पहुँचे । इसकी शिक्षा कुरआन में भी दी गई है "यह 'सदका' उन मुहताजों के लिए है जो अल्लाह के मार्ग में ऐसे घिर गये हैं कि (रोजी कमाने के लिए) घरती में दौड़-भाग नहीं कर सकते । उनके (माँगने से) बचने के कारण अनजान व्यक्ति उन्हें मालदार समझता है । तुम उनके चेहरो से उन की भीतरी दशा पहचान सकते हो, वे लोगो से चिमट-चिमट कर नहीं माँगते । तुम (उनकी सहायता के लिए) जो माल भी खर्च करोगे, निस्सन्देह अल्लाह उसका जानने वाला है ।"—२ २७३

१३ मतलब यह है कि 'सदका' तो वही अल्लाह के यहाँ महत्व रखता है जो स्वस्थ अवस्था में दिया जाये जबकि मनुष्य के सामने अपनी बहुत सी समस्याएँ होती हैं । उसका अपना भविष्य होता है । उसे माल की आवश्यकता और इच्छा होती है । इस सब के बावजूद यदि वह अल्लाह के मार्ग में खर्च करता है, तो निश्चय ही वह अल्लाह के यहाँ प्रतिदान का अधिकारी है । ऐसे ही लोगो के बारे में कुरआन में कहा गया है "और जो लोग अपने मन के लोभ से बचे रहे, वही सफलता प्राप्त करने वाले हैं ।"—५६ ६

१४ अर्थात् मनुष्य जब जीवन से निराश हो जाए और समझ ले कि माल-दौलत सब-कुछ अब छिन जाने को है उस समय यदि वह 'सदका' करता है और वसीयत करता है, तो उसका अल्लाह के यहाँ कोई मूल्य नहीं है, अब तो उस का माल दूसरो के हाथ में स्वयं ही पहुँच जाएगा ।

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'जकात' के द्वारा अपने मालो की रक्षा करो^{१५} और अपने बीमारो का इलाज 'सदका' के द्वारा करो^{१६}। दुआ और गिडगिडाहट के द्वारा मुसीबतो का स्वागत करो^{१७}। —अबूदाऊद

१६ हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते है कि मैं ने एक व्यक्ति को अल्लाह की राह मे घोडे पर सवार किया^{१८}। उस ने उसे खराब कर दिया^{१९}। मेरा इरादा हुआ कि उसे खरीद लूँ, मेरा ख्याल था कि उसे सस्ता बेचेगा, मैं ने नबी सल्ल० से पूछा (कि क्या मैं उसे खरीद लूँ), आप ने कहा, कदापि उसे न खरीदो और अपने 'सदके' को लौटाओ नही चाहे वह तुम्हे एकही दिरहम में दे क्योंकि अपने दिये 'सदके' को लौटाने वाला ऐसा ही है जैसे कुत्ता जो कै कर के उमे चाट ले। एक 'रिवायत' के शब्द ये है "अपने 'सदके' को न लौटाओ क्योंकि 'सदके' को लौटाने वाला उस व्यक्ति की तरह है जो कै कर के उसे चाट ले^{२०}। —बुखारी, मुस्लिम

१५ अर्थात् तुम माल की 'जकात' दोगे तो अल्लाह तुम्हारे माल की रक्षा करेगा, यदि तुम 'जकात' नही निकालते तो किसी भी समय तुम्हारा यह अपराध विनाश का कारण बन सकता है और तुम्हारा माल तबाह हो सकता है।

१६ अर्थात् रोगियो के इलाज मे डाक्टरो और चिकित्सको पर ही भरोसा न करो बल्कि उस सब से बडे चिकित्सक की ओर भी रुजू करो जिसके कब्जे मे दुख-सुख, जीवन और मृत्यु सब-कुछ है। उसे खुश करने और उस की सहायता प्राप्त करने का उत्तम उपाय 'सदका' है। तुम 'सदका' करके गरीबो की सहायता करोगे, तो अल्लाह मुसीबत मे तुम्हारी मदद करेगा।

१७ अर्थात् मुसीबत आने पर दुआ करो और अल्लाह के सामने गिडगिडाओ, अल्लाह तुम्हारी मुसीबत को टाल देगा।

१८ अर्थात् अल्लाह के मार्ग मे उन्होने एक घोडा दिया।

१९ अर्थात् उसने उस घोडे की देख-भाल ठीक से नही की जिसके कारण वह घोडा दुबला और कमजोर हो गया।

२० हजरत इब्न उमर रजि० का अमल यह था कि यदि वह कोई ऐसी चीज खरीदते भी जिसे उन्होने 'सदका' किया होता तो उसे वे अपने पास न रखते बल्कि उसे फिर तुरन्त 'सदका' कर देते। (बुखारी)

'सदका' की हुई चीज को वापस लेना बडी ही घिनावनी हरकत है। इसी

१७ हजरत अबू हरैरा रजि० और हकीम बिन हिजाम रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल मल्ल ने कहा . उत्तम 'सदका' वह है जो अपने पीछे बेपरवाई छोड़ जाये, और 'सदका' देने में आरम्भ उन लोगो से करो जिन की जिम्मेदारी तुम पर हो" । —बुखारी, मुस्लिम

काम्य इन्हो ने सादन में उपमा दी गई है । 'सदके' में दिये हुए नान को गरीबों को देना मल्लो पारमार्थिक भाव में धर्मो 'सदके' को यह नहीं करता फिर भी साहि में उन्को भीत को पीटा जाता होता है जिने यह अल्लाह की राह में दे चुका होता है । इस्लामी व्यवस्था के विषय यह जाहिरि एकस्पता भी प्रकट है । जोरिए इस भीत को पकड़ नहीं दिया कि कोई उम चीज को गरीबों को दानिद कर जिमको यह अल्लाह की राह में निदान चुका है ।

२१ बेपरवाई छोड़ जान का धर्म यह है कि 'सदका' देने के पददान मनुष्य दिल में किसी प्रकार की पुटन और तगी नष्टमूस न करे । 'सदका' देने में यह देना चाहिए कि या तो उनका बच रहा हो कि स्वयं उमें 'सदका' देने की आवश्यकता न होगी या फिर मनुष्य को अल्लाह पर उनका भरोसा हो कि अपने दिन में कुछ भी तगी नष्टमूस न करे । धर्मो मनुष्य का दिल बेपरवा हो । 'सदका' करने के बाद अल्लाह पर भरोसा करने की सबसे अच्छी मियाल हजरत अबू बक्र सिदीक रजि० की है । वे पर 'ती मारी नामधो नबी मल्ल० के कामो में दान देते हैं और कहते हैं कि घर में अल्लाह और उमका रसूल बाकी है, परन्तु सामान्य नियम यही है कि 'सदका' देने के पश्चात् इतना शेष रहे कि मनुष्य की अपनी आवश्यकताएँ पूरी हो जाएँ और वह तगी महसूस न करे ।

इस 'हदीस' में दूसरी बात यह बताई गई है कि अपने नातेदारो और सगे-भहोदरो से निवृत्त होने के पश्चात् बाहर के लोगो को देना चाहिए । घर में किमी के बच्चे और दूसरे लोग मुहताज हो और वह बाहर 'सदका' चाँटता फिरता है, तो यह 'सदका' के आशय के सर्वथा प्रतिकूल होगा ।

माँगने से परहेज

عَنْ تَوْبَانَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، مَنْ رَكَعٌ لِي أَنْ لَا يَسْأَلَ النَّاسَ شَيْئًا فَاسْكَفَ لَهُ بِالْجَنَّةِ، فَقَالَ تَوْبَانُ، أَنَا فَكَانَ لَا يَسْأَلُ أَحَدًا شَيْئًا ————— اوداود سائ

१ हजरत सौबान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति मुझ से इस बात की प्रतिज्ञा करे कि वह लोगों से न मागेगा तो मैं उस के लिए 'जन्नत' की ज़मानत लेता हूँ। सौबान रजि० ने कहा मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ। इसी लिए वे किसी से माँगते नहीं थे।
—अबूदाऊद, नसई

२ हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि तुम में से जो व्यक्ति (अकारण) माँगेगा वह सर्वोच्च अल्लाह से ('कियामत' के दिन) इस दशा में मिलेगा कि उस के चेहरे पर मास न होगा^१।

—बुखारी, मुस्लिम, नसई

३. हब्शी बिन जुनादा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा माँगना धनवान् के लिए वैध नहीं है और न वलवान स्वस्थ के लिए वैध है हाँ ऐसे व्यक्ति के लिए वैध है जिसे निघनता ने भूमि पर गिरा दिया हो, या जो तावान अथवा ऋण के बोझ से

१ 'इस्लाम' में इस बात को बहुत ही नापसन्द किया गया है कि कोई व्यक्ति भिक्षा माँगे। इस्लाम चाहता है कि मनुष्य यथासम्भव अपने-आपको अपमान से बचाये। इस्लाम की इस शिक्षा के परिणाम स्वरूप 'सहाबा' यदि ऊँट पर बैठे होते और ऊँट की नकेल गिर जाती, जो स्वयं उतर कर उसे उठाते किसी दूसरे से उठाने के लिए न कहते। लेकिन अफसोस कि आज इस्लाम पर 'ईमान' रखने वालों में ऐसे वर्ग भी पैदा हो गये हैं जिन्होंने अपने रसूल सल्ल० की शिक्षा को भुला कर भिक्षा को ही अपना घन्घा और जीवन निर्वाह का साधन बना लिया है।

२ दुनिया में वह लोगों के आगे हाथ फैलाकर आत्मसम्मान और स्वाभिमान को धूल में मिलाता था उस दिन उसका अपमान और आबरू की बरबादी इस रूप में जाहिर होगी कि उसके चेहरे पर मास न होगा। नहूमत और कुरूपता अत्यन्त बढ़ी होगी।

नद गया हो' और जो व्यक्ति अपने माल को बढ़ाने के लिए लोगो से मांगे तो वह मांगता 'क्रियामत' के दिन उस के चेहरे पर एक घाव होगा, और 'जहन्नम का गर्म पत्थर होगा जिस को वह गायेगा', तो अब जिस का जो चाहे कम मांगे और जिन का जो चाहे अधिक मांगे । —तिरमिजी

४. हज़रत अबू तुरैरा रजि० ने उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जो व्यक्ति अधिक माल प्राप्त करने के लिए लोगो से मांगता है तो वह वास्तव में आग का अगारा मांगता है अब चाहे उस में जमी करे या अधिक मांगे । —मुस्लिम

५. समरा बिन जुन्दब रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा मांगना घाव है जिन से मनुष्य अपने चेहरे को आघात पहुँचाता है, तो अब जो व्यक्ति चाहे अपने चेहरे पर बाकी रखे और जो चाहे नष्ट कर दे यह और बात है कि कोई व्यक्ति हाकिम से मांगे या किसी चीज को मांगे जिन के बिना कोई उपाय न हो* ।

—अबू दाऊद, तिरमिजी, नसई

- ३ अर्थात् अत्यन्त विरगता की दशा में मांगने की इजाजत है ।
४. उन दिन यह वास्तविकता मनुष्य के सामने आ जायेगी कि बिना आवश्यकता के दुनिया में लोगो ने भिक्षा माँगकर वह अपनी आवश्यक और चेहरे के तेज को नष्ट किया है । उन दिन उनके चेहरे पर कोई मोन्दर्य और आकर्षण न होगा बल्कि उसका चेहरा छिना हुआ और आहत होगा । दुनिया में वह सब से अधिक अप्रिय और कष्टदायक चीज (अर्थात् लोगो के सामने हाथ फैलाने) को अगीकार किये हुये था । इसके परिणामस्वरूप उस दिन उसे गर्म पत्थर खाना पड़ेगा । मानो यह हम बात का प्रदर्शन होगा कि जब तुम ने अपने लिए दुःखदायक और अप्रिय चीज को अगीकार किया है तो तुम्हारे लिए वही चीज सचित की गई है जो तुम्हें प्रिय है । जब दुनिया में तुम ने अत्यन्त भयावह चीज को अपना रक्खा था तो यहाँ उस में क्यों भागते हो । जब सामाजिक जीवन में तुमने अपने स्वभाव के विरुद्ध नीति अपनाई है, तो उसके परिणाम स्वरूप तुम्हें उस चीज को कबूल कर लेना चाहिए जो तुम्हारी प्रकृति के विरुद्ध और तुम्हारे लिए अत्यन्त कष्टदायक है ।
५. अर्थात् हाकिम या अधिकारी व्यक्ति से यदि वह अपने किसी जायज हक की माँग करता है, तो यह ठीक है । इसी प्रकार अत्यन्त विरगता की दशा में यदि कोई लोगो से मांगता है, तो उसे निन्दनीय नहीं समझा जायेगा । साधा-

६. जुबैर बिन अवाम रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे से कोई व्यक्ति अपनी रस्सी ले और लकड़ियों का एक गट्ठा अपनी पीट पर लाद के लाये और बेचे और अल्लाह उस के द्वारा उस के सम्मान को वाकी रखे यह उस से अच्छा है कि वह लोगो से भिक्षा माँगे वे उसे दे या न दे^६ । —बुखारी

७ अबू राफेअ रजि० कहते है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने बनी मखजूम के एक व्यक्ति को 'जकात' वसूल करने के लिए नियुक्त किया उस ने अबू राफेअ से कहा कि तुम भी मेरे साथ चलो ताकि तुम्हे भी उस में से कुछ मिल जाए। अबू राफेअ रजि० ने कहा कि जब तक मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछ न लूँ, तुम्हारे साथ नहीं चल सकता। अबू राफेअ अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुए और आप से उस के बारे में पूछा। आप ने कहा 'जकात' और 'सदका' हम लोगो (अर्थात् हमारे घर और हमारे घराने) के लिए वैध नहीं है। और किसी घराने के गुलाम भी उन ही में से है^७ ।

—तिरमिजी अबू दाऊद, नसई०

रण अवस्था में मनुष्य की कोशिश यह होनी चाहिए कि वह लेने के बदले देने वाला बने ।

६ अर्थात् लकड़ी बेचकर अपनी आवश्यकताएँ पूरी करे और लोगो के मामले अपनी प्रतिष्ठा भग करे। माँगना खूद अपमान की बात है माँगने के बाद कोई तो उसे कुछ देगा और कोई इन्कार करेगा इस प्रकार उनके हिस्से में अपमान के अतिरिक्त कुछ और न आ सकेगा ।

७ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि नबी सल्ल० ने अपनी औलाद और घराने वालो के लिए 'सदका' और 'जकात' लेने को वैध नहीं रक्खा इसमें दूसरे उद्देश्यों के अतिरिक्त एक बड़ा उद्देश्य यह है कि यदि आपके वश और आपकी औलाद के लिए 'जकात' का लेना वैध होता तो लोग अपने नबी से प्रेम और सम्बन्ध के कारण अपनी 'जकात' आप ही की औलाद और घराने के लोगो को देने की कोशिश करते और समुदाय के दूसरे मुहताज वंचित रह जाते। 'कियामत' तक के लिए अपने घराने और औलाद को 'जकात' और 'सदका' से वंचित करके नबी सल्ल० ने अपने सच्चे नबी होने का प्रमाण दिया है। आपकी 'नुबूवत' के दावे के पीछे यदि कोई सासारिक हित और लाभ प्राप्त करने की इच्छा काम कर रही होती, तो कभी भी आप अपनी औलाद और

८. हज़रत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जिस व्यक्ति को कोई सख्त जरूरत पेश आये और उस ने उसे लोगो के सामने रक्खा, तो उसे उस मुसीबत से स्थायी रूप से छुटकारा नहीं मिलेगा और जिस व्यक्ति ने उसे अल्लाह के सामने रक्खा तो अल्लाह जल्द ही उस की जरूरत पूरी कर देगा या तो जल्द मृत्यु दे कर (यदि उस की मृत्यु का समय आ गया हो) या कुछ विलम्ब से सम्पन्नता प्रदान कर के^८ ।
—अबु दाऊद, तिरमिज़ी

घराने वालो को 'ज़कात' से वंचित न करते । इस त्याग और कुरबानी के पीछे सत्यता ही की शक्ति कार्यशील थी । अन्यथा अधिकतर देखा यह जाता है कि महात्मा और गुरु कहलाने वाले और उच्च कुटुंब के लोग 'सदका' और दान लेने का वास्तविक अधिकारी अपने आपको ही को समझते हैं ।

इस 'हदीस' से इसका भी अनुमान किया जा सकता है कि उस युग में जबकि गुलामो की कोई हैसियत नहीं थी आपने अपने गुलाम को अपने कुटुम्ब का एक सदस्य बताया । अबू राफ़ेअ आपके आजाद किये हुये गुलाम थे ।

मनुष्य को अपनी आवश्यकता अल्लाह ही के सामने रखनी चाहिए । अल्लाह ही उसका वास्तविक संरक्षक है । वही उसकी जरूरतों को पूरी करने वाला है । हज़रत मूसा अ० ने विवशता की दशा में अल्लाह ही को पुकारा था :
“रब ! जो अच्छी चीज़ भी तू मेरी ओर उतार दे मैं उसका मुहताज हूँ ।”
(कुरआन ४ : २८) अल्लाह ने उन्हे ठिकाना दिया ।

जो व्यक्ति अल्लाह को छोड़कर दूसरो पर भरोसा रखता है वह कभी भी सकट से छुटकारा नहीं पा सकता , उसका जीवन लोगो से माँगते ही बीतेगा । जिस व्यक्ति को स्वयं अपनी प्रतिष्ठा का ध्यान नहीं रहता, अल्लाह को भी उसकी कोई परवा नहीं होती । एक 'हदीस' में है कि नबी सल्ल० ने कहा . मैं तीन चीज़ो पर कसम खाता हूँ । एक यह कि 'सदका' से किसी माल में कमी नहीं आती, दूसरे यह कि किसी पर अत्याचार किया जाए और वह उस पर सब्र करे, तो सर्वोच्च अल्लाह उस पर इज़ज़त का दर्वाज़ा खोल देता है । तीसरे यह कि जो व्यक्ति अपने ऊपर भिक्षा माँगने का दर्वाज़ा खोलता है, सर्वोच्च अल्लाह उस पर तगदस्ती का दर्वाज़ा खोल देता है ।

—तिरमिज़ी

रोज़ा

मनुष्य की प्राकृतिक एवं स्वाभाविक क्षमता और शक्ति के उभरने और उस के विकास पाने के लिए शिक्षा-दीक्षा की आवश्यकता होती है। इस के अतिरिक्त साधारणतया मन और मस्तिष्क पर लौकिकता का पहलू इतना छाया रहता है कि मनुष्य के लिए यह अत्यन्त कठिन होता है कि वह चीजों को उन की प्राकृतिक पवित्रता में देख सके और जीवन के महत्वपूर्ण मूल्यों (*Values of life*) और वास्तविकताओं को समझ सके। 'रोज़ा एक' 'इबादत' (उपासना) और हमारी आध्यात्मिक एवं नैतिक दीक्षा का एक उत्तम उपाय है। 'रोज़ा' का वास्तविक उद्देश्य यह है कि हमें मन की शुद्धता प्राप्त हो, हम में सयम पैदा हो सके और हम अल्लाह का डर रखें। कुरआन में कहा गया है - "हे 'ईमान' लाने वालो ! तुम पर रोज़े अनिवार्य किये गये हैं जैसे तुम से पहले लोगों पर अनिवार्य किये गये ताकि तुम डर रखने वाले बन सको" (अल-बकरा आयत १८३)।

जब तक मनुष्य में आत्म नियंत्रण न हो उसे न तो मन की शुद्धता प्राप्त हो सकती है और वह न अल्लाह की अवज्ञा से बच सकता है। जो व्यक्ति अपनी कुछ इच्छाओं का वशवर्ती हो उसे न अल्लाह की महानता का एहसास हो सकता है। और न उसे जीवन की अनुभूति हो सकती है। बढ़ी हुई पाशविक भावना उसे इस का अवसर ही कब देगी कि वह अपनी प्रकृति की वास्तविक मांगों की ओर ध्यान न दे सके। रोज़ा इस बात का क्रियात्मक प्रदर्शन है कि खाना-पीना और स्त्री-प्रसंग के अतिरिक्त भी कोई चीज है जिस की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। 'रोज़ा' बन्दे को ईश्वर की ओर और जीवन के उन महत्वपूर्ण मूल्यों की ओर आकृष्ट करता है जो मानव जीवन की वास्तविक निधि हैं। वह बन्दे को ऐसे उच्च स्थान पर पहुँचाता है जहाँ बन्दा अपने ईश्वर से अत्यन्त समीप हो जाता है। जहाँ अन्धकार छूट जाता है और सारे आवरण उठ जाते हैं। इसीलिए विद्वानों ने कहा है "कितने ही लोग रोज़े से नहीं होते फिर भी वास्तविकता की दृष्टि से वे रोज़ेदार होते हैं, और कितने ही लोग रोज़ा रखते हुये भी रोज़ेदार नहीं होते"।

‘रोज़ा’ ज़ाहिर में तो इस चीज़ का नाम है कि मनुष्य उषाकाल से ले कर सूर्यास्त तक खाने-पीने और विषय भोग से रुका रहे किन्तु अपने आशय और आंतरिक उद्देश्य की दृष्टि से रोज़ा जिस चीज़ का नाम है वह यह है कि मनुष्य अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण रख सके, वह अल्लाह से डरता और उस को उपेक्षा से बचता हो। कभी ऐसा होता है कि मनुष्य देखने में तो रोज़े से होता है लेकिन वास्तव में उस का रोज़ा नहीं होता। न उस की आँखें सयमी होती हैं और न उस का जीवन पवित्रता और ईश-भय के अन्तर्गत व्यतीत होता है।

‘रोज़े’ के लिए कुरआन ने जो शब्द प्रयोग किया है वह ‘सौम’ है। ‘सौम’ का शब्दार्थ है : वचना, पार्थक्य और मौन। इमाम रागिब कहते हैं:

“सौम का वास्तविक अर्थ है किसी काम से रुक जाना, चाहे उस का सम्बन्ध खाने-पीने से हो या बात-चीत करने और चलने-फिरने से हो इसी कारण घोड़ा चलने-फिरने या चारों खाने से रुक जाये तो उसे ‘सायम’ (रोज़ेदार) कहा जाता है। थमी हुई वायु और दोपहर के समय को भी ‘सौम’ कहते हैं। इस विचार से कि उस समय सूर्य मध्य आकाश में रुक जाता है”।

इस व्याख्या से मालूम हुआ कि वास्तव में किसी चीज़ से रुक जाने की स्थिति का नाम ‘सौम’ (रोज़ा) है। ‘रोज़ा’ वास्तव में उसी व्यक्ति का है जो रोज़े की हालत में तो खाने-पीने और विषयभोग से रुक जाये लेकिन गुनाहों और अप्रिय कार्यों को सदैव के लिए छोड़ दे।

‘रोज़ा’ अपने-आप को अल्लाह के लिए हर चीज़ से निवृत्त कर लेने और पूर्ण रूप से अल्लाह की ओर आकृष्ट होने का नाम है। इस पहलू से ‘रोज़े’ और ‘एतकाफ’ (सब से अलग होकर अल्लाह की याद और उस ‘इबादत’ के लिए एकान्तवास करना) में बड़ी अनुकूलता पाई जाती है। यही कारण है कि ‘एतकाफ’ के साथ ‘रोज़ा’ रखना जरूरी समझा गया है। बल्कि पौराणिक धर्म विधान में तो रोज़े की हालत में बात-चीत से भी बचा जाता था। कुरआन में आता है कि हजरत मसीह अ० के जन्म के अवसर पर हजरत मरयम बहुत परेशान हुई और उन्होंने यहाँ तक कहा कि क्या अच्छा होता कि मैं इस से पहले मर जाती और लोग मुझे भूल जाते। उस समय उन्हें तसल्ली देते हुये कहा गया था “फिर यदि तू किसी आदमी को देखे तो (इशारे से) कह देना : मैं ने तो रहमान (कृपाशील ईश्वर) के लिए रोज़े की नज़्र मानी है, मैं आज किसी आदमी से न बोलूँगी”

—मरयम आयत २६।

‘रोज के कारण मनुष्य और ‘फिरिश्तों’ से बड़ी समानता आ जाती है। फिरिश्तो के खाने-पीने की आवश्यकता नहीं होती उन का आहार अल्लाह की ‘हम्द’ (ईश-प्रशंसा) और ‘तस्बीह’ (ईश-गुणगान) है। रोजे की हालत में मुस्लिम भी खाने-पीने और कामवासना आदि से दूर रह कर अल्लाह की ‘इबादत’ और बन्दगी में व्यस्त दीख पड़ता है।

‘रोजा’ रख कर बन्दा अपनी इच्छाओं पर काबू पाता है। उस व्यक्ति से जो अपनी इच्छाओं का दास हो उससे इस बात की आशा नहीं की जा सकती कि वह सत्य के समर्थन और असत्य एवं अनैतिकता के उन्मूलन के लिए जान-तोड़ कोशिश कर सकेगा। ‘जिहाद’ के लिए सब्र और साहस दोनों अभीष्ट है। सब्र और साहस रोजे की विशेषताओं में से हैं। इसी लिए नबी सल्ल० ने ‘रोजे’ के महीने को ‘सब्र का महीना’ कहा है। रोजे के महीने में निरन्तर एक मास तक सब्र, आत्मनियंत्रण और अल्लाह के आज्ञापालन का अभ्यास कराया जाता है।

साधारण अवस्था में मनुष्य को दूसरों की तकलीफ और भूख-प्यास का एहसास नहीं हो पाता। ‘रोजे में भूख-प्यास का तजुर्बा मनुष्य में स्वाभाविक यह एहसास उभारता है कि वह दीन-दुखियों और जरूरत-अमीनों के साथ सहानुभूति का मामला करे और उन्हें परेशानी की हालत में न रहने दे। नबी सल्ल० ‘रमजान’ के महीने को ‘मवासात’ का महीना (भई चारा एवं सहानुभूति का मास) कहते थे। और इस महीने में आप अत्यन्त दानशील होते थे।

‘रोजा’ एक प्रकार से विनय एवं नम्रता का प्रदर्शन भी है। इसी लिए गुनाहों के क्षमा कराने में रोजा सहायक सिद्ध होता है। इसीलिए ‘शरीअत’ (धर्म शास्त्र) में ‘कफ़ारा’ (प्रायश्चित्त) के रूप में भी ‘रोजा’ रखने का आदेश दिया गया है। ‘रोजा’ न केवल यह कि गुनाह के प्रभाव को दिल से मिटाता है बल्कि वह दुआओं (प्राथनाओं) की स्वीकृति और अल्लाह कि दयालुता को अपनी ओर आकृष्ट करने में भी सहायक होता है। पौराणिक ग्रन्थों में भी रोजे की इस विशेषता का उल्लेख मिलता है।

“ईश-दिवस (अय्यामुल्लाह) महान् और अति भयानक है। कौन उस का सहन कर सकता है? लेकिन ईश्वर कहता है अब भी पूरे मन से ‘रोजा’ रख कर रुदन और क्रन्दन करते हुये मेरी ओर फिर कर आ जाओ और कपड़ों को नहीं बल्कि दिलों को चाक कर के (फाड़ कर,) प्रभु

अपने ईश की ओर फिरो क्योंकि वह दयाशील और अनुग्रहकारी, विलम्ब से क्रोध करने वाला और करुणानिधान है और यातना उतारने से बाज रहता है ? —योएल २ : ११-१२

‘रोज़ा’ पवित्रतम ‘इबादत’ (उपासना) है। रोज़ा अल्लाह की बड़ाई का प्रदर्शक और बन्दे की कृतज्ञता विज्ञप्ति भी है। ‘रोज़े’ के सिलसिले में कुरआन मजीद में जहाँ कहा गया है “ताकि तुम ‘तकवा’ (ईश भय और धर्म परायणता) हासिल करो” वही यह भी कहा गया है “ताकि उस मार्गदर्शन पर जो तुम्हें प्रदान किया गया है अल्लाह की बड़ाई करो और ताकि तुम (उस के आगे) कृतज्ञता दिखाओ” ।

—सूरा अल-बकरा आयत १८५ ।

मानव जाति पर यो तो अल्लाह के अगणित उपकार हैं लेकिन उस का सब से बड़ा उपकार यह है कि उस ने हमें कुरआन जैसा उत्तम ग्रन्थ प्रदान किया कुरआन ने मानव को मुक्ति और शाश्वत कल्याण का मार्ग दिखाया। मनुष्य को नैतिकता के उस उच्च पद से परिचित किया जिस की साधारण अवस्था में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। ‘रोज़ा’ रख कर मनुष्य अल्लाह की इस विशेष दयालुता पर प्रसन्नता प्रकट करता और उस का आभार स्वीकार करता है। मनुष्य अल्लाह का बन्दा और उसका सेवक है। अल्लाह ही उस का स्वामी और इष्ट पूज्य है। मनुष्य के लिए आनन्द का उत्तम साधन वही है जिस के माध्यम से वह सम्बन्ध और नाता प्रदर्शित होता हो जो वास्तविक नाता उसका अपने ईश्वर से है

हम उसके हैं हमारा पूछना क्या ।

ईश-सम्बन्ध का यह प्रदर्शन स्वभावतः अल्लाह के समक्ष कृतज्ञता व्यक्त करना भी है। ‘रमजान’ का महीना विशेष रूप से रोजे के लिए इस लिए नियत किया गया कि यही वह शुभ मास है जिस में कुरआन अवतारित होना आरम्भ हुआ था। कुरआन के अवतरण-उद्देश्यों और ‘रोज़े’ में बड़ी समानता पाई जाती है। कुरआन जिन उद्देश्यों के अन्तर्गत अवतारित हुआ है उस को प्राप्ति में रोज़ा सहायक होता है।

‘रमजान’ में एक साथ रोज़ा रखने से नेकी और आध्यात्मिकता का एक वातावरण पैदा हो जाता है जिसका दिलों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। कम हिम्मत और कमजोर इरादों के व्यक्ति के लिए भी नेकी को राह पर चलना सरल हो जाता है। सफलता उठी के लिए है जिस ने

इस रहस्य को समझ लिया कि उसकी जिम्मेदारी केवल 'रोजे' के बाह्य नियमों के पालन तक सीमित नहीं है बल्कि उसका यह कर्तव्य भी है कि वह 'रोजे' के वास्तविक उद्देश्य के प्रति असावधानी न दिखाए। रोजे का आशय केवल रोजे के समय तक ही अपेक्षित नहीं है बल्कि उसका सम्बन्ध मनुष्य के पूरे जीवन-काल से है। पौराणिक ग्रन्थों में भी ऐसे रोजों को व्यर्थ कहा गया है जिनका सम्बन्ध मन की शुद्धता, ईश-भय और उच्च नैतिकता से न हो। निम्नलिखित पक्तियाँ कितनी प्रभावकारी हैं।

“तुम इस प्रकार का 'रोजा' नहीं रखते हो कि तुम्हारी आवाज ऊपरी लोक में सुनी जाये।”

“क्या वह रोज़ा जो मैं चाहता हूँ यह नहीं कि जुल्म की ज़मीनें तोड़ें और जुए के बन्धन खोले और पीड़ितों को आजाद करे, बल्कि प्रत्येक जुए को तोड़ डाले? क्या वह यह नहीं कि तू अपनी रोटी भूखों को खिलाए और मुहताजों को जो इधर-उधर मारे-मारे फिरते हैं अपने घर में लाये और जब किसी को नंगा देखे तो उसे पहनाए और तू अपने सह-जातिक से मुँह न छिपाए? तब तेरा प्रकाश प्रातः काल की भाँति फूट निकलेगा। और तू शीघ्र चंगा हो जायेगा तेरी सत्यता तेरे आगे-आगे चलेगी और प्रभु का तेज तेरे पीछे रक्षा करता चलेगा। और यदि तू अपने दिल को भूखे की ओर झुकाए और दुखी मन को सन्तुष्ट करे तो तेरा प्रकाश अन्धकार में चमकेगा और तेरा अन्धकार दोपहर का-सा प्रकाशमान हो जायेगा।” —यशायाह ५८ . ४, ६, ७, ८, १०

यदि रोजे से वास्तविक रूप से फायदा उठाया जाये, तो वह मनुष्य को उस स्थान पर खड़ा कर देता है कि उसे सदैव अपनी जिम्मेदारी का एहसास रहता है। वह किसी समय भी अपने को अनुत्तरदायी नहीं समझेगा। वह हमेशा गुनाहों और बुरे कामों से बचेगा और अपने जीवन-लक्ष्य को सामने रखेगा।

रोज़ा की वास्तविकता

عَنْ سَلْمَانَ الْفَارِسِيِّ قَالَ خَطَبَا رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فِي الْآخِرِ
يَوْمٍ مِنْ شَعْبَانَ فَقَالَ يَا أَيُّهَا النَّاسُ! قَدْ أَظْلَكَكُمْ شَهْرٌ عَظِيمٌ مِنْهُمْ مُسَارَكٌ
شَهْرٌ فِيهِ لُذَّةٌ حَرَامٌ مِنْ أَلْفِ شَهْرٍ حَلَّ اللَّهُ صِيَامَهُ فَرِيضَةً وَقَامَ لَدَيْهِ
نَظْوَعًا. مَنْ قَرَّبَ فِيهِ بِخُصْلَةٍ مِنَ الْحَبِّ كَانَ كَمَنْ آذَى فَرِيضَةً وَمَا سِوَاهُ
وَمَنْ آذَى فَرِيضَةً فِيهِ كَانَ كَمَنْ آذَى سَعِينَ فَرِيضَةً وَمَا سِوَاهُ وَهُوَ
شَهْرُ الصَّبْرِ وَالصَّبْرُ نَوَافِلُ الْجَنَّةِ وَسَهْرُ الْهَوَاسِ وَشَهْرُ بُرَادٍ وَسَهْرُ رَمِ
الْمُؤْمِنِ مَنْ قَطَرِي فِيهِ صَائِمًا كَانَ لَهُ مَغْفِرَةٌ لِدُنُوبِهِ وَعِلْقٌ رَقَبَتِهِ
مِنَ النَّارِ. وَكَانَ لَهُ مِنْ أَجْرِهِ مِنْ عَمَلٍ أَنْ تُنْقَضَ مِنْ أَجْرِهِ سِتْرٌ فُلْنَا
يَا رَسُولَ اللَّهِ! لَسَرَكُنَا بِمَجْدٍ مَا تُقْطِرُ بِهِ الصَّائِمِينَ فَقَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ
يُعْطِي اللَّهُ هَذَا السَّوَابَ مَنْ قَطَرَ صَائِمًا عَلَى مَرْوَةٍ لَبَّى أَوْ تَمَرَةٍ أَوْ شَرْبَةٍ مِنْ
مَاءٍ وَمَنْ اسْتَبَعَ صَائِمًا سَقَاهُ اللَّهُ مِنْ حَوْصِي شَرْبَةٍ لَا تَطْمَاحُ يَدُ حُلِّ الْجَنَّةِ
وَهُوَ شَهْرُ أَوَّلِهِ رَحْمَةٌ وَأَوْسَطُهُ مَغْفِرَةٌ وَآخِرُهُ عِتْقٌ مِنَ النَّارِ وَمَنْ خَفَّفَ
عَنْ مَمْلُوكِهِ فِيهِ عَقَرَ اللَّهُ لَهُ وَأَعْفَى مِنَ النَّارِ ————— بيهقي في شعب الإيمان

१ हजरत सलमान फारसी रजि० कहते हैं कि शायबान की अन्तिम तिथि को अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हमें सम्बोधित किया आप ने कहा 'हे लोगो ! तुम पर एक महान् और बरकत वाला महीना छाया डाल रहा है'। इस में एक रात हजार महीनो से उत्तम है^२। इस महीने के रोजे को अल्लाह ने अनिवार्य किया है और उस की रातो मे (अल्लाह की सेवा मे)

१ अर्थात् 'रमजान' का शुभ महीना आ गया है ।

२ यह सकेत 'शबे कद्र' (दिव्य रात्रि) की ओर है । कुरआन इस दिव्य रात्रि से उतरना आरम्भ हुआ है । यह वह रात है जिसमे उन बातों का फैमला होता है जो ज्ञान एव तत्वदर्शिता पर अवलम्बित होती है । और जिनमे समार का कल्याण और भलाई होती है । दुनिया के मामलो का निर्णय इस रात मे होता है । वह रात जिसमे कुरआन उतरना शुरू हुआ कोई साधारण रात

खड़ा होने को 'नफल' (तद अधिक) ठहराया है^३। जो व्यांक्त इस महीने में कोई 'नफल' नेकी अल्लाह की प्रसन्नता और सामीप्य प्राप्त करने के ध्येय से करेगा तो वह ऐसा होगा जैसे इस महीने के सिवा दूसरे महीने में किसी ने 'फर्ज' (अनिवार्य कर्म) अदा किये^४। और वह सब का महीना है^५ और सब का बदला 'जन्नत' है और वह सहानुभूति एवं सवेदना का महीना है^६।

नहीं हो सकती। यह रात हजार महीनो से उत्तम है। कभी हजार महीनो में भी मानव-कल्याण के लिए वह काम नहीं हुआ जो इस एक रात में हुआ। इस रात को 'फरिश्ते' और रूहुल अमीन (हज़रत ज़िबरील अ०) अपने 'रब' के आदेश से उतरते हैं (दे० सूर अल-कद्र और सूर अद-दुखान आयत ३-५)।

३ रमजान के महीने में दिन को 'रोज़ा' रखना फर्ज (आवश्यक) है और रात में 'तराबीह' पढ़ना और ज़्यादा-से-ज़्यादा 'नमाज़' में अल्लाह के आगे खड़ा होना फर्ज (अनिवार्य) तो नहीं लेकिन यह अल्लाह को अत्यन्त प्रिय है।

४ 'रमजान' का महीना 'रोज़े' के लिए विशिष्ट है। इस महीने में समस्त 'मुस्लिम' लोग मिल कर एक साथ 'रोज़ा' रखते हैं। इस तरह व्यक्तिगत 'इबादत' एक सामूहिक 'इबादत' बन जाती है। लोगों के अलग-अलग 'रोज़ा' रखने से जो आध्यात्मिक एवं नैतिक लाभ हो सकते थे, सबके मिल कर रोज़ा रखने से वे लाभ असीमित रूप से बढ़ जाते हैं। 'रमजान' का यह महीना सम्पूर्ण वातावरण को नेकी और परहेजगारी से भर देता है। मनुष्य को रोज़ा रख कर गुनाह करते हुये लज्जा आती है। लोगो में नेकी और शुभ कर्मों की अभिरुचि बढ़ जाती है। और उनके मन में यह इच्छा होती है कि वे दीन-दुखियों के काम आये और अच्छे कामों में हिस्सा लें। नेकियों का प्रभाव और उसकी बरकतें बढ़ जाती हैं।

५ इस महीने में मनुष्य भूख-प्यास की तकलीफ उठा कर अपनी इच्छाओं पर काबू पाने और अपने को अल्लाह के आदेशों का पाबन्द बनाने की कोशिश करना है। वह अपने में ऐसी शक्ल और गक्ति उत्पन्न करने का प्रयास करना है जिसमें वह अल्लाह के मार्ग से धैर्य और दृढ़ता के साथ आगे बढ़ सके और उन तकलीफों और कष्टों का दृढ़ता और साहस के साथ मुकाबला कर सके जिनमें उसे मृत्यु-मार्ग में सामना करना पड़े।

६ 'रोज़े' में अपने इनारे भाइयों के प्रति सहानुभूति अधिक-से-अधिक पैदा होनी चाहिए। भूख-प्यास में पड़ कर मनुष्य को इसका पूर्णतः अनुभव हो जाता

और वह महीना है जिस में 'ईमान' वालों की रोजी मे वृद्धि की जाती है^७। जिस किसी ने इस में किसी रोजेदार को (रोजे के उपरान्त सन्ध्या को) जलपान कराया, तो उस के लिए गुनाहो के प्रति क्षमादान और ('जहन्नम' की) आग से आजादी का कारण होगा। और उसे उस रोजेदार के बराबर दिया जायेगा बिना इसके कि उस रोजेदार के 'सवाब' (प्रतिदान) में कोई कमी की जाये' ।

आप से कहा गया 'हे अल्लाह के रसूल ! हम मे प्रत्येक को सामान प्राप्त नहीं होता जिस से वह रोजेदार को 'रोजे' के उपरान्त जलपान आदि करा सके। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह यह 'सवाब' (प्रतिदान) उस व्यक्ति को भी प्रदान करेगा जो दूध की थोड़ी लस्सी या एक खजूर पर या पानी ही के एक घूँट पर किसी रोजेदार का (सन्ध्या को) 'रोजा' खुला दे और जो कोई किसी रोजेदार को पेट भर कर खाना खिला दे उसे ('क्रियामत' में) अल्लाह मेरे हाँज से ऐसा पिलायेगा कि उसे प्यास ही नहीं लगेगी यहाँ तक कि वह 'जन्नत' में दाखिल हो जायेगा। यह ('रमजान') का महीना है जिस का आरम्भिक भाग दयालुता, मध्य भाग क्षमादान और अन्तिम भाग ('जहन्नम' की) आग से आजादी है^८। और जो व्यक्ति इस महीने में अपने अधिकृत (दास, सेवक) के काम को हल्का कर देगा अल्लाह उसे क्षमा कर देगा और उसे ('जहन्नम' की) आग से आजाद करेगा' ।

—बैहकी—शोबुल ईमान

है कि मुहताजी और गरीबी मे आदमी पर क्या कुछ गुजरती होगी। स्वयं नबी सल्ल० इस महीने मे अत्यन्त दयालु और दयाशील हो जाते थे। कोई सवाली द्वार से खाली नहीं जाता था और न कोई कैदी कैद मे रहता था।

७ अर्थात् बाह्य एव आंतरिक, नैतिक एव अध्यात्मिक हर प्रकार की सम्पन्नताएँ और बरकतें इस महीने मे प्राप्त होती है।

८ यह महीना नेकियों की बहार ले कर आता है। 'ईमान' वाले लोग इस महीने मे अधिक-से-अधिक अल्लाह की 'इबादत और आज्ञापालन मे लग जाते हैं जिसके कारण लोगो पर अल्लाह की विशेष दयालुता और कृपा होती है यहाँ तक कि 'रमजान' का आरम्भिक भाग व्यतीत हो जाने के पश्चात् मुस्लिमो और आज्ञाकारी बन्दो की हालत ऐसी जानी है कि अल्लाह उनकी पिल्खली खताओ और गुनाहो को क्षमा कर दे। इस महीने के आखिरी हिस्से तक पहुँचने-पहुँचते इस शुभ महीने से फायदा उठाने वालो के जीवन मे ऐसी पवि-

२. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . आदम के बेटे के प्रत्येक कर्म की नेकी दस गुने से सात सौ गुने तक बढ़ाई जाती है सर्वोच्च अल्लाह कहता है कि 'रोज़ा उस से अलग है क्योंकि वह मेरे लिए है और मैं ही उस का बदला दूँगा^६। मनुष्य अपनी काम-वासना और अपना खाना मेरे ही लिए छोड़ देता है^७। रोजेदार के लिए दो हर्ष है। एक हर्ष 'रोज़ा' खोलने के समय और दूसरा हर्ष अपने 'रब' (पालन कर्ता स्वामी) से मिलने के समय^८। और रोजेदार के मुँह की गन्ध अल्लाह की दृष्टि में कस्तूरी की सुगन्ध से उत्तम

त्रता आ जाती है और उनमें ऐसा ईश-भय की भावना पैदा हो जाती है कि वे अल्लाह की ओर से मुक्त और मोक्षप्राप्त समझे जायें। अल्लाह 'जहन्नम' से उनकी रिहाई और आजादी का फैसला कर देता है।

६ अर्थात् अल्लाह लोगों के शुभ कर्मों का प्रतिकार और बदला उनकी नीयतों और उनके हृदय की शुद्धता के अनुसार दस गुणा से सात सौ गुणा तक देता है किन्तु रोजे का मामला इस सामान्य नियम से भिन्न है। रोजा खास अल्लाह के लिए होता है। दूसरी 'इबादतों' और नेकियों में कोई-न-कोई बाह्य गतिविधि सम्मिलित होती है इसलिए उनको दूसरे लोगों से छिपाना अत्यन्त कठिन है किन्तु 'रोज़ा' ऐसा खामोश और अव्यक्त कर्म है जिसको रोजेदार और अल्लाह के सिवा कोई दूसरा नहीं जान सकता। इसलिए अल्लाह उसका बदला भी बेहिसाब प्रदान करेगा। इसके अतिरिक्त 'रमजान' में नेकी और धर्म परायणता एवं ईश-भय का सामान रूप से शुद्ध वातावरण प्राप्त हो जाता है जिसमें भलाई शुभ कार्य के फलने-फूलने का अधिक अवसर मिलता है। आदमी जितनी ज्यादा नेक नीयती और मन की शुद्धता के साथ इस महीने में अमल करेगा और जितना अधिक 'रमजान' की बरकतों से फायदा उठाने की कोशिश करेगा और वर्ष के शेष ग्यारह महीनों में जितना 'रमजान' के प्रभाव को बाकी रखने का प्रयास करेगा उतना ही अधिक उसके शुभ कर्म फूलते-फलते रहेंगे, जिसकी कोई सीमा निश्चित नहीं की जा सकती। यह विशेषता साधारण अवस्था में दूसरे कर्मों को प्राप्त नहीं है।

१० अर्थात् 'रोज़े' में न अपनी काम वासनाओं को पूरा करता है और न कुछ खाना-पीता है।

११ अर्थात् एक खुशी उसे दुनिया ही में मन्ध्या को 'रोज़े' के उपरान्त जलपान करने योग्य प्राप्त होती है। दिन भर भूखा-प्यासा रहने के पश्चात् जब वह

है^{११}। और 'रोजा' ठान है जब तुम मे से किसी का 'रोजा' हो, तो वह न अश्लील बातें करे और न शोर मचाये और न दगा और फसाद करे और यदि कोई उसे गाली दे या उस से लड़े तो कह दे कि मैं 'रोजे' से हूँ (मैं तुम्हारे इस कार्य में साथ नहीं दे सकता)^{१२}। —बुखारी, मुस्लिम

३. हज़रत अबू हरैरा रजि० ने उन्निगित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति 'रमजान' के रोजे 'ईमान' और चेतना के साथ रखे उस के सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जायेंगे और इसी (प्रकार) जो 'रमजान' (के महीने) में 'ईमान' और चेतना के साथ (रातों में अल्लाह के आगे) ग़ाड़ा होगा उस के भी सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जायेंगे और (उसी तरह) जो 'शबेक़दर' (दिव्य रात्रि) में 'ईमान' और चेतना के साथ ('नमाज़' में अल्लाह की सेवा में) खड़ा होगा उस के भी सब पिछले गुनाह क्षमा कर दिये जायेंगे^{१४}।

—बुखारी, मुस्लिम

ज्ञान को 'रोजा' ग़ोमता है, तो उसे जो न्याय और आनन्द मिलता है वह माधारण ध्वन्या में कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। उसकी भूल-प्यास भी दूर हो जाती है और उसे यह सुझा भी हासिल होती है कि उसे अल्लाह के आदेश के निभाने का सुप्रबल प्राप्त हुआ। दूसरी खुशी उसे आखिरत में प्रभु-दर्शन से प्राप्त होगी।

१२. 'रोजे' की हानत में मुँह की गन्ध सराव हो जाती है (इसलिए बार-बार दतुवन करने की आवश्यकता होती है) लेकिन अल्लाह की निगाह में वह कस्तुरी की सुगन्ध में भी बढकर मूल्यवान है इसलिए कि वह गन्ध उस भूल-प्यास के कारण है जिसके पीछे अल्लाह के आदेश के पालन और उसकी प्रसन्नता की प्राप्ति के सिवा और कोई भावना काम नहीं कर रही होती है।

१३. अर्थात् जिस प्रकार ढाल के द्वारा मनुष्य शत्रु के आघातों से अपने को बचाता है उसी प्रकार 'रोजा' ज़तान और अपनी तुच्छ इच्छाओं के आक्रमणों से से बचने के लिए है। 'रोजे' के नियमों और मर्यादाओं का मनुष्य यदि ध्यान रखे, तो वह 'रोजे' के कारण बहुत से गुनाहों से बच सकता है और 'आखिरत' में 'जहन्नम' की आग से छुटकारा पा सकता है।

१४ 'ईमान' का अर्थ यह है कि अल्लाह और 'आखिरत' के बारे में जो धारणा 'इस्लाम' ने दी है वह ताज़ा रहे। चेतना के लिए वास्तव में यहाँ 'इहतिसाब' शब्द प्रयुक्त हुआ है। इहतिसाब का अर्थ यह है कि वह अल्लाह की खुशी और प्रसन्नता का इच्छुक हो। हर समय अपने विचारों और कर्मों पर निगाह

४ हजरत इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक व्यक्ति को डकार लेते सुना तो कहा . अपनी डकार को कम कर इस लिए कि 'कियामत' के दिन सब से बढ कर भूखा वह व्यक्ति होगा जो दुनिया में खूब पेट भर कर खाता है^{१५} ।

५ हजरत अबू हुदैरा रजि० से जल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर चीज की 'जकात' होती है और शरीर की 'जकात' रोजा है ^{१६} ।

—इब्न माजा

रखे कि कही वह अल्लाह की इच्छा के प्रतिकूल तो नहीं जा रहा है । उसके कर्म और विचार के पीछे कोई गलत भावना तो काम नहीं कर रही है । 'ईमान' और 'इहतिसाव' के साथ 'रोज़ा' रखने से अल्लाह उसके पिछले गुनाहो को क्षमा कर देता है । इसलिए कि वह कभी गुनहगार था भी तो अब वह अवज्ञा से वाज आ गया और उसने अल्लाह की ओर रुजू कर लिया ।

१५. अर्थात् 'आखिरत' में तृप्ति और सुख-चैन तो उसी व्यक्ति के लिए है जिसे 'आखिरत' की चिन्ता के कारण दुनिया में सुख भोगने का अवसर ही न मिल सका हो । इतना अधिक खाना कि आदमी लम्बी-लम्बी डकारें लेता फिरे आदमी को आलसी और अकर्मण्य बना देता है । ग़ाफिल व्यक्ति अपने मन को अन्धकारमय होने से बचा नहीं सकता । मन का अन्धकार सब से बड़ी महारूमी है और असफलता है । 'रोज़ा' मनुष्य को इस बात की शिक्षा देता है कि वह उदर-पोषण को जीवन का एकमात्र ध्येय न समझे, जीवन का मूल्य इस से कही बढ़कर है । एक 'रिवायत' में है कि नबी सल्ल० ने कहा "मनुष्य ने कोई बरतन पेट से बुरा नहीं भरा (जबकि पेट को इस तरह भरा जाये कि मनुष्य केवल चरने-चुगने वाला पशु बनकर रह जाये । और जीवन एव घर्म की मांगों और तकाजों को समझने में असमर्थ ही रहे) । मनुष्य के लिए कुछ लुकमे काफी है जो उसकी कमर को सीधी रख सके और यदि पेट भरना जरूरी हो तो पेट के तीन हिस्से करे, एक हिस्सा खाने के लिए एक पीने के लिए, और एक हिस्सा अपने लिए (अर्थात् सास आदि लेने के लिए) ।"

—तिरमिजी, इब्न माजा

१६. अर्थात् जिस प्रकार माल और दूसरी चीजों की 'जकात' देने से मनुष्य का माल और उमकी चीज़ें शुद्ध हो जाती है और उन्हें प्रयोग में लाने का अधिकार मनुष्य को मिल जाता है, ठीक उसी प्रकार शरीर की 'जकात' अदा करने से मनुष्य का अस्तित्व और उसका व्यक्तित्व शुद्ध और पवित्र हो जाता

६ हजरत अबू हुसैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जिस व्यक्ति ने (रोजे की हालत में) झूठ बोली और उस पर अमल करना न छोड़ा, तो अल्लाह को इस की कोई आवश्यकता नहीं कि वह (रोजा रख कर) अपना खाना-पीना छोड़ दे^{१७} ।

—बुखारी

७. हजरत अबू हुसैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . कितने ही रोजेदार ऐसे हैं जिन्हें अपने 'रोजे' से भूख-प्यास के अतिरिक्त कुछ पल्ले नहीं पड़ता और कितने ही (रातों में 'नमाज' में) खड़े होने वाले ऐसे हैं कि उन्हें (अल्लाह की सेवा में) अपने खड़े होने से रतजगे के अतिरिक्त कुछ पल्ले नहीं पड़ता^{१८} । —दारमी

८. कबीला बनी सुलैम के एक ('सहाबी') व्यक्ति का वयान है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हाथ पर गिन कर कहा 'तस्वीह'^{१९} अर्धतुला को भर देती है और 'अल-हम्दुलिल्लाह'^{२०} उसे पूर्ण रूप से भर देता है और

है और उसे विकास का पूरा अवसर प्राप्त होता है । 'रोजा' रखकर मनुष्य इसी बात का प्रमाण सचित करता है कि वह अल्लाह का विद्रोही और अवज्ञाकारी नहीं बल्कि अल्लाह का आज्ञाकारी है और बजा तौर पर उसे जीवित रहने और अल्लाह की नेमतों से लाभान्वित होने का हक पहुँचता है ।

१७ इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि 'रोजे' में भूखा-प्यासा रहना स्वयं कोई उद्देश्य नहीं है बल्कि 'रोजे' का वास्तविक उद्देश्य यह है कि उसके द्वारा मनुष्य में धर्मपरायणता, सयम और ईश-भय पैदा हो और वह एक उत्तरदायित्वपूर्ण जीवन व्यतीत कर सके ।

१८ मतलब यह है कि जब किसी ने 'रोजे' और रात में 'इबादत' करने के वास्तविक उद्देश्य को समझा ही नहीं और न उसे प्राप्त करने का प्रयास किया, तो फिर इसकी आशा कैसे की जा सकती है कि 'रोजे' और रात्रि-जागरण से उसे कोई लाभ हो सकेगा ।

१९ अर्थात् 'सुबहानल्लाह' कहना । अल्लाह की महानता और उच्चता का प्रदर्शन ऐसा शुभ कर्म है जो अर्ध तुला अर्थात् आधी मीजान को भर देने के लिए पर्याप्त है, शर्त यह है कि यह प्रदर्शन सच्चे मन से हुआ हो । सच्चे मन से अल्लाह की महानता का इकरार मनुष्य के जीवन को बदल सकता है फिर उसका पल्ला या तुला नेकियों से क्यों न भरेगी ।

२० अर्थात् अल्लाह की प्रशंसा करना और उसका आभार स्वीकार करना । जो

‘तकबीर’^{२१} जो-कुछ आकाश और धरती के बीच है सब को भर देती है। और ‘रोजा’ आघा सन्न^{२२} और सुधराई एव शुद्धता आघा ‘ईमान’ है।
—तिरमिज़ी

६ हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि दो रोजेदारो ने ‘जुहू’ या ‘अस्र’ की नमाज पढी। जब नबी सल्ल० नमाज अदा कर चुके तो आपने कहा . तुम दोनो दोबारा वजू कर के ‘नमाज पढो और अपना ‘रोजा’ पूरा कर के दूसरे दिन कजा रोजा रखो। उन्होंने कहा : क्यों ? हे अल्लाह के रसूल ! आप ने कहा तुम ने अमुक व्यक्ति की गीबत (परोक्ष निन्दा)

जीवन अल्लाह की ‘तस्वीह’ और ‘हम्द’ (महानता का वर्णन, गुणगान एव कृतज्ञाप्रकाशन) का प्रतीक बन जाये वही वास्तव मे पूर्ण जीवन है। इसलिए ‘तस्वीह’ और ‘हम्द’ करने के कारण मीजान अथवा कर्म-तुला का भर जाना स्वाभाविक भी बात है।

२१ अर्थात् ‘अल्लाहु अकबर’ कहना। जिन को वास्तविक श्रवण शक्ति प्राप्त है उन्हें विश्व मे हर ओर ज़मीन मे भी और अतरिक्ष और सितारो आदि मे भी ‘तकबीर’ (अल्लाह की बड़ाई) ही की ध्वनि सुनाई देती है। धरती और आकाश का प्रत्येक कण अल्लाह की बड़ाई और कुशलता की ही कहानी सुनाता है। जब कोई व्यक्ति अल्लाह की बड़ाई का गान गाता है तो उसकी सगति धरती और आकाश के कण-कण करते है, मानो उसकी वीणा के तारो की ध्वनि विश्व-वीणा के ध्वनि मे मिल जाती है।

२२. ‘ईमान’ वालो के सम्पूर्ण जीवन को हम “सन्न” से अभिव्यजित कर सकते है। ‘मोमिन’ एक जीवन-प्रणाली का पाबन्द होता है। उसका वास्तविक उद्देश्य ‘आखिरत’ की सफलता है। वह ससार मे इसलिए जीवित होता है कि अल्लाह के मार्ग पर चल सके। इसके लिए बड़े सन्न और साहस की आवश्यकता होती है। धैर्य के बिना मनुष्य अल्लाह के मार्ग मे एक कदम भी नहीं चल सकता और न इसके बिना उसके चरित्र का निर्माण ही सम्भव है। इस ‘हदीस’ मे ‘रोज़ा’ को ‘सन्न’ कहा गया है। मतलब यह है कि जिस व्यक्ति ने ‘रोज़ा’ रख लिया उसने सन्न, धैर्य और दृढ सकल्प की दीक्षा प्राप्त कर ली। अब वह इस दीक्षा से अपने पूरे जीवन मे लाभ उठाये और अपने सम्पूर्ण जीवन को सन्न के ढाँचे मे ढाले। जिस दिन उसका जीवन सन्न के ढाँचे मे ढल गया उस दिन हम कह सकते है कि उसने अपने ‘सन्न’ को पूर्ण कर लिया। उस समय उसे आघा सन्न नहीं बल्कि पूरा सन्न प्राप्त होगा।

की है" ।

—बैहकी

१०. हजरत जाविर रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० सफर में थे, आप ने एक व्यक्ति को देखा जिस के पास लोग एकत्र थे और उस पर छाया कर रक्खा था । आपने कहा, उसे क्या हुआ है ? लोगों ने कहा यह रोजेदार है । इस पर सन्नाह के रसूल सल्ल० ने कहा यह नेकी नहीं है कि सफर में रोजा रखो । एक रिवायत में है कि (आप ने कहा .) सफर में रोजा रखना नेकी नहीं है" ।

—बुखारी, मुस्लिम आदि

२३ इस में मान्यता है कि 'नमाज़' और 'रोज़े' उन समय पूर्ण होते हैं जब मनुष्य हर तरह की वृद्धियों से अपने को बचाये, यहाँ तक कि न तो किसी की निन्दा करे और न किसी दूसरे गुनाह में लिप्त हो ।

२४ मतलब यह है कि सफर में 'रोज़ा' रखना मुश्किल है, तो सफर में 'रोज़ा' क्यों रखते हैं । 'रोज़े' का धर्म अपनी जान को विनष्ट करना कदापि नहीं है । 'रोज़े' को सन्नाह ने केवल इसलिए धनित किया है कि बन्दे उस के द्वारा शुद्धता, तर्तब्य परामर्श और ईश-भय प्राप्त करें । हजरत जाविर रजि० का बयान है कि मक्का की रिजय के वर्ष जब नबी सल्ल० मक्का की ओर निम्ने नं० आपके साथ दूसरे लोगों ने 'रोज़ा' रखा । जब आप कुराउल अमीन के ग्यान पर पहुँचे तो आपको सूचना मिली कि लोगों को 'रोज़ा' रखना कठिन हो रहा है । और वे आपके घर को देग रहे हैं । आपने 'भल' के बाद पानी या एक प्याना भेगा कर दिया । लोग आपकी ओर देख रहे थे । कुछ लोगों ने 'रोज़ा' तोड़ दिया और कुछ उमी तरह रोजा रखते रहे । फिर आपको सूचना मिली कि कुछ लोग (सल्ल तकनीफ के बायजूद) 'रोज़े' से हैं । आपने कहा 'यही लोग अवज्ञाकारी हैं, ।' —मुस्लिम, तिरमिजी नसई एक 'हदीस' में जिसके 'गवी' (उल्लेखकर्ता) हजरत अब्दुर्रहमान बिन औफ रजि० है नबी सल्ल० ने यहाँ तक कहा है . "सफर में 'रोज़ा' रखना ऐसा ही है जैसा कि घर पर 'रमज़ान' का 'रोज़ा' न रखना"—इब्न माजा । मतलब यह है कि आदमी में यदि इसकी शक्ति नहीं है कि वह सफर में 'रोज़े' रख सके, फिर भी वह 'रोज़ा' रखता है तो वास्तव में वह 'रोज़ा' नहीं रखता बल्कि 'शरीअत' (धर्म शास्त्र) को अपने लिए मुसीबत ठहराता और अल्लाह की अवज्ञा करता है । वह धर्म के स्वाभाविक मार्ग से हटा हुआ है । इसी कठिनाई और मुश्किल के कारण नबी सल्ल० कहते हैं "रोज़े में 'विसाल' से बचो ।" विसाल से अभिप्रेत यह है कि इस प्रकार दिन-रात निरन्तर 'रोज़ा' रखा जाये कि बीच में न 'सहरी' (अरुणोदय से पहले का जलपान) खाई जाये और न (सन्ध्या को 'रोज़े' के उपरान्त) 'रोज़ा' खोला जाये । नबी

'नफल' रोज़े

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ عَمْرٍو بْنِ الْعَاصِ قَالَ قَالَ لِي رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ
 بِاعْمَدِ اللَّهَ، أَلَمْ أَحْمِ أُمَّكَ صَوْمُ الْهَيَّامِ وَنَقُومُ اللَّيْلِ، قُلْتُ بَلَى يَا رَسُولَ اللَّهِ
 قَالَ فَلَا نَفْعَ لَكَ، صُمْ وَأَفْطِرْ وَفَمْرُومُ فَإِنَّ لِي جَسَدِيكَ عَلَيْكَ حَقًّا وَإِنَّ لِي عَيْنِيكَ
 عَلَيْكَ حَقًّا وَإِنَّ لِي رُوحِيكَ عَلَيْكَ حَقًّا وَإِنَّ لِي رُوحِيكَ عَلَيْكَ حَقًّا لَا صَامَ مِنْ صَامِ
 الدَّهْرِ، صَوْمُ بَلَدٍ أَتَامَ مِنْ كُلِّ سَهْرٍ صَوْمُ الدَّهْرِ كُلِّهِ صَوْمُ كُلِّ سَهْرٍ
 ثَلَاثَةُ أَيَّامٍ وَأَفْطَرَا الْفَرَّانِ وَكُلِّ سَهْرٍ قُلْتُ إِنْ أَطِيقُ أَكْرَمَ مِنْ ذَلِكَ،
 قَالَ صُمْ أَفْضَلَ الصَّوْمِ دَاوُدَ صَبَامُ تَوْمٍ وَأَفْطَرُ تَوْمٍ وَأَفْطَرَا فِي كُلِّ
 سَبْعٍ لَيْلٍ مَرَّةً وَلَا تَزِدْ عَلَى ذَلِكَ _____ بحارِ مسلم

१ हजरत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुझ से कहा हे अब्दुल्लाह ! क्या मुझे यह सूचना नहीं मिली है कि तुम दिन में 'रोजा' रखते और रात को ('इबादत') में खड़े रहते हो ? मैं ने कहा हाँ, हे अल्लाह के रसूल ! मैं ऐसा ही करता हूँ । आप ने कहा ऐसा न करो, रोजा भी रखो और खाओ, पियो भी, रात में खड़े भी रहो और सोओ भी क्योंकि तुम्हारे शरीर का भी तुम पर हक है, तुम्हारी आँख का भी तुम पर हक है, तुम्हारी पत्नी का भी तुम पर हक है, और तुम्हारे मिलने-जुलने वालों (अतिथि आदि) का भी तुम पर हक है। जिस व्यक्ति ने सदैव 'रोजा'

सल्ल० को अल्लाह ने विशेष शक्ति प्रदान की थी इसलिए आप 'रोजे' में 'विसाल' भी कर लेते थे किन्तु दूसरों को आपने इसकी अनुज्ञा नहीं दी (बुखारी, मुस्लिम, अहमद) ।

१ अर्थात् 'रोजे' और 'इबादत' का अर्थ यह नहीं होता कि मनुष्य जीवन की दूसरी आवश्यकताओं और माँगों को भूल जाये । उसे हर मामले में सन्तुलित नीति अपनानी चाहिए । वह 'नफल' भी रखे किन्तु सदैव 'रोजा' रखना सही नहीं है । वह 'रोजा' भी करे और आराम के लिए भी वक्त निकाले ।

रक्खा उसने 'रोज़ा' ही नहीं रखखा"। हर महीने के तीन दिन के 'रोज़े' हमेशा के रोज़ों की हैसियत रखते हैं"। हर महीने में तीन दिन के 'रोज़े' रक्खो और हर महीने में एक कुरआन पढ़ो। मैं ने कहा मैं इस से अधिक की शक्ति रखता हूँ। आप ने कहा (हजरत) दाऊद की तरह 'रोज़े' रख लिया करो, यह रोज़े की उत्तम रीति है। एक दिन 'रोज़ा' रक्खो और एक दिन खाओ-पिओ सप्ताह में एक कुरआन पढ़ लिया करो।

—बुखारी, मुस्लिम

-
२. हमेशा 'रोज़ा' रखना अकारण अपने को कष्ट देना है। 'इस्लाम' में जिस तरीके को पसन्द किया गया है वह सन्तुलित तरीका है। निरन्तर 'रोज़े' रखने से रोज़े का महत्व घट जाता है। 'रोज़े' से जो फायदे अपेक्षित है वे पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं होते। जो व्यक्ति सदा 'रोज़े' से रहे उसके समस्त दिन समान रहते हैं। रोज़े के दिन की विशेषता गैर रोज़े के दिनों के द्वारा ही मालूम होती है। जिस व्यक्ति के यहाँ गैर रोज़े के दिन ही न आयें उसके 'रोज़ो' की कोई विशेषता कैसे प्राप्त हो सकती है।

कुछ लोगों को नबी सल्ल० ने लगातार 'रोज़े' रखने की इजाज़त दे दी थी। लगातार रोज़े रखने से अभिप्रेत अधिकता के साथ 'रोज़ा' रखना है, न कि सदैव 'रोज़ा' रखना।

३. मनुष्य यदि 'ईमान' और चेतना के साथ हर महीने में तीन दिन 'रोज़े' रख ले तो मानो वह सदैव रोज़े से रहता है। महीने के तीन रोज़े उसके पूरे महीने को पवित्र और प्रकाशमान रखने के लिए काफी हैं। महीने के इन तीन 'रोज़ो' के अतिरिक्त जो अरबी महीनों की १३, १४, १५ तारीख को रक्खे जाते हैं और भी दूसरे 'नफल' रोज़ों का जिक्र 'हदीसों' में मिलता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्ति और परिस्थिति के अनुसार उनमें से अपने लिए चुन सकता है।
-

रोज़े के स्वाभाविक नियम

عَنْ سَهْلِ بْنِ سَعْدٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ لَا يَزَالُ النَّاسُ
مُخَيْرًا مَا عَجَّلُوا الْفِطْرَ ————— بخاری مسلم

१. हज़रत सल्लू बिन सअद रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोग जब तक (सन्ध्या को) 'रोज़ा' खोलने में जल्दी करते रहेगे उत्तम अवस्था में रहेगे' ।

१. मुसनद अहमद की एक 'रिवायत' में है कि लोग उस समय तक उत्तम अवस्था में रहेगे जब तक (सन्ध्या समय) 'रोज़ा' खोलने ('इफ्तार' करने में) जल्दी करेंगे और 'सहरी' (अरुणोदय से पूर्व का जलपान जो दिन में 'रोज़ा' रखने के लिए किया जाता है) खाने में विलम्ब करेंगे ।

तिरमिज़ी की एक 'रिवायत' में है प्रतापवान तेजोमय अल्लाह कहता है . "मेरा सब से प्रिय वन्दा वह है जो ('रोज़े' के उपरान्त सन्ध्या समय) रोज़ा खोलने ('इफ्तार' करने) में जल्दी करता है ।" अबूदाऊद की 'रिवायत' में है "दीन को उस समय तक प्रभावकारी शक्ति प्राप्त रहेगी जब तक लोग (सन्ध्या समय) 'रोज़ा' खोलने में जल्दी करेंगे ।" रोज़ा खोलने (इफ्तार करने) में जल्दी करना और 'सहरी' (अरुणोदय से पूर्व समय का जलपान) में विलम्ब करना इस बात की निशानी है कि लोगो की दृष्टि धर्म के आशय और उसके मूल उद्देश्य से हटी हुई नहीं है बल्कि वे वास्तविकता से भली-भाँति परिचित हैं उनके यहाँ जिस चीज़ का वास्तव में महत्व है वह धार्मिक आदेशों का अभिप्राय और उनके उद्देश्य है । मनुष्य की दृष्टि जब धर्म के वास्तविक अभिप्राय और आशय से हट जाती है, तो अवश्य ही इसका परिणाम यह होता है कि वह धार्मिक आदेशों के बाह्य रूप को ही अधिक महत्व देने लगता है और उसके प्रति अनुचित सावधानी और अतिशयोक्ति दिखाने लगता है । उसकी यह सावधानी एक बड़ी बीमारी का पता देती है वह यह कि उस की दृष्टि में जिस चीज़ का महत्व होना चाहिए था वह उस से गाफिल हो गया है । जिस काम को जिस प्रकार करने का आदेश दिया गया है उसे उसी प्रकार करना अपना धर्म होता है । मनुष्य को अपनी रुचि और ख्याल का पाबन्द होने के बजाय खुद को अल्लाह के आदेश का पाबन्द बनाना चाहिए । यही वास्तविक धर्म परायणता और ईश-भक्ति है ।

२ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब स्त्री का पति मौजूद हो, तो वह बिना उस की अनुमति के 'रोजा' न रखे^२।
—बुखारी, मुस्लिम

३. बनी अब्दुल्लाह बिन कअ्व बिन मालिक कबीला के एक व्यक्ति जिन का नाम अनस बिन मालिक है, बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा सर्वोच्च अल्लाह ने मुसाफिरों के लिए आधी 'नमाज' कर दी है और उसे 'रोजा' न रखने की अनुज्ञा दी है। जिस तरह उस औरत को अनुज्ञा दी है जी बच्चे को दूध पिलाती हो या गर्भवती हो जब कि उसे अपने गर्भ या बच्चे को किसी प्रकार की तकलीफ पहुँच का भय है^३।
—असहाब सुनम

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जब किसी रोजेदार ने भूल कर खा-पी लिया तो वह अपना 'रोजा' (तोड़ने के बजाय) पूरा करे क्योंकि उसे अल्लाह ने

२ पति के मौजूद होने पर यदि 'नफ ल' 'रोजा' (रमजान के अतिरिक्त दूसरे रोजे) रखना हो, तो उसकी अनुमति ले लेनी चाहिए अन्यथा हो सकता है कि पति को समागम की इच्छा हो और पत्नी के 'रोजे' से होने के कारण उसकी इच्छा पूरी न हो और इस प्रकार परस्पर अप्रियता की कोई भावना उभर आये। इसके अतिरिक्त इसमें और दूसरे उद्देश्य भी हैं। इस से अन्दाजा किया जा सकता है कि धार्मिक आदेशों में मानवीय रुचि और आवश्यकताओं का कितना अधिक ख्याल रक्खा गया है।

३. सफर में मुसाफिर के लिए यह आसानी पैदा की गई है कि वह पूरी 'नमाज' पढ़ने के बजाय 'कस्र' करे अर्थात् संक्षिप्त 'नमाज' पढ़े। चार 'रकअत' की 'नमाज' है तो दो ही 'रकअत' अदा करे। इसी तरह यदि 'रमजान' का महीना है, तो सफर की हालत में उसे यह इजाजत हासिल है कि वह 'रोजों' न रखे। जितने 'रोजे' छूट गये हो सफर के बाद उन्हें पूरा कर ले। स्त्री को यदि गर्भ है और 'रोजा' रखने से किसी हानि का भय है, तो वह भी 'रोजा' न रखे बाद में छूटे हुये 'रोजों' को पूरा कर ले। इसी तरह यदि बच्चा दूध पी रहा है और माँ के 'रोजा' रखने से इस बात की आशंका है कि बच्चे को तकलीफ होगी, तो वह उस समय 'रोजा' न रखे। यह 'हदीस' भी इसका स्पष्ट प्रमाण है कि 'इस्लाम' में मानवीय आवश्यकताओं और हितों का कितना ख्याल रक्खा गया है।

खिलाया-पिलाया (उस ने जान-बूझ कर 'रोज़ा' नहीं तोड़ा)* ।

—बुखारी, मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिज़ी

५. हज़रत अबू हुदैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल' सल्ल० ने कहा : 'रोज़ा' उसी दिन है जिस दिन तुम 'रोज़ा' रक्खो और 'रोज़ा' खोल देने का दिन वही है जिस दिन तुम 'रोज़ा' खोलो कुरबानी उसी दिन है जिस दिन तुम कुरबानी करो* । —अबूदाऊद, तिरमिज़ी

४. मतलब यह है कि अल्लाह तो आदमी की नीयत और धर्मपरायणता को देखता है चूँकि उस व्यक्ति ने जान-बूझ कर नहीं बल्कि भूलकर खाया-पिया है इस लिए उसके इस खाने-पीने से उसकी धर्म परायणता और ईश्वरीय आदेश के आदर में कोई अन्तर नहीं आया । वास्तविकता की दृष्टि से खाने-पीने के बावजूद वह रोज़ेदार है ।

५. 'रोज़े' का आरम्भ और अन्त और 'कुरबानी' के दिन का निश्चय सामूहिक निर्णय के अन्तर्गत होगा । जब अरबी महीने की दृष्टि से 'रोज़े' और 'कुरबानी' का समय आ जाये, तो मनुष्य 'रोज़ा' रक्खे और 'कुरबानी' करे, किन्तु उसका ध्यान विशेष रूप से इस ओर रहना चाहिए कि उसके कर्मों और 'इबादतों' में अधिक-से-अधिक धार्मिकता और शुद्धता पाई जाये । इसलिए कि अल्लाह के यहाँ वास्तविक महत्व इसका नहीं है कि किसी ने 'रोज़ा' कब रक्खा, और उसे समाप्त कब किया और 'कुरबानी' किम दिन की, बल्कि उसके यहाँ महत्व 'रोज़े', 'कुरबानी' आदि 'इबादत' और सत्कर्मों की है । और इन कर्मों में भी उसकी दृष्टि विशेष रूप से उस आशय और भाव पर होती है जो कर्मों के पीछे काम कर रहा होता है । वह 'कुरबानी' ही क्या है जिसके पीछे आत्मसमर्पण की भावना न छिपी हो और वह 'रोज़ा' ही क्या हुआ जो ससार में मनुष्य को उन चीजों के विषय में उदासीन न बना सके जो वास्तविक दृष्टि से अभीष्ट नहीं ।

एतकाफ

عَنْ عَائِشَةَ ۖ قَالَتْ إِنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ كَانَ يَعْتَكِفُ
الْعَشْرَ الْأَوَّلَ وَآخِرَ مَنْ رَمَصَانَ حَتَّى تُوَفَّاهُ اللَّهُ ثُمَّ اعْتَكَفَ أَرْبَاعَةَ
مِنْ بَعْدِهِ — بخاری مسلم

१ हजरत आइशा रज़ि० कहती हैं कि नबी सल्ल० 'रमजान' के अन्तिम दस दिनों में 'एतकाफ' करते थे यहाँ तक कि अल्लाह ने आप को उठा लिया फिर इसके बाद आप पत्नियाँ 'एतकाफ करती थी'।

—बुखारी-मुस्लिम

२ हजरत आइशा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० का हाल यह था कि जब 'रमजान' के अन्तिम दस दिन का समय आ जाता, तो ज्यादा-से-ज्यादा रात्रि-जागरण करते और अपनी पत्नियों को जगाते (ताकि वे भी ज्यादा-से-ज्यादा अल्लाह की 'इबादत' करें) और आप तहमत कस लेते^१।

—मुस्लिम, बुखारी

१. 'रमजान' में नबी सल्ल० की 'इबादत' की रुचि बढ़ जाती थी। 'रमजान' के अन्तिम दिनों में तो विशेष रूप से आप अल्लाह की 'इबादत' में लग जाते थे। रमजान के अन्तिम दस दिन तो बिल्कुल अल्लाह के लिए खाली कर लेते थे और मस्जिद में 'एतकाफ' करते थे। 'एतकाफ' का आशय यह है कि मनुष्य हर ओर से एकाग्रचित होकर अल्लाह से लौ लगाए और उसकी चौखट पर (अर्थात् मस्जिद में) पड़ जाये। और उसकी याद और 'इबादत' में लग जाये 'एतकाफ' करके बन्दा यह प्रदर्शित करता है कि उसका वास्तविक सम्बन्ध अपने 'रब' के सिवा किसी और से नहीं है। उसका अन्तर और बाह्य अस्तित्व दोनों अल्लाह के लिए हैं। वह प्रत्येक दशा में अल्लाह की प्रसन्नता का इच्छुक होता है। 'एतकाफ' का आशय वास्तव में यही है कि बन्दा अपने को अल्लाह के लिए हर चीज़ से निवृत्त कर देने का सामर्थ्य प्राप्त कर सके।

'रोज़े' और 'एतकाफ' में उद्देश्य और कर्म दोनों ही दृष्टि से बड़ी अनुरूपता और एकता पाई जाती है। इसी कारण 'रोज़े' को 'एतकाफ' का आवश्यक अंग ठहराया गया है। और 'रमजान' को 'एतकाफ' का उत्तम समय समझा गया है। 'रोज़े' की विशेषता को और अधिक बढ़ाने के लिए पौराणिक धर्म शास्त्र में मौन रहने को भी 'रोज़े' का अंग बनाया गया था और इस प्रकार से 'रोज़ा' रखने का आदेश दिया गया था जिस में मनुष्य अल्लाह के अतिरिक्त किसी से बात-चीत नहीं कर सकता था।

२ अर्थात् 'इबादत' में लग जाते।

हज्ज

‘हज्ज’ का मूल अर्थ है ‘ज़ियारत’ (दर्शन) का निश्चय करना। ‘हज्ज’ में हर तरफ से लोग ‘काबा’ की ‘ज़ियारत’ का इरादा करते हैं, इसी लिए इस का नाम हज्ज रक्खा गया। ‘हज्ज’ को धर्म में मौलिक महत्व प्राप्त है। कुरआन में है “लोगों पर अल्लाह का यह हुक है कि जो व्यक्ति इस घर (‘काबा’) तक पहुँच सकता हो वह उस का ‘हज्ज’ करे, और जिस किसी ने ‘कुफ़’ की नीति अपनाई तो (वह जान ले कि) अल्लाह सारे संसार से बेपरवाह है”। —आले इमरान ९७

‘हज्ज’ के लिए जाना वास्तव में अल्लाह की पुकार पर दौड़ना है। अल्लाह के आमंत्रण पर उस की सेवा में हाजिरी देना है। इसलिए सामर्थ्य रखने पर भी जो व्यक्ति ‘हज्ज’ नहीं करता वह वास्तव में अल्लाह मुँह फेरे हुये है। अल्लाह से मुख मोड़ कर मनुष्य स्वयं अपने साथ अन्याय करता है, इस से अल्लाह का कुछ नहीं ‘बिगड़ता’।

अल्लाह ने ‘काबा’ को सर्वथा भलाई, बरकत और सारे संसार के मार्ग-दर्शन का उद्गम बनाया है। यह ‘तौहीद’ (एकेश्वरवाद) का केन्द्र है। हजरत इबराहीम अ० और उन के बेटे हजरत इस्माईल अ० ने इस घर का निर्माण अल्लाह के आदेश से किया था। इस निर्माण का स्थान भी अल्लाह ही ने निश्चित किया था। इस घर को अपना घर कह कर अल्लाह ने इस की महानता और महत्व बढ़ा दिया है। और संसार में इसे केन्द्रीयता प्रदान की है।

हजरत इबराहीम अ० वह पहले नबी है जिन्हें अल्लाह ने सारे संसार का इमाम बनाया। हजरत इबराहीम अ० को आदेश दिया कि वे लोगो में सामान्य रूप से हज्ज की घोषणा कर दे ताकि जो लोग एक अल्लाह की बन्दगी और दासता स्वीकार करे वे सब-के-सब इस केन्द्र से सम्बन्ध स्थापित कर ले। साल में एक बार ‘हज्ज’ के लिए यहाँ एकत्र हों और इस घर का ‘तवाफ’ (परिक्रमा) करे। सब मिल कर अल्लाह की ‘इबादत’ करे। कुरबानी

करे, खुद भी खाये और मुहताजों को भी खिलाएँ। काबा एक ओर वास्तविक उपासनागृह और वास्तविक मस्जिद है, दूसरी मस्जिद इस की प्रतिनिधि-मात्र हैं, दूसरी ओर इस घर के निर्माण के मौलिक उद्देश्यों में कमजोरों, मुहताजों और निर्धनों की खबर लेना भी सम्मिलित है। इस प्रकार 'काबा' सम्पूर्ण 'दीन' (सम्पूर्ण धर्म) का केन्द्र सिद्ध होता है। इस के साथ किसी का सम्बन्ध वास्तव में अल्लाह के 'दीन' (धर्म) के साथ सम्बद्ध होने का अर्थ रखता है। इस घर का 'हज्ज' कर के मनुष्य विशुद्ध 'तौहीद' का सन्देशवाहक बन कर लौटता है। उस में यह भावना जाग्रत होती है कि वह 'तौहीद' के सन्देश को सारे ससार में फैलाए।

'हज्ज' एक पहलू से सब से बड़ी 'इबादत' है। अल्लाह के प्रेम में मनुष्य अपना कारबार और अपने परिवार-मित्रों आदि को छोड़कर लम्बी यात्रा पर निकलता है। फिर उस की यह यात्रा साधारण यात्रा की तरह नहीं होती। इस यात्रा में वह अल्लाह की ओर ध्यान देता है। जैसे-जैसे अल्लाह का घर निकट आता जाता है उत्सुकता एवं प्रेम की अग्नि और अधिक भडकती जाती है। वह अपने गुनाहों पर लज्जित होता है सच्चे दिल से 'तौबा' करता और अल्लाह से प्रार्थनाएँ करता है कि उसे अच्छे कर्म करने का सौभाग्य प्राप्त हो। हिजाज के भूभाग में प्रवेश करता है तो 'इस्लाम' की सच्चाई और महानता का एहसास अत्यन्त बढ़ जाता है। इस्लामी इतिहास निगाहों के सामने फिर जाता है। हृदय पर अल्लाह, उस के धर्म की महानता और प्रेम ऐसा अंकित हो जाता है कि मरते दम तक मिट नहीं सकता।

'हज्ज' से सम्बन्धित जितने कार्य हैं उन सब से मनुष्य के हृदय पर 'तौहीद' (एकेस्वरवाद) की ही छाप पड़ती है। 'हज्ज' के सिलसिले में सब से पहला काम 'इहराम' बाधना है। 'इहराम' एक अत्यन्त फकीराना वस्त्र है, जिसमें मनुष्य बस एक तहमद बाँध लेता है, कन्धों पर एक चादर डाल लेता है, सिर को नगा रखता है। कोई राष्ट्रपति हो या साधारण नागरिक सब-के-सब एक स्तर पर दीख पड़ते हैं। सारे अन्तर मिट जाते हैं। 'इहराम' की दशा में मनुष्य भोग-विनास और सज्जा और श्रृंगारिक वस्तुओं से परहेज करता है इस 'इहराम' की 'हज्ज' में वही हैसियत है जो नमाज में 'तकवीर तहरीमा' की है। 'तकवीर तहरीमा' के द्वारा नमाजी एक नवीन वातावरण में पहुँच जाता है और कुछ समय के लिए वह अपने ऊपर कुछ प्रतिबन्ध लगा लेता

है। जिस प्रकार 'सलाम' के द्वारा मनुष्य नमाज से निवृत्त हो जाता है इसी प्रकार वह सिर का मुण्डन कराके 'इहराम' सम्बन्धी प्रतिबन्धनों से निवृत्त हो जाता है। 'इहराम' बाँधने के पश्चात् उस के मुख से ये शब्द निकलते हैं

“हाजिर हूँ, हे अल्लाह ! मैं तेरी सेवा में हाजिर हूँ, हाजिर हूँ, तेरा कोई सहभागी नहीं। मैं तेरी सेवा में हाजिर हूँ। निश्चय ही प्रशंसा तेरे ही लिए है। सारी कृपाएँ एवं उपकार तेरे ही हैं, राज्य तेरा ही है, तेरा कोई सहभागी नहीं है”।

ये शब्द बताते हैं कि गुलाम अपने स्वामी की पुकार पर दौड़ता और स्वामी के गुणगान करता हुआ चला आ रहा है। प्रत्येक 'नमाज' के पश्चात्, हर ऊँचाई पर चढ़ते और हर नीचाई की ओर उतरते हुये और प्रत्येक प्रातः काल जागने के पश्चात् उच्च स्वरों में इन ही शब्दों को दुहराता है। मक्का में प्रवेश कर के 'काबा' पहुँचता है। हज्र अस्वद को चूमता और 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) करता है। 'काबा' का सात चक्कर लगाता है। फिर मकाम इब्राहीम पर या 'मस्जिदे हराम' में किसी स्थान पर दो 'रकअत' 'नमाज' अदा करता है। फिर सफा की पहाड़ी पर जो काबा के निकट ही है चढ़ता है। 'काबा' पर दृष्टिपात करता है। पुकार उठता है : अल्लाहु अकबर ! “अल्लाह सब से बड़ा है” ला इलाह इल्लल्लाह ! “अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' नहीं”। इस के बाद नबी सल्ल० पर 'दरूद' और सलाम भेजता है, और हाथ फैला कर जो कुछ माँगना होता है अल्लाह से माँगता है। फिर नीचे आता है और सामने की दूसरी पहाड़ी 'मरवा' की ओर तेज कदमों से चलता है जिसे 'सई' कहते हैं इस पर भी पहुँच कर वह 'तकबीर' 'तहलील', दरूद और दुआ में लग जाता है। इसी प्रकार वह सात बार 'सई' करता है। जिलहिज्जा की सुबह को 'हरम' की सीमा से बाहर जा कर अरफात के मैदान में लोग 'पडाव डालते हैं' फिर उसी सन्ध्या को समस्त लोग मुजदलफा जा कर

- १ अरफात का सम्मेलन हज्र के मैदान में अल्लाह की सेवा में हाजिरी की याद दिलाता है। कुरआन में भी है ('हज्ज' सम्बन्धी कार्यक्रम का उल्लेख करते हुए कहा) और गिनती के कुछ दिनों में (मिना में) अल्लाह को याद करो। फिर जो कोई दो ही दिन में जल्दी कर ले (और लौट आए) तो उस पर कोई गुनाह नहीं और यदि कोई ठहर जाए, तो उस पर भी कोई गुनाह नहीं। ये बातें उसके लिए हैं जो डरता है और अल्लाह का डर रखे और जान रखे कि तुम सब उसके पास एकत्र किये जाओगे।” —अल-बकरा २०३

ठहरते हैं। फिर १० जिलहज्जा को मिना लौट आते हैं। वहाँ दो या तीन दिन ठहरते हैं। इन दिनों में प्रत्येक दिन तीन जमरों पर सात-सात बार 'तकबीर' के साथ ककड़ियाँ मारते हैं। तीसरे दिन उन खम्भों पर ककड़ियाँ मार कर मक्का लौट आते हैं। और सात बार 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) करते हैं। यह 'तवाफ विदा' कहलाता है। इस 'तवाफ' के बाद 'हज्ज' से मनुष्य निवृत्त हो जाता है। 'हज्ज' के समय में कभी इमाम के खुतबे (भाषण) सुनते हैं, कभी लब्बैक अल्लाहुम्मा लब्बैक "हाजिर हूँ, हे अल्लाह ! मैं तेरी सेवा में हाजिर हूँ" कहते हुये एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रस्थान करते हैं। कभी नमाजे जमा कर के पढ़ते हैं अर्थात् शीघ्रता की नमाज अदा करते हैं। 'हज्ज' का यह कार्यक्रम एक सैन्य जीवन का नक्शा पेश करता है। पाँच, छ दिन तक लोगों को कैम्प का जीवन व्यतीत करना पड़ता है। हज्ज में यों समस्त 'इब्रादतो' की विशेषताएँ पाई जाती हैं, परन्तु हज्ज और 'जिहाद' में बड़ी समानता पाई जाती है, हजरत उमर रजि० ने अपने एक 'खुतबे' में कहा है. "जब 'जिहाद' से निवृत्त हो तो 'हज्ज' के लिए कजावे कसो क्योंकि 'हज्ज' भी एक 'जिहाद' है"।

—बुखारी।

'हज्ज' की एक-एक चीज हृदय पर 'तौहीद' और अल्लाह के प्रेम को अकित करती और मनुष्य को और प्राणोत्सर्ग बलिदान की भावना से परिपूर्ण करती है। 'काबा' मुस्लिम व्यक्ति को याद दिलाता है कि उस का सम्बन्ध उस गरोह से है जिस के प्रकट होने की दुआ हजरत इबराहीम ने की थी। और जिसके प्रकट होने का उद्देश्य यह है कि वह अल्लाह और उस के धर्म के लिए अर्पण हो हज्ज असवद पर हाथ रख कर उसे चुम्बन देना एक ओर इस बात का प्रदर्शन है कि आदमी अल्लाह के हाथ में हाथ दे कर अल्लाह से बन्दगी की प्रतिज्ञा को पुनरावृत्ति कर रहा है दूसरी ओर यह चुम्बन वास्तव में प्रियतम के द्वार-शिला का चुम्बन है। 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) अपने को अर्पण और निछावर करने की उस स्वाभाविक भावना का प्रदर्शन है जो मुस्लिम व्यक्ति के हृदय में अपने प्रिय स्वामी के लिए पाई जाती है। अल्लाह तो इस से उच्च है कि कोई उस के गिर्द घूम सके, अल्लाह ने हमें यह आदेश दिया है कि हम अपनी स्वाभाविक इच्छा इस घर का 'तवाफ' कर के पूर्ण करें। इसी प्रकार अल्लाह तो इस से उच्च है कि कोई उस के दामन से लिपट कर

प्रार्थनाएँ कर सके। हमारी दुर्बलताओं पर तरस खा कर उसने हमारे परितोष के लिए यह प्रबन्ध किया है कि हम उस के दामन से लिपट कर अपनी कामनाओं को प्रस्तुत करने की कामना उसके घर की चौखट से लिपट कर पूरी कर ले अतएव 'तवाफ' और मकाम इबराहीम पर दो रकअत नमाज से निवृत्त होने के पश्चात् 'मुलतज्जम' से चिपट कर दुआएँ मागते हैं।

सफा और मरवा के बीच 'सई' करना इस बात का प्रदर्शन है कि इसी प्रकार अपने स्वामी की सेवा और उस की प्रसन्नता के लिए कार्यशील रहेंगे। हजरत इबराहीम अ० और हजरत इस्माईल अ० का मार्ग ही हमारा मार्ग है। खम्भों पर कंकड़ियाँ मारना वास्तव में अबरहा की सेना की तबाही की यादगार है जो खास 'हज्ज' के अवसर पर 'काबा' को ढाने के लिए आया था जिसे ककडों और पत्थरो की वर्षा से अल्लाह ने विनष्ट कर के रख दिया।

कुरबानी वास्तव में कुरआन के शब्दों में "जब्ह अजीम" है, जो हजरत इस्माईल का फिदया निश्चित हुआ था। अल्लाह के मार्ग में जानवर कुरबान करना अपने-आप को कुरबान करने के प्रतिनिधित्व का अर्थ रखता है। यह वास्तव में इस बात का इकरार करना है कि हमारे प्राण अल्लाह की 'नज्र' (भेंट) है। जब वह माँगेगा हम दे देंगे। जब भी अल्लाह के मार्ग में खून बहाने की आवश्यकता होगी, अपना खून बहायेंगे। अन्यथा केवल जानवर को कुरबान कर देने की कोई वास्तविकता नहीं है जब तक कि उसके पीछे कोई बड़ा उद्देश्य और पवित्र भावना काम न कर रही हो। कुरआन में भी कहा गया है

न उन (कुरबानी के जानवरों) के मांस अल्लाह को पहुँचते हैं और उस के रक्त, परन्तु तुम्हारा 'तकवा' (ईश-भय और धर्मनिष्ठा) उस तक पहुँचाता है"।

—अल-हज्ज · ३७

कुरबानी का हुक्म केवल मक्का में 'हज्ज' के अवसर पर अदा करने के लिए नहीं है बल्कि कुरबानी करने का सामर्थ्य रखने वाले मुसलमान जहाँ भी हो, इस अवसर पर उन्हें कुरबानी करनी चाहिए। नबी सल्ल० जब तक मदीना में रहे हर वर्ष कुरबानी करते रहे।

‘हज्ज’ की वास्तविकता

عَنْ الْمُهَرَّبَةِ قَالَ خَطَبَنَا رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فَقَالَ يَا أَيُّهَا
النَّاسُ قَدْ فُرِضَ عَلَيْكُمُ الْحَجُّ فَحُجُّوا _____ مسلم، نسائي

१ हजरत अबू हुरेरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हम लोगो को सम्बोधित करते हुये कहा हे लोगो ! तुम पर ‘हज्ज’ अनिवार्य किया गया है, तो तुम ‘हज्ज’ करो।

—मुस्लिम, नसई

२ हजरत अबू हुरेरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा गया कि कौन सा कर्म उत्तम है ? आप ने कहा . अल्लाह

१ ‘हज्ज’ इस्लाम के पाँच अरकान (आधार स्तम्भ) में से एक है । जो लोग ‘हज्ज’ करने का सामर्थ्य रखते हैं उनके लिए ‘हज्ज’ करना अनिवार्य है । एक कथन के अनुसार ‘हज्ज’ के अनिवार्य होने का आदेश सन् ६ हि० में आया है । १० हि० में नबी सल्ल० ने ‘सहाबा’ रज़ि० की एक बड़ी जमात के साथ अपनी मृत्यु के केवल तीन मास पूर्व ‘हज्ज’ किया था । यह ‘हज्ज’ हज्जतुल-विदाअ के नाम से प्रसिद्ध है । इस ‘हज्ज’ के अवसर पर अरफात के मैदान में आप पर कुरआन की यह ‘आयत’ अवतीर्ण हुई “आज मैंने तुम्हारे लिए ‘दीन’ (धर्म) को पूर्ण कर दिया और तुम पर अपनी नेमत पूरी कर दी, और मैंने पसन्द किया कि तुम्हारा दीन इस्लाम हो” ।- अल-माइदा ३ .

‘हज्ज’ इस्लाम का अन्तिम स्तम्भ है । किसी व्यक्ति को यदि सही ‘हज्ज’ नसीब हो जाए, तो मानो उसे सौभाग्य का उच्चतम स्थान प्राप्त हो गया और उसे ऐसी नेमत मिल गई जिससे बड़ी नेमत की कल्पना इस ससार में नहीं की जा सकती ।

हजरत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : लोगो ! अल्लाह ने तुम पर ‘हज्ज’ अनिवार्य कर दिया है । इब्न जास रज़ि० खड़े हुये और कहा हे अल्लाह के रसूल ! क्या प्रत्येक वर्ष ? आपने कहा “यदि मैं हाँ कह देता, तो प्रत्येक वर्ष बाजिब हो जाता और यदि बाजिब (आवश्यक) हो जाता, तो तुम इसे अदा न कर सकते और न अदा करने का सामर्थ्य रखते । ‘हज्ज’ (जीवन में) एक बार अनिवार्य है, जो इससे अधिक करे वह ‘नफ़ल’ है ।”

और उस के 'रसूल' पर 'ईमान' लाना, पूछा गया फिर कौन सा ? कहा: अल्लाह के मार्ग में 'जिहाद' करना । पूछा गया : फिर कौन सा ? आप ने कहा "हज्ज मबरूर"^२।

३. अबू सईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि तेजोमय एव प्रतापवान अल्लाह कहता है : मैंने बन्दे को शारीरिक स्वास्थ्य दिया और उसे जीविका में कुशादगी प्रदान की, पाँच वर्ष व्यतीत हो गये और वह मेरी ओर नहीं आया, तो वह बेनसीब है ।
—इब्न हब्बान, बैहकी

४ हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति नबी सल्ल० की सेवा में आया और कहा कि हे अल्लाह के रसूल ! क्या चीज 'हज्ज' को आवश्यक करती है ? आप ने कहा सफर खर्च और सवारी^३ ।

—निरमिजी, इब्नमाजा

५ हजरत जाबर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'अरफा' के दिन अल्लाह संसार के आकाश पर उतरता है^४ और 'फिरिश्तो' के बीच 'हज्ज' करने वालों पर गर्व करता है । कहता है . मेरे बन्दों को देखो जो परेशान हाल धूल में अटे हुये रास्तों में चीखते-पुकारते हुये मेरे पास आये हैं । मैं तुम्हें गवाह बनाता हूँ कि मैंने उन्हें क्षमा कर दिया । इस पर फिरिश्ते कहते हैं कि रब ! उनमें अमुक व्यक्ति भी है जिसके बारे में कहा जाता है कि वह बुरा है, गुनहगार है, अमुक पुरुष और अमुक स्त्री भी है (जो गुनहगार है) । तेजोमय एव

२. प्रत्येक कर्म को कोई न कोई विशेषता प्राप्त होती है । 'हज्ज' कुछ पहलुओं से न केवल यह कि सबसे बड़ी और व्यापक 'इबादत' है बल्कि जीवन के समस्त प्रयासों का सारांश भी है । 'हज्ज' में बन्दा अपने 'रब' की सेवा में 'हाज़िर' होता है और कदम-कदम पर उस पर अपने को निछावर करता है । एक बन्दे के लिए इसमें बढ़कर सौभाग्य की बात क्या हो सकती है । यह नसीब अल्लाह अकबर लूटने की जाय है !

३ अर्थात् यदि उसके पास इतना धन है कि वह अपने घर वालों के खाने पीने का प्रबन्ध कर सके और सफर खर्च का बोझ उठा सके, तो उस पर 'हज्ज' बाज़िब है । यदि वह 'हज्ज' नहीं करता तो गुनहगार होगा ।

४. अर्थात् दुनिया वालों पर 'अरफा' के दिन वह विशेष कृपा-दृष्टि डालता है । 'अरफा' का दिन ज़िलहिज्जा की नवी तिथि है । जिस दिन समस्त 'हज्ज' करने वाले अरफात के मैदान में एक साथ एकत्र होते हैं ।

प्रतापवान अल्लाह कहता हैं . उन्हे भी मैंने क्षमा कर दिया । अल्लाह के रसूल सल्ल० कहते हैं कि लोग किसी दिन ‘अरफा’ के दिन से अधिक आग से छुटकारा नहीं प्राप्त करते^५ । —शरहुस्सुन्ना

६ अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस को न किसी स्पष्ट आवश्यकता ने रोका हो और न किसी रोकने वाले रोग ने और न किसी अत्याचारी शासक ने और उसने ‘हज्ज’ न किया हो और इसी दशा मे उस की मृत्यु आ जाये तो उसे अधिकार है चाहे ‘यहूदी’ बन कर मरे या ‘ईसाई’ बन कर^६ । —बैहकी

७ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा : ‘हज्ज’ और ‘उमरा’ करने वाले अल्लाह के (पास पहुँचने वाले) मडल हैं (जो उसकी सेवा मे जा रहे हैं) । यदि वे उससे प्रार्थना करे तो वह

५. अल्लाह की सेवा मे बन्दे की यह हाजिरी अपने अन्दर इतना असर रखती है कि इससे दिल की बड़ी-से-बड़ी स्याही भी दूर हो सकती है यह अलग बात है कि कोई इस से फायदा न उठाए और ‘हज्ज’ से लौटकर फिर उन्ही गुनाहो और गन्दगियो मे अपने को डाल दे जिनसे ‘हज्ज’ की बरकत से छुटकारा प्राप्त कर सका था ।

६ सामर्थ्य के बावजूद ‘हज्ज’ से गाफिल रहना इस बात की पहिचान है कि बन्दे का ध्यान अल्लाह की ओर होने के बदले किसी दूसरी ओर है । जो लगाव और सम्बन्ध उसे “तौहीद” (एकेश्वरवाद) और ‘तौहीद’ के केन्द्र से होना चाहिए, नहीं है । इसलिए अल्लाह को भी ऐसे अवज्ञाकारी और कुतघ्न व्यक्ति की कोई चिन्ता नहीं, वह जो चाहे करे और जिस हालत मे चाहे मरे’ कुरआन मे भी कहा गया है और लोगो पर अल्लाह का हक है कि जो उस (काबा’) तक पहुँचने का सामर्थ्य रखता हो वह उस घर का ‘हज्ज’ करे और जिसने ‘कुफ्र’ किया तो अल्लाह सारे ससार वालो से बेपरवा है ।” —आले इमरान ९६ ।

यहूदी और ईसाई ‘हज्ज’ नहीं करते थे इसलिए ‘हदीस’ मे ‘हज्ज’ न करने वालो को यहूदी और ईसाई से उपमा दी गई है । ‘हज्ज’ से बेपरवाई वास्तव मे ‘कुफ्र’ की नीति है । इसीलिए हजरत उमर रजि० कहते हैं जो लोग सामर्थ्य रखने के बावजूद ‘हज्ज’ नहीं करते, मेरा जी चाहता है कि उन पर जिज्या (एक विशेष कर) लगा दूँ” ।

उन की प्रार्थना स्वीकार करे और यदि वे उस से क्षमा की प्रार्थना करे तो वह उन्हें करे।

हज्ज से सम्बन्धित इबादतें

عَنْ عَائِشَةَ ۖ قَالَتْ. قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ إِنَّمَا
جُعِلَ الطَّوَافُ بِالْبَيْتِ وَالسَّعْيُ بَيْنَ الصَّفَا وَالْمَرْوَةِ وَمَرَأَى الْجِمَامِ
لِلْقَامَةِ ذِكْرُ اللَّهِ تَعَالَى _____ ابوداؤد، ترمذی

१ हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा. 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) करना, सफा और मरवा के बीच 'सई' करनी और ककडियाँ मारना, ये सब सर्वोच्च अल्लाह के स्मरण की स्थापना के लिए हैं। —अबूदाऊद, तिरमिजी

७ इस 'हदीस' से हज्ज और 'उमरा' की वास्तविकता पर प्रकाश पड़ता है। 'हज्ज' और 'उमरा' अल्लाह की सेवा में बन्दे की हाजिरी है। ऐसी दशा में अल्लाह की दयालुता के प्रतिकूल है कि वह लोगो की प्रार्थनाओं को रद्द कर दे जो उसके द्वार पर पवित्र कामनाएँ और आशाएँ लिये हुए पहुँचे हो। अतः अल्लाह निश्चय ही उनकी प्रार्थनाओं को स्वीकार करेगा और यदि वह क्षमा के इच्छुक होंगे, तो उन्हें क्षमा कर देगा।

'हज्ज' की तरह 'उमरा' भी एक 'इबादत' है जो 'काबा' की ज़ियारत के साथ अदा की जाती है, 'उमरा' किसी भी समय कर सकते हैं। 'हज्ज' का समय निश्चित है, 'उमरा' अकेले करते हैं। 'हज्ज' को सामूहिक रूप में अदा किया जाता है, 'उमरा' में हज्ज ही के कुछ कार्य किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त 'हज्ज' को अल्लाह ने उन लोगो का कर्तव्य ठहराया जो 'हज्ज' करने का सामर्थ्य रखते हैं लेकिन उमरा अनिवार्य (फर्ज) नहीं हैं।

नसई, बैहकी की 'हदीस' है कि नबी सल्ल० ने कहा. "तीन व्यक्ति अल्लाह के मडल (अथवा मेहमान) हैं। 'जिहाद' करने वाला, हज्ज करने वाला 'उमरा' करने वाला।"

९ मतलब यह है कि 'तवाफ', सई और ककडियाँ मारना आदि 'हज्ज' से सम्बन्धित कार्य स्वयं अभीष्ट नहीं हैं बल्कि ये सब एक महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति का साधन हैं। वह उद्देश्य है अल्लाह के स्मरण की स्थापना, अल्लाह की 'तौहीद' और उसकी महानता का प्रदर्शन। यह बात ठीक उसी प्रकार की है

२. हजरत अब्ब बिन अहवज रज़ि० कहते हैं कि मैंने 'हज्जतुलविदा'^२ मे अल्लाह के रसूल सल्ल० को यह कहते सुना। यह कौन सा दिन है ? लोगो ने कहा कि वही हज्ज का दिन है। आपने कहा . तुम्हारे खून, तुम्हारे माल, तुम्हारी आबरू तुम्हारे बीच उसी प्रकार 'हराम' है जिस प्रकार तुम्हारे उस दिन और तुम्हारे इस नगर में हराम है^३। सावधान ! कोई जालिम जुल्म करता है, तो अपने-आप पर ही करता है^४। सावधान ! कोई बाप अपनी औलाद पर और कोई बेटा अपने बाप पर जुल्म नहीं करता। सावधान ! 'अतान' सदैव के लिए इस बात से निराश हो गया कि तुम्हारे इस नगर में उसकी 'इबादत' की जाए, परन्तु तुम अपने उन कर्मों में उसका आज्ञापालन करोगे जिन्हें तुम साधारण समझोगे तो वह उन ही पर राजी होगा^५।

—इब्न माजा, तिरमिजी

जैसे कुरबानी के बारे में कुरआन में कहा गया है "इन (कुरबानियों) के न माम अल्लाह को नहीं पहुँचते हैं और न इनके रक्त परन्तु तुम्हारा 'तकवा' (धर्म निष्ठा एवं ईश-भय) पहुँचता है।" अतः वास्तविक उद्देश्य सदैव और प्रत्येक कर्म में हमारे गमक रहना चाहिए।

२. अपने अन्तिम 'हज्ज' के अवसर पर जब आप सब से खसत हुए और अपना महत्वपूर्ण ऐतिहासिक 'घुतबा' (भाषण) दिया।
३. अर्थात् जिस प्रकार तुम आज के दिन और इस नगर मक्का में लोगो की जान, माल और उनकी इच्छत और आबरू का आदर करते हो और किसी को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाते, ठीक इसी तरह तुम्हारे लिए आवश्यक है कि तुम अपने बीच भी इन चीजों का आदर करो और किसी को किसी तरह की हानि न पहुँचने दो। आज का दिन तो इसीलिए आया है, और यह पवित्र भू-भाग तो इसीलिए है कि तुम पुण्यात्मा, सत्यवादी और अल्लाह के आज्ञाकारी बन सको और प्रत्येक के हक को पहचानो। और तुम से एक ऐसा आदर्श समाज का निर्माण हो जिसमें किसी को किसी से हानि पहुँचाने की आशका न हो, बल्कि प्रत्येक दूसरे के अधिकारो का पूरा-पूरा आदर करता हो।
४. अर्थात् जब कोई व्यक्ति किसी पर जुल्म करता है, तो वास्तव में वह अपना बुरा करता और अपनी 'आखिरत' खराब करता है चाहे उसे इसका ज्ञान हो या न हो।
५. अर्थात् अब तो ऐसा न होगा कि यहाँ मूर्ति-पूजा हो और 'शिरक' 'कुफ्र' फैले

३ हजरत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति 'हज्ज' का इरादा कर ले, तो फिर जल्द उसे पूरा करे।
—अबूदाऊद, दारमी

४. हजरत इब्न उमर रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को तलबिया कहते हुये सुना जबकि आपके सिर के बाल जमे हुए क्रम से थे। आप कहते थे : "हाज़िर हूँ, हे अल्लाह ! तेरी सेवा में, हाज़िर हूँ। तेरा कोई साझी नहीं, मैं तेरी सेवा में हाज़िर हूँ। निस्सन्देह प्रशंसा तेरे ही लिए है। सारे एहसान तेरे ही हैं। राज्य तेरा ही है, तेरा कोई सहभागी नहीं।" आप इन शब्दों से अधिक न कहते।
—बुखारी-मुस्लिम

हाँ यह खराबी तुम में पैदा हो सकती है कि तुम बहुत से गुनाह के कामों को साधारण और हल्का समझने लगो और उनसे बचने की कोशिश न करो और 'शैतान' इसी से प्रसन्न हो।

नबी सल्ल० के इस कथन से ज्ञात हुआ कि किसी भी गुनाह को छोटा और हल्का समझना सही नहीं है। हजरत आइशा रज़ि० से एक 'हदीस' में उल्लिखित है कि आपने कहा : "हे आइशा ! अपने-आप को उन गुनाहों से बचाओ जिन्हें तुच्छ और साधारण समझा जाता है क्योंकि इन गुनाहों के सिल-सिले में अल्लाह की ओर से एक माँग करने वाला ('फिरिस्ता') भी है।" (इब्न माजा, दारमी, बैहकी : शोबुल ईमान) हजरत अनस रज़ि० कहते हैं "तुम ऐसे कर्म करते हो जो तुम्हारी दृष्टि में बाल से बारीक हैं (अर्थात् साधारण हैं) हम उनकी गणना अल्लाह रसूल सल्ल० के समय में विनाशकारी चीज़ों में करते थे।"
—बुखारी

६ नेक काम में अकारण विलम्ब नहीं होना चाहिए। जीवन-अवकाश मालूम नहीं कब समाप्त हो जाए। और जीवन शेष भी रहा, तो क्या खबर आगे 'हज्ज' की यात्रा करने की परिस्थिति रहती है या नहीं।

७ बिल्कुल इस तरह जैसे स्नान के पश्चात् सिर के बाल क्रम से और जमे हुये होने हैं, बिखरे हुए नहीं होते।

८. यह ने हजरत इबराहीम अ० के द्वारा अपने बन्दों को अपनी सेवा में उपस्थित होने का आमन्त्रण दिया था (सूरा अल-हज्ज २७) यह तलबिया के शब्द वास्तव में अल्लाह के उस बुलावे का उत्तर हैं। मानो बन्दा अल्लाह के बुलावे के उत्तर में यह कहता हुआ उसकी ओर बढ़ता है कि हे अल्लाह मैं जान और दिल से तेरी सेवा में हाज़िर हूँ, मुझे आप जहाँ बुलाएँ मैं तेरी

४ इज्जत आदना रजि० ने उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'कोई दिन ऐसा नहीं है जिगमे अल्लाह 'अरफा' के दिन से अधिक (अपने) बन्दों को ('नहल्लम' की) आग से छुटकारा देता हो, (उस दिन) वह बहुत ही निकट हो जाता है' और उन पर गवं करते हुये 'फिरिशो' ने कहा है 'ये लोग क्या चाहते हैं' ? —मुस्लिम

५ इज्जत रजि० ने उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा, 'काबा' के गिरं 'तवाफ' (परिक्रमा) करना 'नमाज' के मद्दत है, अन्तर केवल इतना है कि तुम 'तवाफ' में बात-चीत करते हो" । ता जो कोई 'तवाफ' की हालत में बात-चीत करे तो वह

मेरा मेरा है ।

६ फिरिशो की नयी जिम्मे को अरफात के मैदान में जब लोगों की सख्या में अल्लाह के बन्दे अपने अल्लाह के आभय पर एकत्र होते हैं और उनके सामने आदना का प्रदर्शन करते और उममी कृपा के दृष्टिक्र होते हैं, तो अल्लाह की दयालुता उन में अत्यन्त निकट होती है । अरफात के मैदान का यह महान् सम्मेलन इतनी बरकतें और विशेषताएँ लिए हुए होता है कि उन की गणना नहीं हो जा सकती । किन्तु ही अल्लाह के बन्दे इस शुभ सम्मेलन की बरकतों में नाम उठाते हैं और अल्लाह उनके गुनाहों को क्षमा कर देता है । बिना ही लोगों के जीवन को यह सम्मेलन तोहीद के रंग में रंग देता है और अल्लाह उनके बारे में 'अहल्लम' से छुटकारे का निर्णय उसी तरह करता है जिन तरह 'हश्र' के मैदान में वह बहुत से लोगों के बारे में क्षमा का निर्णय करेगा । इसमें गन्देह नहीं कि 'हज्र' के इस महान् सम्मेलन का 'आसिरत' ने पनिष्ठ सम्बन्ध है । यह सम्मेलन हश्र के मैदान में हमारे खड़े होने का चित्र प्रस्तुत करता है ।

१० यह महान् सम्मेलन जो अल्लाह की ओर पलटने और अल्लाह की सेवा में लोगों के उपस्थित होने का दृश्य प्रस्तुत कर रहा होता है अल्लाह को अत्यन्त प्रिय है । अल्लाह अपनी प्रसन्नता का प्रदर्शन 'फिरिशो' के बीच इन शब्दों में करता है कि ये मेरे बन्दे किस उद्देश्य से यहां एकत्र हुए हैं । मेरी दयालुता और क्षमा की इच्छा और मेरे आदेश के पालन करने की भावना ही है जो उन्हें यहां खींच कर लाई है ।

११. अर्थात् 'तवाफ' में तुम्हें इसकी इजाजत है कि तुम आपस में बात चीन करो लेकिन 'नमाज' में इसकी इजाजत नहीं है ।

अच्छी और भलाई ही की बात करे^{१२} ।

—तिरमिज़ी, नसई

हज्ज और उमरा

عَنْ أَوْسِ بْنِ بَرَّةٍ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ جِهَادُ الصَّغِيرِ وَالْكَبِيرِ وَالصَّعِيفِ وَالْمَرَأَةِ الْحُرِّ وَالْعُمُرَةِ _____ سَأَلُ

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . बच्चे, बूढ़े, निर्बल और स्त्री के लिए 'हज्ज' और 'उमरा' ही जिहाद है^१ । —नसई

२. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल १२. 'काबा' का 'तवाफ' (परिक्रमा) अपनी आत्मा और उद्देश्य का दृष्टि से 'नमाज' के सदृश है । 'नमाज' अपनी वास्तविकता की दृष्टि से अल्लाह की याद और बन्दे की 'रब' के प्रति आसक्ति, विमुग्धता और विनम्रता का प्रदर्शन के अतिरिक्त और क्या है ? 'तवाफ' की वास्तविकता भी यही है । 'तवाफ' भी अल्लाह की याद के लिए है । 'तवाफ' में भी बन्दा आसक्ति, अनुराग और प्राणोत्सर्ग के उसी भाव का प्रदर्शन करता है जो उसके मन में अपने 'रब' के लिए पाया जाता है । इसलिए 'तवाफ' में व्यर्थ बातों से बचना चाहिए । नसई की एक रिवायत में हजरत इब्न उमर का यह कौल भी मौजूद है "तवाफ की हालत में बहुत ही कम बात-चीत करो इसलिए कि (तवाफ करते हुए वास्तव में) तुम 'नमाज' में होते हो ।"

१ मतलब यह है कि जो लोग विवशता के कारण 'जिहाद' नहीं कर सकते उन्हें 'जिहाद' का सवाब 'हज्ज' और 'उमरा' ही से प्राप्त हो जायेगा । यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उन्हें आत्मा का वह विकास, स्वच्छता और उच्चता जो 'जिहाद' के द्वारा प्राप्त होती है 'हज्ज' और 'उमरा' के द्वारा ही प्राप्त हो जाए । 'हज्ज' और 'उमरा' अपनी कुछ विशेषताओं की दृष्टि से 'जिहाद' की भूमिका है । इसलिए यदि कोई व्यक्ति अपनी विवशता के कारण 'जिहाद' में सम्मिलित नहीं हो सका तो 'हज्ज' और 'उमरा' ही से 'जिहाद' के सवाब का हकदार होगा जिस प्रकार वह व्यक्ति अल्लाह के यहाँ 'जिहाद' के सवाब का हकदार होता है जो अपने घर से जिहाद के इरादे से निकल पड़ा था लेकिन मृत्यु ने उसे रण में शत्रुओं से लड़ने का मौका न दिया ।

सल्ल० ने कहा : जो व्यक्ति 'हज्ज' या 'उमरा' या 'जिहाद' के इरादे से निकला फिर मार्ग ही में उसे मृत्यु आ गई, तो अल्लाह उस के लिए 'जिहाद', 'हज्ज' और 'उमरा' करने वाले का मवाब लिख देता है^२ ।

—बैहकी शोबुलईमान

३. हजरत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक-दूसरे के पश्चात् 'हज्ज' और 'उमरा' करो क्योंकि ये दोनों गुनाहो को इस तरह नष्ट कर देते हैं जिस तरह भट्टी लोहे के मैल-कुचैल को नष्ट कर देती है^३ ।

—नसई

४. हजरत अम्र बिन आस रजि० कहते हैं कि जब अल्लाह ने मेरे दिल में 'इस्लाम' स्वीकार करने का ख्याल डाला, तो मैं नबी सल्ल० की सेवा में हाजिर हुआ और कहा अपना हाथ बढ़ाइए ताकि मैं आप से 'बैअत' करूँ^४, तो आपने अपना हाथ बढ़ा दिया, मैंने अपना हाथ खींच लिया,

२ सच्चे दिल से मनुष्य जब अल्लाह के मार्ग में निकल पड़ा, तो वह कर्म-फल का अधिकारी हो गया, भले ही घर से निकलते ही मृत्यु आ जाए और उसे अमल का मौका न मिले । कर्म के बदले उसकी आत्मा की शुद्धता और सत्यप्रियता ही उसके लिए काफी है । अल्लाह तो लोगो के इरादो और उनके दिलो को देखता है । उसके यहाँ तो कुरबानी का खून भूमि पर गिरने से पहले ही कबूल हो जाता है (तिरमिजी) । कुरआन में भी कहा गया है "और जो कोई अपने घर से अल्लाह और उसके 'रसूल' की ओर 'हिजरत' करके निकले फिर उसकी मृत्यु आ जाए, तो उसका बदला अल्लाह के जिम्मे हो गया और अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दयावान् है ।"

—अन-निसा • १००

३ अर्थात् जिस तरह भट्टी की गर्मी से लोहे का मोरचा और उसका मैल-कुचैल नष्ट हो जाता है उसी प्रकार 'हज्ज' और 'उमरा' मनुष्य के गुनाहो को मिटाते और उनके बुरे प्रभाव को मनुष्य के मन और मस्तिष्क से दूर करते हैं । और उसका सम्बन्ध उस अल्लाह से जोड़ते हैं जो समस्त भलाइयो और पवित्रता का स्रोत है । इस 'हदीस' से यह भी मालूम हुआ कि गुनाह और गुनाह का मनुष्य के मन और मस्तिष्क पर जो प्रभाव पड़ता है मनुष्य की आत्मा के लिए उसकी हैसियत मैल-कुचैल और मोरचे की है जिसे दूर किये बिना मनुष्य का व्यक्तित्व और उसके जीवन में निखार नहीं आ सकता ।

४ अर्थात् आपके हाथ पर 'इस्लाम' की 'बैअत' करूँ, आपके हाथ पर २०० आऊँ ।

आप ने कहा . अन्न तुम्हे क्या हुआ ? मैं ने कहा : मैं एक शर्त करनी चाहता हूँ, कहा : तुम क्या शर्त करनी चाहते हो ? मैं ने कहा : यह कि मेरे गुनाहों को क्षमा कर दिया जाए^५ । आप ने कहा . क्या तुम नहीं जानते कि 'इस्लाम' पिछले सभी गुनाहों को ढा देता है और 'हिजरत' भी पिछले गुनाहों को ढा देती है और 'हज्ज' भी पिछले गुनाहों को ढा देता है^६ ।
—मुस्लिम

५. अर्थात् मुझ से जो खताएँ और गुनाह के काम 'इस्लाम' से पहिले हो चुके हैं उन्हें क्षमा कर दिया जाए ।

६. मतलब यह है कि जब मनुष्य 'कुफ्र' या 'शिरक' को छोड़कर सच्चे दिल से 'इस्लाम' स्वीकार कर लेता है, तो उसके पिछले गुनाह अपने-आप नष्ट हो जाते हैं । वह अघेरे से उजाले में आ जाता है । उसे एक नवीन और पवित्रतम जीवन प्राप्त होता है । 'शिरक' और 'कुफ्र' या उस से पैदा होने वाले दूसरे विकार उस से दूर हो जाते हैं । कुरआन में भी कहा गया है उन से कह दो जिन्होंने 'कुफ्र' किया है कि यदि वे वाज्र आ जाएँ, तो उनके पिछले गुनाह क्षमा कर दिए जाएँगे ।”
—अल-अनफाल ३८ ।

यह 'हदीस' बताती है कि गुनाहों से पाक-साफ कर देने की जो विशेषता 'इस्लाम' स्वीकार करने में है वह विशेषता 'हिजरत' और 'हज्ज' में भी पाई जाती है । 'हिजरत' और 'हज्ज' जैसे कर्म एक पहलू से 'ईमान' की पुनरावृत्ति की हैसियत रखते हैं इसलिए अवश्य ही इनमें वही विशेषता होनी चाहिए जो 'इस्लाम' कबूल करने में है । आदमी 'हिजरत' उसी समय कर सकता है जब कि वह घर बार और धन-दौलत की अपेक्षा 'ईमान' और 'इस्लाम' को प्रमुखता दे । इसी प्रकार अपने नातेदारों, मित्रों और अपने कारबार को छोड़कर 'हज्ज' के लिए प्रस्थान करना इस बात की पहिचान है कि आदमी ने अपनी इच्छाओं के मुकाबले में अल्लाह के आदेश का आदर किया । इसी प्रकार 'हिजरत' या 'हज्ज' करने वाले व्यक्ति के 'ईमान' में यदि कोई कमजोरी भी आ गई थी, तो 'हिजरत' और 'हज्ज' जैसा अमल 'ईमान' की पुनरावृत्ति की हैसियत रखता है । मानो बन्दा नये सिरे से अपने 'रब' से बन्दगी की प्रतिज्ञा कर रहा है और उस जीवन प्रणाली को अपनाने का निश्चय कर रहा है जिसे अल्लाह ने उसके लिए पसन्द किया है । इस से पहिले यदि उसने गुनाहों के काम किये भी हैं जो वास्तव में अब उसने अल्लाह की ओर रुजू कर लिया । आदमी में सत्यनिष्ठा आ ही नहीं सकती जब तक कि वह अल्लाह की ओर रुजू न हो ।

५. अब्दुल्लाह बिन जराद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'हज्ज' करो क्योंकि हज्ज गुनाहो को इस तरह धो देता है जैसे पानी मल को धो देता है" ।
—तवरानी:अवसत

६. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति ने इस घर (काबा) के दर्शन किये और किसी कामेच्छा सम्बन्धी बात में नहीं पडा और न किसी अवज्ञा में, तो वह इस तरह पलटा जिस तरह उस की माता ने उसे जना था" ।
—मुस्लिम

७. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा एक 'उमरा' दूसरे उमरा तक उन सभी गुनाहो के लिए 'फफारा' (प्रायश्चित्त) है जो उन के बीच हुए हो और 'हज्ज मवरूर का बदला तो वस 'जन्नत' है" ।
—बुखारी, मुस्लिम

इसलिए उमरा हज्ज गुनाहो के क्षमा होने के लिए काफी है 'तौबा' करने वाला ऐसा है जैसे उमने गुनाह किया ही नहीं था ।" यदि किसी की 'हिजरत' या 'हज्ज' केवल लोगों को दिखाने के लिए है या उसके पीछे केवल भौतिक स्वायं काम कर रहा है, तो ऐसी 'हिजरत' या ऐसे 'हज्ज' का यहाँ उल्लेख नहीं किया गया है ।

७. यही विशेषता एक 'हदीस' में 'नमाज' की बताई गई है जिसमें नमाज के लिए स्नान की उपमा प्रस्तुत की गई है ।

८. अर्थात् वह गुनाहो में बिल्कुल पाक-साफ होकर लौटता है । इस 'हदीस' में जिन बातों से बचने का जिक्र किया गया है उनका जिक्र कुरआन में भी मिलता है "हज्ज के कुछ जाने-पहचाने महीने हैं । तो जिस किसी ने उनमें 'हज्ज' का इरादा कर लिया तो (उसे यह ध्यान रहे कि) 'हज्ज' में न तो कामेच्छा की कोई बात जायज है और न अवज्ञा और न लड़ाई-भगडा ।"

—अल-बकरा १९७ ।

यों तो प्रत्येक कर्म की यह विशेषता है कि उसके कारण आदमी के गुनाह क्षमा होते हैं और गुनाहो के बुरे प्रभाव दिलो से दूर होते हैं मनुष्य की नैतिक दशा ठीक हो जाती है और उसे शुद्धता और आत्म-विकास प्राप्त होता है, लेकिन 'हज्ज' में यह विशेषता विशेष रूप से पाई जाती है । 'हज्ज' एक बड़ी 'इबादत' है उसे यदि उसके पूरे नियम और शर्तों के साथ अदा किया जाय तो निश्चय ही यह 'इबादत' आदमी के जीवन को बदलने और उसे नेकी, परहेजगारी और ईश-भक्ति के साँचे में ढाल देने के लिए काफी है ।

९. 'हज्ज मवरूर' से अभिप्रेत वह 'हज्ज' है जिसमें हज्ज के समस्त नियमों और

‘हज्ज’ के स्वाभाविक आदेश

عَنْ أُسَامَةَ بْنِ سَرِيكٍ قَالَ حَرَجْتُ مَعَ رَسُولِ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ حَاجًّا
وَكَانَ النَّاسُ يَأْتُونَهُ فَيَمُرُّونَ بِأَيْلِ يَارَسُولَ اللَّهِ اسْعَيْتُ قَبْلَ أَنْ أَطُوفَ
وَأَحْرُتُ شَيْئًا أَوْ قَدَمْتُ سَبًّا فَكَانَ يَقُولُ لِأَحْرَجِ إِلَّا رَجُلًا إِفْتَرَضَ عَنْ عَرْضِ
رَجُلٍ مُسْلِمٍ وَهُوَ ظَالِمٌ فَذَاكَ الَّذِي حَرَّ وَهَلَكَ ————— ابراهيم اود

१ उसामा बिन शरीक रजि० कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल सल्ल० के साथ ‘हज्ज’ के लिए निकला, तो लोग आप के पास आते थे (और आप मे ‘हज्ज’ के बारे में पूछते थे) तो कोई कहता कि हे अल्लाह के रसूल ! ‘तवाफ’ (परिक्रमा) करने से पहले मैं ने (सफा और मरवा के बीच) सई कर नो या किसी काम को बाद मे कर लिया (जिसे पहले करना चाहिए था) या पहले कर लिया (जिसे बाद मे करना चाहिए था) आप (प्रत्येक व्यक्ति को) यही उत्तर देते थे कि कोई दोष नहीं है, दोष की बात तो इस मे है कि कोई व्यक्ति जुन्म मे किसी ‘मुस्लिम’ व्यक्ति की आबरू को आघात पहुँचाए तो ऐसा व्यक्ति दोषी है और वह विनष्ट हुआ^१ । —अबदाउद

अधिनियमो आदि का पूरा ध्यान रक्खा गया हो, जो पाक और शुद्धहृदयता के साथ हो। इस ‘हदीस’ मे उसी वास्तविकता को प्रदर्शित किया गया है जिस का प्रदर्शन पिछली ‘हदीस’ मे हुआ है। ‘उमरा’ पिछले गुनाहो के लिए ‘कफफारा’ (प्रायश्चित्त) बन जाता है। इस नेक अमल के कारण अल्लाह पिछले गुनाहो को क्षमा कर देता है। ‘उमरा’ गुनाहो के बुरे प्रभावो को मन मे दूर करता और मनुष्य को पवित्रता प्रदान करता है। उमरा न केवल यह है कि अल्लाह के घर की आबादी और शोभा का कारण बनता है बल्कि इसके द्वारा मानव-हृदय की भी शोभा बढ जाती है। ‘हज्ज’ इतनी बडी ‘इबादत’ और मनुष्य की शुद्धहृदयता, सत्यनिष्ठा और ‘ईमान’ का महान् प्रदर्शन है कि ‘हज्ज’ करने वाला अल्लाह के यहाँ ‘जन्नत’ का अधिकारी ठहरता है शत यह है कि ‘हज्ज’ के पश्चात् वह अपने जीवन मे कोई ऐसी नीति न अपनाए, जो अल्लाह की बन्दगी के प्रतिकूल हो।

१ मतलब यह है कि ‘हज्ज’ सम्बन्धित कर्मो मे कुछ विलम्ब या जल्दी हो गई ।

कोई कार्य पहिले करने का या उसे गल्ती में बाद में कर लिया या कोई कार्य बाद में करना चाहिए था उसे पहिले कर लिया तो यह कोई ऐसी बात नहीं है कि जिस में आदमी के धर्म और ‘ईमान’ में कोई दोष पैदा हो जाए या इस में कोई ऐसी हानि पहुँच जाए कि क्षतिपूर्ति सम्भव ही न हो। हानि और दोष की बात तो यह है कि भन्दा उस चरित्र को क्षति पहुँचाए जो ‘ईमान’ वाले व्यक्ति की दाम्निता निमित्त है। ‘हज्ज’ सम्बन्धी कार्यों में कुछ विनम्र या जल्दी हो जाये तो यह कोई ऐसी पन्थानी की बात नहीं, हाँ यदि कोई व्यक्ति ‘ईमान’ वालों के चरित्र को भग जाना है तो अवश्य ही यह पन्थानी की बात होगी। विशेष रूप से यदि ‘हज्ज’ के बीच में वह किसी के साथ ज्यादाती करता और उसकी आबरू पर हमला करता है, तो यह घोर अन्याय वन्तिक इस्लामी जीवन की तबाही का गुना प्रमाण होगा।

— — —

दुआ

‘दुआ’ बन्दे की पुकार और अल्लाह की सेवा में उस की याचना है। एक मुस्लिम व्यक्ति अल्लाह को छोड़ कर किसी दूसरे को नहीं पुकारता। उस की जबान पर अल्लाह ही का जिक्र होता है। एक अल्लाह की महानता और बड़ाई के वर्णन के लिए उस की ज़िह्वा अर्पित होती है। उस के इस कर्म में सारी सृष्टि उस के साथ होती है। मुस्लिम माँगता केवल अपने ‘रब’ से है। वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ‘उसी’ को पुकारता है। उस की फरियाद उसी से होती है। वह उसी के मार्ग-दर्शन का इच्छुक होता है। उसी को शरणदाता और अपना कार्यसाधक समझता है। यही उसका ‘दीन’ (धर्म) और ‘ईमान’ है, जिस ‘दीन’ का वह अनुयायी है, वास्तव में वही सम्पूर्ण जगत का ‘दीन’ है। कुरआन में कहा गया है, “हर वह चीज़ जो आकाशों और धरती में है अल्लाह की ‘तस्बीह’ करती है और वह प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है” —अल-हदीद १

एक दूसरी जगह कहा गया “आकाशों और धरती में जो भी है सब उस के भिक्षुक है” —अर-रहमान २६

एक मुस्लिम को इसी बात का आदेश दिया गया है कि वह केवल एक अल्लाह को पुकारे। और केवल उसी से आशाएँ रखे (अल-आराफ़ ५५), अस-सजदा १६)। एक अल्लाह को पुकारना अल्लाह की बन्दगी और ‘इबादत’ में सम्मिलित है। जब बन्दा अपने ‘रब’ के सामने अपनी जरूरतें पेश करता और विवशता की दशा में उसे आवाज देता है, तो इस प्रकार वास्तव में वह अल्लाह के प्रभुत्व और उच्चता और अपनी बन्दगी और दुर्बलता को स्वीकार करता है, वह अल्लाह के समक्ष अपनी विवशता और विनम्रता को पेश करके उससे उसकी कृपा का अभिलाषी होता है। बन्दगी और विनम्रता का प्रदर्शन स्वयं ‘इबादत’ बल्कि ‘इबादत’ का मूल तत्व है। इसी लिए

१ इब्न तैमिया ने लिखा है “बन्दगी अत्यन्त विनम्रता और प्रेम का नाम है”

(रिसालतुल उवूदियत पृ० २८)। इब्न कथीर लिखते हैं ‘इबादत के दो

विशेष मूलतत्त्व हैं अत्यन्त प्रेम अत्यन्त विनय एवं विनम्रता और भुकाव के

नबी सल्ल० ने दुआ को 'इबादत' का सत कहा है और इसी लिए अल्लाह को छोड़कर किसी दूसरे को पुकारने वाले को कुरआन 'शिरक' और पथ-भ्रष्टता कहता है। कुरआन की विभिन्न 'आयतों' में 'दुआ' और पुकार से आशय अल्लाह की 'इबादत' ही है उदाहरणार्थ एक जगह कहा गया : "हर 'इबादत' में अपना रुख ठीक रखो और 'दीन' को खालिस उसी के लिए रख कर उसे पुकारो" —अल-आराफ २८

एक दूसरी जगह कहा गया . " वह सजीव है, उस के सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य प्रभु) नहीं तो 'दीन' को उसी के लिए खलिस कर के उसे पुकारो —अल-मोमिन ६५

एक स्थान पर कहा गया "सजदे अल्लाह ही के लिए है तो तुम अल्लाह-के साथ किसी और को न पुकारो" —अल-जिन्न . १८

मनुष्य के लिए यह चीज सब से बड़ी आनन्ददायक है कि वह अपने 'रब' की ओर एकाग्रचित्त हो कर आकृष्ट हो। 'दुआ' में याचना, ईश प्रशंसा, प्रेम, मन का झुकाव, विनयभाव और अल्लाह की ओर ध्याना-कृष्टि आदि वे सभी चीजे सम्मिलित होती है जो ईमान वालों के लिए जीवन को बहुमूल्य निधि है। कुरआन करीम में कहा गया है "अपने 'रब' को विनम्र भाव के साथ गिड़गिड़ाते हुए गुप्त रूप से पुकारो, निस्सन्देह हृद से आगे बढ़ने वाले उसे प्रिय नहीं है और धरती में सुधार के पश्चात् बिगाड़ न पैदा करो और उसे भय और लोभ (दोनों प्रकार के मिले-जुले भावों) के साथ पुकारो, निस्सन्देह अल्लाह की दयालुता उत्तम-कार लोगों के समीप है" —अल-आराफ ५५-५६

इसी विशेषता को दूसरी जगह यों स्पष्ट किया गया "निश्चय ही वे (अल्लाह के नबी) नेकियों में अग्रसरता दिखाते थे और हमें चाह और भय (के मिले-जुले भावों) के साथ पुकारते थे और वे हमारे सामने विनम्रता अपनाने वाले थे" —अल-अबिया : ९०

एक दूसरी जगह है "उनके पहलू बिस्तरो से अलग हो जाते हैं। वे भय और लालसा के साथ अपने 'रब' को पुकारते हैं और जो-कुछ हम

साथ। यदि तुम किसी से प्रेम करो परन्तु उस से तुम्हारा विनयपूर्ण सम्बन्ध न हो, तो तुम उसकी 'इबादत' नहीं करता, इसी प्रकार विनय भाव एवं विनम्रता हो और प्रेम न हो, तो उस समय भी तुम 'आविद' (इबादत और बन्दगी करने वाले) नहीं कहे जाओगे जब तक विनययुक्त प्रेम करने वाले न बन जाओ।

ने उन्हें दिया है उस मे से (हमारी राह मे) खर्च करते हैं”

—अस-सजदा १६

‘दुआ’ का हमारे जीवन से गहरा सम्बन्ध है। वह व्यक्ति जो अल्लाह के मार्ग-दर्शन के अनुसार जीवन-व्यवस्था को सुदृढ़ करना चाहता है उसे हर समय इसकी आवश्यकता होती है कि उसे अल्लाह का योग और सहायता प्राप्त हो। इस के बिना वह एक कदम भी नहीं चल सकता और न इस के बिना वह उन शैतानों और मक्कारों का मुकाबला कर सकता है जो उसे सत्य से फेरने के लिए हर समय अपना जोर लगाते रहते हैं।

मुस्लिम की सब से बहुमूल्य पूँजी और शक्ति वह भक्ति भाव और दासता की प्रेरणा है जिस के सहारे वह सत्य-मार्ग पर अविचलित रूप से चलता और असत्य की प्रत्येक चाल का दृढ़तापूर्वक मुकाबला करता है। उसकी कोशिश यह होती है कि एक ओर वह जीवन में वन्दगी की माँगों को पूरा करे, अल्लाह की निश्चित की हुई सीमाओं का आदर करे, हर प्रकार के गुनाहों और अल्लाह की अवज्ञा से अपने जीवन को दूर रखे, दूसरी ओर हर श्वास के साथ अल्लाह की दयालुता से अपना सम्बन्ध बनाये रखे। मुस्लिम अपनी याचना का दामन हर समय अल्लाह की सेवा में फैलाए रहता है। अकेला हो या लोगों के साथ, मस्जिद हो या बाजार, सफर में हो या घर में, बीमार हो या स्वस्थ, प्रत्येक अवस्था में उस का यह अमल जारी रहता है। वह सदा अल्लाह से सहायता का इच्छुक होता है। अल्लाह की सेवा में दुआएँ और विन्ती करने को वह बड़े सौभाग्य की बात समझता है।

दास्यभाव मानव का स्वाभाविक भाव है। यही वह भाव है जो हमारे मन में तरंगित होने वाले विभिन्न भावों और प्रेरणाओं को अर्थमय और आशययुक्त बनाता है। उन्हें अनुकूलता एवं एकात्मकता प्रदान करता है। भावनाओं और अतः प्रेरणाओं की अनेकता में एकता की विशेषता पैदा करता है। दास्यभाव के वास्तविक अर्थ और उस की माँगों का पूर्ण परिचय केवल अल्लाह के ‘रसूलों’ द्वारा प्राप्त होता है। दास्ता की अनुभूति वह शान्ति एवं आनन्द निधि है जिस से हृदयों को परितोष और दिव्य मुख प्राप्त होता है। यही मार्ग है जो वन्दे को उस के ‘रब’ से मिलाता है। दास्यभाव वास्तव में जीवन की उच्चतम एवं मनोरम उमंगों का मूलधार है। यह एक ऐसे व्यक्तित्व से सम्बन्ध जोड़ने की अभिलाषा

है जो अत्यन्त दयालु और स्वयं हमारे जीवन का वास्तविक आशय है। विनय भाव, ब्रह्म-ज्ञान का मूल और सामीप्य-स्थिति का नाम है, कहा भी गया है “सजदा करो और करीब हो जाओ” —अल-अलक १६।

विनय भाव और ‘सजदा’ ही वास्तविक रूप से ऐसी महान् और प्रिय सत्ता के सामीप्य का आशय हो सकता है। प्रेम और विनय भाव के साथ अल्लाह की ओर अपना ध्यान बनाये रखना हमारे आन्तरिक जीवन का सौन्दर्य है। प्रेम, विनय भाव और विनम्रता का दुआवो में पूर्णतः प्रदर्शन होता है। नबी सल्ल० का जीवन विनय भाव का जीवन था। आप बन्दगी के उच्चतम स्थान पर थे। इसका अनुमान विशेष रूप से उन दुआओं से किया जा सकता है जो आपने अपने ‘रब’ से माँगी हैं। आप की दुआओं से मालूम होता है कि आप की आत्मा कितना अधिक अपने ‘रब’ से सम्बद्ध थी और आप को कितनी अधिक अपने ‘रब’ की महानता और तेज की अनुभूति प्राप्त थी। और अपनी और सम्पूर्ण विश्व को विवशता और अल्लाह की शक्ति, सामर्थ्य और उस की व्यापक दयालुता पर आप को कितना विश्वास था। इस में सन्देह नहीं किया जा सकता कि आप की दुआएँ तत्त्वदर्शिता और ज्ञान की महान कृत हैं, ईश-ज्ञान और अल्लाह से आपके सच्चे और गहरे सम्बन्ध का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

—————

दुआ का महत्व

عَنِ النَّعْمَانِ بْنِ شَيْبَةَ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ الدُّعَاءُ
هُوَ الْعِبَادَةُ نَفَّ قَرَأَ وَقَالَ رَبِّكُمْ أَدْعُوْنِي أَسْتَجِبْ لَكُمْ إِنَّ الدِّينَ
يَسْكُرُونَ عَنْ عِبَادَتِي سَدَّ خُلُوفَ جَهَنَّمَ دَاخِرِينَ.

_____ ابوداود، ترمذی، احمد، سائی، اس ماجه

१ हजरत नोमान बिन बशीर कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : दुआ 'इबादत' है । फिर आप ने (कुरआन से यह) पढा "तुम्हारे रब ने कहा मुझसे दुआ माँगो मैं कबूल करूँगा । जो लोग मेरी 'इबादत' से गर्व करते हुये मुख मोड़ते है, जल्द ही वे अपमानित होकर 'जहन्नम' मे प्रवेश करेंगे" ।

—अबू दाऊद, तिरमिजी, अहमद, नसई, इब्नमाजा

२ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के 'रसूल'सल्ल० ने कहा 'दुआ' (प्रार्थना) 'इबादत' की मज्जा (सार) है" । —तिरमिजी

१ इस 'हदीस' मे जो आयत पेश की गई है उसमे 'दुआ' को 'इबादत' शब्द से अभिव्यजित किय गया है । ईश्वर से विनय और प्रार्थना करना बन्दगी और दास्यभाव ही का प्रदर्शन है । 'दुआ' से मुँह मोड़ने और प्रार्थना न करने का अर्थ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि आदमी को किसी प्रकार का गर्व है और वह अपने रब के समक्ष अपनी दासता को स्वीकार करने से कतरा रहा है । बन्दा जब अपने सृष्टिकर्ता से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रार्थनायें करता है तो वास्तव मे वह इस तरह अपने रब की प्रभुता, बड़ाई और सर्वोच्चता के साथ ही अपनी दासता और दुर्बलता का इकरार करता है । उसका यह दास्यभाव-प्रदर्शन स्वयं एक उत्तम उपासना है । अतः यह इसके पुण्य और प्रतिफल से वंचित नहीं हो सकता, भले ही उसे किसी कारण से दुनिया मे वह वस्तु न मिले जिसके लिए उसने प्रार्थना की थी ।

२ 'इबादत' का अर्थ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि मनुष्य ईश्वर की महानता और बड़ाई के आगे झुक जाये और उसके समक्ष अपनी दुर्बलता और बन्दगी का इकरार करे । 'दुआ' और विनय मे एक ओर मनुष्य की मुहताजी, विवशता और दासता की अभिव्यक्ति होती है, दूसरी ओर वह

३. हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . ईश्वर की दृष्टि में 'दुआ' ने बढ कर कोई चीज उत्तम और श्रेष्ठ नहीं^३ ।
—तिरमिजी, इब्न माजा

४ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जो अल्लाह से नहीं मांगता, अल्लाह उस पर क्रुद्ध होता है^४ ।
—तिरमिजी

५ एब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति के लिए दुआ का द्वार खुल गया उसके लिए 'रहमत' (दयानुता) के द्वार खुल गये^५ और ईश्वर से जो चीजें मांगी जाती हैं उनमें उसकी दृष्टि में सबसे प्रिय वस्तु यह है कि कुशल-क्षेम की याचना की जाये^६ ।
—तिरमिजी

ईश्वर की प्रभुता और उमगी नवीयता का इफ़रार करता है । इसलिए इसमें किसी प्रकार का मन्देह नहीं हो सकता कि 'दुआ' या प्रार्थना 'इबादत' ही है । इसके शुभ फल में यह यमित नहीं हो सकता ।

३ अर्थात् 'दुआ' कोई नापारण चीज नहीं है । यह एक शक्ति है, बल है । 'दुआ' बन्दे को अल्लाह से करीब करती और अल्लाह से उसका सम्बन्ध जोड़ती है ।

४ अर्थात् जिस तरह अल्लाह को यह प्रिय है कि कोई उस से 'दुआएँ' मांगे और अपनी जरूरतों के लिए उसको पुकारे उसी तरह अल्लाह को यह बात बहुत ही नापसन्द है कि कोई उससे मांगना छोड दे । उसके सामने अपनी जरूरतें पेश न करे । यह बेपरवाही न किसी बन्दे के लिए उचित है और न ईश्वर कभी इसको पसन्द कर सकता है ।

५ अर्थात् जिसे 'दुआ' करने का सौभाग्य प्राप्त हो गया उसके हिस्से में समस्त भलाईयाँ आ सकती हैं । 'दुआ' के द्वारा मनुष्य ईश्वर की विशेष कृपा का पात्र हो जाता है । 'दुआ' अथवा प्रार्थना अपनी वास्तविकता की दृष्टि से मानव-हृदय की विकलता और उसकी आत्मा की सुन्दर याचना का दूसरा नाम है । जब किसी बन्दे को मच्ची याचना, तडप और मन की विकलता प्राप्त हो गई तो, उसके लिए ईश-दयालुता के द्वार कभी बन्द नहीं हो सकते ।

६ कुशल-क्षेम में सासारिक एव पारलौकिक, बाह्य एव आन्तरिक हर प्रकार की कुशलता और क्षेम सम्मिलित है । जिस किसी ने ईश्वर से कुशल-क्षेम की प्रार्थना की उसने वास्तव में ईश्वर से बड़ी चीज मांगी । कुशल-क्षेम की

६ इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह से उसकी कृपा चाहो क्योंकि अल्लाह को यह बात पसन्द है कि उससे माँगा जाये और उत्तम 'इबादत' तगी दूर होने की प्रतीक्षा है* ।

— तिरमिजी

७. उबाद्रा बिन सामित रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा दुनिया में कोई भी मुस्लिम अल्लाह से 'दुआ' करता है तो या तो अल्लाह उसको वही चीज देता है (जिसकी वह 'दुआ' करता है) या उस दर्जे की किसी बुराई (बला या मुसीबत) को उससे दूर कर देता है, शर्त यह है कि वह किसी गुनाह या नाते-रिश्ते के तोड़ने की 'दुआ' न करे* ।

--तिरमिजी

८ हजरत सलमान रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम्हारा रब बड़ा लज्जाशील और दाता है उसको इस से लज्जा आती है कि जब उसका बन्दा दोनों हाथ उठाकर उससे 'दुआ' करे तो वह उन्हे खानी लौटा दे* ।

—अबूदाऊद, तिरमिजी

याचना करके मनुष्य इस बात का इकरार करता है कि ईश्वर की रक्षा और उसकी कृपा के बिना मनुष्य कदापि शान्ति और कुशलता प्राप्त नहीं कर सकता । ईश्वर ही है जो मनुष्य को कष्ट और सकट से बचाता और सीधे मार्ग पर चलने का सौभाग्य प्रदान करता है । इस प्रकार की दुशाओ से ईश्वर के समक्ष मनुष्य की पूर्ण विवशता, मुहताजी और दासता का प्रदर्शन होता है ।

७ लोगो के माँगने और दुआ करने से अल्लाह की दयालुता को प्यार आता है । जो उससे नहीं माँगता ईश्वर उस से प्रसन्न नहीं होता । ईश्वर की कृपा की आशा करते हुये इसकी प्रतीक्षा करना कि वह कष्टो और दु'खो को निबारेगा और मुविधा प्रदान करेगा, उच्च कोटि की उपासना है क्योंकि इसमें मनुष्य भय और विनयभाव के साथ ईश्वर की ओर झुका रहता है और उससे उसकी कृपा की आस लगाये रहता है ।

८ बन्दे की 'दुआ' किसी भी दशा में अकारथ नहीं जाती या तो उसकी मांगी हुई चीज ही उसे दे दी जाती है या उसके बदले में आने वाली किसी बला और सकट को उस से दूर कर दिया जाता है । 'दुआ' के कबूल होने की एक बड़ी शर्त यह है कि 'दुआ' किसी पाप और गुनाह के लिए न हो और न नाते-रिश्तेदारों में फूट और सम्बन्ध विच्छेद के लिए हो ।

९. अर्थात् बन्दे की दुआ नष्ट नहीं होती । ईश्वर अत्यन्त लज्जाशील और कृपालु

६ हजरत सलमान फारसी रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'ईश्वरीय निर्णय को कोई चीज टाल नहीं सकती सिवाय 'दुआ' के' और आयु को कोई चीज बढ़ा नहीं सकती सिवाय नेकी के' ।

—तिरमिजी

१०. हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'दुआ' (प्रत्येक दशा में) लाभदायक है उन बलाओं में भी जो आ चुकी हैं और उनके मामले में भी जो अभी नहीं आई हैं। अतः हे अल्लाह के बन्दो ! 'दुआ' को अपने लिए जरूरी ठहरा लो^{१२} ।

—तिरमिजी, अहमद

है। वह खानो राय किमी को फंसे लौटा सकता है। इब्जील में है : "जबकि तुम दूरे होकर अपने बन्धों को अच्छी चीजें देना जानते हो तो तुम्हारा बाप जो आसमान पर है अपने मांगने वालों को अच्छी चीज क्यों न देगा ।"

(मत्ता ७ ११)

१० मननव यह है कि 'दुआ' न करने पर ईश्वर का जो फैसला लागू होने वाला होता है, 'दुआ' करने में अल्लाह अपनी दया से उसे बदल देता है। किसी में शक्ति यह नहीं है कि वह अल्लाह के फैसले को बदल सके परन्तु अल्लाह स्वयं अपने फैसले को बदल सकता है और यह उस समय होता है जब मनुष्य उस से दुआ करे। यह बात मूरा नूह के उन शब्दों से भी सिद्ध होती है "(नूह ने अपनी जाति वालों में कहा 'तुम लोग अल्लाह की बन्दगी करो और उसका डर रखो और मेरी आज्ञा का पालन करो। यदि तुम ऐसा करोगे तो अल्लाह तुम्हारे गुनाहों को क्षमा कर देगा और एक नियत समय तक तुम्हें मुहलत् देगा।" इस आयत से मालूम हुआ कि 'कुफ्र और 'शिरक' पर जमे रहने पर ईश्वर का यह फैसला था कि इस जाति के लोगों को विनष्ट कर दिया जाये परन्तु यदि ये लोग अल्लाह की बन्दगी, ईश-भय और रसूल के आज्ञापालन को अंगीकार कर लेते तो, उन्हें विनष्ट कर देने का फैसला बदल जाता और उन्हें कर्म का और भी अवसर प्रदान किया जाता।

११ नेकी और शुभ कर्म से आदमी की आयु और कर्म में वरकत होती है। दे० अघ्याय तकदीर पर ईमान ।

१२ अल्लाह आने वाली मुसीबत को आने से रोक सकता है और उस सकट को जो आ चुका हो दूर कर सकता है, इसलिए आदमी को प्रत्येक दशा में उसको पुकारते रहना चाहिए ।

११ हज़रत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम मे से प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपने रब से माँगना चाहिए यहाँ तक कि जूती का तस्मा भी माँगे, यदि वह टूट जाये^{१३} ।
—तिरमिज़ी

१२. अबू सईद खुदरी से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'एक मुस्लिम व्यक्ति जब भी 'दुआ' माँगता है, शर्त यह है कि वह किसी गुनाह और रिश्ता-नाता तोड़ने की दुआ न हो, तो अल्लाह उसे तीन रूपों में से किसी भी रूप में कबूल कर लेता है' या तो उस की 'दुआ' दुनिया ही में कबूल कर ली जाती है या उसे आखिरत के प्रतिफल के लिए सुरक्षित कर लिया जाता है या उसी दर्जे की किसी बुराई (बला, मुसीबत) को उस पर आने से रोक दिया जाता है । 'सहाबा' ने कहा अब तो हम बहुत दुआये करेगे । आपने कहा ईश्वर की कृपा भी बहुत अधिक है^{१४} ।

१३. अर्थात् ऐसे मामले जो देखने में हमारे अपने अधिकार में होते हैं, उपाय के साथ-साथ ईश्वर से उसकी सहायता की प्रार्थना भी करनी चाहिये । उसके सहयोग और समर्थन के बिना किसी मामले में भी हमारा कोई उपाय सफल नहीं हो सकता । 'दुआ' का अर्थ यह है कि मनुष्य प्रत्येक दशा में अपनी दुर्बलता और अधीनता और ईश्वर की शक्ति, सामर्थ्य और सर्वोच्चता को मान रहा है । अपनी अधीनता और मुहताजी और ईश्वर की बड़ाई का इकरार मनुष्य को अल्लाह की मदद का हकदार बना देता है ।

१४. अर्थात् 'दुआ' करने वाला किसी भी रूप में घाटे में नहीं रहता या तो उसकी माँगी हुई चीज़ उसे दे दी जायेगी या यदि किसी कारण उसकी माँगी हुई चीज़ उसे न दी गई तो उसकी 'दुआ' उसके लिए आखिरत की सामग्री बना दी जायेगी उस पर आने वाले किसी सकट को दूर कर दिया जायेगा । तिरमिज़ी में हज़रत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि आप ने कहा "जो व्यक्ति भी दुआ माँगता है अल्लाह या तो उसकी माँगी हुई चीज़ उसे दे देता है या उस के सदृश उस से कोई बुराई रोक देता है जब तक कि किसी गुनाह या नाते-रिश्ते के विच्छेद की दुआ नहीं माँगता ।

दुआ के कुछ अधिनियम

عَنْ أَبِي شُرَبْرَةَ، قَالَ قَالَ رَسُولُ اللَّهِ ﷺ إِذَا دَعَا أَحَدُكُمْ
فَلَا يَقُلْ اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِي إِنْ سَدَّتْ. إِنْ خَشِيتُ أَنْ يَسُدَّتْ. أَوْ لِي إِنْ سَدَّتْ
وَلَنْ يَغُفَّرَ مَسْأَلَتُهُ إِنَّهُ يَفْعَلُ مَا يَشَاءُ وَلَا مَكْرَاهَ لَهُ — بحاری

१. हजरत अबू हरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब तुम मे से कोई व्यक्ति दुआ मांगे तो यो न कहे कि हे अल्लाह ! मुझे क्षमा कर दे यदि तू चाहे, मुझ पर दया कर यदि तू चाहे, मुझे रोजी दे यदि तू चाहे बल्कि उसे निश्चय रूप से अपनी मांग रखनी चाहिए। निम्नान्देह वह करेगा वही जो चाहेगा। कोई उस पर दवाव डालने वाला नहीं है। —बुखारी

२. हजरत अबू हरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह से दुआ मांगो तो इस विश्वास के साथ कि वह कबूल करेगा और जान रक्खो कि अल्लाह ग़ाफिल और अनुपस्थित हृदय की 'दुआ' म्वीकार नहीं करता। —तिरमिज़ी

३. हजरत अबू हरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि तुम में मे जब कोई 'दुआ' करे, तो यह न कहे कि हे अल्लाह ! यदि तू चाहे तो मुझे क्षमा कर दे बल्कि दुआ निश्चय रूप से और पूरी रुचि के साथ मांगे इसलिए कि अल्लाह जो चीज प्रदान करता है उसका प्रदान करना उस के लिए कुछ भी दुष्कर नहीं होता। —मुस्लिम

१. अर्थात् दुआ में किसी प्रकार की बेपरवाई नहीं होनी चाहिए। बन्दे को अपनी जरूरत निश्चय रूप से अपने 'रब' के सामने पेश करनी चाहिए ताकि अल्लाह के मामले बन्दे की अधिक-से-अधिक विनम्रता और मुहताजी का प्रदर्शन हो सके।
२. अर्थात् 'दुआ' मांगते समय तुम्हें पूर्णरूप से अल्लाह की ओर ध्यान देना चाहिए। तुम्हें विश्वास हो कि अल्लाह दुआओं का कबूल करने वाला है। वह हमारी दुआओं को अकारण नहीं जाने देगा। 'दुआ' यदि दुविधा और सन्देह की दशा में मांगी गई, तो वह बिल्कुल बेजान होगी। ऐसी निष्प्राण 'दुआ' का क्या प्रभाव हो सकता है।

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा बन्दे की दुआ कबूल की जाती है शर्त यह है कि वह किसी गुनाह की दुआ न करे, और जल्द बाजी से काम न ले। कहा गया जल्द बाजी क्या है ? हे अल्लाह के रसूल ! कहा यह है कि कोई कहे मैं ने बहुत 'दुआ' की, परन्तु देखता हूँ कि मेरी दुआ कबूल ही नहीं होती। और इस के पश्चात् वह थक जाए और दुआ माँगनी छोड़ दे^३। —मुस्लिम

५. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : लोगो ! अल्लाह पवित्र एव उत्तम है, वह केवल पवित्र और उत्तम वस्तु को स्वीकार करता है। और अल्लाह ने इस मामले में जो आदेश अपने 'रसूलो' को दिया है वही ईमान वालो को भी दिया है। उसने कहा है 'हे रसूलो ! पाक चीजे खाओ और अनुकूल (अच्छे) कर्म करो, तुम जो-कुछ करते हो मैं भली-भाँति जानता हूँ'। और कहा है 'हे लोगो जो 'ईमान' लाये हो खाओ पाक चीजे जो कुछ कि हम ने तुम्हें दी हैं'। इस के बाद आप ने एक ऐसे व्यक्ति का जिक्र किया जो लम्बा सफर कर के (किसी पवित्र स्थान पर) इस दशा में जाता है कि उस के बाल बिखरे हुए हैं और धूल से अटा हुआ है। आकाश की ओर हाथ उठा कर 'दुआ' करता है हे रब ! हे रब ! और हालत यह है कि उस का खाना हराम है, उस का पीना हराम है, उस का वस्त्र हराम है, और हराम अहार से वह पला-बढ़ा है, फिर उस की दुआ कैसे कबूल हो सकती है^४। —मुस्लिम

३ बन्दे को 'दुआ' छोड़नी नहीं चाहिए। उसे क्या मालूम कि अल्लाह को उसकी दुआ कब और किस रूप में कबूल करना अभीष्ट है। कभी बन्दे ही के हितों के लिए उसकी 'दुआ' कबूल नहीं की जाती। ऐसी दशा में उसे अपने अल्लाह से निराश नहीं होना चाहिए। जल्द बाजी से काम लेकर वह स्वयं अपना ही काम बिगाड़ देगा। निरन्तर अपने स्वामी के द्वार का भिक्षुक बना रहना क्या उसके लिए कम श्रेय की बात है।

४. आज हम देखते हैं कि एक व्यक्ति इस बात की शिकायत कर रहा है कि उस की दुआएँ कबूल नहीं हुई और वह यह नहीं देखता कि वह जो-कुछ खा पी रहा है और जो कुछ पहन रहा है वह कहाँ तक हलाल है। ऐसी दशा में उस की शिकायत को ठीक नहीं कहा जा सकता। पुरातन ग्रन्थों से भी यही मालूम होता है कि यदि कोई चाहता है कि उस की बात सुनी जाए तो वह गुनाहों से

६. हजरत मुआज रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जो मुस्लिम व्यक्ति पवित्रता की दशा में अल्लाह का जिक्र करता हुआ सो जाए फिर रात को जब वह जागे और सर्वोच्च अल्लाह से दुनिया और 'आखिरत' की भलाई की याचना करे, तो अल्लाह उसकी इच्छित वस्तु उसे अवश्य प्रदान करता है* । —अबू दाऊद

७ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हमारा 'रब' हर रात को जब रात का अन्तिम तिहाई भाग शेष रहता है, तो दुनिया के आकाश^६ पर उतरता है^७ और कहता है . कौन व्यक्ति है जो मुझ से दुआ करे और मैं उस की दुआ कबूल करूँ ? कौन व्यक्ति है जो मुझ से माँगे मैं उसे प्रदान करूँ ? कौन है जो मुझ से क्षमा की प्रार्थना करे मैं उसे क्षमा कर दूँ ?

—बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिरमिजी, इब्न माज्जा

८. अबू उमामा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा गया कौन सी दुआ ज्यादा कबूल होती है ? अल्लाह के रसूल ! आपने कहा जो रात के अन्तिम घड़ियों में की जाए^८ और जो 'फर्ज' नमाजों के पश्चात् की जाए^९ । —तिरमिजी

वाज आ जाए । यसायाह (Isaiah) ने एक स्थान पर कहा गया है . "तुम्हारी बदकारी ने तुम्हारे और खुदा के बीच जुदाई कर दी है और तुम्हारे गुनाहों ने उसे तुम से छिपा दिया ऐसा कि वह नहीं सुनता । —५६ . २

५ रात का यह समय विशेष रूप से दुआ के कबूल होने का समय होता है । इस तनहाई और शान्ति के वातावरण में यदि बन्दा अल्लाह की ओर रुजू होता है और उसके सामने अपनी जरूरतें पेश करता है, तो अल्लाह की दयालुता निश्चय ही उस की ओर आकृष्ट होकर रहेगी और उसकी दुआएँ कबूल होगी ।

६ निकटतम आकाश जिसे ससार के लोग देखते हैं ।

७ अर्थात् विशेष रूप से दुनिया वालों की ओर उस की दयालुता आकृष्ट होती है । उस समय जो भी 'दुआ' माँगी जाए उसके कबूल होने की अधिक सम्भावना होती है ।

८ इसलिए कि उस समय बिस्तर का आराम छोड़ कर अल्लाह को याद करना और उससे 'दुआएँ' माँगना शुद्ध हृदयता के बिना सम्भव नहीं और जो 'दुआ' मन की शुद्धता के साथ माँगी जाएगी अवश्य कबूल होगी ।

९. 'नमाज' और विशेष रूप से 'फर्ज' नमाज 'रब' की प्रसन्नता का कारण बनती

६. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . 'अज्ञान' और 'इकामत' के बीच में जो दुआ की जाती है वह कभी रद्द नहीं की जाती" । कहा गया . उस समय हम क्या माँगे ? हे अल्लाह के रसूल ! कहा . सर्वोच्च अल्लाह से दुनिया और 'आखिरत' का कुशल क्षेम माँगो ।
—अबू दाऊद, तिरमिज़ी

१०. सल्ल बिन सअद रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . दो समय ऐसे हैं जिन में 'दुआ' रद्द नहीं की जाती । अज्ञान के समय, और युद्ध के समय जब लोग एक दूसरे से चिमट जाएँ" ।
—अबू दाऊद, मालिक

११. हजरत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा . पाँच 'दुआएँ' ऐसी हैं कि वे कबूल कर ली जाती हैं पीड़ित की 'दुआ' जब तक कि वह (जालिम से) बदला न ले ले, 'हज्ज' करने वाले कि 'दुआ' जब तक कि वह घर वापस न आ जाए, 'जिहाद' करने वाले की दुआ जब तक कि 'जिहाद' से निवृत्त न हो जाए, बीमार की दुआ जब तक कि अच्छा न हो जाए (या उस की मृत्यु न हो जाए) भाई की अपने

है । इसलिए 'नमाज़' के पश्चात् 'दुआ' के कबूल होने की अधिक सम्भावना होती है । यह 'दुआ' माँगने का एक उत्तम समय भी होता है । 'फर्ज' अदा करने के बाद बन्दे को अल्लाह का विशेष सामीप्य प्राप्त होता है । अल्लाह की दयालुता उस से अत्यन्त निकट होती है । ऐसे अवसर पर 'दुआ' का कबूल होना एक स्वाभाविक बात है ।

१०. अबू दाऊद की एक रिवायत से मालूम होता है कि वर्षा के समय भी 'दुआ' रद्द नहीं की जाती । मुवत्ता की एक 'रिवायत' में आया है "दो समय ऐसे हैं कि जिन में आकाश के द्वार खुल जाते हैं और बहुत कम ऐसे 'दुआ' माँगने वाले होते हैं जिन की दुआएँ इन अवसरों पर रद्द की जाती हैं, उस 'अज्ञान' के समय जो 'नमाज़' के लिए दी जाए और जब अल्लाह की राह में लोग पक्तबद्ध हो ।"

'रिवायतों' में दुआओं के कबूल होने के जिन समयों का उल्लेख किया गया है, वे विशिष्ट दयालुता के अवतरण के समय हैं । इन समयों में विशेष रूप से लोग अल्लाह की ओर ध्यान देते हैं इसलिए अल्लाह भी इन समयों में माँगी हुई दुआओं को रद्द नहीं करता ।

११. अर्थात् युद्ध छिड़ जाए ।

भाई के हक में परोक्ष दुआ । फिर आप ने कहा कि दुआओं में सब से जल्द कबूल होने वाली भाई की परोक्ष दुआ है । —अल-बैहकी दावातुल कबीर

१२. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : वन्दा सजदे की दशा में अपने 'रव' से सब से अधिक निकट होना है, अतः (सजदे की दशा में) अधिकतम 'दुआ' किया करो^{१२} । —मुस्लिम

१३. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तीन 'दुआएँ' ऐसी हैं जो कबूल हो कर रहती हैं उन के कबूल होने में कोई सन्देह नहीं पीडित की दुआ, मुसाफिर की दुआ, वह दुआ जो वाप अपने बेटे के लिए करे^{१३} । —अबू दाऊद, नसई

१२. 'सजदे' की दशा में वन्दा अल्लाह से सब से अधिक निकट होता है । 'सजदा' सर्वथा सामीप्य है । यह वन्दे के लिए अपने 'रव' से दुआ करने का समय होता है ।

१३. इन दुआओं में हृदय की शुद्धता विद्यमान होती है, ये दुआएँ दिल से निकली हुई होती हैं इसलिए ये सीधे 'अर्श' तक पहुँचती हैं । माता-पिता के दिलों में अपनी श्रीलाद के लिए जो हित-कामना होती है वह विदित है । मुसाफिर और पीडित व्यक्ति के दिल टूटे हुए होते हैं । यह दिल की विनयशीलता अल्लाह की दयालुता को अपनी ओर आकृष्ट करने की बड़ी शक्ति रखती है । पीडित व्यक्ति 'काफिर' ही क्या न हो उसकी सुन ली जाती है । इसीलिए पीडित की आह से वचने की ताकीद की गई है । और कहा गया है कि पीडित की 'दुआ' और अल्लाह के बीच कोई आवरण नहीं होता । फिर पीडित व्यक्ति जिस चीज की याचना करता है अल्लाह की 'सुन्नत' (विधान, नियम) की माँग भी वही होती है । दोनों की एकता अपना नतीजा दिखाकर रहती है ।

एक 'रिवायत' में है कि आपने कहा : तीन आदमी की दुआ रद्द नहीं होती : रोजेदार की 'दुआ' जबकि वह रोज़ा 'इफतार' करे । न्यायशील नायक (हाकिम) की दुआ और पीडित की दुआ । उस (पीडित) की दुआ को अल्लाह बादल के ऊपर उठाता है और उसके लिए आकाश के द्वार खोले जाते हैं और 'रव' कहता है "कसम है मेरी इज्जत (प्रभुत्व) की, मैं अवश्य तेरी सहायता करूँ ।"

एक दूसरी 'रिवायत' से मालूम होता है कि पाँच व्यक्तियों की दुआ विशेष रूप से कबूल होती है : पीडित की दुआ जब तक कि वह बदला न ले

१४. इब्न अम्र बिन आस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : कोई 'दुआ' उस दुआ से ज्यादा कबूल नहीं होती जो अनुपस्थित व्यक्ति किसी अनुपस्थित व्यक्ति के लिए करता है^{१४}।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

१५. ज़बैय बिन कअब रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० जब किसी व्यक्ति के लिए 'दुआ' करते, तो पहले अपने लिए 'दुआ' करते^{१५}।

—तिरमिजी

१६. हजरत जाबिर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम अपने हक में या अपनी औलाद के हक में या अपने सेवकों के हक में या अपने माल और सम्पत्ति के हक में बददुआ (शाप) न करो, कहीं ऐसा न हो कि वह घड़ी 'दुआ' के कबूल होने की हो और तुम्हारी 'दुआ' कबूल हो जाए^{१६}।

—अबू दाऊद

हज्ज करने वाले की दुआ जब तक वह लौटकर वापस न आ जाए, 'जिहाद' करने वाले की दुआ जब तक कि वह शहीद होकर दुनिया से लापता न हो जाए। बीमार की दुआ जब तक कि वह स्वस्थ न हो जाए, और एक भाई की दूसरे भाई के लिए परोक्ष रूप में दुआ। (बैहकी)

१४. मुस्लिम और अबू दाऊद की एक 'रिवायत' में हजरत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा "जब भी कोई मुस्लिम बन्दा अपने भाई के लिए परोक्ष रूप से दुआ करता है तो 'फिरिस्ता' कहता है कि तेरे लिए भी ऐसा ही हो (जैसा तू ने अपने भाई के लिए मांगा)"। परोक्ष रूप से मांगी हुई दुआ में मन की शुद्धता काम कर रही होती है इसलिए ऐसी दुआ में स्वीकृति और बरकत की विशेष गरिमा पाई जाती है।

१५. अल्लाह को बन्दे की विनयशीलता, बन्दगी और दासता अत्यन्त प्रिय है। बन्दगी और विनम्रता का पूर्ण प्रदर्शन इस बात में है कि बन्दा दूसरे के लिए दुआ मांगने से पहले अल्लाह के सामने अपनी मुहताजी और जरूरत पेश करे।

१६. जिसके परिणाम स्वरूप तुम मुसीबत में पड़ जाओ और फिर पश्चात्ताप करो। इसके अतिरिक्त यो भी बददुआ या शाप कोई अच्छी चीज नहीं है। तिरमिजी की एक 'रिवायत' में जो हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है ये शब्द आए हैं : "जिस किसी ने उस पर बददुआ की जिसने उस पर जुल्म किया हो उस ने अपना बदला ले लिया।

१७ हजरत अबू हुररा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा तुम में से कोई मृत्यु की कामना न करे और न शीघ्र मृत्यु आने की 'दुआ' करे क्योंकि जब मृत्यु आ जायेगी तो उस के कर्म का सिलसिला टूट जायेगा और 'ईमान' वाले व्यक्ति के लिए उस की आयु भलाई ही में वृद्धि का कारण बनती है^{१७} । —मुस्लिम

१८ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : मृत्यु की दुआ न करो और न उसकी कामना करो । यदि किसी व्यक्ति के लिए ऐसी 'दुआ' जरूरी ही हो गई हो, तो वह यो कहे : हे अल्लाह ! मुझे जीवित रख जब तक मेरे लिए जीना अच्छा हो और मुझे (दुनिया से) उठा ले जब मरना मेरे लिए अच्छा हो । —नसई

१९ हजरत उमर बिन खत्ताब रजि० कहते हैं कि एक बार मैं ने 'उमरा' के लिए 'नबी' सल्ल० से इजाजत चाही^{१८} । आप ने इजाजत दी और कहा . मेरे छोटे भाई हमें भी अपनी 'दुआ' में सम्मिलित करना और हमें भूल न जाना । हजरत उमर रजि० कहते हैं कि इस बात के बदले सारी दुनिया मुझे दे दी जाए, तो मुझे कोई प्रसन्नता नहीं हो सकती (मुझे आप की यह बात सारी दुनिया से बढ कर प्रिय है) ।

—अबू दाऊद, तिरमिजी

२०. हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० व्यापक दुआएँ पसन्द करते थे और उस के अतिरिक्त को छोड देते थे^{१९} ।

—अबू दाऊद

१७ कुछ लोग दुखो से तग आकर मृत्यु की कामना और 'दुआ' करने लगते हैं, इस से रोका जा रहा है । बुखारी और मुस्लिम की एक 'रिवायत' मे स्पष्ट शब्दो मे कहा गया है "तुम मे से कोई किसी पेश आ जाने वाली तकलीफ के कारण मृत्यु की कामना न करे ।"

मृत्यु की 'दुआ' और कामना करना एक तो 'ईमान' वालो के धैर्य और सहनशीलता के प्रतिकूल है दूसरे जब मनुष्य जीवित है तो वह 'तौबा', मन के झुकाव और अनुकूल कर्मों के द्वारा 'आखिरत' के लिए ज्यादा-से-ज्यादा सामग्री जुटा सकता है जिसका मृत्यु के पश्चात् अवसर नहीं रहता । 'मोमिन' यदि वास्तव मे 'मोमिन' है, तो जीवन की घडियाँ उसके लिए भलाई का ही कारण बनेंगी ।

१८ अर्थात् 'उमरा' करने के लिए मक्का जाने की इजाजत चाही ।

१९ नबी सल्ल० की दुआओ की व्यापकता का अनुमान आपकी उन दुआओ से

२१ हजरत इब्न मसऊद रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० को तीन बार दुआ माँगना और तीन बार शमा याचना करना बहुत पसन्द था^{२०} । —अबू दाऊद

२२. फुजाला बिन अब्दुल्लाह कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने सुना कि एक व्यक्ति 'नमाज' के बाद 'दुआ' माँग रहा है लेकिन उस ने नबी सल्ल० पर 'दरूद' नहीं भेजा । आप ने कहा इस व्यक्ति ने (दुआ माँगने में) जल्दी की । फिर आप ने उस व्यक्ति को बुला कर कहा तुम में से जब कोई व्यक्ति 'नमाज' पढ़ चुके, तो पहले उसे अल्लाह की 'हम्द' और प्रशंसा करनी चाहिए फिर नबी सल्ल० पर 'दरूद' भेजना चाहिए, फिर इस के पश्चात् जो 'दुआ' चाहे माँगे^{२१} ।

—तिरमिजी, अबू दाऊद, नसई, इब्न माजा

२३. हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने 'दुआ' में अपने दोनों हाथों को इतना उठाया कि मैं ने आप की बगलों की सफ़ाई देख ली^{२२} । —बुखारी

किया जा सकता है जो 'हदीस' की किताबों में उल्लिखित हुई है । आपकी कुछ दुआएँ हम आगे दे रहे हैं ।

२० दुआओं को कई बार दोहराने में खास फायदा यह महसूस होता है कि इस प्रकार बन्दे की ओर से अधिक-से-अधिक विनय भाव का प्रदर्शन होता है जो बन्दगी का मूल तत्व है । इसके अतिरिक्त 'दुआ' के शब्दों को एक से अधिक बार दोहराने से दिल अवश्य जवान के साथ हो जाता है और फिर 'दुआ' शक्तिहीन नहीं रहती ।

२१ अर्थात् आपने 'दुआ' माँगने का तरीका बताया कि आदमी दुआ माँगने से पहले अल्लाह की 'हम्द' और गुणगान करे और उसके रसूल पर 'दरूद' और सलाम भेजे उसके बाद अल्लाह से दुआएँ करे । यह तो बहुत अविष्टता की बात होगी कि मुँह खोलते ही कोई भट अपना मतलब पेश करने लग जाए । सभ्यता की बात यह है कि जिस से दुआ माँगी जा रही है पहले उसके गुणों का वर्णन हो और उसका आभार स्वीकार किया जाए फिर इस अवसर पर यह भी आवश्यक है कि आदमी अपने महान् उपकारकर्ता नबी सल्ल० को न भूले । आप से हार्दिक और आत्मिक सम्बन्ध की माँग है कि आप पर 'दरूद' और सलाम भेजा जाए और आपके हक में अल्लाह से 'दुआ' की जाए ।

२२ सल्ल इब्न सअद रजि० की एक 'रिवायत' से मालूम होता है कि आप दोनों

२४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिसे यह बात पसन्द हो कि कठिनाइयों के समय अल्लाह उस की 'दुआ' को कबूल करे तो उसे चाहिए कि आराम और खुशहाली में 'दुआ' माँगे^{२३} ।
---तिरमिजी

२५. हजरत उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब 'दुआ' में दोनों हाथ उठाते थे, तो उन को उस समय तक न तौटाते जब तक अपने मुँह पर न फेर लेते^{२४} ।
---तिरमिजी

हाथों की उँगलियों के सिरो को दोनों मूँड़ों के बराबर करते, फिर 'दुआ' माँगते थे । (बैहकी) ।

२३. जो लोग केवल परेशानी और कठिनाई में अल्लाह से 'दुआ' माँगते हैं उनका अल्लाह से सम्बन्ध कमजोर होता है । इसके विपरीत जो लोग खुशहाली और तगी प्रत्येक दशा में अल्लाह से 'दुआ' करते रहते हैं उनका सम्बन्ध अपने 'रब' से अत्यन्त दृढ होता है । उन्हें अपने 'रब' पर विश्वास और भरोसा भी अधिक होता है इसलिए उनकी दुआएँ दूसरों की दुआओं के मुकाबले में ज्यादा प्रभावकारी होती हैं ।

२४ दूसरी 'रिवायतों' से मालूम होता है कि नबी सल्ल० जब किसी आपत्ति और मुसीबत के समय 'दुआ' करते, तो हाथ फैलाकर माँगते जिस प्रकार कोई भिक्षुक किसी दाता के सामने हाथ फैलाता है । 'दुआ' के बाद हाथों को अपने चेहरे पर फेरने में इस बात की ओर सकेत है कि अल्लाह के समक्ष फैले हुए ये हाथ खाली नहीं लौटते हैं । अल्लाह की दयालुता और बरकतों का कुछ-न-कुछ अंश इन्हे अवश्य प्राप्त हुआ है ।

'हदीस' से यह भी मालूम होता है कि दुआ को 'आमीन' (अर्थात् हे अल्लाह मेरी यह 'दुआ' कबूल कर ।) कह कर समाप्त करना चाहिए ।

नमाज की कुछ दुआएँ

१ हजरत अली रज़ि० से उल्लिखित है कि जब अल्लाह के रसूल सल्ल० 'नमाज' के लिए खड़े होते और एक 'रिवायत' में है कि जब आप नमाज आरम्भ करते तो 'तकबीर' (अल्लाहु अकबर अर्थात् अल्लाह सबसे बड़ा है) कहते और फिर कहते .

وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِي فَطَرَ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضَ حَنِيفًا وَمَا أَنَا مِنَ الْمُشْرِكِينَ
إِنَّ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ، لَا شَرِيكَ لَهُ وَبِذَلِكَ
أُمِرْتُ وَأَنَا مِنَ الْمُسْلِمِينَ. اللَّهُمَّ أَنْتَ الْمَلِكُ لَا إِلَهَ إِلَّا أَنْتَ، أَنْتَ رَبِّي وَأَنَا
عَبْدُكَ ظَلَمْتُ نَفْسِي وَاعْتَرَفْتُ بِذُنُوبِي فَاعْفِرْ لِي ذُنُوبِي جَمِيعًا إِنَّهُ لَا يَغْفِرُ
الدُّنُوبَ إِلَّا أَنْتَ، وَاهْدِنِي لِأَحْسَنِ الْأَخْلَاقِ لَا يَهْدِي لِأَحْسَنِهَا إِلَّا أَنْتَ وَ
اصْرِفْ عَنِّي سَيِّئَهَا لَا يَصْرِفُ عَنِّي سَيِّئَهَا إِلَّا أَنْتَ، لَبَّيْكَ وَسَعْدَيْكَ وَالْخَيْرُ
كُلُّهُ فِي يَدَيْكَ وَالشَّرُّ لَيْسَ إِلَيْكَ أَنَا بِكَ وَإِلَيْكَ تَبَارَكْتَ وَتَعَالَيْتَ
————— اَسْتَغْفِرُكَ وَأَتُوبُ إِلَيْكَ —————

“मैंने एकाग्र होकर अपना मुख उसकी ओर कर लिया जिस ने आकाशों और धरती को पैदा किया और मैं 'मुशिरकों' में से नहीं हूँ” निश्चय ही मेरी नमाज और मेरी कुरबानियाँ और और मेरा जीना और मेरा मरना अल्लाह, सारे संसार के 'रब' के लिए है^२ —उसका कोई शरीक नहीं—मुझे इसी का हुक्म दिया गया है और मैं 'मुस्लिमों' (अल्लाह के आज्ञाकारी लोगों) में से हूँ^३।”

१. दे० सूरा अल-अन आम आयत ७६ ।

२. दे० सूरा अल-अन आम आयत १६२ ।

३ अर्थात् मैं अल्लाह ही को अपना 'इलाह' (पूज्य प्रभु) मानता हूँ, झूठे 'इलाहों' से मेरा कोई नाता नहीं । मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो अल्लाह के सिवा दूसरों को अपना आराध्य बनाते और दूसरों को प्रभुत्व में शरीक ठहराते हैं । 'इलाह' और प्रभु तो वही एक है जो आकाश और धरती सब का सृष्टि-कर्ता है । अतः मेरा सम्पूर्ण जीवन उसी एक प्रभु की सेवा में अर्पण है जो हम सब का स्वामी और पालनकर्ता है । मेरी नमाज और कुरबानियाँ भी उसी के लिए हैं और जीना और मरना भी । जीवन का यह मार्ग मैंने यो ही अटकल से नहीं ग्रहण किया

‘हे अल्लाह ! तू सम्राट है, तेरे सिवा कोई ‘इलाह’ (पूज्य) नहीं, तू मेरा ‘रब’ है, मैं तेरा बन्दा हूँ मैंने अपने-आप पर जुल्म किया है, मुझे अपने गुनाह स्वीकार है, तू मेरे सारे गुनाहों को क्षमा कर दे। निस्सन्देह तेरे सिवा कोई गुनाहो को क्षमा करने वाला नहीं।”

है कि इसमें भूल-चूक की सम्भावना हो, बल्कि इस पथ का ज्ञान हमें स्वयं हमारे स्वामी ने दिया है। उसी के आदेशानुसार हम ने शिर्क (अनेकेश्वरवाद) को छोड़ कर ‘तौहीद’ (एकेश्वरवाद) को अपनाया है।

इस हदीस में नमाज के मुकाबले में ‘जीना’ और कुरबानी के मुकाबले में ‘मरना’ शब्द आया है। इसमें इस बात की ओर संकेत है कि नमाज हमारे जीवन और कुरबानी हमारी मृत्यु की व्याख्या है। नमाज इस बात की प्रतिज्ञा है कि हम अपने सम्पूर्ण जीवन में अल्लाह ही की बन्दगी करेंगे। हमारा पूरा जीवन उसी के आज्ञापालन में व्यतीत होगा। और ‘कुरबानी’ इसका प्रत्यक्ष प्रदर्शन और इस बात की प्रतिज्ञा है कि हमारी जान अल्लाह की राह में कुरबान है। ऋग्वेद में भी आया है : “जिसने जीवन तथा शक्ति दी है तथा जिसकी आज्ञा का सारे देवता (फिरिश्ते) पालन करते हैं, तथा अमरता जिसकी छाया एवं मृत्यु जिसकी दासी है उसके अतिरिक्त इस यज्ञ का बलि किसे अर्पित करे।”

४. इसका अर्थ यह नहीं कि नबी सल्ल० से कोई गुनाह हो गया था जिसके लिए आप अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना कर रहे हैं बल्कि बात यह है कि दोष और कसूर का सम्बन्ध आदमी के अपने पद से होता है। नबी सल्ल० से कोई गुनाह नहीं हुआ फिर भी आप (सल्ल०) अल्लाह के आगे गिड़गिड़ा रहे हैं और उस से क्षमा की प्रार्थनायें कर रहे हैं कि प्रभु ! मेरी खताओं को क्षमा कर मैं खताकार हूँ। आप सल्ल० समझते थे कि जो कुछ हमें करना चाहिये था वह हम से नहीं हो सका, अल्लाह की राह में जितनी कोशिश करनी चाहिये थी वह हम नहीं कर सके। आप अपना तन-तन-धन सब कुछ अल्लाह की राह में लगा कर भी समझ रहे हैं कि अल्लाह का हक हमसे अदा नहीं हुआ। यह बन्दगी अथवा दास्यभाव का सबसे उच्च सोपान है। अल्लाह की महानता और उसकी बड़ाई का जब आदमी को पूरा एहसास हो जाता है तो उसका यही हाल होता है कि सब कुछ करने के बाद भी उसे अपना कसूर ही दीख पड़ता है। अल्लाह के आगे झुक कर मनुष्य वास्तव में अपने को ऊँचा उठाता है। नबी सल्ल० बन्दगी के उच्च पद पर थे, इसका अनुमान भली-भाँति आप की दुआओं और प्रार्थनाओं से होता है। अल्लाह के मार्ग में अपने को थका कर

“और उत्तम स्वभाव की ओर मेरा मार्ग-प्रदर्शन कर तेरे सिवा कोई उस की ओर मेरा पथ-प्रदर्शन करने वाला नहीं है^५। और बुरे स्वभाव को मुझसे दूर रख, तेरे सिवा कोई बुरे स्वभाव को मुझसे दूर नहीं कर सकता^६।”

“मैं तेरी सेवा में उपस्थित हूँ, और तेरा हुकम बजा लाने को तैयार हूँ। भलाई सब-की सब तेरे ही हाथ में है और बुराई तेरी ओर नहीं। मैं तेरे ही बल पर हूँ और तेरी ही ओर रुजू हूँ^७। तू बरकत वाला और उच्च है। मैं तुझ से क्षमा की प्रार्थना करता हूँ और तेरे आगे ‘तौबा’ करता हूँ।”

और जब रुकू में जाते तो कहते .

اللَّهُمَّ لَكَ رَكَعْتُ وَبِكَ أَمْنٌ وَلَكَ أَسْلَمْتُ خَشَعْتُ لَكَ
سَبْعِي وَبَصْرِي وَمِجْنِي وَعَظْمِي وَعَصَبِي

भी समझाते थे कि उमकी वन्दगी का हक अदा नहीं हो रहा है। जब मनुष्य का हृदय इतना बुद्ध और निर्मल हो जाता है जभी अल्लाह उसके बारे में कह सकता है कि अपने बन्दे का हमने सब कुछ क्षमा किया। नबी सल्ल० के बारे में कुरआन ने स्पष्ट शब्दों में बता दिया है कि अल्लाह ने आपका सब कुछ क्षमा कर दिया है (दे० सूरा अल-फतूह आयत २) फिर भी आप अपने रब से ग्राफिल नहीं हुये आपको इसी की चिन्ता लगी रहती थी कि अपने रब से अपने गुनाहों और ईमान वालों के गुनाहों को क्षमा करायें। भक्ति एवं दास्यभाव के सरल एवं कोमल स्वभाव में कितना सौंदर्य पाया जाता है।

दूसरी ‘हदीसों’ में मालूम होता है कि नबी सल्ल० प्रत्येक दिन सत्तर-सत्तर और सौ-सौ बार अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना करते थे।

५ इस्लाम कहते ही इसे है कि आदमी अपने स्वभाव और चरित्र की दृष्टि से उत्तम और पूर्ण बन सके। इस्लाम में मनुष्य से किसी ऐसी बात की माँग नहीं की गई है जो उसकी प्रकृति के विरुद्ध या उसके वास्तविक स्वभाव के प्रतिकूल हो। यदि मनुष्य का स्वभाव ठीक हो और वह विकृत और दूषित न हो तो आदमी अल्लाह का भी हक अदा करेगा और अल्लाह के बन्दों के प्रति उसका जो दायित्व होता है उसे भी वह न भूलेंगा उसका व्यवहार सभी के साथ अच्छा होगा।

६ यदि तेरी कृपा न हो तो अच्छे स्वभाव और शालीनता की रक्षा न हो सके फिर तो मनुष्य का सत्यानाश ही होकर रहे।

७ अर्थात् मेरा भरोसा तुम्हीं पर है और मैं तुम्हें से भलाई ही की आशा रखता हूँ।

“हे अल्लाह ! मैं तेरे आगे झुक गया, तुझ पर ईमान ले आया, और अपने को तेरी सेवा में अर्पण किया । विनम्रतापूर्वक झुक गये तेरे आगे मेरे कान, मेरे नेत्र मेरी मज्जा, मेरी हड्डियाँ और मेरे पट्ठे”

और जब सिर उठाते तो कहते :

اللَّهُمَّ رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ مِلَ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا
وَمِلَا مَا شِئْتَ مِنْ شَيْءٍ بَعْدُ.

“हे अल्लाह ! हमारे ‘रब’ । तेरे ही लिए प्रशंसा (हम्द) है आकाशों और धरती को भर देने वाली”, और इनके सिवा जो तू चाहे उसे भर देने वाली ।”

और जब सजदा करते तो कहते

اللَّهُمَّ لَكَ سَجَدْتُ وَبِكَ آمَنْتُ وَلَكَ أَسْلَمْتُ سَجَدَ وَجْهِي لِلَّذِي
خَلَقَهُ وَصَوَّرَهُ وَشَوَّسَهُ وَبَصَّرَهُ نَبَارَكَ اللَّهُ أَحْسَنُ الْخَالِقِينَ.

“हे अल्लाह ! मैंने तेरे ही लिए सजदा किया मैं तुझ पर ‘ईमान’ लाया और अपने को तेरी सेवा में अर्पण किया । मेरा चेहरा उसके आगे सजदे में गिरा जिसने उसे पैदा किया, उसे रूप प्रदान किया और उसमें कान और नेत्र बनाये । बहुत बरकत वाला है अल्लाह उत्तम सृष्टि कर्ता !”

फिर ‘तशहहुद’ और सलाम के बीच पढ़ते

اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِي مَا قَدَّمْتُ وَمَا أَخَّرْتُ وَمَا أَسْرَرْتُ وَمَا أَعْلَنْتُ وَمَا أَسْرَفْتُ
وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهِ مِنِّي، أَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَأَنْتَ الْمُؤَخِّرُ لَا إِلَهَ إِلَّا أَنْتَ.

८ अर्थात् समस्त प्रशंसा का एकमात्र अधिकारी तू ही है । आकाश और धरती तेरी ही प्रशंसा की ध्वनि से गूँज रहे हैं । तेरी जितनी भी प्रशंसा की जाये वह कम ही है ।

हे अल्लाह ! क्षमा कर दे मेरा वह गुनाह जो मैंने पहले किया और जो बाद में किया, जिसे मैंने छिप कर किया और जिसे मैंने प्रत्यक्षत किया, और जो कुछ मैंने ज्यादाती की और जिसे तू मुझसे ज्यादा जानता है। तू ही आगे बढ़ाने वाला है और तू ही पीछे हटाने वाला है कोई 'इलाह' नहीं सिवाये तेरे^६।
—मुस्लिम

यहाँ यह बात भा सामने रहनी चाहिए कि अल्लाह ने हम पर जो उपकार किये हैं उनके प्रति आभार-प्रदर्शन का उत्तम ढंग भी उसका गुणवान अथवा उसकी प्रशंसा ही है ।

६. इस हदीस में नबी सल्ल० की जिन दुआओं का उल्लेख हुआ है उन पर विचार करने से साफ मालूम होता है कि ये शब्द किसी पवित्र हृदय में ही निकले हैं । ये बोल उस आत्मा के हैं जिसे सत्य का पूर्ण ज्ञान प्राप्त है । जो ईश-प्रेम में डूबी हुई है जिसे यह चिन्ता चैन लेने नहीं देती कि म्नामी की जैसा सेवा करनी चाहिये थी वह सेवा नहीं हो सकी । प्रभु का जैसा गुणगान होना चाहिये था वह हुआ नहीं । इस 'हदीस' से जहाँ नबी सल्ल० की अन्तर्वेदना जाग्रत रूप में लक्षित होती है और हमें ज्ञान होता है कि हमारी मनोभावना और आन्तरिक दशा क्या होनी चाहिये वही इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि इस्लाम में 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) का अर्थ कितना व्यापक है । इस 'हदीस' से पता चलता है कि अल्लाह न केवल यह कि सारे ससार का सृष्टिकर्ता, पालनकर्ता और पूज्य है बल्कि वही हमारा शासक और स्वामी भी है, हमें अपने जीवन में उसी के आदेशों का पालन करना है और यही जीवन की सफलता का एकमात्र साधन है । हृदय की कोमलता और हृदय में पाई जाने वाली प्रेरणाओं का कोई अर्थ ही नहीं बन पाता जब तक कि हम उन्हें अपने वास्तविक स्वामी की सेवा में अर्पण न कर दें । दास्यभाव और भक्ति भावना से ही हमें आत्मिक तृप्ति मिल सकती है । हमारे जीवन को एक ऐसे अमर ज्योति की तलाश है जो उसके पथ को आलोचित कर सके । यह अमर ज्योति अपने को ईश्वर के अर्पण करने के बाद ही प्राप्त होती है । यह हमारी आत्मा का स्वभाव है कि वह अपनी ही सीमा में पूर्ण नहीं हो सकती । उसकी पूर्णता आत्म समर्पण में है । ईश्वर के लिए मन में पाया जाने वाला दास्यभाव या विनयशीलता और दिल का झुकाव, ये जीवन की उच्चतम उमंगों का सार है और प्रिय एवं महान् सत्ता के सामीप्य का वास्तविक अभिप्राय भी । हमारे जीवन में वास्तविक सौन्दर्य इन्हीं से आता है । नबी सल्ल० ने अपनी 'नमाज' में विभिन्न समयों में विभिन्न चीजें पढ़ी हैं । किसी ने उनमें से किसी चीज को अपने लिए

२. हजरत आइशा रज़ि० कहती हैं कि एक रात (मेरी आँख खुली तो) मैं ने अल्लाह के रसूल सल्ल० को बिस्तर पर न पाया, मैं आप को ढूँढने लगी मेरा हाथ आप के पाँव के तलवों पर पड़ा, उस समय आप 'सजदे' में थे और आप के दोनों पाँव खड़े थे (जैसे कि सजदे की दशा में होते हैं) और आप कह रहे थे :

اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِرِضَاكَ مِنْ سَخَطِكَ وَبِعَافِيَّتِكَ مِنْ عُقُوبَتِكَ
وَأَعُوذُ بِكَ مِنْكَ لَا أَحْصِي نَاءً عَلَيْكَ أَنْتَ كَمَا أَتَيْتَ عَلَى نَفْسِكَ

“हे अल्लाह ! मैं तेरी प्रसन्नता से तेरी प्रसन्नता की शरण लेता हूँ, और तेरे दण्ड से तेरी क्षमा की शरण लेता हूँ, और तेरी पकड़ से तेरी शरण लेता हूँ। पूर्ण रूप से तेरी प्रशंसा करने का मुझे सामर्थ्य नहीं, तू वैसा ही है जैसा कि तू ने अपनी प्रशंसा स्वयं की है” । —मुस्लिम

३ हजरत अबू हुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० 'तकवीर' और 'तिलावत' (कुरआन-पाठ) के बीच में कुछ मौन रहते थे। मैंने एक दिन कहा : हे अल्लाह के रसूल ! मेरे माता-पिता आप पर निछावर ! आप 'तकवीर' और कुरआन पाठ के बीच में मौन रह कर क्या पढ़ते हैं ? आप ने कहा मैं यह पढ़ता हूँ

खास कर लिया किसी ने किसी चीज़ को यदि कोई व्यक्ति आपकी सभी दुआओं को याद कर ले और उन्हें बदल-बदल कर पढ़ता रहे तो ज्यादा अच्छा है। जिस प्रकार विभिन्न समयों में लोग कुरआन की विभिन्न 'सूरतों' और 'आयतों' पढ़ते हैं उसी तरह यदि हम अपनी नमाज़ों में विचित्र समयों में नबी सल्ल० की सिखाई हुई विभिन्न दुआएँ भी पढ़ें तो हमारी 'नमाज़ें' और अधिक स्वभाविक 'इबादत' बन सकती है। नमाज़ों के केवल प्रथा मात्र बन जाने का दूसरी बातों के साथ यह भी एक कारण है कि हम ने नबी सल्ल० की दुआओं में से एक पर बस कर लिया है।

लम्बी दुआएँ नबी सल्ल० अधिकतर रात की नफल नमाज़ों में पढ़ते थे।

१० यह 'हदीस' बताती है कि नबी सल्ल० किसी हालत में भी बन्दगी के हक को नहीं भूलते थे। अल्लाह की महानता और बड़ाई की जो माँग होती है उसकी ओर से कभी असावधान नहीं होते थे।

اللَّهُمَّ بَاعِدْ بَيْنِي وَبَيْنَ خَطَايَايَ كَمَا بَاعَدْتَ بَيْنَ الْمَسْرِقِ وَالْمَغْرِبِ اللَّهُمَّ عَفِّ عَنِّي مِنَ الْخَطَايَا كَمَا عَفَّيْتَ السَّوْبَةَ الْإِنْتِصُصَ مِنَ الدَّيْسِ اللَّهُمَّ اغْسِلْ خَطَايَايَ بِالْمَاءِ وَالتَّلْجِ وَالسَّارِدِ

“हे^{११} अल्लाह ! मेरे और मेरी खताओं के बीच इतनी दूरी कर दे जितनी दूरी तू ने पूर्व और पश्चिम के बीच रखी है^{१२} । हे अल्लाह ! मुझे खताओं से इस तरह पाक कर दे जिस तरह सफेद कपड़े को मैल से पाक किया जाता है । हे अल्लाह ! मेरी खताओं को पानी, बर्फ और ओले से धो दे^{१३}।”

—बुखारी, मुस्लिम

४ हजरत आइशा रजि० कहती हैं कि नबी सल्ल० ‘नमाज’ में यह दुआ करते थे

११ नबी सल्ल० ने अपनी ‘नमाज’ में विभिन्न समयों में विभिन्न दुआएँ पढ़ी हैं, साधारणतया लोग ‘तकबीर’ और ‘किरअत’ (कुरआन-पाठ) के बीच

سُبْحَانَكَ اللَّهُمَّ وَبِحَمْدِكَ وَتَسْلُكُ اسْمُكَ وَتَعَالَى حَدُّكَ وَلَا إِلَهَ إِلَّا عِيَّاكَ

पढ़ते हैं “हम तेरी ‘तसबीह’ करते हैं हे अल्लाह ! तेरी ‘हम्द’ (प्रशंसा) के साथ, बरकत वाला है तेरा नाम उच्च है तेरा गौरव, तेरे सिवा कोई ‘इलाह’ (इष्ट पूज्य) नहीं ।”

यह भी उन्हीं ‘ज़िक्रो’ में से है जो नबी सल्ल० अपनी ‘नमाज’ में पढ़ते थे, यदि कोई आपकी पढ़ी हुई सारी दुआएँ याद कर ले और उन्हें बदल-बदल कर पढ़े तो ज्यादा अच्छा है ।

१२ अर्थात् जिस तरह पूर्व से पश्चिम दूर है और पश्चिम से पूर्व, उसी प्रकार मुझे भी खताओं से दूर रख ।

१३. अर्थात् जिस तरह कपड़े का मैल विभिन्न चीजों से धोया जाता है । उसे पानी से धोते हैं, पानी मौजूद न हो तो बर्फ से और वह न मिले तो ओले से धोते हैं उसी तरह तू मेरी खताओं और गुनाहों को अपनी विभिन्न प्रकार की रहमतों और दयालुताओं से धो दे । इसका यह अर्थ भी निकलता है कि खताओं से आदमी ‘जहन्नम’ का भागी बनता है और ‘जहन्नम’ में आग और आँच है, तो

اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَأَعُوذُكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَسِيحِ
الدَّخَالِ وَأَعُوذُكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْأَوِ الْمَمَاتِ. اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُكَ
مِنَ الْمَأْنَمِ وَمِنَ الْمَغْرَمِ

“हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह लेता हूँ कब्र की यातना से, मसीह दज्जाल के फितने से और जीवन और मृत्यु के सभी फितने से । हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह लेता हूँ गुनाह और कर्ज से” ।

५ हजरत अबू वक्र रजि० कहते हैं कि मैं ने कहा हे अल्लाह के रसूल ! मुझे कोई दुआ सिखाइए जिस को मैं अपनी ‘नमाज’ में माँगू । आप ने कहा कहो :

اللَّهُمَّ إِنِّي طَلَبْتُ نَفْسِي طَلَبًا كَبِيرًا وَلَا تَغْفِرُ الذَّنُوبَ إِلَّا أَنْتَ
وَاعْفِرْ لِي مَغْفِرَةً مِنْ عِنْدِكَ وَارْحَمْنِي إِنَّكَ أَنْتَ الْغَفُورُ الرَّحِيمُ

“हे अल्लाह ! मैंने अपने-आप पर बड़ा जुल्म किया, गुनाहों को तेरे सिवा कोई क्षमा करने वाला नहीं, अपना विशेष कृपा से मुझे क्षमा

इसी आँच के सम्बन्ध से पानी बर्फ और ओले का जिक्र किया गया । अर्थात् मेरी खताओं को अपनी रहमतों से धो दे जो ‘जहन्नम’ की आग को ठढी कर कर देने वाली हैं ।

१४ मुस्लिम की एक ‘रिवायत’ में जिसके रिवायत करने वाले हजरत अबू हुरैरा रजि० हैं, नबी सल्ल० ने कहा है “जब तुम में से कोई आखिरी ‘तशहहुद’ पढ़कर निवृत्त हो, तो उसको चार चीजों से अल्लाह की पनाह माँगनी चाहिए ‘जहन्नम’ की यातना से, कब्र की यातना से, ज़िन्दगी और मौत के फितनों से और ‘दज्जाल’ की बुराई से, इस रिवायत से मालूम हुआ कि इस दुआ के पढ़ने का खास मौका नमाज के अन्तिम ‘कअदा’ में तशहहुद के बाद सलाम से पहले है । यह दुआ अत्यन्त व्यापक अर्थ लिये हुये है । इस में दुनिया और ‘आखिरत’ के समस्त दुखों और आपत्तियों से सुरक्षा की अल्लाह से प्रार्थना की गई है ।

कर दे और मुझ पर दया कर, तू क्षमा शील और दयावान है^{१५}।

६ शहाद बिन औस रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० 'नमाज़' में भी कहते थे •

اللَّهُمَّ إِنِّي أَسْأَلُكَ السَّيِّئَاتِ فِي الْأَمْرِ وَالْعَزِيمَةِ عَلَى الرَّشْدِ
أَسْأَلُكَ سُكْرًا نَعْمَتِكَ وَحُسْنَ عِبَادَتِكَ وَأَسْأَلُكَ قَلْبًا سَلِيمًا
وَلِسَانًا صَادِقًا وَأَسْأَلُكَ مِنْ خَيْرِ مَا تَعْلَمُ وَأَعُوْذُ بِكَ مِنْ شَرِّ مَا تَعْلَمُ
وَأَسْتَغْفِرُكَ لِمَا تَعْلَمُ.

“हे अल्लाह ! मैं माँगता हूँ तुझ से ‘दीन’ (धर्म) में स्थिरता और भलाई और मार्ग-दर्शन पर दृढ़ता, साहस और माँगता हूँ तुझ से तेरी (प्रदान की हुई) नेमतों के प्रति कृतज्ञता व्यञ्जित और तेरी अच्छी ‘इबादत’ और माँगता हूँ तुझ से चगा दिल, सच्ची ज़बान और माँगता हूँ तुझ से वह भलाई जिसका तुझे ज्ञान है और तेरी पनाह लेता हूँ उस बुराई से जिसका तुझे ज्ञान है और क्षमा याचना करता हूँ तुझ से उन गुनाहों की जो तू जानता है ।
—नसई

७ अब्दुल्लाह इब्न मसऊद रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० ‘तहशहूद’ के बाद हमें यह दुआ सिखाते थे

اَللّٰهُمَّ عَلَيَّ الْخَيْرِ بَيْنَ فُلُوْبِنَا وَاصْلِحْ ذَاتَ بَيْنِنَا وَاهْدِنَا سُبُلَ
السَّلَامِ وَنَجِّنَا مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّوْرِ وَجَنِّبْنَا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَ
بَطْنَ وَبَارِكْ لَنَا فِيْ اَسْمَاعِنَا وَابْصَارِنَا وَفُلُوْبِنَا وَآثَرِنَا وَاجْنِبْنَا
وَتُبَّ عَلَيْنَا اِنَّكَ اَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيْمُ وَاجْعَلْنَا شَاكِرِيْنَ لِنِعْمَتِكَ
قَابِلِيْهَا وَآتِنَهَا عَلَيْنَا

१५. नमाज़ में ‘दुआ’ का खास मौका ‘नमाज़’ के अन्त में सलाम से पहले है इसलिए अवश्य ही हज़रत अबू बक्र रज़ि० ने इसी मौके के लिए ‘दुआ’ सिखाने के

“जोड़ दे हे अल्लाह हमारे दिलों को भलाई पर और हमारे आपस के सम्बन्धों को ठीक कर । और हमें सलामती की राहों पर चला और हमें अँधेरों से मुक्ति दे कर प्रकाश की ओर ले आ और खुले-छिपे अश्लील कर्मों से हमें दूर रख और हमारे कानों, हमारी आँखों, हमारे दिलों, हमारी पत्नियाँ और हमारी सन्तति में बरकत दे और हम पर कृपा दृष्टि बनाये रख, तू बड़ा कृपा करने वाला दयावान है । हमें तू अपनी नेमतों और एहसानों के प्रति कृतज्ञ और उचित रूप से उनका स्वागत करने वाला बना और नेमते हम पर पूरी कर” ।
—अबू दाऊद ।

८ हजरत जैद बिन अरक्रम रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० हर ‘नमाज़’ के बाद कहते थे

اللَّهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ أَنَا شَرِيبُ أَنْتَ الرَّبُّ وَحْدَكَ لَا شَرِيكَ لَكَ . اللَّهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ أَنَا شَرِيبُ أَنْ مُحَمَّدًا عَبْدُكَ وَرَسُولُكَ اللَّهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ أَنَا شَرِيبُ أَنْ الْعِبَادَ كُلَّهُمْ إِخْوَةٌ . اللَّهُمَّ رَبَّنَا وَرَبَّ كُلِّ شَيْءٍ اجْعَلْنِي مُخْلِصًا لَكَ وَأَهْلِي فِي كُلِّ سَاعَةٍ مِنَ الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ بَآذِ الْجَلَالِ وَالْإِكْرَامِ اسْمِعْ وَاسْتَجِبْ اللَّهُ أَكْثَرُ الْأَكْثَرِ
اللَّهُ نُورُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ .

लिए नबी सल्ल० से निवेदन किया होगा और नबी सल्ल० ने इसी मौक़े के लिए उन्हें यह दुआ सिखाई होगी । इस दुआ से मालूम हुआ कि आदमी अल्लाह का कितना ही आज्ञाकारी क्यों न हो उसे अपने आपको खताकार ही समझना चाहिए । और अल्लाह से क्षमा याचना करते रहना चाहिए । बन्दा कितनी ही बन्दगी क्यों न करे बन्दगी का हक़ कहाँ अदा होता है ।

१६ अर्थात् हम तुझ से हर भलाई के अभिलाषी हैं । हमें बाह्य एवं आन्तरिक हर प्रकार की नेमते प्रदान कर, हमें अपना कृतज्ञ बन्दा बना । ऐसा न हो कि तेरी ओर से तो उपकारों की वर्षा हो और हमारी ओर से कृतघ्नता का प्रदर्शन हो । इससे बढ़कर अन्धता और पथ-भ्रष्टता की बात और क्या हो सकती है कि बन्दा अपने वास्तविक उपकारकर्ता के उपकारों को भुला दे और उसके हक़ का कुछ आदर न करे ।

“हे अल्लाह ! हे हमारे ‘रब’ ! और हर चीज के ‘रब’ ! मैं इस बात की गवाही देता हूँ कि अकेला तू ही ‘रब’ है, तेरा कोई सहभागी नहीं, हे अल्लाह ! हमारे ‘रब’ ! और हर चीज के ‘रब’ ! मैं गवाह हूँ सब बन्दे भाई-भाई है। हे अल्लाह ! हमारे ‘रब’ ! और हर चीज के ‘रब’ ! मुझे और मेरे घर वालों को दुनिया और ‘आखिरत’ की एक-एक घड़ी के लिए (सदैव के लिए) अपना विश्वासपात्र और बफादार बना ले^{१७}, हे प्रतापवान और उदार ! मेरी प्रार्थना सुन ले और स्वीकार कर, अल्लाह सब से बड़ा है, अल्लाह आकाशों और धरती का प्रकाश है^{१८} ।—अबू दाऊद

६ मुआज बिन जबल रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा . हे मुआज ! अल्लाह की कसम मुझे तुम से प्रेम है मैं तुम्हें वसीयत करता हूँ^{१९} कि हर ‘नमाज’ के बाद यह दुआ अवश्य पढ़ो

اللَّهُمَّ اَعِنِّي عَلَى ذِكْرِكَ وَشُكْرِكَ وَحُسْنِ عِبَادَتِكَ.

‘हे अल्लाह ! अपने ‘जिक्र’ और अपनी अच्छी ‘इबादत’ के सिल-सिले में मेरी सहायता कर^{२०} ।’
—अहमद, अबूदाऊद, नसई

१७ अर्थात् तू हमें अपना, केवल अपना और हमेशा के लिए अपना बना ले । मेरी निष्ठा और वफादारी में कभी कोई अन्तर न हो ।

१८ अर्थात् सम्पूर्ण विश्व अल्लाह ही के प्रकाश से प्रकाशमान और स्थिर है । इस विस्तृत विश्व में जहाँ-वहीं कोई सुन्दरता और प्रकाश पाया जाता है वह किसी भी रूप में क्यों न हो उसका वास्तविक स्रोत और उद्गम अल्लाह के अतिरिक्त और कोई नहीं है ।
—सूरा अन-नूर ३५

१९ अर्थात् विशेष रूप से मैं उस प्रेम के कारण जो मुझे तुम से है तुम को यह वसीयत और ताकीद करता हूँ ।

२०. यह ‘दुआ’ अत्यन्त सक्षिप्त होने के बावजूद बड़ी महत्व पूर्ण और सुन्दर है । इस दुआ में अल्लाह से उन चीजों की प्रार्थना की गई है जो जीवन का सार हैं, जिन के बिना जीवन का कोई अर्थ नहीं रहता और न उसमें कोई आकर्षण शेष रहता है ।

एक रिवायत में “हे अल्लाह !” के बजाय “हे रब !” आया है ।

१० हज़रत सौवान रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० सलाम फेरते तो तीन बार क्षमा याचना करते^{२१} फिर प्रार्थना करते

اللَّهُمَّ أَنْتَ السَّلَامُ وَمِنْكَ السَّلَامُ سَبَّارٌ كَثٌ وَتَعَالَتْ
يَا ذَا الْحَلَالِ وَالْإِكْرَامِ

“हे अल्लाह ! तू ‘सलाम’ (शान्ति-स्वरूप) है और तेरी ही ओर सलामती है। तू वरकत वाला और उच्च है, हे प्रतापवान उदारता वाले।”

—मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजा

११ हज़रत मुगीरा बिन शोबा रज़ि० कहते हैं कि नबी सल्ल० हर फर्ज ‘नमाज़’ के बाद ‘दुआ’ करते थे

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيكَ لَهُ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلَى
كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ اللَّهُمَّ لَا مَا بَعْدَ لِمَا أَعْطَيْتَ وَلَا مُعْطَى لِمَا مَعَتْ وَ
لَا نَفْعَ دَا الْجَدِّ مِنْكَ الْجَدُّ.

‘अल्लाह के सिवा कोई ‘इलाह’ (पूज्य) नहीं, वह अकेला है कोई उसका सहभागी नहीं, उसी का राज्य है। वही प्रशसा का अधिकारी है और उसे हर चीज का सामर्थ्य प्राप्त है। हे अल्लाह ! तू जो-कुछ प्रदान करे उसे कोई रोक नहीं सकता, और जिस चीज के न देने का तू फैसला करे उसे कोई दे नहीं सकता। और किसी प्रतापशाली को उसका प्रताप तेरे मुकाबले में कुछ लाभदायक नहीं हो सकता^{२२}। —बुखारी, मुस्लिम

२१ अर्थात् तीन बार “मैं क्षमा की इच्छुक हूँ” कहते।

२२ अमीर मुआविया रज़ि० ने हज़रत मुगीरा बिन शोबा रज़ि० को पत्र लिखा था कि आप मुझे कोई ऐसी बात लिखें जो आप ने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुनी हो इसके उत्तर में हज़रत मुगीरा रज़ि० ने यह दुआ लिख कर भेजी। एक रावी (उल्लेख कर्त्ता) का बयान है कि मैंने अमीर को मिनबर पर बैठकर लोगों को इस दुआ की शिक्षा देते और उन्हें इसकी ओर प्रेरित करते सुना।

१२. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अब्बास रज़ि० कहते हैं कि जब नबी सल्ल० रात में 'तहज्जुद' पढ़ने खड़े होते, तो यह 'दुआ' करते

اللَّهُمَّ لَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ قَيُّمُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَنْ فِيهِنَّ وَلَكَ الْحَمْدُ
أَنْتَ نُورُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَنْ فِيهِنَّ، وَلَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ مَلِكُ السَّمَوَاتِ
وَالْأَرْضِ وَمَنْ فِيهِنَّ، وَلَكَ الْحَمْدُ أَنْتَ الْحَقُّ وَوَعْدُكَ الْحَقُّ وَلِقَاءُكَ
حَقٌّ وَقَوْلُكَ حَقٌّ وَالْجَنَّةُ حَقٌّ وَالنَّارُ حَقٌّ وَالنَّبِيُّونَ حَقٌّ وَ مُحَمَّدٌ حَقٌّ وَ
السَّاعَةُ حَقٌّ، اللَّهُمَّ لَكَ أَسْلَمْتُ وَبِكَ أَمَنْتُ وَعَلَيْكَ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْكَ
أَنْبَتُ وَبِكَ خَاصَمْتُ وَإِلَيْكَ حَاكَمْتُ فَاعْفِرْ لِي مَا قَدَّمْتُ وَمَا أَخَّرْتُ
وَمَا أَسْرَرْتُ وَمَا أَعْلَنْتُ وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهِ مِنِّي، أَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَأَنْتَ
الْمُؤَخِّرُ لَا إِلَهَ إِلَّا أَنْتَ وَلَا إِلَهَ غَيْرُكَ.

“हे अल्लाह ! प्रशंसा (हम्द) तेरे ही लिए है, तू ही कायम रखने वाला है आकाशों और धरती का और उन सब का जो उन में है और प्रशंसा का अधिकारी तू ही है । तू ही प्रकाश है आकाशों और धरती का और उन सबका जो उनमें हैं और प्रशंसा तेरे ही लिए है, तू ही आकाशों और धरती का सम्राट है और जो उनमें हैं उन सबका । प्रशंसा तेरे ही लिए है, तू हक (सत्य) है, तेरा वादा हक है, (मरने के पश्चात्) तेरी मुलाक़ात हक है, तेरा कहा हुआ हक है, 'जन्नत' हक है, ('जहन्नम' की) आग हक है, सारे 'नबी' हक हैं, मुहम्मद हक हैं, और वह घड़ी ('कियामत') हक है । हे अल्लाह ! मैंने अपने-आप को तुझे सौंपा, तुझ पर 'ईमान' लाया, तुझ पर भरोसा किया, तेरी ओर रुजू किया, और तेरे ही बल पर मैं (सत्य के विरोधियों से) लड़ा और तुझ से ही फैसला चाहता हूँ । अतः तू क्षमा कर दे वे सब गुनाह जो मुझ से पहले हुये हो और जो पीछे हुये, जो मैंने छिप कर किये, जो मैंने खुल कर किये और जिन के बारे में तू मुझ से अधिक जानता है, तू ही आगे बढ़ाने वाला है, और तू ही पीछे डालने वाला है । तू ही 'इलाह' (पूज्य) है तेरे

सिवा कोई 'इलाह' नहीं^{२३} ।

—बुखारी, मुस्लिम

१३. हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ि० का बयान है कि नबी सल्ल० 'दुआ' किया करते थे

اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِي خَطِيئَتِي وَجَهْلِي وَإِسْرَافِي فِي أَمْرِي وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهِ مِنِّي، اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِي جِدَائِي وَهَرَبِي وَخَطَأِي وَعَمْدِي وَكُلَّ ذَلِكَ عِنْدِي، اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِي مَا قَدَّمْتُ وَمَا أَخَّرْتُ وَمَا أَسْرَرْتُ وَمَا أَعْلَنْتُ وَمَا أَنْتَ أَعْلَمُ بِهِ مِنِّي، أَنْتَ الْمُقَدِّمُ وَأَنْتَ الْمُؤَخِّرُ وَأَنْتَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ.

“हे अल्लाह ! क्षमा कर मेरी खता को, नादानी को, कामों में ज्यादाती को और उस (गुनाह) को जिस का ज्ञान तुझे मुझ से बढ़ कर है। हे अल्लाह ! क्षमा कर मेरी उस खता को जिसे मैंने गभीरता से किया हो और जिस को मैंने हँसी-मजाक में किया हो और जिस को भूल-चूक में किया हो और जिसे जानते-बूझते किया हो और ये सब खताएँ मेरे पास हैं। हे अल्लाह ! क्षमा कर वे सब गुनाह जो मैंने छिप कर किये और जो मैंने खुल कर किये, और जिस के बारे में तू मुझ से ज्यादा जानता है। तू ही आगे बढ़ाने वाला है, और तू ही पीछे डालने वाला है, और तुझे हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है

—बुखारी, मुस्लिम

२३. इमाम नबी बयान करते हैं कि नबी सल्ल० की रात की दुआओं की विशेषता यह होती थी कि आप उसमें अल्लाह के हको को स्वीकार करते, उसके मन्चा होने का इकरार करते और उसकी शुभ सूचनाओं और डराओं को याद करते, मृत्यु के पश्चात् जीवित होने को और 'जन्नत' और 'जहन्नम' के सत्य होने की पुष्टि करते थे। इस तरह की एक दुआ मोजम कबीर और मुस्तदरक में हज़रत ज़ैद बिन साबित से भी उल्लिखित है। हज़रत ज़ैद रज़ि० का बयान है कि नबी सल्ल० ने यह 'दुआ' सिखाई थी और उन्हें हुक्म दिया था कि उसे अपने घर वालों को सिखाओ और प्रत्येक दिन उन्हें इस की ओर प्रेरित करते रहो।

प्रातः समय और सायंकाल की दुआएँ

१ हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० अपने 'असहाब' (साथियो) को सिखाते थे कि जब तुम में से किसी की सुबह हो, तो उसे कहना चाहिए

اللَّهُمَّ بِكَ أَصْبَحْنَا وَبِكَ آمَسْنَا وَبِكَ نَحْيَا وَبِكَ نَمُوتُ وَالْبَيْتُ الْمَسْكُونُ

“हे अल्लाह तेरी सहायता से हम ने सुबह की, और तेरी ही सहायता से हम ने शाम की, और तेरी ही सहायता से हम जीवित हैं और तेरे ही आदेश के अधीन हमारी मृत्यु है और तेरी ही ओर पहुँचना है।” और इसी तरह जब वह शाम करे तो कहे .

اللَّهُمَّ بِكَ آمَسْنَا وَبِكَ أَصْبَحْنَا وَبِكَ نَحْيَا وَبِكَ نَمُوتُ وَالْبَيْتُ الْمَسْكُونُ

“हे अल्लाह ! तेरी ही मदद से हम ने शाम की, और तेरी ही सुबह की और तेरी ही सहायता से हमने सहायता से हम जीवित हैं और फैसले के अधीन हमारी मृत्यु तेरे ही है और तेरे ही पास फिर उठ कर हाजिर होना है” ।
—अबू दारुद, तिरमिजी

- १ मानव-जीवन से सुबह और शाम का आना बड़ा महत्व रखता है । समय की विभिन्नता जीवन को उकताहट से छुटकारा दिलाती है । मानव को अल्लाह की इस कृपा की अनुभूति होनी आवश्यक है । फिर इसी के साथ ध्यान को इस ओर भी जाना चाहिए कि सुबह और शाम की तरह हमारे जीवन की सुबह और शाम भी अल्लाह के हुक्म के अधीन है । एक दिन दुनिया से हमें प्रस्थान करना है और अल्लाह के पास हाजिर होना है, कहने के लिए तो यह एक छोटी सी दुआ है जिसे सुबह और शाम पढ़ने की शिक्षा नबी सल्ल० ने दी है, लेकिन देखिए किस प्रकार जीवन की वास्तविकताओं को इस में समेट लिया गया है । जीवन को सही दिशा पर रखने के लिए इस दुआ का पढ़ते रहना एक उत्तम उपाय है । यही विशेषता नबी सल्ल० की सिखाई हुई सभी दुआओं में पाई जाती है ।

२ हजरत हुजैफा रजि० का वयान है कि नबी सल्ल० जब रात को अपने बिछीने पर जाने तो अपना हाथ कपोल के नीचे रख लेते, फिर कहते

يَا سَيِّدَ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ

“हे अल्लाह ! तेरे ही नाम से मेरी मृत्यु भी सम्बद्ध है और जीवन भी” और जब सो कर उठते तो कहते

الْحَمْدُ لِلَّهِ الَّذِي أَحْيَانَا بَعْدَ أَمَاتِنَا. اللَّهُمَّ اكْسِرْ

“हम्द’ (प्रशंसा) उस अल्लाह के लिए है जिस ने हमें मृत्यु में अस्न लेने के पश्चात् हमें जीवन दिया और उसी की ओर (मरने के पश्चात्) दोबारा उठ कर उपस्थित होना है” । —बुखारी, मुस्लिम

३ हजरत बरा बिन आजिब कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुझ से कहा जब तुम अपने बिस्तर पर जाओ तो पहले ‘वजू करो’ जिस तरह ‘नमाज’ के लिए ‘वजू’ करते हो, फिर अपने दाहिने पहलू लेट जाओ और कहो :

२ अर्थात् जिस तरह अल्लाह हमें सोने में जगाता है उसी तरह वह हमें मृत्यु के पश्चात् दोबारा जीवन प्रदान करेगा । हमें उसके समक्ष अपने भले-बुरे कर्मों के साथ उपस्थित होना है । मृत्यु और निद्रा में बड़ा साम्य पाया जाता है, इसीलिए निद्रा को मृत्यु कहा गया ।

बुखारी और मुस्लिम में हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि हर रात को नबी सल्ल० जब बिस्तर पर आते, तो दोनों हथेलियों को जोड़ लेते और सूरा अल-इखलास, अल-फलक और अन-नास पढ़कर उनको फूँकने और अपने शरीर पर जहाँ तक हो सकता उन्हें फेर लिया करते थे । इसका आरम्भ सिर, चेहरे और शरीर के अगले भाग से करते । ऐसा आप तीन बार करते थे

اللَّهُمَّ أَسَلْتُ نَفْسِي إِلَيْكَ وَوَجَّهْتُ وَجْهِي إِلَيْكَ فَوَضَّعْتُ أَمْرِي
إِلَيْكَ وَالْجَائِزُ ظَهَرِي إِلَيْكَ رَهْبَةً وَرَغْبَةً إِلَيْكَ لَا مَلْجَأَ وَلَا مَنَاجَا
مِنْكَ إِلَّا إِلَيْكَ، أَمَنْتُ بِكِتَابِكَ الَّذِي أَنْزَلْتَ وَنَبِيِّكَ الَّذِي أَرْسَلْتَ.

“हे अल्लाह मैंने अपने-आप को बिल्कुल आपके समर्पण कर दिया, अपने मुख को आप की ओर प्रवृत्त किया, अपने सब कार्य आप को सौंपे, आप ही को अपना पृष्ठपोषक बनाया, आप से डरते और आशा करते हुए। आप के सिवा कोई शरणगार और बचाव नहीं जहाँ आप (की पकड़) से बच कर कोई निकल सके। मैं ‘ईमान’ लाया आप की किताब पर जिसे आप ने अपने ‘नबी’ पर उतारा और (‘ईमान’ लाया) आप के ‘नबी’ पर जिसे आपने भेजा”।^३ सो यदि तुम्हारी मृत्यु आ गई तो वह ‘दीने फितरत’ (स्वाभाविक धर्म) पर होगी। इन शब्दों को (सोने से पहले) अपना अन्तिम बोल बनाओ^४। —बुखारी, मुस्लिम

३ नबी सल्ल० की इस शिक्षा ने आराम और विश्राम को भी किस प्रकार ‘नमाज’ की तरह पवित्र बना दिया। नमाज के लिए ‘वजू’ जरूरी है। बिस्तर पर जाने के लिए ‘वजू’ की शिक्षा दी जा रही है। जिस तरह ‘नमाज’ की आत्मा और वास्तविकता अल्लाह की ओर प्रवृत्ति और अल्लाह की याद है उसी तरह इस दुआ में निद्रा और विश्राम को भी अल्लाह की ओर ध्यान और आत्म समर्पण से अभिव्यजित किया गया है।

४ किसी व्यक्ति ने यदि अपने-आप को एक अल्लाह के आगे डाल दिया, और उसी को अपना संरक्षक और शरणदाता बना लिया और उसके उतारे हुए मार्ग-दर्शन पर ‘ईमान’ लाया, वो वास्तव में उसने उस ‘दीन’ (धर्म) को अपना लिया जो सही और उम का स्वाभाविक ‘दीन’ है। जिससे विमुख होना वास्तव में अपनी प्रकृति और स्वभाव से विमुख होना है। इस ‘हदीस’ में जिस ‘दुआ’ की शिक्षा दी गई है उसमें उस हृदय-स्थिति और मनोभाव का प्रदर्शन हुआ है जो एक ईश-भक्त व्यक्ति का मनोभाव होना चाहिए। यदि उसी पर मनुष्य की मृत्यु आ जाए तो निश्चय ही उसकी मृत्यु उसके अपने स्वाभाविक धर्म पर होगी।

मजलिस की दुआ

१. हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर कहते हैं कि बहुत कम ऐसा होता था कि नबी सल्ल० किसी मजलिस से उठे और अपने 'असहाब' (साथियों), के लिए यह दुआ न करे

اللَّهُمَّ اٰمِسْ لَنَا مِنْ خَشْيَتِكَ مَا تَحُولُ بِهِ بَيْنَنَا وَبَيْنَ مَعْصِيَتِكَ
وَمِنْ طَاعَتِكَ مَا نُبْلِغُنَا بِهِ جَنَّتِكَ وَمِنْ الْيَقِينِ مَا نُهَوِّنُ بِهِ عَلَيْنَا مَصِيبًا
الدُّنْيَا وَمَصِيبًا سَمَاعِنَا وَاَبْصَارِنَا وَقُوَّتِنَا مَا أَحْيَيْتَنَا وَاجْعَلْهُ
الْوَارِثَ مِنَّا وَاجْعَلْ نَارَنَا عَلَىٰ مَنْ ظَلَمْنَا وَانصُرْنَا عَلَىٰ مَنْ عَادَانَا
وَلَا تَجْعَلْ مَصِيبَنَا فِي دِينِنَا وَلَا تَحْغِلِ الدُّنْيَا أَكْثَرَ هَمِّينَا وَلَا مَبْلَغَ
عِلْمِنَا وَلَا نَسْطِطْ عَلَيْنَا مَنْ لَا يَرْحَمُنَا.

“हे अल्लाह हमें नसीब कर अपना डर इतना कि जिस से तू हमारे और अपनी अवज्ञा के बीच आड़े आये और अपना आज्ञापालन इनना कि जिस से तू हमें अपनी 'जन्नत' में पहुँचा दे। और विश्वास इनना कि जिस से तू दुनिया की मुसीबतों को हमारे लिए तुच्छ बना दे। और जब तक हमें जोवित रख हमें हमारे काना, हमारी आँखों, और हमारी शक्ति से सम्पन्न रख और इन्हे अन्त तक बाकी रख। और हमारे बदला लेने के आवेश के रुख को उन्हीं की ओर रख जो हम पर जुल्म करे। और जो हमारी दुश्मनी के तत्पर हों उस पर हमें प्रभुत्व प्रदान कर और हमारे 'दोन' (घर्म) को हानि पहुँचाने वाली चीजों से हमें सुरक्षित रख और मसार को हमारी सब से बड़ी चिन्ता और हमारे ज्ञान की पहुँच न बना। और हम पर ऐसे व्यक्ति को नियुक्त कर जो हम पर दया न करे”^५।

—तिरमिजी

५ एक 'रिवायत' में है कि जब अल्लाह के रसूल सल्ल० किसी मजलिस से उठने का इरादा करते तो अन्त में कहते थे

“महिमावान है तू हे अल्लाह ! 'हम्द' (प्रशंसा) है तेरे लिए। मैं गवाही देता हूँ कि तेरे सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं। मैं तुझ से क्षमा का इच्छुक

सफर की दुआ

१ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० जब सफर पर जाते समय ऊँट पर सवार होते, तो तीन बार “अल्लाहु अकबर” (अल्लाह सब से बड़ा है)१ कहते, इस के पश्चात् कहते

سُبْحَانَ الَّذِي سَخَّرَ لَنَا هَذَا وَمَا كُنَّا لَهُ مُقْرِنِينَ وَإِنَّا إِلَىٰ رَبِّنَا لَسُقُوتُونَ
 اللَّهُمَّ إِنَّا نَسْأَلُكَ فِي سَفَرِنَا هَذَا الْبَرَّ وَالنَّفْوَیَّ وَمِنَ الْعَمَلِ مَا تَرْضَىٰ اللَّهُمَّ
 هَوِّنْ عَلَيْنَا سَفَرَنَا هَذَا وَاطْوِلْ لَنَا بَعْدَهُ اللَّهُمَّ أَبِّ الصَّاحِبِ فِي السَّفَرِ وَ
 الْحَلِيفَةِ فِي الْأَهْلِ وَالْمَالِ اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنْ وَعَاءِ السَّفَرِ وَكَآلَةِ
 الْمُنْظَرِ وَسُوءِ الْمُنْقَلَبِ فِي الْمَالِ وَالْأَهْلِ

‘महिमावान है वह जिस ने हमारे लिए इस (सवारी) को काम में लगाया, और हम इसे तब से करने की शक्ति नहीं रखते थे, और निश्चय ही हम अपने ‘रब’ को ओर लौटने वाले हैं’। हे अल्लाह ! अपने इस सफर में हम तुझ से नेकी, ‘तकवा’ (ईश-भय) और उस कर्म के लिए प्रार्थना करते हैं जो तेरी प्रसन्नता का कारण हो। हे अल्लाह ! इस सफर को हमारे लिए आसान कर दे और इस की दूरी को कम कर दे। हे अल्लाह ! तू ही इस सफर में साथी है और हमारे पीछे तू ही हमारे घर

हैं और तेरे आगे ‘तौबा’ करता हूँ। किसी मजलिस से उठने पर आदमी यदि लम्बी दुआ न पढ़ सके तो यह संक्षिप्त दुआ ही पढ़ ले। नबी सल्ल० की मिखाई हुई दुआएँ यदि कोई समझ बूझ कर पढ़े, तो वे उसके जीवन को बदलने और सुधारने के लिए काफी है।

१ इसमें इस बात की ओर सकेत मिलता है कि मनुष्य को हर ऊँचाई पर अल्लाह की उच्चता और उसकी बड़ाई का ध्यान होना चाहिए। ऊँट क्या इस समय तो कितने ही लोग तेज़ रफ्तार वायुयान में मवार होकर आकाश में तैरते हैं लेकिन ऐसे लोग बहुत कम हैं जो इस अवसर पर अल्लाह की बड़ाई और उसकी उच्चता का स्मरण करते हों।

२ अर्थान् जिस प्रकार आज हम सफर कर रहे हैं उसी तरह एक दिन हमें एक

वाला और माल के लिए हमारा न्यानापन्न है” । हे अल्लाह ! मैं सफर की मशकत और कष्ट में और दुर्गम दृश्य से और इस बात से कि लौट कर मैं माल और परिवार को बुरी दशा में देखूँ तेरी पनाह चाहता हूँ” ।

और जब आप (सफर से) वापस होते उस समय भी ये शब्द कहते और इन में इतना और बढ़ाते

اَسْتَوْدِعُ اللهَ دِيْنَكَ وَاَمَالَتَكَ وَاَحْرَعَمَلِكَ

‘हम वापस लौटने वाले हैं, ‘तोबा’ करने वाले हैं, ‘उबादत’ करने वाले हैं और अपने ‘रव’ को ‘हम्द’ (प्रशंसा) करने वाले हैं’ । —मुस्लिम

२ इब्न उमर ने उल्लिखित है कि ‘नबी’ सल्ल० जब किसी व्यक्ति को रुखसत करते तो कहते

اَسْتَوْدِعُ اللهَ دِيْنَكَ وَاَمَالَتَكَ وَاَحْرَعَمَلِكَ

हमारा नफर भी करना है और यह है ममार में अल्लाह की ओर हमारा प्रन्वान । इस महत्वपूर्ण नफर से आदमी को किसी हानत में भी गाफिल नहीं रहना चाहिए ।

३. अर्थात् तू ही उनका मरक्षक है ।

४ हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० का वयान है कि नबी सल्ल० जब किसी युद्ध या ‘हज्ज’ और ‘उमरा’ के सफर से वापस होते तो मार्ग के प्रत्येक उच्च स्थान पर से गुजरते हुए तीन बार ‘अल्लाहु अकबर (अल्लाह सबसे बड़ा है) कहते और यह ‘दुआ’ पढ़ते थे (बुखारी, मुस्लिम,) । हजरत अबू हुरैरा रजि० कहते हैं कि एक व्यक्ति ने आकर कहा हे अल्लाह के रसूल ! मैं सफर के लिए बिल्कुल तैयार हूँ । आप मुझे कुछ वसीयत कर दे । आप ने कहा । ‘अल्लाह का डर रखना और जब किसी ऊँचे स्थान पर चढ़ना तो ‘तकवीर’ (ईश महानता का वर्णन) कहना ।” —अहमद, तिरमिजी

कअब बिन मालिक की एक ‘रिवायत’ से मालूम होता है कि आप (सफर से) वापस आकर मस्जिद में दो ‘रकअत’ ‘नफल’ नमाज अदा करते ।

“मैंने तुम्हारे ‘दीन’ (धर्म), तुम्हारी अमानत, और तुम्हारे अन्तिम कर्म को अल्लाह को सौंपा”^५ ।

—तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्नमाजा

खाने की दुआ

३, हजरत अबू सईद रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० जब कुछ खाते-पीते तो कहते

الْحَمْدُ لِلَّهِ الَّذِي أَطْعَمَنَا وَسَقَانَا وَجَعَلَنَا مِنَ الْمُسْلِمِينَ.

करते तो उस का हाथ अपने हाथ में ले लेते और उस समय तक न छोड़ते जब तक स्वयं वह व्यक्ति न छोड़ता । (तिरमिजी)

सफर में साधारणतया आदमी बेइतमिनानी की हालत में होता है, लेकिन सफर में नबी सल्ल० की जो हृदय-स्थिति होती थी उसका अनुमान किसी हद तक उन शब्दों के द्वारा लगाया जा सकता है जो सफर में आपके मुख से निकले हैं ।

हजरत इब्न उमर रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० जब किसी लड़ाई से या ‘हज्ज’ या ‘उमरा’ से वापस होते, तो हर ऊँची ज़मीन पर तीन बार ‘अल्लाहु अकबर’ (अल्लाह सबसे बड़ा है) कहते और फिर कहते •

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيكَ لَهُ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ وَهُوَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ اِشْتَوْنَا عَابِدُونَ سَاجِدُونَ لِرَبِّكَ حَامِدُونَ صَدَقَ اللَّهُ وَعْدَهُ

وَنَصَرَ عَبْدَهُ وَحَرَّمَ الْآخِرَاتِ وَحْدَهُ . १

“अल्लाह के सिवा कोई ‘इलाह’ (पूज्य) नहीं वह एक है उसका कोई सह-भागी नहीं । राज्य उसी का है, प्रशसाएँ उसी के लिए हैं और उसे हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है । हम लौटने वाले हैं, ‘तौबा’ करने वाले हैं, ‘इबादत’ (बन्दगी) करने वाले हैं ‘सजदा’ करने वाले हैं, अपने ‘रब’ की ‘हम्द’ (प्रशसा) करने वाले हैं । अल्लाह ने अपना वादा सच्चा कर दिखाया और अपने बन्दे की मदद की और अकेले ही ज़त्थे को परास्त किया ।”

५ एक ‘रिवायत’ में आता है कि नबी सल्ल० जब किसी मुसाफिर को रुखसत

“हम्द” (प्रशंसा) का अधिकारी वह अल्लाह है जिस ने हमें खिलाया-पिलाया और हमें मुसलमानों में से बनाया। —अबू दाऊद, तिरमिजी
दुःख के समय की दुआ

४. इब्न अब्बास रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० परेशानी (दुःख) के समय यह कहते थे

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ الْعَظِيمُ الْحَلِيمُ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيمِ
لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ رَبُّ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ رَبُّ الْعَرْشِ الْكَبِيرِ

“कोई ‘इलाह’ (इष्ट पूज्य) नहीं अल्लाह के सिवा जो महिमावान और सहनशील है, कोई ‘इलाह’ (इष्ट पूज्य) नहीं अल्लाह के सिवा जो महान् सिंहासन का स्वामी है, कोई ‘इलाह’ नहीं अल्लाह के सिवा जो आकाशों का ‘रब’ है, धरती का ‘रब’ है और प्रतिष्ठित सिंहासन का स्वामी है”।
—बुखारी, मुस्लिम

कुछ व्यापक दुआएँ

१ हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० अधिकतर यह ‘दुआ’ करते थे

اللَّهُمَّ آيَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْآخِرَةِ حَسَنَةً وَقَبَا عَذَابِ النَّاسِ

६ जाहरी नेमतों के साथ इस सबसे बड़ी आत्मिक नेमत को भी याद किया कि अल्लाह ने ‘इस्लाम’ जैसी दीलत प्रदान की है। इस नेमत पर अल्लाह के आगे कृतज्ञता युक्त भावनाएँ भरे रूप में प्रस्तुत न की जाएँ, तो यह सब से बड़ी अकृतज्ञता है।

७ गुम और परेशानी की हालत में अल्लाह की बड़ाई और महिमा को याद करना समयानुकूल है। एक दूसरी ‘रिवायत’ में भी आया है कि जब आपको कोई चिन्ता होती थी, तो आकाश की ओर सिर उठाकर कहते

مُسَبِّحَانَ اللَّهِ الْعَظِيمِ

‘सुबहानल्लाहिल अजीम’ “महिमावान है अल्लाह बड़ाई वाला।” और जब दुआ और रुदन में तल्लीनता बढ़ जाती तो कहते - या हैयो या क्रय्यूम

يَا حَيُّ يَا قَيُّوْمُ

‘हे ‘सजीव ! हे चिरस्थायी !’

“हे अल्लाह ! हमें प्रदान कर दुनिया में भलाई और ‘आखिरत’ में भलाई और हमें (‘जहन्नम’ की) आग की यातना से बचा” ।

—बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद

२. हज़रत अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० कहते थे .

اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنَ الْعَجْزِ وَالْكَسَلِ وَالْجُبْنِ وَالْهَمِّ وَالْبُخْلِ وَ
أَعُوذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَأَعُوذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْيَا وَالْمَمَاتِ .

“हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह लेता हूँ असमर्थता और आलस्य, कायरता और अत्यन्त बुढ़ापे, और निर्बलता से और कृपणता से और तेरी पनाह माँगता हूँ कब्र की यातना से और तेरी पनाह माँगता हूँ जीवन और मृत्यु के फितने से” ।

—बुखारी, मुस्लिम

३. हज़रत अबू हुरैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० कहा करते थे :

اللَّهُمَّ أَصْلِحْ لِي فِي دِينِي الَّذِي هُوَ عِصْمَةُ أَمْرِي وَأَصْلِحْ لِي دُنْيَايَ الَّتِي
مِنْهَا مَعَاشِي وَأَصْلِحْ لِي آخِرَتِي الَّتِي فِيهَا مَعَادِي وَأَجْعَلِ الْحَيَاةَ
نَبِيَا دَهًا لِي فِي كُلِّ خَيْرٍ وَأَجْعَلِ الْمَوْتَ رَاحَةً لِي مِنْ شَرٍّ .

—तिरमिज़ी, । एक ‘रिवायत’ में है कि विकलता और दुख की दशा में कहते :
या हैयो या कय्यूमो बिरहमते का अस्तगीसो’

يَا حَيُّ يَا قَيُّوْمُ بِرَحْمَتِكَ أَسْتَغِيْثُ

“हे सजीव ! हे जगत को सम्भालने वाले तेरी रहमत (दयालुता) से मेरी क्रूरियाद है ।”

१. यह दुआ कुरआन मजीद से उद्धृत है । (दे० सूरा अल-बकरा) २०१ । यह ‘दुआ’ अत्यन्त व्यापक है इसमें दुनिया और आखिरत की समस्त भलाइयों को समेट लिया ‘चा है’ ।

२. मतलब यह है कि हर फितना और परीक्षा में तू मेरी सहायता कर और मुझे

“हे अल्लाह ! ठीक कर ‘दीन’ (धर्म) को जो मेरे कामों और मामलों के संरक्षक है”, और ठीक कर मेरी दुनिया को जिस में मेरा रहना-सहना, और ठीक कर मेरी ‘आखिरत’ को जहाँ मुझे लौट कर जाना है, और मेरे जीवन को हर नेकी में बढ़ा और मृत्यु के लिए प्रत्येक बुखई से आराम का कारण बना^३ ।” —मुस्लिम

४. हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० नबी सल्ल० से ‘ख़िवायत’ करते हैं कि आप कहा करते थे :

اللَّهُمَّ ارْزُقْنِي أَسْئَلَكَ الْهُدَى وَالسُّبُلَ وَالْعَفَافَ وَالْغِنَى.

“हे अल्लाह ! मैं तुझ से माँगता हूँ मार्ग-दर्शन, ‘तकवा’ (ईश-भय) समय और निरपेक्षता ।” —मुस्लिम

५. हज़रत इब्न अब्बास रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ‘दुआ’ किया करते थे :

رَبِّ اَعِنِّي وَلَا تُعِنِّ عَلَيَّ وَاَنْصُرْنِي وَلَا تَنْصُرْ عَلَيَّ وَاْمْكُرْ لِي وَلَا تَمْكُرْ عَلَيَّ وَاَهْدِنِي وَكَسِرِ الْهُدَى لِي وَاَنْصُرْنِي عَلَيَّ مَنْ بَعَى عَلَيَّ رَبِّ اجْعَلْنِي لَكَ شَاكِرًا لَكَ ذَاكِرًا لَكَ رَاهِبًا لَكَ مِطْوَاعًا لَكَ خُشِيًّا اِلَيْكَ اَوْاهًا مُنِيبًا رَبِّ تَقَبَّلْ تَوْبَتِي وَاغْسِلْ حَوْبَتِي وَاَجِبْ دَعْوَتِي وَثَبِّتْ حُجَّتِي وَ سَدِّدْ لِسَانِي وَاَهْدِ قَلْبِي وَاَسْأَلُ سَخِيْمَةَ صَدْرِي.

गुमराही और विनाश से बचा ।

३. ‘दीन’ के द्वारा हमारे अस्तित्व, माल आदि हर चीज़ की रक्षा होती है । हमारा ‘दीन’ स्वयं हमारा रक्षक है । ‘दीन’ ने हर एक के हक निर्धारित किये हैं । ‘दीन’ (धर्म) के ठीक होने से आदमी हर प्रकार की तबाही और बरबादी से सुरक्षित रहता है । किसी का यह कथन कितना सही है कि जितनी रक्षा मुसलमानों ने ‘इस्लाम’ की की है उससे कहीं अधिक स्वयं इस्लाम ने उनकी की है ।

४ अर्थात् मेरी मृत्यु मेरे हक मे अच्छी सिद्ध हो । मृत्यु मेरे लिए हर प्रकार के

“‘रब’ ! मेरी सहायता कर, मेरे विरुद्ध किसी की सहायता न कर, मुझे विजय प्रदान कर और मेरे विरुद्ध किसी को विजय प्रदान न कर, मेरे लिए गुप्त उपाय कर और मेरे विरुद्ध किसी के लिए गुप्त उपाय न कर, और मुझे मार्ग दिखा और सीधे मार्ग पर चलना मेरे लिए सुगम कर दे, और उस के विरुद्ध मेरी सहायता कर जिस ने मुझ पर ज्यादाती की है। ‘रब’ बना मुझे अपना कृतज्ञ, अपना जिक्र करने वाला, अपने से (‘रब’ से) डरने वाला, अपना आज्ञाकारी, अपना त्रिनम्रता प्रकट करने वाला और अधिक आगे भरने वाला और प्रवृत्त होने वाला। ‘रब’ ! मेरी ‘तौबा’ कबूल कर, मेरे गुनाह को धो डाल, मेरी दुआ कबूल कर, मेरी दलील और हुज्जत (तर्क) को बाकी रख, मेरी जिह्वा को ठीक रख और मेरे हृदय को मार्ग दिखा और मेरे सीने (दिल) की कालिमा को निकाल दे”।

—तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्नमाज

६. इब्न अम्र बिन आस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० दुआ करते थे

اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُ بِكَ مِنْ فَلَیْ لَا یَحْشَعُ وَمِنْ دُعَآءٍ لَا یَسْمَعُ وَمِنْ نَفْسٍ لَا تَسْمَعُ وَمِنْ عِلْمٍ لَا تَعْلَمُ اَعُوْذُ بِكَ مِنْ هٰؤُلَاءِ الْاَرْبَعِ

“हे अल्लाह ! मैं तेरी पनाह माँगता हूँ ऐसे दिल से जिस में विनम्रता न हो और ऐसी ‘दुआ’ से जो सुनी न जाए और ऐसे जी से जो तृप्त न हो और ऐसे ज्ञान से जो लाभदायक न हो, मैं इन चारों से तेरी पनाह माँगता हूँ”।

—तिरमिजी, नसई

७. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० कहते थे

फितनो और बुराइयो से बचने का साधन बने और वह हमें शाश्वत सुख और शान्ति से परिचित करा सके।

५. अर्थात् मुझ में वे समस्त बाह्य और आंतरिक गुण पैदा कर दे जो तुम्हें प्रिय हैं। मुझे जीवन की वह सभी पावनता प्राप्त हो जो तेरे आज्ञाकारी बन्दो की सबसे मूल्यवान निधि है।

६. मालूम हुआ कि सफल व्यक्ति वही है जो व्यर्थ बातों से दूर रहता है। जो व्यर्थ

اللَّهُمَّ إِنِّي أَعُوذُ بِكَ مِنَ الشَّقَاكِ وَالنِّفَاقِ وَسُوءِ الْإِخْلَاقِ.

“हे अल्लाह ! मैं तेरो पनाह माँगता हूँ विरोध से, ‘निफाक’ (कपट नीति) से और बुरे स्वभाव से” । —अबू दाऊद, नसई

८. हजरत अबू दरदा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा ताउद, उन पर (अल्लाह की) दयालुता और सलामती हो की दुआओ में से एक दुआ यह है :

اللَّهُمَّ إِنِّي أَسْأَلُكَ حُبَّكَ وَحُبَّ مَنْ يُحِبُّكَ وَالْعَمَلَ الَّذِي يَنْبَغُنِي
حَتَّى أَكُونَ أَحَدَ حُبِّكَ أَحَبَّ إِلَيَّ مِنْ نَفْسِي وَمَالِي وَ
أَهْلِي وَمِنْ الْمَاءِ الْبَارِدِ.

“हे अल्लाह ! मैं इच्छुक हूँ तेरे प्रेम का जो तुझ में प्रेम करते हैं और हम उस कर्म का जो मुझे तेरे प्रेम तक पहुँचाए, हे अल्लाह ! तू अपने प्रेम को मेरे लिए प्रिय बना दे मेरे अपने प्राण से बढ़ कर, मेरे माल में बढ़ कर, मेरे अपने लोगो से बढ़ कर और शीतल जल से बढ़ कर”

कामो में अपना समय नष्ट नहीं करता । जिसका दिल नर्म, अल्लाह के आगे झुका हुआ हो । जिम का मन अधीर न हो । जो धैर्यवान और अल्लाह के फैसले पर राजी हो ।

- ७ वन्दे का अन्नाह से नाता केवल शासक और शामिन का नहीं है बल्कि अन्नाह की सत्ता वन्दे के लिए एक पूज्य और प्रिय और अभीष्ट भत्ता भी है । कुरआन में भी ‘ईमान’ वालो की यह विशेषता बयान की गई है कि वे अल्लाह से अत्यन्त प्रेम करते हैं । कहा गया “और जो ईमान वाले है उन्हें तो सबसे बढ़कर प्रेम अल्लाह ही से होता है” (अल-बकरा आयत १६५) । एक दूसरी जगह कहा गया है “हे ईमान लाने वालो ! जो कोई तुम में से अपने दोन’ से फिरेगा तो (वह जान ले कि) जल्द ही अल्लाह ऐसे लोगो को लायेगा जिनसे उसे प्रेम होगा और उससे उन्हें प्रेम होगा । वे ‘ईमान’ वालो के लिए नअर और ‘काफ़िरो’ के लिए सल्लत होंगे । अल्लाह की राह में ‘जिहाद’ करेंगे और किसी मलामत करने वाले की मलामत से न डरेंगे” (अल-माइदा आयत ५८) । ‘ईमान’ और इस्लामी शिक्षा का अन्तिम अभिप्राय अल्लाह से प्रेम है । यही

और नबी सल्ल० जब हज़रत दाऊद अ० की चर्चा करते थे तो कहते थे कि वे बहुत ही बड़े इबादत गुज़ार (उपासक) व्यक्ति थे।

—तिरमिज़ी

६. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न यज़ीद खतमी कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० दुआ करते थे :

اللَّهُمَّ ارْزُقْنِي حُبَّكَ وَحُبَّ مَنْ يَنْفَعُنِي حُبُّهُ عِنْدَكَ، اللَّهُمَّ مَا
رَزَقْتَنِي مِمَّا أُحِبُّ فَاجْعَلْهُ قُوَّةً لِي فِيمَا نَحِبُّ، اللَّهُمَّ مَا رَوَيْتَ
عَنِّي مِمَّا أُحِبُّ فَاجْعَلْهُ قَرَأَةً لِي فِيمَا تَحِبُّ.

“हे अल्लाह ! मुझे अपना प्रेम और उस व्यक्ति का प्रेम प्रदान

वह चीज़ है जिसे इंजील और कुरआन में “जीवन” कहा गया है। हम हृदय से अल्लाह से प्रेम करें जीवन वास्तव में यही है। हज़रत मसीह अ० से पूछा गया कि तौरात के आदेश में सबसे उच्च आदेश क्या है, कहा . “अल्लाह का प्रेम सम्पूर्ण हृदय सम्पूर्ण प्राण, सम्पूर्ण बुद्धि से करना यही सबसे प्रथम और महान आदेश है” (मत्ता : २२)।

इंजील बरनबास में है . “तो उस समय पूहुन्ना ने कहा हम ने जान लिया कि ‘ईमान’ क्या है ? अल्लाह से प्रेम करना” (८६ : १६)।

- ८ ज़बूर में उनके जो गीत दिये गये हैं उनसे भी यही बात जाहिर होती है कि हज़रत दाऊद अ० को अपने ‘रब’ से अत्यन्त प्रेम था और वे बड़े इबादत-गुज़ार थे। उदाहरणार्थ ज़बूर (*Psalms*) के इन वाक्यों को देखिए “हे खुदा तू मेरा खुदा है। मैं दिल से तेरा इच्छुक हूँगा। शुष्क और प्यासी भूमि में जहाँ पानी नहीं मेरी जान तेरी प्यासी और मेरा शरीर तेरा लालायित है। इस तरह मैंने मरुदिस में तुझ पर निगाह की ताकि तेरे सामर्थ्य और वैभव को देखूँ क्योंकि तेरी अनुकम्पा जीवन से उत्तम है। मेरे होठ तेरी प्रशंसा करेंगे। इसी तरह मैं जीवन भर तुझे मुबारक कहूँगा। और तेरा नाम लेकर अपने हाथ उठाया करूँगा। मेरे प्राण मानो मज्जा और चरबी से तृप्त होंगे और मेरा मुख प्रसन्न होठों से तेरी प्रशंसा करेगा जब मैं बिस्तर पर तुझे याद करूँगा और रात के एक-एक पहर में तुझ पर ध्यान करूँगा” (ज़बूर ६२ : १—६)।

कर जिस का प्रेम तेरी दृष्टि में मेरे लिए लाभदायक हो। हे अल्लाह ! जो कुछ तू ने मुझे मेरी प्रिय चीजों में से दिया है उसे अपने प्रिय कार्यों में मेरा सहायक बना दे। हे अल्लाह ! जो कुछ तू ने मेरी प्रिय चीजों में से रोक रखा है उसे तू मेरी हक में उन चीजों के लिए निवृत्ति का कारण बना जो तुझे प्रिय हैं^६। —तिरमिजी

१०. अता बिन साइब रजि० अपने पिता से 'रिवायत' करते हैं कि उन्होंने ने कहा कि अम्मार बिन यासिर ने हमें 'नमाज' पढाई। उन्होंने ने 'नमाज' को सक्षिप्त किया। कुछ लोगो ने उन से कहा कि तुम ने 'नमाज' हल्की पढी और 'नमाज' को सक्षिप्त कर दिया। उन्होंने ने कहा मुझे इस से कुछ भी हानि नही क्योंकि मैंने इस 'नमाज' में ऐसी दुआएँ की हैं जिन को मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से सुना है फिर जब वे खड़े हुए तो लोगों में से एक व्यक्ति उन के पीछे हो लिया और वह मेरे पिता थे अम्मार रजि० से वह दुआ पूछी और फिर आये और लोगों को उस से सूचित किया (वह दुआ यह है)।

اللَّهُمَّ عَلِّمْنَا الْغَيْبَ وَقَدْ رَزَقْنَاكَ عَلَى الْخَلْقِ أَحْيَيْنِي مَا عَلِمْتَ الْحَيَاةَ خَيْرًا لِي وَتَوَفَّنِي إِذَا عَلِمْتَ الْوَفَاةَ خَيْرًا لِي. اللَّهُمَّ وَأَسْأَلُكَ خَسْبَكَ فِي الْعَبِّ وَالسَّهَادَةِ وَأَسْأَلُكَ كَلِمَةَ الْحَقِّ فِي الرِّصَا وَالْغَضَبِ وَأَسْأَلُكَ الْفَصْدَ فِي الْفَقْرِ وَالْغِنَى وَأَسْأَلُكَ نَعِيمًا لَا يَنْفَدُ وَأَسْأَلُكَ فُرْقَةً لَا تَنْقَطِعُ وَأَسْأَلُكَ الرِّضَاءَ بَعْدَ الْقَضَاءِ وَأَسْأَلُكَ بَرَادَ الْعَبْسِ بَعْدَ الْمَوْتِ وَأَسْأَلُكَ لَذَّةَ النَّظَرِ إِلَى وَجْهِكَ وَالشَّوْقَ إِلَى لِقَائِكَ فِي غَيْرِ ضَرَاءٍ مُضِرَّةٍ وَلَا فِتْنَةٍ مُضِلَّةٍ. اللَّهُمَّ رَبَّنَا بِنِيتِكَ الْإِيمَانَ وَاجْعَلْنَا هَذَاهُ مَهْدِيَيْنِ.

“हे अल्लाह ! अपने परोक्ष ज्ञान के वसीले से और अपने सामर्थ्य के वसीले से जो तुझे अपनी सृष्टि पर प्राप्त है मुझे उस समय तक जीवित रख जब तक जीवन तेरे ज्ञान में मेरे लिए अच्छा हो और मुझे मृत्यु दे जब

६ अर्थात् इस दूरी का यह प्रभाव हो कि तेरी इच्छाएँ मुझे प्रिय हो जाएँ। जो तुम्हें पसन्द है वही मैं भी पसन्द करने लगूँ।

फिर मृत्यु तेरे ज्ञान में मेरे लिए अच्छी हो। हे अल्लाह ! मैं तुझ से खुले-छिपे हर दशा में तेरा भय माँगता हूँ और मैं तुझ से इस का सवाल करता हूँ कि मुझे सत्य बात कहने का सुयोग प्राप्त हो खुशी में भी और क्रोध की दशा में भी। और मैं तुझ से इस का इच्छुक हूँ कि मध्य मार्ग (सन्तुलित-नीति) पर क्रायम रहूँ निर्धनता में भी और सम्पन्न एवं निरपेक्ष अवस्था में भी^{१०}। और मैं तुझ से ऐसी नेमत का इच्छुक हूँ जो कभी समाप्त न हो और मैं तुझ से तेरे फँसले के बाद (तेरी) रजामन्दी का इच्छुक हूँ,^{११} मैं तुझ से मृत्यु के पश्चात् जावन-शोतलता का इच्छुक हूँ^{१२}, तुझ से दर्शनानन्द का इच्छुक हूँ कि तेरे मुख की ओर देखूँ और मुझे तुझ से मिलने की ऐसी उत्कट अभिलाषा है जो हानिकारक न हो और न फ़ितना में डालने वाला है^{१३}, हे अल्लाह ! हमें 'ईमान' की शोभा से सुशोभित कर^{१४} और हमें उन लोगों की सीधी राह पर लगा जो (सीधा) मार्ग पाये हुये हैं'।

१०. अर्थात् तगी और खुशहाली प्रत्येक अवस्था में मेरा जीवन सन्तुलित रहे। मैं अनुचित नीति किसी दशा में भी न अपनाऊँ।

११. अर्थात् तेरे हुक्म और फँसले पर मैं हर हाल में राजी रहूँ। वास्तव में जिसकी मुझे इच्छा हो वह तेरी खुशी और प्रसन्नता के अतिरिक्त कुछ और न हो।

१२. अर्थात् मृत्यु के पश्चात् वह आराम और आनन्द मेरे हिस्से में आए जिस का तू ने अपने 'ईमान' वाले बन्दों से वादा किया है।

१३. अर्थात् यह उत्कट अभिलाषा ऐसा न हो कि मुझे किसी फ़ितना और गुमराही में डाल दे और मैं तेरे आदेशों से गाफ़िल हो जाऊँ। मुझे वह उत्सुकता और इच्छा चाहिए जिस के कारण मैं ज्यादा से ज्यादा तेरे आदेशों का पालन कर सकूँ।

१४. मालूम हुआ कि 'ईमान' जीवन की शोभा है। 'ईमान' को एक नीरस और शुष्क धारणा वही लोग कह सकते हैं जिन्होंने कभी 'ईमान' का रसास्वादन न किया हो। कुरआन से भी इसकी पुष्टि होती है कि 'ईमान' दिलो की शोभा और सौन्दर्य है। एक जगह कहा गया है 'लेकिन अल्लाह ने तुम्हारे लिए 'ईमान' को प्रिय बना दिया और उसे तुम्हारे दिलो में रचा-बसा दिया और 'कुफ़' और पापाचार और अवज्ञा को तुम्हारे लिए अप्रिय बना दिया। यही लोग सीधे मार्ग पर चलने वाले हैं' (सूरा ४६ आयत ६)।

तीबा और क्षमा याचना

१. इब्न रज्जब घसकन मुननो रजि० ने उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल नन्ब० ने मर्रा भेदे दिन पर एक पन्दा-ना घा जाता है यहाँ तक कि में जन्माह में अन्धेक दिन नो रात क्षमा का प्रायना करता है । मुस्लिम और अबूदाऊद उनके गरी (उन्नेगकर्ना) हैं । मुस्लिम की एक रिवायत में है कि आने का 'तीबा' करा, में अपने 'रब' के आगे अल्लाह को कसम घाने इरात घाने और उन्व 'रब' तो मेरा में नी बार 'तीबा' करना है ।

२. इब्न रज्जब घसकन मुननो रजि० बयान करते हैं कि मेंने अल्लाह के रसूल नन्ब० को मने मुना . अल्लाह की कसम में दिन में सत्तर बार से अधिक अल्लाह में क्षमायाचना करना है और उम को मेवा में 'तीबा' करना है ।
—बुखारी

३. इब्न मज्जर रजि० ने उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि जिसने हा •

أَسْغَفِرُ اللَّهَ الَّذِي لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ وَأَتُوبُ إِلَيْهِ

"में अल्लाह में क्षमा चाहता है कि उमकेमिवा तोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नही वह नजीब एवं निरन्ध्याय है और उमोके आगे 'तीबा' करता है ।"
उमके गुनाह क्षमा कर दिये गये यद्यपि वह बुद्ध से (पीठ फेर कर) भागा हो ।
—अबूदाऊद, तिरमिजी, हाकिम

१. इनमें मान्य हुआ कि 'तीबा' और क्षमायाचना में आत्मा की घुटन और मनिता दूर करने की शक्ति पाई जाती है । मनुष्य कितनी ही कोशिश क्यों न करे नाभारिक गम्पकों और कार्यों में मन की गिति एक समान नही रहती । 'तीबा' और क्षमायाचना द्वारा क्षतिपूर्ति की जाती है और वह वादल जो हृदय-आकाश पर आ जाता है छट जाता है ।

२. मनुष्य जितना ज्यादा अल्लाह का करीबी होता है उतना ही अधिक उसे अल्लाह की बढाई का घ्यान रहता है और उतना ही अधिक उसे अपने में ब्रुटियाँ दिखाई देती हैं । अपने समस्त अच्छे कर्मों और शुद्ध हृदयता के बावजूद वह अल्लाह के सामने अपने को खताकार ही समझता है ।

३. सच्चे दिल से जब कोई व्यक्ति अपने गुनाहों पर लज्जित होता और अल्लाह से

४. हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कसम है उसकी जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं यदि तुम गुनाह न करो तो सर्वोच्च अल्लाह तुम्हें विनष्ट कर दे और (तुम्हारी जगह) ऐसे लोगों को पैदा करे जो गुनाह करके अल्लाह से क्षमा चाहें और अल्लाह उन्हें क्षमा कर दे* । —मुस्लिम

क्षमा चाहता है, तो अल्लाह उसके बड़े-से-बड़े गुनाहों को भी क्षमा कर देता है। बल्कि एक 'हदीस' में तो यहाँ तक कहा गया है। "गुनाह से 'तौबा' करने वाला ऐसा है जैसे उसने कोई गुनाह किया ही न था।" (तिरमिज़ी, बैहकी शोबुल ईमान)। गुनहगारों के लिए इस 'हदीस' में बड़ी तसल्ली है, यहाँ यह बात भूलनी नहीं चाहिए कि यदि किसी ने किसी व्यक्ति को किसी प्रकार की हानि पहुँचाई है तो 'तौबा' और क्षमायाचना के साथ-साथ उसने जो हानि पहुँचाई है उसकी क्षतिपूर्ति की भी पूरी-पूरी कोशिश करे।

४ इस 'हदीस' से ऊपर की 'हदीस' की पुष्टि होती है। इस 'हदीस' में उन लोगों के लिए बड़ी तसल्ली है जो मानवीय दुर्बलता के कारण कोई गुनाह कर बैठें हो और अपने किये पर पश्चाताप कर रहे हों। इस 'हदीस' से विदित होता है कि मनुष्य के लिए उच्चता की बात यह नहीं है कि उससे कभी गुनाह न हो, यह विशेषता तो अल्लाह ने 'फिरिस्तो' को प्रदान की है। मनुष्य के लिए जो चीज़ अभीष्ट है वह यह कि जब कभी उस से कोई भूल हो जाए तो उसे पछतावा हो और वह जल्द-से-जल्द सँभल जाए। उससे जो हानि स्वयं उसे या दूसरों को पहुँची हो वह उसकी क्षतिपूर्ति की कोशिश करे और अपने सुधारने में लग जाए। मनुष्य यदि अपनी गलती पर सँभल जाता है और अपने को सुधारने और अपनी आत्मा को निखारने की कोशिश में लगा रहता है तो यह इस बात का प्रमाण है कि उसकी मूल प्रकृति गन्दी नहीं हुई है। गन्दगी यदि लगी है तो ऊपर ही लगी है। मनुष्य के लिए विनाश और मृत्यु तो यह है कि उसकी प्रकृति और उसके स्वभाव को ही गन्दगी लग जाए और सैकड़ों गुनाहों और अवज्ञा के बावजूद उसे इसका एहसास भी न हो सके कि वह कितना गिर चुका है।

मनुष्य को अल्लाह ने नेकी और गुनाह दोनों की क्षमता के साथ पैदा किया है। विदित है ऐसे प्राणी से जिसमें नेकी और गुनाह दोनों का सामर्थ्य पाया जाता हो वेगुनाही (*Sinlessness*) अभीष्ट नहीं हो सकती। ऐसे प्राणी के लिए बड़ा स्थान यही है कि जब मानवीय दुर्बलता के कारण उससे कोई गलती हो जाए तो वह उस पर अडा न रहे बल्कि लज्जित हो और अल्लाह

५. हज़रत इब्न अब्बास से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा . जो व्यक्ति क्षमायाचना को अपने ऊपर अनिवार्य कर ले तो अल्लाह उस के लिये हर तंगी से निकलने का मार्ग निकाल देता है और हर गम और परेशानी से उसे मुक्ति देता है और उसे ऐसी जगह से और इस तरह रोज़ी पहुँचाता है जिसके बारे में वह सोच नहीं सकता था^५ ।

—अहमद, अबूदाऊद, इब्नमाजा

६. हज़रत अनस रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा हर मनुष्य खताकार है और उत्तम खताकार 'तौबा' करने वाले हैं^६ ।

—तिरमिजी, इब्नमाजा, दारमी

७ विलाल इब्न यसार रज़ि० कहते हैं कि मुझसे मेरे पिता ने वयान किया और उनसे उनके दादा ने वयान किया कि उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना कि जो व्यक्ति कहे

“मैं क्षमायाचना करता हूँ उस अल्लाह से जिसके सिवा कोई 'इलाह' (पूज्य) नहीं जो सजीव एवं चिरस्थायी है और सारे ससार का क़ायम रखने वाला है और उसी की ओर पलटता हूँ ।”

उसके गुनाह क्षमा कर दिये जाते हैं यद्यपि वह 'जिहाद' से भागा हुआ हो^७ ।

—तिरमिजी, अबूदाऊद

८. हज़रत इब्न उमर रज़ि० कहते हैं कि हम गिनते थे कि अल्लाह के रसूल सल्ल० एक-एक बैठक में सौ बार कहते .

“हे रब ! मुझे क्षमा कर दे और मझ पर मेहरबानी कर निस्सन्देह तू सबसे बढकर 'तौबा' कबूल करने वाला और क्षमाशील है ।

—अहमद, तिरमिजी, अबूदाऊद, इब्नमाजा

से क्षमा की प्रार्थना करे ।

५. मालूम हुआ कि क्षमायाचना बहुत-सी परेशानियों और मुसीबतों से मुक्ति पाने का साधन है । कितनी ही परेशानियों का कारण मनुष्य के अपने कर्म ही होते हैं । क्षमायाचना से अल्लाह उसके गुनाहों को क्षमा कर देता है । और इसके परिणामस्वरूप उस की परेशानियाँ भी दूर हो जाती हैं ।

६. खता और गलती मनुष्य से होती ही रहती है लेकिन सबसे अच्छे लोग वे हैं जो अपनी खताओं को स्वीकार करते रहते हैं और सदैव अल्लाह से अपनी खताओं की माफी माँगा करते हैं ।

७ 'तौबा' यदि दिल से की जाए, तो बड़-से-बड़े गुनाह भी क्षमा हो सकते हैं

यहाँ तक कि उस व्यक्ति की भी मुक्ति हो सकती है जो 'जिहाद' के मैदान से शत्रु को पीठ दिखाकर भागा हो ।

अबू दाऊद की रिवायत में बिलाल यसार की जगह हिलाल बिन यसार आया है ।

अल्लाह का 'ज़िक्र'

अल्लाह की याद और उस का 'ज़िक्र' वास्तव में 'इस्लाम' का मूल आधार है, इस के बिना मनुष्य को वह जीवन प्राप्त ही नहीं होता जो इस्लाम को अभीष्ट है। अल्लाह का स्मरण और उस का ख्याल ही है जो मानव-जीवन को स्थायी रूप से अल्लाह और उस की वन्दगी के साथ जोड़े रखता है। जिस प्रकार शारीरिक अस्तित्व के लिए आवश्यक है कि साँस लेने की क्रिया का क्रम निरन्तर चलता रहे ठीक उसी प्रकार हमारे नैतिक और आध्यात्मिक अस्तित्व के लिए आवश्यक है कि हम हर क्षण अल्लाह की ओर प्रवृत्त रहे। हमारी जिह्वा सदैव उस के नाम से पावन होती रहे। अल्लाह का ख्याल मन में कुछ इस तरह बस जाए कि वह हमारी चेतना से आगे अचेतना और अचेतन मन तक में उतर जाए। और फिर हमारी गति-विधि, हमारी चाल-ढाल, हमारी बात-चीत और हमारी खामोशी, तात्पर्य यह कि हमारी हर चीज से इस बात का संकेत हो कि हम एक अल्लाह के बन्दे और उस के गुलाम हैं। उस की महानता का एहसास हमें गाफिल और वेपरवा होने से बाज रखे और उस की खुशी पाने की कामना हर क्षण हमें इस बात का जिज्ञासु बनाए रखे कि किस प्रकार से हम ज्यादा-से-ज्यादा अच्छे कर्म कर सकते हैं। हम कोई अच्छा काम करें तो हम अल्लाह के आभारी हो और कृतज्ञता दिखलाए। दुःख और सकट के समय हम उस की दयालुता के अभिलाषी हो। हर मुसीबत के समय उसी की ओर रुजू करें, गुनाह और बुराई का कोई मौका सामने आये, तो हम अल्लाह से डर जाएँ। हम से कोई अपराध हो जाए तो तुरन्त उस से क्षमा चाहे। हर आवश्यकता और ज़रूरत के समय उस से दुआ माँगे। हर काम अल्लाह के नाम से करें। खाना खाये तो अल्लाह का नाम ले कर खाये, सोने जाएँ तो अल्लाह को याद कर के सोये, सो कर उठे तो अल्लाह का नाम लेते हुए उठें। साधारण अवस्था में भी किसी-न-किसी बहाने से अल्लाह का नाम ज़बान पर आता रहे। यही वास्तव में इस्लामी ज़िन्दगी की जान है।

इस्लामी जीवन की यह माँग है कि अल्लाह की याद आदमी की रग-रग में रच-बस गई हो। इस चिर स्मरण के बिना हमारी वे 'इबादतें' और उपासनाएँ भी जो विशेष समय में अदा की जाती हैं कोई विशेष प्रभाव नहीं दिखा सकती। इस लिए कुरआन में केवल 'ज़िक्र' की नहीं बल्कि "ज़िक्रकसीर" (अधिक स्मरण) की ताकीद की गई है। कहा गया है : "हे ईमान' लाने वालो ! अल्लाह को अधिक याद करो"। (अल-अहज़ाब आयत ४१)

एक दूसरी जगह कहा : "और अल्लाह को बहुत ज्यादा याद करते रहो ताकि तुम सफल हो"। (अल-जुमआ आयत १०)

अल्लाह के 'ज़िक्र' के इसी महत्व के कारण पूरे 'दीन' (धर्म) को "ज़िक्र रब" कहा गया, कुरआन में है : "और यह कि यदि वे मार्ग पर ठीक-ठीक लग जाते तो हम उन्हें भली-भाँति जलसम्पन्न कर देते ताकि हम उस में उन की परीक्षा करे, और जो कोई अपने 'रब' के 'ज़िक्र' से मुँह मोड़ेगा तो वह उसे यातना में चढ़ाता चला जायेगा"। (अल-जिन्न : १६-१७)

'ज़िक्र' के इसी महत्व के कारण कुरआन में 'ईमान' वालों को हुक्म दिया गया है कि वे अल्लाह को याद करते रहें : "और अपने 'रब' को प्रातः काल और सन्ध्या समय याद करते रहो, अपने जी में गिड़-गिड़ाते और डरते हुए और धीमी आवाज़ के साथ और उन लोगों में से न हो जाओ जो गफिल हैं"। (अल-आराफ आयत २०५)

अल्लाह के 'ज़िक्र' से गफिल होने को हानि एवं घाटे का कारण बताया गया "हे ईमान वालों ! तुम्हारे माल तुम्हें अल्लाह की याद से गफिल न करे और न तुम्हारी औलाद। और जो कोई ऐसा करेगा, तो ऐसे ही लोग घाटा उठाने वाले हैं"। (अल-मुनाफ़िकून : ६)

'ईमान' वालों के गुणों का उल्लेख करते हुए कहा गया . "और अल्लाह का बहुत अधिक 'ज़िक्र' करने वाले पुरुष और बहुत अधिक 'ज़िक्र' करने वाली स्त्रियाँ, अल्लाह ने उन के लिए क्षमा और बड़ा प्रतिदान तैयार कर रक्खा है"। (अल-अहज़ाब : ३५)

कहा गया जो बन्दे मुझ को याद करेंगे मैं भी उन को याद रखूँगा . "(मेरे बन्दो !) मुझे याद करो मैं तुम को याद करूँगा और मेरे कृतज्ञ बनो और कृतघ्नता न दिखाओ"। (अल-बक्रा १५२)

'ज़िक्र' को हृदय-परितोष का कारण बताया गया और बताया गया

कि जो 'ईमान' वाले हैं उन की आत्मा को अल्लाह के 'ज़िक्र' से ही शान्ति और सन्तुष्टि प्राप्त होती है . 'ये वे लोग हैं जो 'ईमान' लाये और जिन के दिलों को अल्लाह के 'ज़िक्र' से इतमीनान हासिल होता है । सुन रखो ! अल्लाह की याद से ही दिलों को शान्ति मिलती है" । (अर-रअद . २८)

'इबादत' से निवृत्ति के पश्चात् विशेष रूप से अल्लाह के 'ज़िक्र' की ताकीद की गई । इस में इस बात को ओर सकेत है कि अल्लाह का 'ज़िक्र' एक ऐसी 'इबादत' है जिस से किसी दशा में निवृत्ति या अवकाश अपेक्षित नहीं । यह 'इबादत' हर समय जारी रहनी चाहिए : "जब तुम 'नमाज़' अदा कर लो तो अल्लाह का 'ज़िक्र' करो (हर दशा में) खड़े, बैठे और अपने पहलुओं के बल लेटे" । (अन-निसा १०३)

'जुमआ' कि नमाज़ के बारे में कहा गया : "फिर जब (जुमआ की) नमाज़ समाप्त हो जाए तो घरती में फैल जाओ और अल्लाह का फज़ल (रोज़ी) तलाश करो, और अल्लाह को अधिक याद करो ताकि तुम सफल हो जाओ" । (अल-जुमआ . १०)

'हज्ज' के बारे में कहा गया . फिर जब तुम अपने हज्ज सम्बन्धी कर्मों से निवृत्त हो जाओ, तो अल्लाह का 'ज़िक्र' करो जैसे कि तुम (गर्व से) अपने बाप-दादा का 'ज़िक्र' करते थे बल्कि उस से भी अधिक अल्लाह का 'ज़िक्र' करो" । (अल-बकरा . २००)

कुरआन की कतिपय 'आयतों' से ज्ञात होता है कि ऊँचे-से-ऊँचे कर्म और 'इबादतों' का मूल तत्व और अभिप्राय अल्लाह का 'ज़िक्र' और उस की याद ही है । उदाहरणार्थ 'नमाज़' के बारे में कहा : "मेरी याद के लिए 'नमाज़' कायम करो" । (ता , हा. : १४)

'हज्ज' सम्बन्धी इबादतों और कर्मों के बारे में नबी सल्ल० कहते हैं : "अल्लाह के घर ('काबा') का 'तवाफ' और सफा और मरवा के बीच 'सई' और जमरात की रमी, ये सब चोजे अल्लाह के 'ज़िक्र' के लिए निश्चित हुई हैं" । (अबूदाऊद, तिरमिज़ी)

'जिहाद' के बारे में कुरआन करीम में कहा गया : "हे 'ईमान' लाने वालो ! जब तुम्हारी मुठ भेड़ किसी (दुश्मन के) गरोह से हो जाए तो (लड़ाई में) जमे रहो और अल्लाह को अधिक याद करो ताकि तुम सफल हो" । (अल-अनफाल . ४५)

सूझ-बूझ रखने वालों के बारे में बताया गया कि उन का सोच-विचार अल्लाह की याद से खाली नहीं होता । वे किसी दशा में अल्लाह

से गफिल नहीं होते, ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु उन्हें अल्लाह की महानता और उस के न्याय की याद दिलाती रहती है "निस्सन्देह आकाशों और धरती की बनावट में और रात-दिन के एक-दूसरे के बाद बारी-बारी से आने में बुद्धि रखने वालों के लिए निशानियाँ हैं। वे (बुद्धि रखने वाले) जो खड़े, बैठे और लेटे (प्रत्येक दशा में) अल्लाह को याद करते हैं, और आकाशों और धरती की बनावट में सोच-विचार करते हैं, (और कहते हैं) : हमारे रब ! तू ने ये सब व्यर्थ नहीं बनाया है। महिमा हो तेरी ! तो (हे रब !) तू हमें आग ('जहन्नम') की यातना से बचा ले" ।
(आले इमरान १६०-१६१)

अल्लाह का 'जिक्र' और उस की याद सारे अमल की जान है, इस के बिना सारे अमल बेजान हो जाते हैं। इसी बात को एक 'हदीस' में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है . "मुआज बिन अनस जुहनी कहते हैं कि एक व्यक्ति ने नबी सल्ल० से पूछा कि हे अल्लाह के रसूल ! 'जिहाद' करने वालों में सब से बढ कर बदला पाने वाला कौन है ! आप ने कहा . जो उन में सब से ज्यादा अल्लाह को याद करने वाला है। उस ने कहा 'रोजा' रखने वालों में सब से ज्यादा बदला पाने वाला कौन है ? कहा . जो उन में सब से अधिक अल्लाह को याद करने वाला है। फिर उस व्यक्ति ने इसी प्रकार 'नमाज', 'हज्ज' और 'सदका' अदा करने वालों के बारे में पूछा और अल्लाह के रसूल सल्ल० ने हर एक का यही उत्तर दिया कि जो उन में सब से अधिक अल्लाह को याद करने वाला हो"
(मुसनद अहमद)

— — —

अल्लाह के 'जिक्र' का महत्व

عَنْ أَبِي سَعِيدٍ أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ سُئِلَ أَيُّ الْعِبَادِ أَفْضَلُ وَ
أَرْفَعُ دَرَجَةً عِنْدَ اللَّهِ يَوْمَ الْقِيَمَةِ؟ قَالَ. الذَّاكِرُونَ اللَّهَ كَثِيرًا وَالذَّاكِرَاتُ
قَبْلَ بَارِسُوعٍ اللَّهِ وَمِنَ الْغَائِرِ فِي سَبِيلِ اللَّهِ، قَالَ لَوْ ضَرَبَ
بِسَيْفِهِ فِي الْكُفَّارِ وَالْمُسْرِكِينَ حَتَّى يَنْكَسِرَ وَيَخْتَضِبَ دَمًا فَإِنَّ الذَّاكِرَ
لِلَّهِ أَفْضَلُ مِنْهُ دَرَجَةً.

१. हज़रत अबू सईद खुदरी रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के
रसूल सल्ल० से पूछा गया कि कौन-स बन्दा अल्लाह की दृष्टि में
'कियामत' के दिन श्रेष्ठ और उच्च होगा ? आपने कहा अल्लाह का अधिक
जिक्र करने वाले पुरुष और अधिक जिक्र करने वाली स्त्रियाँ । कहा गया .
हे अल्लाह के रसूल ! क्या उस व्यक्ति से भी उनका दर्जा बढ़ा हुआ होगा
जो अल्लाह के मार्ग में 'जिहाद' करे ? आपने कहा . (हाँ) यद्यपि
कोई अपनी तलवार 'काफ़िरो' और मुश्रिकों में चलाये यहाँ तक कि
उमकी तलवार टूट गई और वह स्वयं रक्त से रजित हो गया फिर भी
अल्लाह का 'जिक्र' (स्मरण) करने वाला उससे दर्जे में बढ़ कर है ।

—अहमद, तिरमिज़ी

१ 'जिक्र' या अल्लाह की याद वास्तव में इस्लाम की आत्मा और उस का अन्तिम
अभिप्राय है । यही कारण है कि किसी भी बड़े-बड़े कर्म में यदि अल्लाह की
याद, उसका प्रेम और उसकी प्रसन्नता प्राप्त करने की भावना सम्मिलित न हो
तो उस कर्म का अल्लाह की दृष्टि में कुछ भी महत्व नहीं है । इसके विपरीत
थोड़ा अमल भी यदि पूर्णतः अल्लाह के लिए है और उसका वास्तविक प्रेरक
अल्लाह की याद और उसका प्रेम हो तो इस्लामी दृष्टि से उस अमल का
बड़ा महत्व है । अल्लाह के 'जिक्र' को हर चीज़ के मुकाबले में श्रेष्ठता प्राप्त
है । कुरआन में कहा गया है अल्लाह की याद बड़ी चीज़ है (अल-अनकबूल :
४५) . इस्लाम में ऊँचे-से ऊँचे कर्मों का सार और अभिप्राय अल्लाह का
'जिक्र' ही है । उदाहरणार्थ 'नमाज़' के बारे में कहा गया है 'मेरी याद के
लिए 'नमाज़' कायम करो' (ता० हा० १४) । 'जिहाद' के बारे में कहा गया
है 'हे ईमान वाले ! जब किसी ग़रोह से तुम्हारी मुठभेड़ हो तो (लड़ाई में)

२. हज़रत अबू हुदैरा रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० मक्काकेरास्ते पर जा रहे थे, आप एक पर्वत पर से गुज़रे जिसे जूम्दान^२ कहते थे, आप ने कहा चलो यह जुम्दान है, “मुफरिदून” अग्रसर रहे। लोगों ने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! ये मुफरिदून कौन लोग हैं ? आप ने कहा : अल्लाह को अधिक याद करने वाले पुरुष और अधिक याद करने वाली स्त्रियाँ^३ ।

३. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न बूस रज़ि० कहते हैं कि एक ‘आराबी’ (आमीण) नबी सल्ल० की सेवा में आया और कहा कौन सा आदमी उत्तम है ? आप ने कहा : आनन्द (और शुभ सूचनाएँ) उसके लिए जिसने लम्बी आयु पाई और अच्छे कर्म किये । उसने कहा . हे अल्लाह के रसूल ! कौन-सा कर्म उत्तम है ? आपने कहा यह कि तू ससार से इस

जमे रहो और अल्लाह को अधिक याद करो कदाचित् तुम सफल हो जाओ’ (अल-अनफाल ४५) ।

हज़रत अबू दरदा रज़ि० कहते हैं कि आपने कहा . “क्या मैं तुम्हे बताऊँ तुम्हारे वे कर्म जो उत्तम और पवित्रतम हैं तुम्हारे बादशाहो की दृष्टि में और उच्च हैं तुम्हारे दर्जों में और तुम्हारे लिए उत्तम हैं सोना और चाँदी खर्च करने से और तुम्हारे लिए उत्तम हैं इस से कि तुम्हारी अपने दुश्मन से मुठभेड़ हो और तुम उनकी गरदनें मारो और वे तुम्हारी गरदनें मारें । ‘सहाबा’ ने कहा हाँ, हे अल्लाह के रसूल ! आपने कहा वह अल्लाह का ‘ज़िक्र’ है ।

—मालिक, अहमद, तिरमिज़ी, इब्नमाजा

अथात् सदका, ज़िहाद आदि से अल्लाह की याद और ‘ज़िक्र’ का दर्जा बढा हुआ है ।

२. यह एक पहाड़ी का नाम है जो मदीना के निकट एक दिन की दूरी पर है ।

३. ‘मुफरिदून’ का शाब्दिक अर्थ है अपने आपको सबसे अलग, अकेला और हल्का-फुलका कर लेने वाले । इस से अभिप्रेत वे लोग हैं जिनकी आत्मा का आहार अल्लाह की याद है । जो सब ओर से कटकर एक अल्लाह के हो गए हो । जिनका उद्देश्य अपने ‘रब’ की प्रसन्नता के अतिरिक्त कोई दूसरी चीज़ नहीं । व्यर्थ कामों से जिन्होंने अपने को आज़ाद कर लिया हो । यही ‘तफरीद’ का सोपान है । इसी को कुरआन ने ‘तबत्तुल’ की सज़ा दी है । कुरआन में है : और अपने ‘रब’ का नाम लो और सब कुछ छोड़कर उसी की ओर लग जाओ’ ।

—सूर। अल-मुज्ज म्मिल आयत ८ ।

दशा में विलग हो कि तेरी ज़बान अल्लाह के जिक्र से तर हो* ।

—अहमद, तिरमिज़ी

४. हज़रत अबू हुऱैरा कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि अल्लाह कहता है . मैं अपने बन्दे के साथ हूँ जब वह मुझे याद करता है और उसके दोनों होंठ मेरे जिक्र से हिलते हैं* । —बुखारी

५. अबू हुऱैरा रजि० और अबूसईद खुदरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : जब भी लोग अल्लाह का जिक्र करते हैं तो अवश्य ही 'फिरिश्ते' उन्हें घेर लेते हैं* और 'रहमत' (ईश-दयालुता) उन पर छा जाती है और शान्ति अवतरित होती है* और अल्लाह उन 'फिरिश्तो' में उनका जिक्र करता है जो उसके निकट हैं* । —मुस्लिम

४. अर्थात् तू अल्लाह की याद और उसके 'जिक्र' से कभी शाफल न हो यहाँ तक कि तेरी मृत्यु आ जाए ।

५. अर्थात् कोई बन्दा मुझे याद करना है तो उसे मेरा प्रेम, मेरा सामीप्य और मेरा सहयोग प्राप्त होता है । मैं अपने ऐसे बन्दे की ओर से शाफल नहीं होता ।

६. कुछ रिवायतो से मालूम होना है कि अल्लाह की ओर से कुछ 'फिरिश्ते' इसी काम के लिए नियुक्त हैं कि वे उन लोगो की खोज में रहें जो अल्लाह का 'जिक्र' करते हो । जब वे किसी जगह 'जिक्र' करने वालो को पाखते हैं तो अपने साथियो को पुकारते हैं कि आओ जिस चीज़ की हमें तलाश थी वह यहाँ मौजूद है । फिर वे 'जिक्र' करने वालो को अपने परो से ठक लेते हैं और दुनिया के आकाश (निकटवर्ती आकाश) तक फैल जाते हैं ।

७. अल्लाह की दयालुता उन्हें घेर लेती है, वे अल्लाह की विशेष दयालुता के अधिकारी हो जाते हैं और अल्लाह उन्हें शान्ति, परितोषनिधि प्रदान करता है । सन्देह और मन की खटक आदि उनके दिल से निकल जाते हैं । यह अल्लाह की ओर से उनके लिए विशेष उपहार होता है । क़ुरआन में भी इस विशेष उपकार का उल्लेख हुआ है देखिए सूरा अत-तौबा . २६; अल-फ़तह : ४, २६ ।

८. यह बन्दे के लिए कितने श्रेय की बात है कि उसका 'रब' उसका 'जिक्र' अपने करीबी 'फिरिश्तो' के बीच करे ।

६. हजरत अब्दुल्लाह इब्न उमर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा अल्लाह के 'ज़िक्र' के बिना अधिक बात न किया करो क्योंकि बिना अल्लाह के 'ज़िक्र' के बात-चीत की अधिकता कठोर हृदयता है और लोगों में अल्लाह से अधिक दूर वह व्यक्ति है जो हृदय का कठोर है^६ । —तिग्मिजी

७ हजरत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जिस व्यक्ति ने एक बैठक ऐसी गुजारी जिसमें उसने अल्लाह को याद न किया उस पर अल्लाह की ओर से तबाही छा गई और जो व्यक्ति कही लेटा और उसमें उसने अल्लाह को याद न किया उस पर अल्लाह की ओर से तबाही छा गई^७ । —अबू दाऊद,

८ नम्रता, कोमलता, वेदनशीलता, अनुभूति की सूक्ष्मता आदि वास्तव में हृदय के मौलिक गुण हैं। इन गुणों की सुरक्षा और विकास के लिए आवश्यक है कि मनुष्य अल्लाह की याद से कभी गाफिल न हो। उसकी बात-चीत अल्लाह के 'ज़िक्र' से वंचित न हो। मनुष्य के हृदय पर उसके प्रत्येक कथन और कर्म का प्रभाव पड़ता है। यदि कोई व्यक्ति अल्लाह से गाफिल होकर उसके 'ज़िक्र' के बिना ज़बान चलाता रहेगा तो उसके हृदय पर अवश्य ही बुरा प्रभाव पड़ेगा। उसका हृदय कठोर और प्रकाशहीन हो जायेगा। विदित है ऐसा हृदय जो कठोर और शून्य हो जाये अल्लाह की कृपा का कैसे अधिकारी हो सकता है। मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह अपनी बात-चीत में अल्लाह के 'ज़िक्र' को सम्मिलित कर ले।

१० अर्थात् अल्लाह की ओर से असावधान और गाफिल होना वास्तव में आदमी के लिए तबाही और बरबादी के अतिरिक्त कुछ नहीं है। जो व्यक्ति अल्लाह की याद से गाफिल हो गया वह मानो लुट गया। 'मुस्लिम' के जीवन की सारी शोभा और बहार अल्लाह के 'ज़िक्र' और उसकी याद से है। अल्लाह के भय, उसकी याद और प्रेम से वह अपने दिल की दुनिया को आबाद रखता है। अल्लाह की महानता के एहसास से उसे इस बात की प्रेरणा मिलती रहती है कि वह हर समय ईश्वर के आगे झुका रहे और उसके आदेशों का आदर करे। उसके प्रभु की प्रियता उसे हर समय अपनी ओर आकर्षित करती रहती है। अल्लाह को भूल जाने का अर्थ इसके सिवा और क्या हो सकता है कि मनुष्य ने अपना सब कुछ नष्ट कर दिया। उसने अपने उद्धान को उजाड़ डाला। आज यदि उसे इसका एहसास नहीं होता है तो कल 'कियामत' में उसे इसका

८ हजरत अबू हुदैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा जो लोग किसी ऐसी मजलिस से उठे जिसमें उन्होंने अल्लाह को याद नहीं किया तो मानो ये लोग मुरदार गदहे का शव छोड़ कर उठे हैं और यह उनके लिए 'क्रियामत' के दिन सन्ताप होगा" ।

—अबू दाऊद, हाकिम

९ हजरत अबू मूसा रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा जो व्यक्ति अपने 'रब' को याद करता है और जो याद नहीं करता उनकी मिसाल जिन्दा और मुरदा की सी है" । —बुखारी, मुस्लिम

१०. हजरत आइशा रजि० कहती है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० सब समयों में अल्लाह को याद करते थे (किसी समय भी आप अल्लाह को भूलते नहीं थे) । —अबू दाऊद

एहसास प्रवर्ध होगा । उस समय वह कहेगा कि क्या अच्छा होता कि जीवन के किसी क्षण को भी नष्ट न करता ।

११ मतलब यह है कि अल्लाह की याद और उसके 'जिक्र' के बिना यदि कोई मजलिस समाप्त हो गई तो मानो मनुष्य अशुभ और अमंगलकारी स्थान से उठा है । उसने वहाँ से अपने लिए सन्ताप ही संचित किया है । आनन्द की सामग्री नहीं जुटाई है ।

१२ इस 'हदीस' में एक महान् वास्तविकता का उल्लेख हुआ है । इस 'हदीस' से मालूम हुआ कि अल्लाह की याद और उसका स्मरण ही वास्तविक जीवन है । अल्लाह से ग्राफिल मनुष्य वास्तव में जीवन से वंचित है । अल्लाह ही जीवन का उद्गम है, उसकी याद से मनुष्य को वास्तविक जीवन प्राप्त होता है । वास्तविक जीवन इसके सिवा और क्या है कि आदमी अपने खुदा को पा ले और पूर्णतः उस से प्रेम करने लगे । नबी जिस ज्ञान और धर्म से सम्मानित होते हैं उस से इसी जीवन का मार्गदर्शन मिलता है । 'तौरात' में है : "मनुष्य केवल रोटी से नहीं जीवित रहता बल्कि उस 'कलिमा' से जीवित रहता है जो अल्लाह की ओर से आता है ।" अर्थात् अल्लाह के उतारे हुए आदेश के द्वारा ही मनुष्य को वास्तविक जीवन का आभास हो सकता है । इजील बरनबास का यह वाक्य कितना मूल्यवान है . "शरीर भोजन से जीवित रहता है और आत्मा को ज्ञान और प्रेम से जीवन मिलता है" (११ : १०६) । यूहन्ना की इजील में है : "अल्लाह की रोटी वह है जो आकाश से उतरकर ससार को जीवन प्रदान करती है" (२७ : ६) । हजरत मसीह अ० दुआ करते हैं : हमारी प्रतिदिन की रोटी (Daily

bread) हमें प्रतिदिन प्रदान कर" (मत्ता ६ : १२)। हज़रत मसीह उपमाओं में बातें करते थे। रोटी से अभिप्रेत यहाँ वही चीज़ है जिस से मनुष्य को वास्तविक जीवन प्राप्त होता है।

कुरआन में है "क्या वह व्यक्ति जो मुरदा था फिर हमने उसे जीवन प्रदान किया और उसके लिए प्रकाश कर दिया, जिसे लिये हुये वह लोगो में चलता-फिरता है वह उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अंधेरो में पड़ा हुआ हो, उनसे निकलने वाला ही न हो" (अल-अनआम : १२२)। इस आयत से भी मालूम हुआ कि 'ईमान' वालों को जो जीवन प्राप्त होता है ईमान रहित लोग उस से वंचित होते हैं।

अल्लाह का 'ज़िक्र' उसकी 'तस्बीह' और 'हम्द' वास्तविक जीवन का कारण बल्कि सर्वथा जीवन की हैसियत रखते हैं इसीलिए 'जन्नत' में विशेष रूप से यह चीज़ 'जन्नत' वालों को आत्मिक आहार के रूप में ठीक उसी प्रकार प्राप्त होगी जिस प्रकार बिना किसी कठिनाई और तकलीफ के हम सास लेते हैं। सास लेने की क्रिया में दूसरी कोई चीज़ रुकावट नहीं बनती। हम कोई भी काम कर रहे होते हैं सास की क्रिया चलती रहती है। ठीक इसी प्रकार 'तस्बीह' और 'तहमीद' (ईश्वर का गुणगान) में कोई भी चीज़ बाधक नहीं होगी। 'हदीस' में है "जन्नत वालों को 'तस्बीह' और 'तहमीद' (मुणमान एवं ईश प्रशंसा) का 'इलहाम' (दैवी प्रेरणा) होता रहेगा जैसे सास का 'इलहाम' होता है।"

—मुस्लिम, अबुदाऊद



ज़िक्र के कुछ पवित्र शब्द

१. सुमुरा बिन जुनदुब रजि० से उल्लित है कि अल्लाह के रसूल सल 10 ने कहा . समस्त वाणी में चार सर्वश्रेष्ठ हैं :

سُبْحَانَ اللَّهِ وَالْحَمْدُ لِلَّهِ وَلَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَاللَّهُ أَكْبَرُ

“सुबहानल्लाह, ‘अलहमदुलिल्लाह,^१ ‘लाइलाह इल्लल्लाह,^२ और

१. “सुबहानल्लाह” (महिमावान है अल्लाह ।) ‘तस्बीह’ का ‘कलिमा’ है । इस से अभिप्राय अल्लाह की बड़ाई और उच्चता को स्वीकार करना है । कुरआन मजीद ने अपनी सात सूरतों को ‘तस्बीह’ के कलमे से आरम्भ किया है । उदाहरणार्थ सूरा अल-हदीद इस आयत से शुरू होती है “अल्लाह की ‘तस्बीह’ की हर उस चीज़ ने जो आकाशों और धरती में है और वह प्रभुत्व-शाली और तत्त्वदर्शी है” । ऐसा कल्मा जिस से अल्लाह की बड़ाई और महानता का प्रदर्शन होता हो श्रेष्ठ और उत्तम ‘कल्मा’ ही होगा ।
२. “अलहमदुलिल्लाह” (हम्द अल्लाह के लिए है) ‘तहमीद’ अर्थात् अल्लाह प्रशंसा और गुणगान और उसके आगे कृतज्ञा प्रकाशन का ‘कलिमा’ है । कुरआन करीम का आरम्भ ‘तहमीद’ ही के कलमे से हुआ है । किसी बन्दे के लिए इस से बढ़कर श्रेष्ठता की बात और क्या हो सकती है कि उसकी ज़बान पर अपने ‘रब’ की ‘हम्द’ और प्रशंसा का कल्मा हो । अल्लाह की दी हुई नेमतों और उसके उपकारों के प्रति कृतज्ञताप्रकाशन का भी इससे अच्छा उपाय दूसरा नहीं हो सकता कि हम दिल और ज़बान से उसके गुणों, को स्वीकार करें । इसीलिए नबी सल्ल० ने कहा है “ ‘हम्द’ कृतज्ञा का आधार है ।” फिर ‘तहमीद’ के कलमे को दुआ भी कहा गया है । ‘हदीस’ में है श्रेष्ठतम दुआ ‘अल हम्दु लिल्लाह’ है । प्रत्यक्ष रूप में इसमें याचना नहीं पाई जाती लेकिन अल्लाह का वादा है कि वह ‘हम्द’ और कृतज्ञाव्यञ्जित पर बन्दे को और अधिक प्रदान करेगा (दे० सूरा इबराहीम ७) । इसलिए इस कल्मा को श्रेष्ठतम दुआ भी कह सकते हैं । फिर जिस प्रकार केवल अल्लाह की याद को ‘ज़िक्र’ नहीं कहते जब तक इसके साथ अल्लाह का प्रेम सम्मिलित न हो, ठीक उसी प्रकार केवल अल्लाह की प्रशंसा को ‘हम्द’ नहीं कहा जा सकता । इसमें

‘अल्लाहु अकबर, ४” ।

—मुस्लिम

अल्लाह का प्रेम भी सम्मिलित होना अनिवार्य है (दे० १८० कय्यम की किताब अलफवाइद पृ० १८३) । और प्रेम याचना के उच्चतम प्रकारों में से है ।

‘हम्द’ के कलिमे की श्रेष्ठता और महत्व का अनुमान इस से भी किया जा सकता है कि विश्व की प्रत्येक वस्तु अल्लाह की ‘हम्द’ और गुणगान में लगी हुई है (दे० सूरा बनी इसराईल : ४४) । विश्व के निर्माण और विश्व के प्रत्येक नियम से अल्लाह के सौन्दर्य और प्रताप का ही प्रदर्शन होता है । ‘जन्नत’ वालों की भी अन्तिम पुकार ‘तहमीद’ (गुणगान) का कल्मा ही होगा
दे० सूरा यूनस १० ।

३. “ला इलाह इल्लल्लाह” (अल्लाह के सिवा कोई ‘इलाह’ नहीं) । यह ‘तौहीद’ (एकेश्वरवाद) का कलिमा है । यह कलिमा इस बात को व्यक्त करता है कि अल्लाह के सिवा और कोई ईश्वर नहीं है और न ईश्वरत्व के गुणों से सम्पन्न है । उसके सिवा जो हैं उसी के पैदा किये हुए और उसी के दास हैं । अल्लाह के सिवा कोई नहीं जिसे शासक और पूज्य एवं उपास्य स्वीकार किया जाए । मनुष्य का कर्तव्य है कि वह एक अल्लाह का बन्दा बनकर रहे । अपनी बन्दगी की उमंगों को उसी की सेवा में प्रस्तुत करे । अल्लाह के सिवा कोई ऐसी सत्ता नहीं है जिसे मनुष्य अपना आराध्य, अपनी समस्त कामनाओं का केन्द्र और अपना हाकिम और स्वामी बनाए ।

‘तौहीद’ की शिक्षा अगले धर्म ग्रन्थों में भी मिलती है । उदाहरणार्थ : “मुन हे इसराईल की सन्तान ! प्रभु हमारा प्रभु एक ही प्रभु है । तू अपने सारे दिल और सारे प्राण और सारी शक्ति से प्रभु अपने ईश्वर से प्रेमभाव रख । और ये बातें जिनका आदेश आज मैं तुझे देता हूँ तेरे हृदय पर अंकित रहे । और तू इन्हें अपनी सन्तान के हृदयांकित करना और घर बैठे और राह चलते और लेटे और उठते समय इनका जिक्र किया करना” (व्यवस्था विवरण] ६ ४-९) । एक दूसरी जगह आया है . “तुझको किसी दूसरे पूज्य की उपासना नहीं करनी होगी । इसलिए कि खुदाबन्द (प्रभु) जिसका नाम “गैयूर’ (स्वाभिमानि) है वह ‘गैयूर’ (स्वाभिमानि) प्रभु है भी” (निर्गमन ३४ १४) । एक दूसरी जगह कहा गया है “तू अपने लिए कोई गढी हुई मूर्ति न बनाना, न किसी चीज का रूप बनाना जो आकाश में या धरती पर या धरती के नीचे जल में है । तू उनके आगे सजदा न करना । और न उनकी ‘इबादत’ करना क्योंकि मैं खुदाबन्द तेरा ‘गैयूर’ (स्वाभिमानि) खुदा हूँ (निर्गमन २० . ४-५)

वेद में है . य एक इत तमुष्टुहि कृष्टीना विचर्षणि ।

२. हजरत अनस रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल एक वृक्ष के पास से गुजरे जिसके पत्ते शुष्क थे, आपने उस पर अपनी नाठी मारी तो पत्ते झड़ पड़े, आपने कहा . 'अल्हम्दुलिल्लाह', 'सुबहान-

पतिशे यूफ़रूतु ।

"जो ईश्वर एक ही है तू उमी की स्तुति कर, वह सब मनुष्यों का सर्व-द्रष्टा सर्वेश है, गुण की पर्या करने वाला सम्पूर्ण ससार का एकमात्र अधिपति है ।"

धत्तमेन इत्य पुनर नष्टे विविधपति

गन्त ब्रह्मान्यनु वदचराममि । (भ० ८।२५।१६)

"नष्ट एक ही ईश्वर मारी प्रजा का स्वामी है । वही सबका कुशल निरीक्षक है । हम धर्मो रक्षण के लिए उमाही आज्ञा का पालन करते हैं ।"

न द्वितीयो न तृतीयद्वतुर्थो नाप्युच्यते ॥

न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते ॥

नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ॥

न गणैर्म विपद्यन्ति यच्च प्राणानि यच्च न ॥

नमिदं निगतं नर न एव एक-एक वृक्षेक एव ॥

नर्ये धम्मिगतं येन एकं य नो भवन्ति ॥

—अथर्व० १३।४।१६-२१

"नष्ट ईश्वर न दूसरा है न तीसरा और न चौथा कहा जाता है, वह पाँचवाँ, छठा और गानवाँ भी नहीं कहा जाता है, वह आठवाँ, नवाँ, और दशवाँ भी नहीं कहा जाना है, वह समुच्चय ससारस्थ प्राणि वर्ग को विविध प्रकार से देखता है । उगे सब नामव्यं प्राप्त है । वह अकेला ही वर्तमान है । उमी में पृथ्वी आदि समस्त देव वर्तमान है ।"

'नीतीद' का प्रभाव वेदों के अतिरिक्त दूसरे हिन्दू ग्रन्थों में भी मिलता है । उदाहरणार्थ धतपथ ब्रा० में है

योन्या देवतामूपास्ते न स वेद यथा पशुरेव स देवानाम् ॥

(१४।४।२।२२)

"जो दूसरे में ईश्वर बुद्धि करके उपासना करता है वह कुछ भी नहीं जानता इसलिए वह विद्वानों के बीच में पशु के समान है ।"

४. 'अल्लाह अकबर' (अल्लाह सब से बड़ा है) । यह 'तकबीर' (ईश-महानता)

ल्लाह' 'ला इलाह इल्लल्लाह' और 'अल्लाहु अकबर' गुनाहो को इस तरह भाड देते हैं जिस तरह इस वृक्ष के पत्ते झड़ते हैं^५ । —तिरमिज़ी

३. हजरत अबूजर रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० से पूछा गया कि कौन सा कलाम (वाणो) सर्व श्रेष्ठ है ? आपने कहा जिसको अल्लाह ने अपने 'फिरिश्तो' के लिए चुना है :

سُبْحَانَ اللَّهِ وَبِحَمْدِهِ

“सुबहानल्लाह व बिहमिद्ही”

—मुस्लिम

का कलिमा है । इस कलिमे से अल्लाह की बड़ाई व्यक्त करते हैं । सब ईश्वर के पैदा किये हुए हैं । ईश्वर से बढ़कर किसी की सत्ता नहीं है । ये चारो कलिमे 'सुबहानल्लाह' 'अलहम्दुलिल्लाह', 'ला इलाह इल्लल्लाह', 'अल्लाहु अकबर' वास्तव मे ईशगुण गान है । इनके द्वारा अल्लाह की महानता उसके प्रताप और उसके एक होने की उदघोषणा होती है । यही विशेष कारण है कि 'हदीसो' मे इन कलिमो की श्रेष्ठता का वर्णन हुआ है बल्कि यहाँ तक कहा गया है कि 'जन्नत' चटियल मैदान है उसके वृक्ष और उद्यान यही 'कलिमे' हैं ।

एक 'रिवायत' मे है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा “मेरा सुबहानल्लाहु अल हम्दुलिल्लाह, ला इलाह इल्लल्लाह और अल्लाहु अकबर कहना मेरी दृष्टि मे उन सब चीजो से अधिक प्रिय है जिन पर सूर्य उदय होता है (अर्थात् ससार और उसकी सारी वस्तुओ से अधिक प्रिय मुझे ये कलिमे हैं) ।”

५ मनुष्य यदि समझ-बूझकर चेतानावस्था मे इन कलिमो को पढे, तो उसके विचारो और कर्मो मे क्रान्ति आ सकती है । और उसके गुनाह क्षमा हो सकते हैं गुनाहो और खताओ के कारण जो भी उसे आध्यात्मिक और नैतिक हानि पहुँची होगी इन कलिमो के द्वारा उसकी क्षतिपूर्ति हो सकती है । मनुष्य के जीवन को बदलने और उसे निर्माल्य प्रदान करने के लिए ये कलिमे काफी हैं ।

६. 'सुबहानल्लाह व बिहमिद्ही' (हम अल्लाह की 'तस्बीह' और 'हम्द' (गुणगान) करते हैं का अर्थ वही है जो 'सुबहानल्लाह व अलहम्दुलिल्लाह' का है । इस 'कलिमे' के महत्व और इसकी महानता के कारण इसकी गणना उत्तम कलिमों मे की गई है । और इसे विशेष रूप से 'फिरिश्तो' का जप ठहराया गया है । एक 'रिवायत' मे तो यहाँ तक आया है कि जिस व्यक्ति ने प्रतिदिन सौ बार

४. हज़रत अबू हुदैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि दो 'कलिमे' (शब्द) हैं जवान पर हल्के-फुल्के, 'मीज़ान' (तुला) में क़ुपानिघान (ईश्वर) को अत्यन्त प्रिय •

سُبْحَانَ اللَّهِ وَبِحَمْدِهِ سُبْحَانَ اللَّهِ الْعَظِيمِ

“सुबहानल्लाह व बिहम्देही, सुब्हानल्लाहिल अजीम” ।

—बुखारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी

५. हज़रत अब्दुल्लाह इब्न अम्न रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा 'हम्द' आधार है कृतज्ञता का, जिस बन्दे ने अल्लाह की 'हम्द' (प्रशंसा) नहीं की उसने उसके आगे कृतज्ञता नहीं दिखलाई।

—अल-बैहकी

६. हज़रत मुआज इब्न अनस रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि अल्लाह ऐसे बन्दे से प्रसन्न रहता है जो खाना खाकर अल्लाह की 'हम्द' (प्रशंसा) करे और पानी पीकर अल्लाह की 'हम्द' करे ।

—मुस्लिम, तिरमिज़ी

७. हज़रत अबू मूसा अशअरी रज़ि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा कि मैं तुम्हें वह 'कलिमा' बताऊँ जो 'जन्नत' के खजानों में से है ? मैंने कहा हाँ, अवश्य बताइये । आपने कहा •

لَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ إِلَّا بِاللَّهِ

“ला हौल व ला क़ुवता इल्ला विल्लाह” —मुस्लिम, बुखारी,

‘सुबहानल्लाह व बिहम्दिही’ कहा उसकी खताएँ माफ़ कर दी जायेंगी यद्यपि वह समुद्र के भाग के बराबर हो । समझकर चेतनावस्था में जो व्यक्ति दिन में कई बार यह पवित्र कलिमा पढ़ेगा सम्भव नहीं कि उसके जीवन पर इसका प्रभाव न पड़े और यह कलिमा उसके चरित्र को बदल न डाले ।

७ ये कलिमे अल्लाह को बहुत ही पसन्द हैं । ये कलिमे नेकी के पलड़े को अधिक भुंकाने वाले होंगे । फिर इन समस्त विशेषताओं के बावजूद न इन 'कलिमों' का पढ़ना कुछ मुश्किल है और न इन्हें याद रखना कठिन है ।

८ 'ला हौल वला क़ुवता इल्ला विल्लाह' (कोई उपाय और शक्ति अल्लाह के बिना)

८. हजरत अबू अय्यूब अनसारी रजि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा कि जिसने दस बार पढ़ा

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيكَ لَهُ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَدُّ
هُوَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ

“अल्लाह के सिवा कोई ‘इलाह’ नहीं, वह अकेला है, उसका कोई सहभागी नहीं, राज्य उसी का है, वह ‘हम्द’ (प्रशंसा) का अधिकारी है और उसे हर चीज का सामर्थ्य प्राप्त है।”

वह उस व्यक्ति जैसा होगा जिस ने हजरत इस्माईल की औलाद के चार गुलाम आजाद किये^६ । —बुखारी, मुस्लिम

९. हजरत अबू मूसा अशअरी रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह कैरसूल सल्ल० ने कहा स्वच्छता एवं शुद्धता आधा ‘ईमान’ है^७, ‘अल-हम्दु

प्रभावकारी नहीं हो सकती) । अल्लाह सहायक न हो तो किसी तरह मनुष्य गुनाहो से बच नहीं सकता । और यदि अल्लाह उसे शक्ति न दे तो मनुष्य के बस में नहीं कि वह अल्लाह की बन्दगी और आज्ञापालन का कर्तव्य निभा सके । इस कलिमा का अभिप्राय यह है कि मनुष्य सारी शक्तियों का स्रोत अल्लाह ही को समझे । केवल अपने बल से मनुष्य किसी चीज पर भी काबू नहीं पा सकता । इस ‘कलिमे’ को यदि समझ कर पढ़ा जाए तो इस से आदमी को अपनी विवशता का ज्ञान होगा । गर्व और अभिमान उस से जाता रहेगा या किसी दूसरे पर भरोसा करने के बदले वह सदैव एक अल्लाह पर भरोसा करेगा । एक रिवायत में है कि बन्दा यह ‘कलिमा’ पढ़ता है, तो अल्लाह कहता है . “मेरा बन्दा आज्ञाकारी बन गया, उसने ‘इस्लाम’ का मार्ग ग्रहण कर लिया” —अल-बैहकी ।

१०. गुलाम आजाद करना यो भी पुण्य कार्य है और यदि वे गुलाम किसी पैगम्बर की औलाद में से हो, तो उन्हें स्वतन्त्र करने का जो बदला अल्लाह के यहाँ होगा वह अत्यन्त उत्कृष्ट होगा ।

१०. अर्थात् सफाई-सुथराई ‘ईमान’ के तकाजो में से है । मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने वस्त्र और शरीर ही को नहीं बल्कि अपने अन्तर को भी शुद्ध और स्वच्छ रखे । हर प्रकार के बुरे विचारों और गलत धारणाओं से अपने को

लिल्लाह' मीजान (तुला) को भर देता है और 'सुबहानल्लाह' और 'अल-हम्दुलिल्लाह' आकाश और धरती दोनों को के बीच भर देते हैं" ।

—मुस्लिम

१०. हजरत सअद बिन वक्कास रजि० से उल्लिखित है कि एक ग्रामीण अरब अल्लाह के रसूल सल्ल० की सेवा में उपस्थित हुआ और कहा (हे अल्लाह के रसूल !) मुझे किसी ऐसे कलाम की शिक्षा दीजिए जिसे मैं पढ़ा करूँ, आपने कहा कहो

لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيكَ لَهُ، اللَّهُ أَكْبَرُ كَبِيرًا وَأَلْحَمْدُ
لِلَّهِ كَثِيرًا، وَسُبْحَانَ اللَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ، وَلَا حَوْلَ وَلَا قُوَّةَ
إِلَّا بِاللَّهِ الْعَزِيزِ الْحَكِيمِ

(अल्लाह के सिवा कोई 'इलाह' (इष्ट पूज्य) नहीं, वह अकेला है उसका कोई सहभागी नहीं, अल्लाह सब से बड़ा है, ज्यादा-से-ज्यादा 'हम्द' (प्रशंसा) का अधिकारी अल्लाह है, महान है, सारे ससार का पालन-कर्त्ता स्वामी ! किसी के पास कोई उपाय और कोई शक्ति नहीं है यह चीज केवल अल्लाह के सहारे मिलती है जो प्रभुत्वशाली और 'हिक्मत' वाला (तत्त्वदर्शी) है ।" ग्रामीण ने कहा ये सब तो मेरे 'रब' के लिए हुए, मेरे लिए क्या है ? आपने कहा (कि यह दुआ)

اللَّهُمَّ اغْفِرْ لِي وَارْحَمْنِي وَاهْدِنِي وَارْزُقْنِي

बचाए । जिसने अपने बाह्य को स्वच्छ रक्खा उसने मानो 'ईमान' की आधी माँग को पूरी किया । जिसने अपने बाह्य और अन्तर दोनों को स्वच्छ रखने की कोशिश की उसने अपने 'ईमान' को पूर्ण कर लिया ।

११ अर्थात् इन पवित्र कलिमो की बरकतों और इनके पारिश्रमिक का कोई अन्त नहीं है ।

(हे अल्लाह ! मुझे क्षमा कर दे, मुझ पर दया कर, मेरा मार्गदर्शन कर और मुझे रोज़ी दे)''^{१२} —मुस्लिम

सन्तुलित मार्ग

عَنْ عَبْدِ اللَّهِ بْنِ سَرْجِسٍ أَنَّ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: السَّمْتُ
الْحَسَنُ وَالشُّوْدَةُ وَالْإِقْتِسَادُ جُزْءٌ مِنْ أَرْبَعٍ وَعِشْرِينَ
جُزْءًا مِنَ التُّبُوَّةِ.

१. अब्दुल्लाह बिन सरजिस से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा अच्छा चरित्र, सहनशीलता और सन्तुलित नीति, 'नुबूवत' का चौबीसवाँ भाग है' । —तिरमिज़ी

२. हजरत अबूहुरैरा रज़ि० से उल्लिखित है कि नबी सल्ल० ने कहा 'दीन' (सत्य धर्म) सहज है और 'दीन' से जब भी किसी ने जोर आजमाई की और उस में सख्ती अपनाई, 'दीन' ने उसे हरा दिया । अतः सन्तुलित नीति अपनाओ और बीच का मार्ग ग्रहण करो, शुभ सूचना सुनो और प्रातः काल और सन्ध्या समय और कुछ रात के भाग से सहायता प्राप्त करो^१ । —बुखारी

१२ अभिप्राय यह है कि तुम अल्लाह की 'हम्द' और गुणगान के साथ-साथ उससे अपने लिए दयालुता, क्षमा और हलाल रोज़ी की दुआ भी कर सकते हो । उस से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, बाह्य और आन्तरिक हर प्रकार की भलाई तलब की जा सकती है ।

१ अर्थात् ये गुण साधारण और कम दर्जे के नहीं हैं । इन गुणों को 'नबियों' के चरित्र में स्पष्ट स्थान प्राप्त रहा है । जो व्यक्ति जितना अधिक अपने जीवन में इन गुणों को स्थान देगा वह उतना ही अधिक 'नुबूवत' की बरकतों से प्रकाश ग्रहण करेगा ।

सन्तुलित नीति जीवन के प्रत्येक मामले में अभीष्ट है । बुद्धिमान वही है जो जीवन के हर मामले में बीच की नीति अपनाए ।

२. अर्थात् 'दीन' (धर्म) मनुष्य के लिए सकट बन कर नहीं उतरा है । 'दीन' वास्तव में जीवन के वास्तविक और स्वाभाविक नीति का नाम है । जीवन

३. हज़रत अबू अब्दुल्लाह जाबिर बिन समरा रज़ि० कहते हैं कि मैं नबी सल्ल० के साथ 'नमाज़' में शरीक था, आप की 'नमाज़' भी सन्तुलन के साथ थी और आप का 'खुतबा' (भाषण) भी सन्तुलन के साथ था^३।

—मुस्लिम

४. हज़रत अम्मार रज़ि० कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० को कहते सुना . किसी व्यक्ति की 'नमाज़' का लम्बी होना और उस के खुतबे का संक्षिप्त होना उस के 'फकीह' ('दीन' की समझ रखने वाला) होने का प्रमाण है। अतः 'नमाज़' को लम्बी करो और 'खुतबे' को संक्षिप्त रखो। निस्सन्देह कुछ 'खुतबे' जादू होते हैं^४। —मुस्लिम

के स्वाभाविक मार्ग पर चलना ही मनुष्य के लिए सहज है यह और बात है कि कोई अपने स्वभाव और प्रकृति का ही वैरी हो जाए। बुद्धिहीनता, परिणाम की ओर से दृष्टि हटा लेने और दूसरी अनुचित प्रेरणाओं के कारण अधिकतर ऐसा हुआ है कि सहज और स्वाभाविक धर्म को लोगो ने अपने लिए दुस्साध्य बना लिया। और अपनी गढ़ी हुई मुसीबतों को धर्म और मज़हब की सज़ा दे ली।

इस 'हदीस' से जो बात मन में बैठानी अभीष्ट है वह यही कि 'दीन' में तुम्हारे लिए वही मार्ग पसन्द किया गया है जिसे तुम अपना सको। इसलिए 'दीन' में अतिशयोक्ति से काम न लो। ऐसा न हो कि तुम अपनी ओर से कोई असन्तुलित नीति अपनाओ और जीवन को अपने लिए एक बोझ बना लो। प्रत्येक ज़िम्मेदारी को समझो। सुबह-शाम अल्लाह की 'इबादत' करो और रात के कुछ भाग में भी उसके सामने खड़े हो। इस प्रकार अपने लिए वह शक्ति संचित करते रहो जिसके द्वारा जीवन-यात्रा की सारी कठिनाइयाँ दूर हो जाएँ। और तुम सानन्द सफलता प्राप्त कर सको। कुरआन में है : "अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है और तुम्हारे लिए सख्ती नहीं चाहता।" २ : १८४

३. अर्थात् न तो आपने लम्बी 'नमाज़' पढाई और न बहुत संक्षिप्त। यही हाल आपके भाषण का भी था। खुतबा ऐसा लम्बा न था कि सुनने वाले घबरा जाएँ।

४. मतलब यह है कि 'खुतबा' बहुत लम्बा नहीं होना चाहिए। खुतबा के मुकाबले में 'नमाज़' लम्बी होनी चाहिए। यह बड़ी नासमझी की बात होगी कि आदमी 'नमाज़' तो बहुत छोटी पढाए परन्तु 'खुतबा' उसका बहुत लम्बा हो।

५. हजरत इब्न अब्बास रजि० कहते हैं कि नबी सल्ल० 'खुतबा' दे रहे थे, तो आप ने देखा कि एक व्यक्ति खड़ा हुआ है। आपने उस के बारे में पूछा। लोगों ने कहा वे अबू इसराईल हैं। उन्होंने ने 'नज्र' मानी है कि वे धूप में खड़े रहेंगे, न बैठेंगे और न छाया लेंगे, न बात-चीत करेंगे और रोजा रखेंगे। आप ने कहा उन से कहो कि बात-चीत करे, छाया ले, बैठे और 'रोजा' पूरा करें^५ —बुखारी

६. हजरत आइशा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : अल्लाह की दृष्टि में उत्तम कर्म वह है जो सदैव किया जाए यद्यपि वह थोड़ा ही क्यों न हो^६ —मुस्लिम, बुखारी

७. हजरत अनस रजि० कहते हैं कि अल्लाह के रसूल सल्ल०

कुछ 'खुतबे' ऐसे मन में उतर जाने वाले होते हैं जिनमें जादू का सा असर होता है। 'खुतबा' का छोटा होना उसके प्रभाव को कम नहीं करता बल्कि इससे उसका प्रभाव और बढ़ सकता है।

५. मतलब यह है कि 'दीन' और 'शरीअत' से अभीष्ट मनुष्य की शारीरिक यन्त्रणा और मनोदमन कदापि नहीं है। इस्लाम में जो चीज अभीष्ट है वह मनोनिग्रह और मन का नियंत्रण है न कि मनोदमन। मन की इच्छा पर क्राबू पाने के लिए 'रोजा' काफी है।

इस 'हदीस' से यह भी मालूम हुआ कि यदि किसी ने गलत और धर्म-विरुद्ध कोई नज्र या मन्नत मानी है तो उसका पूरा करना कदापि अनिवार्य नहीं है बल्कि उसे न पूरा करना ही आवश्यक है।

६. किसी कर्म पर निरन्तर जमे रहने का बड़ा महत्व है। मुस्लिम का प्रत्येक कर्म उस सम्बन्ध को व्यक्त करता है जो उसे अपने 'रब' से होता है। किसी नेक काम को ग्रहण करके उसे छोड़ देने का अर्थ केवल उस कर्म को छोड़ देना नहीं है बल्कि इस से उस सम्बन्ध को आघात पहुँचता है जो मनुष्य को अपने 'रब' से होता है। जाहिर है यह चीज कभी भी प्रिय नहीं हो सकती कि मनुष्य के उस सम्बन्ध और सम्पर्क में किसी प्रकार की कमी पैदा हो जो उसने अपने 'रब' से स्थापित किया हो। कर्म पर निरन्तर दृढ़ रहना उस समय सम्भव है जबकि मनुष्य की चेतना जाग्रत हो और वह 'इबादत' और कर्म में सन्तुलित नीति अपनाए। उतना ही बोझ उठाए जितना वह उठा सकता हो। सन्तुलित नीति के द्वारा ही वह अपने जीवन में भी सन्तुलन पैदा कर सकता है।

कहा करते थे कि अपने-आप पर सस्ती न करो अन्यथा फिर अल्लाह भी तुम पर सस्ती करेगा। एक जाति ने अपने-आप पर सस्ती की थी, तो अल्लाह ने भी उस पर सस्ती की। ये जो लोग 'सौमयो और 'दैरो' में पाए जाते हैं ये उन्हीं के स्मारक और अवशेष हैं। 'रुहवानियत' ('वैराग्य') उन्होंने स्वयं निकाली थी हम ने (अल्लाह ने) उसे उन पर अनिवार्य नहीं किया था*।

८. हज़रत आउशा रजि० से उल्लिखित है कि उन के पास एक स्त्री बैठी थी उसने मे नबी सल्ल० आए। आपने कहा : ये कौन हैं ? कहा : ये अमुक स्त्री है और उन की 'नमाज़' की बड़ी चर्चा है (कि ये 'नमाज़ों' का पढती है)। आप ने कहा : रुक जाओ, तुम पर उतना ही दायित्व है जितना तुम में शक्ति हो। अल्लाह न उकताएगा जब तक तुम न उकताओ। अल्लाह को वही 'दीन' और आज्ञापालन अधिक प्रिय है जिस पर उस का ग्रहण करने वाला निरन्तर जमा रहे^८। —बुखारी, मुस्लिम

९. हज़रत अबू हुरैरा रजि० से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा : तुम में से किसी को केवल उस का कर्म छुटकारा न दिनाएगा। लोगो ने कहा क्या आप को भी नहीं ? हे अल्लाह के रसूल ! आप ने कहा : मुझे भी नहीं सिवाय इस के कि अल्लाह मुझे अपनी दयालुता से ढक ने। अतः बीच का मार्ग ग्रहण करो और सन्तुलित नीति अपनाओ और प्रातः काल और सन्ध्या समय और कुछ रात के भाग में बीच की चाल चलते रहो, अभीष्ट स्थान पर पहुँच जाओगे^९।

—बुखारी, मुस्लिम

७. दे० कुरआन सूरा अल-हदीस आयत २७। मतलब यह कि अल्लाह ने जितने भी आदेश दिये हैं वे स्वाभाविक और व्यवहार में लाने योग्य हैं। तुम स्वयं अपने लिए प.वन्दियाँ और कठिनाइयाँ न पैदा करो। इसमें पहले एक जाति (यहूद और नगारा) ने स्वाभाविक धर्म की अवहेलना की और अपने लिए तरह-तरह के दुष्माध्यम कर्म और मशक्कतें ढकली, तो अल्लाह ने भी उसके साथ सस्ती की। यह वैराग्य की रीति ईसाइयो ने स्वयं निकाली थी इसका आदेश उन्हें अल्लाह ने कदापि नहीं दिया था।

८. मनुष्य की वही वन्दगी, उपासना, 'इबादत' और कर्म अल्लाह को प्रिय और वास्तविकता की दृष्टि से विश्वास करने योग्य है जो जीवन में सम्मिलित हो चुका हो, जो क्षणिक और सामयिक न हो।

९. अर्थात् मनुष्य को यह धोखा कदापि न होना चाहिए कि वह अपने कर्मों के

बल पर 'जन्नत' में प्रवेश करेगा । बन्दगी का हक किस से अदा हो सका है । मनुष्य के लिए उचित नीति यही हो सकती है कि वह जीवन में सन्तुलित नीति अपनाए और अल्लाह की दया और उसकी कृपा पर भरोसा रखे । निश्चय ही उस पर ईश्वर की कृपा होगी । और वह अपने अभीष्ट स्थान को पा लेगा ।



हदीस शास्त्र

हदीसों को जाँच-परख और उन को रक्षा के लिए 'मुहद्दीसीन' (हदीस के विशेषज्ञों) ने विभिन्न शास्त्रों को रचना की है उन में से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है :

१. अस्माउर्रिजाल (नाम शास्त्र)

इस में 'रावियों' (हदीस के उल्लेखकर्ता) के वृत्तान्त का उल्लेख होता है। यह मानो 'हदीस' के रावियों की जीवनी है। इस शास्त्र के द्वारा यह भाजूम किया जाता है कि कौन सा रावी किस दर्जे का है। और किसी रिवायत में उन पर कहाँ तक भरोसा किया जा सकता है।

२. इल्मुरिवायत (उल्लेख एवं कथन शास्त्र)

इस में हदीस की 'रिवायत' और उसे सुरक्षित रखने के विषय पर विवेचन होता है।

३. इल्मुद्दरायत (मीमांसा शास्त्र)

इसमें हदीस के मौलिक शब्दों के बारे में छान-बीन और उसके परखने के नियमों का वर्णन होता है।

४. तदवीनुल हदीस (संकलन शास्त्र)

इस में 'हदीस' के संगृहीत करने के विषय का वर्णन एवं विवेचन होता है।

५. अन-नामिख वलमसूख (निवर्तन एवं निरसन शास्त्र)

इस शास्त्र में इस पर तर्क-वितर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि कौन सी हदीस 'नासिख' (मसूख करने वाली) है और कौन सी मसूख है और उसे किन कारणों से मसूख निर्धारित किया जा रहा है।

६. शानेनुजूल (अवतरण शास्त्र)

इस में इस का उल्लेख होता है कि कौन सी हदीस किस समय और अवस्था की है। नबी सल्ल० ने कौन सी बात किस अवसर पर कही है।

७. अन-नज़र फिल असनाद (माध्यम व्यक्तियों की पड़ताल)

इस में हदीस की सनद के सिलसिले का उल्लेख और उस पर बहस की जाती है।

८. कंफ़यितु रिवायत (उल्लेख एवं कथन स्थिति)

इस में इस का उल्लेख होता है कि 'रावी' ने हदीस किस तरह रिवायत की है। और इस के दर्जे क्या है ?

९. अलफ़ाजुल हदीस (हदीस के शब्द)

मुहद्दिसों (हदीस के विशेषज्ञों) के पारिभाषिक शब्द क्या है ? और जिन शब्दों में हदीस रिवायत की गई है वे शब्द नबी सल्ल० के हो सकते हैं या नहीं ? इस में इसी विषय पर बहस की जाती है।

१०. तबक्कातुल हदीस (हदीस की श्रेणियाँ)

इस में इस पर बहस होती है कि कौन सी हदीस किस दर्जे की है ? और उस के रावी (उल्लेखकर्ता) किस तबके (श्रेणी) से सम्बन्ध रखते हैं ?

११. गरीबुल हदीस (अपरिचित हदीस)

अपरिचित शब्द यदि हदीस में आये है तो उन का क्या अर्थ है और हदीस में वे किस उद्देश्य से प्रयोग हुये हैं ?

१२. अल-जिह् वत्तादील (विवाद एवं न्याय निर्धारण)

इस में रावियों के विश्वसनीय या अविश्वसनीय होने के कारणों पर बहस की जाती है।

१३. तुरूकुल अहादीस (हदीस के विभिन्न सिलसिले)

कुछ हदीसों से सनद के कई सिलसिले से रिवायत की गई है और विषय के अनुसार उन के टुकड़े हदीस के ग्रन्थों के विभिन्न अध्यायों में उद्धृत किये जाते हैं। तुरूकुल अहादीस में इस का विस्तृत उल्लेख होता है। बुखारी में इस प्रकार की रिवायतें बहुत मिलती हैं।

१४. अल-मौजूआत (मन गढ़न्त हदीसों)

मन गढ़न्त हदीसों को पहचानने का क्या उपाय है ? इस में इसी पर बहस की जाती है।

१५. इलल हदीस (हदीस सम्बन्धी कुछ विशेष ध्यान देने योग्य बातें)

यह अत्यन्त कठिन शास्त्र है। इसमें इसका विस्तृत वर्णन होता है कि किसी हदीस के 'रावी' कब पैदा हुए। उन का देहान्त कहाँ हुआ ? जन्म

मृत्यु तक क्या हालत रही ? कहाँ निवास ग्रहण किया ? उन के नाम, उपाधि, उपनाम, कुन्नियत^१ क्या थी ? उन की स्मरण शक्ति कैसी थी ? सूझ-बूझ की दृष्टि से वे किस दर्जे के थे ?

१६. तसहोफुल असमा (नाम-उच्चारण की अशुद्धता)

इसमें परस्पर मिलते-जुलते नामों का स्पष्टीकरण और व्याख्या की जाती है ताकि उन में अन्तर किया जा सके और नामों की एकरूपता के कारण 'रावी' के समझने में किसी प्रकार का धोखा न हो ।

१७. मुतशाबिह (नामों में सादृश्य)

कभी ऐसा होता है कि रावियों के नाम और उन के उच्चारण में एकरूपता पाई जाती है लेकिन उनके पिता के नाम लिपि में एक होने के बावजूद उच्चारण में विभिन्न होते हैं या इस के विपरीत रावियों के नामों में एक रूपता हो और उन के पिता के नाम एक हो । इसे 'मुतशाबिह' कहते हैं । इस विषय पर नवीन बगदादी का एक ग्रन्थ है ।

इस मिसिले में 'मुहद्दिसो' ने अत्यन्त सूक्ष्म अन्तर की जाँच-पड़ताल की है और सन्देह को हर छोटी-बड़ी सम्भावना को दूर करने को सफल कोशिश की है ।

१८. मोतलिफ व मुलतलिफ (अनुरूप और भिन्न)

इस में उन रावियों में अन्तर करते हैं जिन के नाम लिपि की दृष्टि से एक हो लेकिन उच्चारण में भिन्न हो । इस विषय पर कई ग्रन्थ लिखे गये हैं जिन में सब से प्रसिद्ध और उपयोगी 'तबसीरुल मुनतबिह वितहरीरिल मुशतबिह' है ।

१९. मुत्तफिक व मुतफरिक (एक रूप और विभिन्न)

विभिन्न रावियों के नाम, कुन्नियत और वश एक हों तो उन में अन्तर करने के लिए विस्तार के साथ बताया जाता है कि इस नाम, 'कुन्नियत और वश के कितने 'रावी' हैं, किन्तु तबको (श्रेणियों) में है और

१ वह नाम जो किसी नाते-रिश्ते पर आधारित होता है । 'कुन्नियत' का रिवाज अधिकतर अरबी नामों में पाया जाता है । अरब के लोग एक-दूसरे को नाम लेने के बदले माता-पिता बेटा, बेटा में सम्बन्ध लगाकर पुकारते थे । जैसे अबू हाशिम अर्थात् हाशिम के बाप, उम्मे सल्मा अर्थात् सल्मा की माता ।

हृद एक ने किस-किस से रिवायत की है। परिभाषा में इसे मुत्तफिक व भुतफरिक कहते हैं। खतीब बगदादी का इस पर एक ग्रन्थ है

२०. अल-अहदान (अल्प रिवायत वाले)

इस में उन रावियों का उल्लेख किया जाता है जिन की रिवायत की हुई 'हदीसे' बहुत थोड़ी हैं।

२१. रिवायतुल आबा अन अबना (पिता की रिवायत पुत्र से)

इस में बेटे से पिता के रिवायत करने के सिलसिले में वहस की जाती है।

२२. रिवायतुल सहाबा अनित्ताबिईन ('सहाबा' की रिवायत 'ताबई' से)

इस में सहाबा के 'ताबईन' से 'रिवायत' करने के सिलसिले में वहस की जाती है। और इस के कारण आदि पर प्रकाश डाला जाता है।

२३. अल-अमा वत्तफरीक (एकता व अनेकता)

इस में अपरिचित रावियों के वृत्तान्त पर प्रकाश डाला जाता है।

२४. आरिफतुल हदीस (हदीस का ज्ञान)

इस में हदीस से सम्बन्धित विद्याओं की वास्तविकता पर प्रकाश डाला जाता है।

२५. अल-असबाब (कारण शास्त्र)

इस में हदीस के कारणों का उल्लेख होता है।

२६. तबक़ातुल मुदल्लिसीन (मुदल्लिसों की श्रेणियाँ)

'दल्स' का अर्थ है क्रय-विक्रय में ऐब को छिपाना। प्रकाश और अन्धकार के परस्पर मिले-जुले होने को भी 'दल्स' कहते हैं। मुदल्लिस रिवायत ऐसी रिवायत है जिस का रावी (उल्लेखकर्त्ता) ऐसे शब्द प्रयोग करता है जिस से यह भ्रम होता है कि वह जिस के माध्यम से रिवायत कर रहा है उस से उस ने प्रत्यक्ष रूप से सुना है हालाँकि रिवायत प्रत्यक्ष उस की सुनी हुई नहीं होती बल्कि रिवायत उस तक किसी दूसरे व्यक्ति के द्वारा पहुँची हुई होती है। हदीस के विशेषज्ञों ('मुहद्दिसों') ने केवल झूठी हदीसों गढ़ने वालों का ही पता नहीं लगाया बल्कि उन्होंने अपने असाधारण परिश्रम से 'मुदल्लिसों' पर भी ग्रन्थ तैयार किये हैं। इब्न हजर की भी इस पर एक किताब है, जिस में १५२ मुदल्लिसों का उल्लेख किया गया है, जिन को पाँच तबको (श्रेणियों) में विभक्त किया है। पहले तबके में कुल ३३ व्यक्ति हैं, दूसरी श्रेणी में भी ३३, तीसरे में ५०, चौथे में १२ और पाँचवे तबके में २४ व्यक्ति हैं।

पारिभाषिक शब्दावली

हदीस सम्बन्धी पारिभाषिक शब्द :—

हदीस

यों तो 'हदीस' का अर्थ होता है बात परन्तु यह शब्द अत्यन्त व्यापक है। किसी के कथन, अभिप्राय, वृत्तान्त, घटना सब के लिए इस का प्रयोग हो सकता है। पारिभाषिक रूप में नबी सल्ल० के कथन, कर्म और 'तकरीर' को 'हदीस' कहते हैं।

सहाबी

उस सौभाग्यशाली व्यक्ति को सहाबी कहते हैं जिसे 'ईमान' की हालत में 'नबी' सल्ल० से भेट का श्रेय प्राप्त हुआ हो और 'ईमान' ही की हालत में उस का देहान्त हुआ हो।

ताबई

वह सौभाग्यशाली व्यक्ति जिसे 'ईमान' की दशा में किसी 'सहाबी' से मिलने का श्रेय प्राप्त हुआ हो और 'ईमान' ही की दशा में संसार से उस ने प्रस्थान किया हो।

तबाताबईन

वे अदरणीय जन जिन्होंने 'ईमान' की हालत में किसी 'ताबई' से भेट की हो और 'ईमान' ही की दशा में उन का देहान्त हुआ हो।

असर

साधारणतः 'सहाबा' (रजि०) के कर्म और कथन को 'असर' कहा जाता है। इस का बहुवचन 'आसार' है।

सनद

'हदीस' को 'रिवायत' करने वालों के सिलसिले को 'सनद' कहते हैं।

मत्न

'हदीस' के मूल शब्दों को 'मत्न' कहते हैं।

मौलिक रूप से हदीस के भेद :—

मौलिक रूप से 'हदीस' के दो भेद किये जाते हैं।

- १ तकरीर का मूल अर्थ है किसी चीज को ज्यों का त्यों बाकी रखना। नबी सल्ल० के सामने कोई कार्य किया गया, या आपने कोई रीति प्रचलित देखी और उसे आपने रोका नहीं, परिभाषा में इसे तकरीर कहते हैं।

१. सरीही

वह 'हदीस' जिस में स्पष्ट रूप से इस का उल्लेख हो कि वह नबी सल्ल० का कथन या किया हुआ कार्य है या 'तकरीर' है ।

(२) हुक्मी

वह 'हदीस' जिस का सम्बन्ध नबी सल्ल० से तो स्थापित न किया गया हो लेकिन उस में जिन बातों का 'सहाबी' ने उल्लेख किया हो वे ऐसी हो कि नबी सल्ल० के सिवा कोई उन्हें बता नहीं सकता । जैसे 'कियामत' के लक्षण, कियामत से सम्बन्धित घटनाएँ, 'नबियो' के वृत्तान्त जिन में इस बात का कोई संकेत न पाया जाता हो कि वे 'बनी इसराईल' से उद्घृत हैं ।

हदीस कुदसी

जिस 'हदीस' को नबी सल्ल० अल्लाह के माध्यम से वयान करे, उसे हदीस कुदसी' कहते हैं ।

सनद की दृष्टि से हदीस के भेद —

'सनद' की दृष्टि से हदीस के निम्नलिखित भेद हैं

१. मरफूअ

जिस 'हदीस' की रिवायत का सिलसिला नबी सल्ल० तक पहुँचता हो ।

२. मौकूफ

जिस हदीस की रिवायत का सिलसिला 'सहाबी' पर पहुँच कर समाप्त हो जाता हो ।

३. मकतूअ

जिस 'हदीस' की 'सनद' 'ताबई' तक पहुँच कर समाप्त हो जाती हो ।

कुछ लोग 'मौकूफ' और 'मकतूअ' को 'असर' कहते हैं अर्थात् वे 'सहाबा' और 'ताबई' के कौल और अमल (कथन और किये हुए कार्य) को क्रमशः 'मौकूफ' और 'मकतूअ' कहते हैं ।

४. मुसनद

वह 'मरफूअ' हदीस जिस को सनद 'मुत्तसिल' (अविच्छिन्न) हो। मुसनद का यही अर्थ प्रसिद्ध है।

५. सलासियात

उन 'हदीसों' को कहते हैं जिन में 'रावी' और नवी सल्ल० के बीच केवल तीन वास्ते (माध्यम व्यक्ति) पाये जाते हो।

रावियों ('हदीस' के उल्लेखकर्त्ताओं) के निहाज से 'हदीसे' पाँच प्रकार की हैं :—

१. मुत्तसिल

वह हदीस जिस की सनद के सिलसिले में आरम्भ से अन्त तक कहीं कोई रावी साकित न हो।

२. मुनक़त्तेअ

'मुत्तसिल' के विपरीत अर्थात् वह हदीस जिस की सनद के सिलसिले में कहीं एक या ज्यादा 'रावी' साकित हो गये हो।

३. मोअज़ल

वह हदीस जिसकी सनद के सिलसिले में निरन्तर दो या दो से ज्यादा रावी गायब हो।

४. मुअल्लक

वह 'हदीस' जिस की सनद के आरम्भ में एक या कई एक रावी छोड़ दिये गये हों या पूरा सनद ही का विलाप (हजफ) कर दिया गया हो। पारिभाषिक रूप में इस विनोप को 'तालोक' कहते हैं।

५. मुरसल

वह हदीस जिस की सनद के सिलसिले में 'तावई' और नवी सल्ल० के बीच 'सत्तावी' का जिक्र न हो।

विद्वानों का मत है कि 'मुरसल' हदीस के बारे में 'नववकुफ' करना चाहिए (खामाश रहना चाहिए) क्योंकि मान्य नहीं कि नाक़िल होने वाला रावी 'सिका' (विश्वसनीय) है या गैर सिका (अविश्वसनीय)। यह जरूरी नहीं है कि 'तावई' ने किसी 'सहाबी' में ही रिवायत की हो। इस की सम्भावना है कि उस ने किसी 'तावई' में रिवायत की हो। निम्न इमाम अबू हनीफा रह० और इमाम मालिक रह० की इम्ति = मुरसल

हदीस को निःसकोच स्वीकृति प्राप्त है, क्योंकि 'इरसाल' करने वाले (मुरसल ढग से बयान करने वाले) ने पूर्ण विश्वास के कारण ही 'इरसाल' किया होगा। यदि उस की दृष्टि में रिवायत विश्वास के योग्य न होती तो वह 'इरसाल' क्यों करता और उस का सम्बन्ध नवी सल्ल० से क्यों जोड़ता। इमाम शफई रह० की दृष्टि में यदि उस की पुष्टि दूसरी किसी 'रिवायत' से होती हो—यद्यपि वह दूसरी रिवायत भी मुरसल ही क्यों न हो—तो उसे स्वीकृति प्राप्त होगी।

यदि 'रावी' (उल्लेखकर्त्ता) के बारे में यह मालुम हो कि वह 'सिका' और 'गैर सिका' (विश्वसनीय और अविश्वसनीय दोनों प्रकार के व्यक्तियों) को साक्षित कर देता है तो सभी की दृष्टि में रिवायत के बारे में 'तवक्कु' किया जायेगा (खामोश रहा जायेगा)।

दर्जे और मरतबे की दृष्टि में हदीस के भेद :—

दर्जे और मरतबे की दृष्टि से हदीसे तीन प्रकार की मानी जाती हैं

१. सही

वह हदीस जिस में निम्नलिखित बातें मौजूद हों

(१.) 'सनद' की दृष्टि से मुत्तसिल हो। (२.) 'रावी' आदिल (न्यायशील) और चरित्र की दृष्टि से विश्वसनीय हो। (३.) स्मरण शक्ति क्षीण न हुई हो और साथ ही विवेकशील भी हो। (४.) रिवायत 'शाज' न हो। (५.) 'मुअल्लल' भी न हो।

'शाज' और 'मुअल्लल' से अभिप्रेत क्या है ? आगे इसे स्पष्ट किया जा रहा है। यदि ये समस्त शर्तें पूरी होती हो तो रिवायत को 'सही लिजातिही' कहा जायेगी लेकिन रावी में यदि कोई त्रुटि या कमी हो और वह कभी 'तुरुक' की अधिकता से पूरी हो जाती हो तो उस की रिवायत की हुई हदीस को 'सही लिगैरिही' कहेंगे।

२. हसन

वह रिवायत जिस में सही हदीस की समस्त शर्तें पूरी होती हों केवल स्मरण शक्ति या सुरक्षा (जब्त) की दृष्टि से हल्कापन हो। यदि इस तरह की 'हसन' रिवायत को दूसरी इसी प्रकार की रिवायतों का समर्थन प्राप्त हो तो उसे 'सही लिगैरिही' कहेंगे।

जिस हदीस के रावी 'हसन' के रावी से कम दर्जे के हो परन्तु वह कई एक 'सनदों' से पहुँची हो उसे हसन लिगैरिही' कहेंगे।

३. जईफ

ऐसी 'रिवायत' जिन में 'नही' हदीस के समस्त गुणों और शर्तों में या कुछ में सम्पन्न अभी पाई जाती हो।

जई 'जईफ' हदीसों के परस्पर मिलने से उनकी गणना 'हसन निगैरिही' की श्रेणी में होता है लेकिन गर्त यह है कि यह 'जोफ' (कमजोरी) शरीफ की दृष्टि में न है।

'नही हदीस' घायेन की दृष्टि में हज्जन (दलील) है, इस पर सभी सहमत हैं। 'हसन निजातिही' का हक भी अधिकतर विद्वानों की दृष्टि में हदीस नही जैसा है यद्यपि मरतबे में उन से कम है। 'जईफ हदीस' यदि जई 'तुर्क' (मनदो के गिनगिने) कारण 'हसन निगैरिही' के दर्जे को पहुँच जाय तो घायेन में इनके हज्जन (दलील) होने पर सभी सहमत हैं।

रावियों के अनेकता की दृष्टि में हदीस के भेद —

ग्यान (गानियों) की अनेकता की दृष्टि में हदीसों के तीन प्रकार की मानी जाती हैं :

१. मुतवातिर — यह हदीस जिनके रावी हर युग में इतने अधिक पाये जाते हैं कि उनका झूठ पर नदमत हो जाना सम्भव न हो।

'तवातुर' के कई भेद हैं :—

१. तवातुरे तवहा या तवातुरे लपजी—एक युग से दूसरे युग तक पूर्ण फैलाव के साथ रिवायत का सिलसिला पाया जाता हो जैसे कुरआन मजीद अक्षरों की रंग से हम तक पहुँचा है।

२. तवातुरे अमल—नबी सल्ल० के समय से लेकर अब तक मुसलमानों का एक बड़ा गरोह निरन्तर किसी धार्मिक विषय में अमल करता आ रहा हो जिनका झूठ पर एका करना अगम्भव हो। उदाहरणार्थ पाँच वक्त की नमाज, अजान, नमाज का मौलिक रूप, 'जकात', रोजा, हज्ज, क़रवानी आदि।

३. तवातुरे मानवी या तवातुरे कद्रेमुस्तरक — रावियों के शब्द यद्यपि विभिन्न हो परन्तु शब्दों का आशय और अर्थ एक हो और यह एक 'तवातुर' के दर्जे को पहुँचा हुआ हो। उदाहरणार्थ नबी सल्ल० के 'मोजजे' (चमत्कार), दुआ में हाथ उठाना, गजवान (युद्ध जिसमें नबी सल्ल० शरीक हुये), आपका जीवन वृत्तान्त, इस्लाम के आवश्यक आदेश, वैशा-

निक और निषेधात्मक आदेशों से सम्बन्ध रखने वाली 'रिवायत' ।

२. खबर वाहिद या आहाद—जिसके रावी सख्या की दृष्टि से 'तवातुर' के दर्जे को न पहुँचे हो ।

'मुहदिसो' (हदीस के विशेषज्ञों) ने 'आहाद' के तीन भेद बताये हैं :—

१. मशहूर—वह 'हदीस' जिसके रावी 'सहाबा' के बाद किसी युग में भी तीन से कम न हो बल्कि हर तबके में 'रावियों' की सख्या तीन से अधिक हो । 'मशहूर' को कुछ लोग 'मुस्तफीज' भी कहते हैं ।

२. अजोज—वह 'हदीस' जिसके 'रावी' हर युग में दो से कम न हो ।

३. गरीब—ऐसा 'हदीस' जिसका सनद के सिलसिले में किसी युग में एक ही 'रावी' हो । 'गरीब' को 'फर्द' भी कहते हैं ।

'फर्द' अथवा 'गरीब' के दो भेद किए गये हैं :—

१. फर्द मुतलक—'सहाबी' से रिवायत करने वाला रावी केवल एक हो तो उस हदीस को 'फर्द मुतलक' कहते हैं ।

२. फर्द नसबी—'सहाबी' से रिवायत करने वाले दो या कई हैं लेकिन उनके बाद के तबके में 'रावी' केवल एक है तो उसे 'फर्द नसबी' कहेंगे ।

मुताबेअ—'फर्द' हदीस के 'रावी' के बारे में गुमान था कि उसकी 'रिवायत' केवल एक 'रावी' ने की है उसका कोई दूसरा 'रावी' मिल जाए तो उस 'हदीस' को 'मुताबेअ' कहेंगे ।

शाहिद—एक 'हदीस' किसी 'सहाबी' ने रिवायत की है । ऐसी दूसरी 'हदीस' किसी दूसरे 'सहाबी' से मिल जाए जिस से पहली 'हदीस' की पुष्टि होती हो तो उसे 'शाहिद' कहते हैं ।

विरोध की दृष्टि से हदीस के भेद :—

विरोध की दृष्टि से 'हदीसे' चार प्रकार की मानी जाती हैं :—

१. शाज—वह 'हदीस' जिसमें 'सिका' (विश्वसनीय) रावी अपने से बलशाली का विरोध करता हो ।

२. महफूज—वह 'हदीस' जिसका रावी 'सिका' (विश्वसनीय)

हो लेकिन उसका विरोध एक ऐसा 'सिका' (विश्वसनीय व्यक्ति) करता हो जिन में वह बननाली हो ।

३. मुनकर—वह 'हदीस' जिसका रावी (उल्लेखकर्त्ता) 'जईफ' (कमजोर) हो और वह 'सिका' (विश्वसनीय व्यक्ति) या बलशाली रावी का विरोध करता हो ।

४. मारुफ—ऐसी 'हदीस' जिसका 'रावी' (उल्लेखकर्त्ता) बलशाली हो, उसका विरोध कमजोर रावी ने किया हो ।

कुछ विशेष पारिभाषिक शब्द

१. मकबूल—वह 'हदीस' जिसे 'रिवायत' और 'दरायत' (गोमाना) की दृष्टि में हदीस के 'इमामो' (विशेषज्ञो) ने हुज्जत (दलील) के योग्य समझा हो ।

२. मरदूद—ऐसी 'हदीस' जिसे 'रिवायत' और 'दरायत' की दृष्टि में हदीस के विशेषज्ञो ने हुज्जत (दलील) के योग्य न समझा हो ।

३. मुहफम—ऐसी 'मकबूल' हदीस जिसका विरोध किसी दूसरी 'हदीस' में न होता हो ।

४. मुखतलिफुल हदीस—किसी 'मकबूल' हदीस के विरुद्ध कोई दूसरी 'मकबूल' हदीस आजाए लेकिन सोच-विचार के पश्चात् दोनों में अनुकूलता की प्रतीत हो तो उसे 'मुखतलिफुल हदीस' कहेंगे ।

५. नासिख व मन्सूख—'मकबूल' हदीस के मुकाबले में कोई दूसरी 'मकबूल' हदीस आ जाए और दोनों में अनुकूलता सम्भव न हो तो जो हदीस पहले की ('मुकदम') होगी वह मन्सूख ठहरेगी और जो बाद की ('मुअख्खर') होगी उसे नासिख (मन्सूख करने वाली) ठहरायेगे । शर्त यह है कि दोनों के उल्लेखकर्त्ता ('रावी') एक ही दर्जे के हो ।

६. मुतवक्किफ फीह—जिन 'हदीसो' में टकराव पाया जाता हो और दोनों में अनुकूलता असम्भव हो और 'शाने नुजूल' की दृष्टि से उनमें से किसी को 'नासिख' या 'मन्सूख' ठहराना भी सम्भव न हो तो दोनों में अमल करने में 'तवक्कुफ' किया जायेगा (रुका जायेगा) ।

७. मुअल्लल—वह 'हदीस' जिसमें कोई ऐसी गुप्त त्रुटि पाई जाती हो जिसे हदीस के विशेषज्ञ ही माँप सकते हो उदाहरणार्थ

किसी भ्रम के कारण 'मरफूअ' को 'मौकूक' ठहरा लिया गया हो आदि ।

८. मौजूअ—वह 'हदीस' जो मन घडत हो, जिसकी सनद के सिलसिले में ऐसा व्यक्ति मौजूद हो जो 'हदीसे घड़कर बयान करता हो ।

९. मतरूक—जिसे किसी झूठे व्यक्ति ने रिवायत की हो ।

१०. मुदर्रज—इसके दो भेद हैं —

१ मुदर्रजुल इसनाद—जिसकी सनद में परिवर्तन कर दिया गया हो ।

२ मुदर्रजुल मत्न—हदीस के 'मत्न' (मूल शब्दों) में 'सहाबी' या 'ताबई' का कौल (कथन) सम्मिलित कर दिया गया हो । चाहे किसी शब्द का अर्थ बयान करने के लिए सम्मिलित किया गया हो या किसी अर्थ को स्पष्ट करने के लिए 'मुतलक' अर्थात् मुक्त आशय को निश्चित रूप देने (तकईद) के ध्येय से मिलाया गया हो वह हदीस 'मुदर्रज' होगी ।

११ मकलूब—वह हदीस जिसमें 'रावी' आगे-पीछे (मुकद्दम व मुअख्खर हो गए हो या 'हदीस' के शब्द आगे-पीछे हो गये हो अर्थात् 'इस्नाद' (सनदों) या 'मत्न' (हदीस के मूल शब्दों) में उलट-फेर हुआ हो ।

१२. मुजतरिब

हदीस की सनदों के सिलसिले में 'रावियों' का विभेद पाया जाता हो यह विभेद नामों के उलट-पलट (तकदीम व ताखीर) के कारण भी हो सकता है उदाहरणार्थ एक 'रावी' के स्थान पर दूसरा 'रावी' हो या 'सनदों' के सिलसिले के 'रावियों' के नामों में 'तसहीफ' (अनुरूपता), सक्षेप या विलोप हो या 'हदीस' के 'मत्न' (हदीस के मूल शब्द) में भी उलट-फेर हुआ हो । अर्थात् एक 'मत्न' की जगह दूसरा 'मत्न' हो । इसी प्रकार की दूसरी चीजों के कारण भी हदीस 'मुजतरिब' हो सकती है और यदि उनमें अनुकूलता सम्भव हो तो हदीस 'मकबूल' है अन्यथा उसके बारे में 'तवक्कुफ करेगे (खामोश रहेगे) ।

१३. मुसहहफ़ या मुहर्रफ़

'रावियों' (हदीस के उल्लेखकर्त्ताओं) के नाम में जिनके लिपि-रूप में समानता पाई जाती हो परिवर्तन कर दिया गया हो ।

१४. मुबहम

वह हदीस जिसके 'रावी' का नाम बयान न किया गया हो

१५. मस्तूर

वह 'हदीस' जिसे किसी ऐसे रावी ने रिवायत की हो जिसकी स्मरण शक्ति क्षीण हो गई हो और यह मालूम न हो सके कि यह 'हदीस' किस समय की है। उस समय की जब उसकी स्मरण शक्ति ठीक थी या उस समय की जब उसकी स्मरण शक्ति क्षीण हो गई थी।

१६. मुलतलत

जिमके 'रावी' (उल्लेखकर्ता) से भूल या गलती हो जाती हो।

१७. मुदल्लिस

'रावी' जिन्में रिवायत करे उस से उस की मुलाकात तो हो परन्तु 'रिवायत' उसने उससे स्वयं सुनी न हो परन्तु शब्द ऐसे प्रयोग करे जिससे यह भ्रम होता हो कि उसने उसे स्वयं सुना है। 'रावी' के ऐसे शब्दों के प्रयोग करने को जिसमें यह गुमान हो कि उसने स्वयं 'रावी' से 'रिवायत' ली है हालांकि रिवायत उसने किसी दूसरे के द्वारा ली है, 'तदलीस' कहते हैं। 'तदलीस' करने वाले को 'मुदल्लिस' कहा जाता है।

'मुदल्लिस' की 'रिवायत' स्वीकार की जाए या स्वीकार न की जाए इसमें मतभेद है। हदीस के विशेषज्ञों और 'फकीहों' की एक जमात के दृष्टि में 'तदलीस' ऐव है। जिस किसी के बारे में यह मालूम हो कि वह 'तदलीस' करता है उसकी 'हदीस' कबूल न की जाए। लेकिन बाकी सभी के विचार में ऐसे व्यक्ति की 'तदलीस' को स्वीकार किया जाएगा जिसके बारे में यह मालूम हो कि वह 'सिकात' (विश्वसनीय) की ही 'तदलीस' करता है जैसे इब्न उमैना। उस व्यक्ति की तदलीस स्वीकार नहीं की जाएगी जो 'जईफ' और 'गैरजईफ', सिका (विश्वसनीय) और गैर सिका (अविश्वसनीय) सब की तदलीस करता है। जब तक वह 'समेअतु' (मैंने सुना) या 'हद्सना' (हम से बयान किया) या 'अखबरना' (हमें खबर दी) जैसे शब्दों के द्वारा 'सिमाअ' (सुनने) को स्पष्ट न करे उसकी 'रिवायत' स्वीकार नहीं की जाएगी।

'तदलीस' के विभिन्न कारण थे। कभी तो किसी बुरे ध्येय से मनुष्य 'तदलीस' करता है। कभी 'रावी' 'तदलीस' राजनीतिक कारणों से करता है। कुछ महान व्यक्तियों ने 'तदलीस' इस लिए भी की है कि उन्हें 'हदीस' के सत्य होने पर पूर्ण विश्वास प्राप्त था।

१८ मुरसल खफी

‘मुदल्लस’ और ‘मुरसल खफी’ में सूक्ष्म अन्तर है, ‘तदलीस’ में तो ‘रावी’ से उस व्यक्ति की मुलाकात होती है जिस से वह रिवायत करता है लेकिन ‘मुरसल खफी’ में ‘इरसाल’ करने वाला यद्यपि उस का समकालीन होता है जिस से वह ‘रिवायत’ करता है परन्तु उस से उस की मुलाकात साबित नहीं होती ।

१९. ‘रिवायत मुअनअन’

‘मुअनअन’ उस रिवायत को कहते हैं जिसमें एक ‘रावी’ ऊपर के ‘रावी’ से ‘अन’ (से, by) शब्द द्वारा रिवायत करता है अर्थात् वह कहता है कि यह ‘रिवायत’ मुझ तक अमुक व्यक्ति में पहुँची । इस से यह बात स्पष्ट नहीं होती कि उसने यह ‘हदीस’ स्वयं सुनी है या बीच में कोई ‘रावी’ और भी है जिस को उसने छोड़ दिया । इसीलिए ‘मुअनअन’ में ‘तदलीस’ या ‘इरसाल’, अर्थात् हदीस के ‘मुदल्लस’ या ‘मुरसल’ होने का सन्देह होता है । लेकिन इससे इन्कार नहीं कि ‘अन’ (से) या ‘काल’ (कहा) शब्द का प्रयोग अधिकतर हदीस के शास्त्रियों की दृष्टि में सामान्यतः अनुज्ञा (मुतलक-इजाजत) और ‘इत्तसाल’ (प्रत्यक्ष सम्पर्क) के लिए होता रहा है

नोट :-

हदीस के विशेषज्ञों की कुछ अपनी निजी परिभाषाएँ भी हैं । उदाहरणार्थ इमाम तिरमिजी रिवायतों में साधारणतः यह स्पष्ट कर देते हैं कि यह हदीस ‘हसन सही’ है, ‘हसन गरीब’ है । कोई रिवायत ‘हसन-लिजातिही’ और सही लिगैरही’ हो सकती है । इस प्रकार उसका सही होना समझ में आता है । इसी प्रकार किसी रिवायत का एक साथ ‘गरीब’ और सही होना भी सम्भव है । लेकिन किसी रिवायत का एक साथ ‘हसन’ और ‘गरीब’ दोनों होना समझ में नहीं आता क्योंकि जब इमाम तिरमिजी ने ‘हसन’ में ‘तुरुक’ (सनद के सिलसिले) की अनेकता को दृष्टि में रखा है तो कोई ‘रिवायत’ ‘हसन’ और ‘गरीब’ दोनों कैसे हो सकती है । ‘हदीस’ के विशेषज्ञों ने कहा है कि इमाम तिरमिजी ने केवल एक प्रकार के ‘हसन’ में ‘तुरुक’ की अनेकता का विचार किया है, समस्त ‘हसन’ रिवायतों में उन्होंने इसका विचार नहीं किया है । कुछ लोगों का कहना है कि ‘हसन गरीब’ से अभिप्रेत यह है कि हदीस जिन सनदों से उल्लिखित है उनमें एक सनद की दृष्टि से उसे ‘हसन’ कहा जायेगा और दूसरी सनद की दृष्टि से उसे ‘गरीब’ कहेंगे ।

सामान्य पारिभाषिक शब्दावली

अल्लाह—‘अल्लाह’ शब्द वास्तव में ‘अल-इलाह’ था। इसमें ‘अल’ उसी प्रकार प्रयोग हुआ है जैसे अंग्रेजी में किसी शब्द से पहले *the* लगा कर उसे जानिवाचक से व्यक्ति वाचक बना लेते हैं। इस प्रकार ‘अल-इलाह’ या अल्लाह में अभिप्रेत एक विशिष्ट सत्ता है। अल्लाह का अर्थ हुआ एक प्रमुख और विशिष्ट ‘इलाह’ (इष्ट पूज्य)। ‘इलाह’ की व्याख्या इस शब्दावली में ‘इलाह’ शब्द के अन्तर्गत देखे।

अल्लाह आरम्भ में ही उन सत्ता का नाम रहा है जो समस्त गुणों से युक्त है। उस जैसा कोई नहीं। वह दोषरहित है। सम्पूर्ण विश्व उसी की रचना है और वह सम्पूर्ण विश्व का स्वामी तथा पालक है।

कुरआन के अवतरण से पूर्व भी अरब के लोग यह नाम इसी अर्थ में लेते थे।

अजान—‘नमाज’ की पुकार जो मस्जिदों में होती है ताकि लोग निश्चित समय पर ‘नमाज’ पढ़ने के लिए मस्जिद में एकत्र हो सके। ‘अजान’ में जिन शब्दों का उच्चारण किया जाता है उनमें इस्लामी धारणाओं को व्यक्त किया जाता है।

अनसार—१. ‘नासिर’ का बहुवचन है। सहायक, मददगार। २. मदीना के मुसलमान जिन्होंने नबी सल्ल०, आपके मिशन और साथियों की हर प्रकार से सहायता की जो ‘हिजरत’ कर के मदीना पहुँचे थे।

अरफात—एक ऊँची जगह का नाम है जो मक्का से ६ मील की दूरी पर स्थित है। जिलहिज्जा (एक अरबी महीने का नाम जिसमें ‘हज्ज’ किया जाता है) की ६ वी तारीख को सब ‘हज्ज’ करने वालों के लिए यहाँ पहुँच कर ठहरना आवश्यक है।

अर्श—राज सिंहासन (*throne*), ईश्वरीय सिंहासन।

‘अर्श’ और उस पर अल्लाह के विराजमान होने की वास्तविकता का पूर्ण रूप से समझना हमारे लिए अत्यन्त कठिन है। सम्भव है किसी विशेष स्थान को अल्लाह ने अपने विशाल राज्य का केन्द्र बनाया हो और विश्व के प्रबन्ध एवं व्यवस्था का सम्बन्ध उसी स्थान से हो और वही से सम्पूर्ण विश्व में शक्ति और सत्ता की व्यपति हो रही हो। यह भी सम्भव है कि ‘अर्श’ से

अभिप्रेत राज्य-सत्ता और शासन हो और उस पर विराजमान होने का अर्थ यह हो कि अल्लाह विश्व का केवल स्रष्टा ही नहीं है बल्कि सम्पूर्ण विश्व उसी के प्रधीन है, वही इस कारखाने को चला रहा है। वह विश्व की रचना कर के उससे विलग नहीं हो गया है।

अस्माउर्रिजाल—वह शास्त्र जिनमें उन व्यक्तियों के जीवन-वृत्तान्त और व्यक्तित्व आदि का वर्णन होता है जिनके द्वारा हजरत मुहम्मद सल्ल० की 'हदीसों' (अर्थात् आपके वचन एवं कर्म) का ज्ञान हम तक पहुँच सका है। 'अस्माउर्रिजाल' के द्वारा लाखों व्यक्ति की जीवनी और चरित्र सदैव के लिए स्वरक्षित हो गई है। यह सब कुछ केवल एक व्यक्ति (हजरत मुहम्मद सल्ल०) की शिक्षाओं और उसके जीवन-आदर्श को प्रमाणिक रूप देने के लिए किया गया। आज नबी सल्ल० के किसी कर्म या वचन के विषय में यह मालूम किया जा सकता है कि वह जिन व्यक्तियों के माध्यम से हम तक पहुँचा है उनमें से प्रत्येक अपने चरित्र, बुद्धि, स्मरण शक्ति आदि की दृष्टि से कैसा था और उसकी उल्लिखित 'हदीसों' पर कहाँ तक भरोसा किया जा सकता है। हजरत मुहम्मद सल्ल० की जीवनी और आपकी शिक्षाओं को प्रमाणिक रूप में सुरक्षित रखने का जो कार्य हुआ है वह इतिहास में आज तक किसी भी व्यक्तित्व के लिए नहीं हुआ। इस पर पाश्चात्य देश के विद्वान भी आश्चर्यचकित हो कर रह गये हैं।

आखिरत (Hereafter)—परलोक । आखिरत से अभिप्रेत परलोक और पारलौकिक जीवन दोनों है। वर्तमान लोक की आयु सीमित और निश्चित है। एक समय ऐसा अवश्य आयेगा जब विश्व की वर्तमान व्यवस्था बिगड़ जायेगी। अल्लाह एक नये लोक का निर्माण करेगा जिसका नियम आज से भिन्न होगा। जो कुछ आज अप्रत्यक्ष है वह उस लोक में प्रत्यक्ष हो जायेगा। वास्तविकता (*Reality*) उस दिन आँखों से ओझल नहीं रहेगी। अल्लाह समस्त मनुष्य को पुनः जीवन प्रदान करेगा उन्हें इकट्ठा करके उनके जीवन के अच्छे-बुरे कर्मों का हिसाब लेगा, और अपने कर्मों के अनुसार लोगों को उस दिन पूरा-पूरा बदला मिल जायेगा। वह फैसले और निर्णय का दिन होगा। फैसले का पूरा अधिकार ईश्वर के हाथ में होगा। अच्छे और अल्लाह के अज्ञाकारी बन्दे 'जन्नत' (*Paradise*) में जायेंगे बुरे लोगों का ठिकाना 'जहन्नम' (नरक) होगा। 'आखिरत' की तैयारी हमें आज ही करनी चाहिए ताकि हम 'जहन्नम' की आग से बच सकें और

ईश्वर के यहाँ हमें उच्च-से-उच्च स्थान मिल सके ।

प्राप्तिल—कार्यकर्ता अधिकारी, किसी स्थान पर या किसी कार्य के लिए राज्य को ओर से नियुक्त किया हुआ कार्यकर्ता या अधिकारी व्यक्ति ।

प्रायत—‘आयत’ का मौलिक अर्थ होता है निशानी (*sign*), चिह्न, चकेत आदि । प्रायतों के द्वारा किसी चीज को प्रमाणित रूप दिया जाता है । ‘प्रायत’ हमारे मोच-विचार की शक्ति को उभारती और हमारे मन में प्रश्न पैदा करती हैं । वे हमारे प्राकृतिक स्वभाव को जगानी ओर उस चीज का स्मरण कराती हैं जिसे हम भूले हुए होते हैं । कुरआन में यह शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त हुआ है

प्राकृतिक लक्षण एवं प्राकृतिक वास्तविकताएँ (*facts*) और ऐतिहासिक घटनाएँ, इसन्नि कि उनके द्वारा उन सच्चाइयों का पता चलता है जो इस मौलिक जगत के पीछे काम कर रही हैं, जिनकी झलक प्रकृति की विभिन्न चीजों और मानव-इतिहास के उत्थान-पतन में दिखाई देती है ।

वे चमत्कार जिनको अल्लाह के नबी ने अपने नबी होने के प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किया हो ।

कुरआन-अश या कुरआन के वाक्य । कुरआन के वाक्य अपनी विभिन्न विशेषताओं के कारण इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि कुरआन ईश्वरीय वाणी या अल्लाह का ‘कलाम’ है ।

आसार—‘आसार’ अमर का बहुवचन है । साधारणतया ‘सहाबा’ रजि० के कथन और उनके कर्म को ‘असर’ कहा जाता है ।

इंजील—‘इजील’ यूनानी शब्द है । मूल शब्द *euanggliow* है जिसका शाब्दिक अर्थ शुभ-सूचना है । ईसाई विचार-धारा के अनुसार इजील को इजील इसन्नि कहा गया है कि हजरत ईसा अ० ईश्वरीय राज्य की शुभसूचना देते थे । मुसलमानों के विचार में इजील ‘शुभसूचना’ इसलिए है कि उसमें हजरत मुहम्मद सल्ल० के आगमन की शुभसूचना है । इजील वह आसमानी किताब है जो हजरत ईसा मसीह पर उतरी थी । इजील वास्तव में हजरत ईसा अ० के अन्तिम समय के ढाई-तीन वर्ष के उन कथनों, उपदेशों और भाषणों का संग्रह है जो उन्होंने ईश्वर की ओर से दिये थे । आपके जीवन-काल में उन्हें लिपिबद्ध किया जा सका था या

नहीं इसके बारे में निश्चय पूर्वक कोई बात नहीं कही जा सकती। एक समय के पश्चात् आपके जीवन-चरित्र पर विभिन्न पुस्तकें लिखी गईं तो उनमें आपके उन भाषणों और कथनों को जगह-जगह सम्मिलित कर दिया गया जो उन पुस्तकों के लेखकों तक जन-श्रुतियों या स्मृति-पत्रों द्वारा पहुँचे थे। आज जो इंजीलें मत्ता (Mathew), मरकुस (Mark), लूका (Luka) और यूहन्ना (John) के नाम से पाई जाती हैं वे वास्तव में इंजील नहीं हैं बल्कि इंजील हज़रत ईसा मसीह के उन कथनों और भाषणों में कहेंगे जो इन इंजीलों में जगह-जगह मिलते हैं।

इंजीलों से पहले के आसमानी ग्रन्थों की पुष्टि होती है। इनसे कुरआन की भी पुष्टि होती है। हज़रत मुहम्मद के आगमन के विषय में प्रत्यक्ष संकेत भी इंजील में मिलते हैं। इंजीलों में सबसे अधिक विश्वसनीय इंजील 'इंजील बरनबास' है। जिसे कलीसा ने अवैध और सदिग्ध ठहराया है। ईसाइयों ने इस इंजील को छिपाने का बड़ा प्रयत्न किया। सोलहवीं शताब्दी में इंजील बरनबास के अतालवी अनुवाद की एक प्रति पोप सिक्सटस (Sixtus) के पुस्तकालय में पाई जाती थी लेकिन उसे पढ़ने की इजाज़त नहीं थी। अठ्ठारहवीं शताब्दी के आरम्भ में वह एक व्यक्ति जान टोलैंड के हाथ लगा। १६०७ ई० में उसका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो गया। ईसाई-जगत ने इसे जाली इंजील घोषित किया है। लेकिन यह घोर धोखा ईसाई-जगत का अन्याय है। यह घोर अन्याय केवल इसलिए किया गया है कि इसमें प्रत्यक्षतः हज़रत मुहम्मद के विषय में भविष्य वाणियाँ मिलती हैं और ईसाइयों की बहुत सी गलत धारणाओं का खण्डन होता है। हज़रत मुहम्मद सल्ल० के जन्म से ६५ वर्ष पूर्व इंजील बरनबास मौजूद थी इसलिए यह प्रश्न ही नहीं उठता कि यह किसी मुसलमान की मनगढ़न्त रचना हो।

इजतिहाद—जिन बातों और समस्याओं के विषय में स्पष्ट रूप से कोई आदेश कुरआन या 'हदीस' में नहीं मिलता हो उनके बारे में सोच-विचार करना, कुरआन व हदीस के प्रकाश में उनका कोई हल निकालना 'इजतिहाद' कहलाता है। 'इजतिहाद' करने का हक स्वयं नबी सल्ल० ने मुस्लिमों को प्रदान किया है। 'इजतिहाद' एक शुभकार्य और धार्मिक सेवा है लेकिन यह कार्य उन्हीं लोगों के द्वारा सम्पन्न होता है जो प्रतिभाशाली और धर्म का गहरा ज्ञान रखने वाले होते हैं।

इजमा—किसी विषय में सब का सहमत होना। किसी मामले में धार्मिक दृष्टिकोण एवं धार्मिक निर्णय क्या हो? इस बारे में सब का एकमत होना 'इजमा' कहलाता है। 'इजमा' का आदर करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। 'इजमा' धार्मिक विषयों में प्रमाण की हैसियत रखता है, यह कुरआन से भी सिद्ध है और स्वयं नबी सल्ल० ने भी कहा है जिस चीज को ईमान वालों ने अच्छा समझा वह चीज अल्लाह की दृष्टि में भी अच्छी है।—मवत्ता इमाम मालिक

इबादत—'इबादत' का मौलिक अर्थ है दास्यभाव, विनम्रता, किसी के आगे पूर्ण रूप से झुक जाना, बिछ जाना आदि। फिर इसमें प्रेम का भाव भी सम्मिलित है। विनम्रता एवं दास्यभाव में जब तक प्रेमभाव न पाया जाता हो उसे 'इबादत' नहीं कह सकते। इबादत' के द्वारा उस सम्बन्ध एवं सम्पर्क की अभिव्यक्ति होती है जो मनुष्य और ईश्वर के मध्य पाया जाता है।

मनुष्य अल्लाह की 'इबादत' करे यह अल्लाह का हक है। अल्लाह के अतिरिक्त किसी और की 'इबादत' करने को इस्लाम ने अत्यन्त घृणित ठहराया है। यह उतना ही घृणित है जितना सामाजिक जीवन में व्यभिचार को घृणित समझा जाता है। 'इबादत' में बड़ी व्यापकता पाई जाती है। 'इबादत' शब्द जहाँ पूजा (*worship*), उपासना और विनय के अर्थ में प्रयोग होता है। वही यह शब्द कुरआन में आज्ञापालन (*obedience*), भक्ति, वन्दगी और दासता आदि के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है।

अल्लाह की 'इबादत' करने वाला वास्तव में वही है जो अल्लाह ही की पूजा करे और जीवन के प्रत्येक मामले में अल्लाह के दिये आदेशों का पालन करे।

इमाम—जमाअत के साथ (सामूहिक रूप से) नमाज़ पढ़ते समय जो व्यक्ति इमामत अर्थात् नमाजियों का प्रतिनिधित्व करता और उन्हें नमाज़ पढ़ाता है उसे 'इमाम' कहा जाता है।

इलाह—पूज्य, ईश्वर, खुदा, प्रभु। धात्वर्थ की दृष्टि से 'इलाह' उसको कहा जायेगा जो रहस्यमय और सर्वोच्च हो। जिसे हमारे नेत्र देखने में असमर्थ हो और हमारी कल्पनाशक्ति जिसकी कल्पना न कर सकती हो। जिसके रहस्यों को पूर्ण रूप से समझ पाना हमारे लिए असम्भव हो।

जो हमारा शरणदाता हो। प्रबल अभिलाषा के साथ जिसकी ओर लपक सकें। जो हमारा अभीष्ट और प्रिय हो। जिस से हम शान्ति की आशा कर सकते हों, जिसे हम सकटों में पुकार सकें जिसे हम अपना आराध्य बना सकें और उसे आराध्य बनाने में ही हम अपने गौरव का अनुभव कर सकें।

‘इलाह’ के जो गुण ऊपर बयान हुए उनसे विदित है कि ‘इलाह’ ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं हो सकना। प्रभुत्व के सारे अधिकार केवल एक ईश्वर ही को प्राप्त हैं। अल्लाह के अतिरिक्त किसी और को ‘इलाह’ बनाने से बढ कर गुमराही दूसरी कोई नहीं हो सकती।

इस्लाम—इस्लाम का प्रारम्भिक एवं मौलिक अर्थ है विनम्रता, विनोति आदि। अरब साहित्य में शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। इसके विशेष अर्थ दो हैं। इस्लाम का एक अर्थ है आज्ञापालन (*Obedience*), झुक जाना, आत्म समर्पण (*Complete submission*), त्याग, स्वेच्छा-पूर्वक अधीनता स्वीकार करना आदि। इस्लाम धर्म को इस्लाम इसलिए कहते हैं कि वह हमें इसकी शिक्षा देता है कि हम एक अल्लाह के हो जायें, उसके आगे झुक जायें और उसके आदेशों का पालन करें। अल्लाह के आगे अपने को डाल देने और उसके आदेशों के पालन करने ही का दूसरा नाम ‘इस्लाम’ है।

‘इस्लाम’ का दूसरा अर्थ है सुलह, शान्ति, कुशलता, संरक्षण, शरण आदि। नबी सल्ल० ने कहा है “इस्लाम लाओ (तबाही से) बच जाओगे।” आप (सल्ल०) ने यह भी कहा है: “जो व्यक्ति भी इस (इस्लाम) में आया सलामत रहा।”

इस्लाम ही उन सभी ‘नबियों’ का ‘दीन’ रहा है जो अल्लाह की ओर से लोगों के पथ-प्रदर्शन के लिए आये थे। चाहे वे किसी भी देश या समय में हुये हों। ‘दीन’ (धर्म) सबका एक ही रहा है। और यह ‘दीन’ उन सब व्यक्तियों ने अपनाया था जो सत्य प्रिय और ईश्वर के आज्ञाकारी रहे हैं।

इहराम—मक्का पहुँचने से पहले एक निश्चित स्थान पर पहुँच कर ‘हज्ज’

करने वाले स्नान कर के एक फकोराना वस्त्र धारण करते हैं और तलबिया' कहते हैं यह 'इहराम' है। इस वस्त्र में एक तहबन्द होता है और एक चादर जिसे ऊपर से ओढ़ लेते हैं। इस वस्त्र को 'इहराम' इस लिए कहा जाता है कि इस के धारण करने के पश्चात् बहुतसी चीजे आदमी पर हराम हो जाती है जो साधारण अवस्था में उस के लिए वैध होती है जैसे बाल कटवाना, सुगन्ध का प्रयोग, हर प्रकार की सुसज्जा और स्त्री-प्रसंग आदि। इन पाबन्दियों के साथ एक पाबन्दी यह भी है कि 'इहराम' की हालत में किसी जीव का बध न किया जाये, न किसी जानवर का शिकार किया जाए और न किसी शिकारी को शिकार का पता बताया जाए। जिन स्थानों पर हज्ज करने वाले 'इहराम' बाँधते हैं उन को मीकात कहते हैं विभिन्न देशों से आने वालों के लिए विभिन्न मीकात हैं।

'हज्ज' के सम्बन्ध में 'इहराम' की हैसियत वही है जो नमाज में 'तकबीर तहरीमा' की है। जिस प्रकार 'तकबीर तहरीमा' के बाद मनुष्य नमाज में दाखिल हो कर एक नवीन आध्यात्मिक एवं पवित्र वातावरण में पहुँच जाता है और स्वभावतः वह कुछ बातों का पाबन्द हो जाता है, ठीक इसी प्रकार 'इहराम' बाँधने के पश्चात् मनुष्य एक नवीन स्थिति में प्रवेश करता है और स्वभावतः उस पर कुछ पाबन्दियाँ लाजिम हो जाती हैं। फिर जिस प्रकार नमाज से बाहर निकलने के लिए सलाम फेरते हैं उसी प्रकार 'इहराम' की हालत से बाहर निकलने के लिए 'हल्क' (मुडन) का तरीका प्रचलित है।

ईद—बार-बार आने वाला, खुशी का त्योहार। इस्लाम ने दो त्योहार दिये हैं एक ईदुल फित्र दूसरा ईदुल अजहा। इन दोनों ही त्योहारों का आधार 'तौहीद' (एकेश्वरवाद) है। ईदुल फित्र का त्योहार रमजान के समाप्त होने पर आता है। इस अवसर पर मुस्लिम व्यक्ति अल्लाह के आगे कृतज्ञता की विज्ञप्ति करता है कि उस ने उसे इस का अवसर और सौभाग्य प्रदान किया कि वह रमजान के रोजे रख कर अपने को उस महान् जीवनयज्ञ के लिए तैयार करे जो उस के स्वामी की ओर से आयोजित किया गया है। मुस्लिम का सम्पूर्ण जीवन एक यज्ञ है उसे

१. तलबिया उस दुआ को कहते हैं जो इहराम बाँधने वाले इहराम बाँधने के समय से लेकर जब तक हज्ज समाप्त नहीं हो जाता उठते-बैठते और 'हज्ज' से सम्बन्धित विभिन्न कार्य करते हुए उच्च स्वरों में पढ़ते हैं।

अपने जीवन से एक महान् शुभ कार्य सम्पन्न करना है, वह शुभ कार्य है अपने आंतरिक और बाह्य जीवन को ईश-ज्योति से उज्ज्वल बनाना और सम्पूर्ण मानव-जगत को ईश्वरीय-विधान की ओर प्रेरित करना। जिस प्रकार सूर्य अपनी ऊष्म शक्ति की आहुति देता है ठीक उसी प्रकार का कार्य एक मुस्लिम व्यक्ति या मुस्लिम समुदाय को भी करना पड़ता है।

ईदुल अजहा का त्योहार वास्तव में एक महान कुरबानी की यादगार है। यह कुरबानी खुदा के विशेष पैगम्बर हजरत इबराहीम अ० ने अल्लाह की सेवा में पेश की थी। इस त्योहार के अवसर पर हम कुरबानी और अल्लाह की सेवा में अपने आत्मसमर्पण की भावना को जाग्रत करते हैं और इस बात को व्यक्त करते हैं कि हम अपनी भावनाओं के प्रति सदैव जागरूक और वफादार रहेगे।

ईमान—विश्वास, आस्था, मानना (*Belief of Faith*)।

‘ईमान’ उस विश्वास को कहते हैं जिसके साथ आस्था भी हो और भय भी, साथ ही भरोसा भी। ईमान वास्तव में समर्थन करने और दिल से मानने को कहते हैं। ईमान का विलोम है ‘कुफ्र’, इन्कार, झुठलाना। यकीन और विश्वास का विलोम सन्देह और शंका है। यह जरूरी नहीं है कि मनुष्य जिस चीज़ पर विश्वास रखता हो वह उसे माननता भी हो। अबू जह्ल भलीभाँति जानता था कि नबी सल्ल० सच्चे हैं फिर भी उसने आपका इन्कार किया और ईमान न लाया। ईमान वास्तव में मन और मस्तिष्क दोनों के लिए शान्ति और परितोष का कारण है।

‘इस्लाम’ में जिन चीज़ों पर ईमान लाना आवश्यक है उनमें तीन चीज़ें मौलिक हैं।

ईश्वर है और वह एक है। कोई उसका शरीक नहीं। उसी ने सब को पैदा किया। सबका स्वामी, प्रभु और पूज्य वही है।

उसने मानव जाति के मार्ग-दर्शन के लिए नबियों और रसूलों को भेजा। हजरत मुहम्मद सल्ल० पैगम्बरों के सिलसिले की अन्तिम कड़ी हैं और आप सारे ससार के मार्ग-दर्शन के लिए भेजे गये हैं।

‘आखिरत’ आने वाली है। एक समय आयेगा जब वर्तमान लोक नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा। उसके पश्चात् अल्लाह एक नवीन ससार का निर्माण करेगा। सब लोग पुनः जीवित करके उठाये जायेंगे। और उन्हें उनके भले-बुरे कर्मों का बदला प्रदान किया जायेगा। अच्छे और अल्लाह

के आज्ञाकारी लोगो के लिए सुख और आनन्द का स्थान होगा जिसका नाम 'जन्नत' है। बुरे और अल्लाह के अवज्ञाकारी लोगो का ठिकाना 'जहन्नम' होगा जो यातना, पीड़ा और ईश-प्रकोप का स्थान है।

उहुद-संग्राम—यह एक विशेष लड़ाई है जो मक्का के 'काफिरों' और मुसलमानों के बीच उहुद नामक पहाड़ी के दामन में हुई थी। इस संग्राम से पूर्व सब से महत्वपूर्ण संग्राम वह है जो बद्र संग्राम के नाम से प्रसिद्ध है। उहुद संग्राम के अवसर पर मक्का वालो ने तीन हजार की सेना लेकर मदीना पर आक्रमण किया था। नबी सल्ल० मुकावले के लिए एक हजार की सेना लेकर निकले थे। रास्ते में 'मुनाफिकों' (कपटचारियों) के नायक अब्दुल्लाह इब्न उवई ने घोखा दिया वह अपने ३०० व्यक्तियों को लेकर अलग हो गया, जिसके कारण मुसलमान बहुत घबराये। बनूहारसा के लोगो ने पलटने का निश्चय कर लिया, परन्तु अल्लाह ने मुसलमानों के दिलों को मजबूत किया और वे अपने इरादे से वाज आ गए।

नबी सल्ल० ने अपनी सेना उहुद के दामन में खड़ी की। पीछे पहाड़ था सामने शत्रुओं की सेना थी। पहलू में एक ऐसा दर्रा था जिस से होकर दुश्मन अचानक पीछे से मुसलमानों पर आक्रमण कर सकता था—नबी सल्ल० ने इस स्थान पर अब्दुल्लाह इब्न जुबैर को ५० तीर मारने वालो के साथ नियुक्त किया और उन्हें इसकी ताकीद कर दी कि वे किसी भी दशा में वहाँ से न हटे। लड़ाई में शत्रु के पाँव उखड़ गये। इस अवसर पर दस व्यक्तियों के अतिरिक्त दर्रे पर नियुक्त सभी लोग दुश्मन के छोड़े हुए माल के लूटने में लग गए। दर्रे को खाली पाकर दुश्मनो ने पीछे से आक्रमण कर दिया। जिस से मुसलमानों को अधिक नुकसान पहुँचा। मुस्लिम सेना तितर-बितर हो गई। नबी सल्ल० के चार दाँत शहीद हो गये। नबी सल्ल० एक गार में गिर गए थे। हजरत फातमा रजि० ने अपने पिता के जख्मों को धोया। इस संग्राम में ७० सहाबी शहीद हुये। इसी संग्राम में मुसइब बिन उमैर रजि० भी शहीद हुये थे। हजरत मुसइब बिन उमैर ही की कोशिश से मदीना के औस और खजरज के कबीले मुसलमान हुये थे।

उमरा—'उमरा' में निर्माण, शोभा और आबादी का अर्थ पाया जाता है। उमरा से अभीष्ट जहाँ अल्लाह के घर 'काबा' की आबादी है वही वह मनुष्य के लिए आत्मिक जीवन और जाग्रति का कारण भी है। 'हज्ज'

की तरह 'उमरा' भी एक ऐसी 'इबादत' है जो 'काबा' के दर्शन के साथ अदा की जाती है। लेकिन हज्ज और उमरा में कुछ बातों में अन्तर पाया जाता है। उमरा अनिवार्य नहीं है जबकि 'हज्ज' को अल्लाह ने उन लोगों के लिए अनिवार्य कर दिया है जो हज्ज करने का सामर्थ्य रखते हैं। उमरा अकेले अदा करते हैं जबकि 'हज्ज' सामूहिक रूप में अदा किया जाता है। हज्ज का समय निश्चित है जबकि उमरा किसी भी महीने में किया जा सकता है। उमरा में हज्ज की ही कुछ परिपाटियों का अनुपालन किया जाता है।

एहसान—सौन्दर्य-साधना। 'एहसान' शब्द 'हुस्न' से निकला है। 'हुस्न' का अर्थ है सुन्दरता एवं उत्तमता। 'इबादत' और जीवन में खूबी और सुन्दरता उसी समय पैदा होती है जबकि हमारा 'ईमान' और विश्वास ऐसा हो कि मानो अल्लाह हमारी आँखों से ओझल नहीं है बल्कि हम उसे अपनी आँखों से देख रहे हैं। हम नहीं तो वह तो हमें देख ही रहा है। इसी भावना और स्थिति को 'हदीस' में एहसान कहा गया है। कुरआन मजीद में इसी चीज को 'हिकमत' (तत्त्वदर्शिता, *wisdom*) की सज्ञा दी गई है।

क-लाम—वाणी (*words*)। कुरआन को अल्लाह का कलाम इसी लिए कहते हैं कि वह अल्लाह की वाणी है।

काफिर—१ 'कुफ्र' करने वाला, इन्कार करने वाला, अधर्मी। जो उन सच्चाइयों का इन्कार करे जिनकी शिक्षा इस्लाम ने दी है। २. कृतघ्न।

काबा—मक्का नगर में स्थित वह पवित्र घर जिसका निर्माण अल्लाह के आदेश से हजरत इब्राहीम अ० और उनके बेटे हजरत इस्माईल अ० ने किया था। जिसकी ओर मुख करके नमाज पढ़ी जाती है। जो मानव जाति के वास्तविक धर्म 'तौहोद' (एकेश्वरवाद) का केन्द्र है।

किताब—'किताब' शब्द के कई अर्थ होते हैं :

१ अल्लाह का कलाम जो उसने अपने रसूलों पर उतारा। किताब से अभिप्रेत पूरी किताब भी होता है और उसका अंश भी।

२. अल्लाह का फैसला जो उसने स्वयं जारी करने के लिए किये हो जैसे किसी को मिलने वाला अवकाश या उसके विनष्ट किए जाने का निर्णय।

३ आदेश हुनम । अल्लाह की ओर से निर्धारित किया हुआ धर्म-विधान या 'शरीअत' ।

४ वह किनाव जिसमें उसके फँसने लिये हो ।

५ पत्र

६ वह विशेष ईश्वरीय अभिलेख (*Record*) जिसमें समस्त चीजें अंकित होती हैं ।

'किताब वाले'—वे लोग जिन्हें अल्लाह की ओर से 'रसूल' के माध्यम से किनाव मिली हो । 'किताब वालों' से मक़ेन यहूदियों और ईसाइयों की ओर होता है ।

कित्ला—वह चीज जो मनुष्य के मुख के सामने हो और जिसकी ओर उसका ध्यान आकर्षित हो । पारिभाषिक रूप से इसमें अभिप्रेत वह दिशा है जिनकी ओर मुख करके नमाज पढ़ी जाती है ।

कियाम—खड़ा होना । नमाज में खड़े होने की स्थिति ।

कियामत—(*Resurrection*), प्रलय, पुनरुत्थान ।

एक दिन ऐसा आने वाला है जब अल्लाह वर्तमान लोक को नष्ट-भ्रष्ट कर देगा । सारे जीवधारी मर जायेंगे । इसके पश्चात् ईश्वर पुनः सृष्टि का निर्माण करेगा । सब लोग दोबारा जीवित करके उठाये जायेंगे और अपने भले-बुरे कर्मों का फल पायेंगे ।

किसास—(*Retaliation*) हत्या-दण्ड, प्रतिहत्या ।

'किसास' का अर्थ है खून का बदला । अर्थात् मनुष्य के साथ वही कुछ किया जाना जो उसने दूसरे के साथ किया हो ।

मनुष्य के प्राणों की रक्षा हो, यह मानव-समाज की बहुत बड़ी आवश्यकता है । किसी की अकारण हत्या करना वास्तव में उस मर्यादा का उल्लंघन है जिस में प्राणों की रक्षा होती है । वध करने वाले व्यक्ति का 'किसास' में वध किया जा सकता है । मारे गये व्यक्ति के वारिस कुछ माल लेकर उसे क्षमा भी कर सकते हैं । यह सारी कार्यवाही न्यायालय के द्वारा होगी । वध करना या क्षमा कर देने के रूप में मारे गये व्यक्ति के वारिसों को उस से कुछ धन दिलाना समाज के सभी प्राणियों के प्राणों का आदर करना है । कुरआन में यही बात इन शब्दों में कही गई

है “किसास में तुम्हारे लिए जीवन है।”

कुफ़्र—१. अधर्म, इन्कार । २. कृतघ्नता ।

‘कुफ़्र’ का मूल अर्थ होता है ढाँकना, छिपाना । ‘इस्लाम’ के इन्कार करने वाले को ‘कुफ़्र’ का अपराधी या ‘काफिर’ कहा जाता है, इसलिए कि वह अपनी सहज प्रकृति को छिपाता है जिसे लेकर वह ससार में जन्म लेता है । ईश्वर के आज्ञापाल से विमुख होकर वास्तव में वह ससार को प्रत्येक वस्तु का निषेध करता है इसलिए कि ससार की प्रत्येक वस्तु इसी बात की साक्षी है कि ईश्वर है और वही सारे ससार का पालनकर्ता और स्वामी है, मनुष्य को उसी के आदेशों का पालन करना चाहिए । इसी में उसका और सारे मानवों का कल्याण है ।

कुरआन—कुरआन का अर्थ होता है पढ़ना । इस से अभिप्रेत अल्लाह की वह किताब है जो हजरत मुहम्मद सल्ल० पर अवतीर्ण हुई । यह किताब इसीलिए उतरी है कि पढ़ी जाये और अधिक-से-अधिक पढ़ी जाये ।

कुरबानी—बलिदान, जानवर को अल्लाह के नाम पर कुरबान करने की क्रिया । वह चीज जिसके द्वारा बन्दा अल्लाह से करीब हो । अल्लाह की प्रदान की हुई वस्तु को विनम्रता एवं कृतज्ञता के साथ उसके अर्पण करना । इस्लाम भी वास्तव में कुरबानी ही है । इसमें बन्दा अपने-आपको अर्पण करता है । जानवर कुरबान करके वास्तव में मनुष्य इस बात का प्रण करता है कि यदि अल्लाह के मार्ग में अपनी जान को कुरबान करने की आवश्यकता होगी तो वह इसमें तनिक भी संकोच न करेगा । दास्य-भाव और आत्मसमर्पण की पूर्ण अभिव्यक्ति कुरबानी में होती है । अतः आत्मा के विकास और उसे ईश्वर की दासता में लाने का कुरबानी एक उत्तम साधन है । यही कारण है कि बलिदान या कुरबानी की रीति समस्त प्राचीन जातियों में प्रचलित रही है । और इसे ईश-प्रसन्नता की प्राप्ति का एक उत्तम साधन समझा जाता रहा है ।

कुरबानी हजरत इबराहीम अ० की यादगार भी है । हजरत इबराहीम अ० ने अल्लाह की प्रसन्नता के लिए अपने बेटे हजरत इस्माईल अ० को कुरबान करना चाहा था । बेटा भी इसके लिए तैयार हो गया । खुदा तो दिलों को देखता है । जब हजरत इबराहीम अ० ने अपनी ब्रफा-

दारी सिद्ध कर दी तो अल्लाह ने इस्माईल अ० को बचा लिया और दूसरे रूप में यह भेट स्वीकार कर लिया (सूरा अस-साफ़ात आयत १००-१०६)। अल्लाह ने इरमाईल अ० को 'काबा' की सेवा के लिए खास कर लिया। ठीक इसी प्रकार फिदया देकर अर्थात् अपने बदले जानवर कुरबान करके हम अपनी जाने छुड़ा लेते हैं, परन्तु हमारे प्राण हमें लौटाये नहीं जाते बल्कि अमानत के रूप हमें दे दिये जाते हैं ताकि उनका उपयोग उस समय हो सके जबकि अल्लाह के नाम पर उन्हें निछावर करने की आवश्यकता हो।

खबर मुतवातिर—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

खबर वाहिद—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

खलीफा—१ प्रतिनिधि, स्थानापन, नायब। २. किसी के बाद आने वाला, उत्तराधिकारी। खलीफा स्वामी और मालिक नहीं होता। उसका कायं केवल मालिक के आदेशों का पालन करना और उसकी इच्छा को पूरा करना होता है। कुरआन में एक जगह कहा गया है, "हे दाऊद! हमने तुम्हें जमीन में खलीफा बनाया है तो तुम लोगों के बीच हक के साथ हुकूमत करो और इच्छा का अनुपालन न करो कि वह तुम्हें अल्लाह के मार्ग से भटका देगी।"—सूरा साद आयत २६।

खुतबा—भाषण, व्याख्यान। जुमा की नमाज अथवा ईद की नमाज के अवसर पर दिया जाने वाला भाषण।

खुलफा-ए-राशिदीन—नबी सल्ल० के बाद जिन व्यक्तियों ने इस्लामी शासन को रसूल सल्ल० तरीके के अनुसार चलाया और राज्य की व्यवस्था की वे खुलफा-ए-राशिदीन कहलाते हैं। खुलफा-ए-राशिदीन का अर्थ होता है राशिद अर्थात् सीधे और सही मार्ग पाने वाले खलीफा।

गजवात—गजवा का बहुवचन, लड़ाइयाँ, वे लड़ाइयाँ जिनमें नबी सल्ल० स्वयं शरीक हुये।

गुमान—अनुमान, अन्दाज़ा, ख्याल,

गुमान गालिब—पक्का ख्याल, वह अनुमान जिस के सत्य होने की बहुत अधिक सम्भावना हो।

गुलाम—दास, प्राचीन काल से १८वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक युद्ध में जो लोग कैद होते थे उन्हें गुलाम बना कर रखने और बेचने का

प्रचलन था। इस्लाम ने यह नियम प्रस्तुत किया कि कैदियों को रिहा किया जाये। चाहे यह रिहाई उपकार के रूप में हो या 'फिदया' ले कर हो। या अपने कैदियों के बदले में दूसरे फरीक के कैदियों को छोड़ा जाये। परन्तु जब अमुस्लिम जातियाँ इसे स्वीकार न करे तो इस्लाम ने मुसलमानों को इस बात की इजाजत दी है कि विरोधी दल के कैदियों को गुलाम बनाया जाये। परन्तु इसके साथ इस पर वयव न दिया है कि गुलामों के साथ यथासम्भव अच्छे-से-अच्छा व्यवहार किया जाए। और ऐसी स्थिति पैदा न होने दिया जाये कि वे समाज का नीच वर्ग बन कर रह जाये। बल्कि ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए कि वे धीरे-धीरे इस्लामी समाज में विलीन हो जाएँ। इस्लामी कानून ने गुलामों को बहुत से हक प्रदान किये हैं। उनके माल को हड़प करने वालों, उन्हें कत्ल करने वालों और उन की स्त्रियों का सतीत्व भग करने वालों के लिए वही दण्ड है जो दण्ड स्वतन्त्र व्यक्ति के साथ इन अपराधों के करने वालों के लिए निर्धारित है। गुलामों की स्वतन्त्रता का इस्लाम सदैव समर्थक रहा है। लेकिन वह प्रत्येक मामले में न्याय की नीति अपनाने का आदेश देता है।

जकात—अरबी भाषा में 'जकात' का अर्थ होता है . १ पाक और शुद्ध होना, २ पाक और विकसित होना। परिभाषिक रूप से 'जकात' उस धन को कहते हैं जो अपनी कमाई या माल में से निकाल कर अल्लाह के बताए हुए शुभकर्मों में खर्च करना जरूरी है। जैसे मुसाफिरों और मुहताजों को सेवा करना, ऋणी व्यक्तियों को ऋण के बोझ से मुक्त करना, अल्लाह के 'दीन' के लिए को जाने वाली चेष्टाओं में खर्च करना आदि। 'जकात' को जकान कहते ही इसलिए है कि इसके द्वारा मनुष्य के मन से माल का मोह निकलता और उसकी आत्मा को विकास पाने का अवसर मिलना है। और उसका माल भी शुद्ध हो जाता है।

'जकात' देना 'आखिरत' को याद रखने का उत्तम उपाय भी है। मनुष्य अपना माल खर्च कर के उसे दाता की ओर लौटाता है इसी प्रकार उसे अपने प्राण भी उमी की ओर लौटाना है। इसलिए जकात देने की क्रिया के साथ विनम्र भाव का होना भी आवश्यक है। इस पहलू से देखा जाए तो जकात में नमाज की विशेषता पाई जाती है।

जन्नत—बाग, स्वर्ग (*Paradise*)। सुख और आनन्द का वह

स्थान जहाँ 'आखिरत' में अल्लाह के आज्ञाकारी और नेक बन्दे निवास करेंगे।

जहन्नम—नरक, दोजख (*Hell*)। वह स्थान जहाँ आखिरत में अल्लाह के अवज्ञाकारियों, काफिरों और मुश्रिकों को यातना देने के लिए डाला जायेगा। यहाँ आग भडक रही होगी। आग में जलने के अतिरिक्त उन्हें वहाँ और भी नाना प्रकार की यातनाएँ सहनी पड़ेगी।

जईफ—देखो पारिभाषिक शब्दावली।

जामेअ—व्यापी। हदीस का वह ग्रन्थ जिस में धर्म और जीवन के हर पहलू से सम्बन्धित हदीसे संगृहीत हो।

जिबरील (*Gabriel*)—यह इब्रानी (*Hebrew*) भाषा का शब्द है जिस का अर्थ है "अल्लाह का बन्दा"। जिबरील अल्लाह के एक विशेष फिरीस्ते का नाम है जिन्हे कुरआन में "रूह" भी कहा गया है। हजरत जिबरील का विशेष कार्य यह रहा है कि वे अल्लाह का आदेश और उस का कलाम 'नवियो' तक पहुँचाने थे।

जिजया—रक्षाकर, वह टैक्स जो इस्लामी राज्य में बसने वाले अमुस्लिम लोगों से उन की जान-माल आदि की रक्षा करने के बदले में लिया जाता था। यह कर उस राज्य के कामों में खर्च किया जाता था जो उन की रक्षा का उत्तरदायी होता है। इस के अतिरिक्त 'जिजया' इस बात की पहचान भी थी कि उन्हें इस्लामी राज्य की अधीनता स्वीकार है।

इस्लामी राज्य के मुसलमानों को भी अपने धन का एक भाग देना पड़ता है जिसे जिकात कहते हैं।

गरीब और निर्धन मुस्लिम व्यक्ति से न जकात ली जायेगी और न ऐसे गैर मुस्लिम से 'जिजया' लिया जायेगा जो स्वयं मुहताज हो, बल्कि ऐसे लोगों की सेवा करना स्वयं राज्य का कर्तव्य होता है।

जिन्न—'जिन्न' शब्द के घात्वर्थ में गुप्त और छिपे होने का अर्थ पाया जाता है। जिन्न एक प्रकार की मखलूक है जो मनुष्यों और फिरीस्तों से भिन्न है। जिन्नो को हम आँखों से नहीं देख पाते इसी लिए उन्हें जिन्न कहा जाता है। कुरआन से पता चलता है कि जिन्न अग्नि से पैदा किए गए हैं जब कि मानव की शारीरिक रचना मिट्टी से हुई है।

जिहाद—किसी ध्येय की सिद्धि के लिए अपनी सम्पूर्ण शक्ति

लगा देने और जान तोड़ कोशिश करने को अरबी में 'जिहाद' कहते हैं। जिहाद केवल युद्ध करने का नाम नहीं है। युद्ध के लिए तो कुरआन मजीद में 'किताल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। जिहाद का अर्थ किताल की अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यापक है। ऐसा व्यक्ति जो हर समय अपने उद्देश्य की धुन में लगा रहता हो, अपने धन, अपनी वाणी और लेखनी आदि से उस के लिए प्रयत्नशील हो और अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपने-आप को थका रहा हो, वह वास्तव में जिहाद ही कर रहा है।

जिहाद में हर उस विरोध और शत्रुता का मुकाबला करना होता है जिस से अभीष्ट की ओर बढ़ने में रुकावट पेश आती हो। उस के लिए 'किताल' (युद्ध) की नौबत भी आ सकती है।

यदि यह जिहाद अल्लाह के लिए हो तो इस का अर्थ यह होगा कि हमारी दौड़-धूप और चेष्टाएँ केवल अल्लाह की प्रसन्नता, उस के नाम की प्रतिष्ठा और उस के उतारे हुए दोन (सत्यधर्म) के समर्थन और स्थापना के लिए होगी। किसी धन और वैभव आदि की प्राप्ति हमारा लक्ष्य कदापि न होगा। ससार को दुख और अल्लाह के अतिरिक्त दूसरों की दासता से मुक्त करना और सत्यधर्म के पालन में जो रुकावटें पेश आती हो उन्हें दूर करना जिहाद के मुख्य उद्देश्यों में से है।

जुहद—निस्पृहता, त्याग भावना, दिल को दुनिया से उठा रखना।

अल्लाह पर 'ईमान' रखने का स्वाभाविक परिणाम यही होता है कि मनुष्य का दुनिया में जी बहुत कम लगता है उसकी आशाएँ तो आने वाले पारलौकिक जीवन से होती हैं फिर वह लोलुपता और ससार के मोह माया में लिप्त हो कर सत्य और सत्य की माँगों की उपेक्षा कैसे कर सकता है।

तकबीर तहरीमा—नमाज आरम्भ करते समय 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह सब से महान है) कहना 'तकबीर तहरीमा' कहलाता है। 'तकबीर तहरीमा' के बाद मनुष्य नमाज में दाखिल हो जाता है। अब जब तक वह नमाज अदा न कर ले नमाज के अतिरिक्त कोई कार्य नहीं कर सकता और न नमाज में पढ़ी जाने वाली दुआओं के अतिरिक्त वह कुछ बोल सकता है इस तकबीर के बाद सारी चीजें उस के लिए हARAM और अवैध हो जाती हैं ताकि नमाज की प्रतिष्ठा का आदर हो सके।

तवातुर—देखिए पारिभाषिक शब्दावली ।

तवाफ़—परिक्रमा । हज्ज करने वाले 'काबा' के चारों ओर चक्कर लगाते हैं इसे 'तवाफ़' कहा जाता है । 'तवाफ़' वास्तव में अपने को अल्लाह की सेवा में देने और उसके प्रति अपना प्रेमभाव प्रकट करने का नाम है । यदि हमारे मन में ईश्वर का प्रेम नहीं है या हमने अभी अपने को ईश्वर की सेवा में वंचित रखा है तो ऐसी दशा में हमारे तवाफ़ का कोई मूल्य नहीं है ।

तवाफ़ सद्र—मक्का पहुँचने पर सब से पहला तवाफ़ 'तवाफ़ सद्र' कहलाता है ।

ताबईन—वे आदरणीय मुस्लिम व्यक्ति जिन्होंने 'सहाबा' को देखा है उन्हें 'ताबईन' कहते हैं ।

तबअताबईन—वे आदरणीय मुस्लिम व्यक्ति जिन्होंने 'ताबईन' को देखा है ।

तिलावत—(*Recitation*) पठन कुरआन का पढ़ना ।

तूर—१ पर्वत, २ एक विशेष पर्वत का नाम । सीना पर्वत, मूसा पर्वत जो कुरआन के अवतरण के समय तूर के नाम से प्रसिद्ध था । इस पर्वत की ऊँचाई ७, ३५६ फिट है । यह पर्वत प्रायद्वीप सीना के दक्षिण में पड़ता है ।

तौरात—यह इब्रानी शब्द है । तौरात का मूल अर्थ होता है आदेश, नियम और कानून । तौरान में अधिकतर कानूनों और नियमों का उल्लेख हुआ है इसलिए उसका नाम 'तौरात' हुआ । तौरात वह आसमानो किताब है जो बनी इसराईल के प्रसिद्ध पैगम्बर हजरत मूसा पर अवतरित हुई थी । हजरत मूसा अ० पर उनके नबी होने से लेकर उनके स्वर्गवास तक लगभग ४० वर्ष की अवधि में उन पर अल्लाह की ओर से जो आदेश उतरे हैं कुरआन उन्हीं को 'तौरात' कहता है । उनमें दस आदेश तो वे थे जो पट्टिकाओं पर अंकित करके उन्हें प्रदान किये गए थे । तौरात ग्रन्थ के रूप में बैतुल-मकदिस की पहली तबाही के अवसर पर मौजूद थी । लेकिन इस तबाही में तौरात की प्रतियाँ सदैव के लिए लुप्त हो गईं । यह तबाही बाबिल (*Bable*) के सम्राट बस्त नस्स (*Nebuchad nezzar*) के हाथों आई थी । इस सम्राट ने नगर की

ईंट-से-ईंट बजा दी थी और बनी इसराईल को बन्दी बनाकर बाविल ले गया। बाद में जब बनी इसराईल के बचे हुये लोग आजाद हुये और यूरुसलेम वापस आये और बैतुलमकदिस का पुनः निर्माण हुआ तो हज़रत उज़ैर ने कुछ महापुरुषों की सहायता से बनी इसराईल का इतिहास लिखा यही इतिहास आज बाइबिल की पहली १७ पुस्तकों के रूप में मौजूद है।

इतिहास की चार पुस्तकें निर्गमन (*Exodus*), लैव्यवस्था (*Leviticus*), गिनती (*Numbers*) और व्यवस्थाविवरण (*Deuteronomy*), हज़रत मूसा अ० की जीवनी से सम्बन्ध रखती हैं। इन किताबों में हज़रत उज़ैर और उनके साथियों ने जगह-जगह “तौरात” की उन आयतों को लिख दिया है जो उन्हें प्राप्त हो सकी थी। इन किताबों में जहाँ कहीं यह लिखा मिलता है कि खुदा ने मूसा से कहा या मूसा ने कहा कि खुदावन्द तुम्हारा खुदा कहता है, वहाँ से तौरात का एक एक टुकड़ा बयान होता है। तौरात के यही वे बिखरे हुए अंश हैं जिन्हें क्रुरआन “तौरात” कहता है और इन्हीं का वह समर्थन करता है।

तौहीद (*Divine Unity*)—एकेश्वरवाद। ईश्वर को एक मानना और किसी को उसका साथी और सहभागी न ठहराना। इस्लाम का मूल आधार तौहीद ही है। समस्त ‘नबियों’ की शिक्षाएँ ‘तौहीद’ पर आधारित हैं। तौहीद का सम्बन्ध हमारे पूरे जीवन से है। तौहीद को केवल एक धारणा समझना भूल है। अल्लाह को एक मानने का अर्थ यह है कि मनुष्य अल्लाह को अपना सृष्टिकर्त्ता, स्वामी, शासक और सब कुछ समझे। उसी की बन्दगी को अपना कर्तव्य जाने। उसके आदेशों का पालन करे, उसी पर भरोसा रखे। उसी को सहायता के लिए पुकारे। संकट में उसी से फरियाद करे। प्रत्येक दशा में उसी का ध्यान रखे। सच्चे दिल से उस से प्रेम करे। अल्लाह के हक में किसी को शरीक न करे। तौहीद धर्म का कोई अंश नहीं बल्कि तौहीद ही सम्पूर्ण धर्म है। तौहीद से हट किसी सत्य धर्म की कल्पना नहीं की जा सकती। तौहीद की पुष्टि सम्पूर्ण विश्व से होती तौहीद के विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं प्रस्तुत किया जा सकता।

तौबा (*Repentance*)—१. पश्चाताप, क्षमायाचना, गुनाह और अनुचित कर्मों को भविष्य में न करने का दृढ़ संकल्प करना। बुरे कामों और अल्लाह की अवज्ञा से बाज़ आना। “तौबा” का मूल अर्थ है

लौटना, पलटना । बन्दे की ओर से तौबा का अर्थ यह होता है कि मनुष्य अल्लाह की अवज्ञा से बाज आकर आज्ञापालन में लग जाये । अल्लाह की ओर से 'तौबा' का अर्थ यह है कि वह अपने उस बन्दे पर जो अपने गुनाहों पर लज्जित है फिर दया दृष्टि डाले । और उसकी खताओं को क्षमा कर दे ।

तकबीर—अल्लाह की महानता और बड़ाई का वर्णन ।

तजकिया—मन और आत्मा का शुद्धिकरण एवं विकास ।

तयम्मूम—किसी कारण से यदि नमाज के लिए 'वजू' न कर सकें तो 'तयम्मूम' से काम चलाया जा सकता है । तयम्मूम का तरीका यह है कि पाक मिट्टी पर अपने दोनों हाथ मारे और सारे मुँह पर अच्छी तरह मले । इसी प्रकार दोबारा पाक मिट्टी पर हाथ मारे और दोनों हाथों को कुहनियों तक मले । तयम्मूम नमाज का आदर और पवित्रता की भावना को बाकी रखने की एक उत्तम उपाय है ।

तस्बीह (Glorification) अल्लाह की महानता का वर्णन । तस्बीह का मूल अर्थ है चेहरे के बल बिछ जाना । यही से यह शब्द तैरने के अर्थ में प्रयोग हुआ है । नमाज में बन्दा अपने खुदा के आगे सजदे में गिर जाता है और उस की महानता का वर्णन करता है । इस लिए नमाज को भी तस्बीह कहा गया है ।

ससार की प्रत्येक वस्तु अल्लाह की तस्बीह करती है । हर वस्तु उस की महानता के आगे बिछी हुई है । हर चीज ईश्वर की महानता की साक्षी है ।

तहज्जुद—मौलिक अर्थ है नींद तोड़ कर उठना । तहज्जुद उस नमाज को कहते हैं जो रात के एक भाग तक सोने के पश्चात् उठ कर पढ़ी जाती है । इस नमाज का चरित्र-निर्माण और आत्मा के विकास में बहुत अधिक महत्व है ।

तहमीद—गुणगान, अल्लाह की प्रशंसा करना । इस प्रशंसा में मन के प्रेम और कृतज्ञता की भावना भी सम्मिलित होती है ।

दरायत—प्रज्ञा एवं मीमासा । 'हदीसों' की जाँच-पड़ताल में जहाँ 'रावियों' (हदीस के उल्लेखकर्ता) के चरित्र और बुद्धिमत्ता आदि को देखते हैं वही उन के परखने में 'दरायत' से भी काम लेते हैं । विस्तृत जानकारी के लिए दे० पृष्ठ ५३ का शीर्षक 'दरायत' का प्रयोग ।

दरूद (*Blessing*)—रहमत और बरकत की दुआ, दुलार-प्यार। कुरआन में इस के लिए 'सलात' शब्द प्रयुक्त हुआ है जिस के अर्थों में बड़ी व्यापकता पाई जाती है। कुरआन में कहा गया है. निश्चय ही अल्लाह और उसके फरिश्ते नबी (सल्ल०) पर 'सलात' भेजते हैं, हे ईमान वाले ! तुम भी उन पर सलात भेजो और खूब सलाम भेजो। अल्लाह के 'सलात' भेजने का अर्थ यह है कि वह अपने नबी पर दयालुता (*Blessing*) दर्शाता है, उन की प्रशंसा करता, उन का नाम ऊँचा करता और उन पर बरकत उतारता है। फरिश्तों के 'सलात' भेजने का अर्थ यह है कि उन को भी नबी से अत्यन्त प्रेम है। वे भी उन की प्रशंसा करते और उन के लिए अल्लाह से प्रार्थनाएँ करते हैं कि वह उन को अत्यन्त ऊँचा पद प्रदान करे और उन के अपने 'दीन' और मेशन को सफल बनाये अल्लाह की रहमते उन के साथ रहे। ईमान वालों के दरूद भेजने का अर्थ भी यही होता है। वे इस प्रकार अपने नबी के प्रति अपना प्रेम और श्रद्धा दिखाते और उनके लिए हर प्रकार की शुभ कामना करते हैं।

दियत—कत्ल और खून के बदले में वधित व्यक्ति के वारिसों को दिया जाने वाला धन।

दीन—१ धर्म। २ जीवन प्रणाली। ३. जीवन व्यवस्था। ४ वह विधान जिस पर मनुष्य की विचार धारा और कार्य-प्रणाली आदि सब-कुछ आधारित हो।

'दीन' शब्द के मौलिक अर्थ में अधीनता और विनीति का भाव पाया जाता है। 'दीन' का मौलिक अर्थ है, अधीन होना, अधीन करना। फिर इसमें चार अर्थ का समावेश हुआ है १ प्रभुत्व (उस सत्ता की ओर से जिसे सब पर प्रभुत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त हो)। २ आज्ञापालन एवं अधीनता (उस की ओर से जो सत्ता के आगे झुके)। ३. विधि, विधान, प्रणाली, नियम (जिस का पालन किया जाए)। ४ जाँच-पड़ताल, निर्णय, अच्छे-बुरे कर्मों का बदला।

कुरआन में 'दीन' शब्द इन सभी अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। कही-कही तो यह शब्द एक या दो अर्थों में नहीं बल्कि समस्त अर्थों में अत्यन्त व्यापक ढंग से प्रयुक्त हुआ है। हदीसों में भी यह शब्द अपने व्यापक अर्थों में प्रयुक्त मिलता है।

नज़्र.—भेंट, मन्नत, प्रण। नज़्र केवल अल्लाह के आगे पेश की जाती है किसी और को नज़्र जायज नहीं। हम किसी मनुष्य को यदि प्रेम-भाव से कोई चीज़ पेश करना चाहे तो पेश कर सकते हैं। इसे 'हृदया' या उपहार कहेंगे। आजकल उपहार को 'नज़्र' कहने लगे हैं परन्तु कुरआन में जिस चीज़ को नज़्र कहा गया है वह प्रस्ताह ही के लिए खास है। नज़्र कुरबानी के रूप में भी गुजारी जा सकती है और रोज़ा आदि को नज़्र भी मानी जा सकती है।

नफ़ल—जो चीज़ हक से अधिक हो उसे अरबी में नफ़ल कहते हैं। इसी लिए वह इबादत जो अनिवार्य न हो, बन्दा जिसे अपनी खुशी से अदा करे नफ़ल कहलाती है।

नबी—पैगम्बर, ईश-दूत, वह व्यक्ति जो 'नुबूवत' के पद पर नियुक्त हो। जिस के पास अल्लाह की ओर से वह्य आता हो। जो अल्लाह की ओर से इस के लिए नियुक्त हो कि लोगो तक उस का सन्देश पहुँचाए और लोगो को सोचा-सच्चा मार्ग दिखाये। विस्तार के लिए दे० पृष्ठ १८२ शीर्षक 'रिसालत को धारणा'।

नुबूवत—पैगम्बरी, ईश दूतत्व। नबी होने का भाव। दे० 'नबी'

नबी सल्ल०—इस से अभिप्रेत हज़रत मुहम्मद सल्ल० हैं।

नमाज़—दे० पृष्ठ ३५२।

नसारा—ईसाई। नसारा 'नसरान' का बहुवचन है। हज़रत ईसा मसीह के अनुयायियों का यह नाम आरम्भ से ही था। हज़रत मसीह अ० के मानने वाले दो समुदायों में बँट गये थे। एक समुदाय ने तो शमऊन *Simon* का अनुसरण किया और अपने को नसारा कहा। दूसरा समुदाय पोलीस का अनुयायी हुआ। पहले समुदाय के लोग हज़रत मुहम्मद पर ईमान ले आये परन्तु दूसरे समुदाय ने आप का इन्कार किया। और 'नसारा' की उपाधि को अपने लिए अपमान समझा। उन के विचार में इस नाम का सम्बन्ध नसारा (*Nazareth*) से है और यह उन की दृष्टि में साधारण सी बस्ती है। लेकिन यह उन की गलती है उन का यह नाम अत्यन्त आरम्भिक है। यह नाम उन्होंने स्वयं रक्खा था (दे० कुरआन सूर ५ आयत १४)। अपने लिए कोई भी तिरस्कृत नाम कभी पसन्द नहीं कर सकता।

निसाब—वह निश्चित धन जिस पर 'जकात' अनिवार्य होती है।

फ़कीह—समझदार, दीन का गहरा ज्ञान रखने वाला, 'शरीअत' (धर्म-विधान) की बातों का पूर्ण ज्ञाता ।

फ़क़ह—किसी चीज़ का जानना और समझना । शरीअत के आदेशों का ज्ञान ।

फ़ज्र (The dawn)—तड़का, प्रातः काल उषा काल, अरुणोदय ।
१. वह समय जब पहले-पहल पूर्व दिशा में उषा या पौ फटने की लाली दीख पड़ती है । २. वह नमाज़ जो सवेरे पौ फटने के पश्चात् अदा की जाती है । इस नमाज़ का समय सूर्य उदय होने तक रहता है

फ़तवा—शरई फैसला, किसी मामले में धार्मिक (शरई) आदेश ।

फ़ासिक—अवज्ञाकारी, सीमोल्लघन करने वाला । धार्मिक मान्यताओं और आदेशों के विरुद्ध आचरण करने वाला ।

फ़िरिश्ता (Angel)—कुरआन में इस के लिए 'मलक' शब्द प्रयुक्त हुआ है । जिस का अर्थ होता है 'सन्देश' लाने वाला । फ़िरिश्ते नबियों के पास अल्लाह की ओर से सन्देश लाते रहे हैं । फ़िरिश्तों में इस की योग्यता होती है कि वे अल्लाह से 'वह्य' और सन्देश प्राप्त कर के मनुष्य तक पहुँचा सके । फ़िरिश्ते अल्लाह के पैदा किये हुए हैं वे वही कार्य करते हैं जिस का उन्हें आदेश मिलता है ।

अल्लाह ने बहुत से फ़िरिश्तों को अपने इस बड़े राज्य के प्रबन्ध-कार्य में लगा रक्खा है । फ़िरिश्तों से विभिन्न काम लिये जाते हैं । फ़िरिश्ते जरूरत पर मानवीय रूप भी धारण कर सकते हैं । गुमराह लोग इन्हे देवी-देवता बना कर इन को पूजने लगे । किसी ने इन को अल्लाह की औलाद समझ लिया । कुछ लोग इन्हें कष्टनिवारक और सिफारिशी समझ कर इन से ही प्रार्थनाएँ करने लगे । फ़िरिश्तों के बारे में तरह-तरह की कल्पनाएँ की गईं जिस से 'शिक' (बहुदेववाद) को फूलने-फलने का खूब अवसर मिला । कुरआन ने फ़िरिश्तों की हैसियत बता कर 'शिक' का द्वार बन्द किया है ।

बद्र—वह स्थान जहाँ मुसलमानों और काफ़िरो के बीच सन् २ हि० में युद्ध हुआ था । इस लड़ाई में इस्लाम को असाधारण सफलता हुई थी । बद्र के संग्राम में मुसलमानों की सख्या वही थी जो तालूत की सेना की थी जब वे जालूत के मुकाबले में निकले थे ।

बैअत (Taking oth of allegiance)—वचन देना, आज्ञापालन

की प्रतिज्ञा करना, वचन बद्ध होना ।

बलारात—इस से अभिप्रेत 'मुअत्ता' (हदीस की विशेष किताब) की वे रिवायतें हैं जिनको "वलगहू" (वह पहुँची) शब्द से बयान किया गया है ।

बनी इसराईल (Israelities)—इसराईल की सन्तान, यहूदी । 'इसराईल' इब्रानी भाषा का एक शब्द है । इसका अर्थ है अल्लाह का बन्दा । इसराईल हजरत याकूब का दूसरा नाम था । बनी इसराईल का वृत्तान्त कुरआन में जगह-जगह बयान हुआ है । बनी इसराईल को दीर्घ काल तक नेतृत्व का पद प्राप्त रहा है । इस वश में अल्लाह के बहुत से रसूल और नबी हुये । परन्तु जब बनी इसराईल अवनति की अन्तिम सीमा को पहुँच गये तो उन से अल्लाह ने उच्च पद छोन लिया और इबराहीम अ० के बेटे हजरत इस्माईल अ० की सन्तान में अपना अन्तिम रसूल पैदा किया और इमामत (नेतृत्व) का उच्च पद कियामत तक के लिए उस रसूल और उस के सच्चे अनुयायियों को प्रदान किया ।

बिदअत—दीन (धर्म) में कोई नई चीज़ निकालना जिसे धर्म में मान्यता प्राप्त न हो । 'दीन' तो पूर्ण हो चुका है अब दीन में कुछ बढ़ाना-घटाना गुमराही है । इस से दीन का वास्तविक स्वरूप विकृत होता है ।

बैतुल मक़दिस—पवित्र घर, मस्जिद अक़सा । अल्लाह का वह घर जो यूसुफ़लेम में है । जिस के निर्माण का इरादा हजरत दाऊद अ० ने किया था । जिस का निर्माण हजरत सुलैमान के हाथों हुआ । एक समय तक बैतुल मक़दिस इस्लामी दुनिया का केन्द्र रहा है । जब तक बनी इसराईल नेतृत्व के पद से हटाये नहीं गए, बैतुल मक़दिस ही सत्यवादियों का 'किबला' रहा है ।

बैतुल हराम (Inviolable place of worship)—प्रतिष्ठित घर । इस से अभिप्रेत वह मस्जिद है जिस के बीच 'काबा' स्थित है ।

मज़ूस—ईरान के अग्नि पूजक लोग जो प्रकाश और अन्धकार के दो खुदा मानते थे । ये लोग अपने को जरदुश्त का अनुयायी बताते थे । मुजदक की गुमराही ने इन के धर्म को बिगाड़ कर रख दिया यहाँ तक कि ये अपनी सगी बहिन तक से विवाह करने लगे ।

मरफूअ—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

मसलक—मार्ग, तरीका, नियम ।

मस्ह—हाथ फेरना, मलना, दे० तयम्मुम ।

मुमलल्ल—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

मुतवातिर—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

मुनक़तेम—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

मुनकर—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

मुनाफ़िक्क (*Hypocrite*)—छली-कपटी, कपटाचारी । निफाक रखने वाला । जो व्यक्ति जाहिर में अपने को मुसलमान कहता हो लेकिन इस्लाम से उसका सच्चा सम्बन्ध न हो । मुनाफ़िकों को कई किस्में होती हैं :

१. देखने में मुसलमान मन में इस्लाम के प्रति शत्रुता लिये हुए हों ।

२. भौतिक और सांसारिक लाभ के लिए मुसलमान बने हों । इस से अधिक इस्लाम से उन की कोई दिलचस्पी न हो ।

३. हों तो मुसलमानों में से लेकिन धर्म के ज्ञान से वंचित हों ।

४. हों तो मुसलमानों में से लेकिन उन का ईमान इतना कमजोर हो कि जब अज़माइश पेश आये तो कमजोरी दिखाएँ जाएँ ।

मुरसल—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

मुलतज्जम—काबा में रुकन यमानी के निकट वह स्थान जहाँ दुआएँ माँगते हैं ।

मुहद्दिस—हदीस का ज्ञाता ।

मुशिरक—अनेकेश्वरवादी, बहुदेववादी, 'शिरक' करने वाला ।

मुशिरक उसे कहते हैं जो अल्लाह के अस्तित्व, गुणों या उस के हक में दूसरों को शरीक ठहराये ।

ईश्वर के अस्तित्व में किसी को शरीक करने का अर्थ यह है कि किसी को उस से या उस को किसी से उत्पन्न होने का विश्वास रक्खा जाए । जैसे ईसाई हजरत मसीह को अल्लाह का बेटा समझते हैं अल्लाह के गुणों में शरीक करने का अर्थ यह है कि जिन गुणों का अधिकारी ईश्वर है उन गुणों से किसी और को भी युक्त माना जाये । जैसे जगत का सृष्टिकर्ता अल्लाह है परन्तु कोई दूसरो को इस का रचयता मानने लगे । या जैसे ईश्वर को पूर्ण अधिकार और प्रभुत्व प्राप्त है लेकिन कोई यह समझे कि कुछ

दूसरे भी हैं जो उस के कामों में हस्तक्षेप कर सकते हैं तो यह शिर्क होगा। अल्लाह के हक में किसी को शरीक करने का अर्थ यह है कि जो हक अल्लाह के हैं वैसे हक दूसरों के भी मानने लगे जैसे यह अल्लाह ही का हक है कि उस की उपासना की जाए और जावन के मामले में उस के दिखाये मार्ग पर चला जाये। अब यदि कोई अल्लाह के अतिरिक्त या अल्लाह को छोड़कर दूसरों की पूजा करता या अल्लाह के दिये हुए नियमों और आदेशों के विरुद्ध दूसरों के षड़े हुये कानून को ही सही समझता और उनका पालन करता है तो इस का अर्थ यह होगा कि वह उस हक और अधिकार को जो केवल अल्लाह का है दूसरों को दे रहा है। इस से बढ़ कर अपराध क्या हो सकता है।

मुस्लिम—आज्ञाकारी, इस्लाम का अनुयायी।

जो व्यक्ति अल्लाह को अपना रब, शासक, स्वामी पूज्य और अपना सब-कुछ मानता और अपने को उस की सेवा में अर्पण करता है वह मुस्लिम है। संसार को समस्त वस्तुएँ मुस्लिम हैं इसलिए कि वे ईश्वरोप नियम का पालन कर रही हैं। उन का धर्म इस्लाम के अतिरिक्त कुछ और नहीं है। इस्लाम (ईश्वर के आज्ञापालन) का विरोध उस व्यापक सत्यता का विरोध है जिस के बल पर सारा संसार टिका हुआ है।

मुलाबरह—बँटाई पर खेत जोतने का मामला।

मोमिन—ईमान' वाला व्यक्ति।

यहूद, यहूदी—उस समुदाय के लोग जो अपना सम्बन्ध हजरत मूसा अ० से जोड़ते हैं। यहूदी मत एक विशेष कबीले में पैदा हुआ जिस का नाम यहूदाह' (*Judah*) था। यहूदाह जब 'हूद' से निकला है जिस का अर्थ है लौटना, पनटना, तौड़ा करना। यहूदी यदि अपने नाम ही की लाज रखें तो उन्हें अपने रब की ओर पनटना चाहिए और उस सच्चाई को ग्रहण करना चाहिए जिस की ओर अल्लाह का अन्तिम नबी बुला रहा है। यह वह सच्चाई है जिसे ले कर हजरत इबराहीम अ० आये थे। हजरत इबराहीम अ० यहूदी और ईसाई सभी के पितामह है।

रकअत—झुकना, नमाज का एक अंग जिस में 'कियाम' (अल्लाह के आगे खड़ा होना), रकूअ (अल्लाह के आगे झुकना) और दो सजदे सम्मिलित होते हैं।

रब (*Preserver, Lord, Providence*)—रब का मौलिक अर्थ है

पालने वाला । फिर स्वभावतः अनेक अर्थों का समावेश हुआ है । कुरआन में यह शब्द कई अर्थों में प्रयुक्त हुआ है :

१. पालन कर्ता, संरक्षक, देख-भाल करने वाला । २. मालिक, प्रभु, स्वामी । ३. हाकिम, शासक, व्यवस्थापक, विधाता और नियता । अल्लाह इन सभी अर्थों में जगत का 'रब' है ।

रमजान—एक अरबी महीने का नाम जिस में कुरआन मजीद अवतरित होना आरम्भ हुआ । जिस में रोजा रखना अनिवार्य है ।

रसूल—दूत, पैगम्बर, वह व्यक्ति जो रिसालत के पद पर नियुक्त हुआ हो । रसूल और नबी में थोड़ा अन्तर होता है । रसूल उस पैगम्बर को कहते हैं जिसे अल्लाह की ओर से नई 'शरीअत' और किताब मिली हो । नबी हर पैगम्बर को कहते हैं चाहे उसे नई किताब और 'शरीअत' (आचार शास्त्र) दी गई हो या वह केवल पूर्वकालिक किताब और शरीअत पर लोगों को चलाने के लिए नियुक्त किया गया हो । विस्तृत वर्णन के लिए दे० पृष्ठ १८२ शीर्षक, 'रिसालत की धारणा' ।

रसूल सल्ल०—इस से अभिप्रेत हजरत मुहम्मद सल्ल० हैं ।

रावी—रिवायत करने वाला । उल्लेख कर्ता, हदीस का बयान करने और पहुँचाने वाला ।

रिवायत—उल्लेख, बयान, हदीस का बयान करना ।

रिसालत—रसूल होने का भाव । दे० पृष्ठ १८२ ।

रुहबानियत (*Monkery*)—सन्यास, संसार-त्याग, सासारिक कार्यों शादी-विवाह आदि से विरक्त हो जाना । इस्लाम 'रुहबानियत' की शिक्षा नहीं देता । सासारिक कार्यों को करते हुए ईश-प्रसन्नता और आत्मिक विकास प्राप्त करना चाहिए । इस्लाम इसी बात की शिक्षा देता है ।

रोजा—व्रत । हृदय और आत्मा की शुद्धता और नैतिक विकास के लिए रोजा अत्यन्त आवश्यक है । दे० पृष्ठ ४२८ ।

रजू—नमाज अदा करने से पूर्व शुद्ध होने के लिए हाथ, मुँह और पाँव आदि धोना ।

वसीका (*A written agreement, bond*)—दस्तावेज,

वह्य (*Revelation*)—दैवी प्रकाशन, ईश्वरीय सकेत, आकाश वाणी । 'वह्य'

शब्द का अर्थ होता है तीव्र सकेत, अर्थात् वह इशारा जो तेजी के साथ इस प्रकार किया जाए कि बस इशारा करने वाला जाने या फिर वह व्यक्ति जिस की ओर इशारा किया गया हो। अल्लाह सृष्टि के जीव आदि को जो शिक्षा देता है वह एक प्रकार की वह्य के द्वारा ही देता है। कुरआन में इस के लिए 'इलहाम' (गुप्त शिक्षा) और 'इलका' (मन में किसी बात का डाला जाना) शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। यह वह्य ही है जिस के द्वारा मछलियों को तैरना और चिड़ियों को उड़ना आता है। और नवजात शिशु इसी से दूध पीना सीख जाता है। कभी बिना सोच-विचार किये आदमी के मन में बिजली की कौघ के सामान एक बात आ जाती है कभी आदमी स्वप्न में कोई चीज देख लेता है, बाद में उस का स्वप्न सत्य सिद्ध होता है। ये सब काम एक प्रकार 'वह्य' द्वारा ही होते हैं।

'वह्य' की सत्र से महत्व पूर्ण किस्म वह है जिस के द्वारा अल्लाह नबियों को ज्ञान प्रदान करता और उन तक अपने सन्देश भेजता है। यह वह्य दूसरी समस्त 'वह्यों' से भिन्न होती है। यह 'वह्य' केवल नबियों और रसूलों पर ही उतरती है। नबी को इस का पूरा ज्ञान होता है कि उनकी ओर उतरी हुई वह्य अल्लाह ही की ओर से है। वह्य द्वारा ही कुरआन और दूसरे ईश्वरीय ग्रन्थों का अवतरण हुआ है।

बह्य खफ़ी या वह्य ग़ैर मतलू—वह सूक्ष्म वह्य जिस का पाठ नहीं किया जाता। कुरआन के अतिरिक्त नबी सल्ल० पर उतरने वाली दूसरी की वह्य। दे० पृष्ठ १६।

शरीअत (Revealed law)—धर्म विधान, आचार शास्त्र। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित ईश्वरीय आदेश और नियम।

शिक' (Polytheism)—अनेकेश्वरवाद, बहुदेववाद। किसी को अल्लाह का शरीक और सहभागी समझना। अल्लाह की सत्ता, अस्तित्व, गुण और स्वत्व में किसी को शरीक जानना। कुरआन की दृष्टि में शिक' घोर पाप और धृणित कर्म है। जिस प्रकार व्यभिचार और जिना एक धृणित कर्म है। विस्तृत वर्णन के लिए दे० 'मुशरिक'।

सजदा—१. झुकना। २. दंडवत, साष्टांग प्रणाम।

जमीन पर सिर रख देना। चेहरे के बल बिछ जाना। सजदा नमाज़ का एक आवश्यक अंग है। नमाज़ में मनुष्य अल्लाह को मशानना का ध्यान करते हुए अपना सिर भूमि पर उस के आगे रख देता है।

सदका—दान, खैरात, अल्लाह के मार्ग में खर्च करना । कुरआन में सदका का प्रयोग ज़कात के लिए भी हुआ है और नफ़ल खैरात के लिए भी इस का प्रयोग हुआ है । 'सदका' शब्द 'सिद्क' से निकला है जिस का अर्थ होता है सच्चाई, निष्ठा, सदका से मनुष्य का ईमान दृढ़ और मजबूत होता है । और उस में सच्चाई आती है । मन और मस्तिष्क की पवित्रता भी प्राप्त होती है । दे० कुरआन सूरा अल-मुजादला आयत १२, अल-हदीद आयत ११, १२, अत-तौबा आयत १०३ ।

सदक़ए फ़ित्र—रमज़ान का रोज़ा पूरा करने के पश्चात् ईदुल फ़ित्र के अवसर पर जो सदका और खैरात देते हैं उसे सदक़ए फ़ित्र कहते हैं ।

सहाबा, सहाबी—साथी । वे आदरणीय मुस्लिम लोग जिन्होंने नबी सल्ल० को देखा हो ।

सरीया—फैज का दस्ता ।

सहोफ़ा—लिखा हुआ पर्ण । बहुवचन के रूप में किताब के लिए इस का प्रयोग होता है । किताब पन्नों का ही समूह होता है ।

सहीह हदीस—दे० पारिभाषिक शब्दावली ।

सिहाह सिता - हदीसों के छ . प्रमाणिक एवं मान्यताप्राप्त ग्रन्थों को सिहाह सिता कहा जाता है । उन के नाम यह हैं मुस्लिम, अबूदाऊद, तिरमिजी, नसई, इब्नमाजा । कुछ विद्वान इब्न माजा के स्थान पर मुअत्ता इमाम मालिक को रखते हैं ।

सुन्न हदीस की वह किताब जिस में केवल वे हदीसे सगृहीत हो जो नबी सल्ल० की 'मुन्नतों' (तरीकों) और उन नियमों से सम्बन्ध रखती हों जो आपने विभिन्न इवादतों और मामलों के सम्बन्ध में मिलाए हैं ।

सुन्नत—गति, तरीका । नबी सल्ल० का तरीका । वे कार्य जिन्हें नबी सल्ल० ने मदेव किया हो और कभी-कभी जान-बूझ कर छोड़ा भी हो ।

सूरा—यह शब्द मूर से निकला है जिस का अर्थ है शहर पनाह (नगर कोट, प्राचीर) । सूरा का बहुवचन सुवर होता है ।

कुरआन ११४ भागों में विभक्त है जिन में से प्रत्येक भाग सूरा कहलाता है । प्रत्येक सूरा अच्छी कविता या भाषण की तरह अपनी जगह

पुणं है यद्यपि उस का सम्बन्ध अपनी अगली और पिछली सूरा से भी होता है। प्रत्येक सूरा का एक मध्य बिन्दु या केन्द्रीय विषय होता है। हर सूरा अपने मध्यबिन्दु से प्रत्यक्षत या भावात्मक रूप से सम्बद्ध होती है।

हक—बीजद और कायम को कहते हैं। फिर यह कई अर्थों में प्रयोग होने लगा :

१ जिस का होना मत्व हो। उदाहरणार्थ दे० सूरा साँद० आयत ६४।

२ जो नैतिक दृष्टि में अनिवार्य हो। दे० अज-जारियात आयत १६।

३ जो बात विल्कुल प्रत्यक्ष और मुली हुई हो, स्पष्ट और बुद्धिसगत हो। दे० अल-अनग्राम आयत ६२, अल-अकरा आयत ११।

अल्लाह और कियासन पहले और तीसरे अर्थों में हक है। न्याय और इन्जाफ को दूसरे अर्थ के अनुसार हक कहा जायेगा। हिकमत (Wisdom) तीसरे अर्थ के अनुसार हक है।

व्यापक अर्थ में हक उस चीज को कहेंगे जो बुद्धिसगत हो, जो हृदय को भी प्रिय हो। जिस का सम्पर्क ज्ञान और कर्म दोनों से हो। जो नैतिकता के अनुकूल हो।

हज्ज—‘हज्ज’ का अर्थ है इरादा करना, जियारत (तीर्थ-दर्शन) का इरादा करना। पारिभाषिक रूप में हज्ज एक इबादन है जिसमें मनुष्य अल्लाह के घर ‘काबा’ के दर्जन का इरादा करता है। हज्ज के द्वारा अल्लाह की महानता और उसका प्रेम स्थायी रूप से मन में बैठ जाता है। विस्तृत वर्णन के लिए दे० पृष्ठ ४४८ शीर्षक ‘हज्ज’।

हबीब—मित्र, दोस्त। नबी सल्ल० की उपाधि। आपको अत्यन्त उच्च स्थान प्राप्त है। आप अल्लाह के हबीब हैं।

हदीस—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

हम्द—प्रशंसा, गुणगान, ईश-प्रशंसा।

खूबियो, विशेषताओं और गुणों का प्रेमपूर्ण वर्णन। अल्लाह के गुणों और उसकी परिपूर्णता का प्रेम एवं श्रद्धापूर्वक वर्णन। अल्लाह के हम पर असीम उपकार और कृपाएँ हैं अतः जब हम इस पहलू से उसकी प्रशंसा

करेंगे तो इस प्रशंसा में कृतज्ञता विज्ञाप्ति का भाव भी स्वतः सम्मिलित हो जायेगा। यही कारण है कि नबी सल्ल० ने 'हम्द' को कृतज्ञता प्रकाशन का सिरा कहा है। हम्द कृतज्ञता प्रकाशन का उत्तम उपाय है।

हराम (Forbidden)—वर्जित, अवैध, निषिद्ध। जो धर्मसंगत न हो। इस्लामी धर्मशास्त्र से जिसका निषेध होता हो। जिसे अल्लाह या उस की ओर से उसके रसूल ने नाजायज ठहराया हो।

हलाल (Lawful) वैध, ग्राह्य, अवर्जित, धर्मसंगत, जायज। जो इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुकूल हो। जिसे अल्लाह या उसकी ओर से उसके रसूल ने जायज ठहराया हो।

हसन—दे० पारिभाषिक शब्दावली।

हिकमत (Wisdom)—तत्त्वज्ञान। हिकमत का मूल अर्थ है 'फैसला करना'। इसके अतिरिक्त सूझ-बूझ की शक्ति के लिए भी 'हिकमत' शब्द प्रयुक्त होता है। जिसके द्वारा मनुष्य फैसले करता है। उस शक्ति को भी हिकमत कहा जाता है जो शुद्ध और ठीक निर्णयो का स्रोत है। इसके अतिरिक्त पवित्रता की गणना भी 'हिकमत' के लक्षणों में होती है। अरब के लोग बुद्धि और सम्मति की पूर्णता और सज्जनता की मिली-जुली शक्ति को 'हिकमत' और बुद्धिमान और शिष्ट व्यक्ति को 'हकीम' कहते थे। हिकमत वास्तव में ईमान और कर्म की वह दृढता है जो गहरी सूझ-बूझ पर आधारित हो। ज्ञान और बुद्धि द्वारा उत्तम ढंग से सत्य की प्राप्ति ही 'हिकमत' है।

सारांश यह है कि हिकमत का स्रोत शुद्ध विवेक और सही सूझ-बूझ है जिसके द्वारा मनुष्य फैसले करता है। जब विवेक में पूर्णता आ जाती है और वह प्रतिभा एवं विचक्षणता का रूप धारण कर लेता है तो उसे हिकमत कहते हैं।

हिकमत का सम्बन्ध मानव के सम्पूर्ण जीवन से है। जिसे हिकमत मिल गई उसके जीवन का स्वरूप विशुद्ध और निर्मल हो गया।

हिकमत शब्द का प्रयोग जब अल्लाह के लिए होता है तो इसका विशेष अर्थ यह होता है कि अल्लाह तत्त्वज्ञानी है। उसे प्रत्येक वस्तु का पूर्णज्ञान है। जो निर्माण भी उसने किया उत्तम ढंग से किया। उसके कार्य में कोई त्रुटि और दोष नहीं। उसका कोई काम भी व्यर्थ और उद्देश्य-रहित नहीं।

हिजरत—स्वदेश त्याग । अल्लाह के मार्ग में अपना घर-बार छोड़ देना । हजरत मुहम्मद सल० का मक्का छोड़कर मदीना जाना । धर्म और सत्य की रक्षा के लिए कभी स्वदेश को छोड़ना पड़ता है यद्यपि स्वदेश प्रत्येक व्यक्ति को प्रिय है ।

हिदायत (Guidance)—मार्ग-दर्शन, राह दिखाना । जीवन व्यतीत करने का वह तरीका बताना जिस पर मनुष्य अपने जीवन को सफल बना सके और अपने 'रब' की प्रसन्नता प्राप्त कर सके । कुरआन में इसके लिए 'हुदा' शब्द प्रयुक्त हुआ है जिसके कई अर्थ होते हैं :

१. अन्तर्दृष्टि, हृदय ज्योति । दे० सूरा मुहम्मद आयत १७, अस-सजदा आयत १३ ।

२ प्रमाण, निशानी, खुली दलील और वह चीज जिसके द्वारा राह मिल सके । दे० ता० हा० आयत १०, अल-बकरा आयत १८५, अल-हज्ज आयत ८ ।

३ स्पष्ट मार्ग, मजिल (अभीष्ट स्थान) तक पहुँचाने वाला मार्ग । दे० अल-हज्ज आयत ६७ । यही से यह शब्द शरीअत (आचार शास्त्र एवं धर्म-विधान), प्रथा एवं प्रणाली के लिए भी प्रयुक्त होने लगा । दे० अल-अनआम आयत ६०, अले इमरान आयत ७३) ।

४. 'हिदायत' क्रिया की सज्ञा का रूप (दे० अन-नह्ल आयत ३७) । अरब लोग कभी-कभी किसी चीज के स्पष्ट गुण ही को उसका नाम दे देते हैं । इसी नियम के अनुसार कुरआन को 'अल-हुदा' कहा गया है (दे० अल-जिन्न आयत १३) ।

हुकम—निर्णय शक्ति, दीन में सूझ-बूझ, मामलों में सही राय क़ायम करने की क्षमता । बुद्धिमत्ता । अल्लाह की ओर से मामलों में फैसला देने का अधिकार । 'हुकम' में प्रभुत्व एवं अधिकार का अर्थ भी सम्मिलित है । कुरआन में साधारणतया 'हुकम' और 'इल्म' (ज्ञान) से अभिप्रेत 'नुबूवत' है ।

'हुकम' वास्तव में शुद्ध विवेक और सही सूझ-बूझ का नाम है । यह निर्णय शक्ति है । इसी के द्वारा फैसला होता है । 'हुकम' ही 'हिकमत' (Wisdom) का उद्गम है । जब विवेक में पूर्णता आ जाती है और वह 'प्रतिभा' एवं विचक्षणता का रूप धारण कर लेता है तो उसे 'हिकमत' कहते हैं ।

संकेताक्षरों का विवरण

अ०—‘अलैहिस्सलाम’ अर्थात् उन पर सलामनी हो। नवियो और फिरिस्तो के नाम के साथ यह आदर एवं प्रेमसूचक शब्द बढ़ा देते हैं।

रजि०—‘रजि अल्लाहु अन्हु’ अर्थात् उन से अल्लाह राजी रहे। ‘सहाबा’ के नाम के साथ ये आदर और प्रेमसूचक दुआ बढ़ा देते हैं।

सल्ल०—सल-लल-लाहु अलैहि व सल्लम अर्थात् उन पर अल्लाह की रहमत और सलामती (*Blessing*) हो। हजरत मुहम्मद (सल्ल०) का नाम लेते या सुनते हैं तो आदर और प्रेम के लिए दुआ के ये शब्द बढ़ा देते हैं।

हि०—अर्थात् सन् हिजरी।

समाप्त

